

Parasara Saṁhita
vol. - 1, Part - I
1892

S. Das.
Librarian

Uttarpara Joykrishna Public Library
Govt. of West Bengal

TABLE 'OF CONTENTS.

विषयानुक्रमणिका ।

| | पृ० | पं० | | पृ० | पं० |
|---|-----|-----|-----------------------------------|-----|-----|
| मङ्गलाचरणम् | १ | ७ | 'अपृच्छन्' इत्यस्यार्थः | ४४ | १२ |
| स्वाश्रयदातृबुक्तराजवर्णनम् | १ | १४ | ऋषिशब्दार्थः | ४५ | ३ |
| स्वस्य माता-पितृ-कुल-गोत्रा- दिवर्णनम् | ४ | ५ | पराशरोक्तधर्मानुष्ठाने अ- | | |
| प्रतिज्ञा | ४ | ९ | धिकारिविवेचनम् | ४६ | ७ |
| प्रयोजनम् | ५ | ३ | 'हितं' इत्यस्यार्थः | ५२ | १४ |
| पराशरस्मृतः व्याख्यातुं यो- | | | नित्यकर्मणामभ्युदयहे- | | |
| ग्यत्वम् | ५ | ५ | तुत्वम् | ५३ | २ |
| पराशरस्मृतः ग्रन्थकृतिः | १४ | १ | कर्मणां परम्परया मोक्ष- | | |
| पराशरेण व्यवहारो नोक्तः | | | हेतुत्वम् | ५९ | ३ |
| तत्र हेतुः | १५ | ४ | विषयनिर्देशः | ६३ | ६ |
| पराशरस्मृतः कलिम्प्रति- | | | ऋषीन्प्रति व्यासस्य उत्त- | | |
| प्रवृत्तत्वम् | २१ | ६ | रम् | ६५ | १४ |
| पराशरस्मृतौ आचारस्य | | | व्यामम्पुरस्कृत्य ऋषयो | | |
| सङ्कोचः | २१ | ९ | बदरिकाश्रमं गताः | ६८ | ६ |
| गुणोपसंहारे प्रतिज्ञा | ३६ | २ | पराशरस्य तपोमहिमख्या- | | |
| ऋषीणां व्यासं प्रति प्रश्नः | ३७ | २ | पनार्थं बदरिकाश्रम- | | |
| अथशब्दार्थः | ३७ | ५ | वर्णनम् | ७० | ११ |
| अतःशब्दार्थः | ४० | ३ | पराशरस्य अहिंसानुष्ठान- | | |
| योगोपयोगिवेशादिनिरू- | | | सिद्धिः | ७१ | ११ |
| पणम् | ४० | ६ | बदरिकाश्रमे देवालय- | | |
| 'एकाग्रं' इत्यस्यार्थः । तत्र | | | बहुत्वम् | ७२ | ३ |
| पञ्चविधाः चित्तभूमयः | ४२ | ४ | पराशरदर्शनम् | ७३ | ६ |
| 'आसीन' इत्यस्य व्याख्या | ४४ | ६ | पराशरशब्दनिरुक्तिः | ७४ | ४ |

| | पृ० पं० |
|-----------------------------------|---------|
| गुरुभक्तिफलम् | ७४ १५ |
| पराशरेण कृतं ऋषीणां | |
| स्वागतम् | ७५ १७ |
| गुरुसन्तोषस्य श्रेयोहेतु- | |
| त्वम् | ७६ १ |
| पराशरप्रति व्यासप्रश्नः | ७७ ३ |
| पुत्रः शिष्यो वा रहस्योप- | |
| देशर्षहीति | ७७ २ |
| व्यसो मानवादिधर्मा मया | |
| श्रुता-इत्याह | ७८ ८ |
| साधारणकलिधर्मविष- | |
| यकः व्यासप्रश्नः | ८० १३ |
| धर्माणां बहुविधत्वम् | ८० १५ |
| कृतादिषु धर्मस्थितिः | ८२ १ |
| कृतयुगधर्मः कलौ न क- | |
| र्तव्यः | ८४ १ |
| साधारणो धर्मः | ८४ ५ |
| असाधारणो धर्मः | ८५ १ |
| असाधारणधर्मप्रश्नः | ८७ ६ |
| मीमांसकाभिमतं धर्मस्व- | |
| रूपम् | ८७ ८ |
| प्राभाकराभिमतं धर्मस्वरू- | |
| पम् | ८८ १ |
| धर्मस्य दुर्विच्यत्वम् | ८८ ३ |
| विश्वामित्राभिमतं धर्मस्व- | |
| रूपम् | ८८ ८ |
| मन्वाभिमतं धर्मस्वरूपम् | ८९ १ |
| आत्मगुणोऽपूर्वशब्दवाच्यो | |
| धर्मः | ९० २ |

| | पृ० पं० |
|-----------------------------------|---------|
| तार्किक-प्राभाकर-भांश- | |
| भिमतस्य धर्मस्वरूपस्य | |
| स्वीकारः | ९० ५ |
| धर्मस्य स्थूल-सूक्ष्मभेद- | |
| विवरणम् | ९० ८ |
| पराशरो धर्मस्य निर्णयं | |
| प्राह | ९२ १४ |
| कल्पे कल्पे श्रुत्यादिनि- | |
| र्णेतारः भवन्ति | ९३ १५ |
| कल्पस्वरूपम् | ९३ १७ |
| कल्पभेदः | ९४ १६ |
| प्राकृतप्रलयवर्णनम् | ९५ ८ |
| परमात्मनः प्रकृतित्वम् | ९७ ११ |
| मायायाः प्रकृतित्वम् | ९८ १ |
| मायाया आत्मशक्तित्वम् | ९८ ७ |
| श्रुत्यनुसारेणोत्पत्तिः | ९९ १० |
| आत्म-ब्रह्मादिशब्दाना- | |
| मनेकार्थत्वम् | १०१ १ |
| असतो जगत्कारणत्वनि- | |
| वारणम् | १०२ १ |
| परमाणुवादखण्डनम् | १०३ ३ |
| नित्याया ईश्वरेच्छायाः | |
| मनोनपेक्षत्वम् | १०३ १७ |
| अचिन्त्या परमेश्वरस्य | |
| शक्तिरित्याकारक- | |
| बौध्दिषदां मतम् | १०४ ४ |
| असङ्गस्य कथमुत्पादक- | |
| त्वम् | १०५ १ |
| श्रुतिनिर्णेतारः | १०७ १४ |

| | पृ० | पं० | | पृ० | पं० |
|------------------------------------|-----|-----|------------------------------------|-----|-----|
| षट्त्रिंशत् स्मृतिकर्तारः १०८ | ३ | | शापपरिपाकहेतुकाल- | | |
| नेयं परिसंख्या १०८ | ११ | | विभागः १२३ | ६ | |
| भारतोक्ता धर्मशास्त्रप्रव- | | | तारतम्यापादकेनिमित्त- | | |
| क्तारः १०९ | १ | | विभागः १२३ | १० | |
| धर्मस्य सृष्टिः ११२ | ३ | | निमित्तकृतं तारतम्यम् १२४ | ७ | |
| धर्मस्य जैमिनीयम् १११ | १३ | | कलिमामर्थ्यप्रपञ्चनम् १२४ | १८ | |
| न कश्चित् वेदकर्ता ११३ | ११ | | कलिवृद्ध्यादि १२५ | ७ | |
| परमेश्वरं वेदस्य व्य- | | | कृतयुगे तपसः परमत्वे | | |
| ञ्जकः ११३ | ३ | | हेतुमाह १२५ | १६ | |
| उक्तार्थे उपपत्तयः ११३ | ८ | | प्राणस्वरूपम् १२६ | ३ | |
| स्वातन्त्र्यनिवारणम् ११४ | ६ | | युगसामर्थ्यवर्णनप्रयोगः | | |
| उक्तार्थे/अनुषंगन्याय- | | | जनम् १२८ | ५ | |
| योजनम् ११४ | १३ | | कलौ पापिनामनिन्द- | | |
| चतुर्मुखो विप्रकीर्णधर्मा- | | | त्वात् शास्त्रस्य विप्लवः | | |
| न् सङ्कलयति ११६ | १ | | स्यात्-इति पूर्वपक्षः १२८ | १५ | |
| चतुर्मुख इव स्वायम्भुवो | | | पूर्वपक्षनिरासः १३१ | १४ | |
| मनुरपि ११६ | ९ | | तत्तदुगसामर्थ्यम् १३१ | १८ | |
| प्रतियुगं धर्मवैलक्षण्यम् ११७ | १ | | कलिदोषः १३३ | २ | |
| धर्मस्य स्वरूपान्यत्वनि- | | | कलौ निषिद्धानि १३३ | ७ | |
| वारणम् ११७ | ४ | | विहितातिक्रम-निषिद्धाच- | | |
| प्रतिज्ञातस्य वैलक्षण्यस्य | | | रणयोः प्रायश्चित्तम् १३८ | ४ | |
| उपन्यासः ११९ | ५ | | चातुर्वर्ण्याचारप्रतिज्ञा १४० | १ | |
| तपोविवरणम् १२० | १ | | धर्मज्ञानस्य परमपुरुषार्थ- | | |
| उक्तार्थे परिसंख्याया अ- | | | हेतुत्वम् १४२ | ३ | |
| विवक्षितत्वम् १२१ | ३ | | पराशरस्य वरप्राप्तिः १४२ | ३ | |
| अधर्मप्रापकस्थानवि- | | | आचारस्य श्रेयोहेतुत्वम् १४३ | ५ | |
| भागः १२२ | ६ | | ब्रह्मणस्य असाधा- | | |
| निमित्तविभागः १२३ | १ | | रणधर्माः १४५ | १० | |
| | | | तत्र अध्यापनम् १४६ | ३ | |

| पृ० पं० | | पृ० पं० | |
|---------------------------------|----|---------------------------------|----|
| अध्यापने नियमः . . . १४७ | ६ | अथ यज्ञ-याज्ञनि- | |
| अध्यापने प्राभाकर्तृमतम् १४८ | २ | रूपणम् १५९ | ८ |
| अध्ययने न पृथक्विधिः- | | तत्र यजनस्य सृष्टिः प्रयो- | |
| इति गुरुमतम् . . . १४८ | ९ | जनं च १५९ | ९ |
| अध्ययनं तु नित्यमित्यन्ये | | यजनस्य त्रैविध्यम् . . १५९ | १७ |
| वादेनः १४९ | १४ | द्विजातिप्रभृतिसृष्टेर्यज्ञा- | |
| उक्तार्थे विवरणकारमतम् १५० | १२ | र्थत्वम् १६० | ६ |
| अर्थविचारपर्यंतमध्ययन- | | अन्वय-व्यतिरेकाभ्यां य- | |
| म् १५१ | ४ | ज्ञमाहिमा १६० | १४ |
| अध्ययनस्य इतिकर्तव्यता १५१ | १३ | यज्ञविशेषाः १६१ | ५ |
| स्वशाखायां अध्ययनम् १५२ | १३ | आधानम् १६१ | ८ |
| स्वशाखापरित्यागनिषेधः १५२ | १८ | आधानाकरणे प्रत्यवायः १६१ | १२ |
| स्वशाखाध्ययनपूर्वकं अ- | | कालादिविशिष्टमाधान- | |
| न्यशाखाध्ययनम् . . १५३ | ३ | विधानम् १६२ | १ |
| वेदवर्द्धनशास्त्रस्याध्यय- | | आधानपूर्वका यज्ञाः . . १६३ | ५ |
| यनम् १५३ | ६ | पाकयज्ञादिनिरूपणम् १६३ | ९ |
| पञ्चधा वेदाभ्यासः . . १५३ | १३ | अपरा मूढायज्ञकतवः . . १६४ | ५ |
| गुरुमुखादेव वेदोऽध्येतव्यः १५४ | १ | नित्य-नैमित्तिकभेदेन य- | |
| अध्ययत्ते वर्जनीयाः . . १५४ | ६ | ज्ञानं त्रैविध्यम् १६४ | ८ |
| अथ अनध्यायाः . . १५४ | १८ | यज्ञानां नित्यत्वम् १६५ | १२ |
| नित्या अनध्यायाः . . . १५४ | १९ | यज्ञानां नैमित्तिकत्वम् . . १६६ | २ |
| नैमित्तिकाः १५५ | १ | काम्यत्वम् १६६ | ५ |
| अन्येष्वनध्यायाः . . . १५५ | ११ | नित्य-नैमित्तिक-काम्यानां | |
| सन्वादयः १५५ | १५ | फलम् १६६ | ११ |
| युगादयः १५६ | ७ | नित्यकर्मलोपिसमाधानम् १६८ | १ |
| अष्टकाः १५७ | १ | नित्यं न लोपयेत् १६८ | १७ |
| त्रयोदश्यादयो वर्ज्याः . . १५७ | ८ | त्रैवार्षिकाधिकाश्चिन सो- | |
| श्लेषातक्रादयो वर्ज्याः . . १५८ | ११ | मयागः कार्यः १६९ | ५ |
| अनध्यायानां अपवादः १५८ | १४ | तदलाभे दर्शादयः कार्याः १६९ | १२ |
| | | अल्पधनस्य यज्ञनिषेधः १६९ | १६ |

Table of Contents.

5

| पृ० | पं० | पृ० | पं० |
|-----------------------------|--------|----------------------------|--------|
| सम्पूर्णानुष्ठानाशक्तौ का- | १ | देयस्वरूपम् | १८९ १२ |
| स्यं कर्त्तव्यम् | १७० ७ | अशेषस्य देयत्वे नियमः | १८९ १७ |
| याजने विधिः | १७१ १ | उक्तार्थे अपवादः | १९० ६ |
| नियमविधिरयम् | १७१ ५ | देयविशेषेण फलविशेषः | १९० १० |
| उपवीतित्वविधानम् | १७३ ८ | पात्रविशेषेण देयविशेषः | १९१ ५ |
| ऋध्यादिर्ज्ञानस्य याजना- | | दाननिमित्तानि | १९२ २ |
| ङ्गत्वम् | १७३ १२ | अयनादयः | १९२ ७ |
| याजने दोषनिवारणम् | १७४ १ | दिनक्षयलक्षणम् | १९३ १० |
| अयाज्ययाजने दोषः | १७४ १५ | दानस्य निषिद्धः कालः | १९४ ३ |
| तत्र प्रायश्चित्तम् | १७४ १९ | उक्तस्य प्रतिप्रसवः | १९४ ११ |
| दाननिरूपणम् | १७६ ८ | दानस्य प्रशस्ता देशवि- | |
| दानप्रशंसा | १७६ १० | शेषाः | १९४ ७७ |
| माक्षादानविधानम् | १७७ ८ | प्रतिग्रहनिरूपणम् | १९५ ६ |
| वित्तत्रैयर्थ्यपुरःसरं दान- | | तत्र श्रौतो विधिः | १९५ ७ |
| विधानम् | १७८ १ | असत्प्रतिग्रहानिन्दा | १९५ १० |
| दानाभावे बाधः | १७८ ७ | सत्प्रतिग्रहानुज्ञा | १९५ १८ |
| दानस्य स्वरूपं इति- | | अप्रतिग्रहः श्रेयान् | १९६ १ |
| र्त्तव्यता च | १७९ १२ | प्रतिग्रहं प्रशंसति गमः | १९६ ६ |
| दानस्य चातुर्विध्यम् | १८३ १४ | मनुस्तु विपर्ययमाह | १९६ ११ |
| फलविशेषः | १८४ ६ | सामर्थ्यरहितस्य प्रतिग्रहे | |
| दानपात्रम् | १८४ १२ | प्रत्यवायः | १९६ ७७ |
| पात्रविशेषः | १८५ १० | एष एव न्यायः याजना- | |
| शूद्रादीनां पात्रत्वम् | १८६ ६ | ध्यापनयोः | १९७ ३ |
| मातापित्रोः दानम् | १८६ ९ | सदसत्प्रतिग्रहविवेकः | १९७ ७ |
| अपात्रम् | १८७ ७ | सतामसम्भवे असतीर्जपि | |
| देवलकस्वरूपम् | १८८ ७ | प्रतिग्रहः | १९७ १० |
| अन्येऽपि निषेधाः | १८८ ११ | शूद्रप्रतिग्रहे विशेषः | १९७ १४ |
| पात्रोपेक्षणे अपात्रदाने च | | विशेषान्तरम् | १९७ १७ |
| निषेधः | १८९ ८ | | |

| पृ० पं० | पृ० पं० |
|-------------------------------------|---------------------------------------|
| असत्प्रतिग्रहोचितोऽव- | विग्रहवन्तो देवा न सन्ति |
| स्थाविशेषः... १९८ ६ | तस्मात्तेषां प्रसादो |
| प्रतिग्राह्यद्रव्यस्य इयत्तः १९८ २० | न यागस्य फलद्वारम् २१३ १ |
| अनापदि राज्ञप्रतिग्रह- | औपनिषद् ईश्वरस्य फल- |
| निन्दा ... १९९ ६ | दातृत्वं मन्यन्ते ... २१३ ७ |
| उक्तनिन्दाया अधार्मिक- | उक्तमतद्वयस्य न वि |
| राजद्विषयत्वम् ... २०० ६ | रोधः ... २१४ १२ |
| अदुष्टो राजैपतिग्रहो न | अतिथिलक्षणम् ... २१४-२० |
| निन्दितः ... २०० १४ | अतिथिपूजाऽकरणं दोषः २१५ १ |
| सत्प्रतिग्रहस्य अनापदृषि | अतिथिपूजने अभ्युदयो- |
| विधानम् ... २०१ १४ | ऽपि भवति ... २१६ २ |
| अयाचिते न दोषः ... २०२ १ | हुतशेषम् ... २१६ १७ |
| वस्तुविशेषाः ... २०२ ५ | हुतशेषमेव भुञ्जीत ... २१६ १८ |
| प्रतिग्रहानधिकारी, ... २०३, १ | ब्राह्मणलक्षणम् ... २१७ १३ |
| विदुषो न प्रतिग्रहदोषः २०३ ९ | आह्निकं संक्षिप्याह ... २१८ १२ |
| पूर्वाक्तविषयेषु न्याययो- | उक्तार्थे यवागूपाकन्यायः २१८ १६ |
| जनम् ... २०४ ५ | ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थानम् ... २१९ १२ |
| भावनास्वरूपम् ... २०४ ८ | मनसा ईश्वरध्यानम् ... २२० १८ |
| तस्याः षोढात्वम् ... २०४ १४ | श्रोत्रियादिकमवलोकयेत् २२१ ८ |
| हेवतास्वरूपम्, ... २०५ ६ | ततो मूत्र-पुरीषे कुर्यात् २२१ १५ |
| परमात्मैव मुख्यो देवः | तत्र तृणनियमः ... २२२ १ |
| तत्स्वरूपं च ... २०८ १३ | कालभेदेन दिङ्नियमः २२२ ४ |
| एकमेव देवं बहुधा व्य- | यज्ञोपवीतस्थापनम् ... २२२ ८ |
| वहरन्ति ... २०९ १ | मतान्तरेण दिङ्नियमः २२४ १ |
| द्रव्य-देवतयोर्भेदनिषेधः २१० ३ | मूत्र-पुरीषे वर्ज्यदेशः . २२४ २४ |
| एकस्मात्कलभेदो त दुः- | अथ शौचप्रकरणम् २२६ २३ |
| सम्पादः ... २१० १३ | गन्धलेपक्षयकरं शौचं |
| देवस्य फलदातृत्वं मीमां- | कुर्यात् ... २२६ १४ |
| सको न सहते ... २११ १ | अभ्युद्धरणासम्भवे विशेषः २२७ ३ |

| पृ० | पं० | पृ० | पं० |
|----------------------------|-----|-------------------------------|-----|
| शौचयोग्या मृत्तिका .. २२७ | ६ | आचमने वर्ज्याः .. २४५ | १६ |
| तत्रैव विशेषः .. २२७ | ८ | आचमने सपवित्रता .. २४८ | १२ |
| वर्ज्या मृद्विशेषाः .. २२७ | १५ | स्नानानन्तरमाचमने वि- | |
| शौचे हस्तनियमः .. २२८ | १० | शेषः .. २४९ | १. |
| मृत्स्ननियमः .. २२८ | १३ | स्थलविषये विशेषः .. २४९ | ७ |
| मृत्सङ्ख्या .. २२८ | १६ | आचमनप्रशंसा .. २४९ | १४ |
| इतिकर्तव्यता .. २३० | १२ | आचमनाकरणे प्रत्यवायः .. २५० | १४ |
| मृत्परिमाणम् .. २३२ | २२ | अथ दन्तधावनविधिः .. २५१ | १ |
| भावशुद्ध्यभावे बाह्य- | | काष्ठाभिमन्त्रणमन्त्रः .. २५२ | ९ |
| शौचेन न शुद्धिः .. २३३ | ४ | दन्तधावने वर्ज्याः .. २५२ | १४ |
| अथ गण्डूषविधिः .. २३३ | १६ | वर्ज्यतिथ्यादयः .. २५३ | ५ |
| अथाचमनविधिः .. २३४ | १० | अथ दर्भविधिः .. २५४ | ६ |
| ब्रह्मतीर्थम् .. २३७ | ७ | दर्भोत्पाटनमन्त्रः .. २५५ | १ |
| आचमनीयमुदकम् .. २३६ | १ | वर्णभेदेन विनियोगः .. २५५ | ४ |
| उक्तविषये उपवादः .. २३७ | १ | कुशाभावे काशाः .. २५५ | ८ |
| उदकग्रहणप्रकारः .. २३७ | ४ | वर्ज्या दर्भाः .. २५५ | १४ |
| उदकपानानन्तरभावि- | | उत्पाटने कालनियमः .. २५६ | ३ |
| नी इतिकर्तव्यता .. २३७ | ११ | पवित्रधारणफलम् .. २५६ | ९ |
| उदकस्पर्शनस्य प्रकारा- | | पवित्रप्रकारः .. २५६ | १५ |
| न्तरम् .. २३८ | ६ | स्नानविधिः .. २५८ | ३ |
| आचमननिमित्तानि .. २३८ | १३ | स्नानप्रकारः .. २५९ | ८ |
| आचमनभावे दाक्षिणक- | | स्नाने कालनियमः .. २६० | ४ |
| र्णस्पर्शः .. २४० | १२ | अघमर्षणम् .. २६० | १४ |
| तृणादिस्पर्शः .. २४१ | ६ | स्नानाङ्गतर्पणम् .. २६० | १७ |
| द्विराचमननिमित्तम् .. २४१ | १० | वस्त्रनिष्पीडनमन्त्रः .. २६२ | ६ |
| आचमनापवादः .. २४२ | ११ | वस्त्रपरिधानम् .. २६२ | ११ |
| दन्तलग्नोच्छिष्टम् .. २४३ | १ | तत्र विशेषः .. २६३ | ३ |
| आचमनविन्दवोऽङ्गल- | | वस्त्रविषये विशेषः .. २६४ | ३ |
| मा अपि मेध्याः .. २४४ | १४ | अहतवस्त्रलक्षणम् .. २६४ | १२ |

| पृ० | पं० | पृ० | पं० |
|--------------------------------|--------|-----------------------------------|--------|
| अनुत्तरीयस्य कर्ममात्र- | | निमित्तान्तरम् | २७९ ३ |
| निषेधः | २६५ ३ | नैमित्तिकस्नाने विशेषः २७९ | ७ |
| तत्र अनुकल्पः | २६५ १५ | अथ काभ्यस्नानम् २८० | २ |
| अथ ऊर्ध्वपुण्ड्रविधिः २६६ | ३ | तत्र कालाः | २८० ३ |
| तदुपयोगिमृत्तिकाः | २६६ ४ | अथ मलापकर्षणस्नानम् २८१ | १ |
| अङ्गुलिनियमः | २६६ ९ | तत्र अभ्यङ्गे वर्ज्यावर्ज्याः २८२ | २ |
| पुण्ड्राणाभाकारः | २६६ १२ | तैलविशेषेण अभ्यनुज्ञा २८३ | १७ |
| „ स्नानानि | २६७ ६ | अथ क्रियाङ्गस्ना- | |
| ऊर्ध्वपुण्ड्रप्रशंसा | २६८ १ | नम् | २८३ १५ |
| अथ स्नीनान्तराणि २६८ | ५ | तस्य क्रियाङ्गत्वम् | २८३ १७ |
| मध्याह्नस्नानम् | २६९ ९ | अथ क्रियास्नानम् | २८४ ५ |
| मध्याह्नस्नानेऽधिकार्य- | | उक्तस्नानेषु जलविशेषः २८४ | १४ |
| नधिकारिणौ | २७० ६ | निषिद्धजलम् | २८५ १४ |
| आश्रमभेदेन स्नानव्य- | | प्रतिप्रसवः | २८६ ७ |
| वस्था | २७० ९ | उष्णोदकनिषेधः | २८६ १० |
| स्नानस्य समन्वतां | २७० १२ | आतुरस्य उष्णोदकं न | |
| मृत्तिका | २७१ ६ | निषिद्धम् | २८७ ३ |
| कार्यप्रसालनानन्तरकर्त- | | नशाद्यभावेऽपि | २८७ १२ |
| व्यम् | २७२ १३ | उष्णोदकस्नाने विशेषः २८८ | ८ |
| मृद्ग्रहणमन्त्राः | २७३ ६ | अथ सन्ध्याविधिः २८८ | १४ |
| शोमयमन्त्राः | २७३ १३ | सन्ध्यास्वरूपम् | २८८ १५ |
| अपामार्गमन्त्रः | २७३ १६ | सन्ध्यायास्त्रैविध्यम् | २८९ ८ |
| तीर्थवाहनम् | २७४ ३ | देवतानामभेदः | २८९ १० |
| अघमर्षणम् | २७५ ११ | „ वर्णभेदः | २९० १ |
| ऊरुसंशोधनम् | २७६ ८ | उपासनम् | २९० ६ |
| अनुकल्पः | २७६ १२ | सन्ध्याकालः | २९१ १ |
| अथ नैमित्तिकस्ना- | | सन्ध्यापासनप्रकारः | २९१ ८ |
| नम् | २७७ १ | प्राणायामलक्षणम् | २९१ १६ |
| तत्र निमित्तानि | २७७ २ | | |

| पृ० पं० | पृ० पं० |
|----------------------------------|-----------------------------------|
| प्राणायामस्य वैविध्यम् २९२ १३ | होमकालः ३१२ १४ |
| मार्जनम् २९३ २ | अनुकल्पः ३१४ ५ |
| मार्जने तीर्थविशेषः . २९३ ११ | पक्षहोमः ३१४ १७ |
| मन्त्राचमनम् २९४ ११ | होमद्रव्यम् ३१५ ६ |
| अघमर्षणम् २९५ १३ | आहुतिपरिमाणम् . . ३१६ ६ |
| अर्घ्यप्रदानम् २९५ १६ | श्रौत-स्मार्ताभिव्यवस्था ३१७ ६ |
| अर्घ्यदाने मन्त्रान्तरम् . २९५ ७ | अग्नेर्नैत्यवम् ३१७ १७ |
| उपस्थानम् २९७ ३ | अथ दिवसस्य विभा- |
| मध्याह्नसन्ध्यायां विशेषः २९७ २ | गेषु कर्तव्यम् . . ३१९ ५ |
| कालविशेषः २९७ १५ | दिवतापूजनम् ३१९ १३ |
| देशविशेषः २९७ २१ | होमानन्तरकृत्यम् . . . ३२० ९ |
| सायंसन्ध्याया उपस्था- | अभिवादनम् ३२२ ९ |
| ने मन्त्रविशेषः . . २९८ १४ | अभिवादनप्रकारः . . . ३२३ ३ |
| तत्र न्यायः २९८ १९ | अभिक्षादिनेन वक्तव्या |
| सन्ध्याप्रशंसा ३३० ९ | आशीः ३२३ १६ |
| „ स्मरणे प्रत्यवायः . . ३३० १९ | प्रत्यभिवादनम् ३२४ ९ |
| प्रत्यवायस्यानार्तविषय- | गुर्वादौ उपसङ्ग्रहणम् ३२७ ११ |
| त्वम् ३०१ १२ | उपसङ्ग्रहणलक्षणम् . . ३२७ १८ |
| गूतकादौ सन्धानिषेधः ३०२ ४ | तस्य अपवादः ३२८ १२ |
| अथ सन्ध्याङ्गजपः ३०३ १ | अभिवादाने वर्ज्याः ३२९ ६ |
| जपयज्ञस्य भेदः ३०३ १४ | गुरुलक्षणम् ३३० १५ |
| जपनियमः ३०५ १५ | मान्याः ३३२ ३ |
| जपे वर्ज्याः ३०५ १६ | माताया गरीयस्त्वम् . . ३३३ ७ |
| देशनियमः ३०७ ८ | उपाध्यायाचार्ययोर्लक्ष- |
| जपाङ्गभूता माला . . ३०८ १६ | णम् ३३३ १२ |
| मालामणिसङ्ख्या . . ३०९ १० | पित्रोरप्याचार्यौ गरीयान् ३३३ १९ |
| गायत्रीजपप्रशंसा . . ३१० ४ | बालोऽप्याचार्यौ गरीयान् ३३४ ४ |
| अथ होमविधिः . . ३११ ५ | ज्येष्ठो भ्राता गुरुवत् . . ३३५ १ |
| होतृतारतम्यम् ३११ २१ | परमगुरुरपि गुरुवत् . . ३३५ ९ |

| | पृ० पं० | | पृ० पं० |
|-----------------------------|---------|--------------------------|---------|
| अभिवादनप्रशंसा .. ३३६ | ४ | स्थलस्थो जले तर्पणं न | |
| अथ द्वितीयभागकृ- | | कुर्यात् | ३५२ १६ |
| त्यम् | ३३६ ९ | तत्र विशेषः | ३५३ ५ |
| वेदाभ्यासप्रशंसा | ३३७ १ | पात्रविशेषः | ३५३ १७ |
| वेदहीनस्य क्रियावैक- | | रिक्तहस्तेन तर्पणं न | |
| त्यम् | ३३७ १३ | कार्यम् | ३५४ ६ |
| कृत्यान्तरम् | ३३७ १७ | तिलग्रहणे विशेषः .. | ३५४ १६ |
| तृतीयभागकृत्यम् .. | ३३८ १ | द्विलानां विनियोगविशेषः | ३५५ ३ |
| अर्थसाधनम् | ३३८ २ | देवादितर्पणे विशेषः .. | ३५५ ६ |
| पोष्यवर्गः | ३३८ ८ | तिलतर्पणनिषेधः | ३५५ १० |
| स्ववृत्त्या धनसाधनम् .. | ३३८ १२ | तर्पणीयाः | ३५५ ५ |
| उपायान्तराणि | ३३९ १६ | काण्डधितर्पणम् | ३५७ ४ |
| सत्प्रतिग्रहो विप्रस्यैव .. | ३४० ४ | वस्त्रादिनामानि | ३५७ १८ |
| शिलोज्ज्वालिकैश्च | ३४१ १ | पितृतर्पणप्रकारः | ३५८ १ |
| शूद्रवृत्तिः | ३४२ ४ | नामग्रहणे विशेषः .. | ३५८ १६ |
| अथ चतुर्थभागकृत्यम् | ३४३ ८ | ” तर्पणक्रमः .. | ३५८ १९ |
| मध्याह्नस्नानम् | ३४३ ९ | जीवन्पितृकृतर्पणे विशेषः | ३५९ १४ |
| ब्रह्मयज्ञविधिः | ३४३ १३ | अवसानाञ्जलिः | ३६० २ |
| ” कालः | ३४३ १९ | सङ्क्षेपेण तर्पणम् | ३६० १५ |
| देशादीतिकर्तव्यता .. | ३४४ १६ | यमतर्पणम् | ३६१ ३ |
| उपवीतादीतिकर्तव्यता | ३४५ १ | तत्र नियमः | ३६१ १० |
| इतिकर्तव्यान्तरम् | ३४६ ११ | तस्य फलम् | ३६१ १३ |
| ब्रह्मयज्ञे जप्यम् | ३४७ १९ | भीष्मतर्पणम् | ३६१ १६ |
| ” नानध्यायः .. | ३४८ ८ | तर्पणप्रशंसा | ३६२ ६ |
| अनध्याये उपप्रशंसा | ३४९ ४ | अकरणे प्रत्यवायः | ३६२ ९ |
| ” अल्पं पठनीयम् .. | ३४९ ९ | वस्त्रनिष्पीडनम् | ३६३ १३ |
| आत्म-देशाशुचित्वे वर्ज्यः | ३४९ १३ | सूर्याञ्जलिः | ३६४ ४ |
| अथ तर्पणविधिः .. | ३५० १२ | अथ देवार्चनम् .. | ३६४ १० |
| ब्रह्मसूत्रविन्यासः | ३५१ १५ | | |

| पृ० पं० | |
|---------------------------------|-------------------------|
| | देवस्य एकवेश्मि मूर्ति- |
| भेदेन भेदः ३६५ | १२ |
| वैष्णवमतानुसारिपूजाक्रमः ३६६ | १ |
| अग्निपुराणोक्ता पूजा . . . ३६७ | १ |
| बौधायनोक्ता पूजा . . . ३६९ | ३ |
| विष्णुपूजाप्रशंसा ३७१ | १८ |
| शिवपूजाप्रकारः ३७२ | ५ |
| „ बौधायनोक्ता . . . ३७२ | १६ |
| शिवपूजाप्रशंसा ३७५ | १९ |
| देवार्चनाकरणे दोषः . . ३७६ | ६ |
| अथ गुरुपूजा ३७६ | १२ |
| गुरुपूजाफलम् ३७७ | १० |
| अथ वैश्वदेवः ३७८ | १ |
| वैश्वदेवविधानम् ३७८ | २० |
| पञ्चसूनाः ३८० | १ |
| होमप्रकारः ३८१ | १४ |
| अन्नसंस्कारः ३८१ | १० |
| द्रव्यानुकल्पः ३८१ | १४ |
| अनधिकस्य विशेषः . . . ३८२ | १४ |
| भूतयज्ञः * ३८२ | २० |
| गौणाः कर्तारः ३८३ | ११ |
| कर्त्तृन्तराभावे प्रवसतापि | |
| स्वयं कार्यः ३८३ | १४ |
| बलिहरणप्रकारः ३८३ | १८ |
| श्वादिभ्यो ज्ञम् ३८५ | १० |
| अन्नोत्सर्गमन्त्रः ३८५ | १७ |
| पितृयज्ञः ३८७ | ६ |
| नित्यश्राद्धम् ३८७ | १४ |
| नित्यश्राद्धप्रकारः ३८८ | १४ |

| पृ० पं० | |
|---------|----------------------------------|
| | तत्र अनुकल्पः ३८८ |
| | १८ |
| | उद्धृतान्नदानम् ३८९ |
| | ६ |
| | देवयज्ञादीनां वैश्वदेव- |
| | संज्ञा ३८९ |
| | १० |
| | वैश्वदेवस्य पुरुषार्थत्वमापि ३९० |
| | ५ |
| | अथ मनुष्ययज्ञः . . . ३९१ |
| | १५ |
| | भिक्षादिलक्षणम् ३९२ |
| | ११ |
| | अतिथिनिरीक्षणम् . . . ३९२ |
| | १५ |
| | अथ षट्कर्माणि . . . ३९३ |
| | १० |
| | उक्तार्थे सम्मार्गन्यायः . ३९३ |
| | १५ |
| | अतिथिवर्णनम् ३९५ |
| | ५ |
| | द्वेष्यस्य भोजनीयत्वं नि- |
| | न्दितम् ३९५ |
| | १० |
| | मूर्खस्य भोजनीयत्वं नि- |
| | षिद्धम् ३९५ |
| | १६ |
| | अतिथिलक्षणम् ३९६ |
| | १८ |
| | अतिथिशब्दव्याख्या . . ३९८ |
| | ७ |
| | अतिथ्यागमने कर्तव्यम् ३९९ |
| | १६ |
| | ब्राह्मणस्य क्षत्रियादयो |
| | नातिथयः ४०० |
| | ८ |
| | आसन्नादिदाने विशेषः ४०१ |
| | ४ |
| | अतिथिसत्कारकरणे दोषः ४०१ |
| | ९ |
| | अतिथिसत्कारप्रशंसा . . ४०३ |
| | ९ |
| | आतिथ्यकर्तृनियमाः . . ४०४ |
| | ९ |
| | आतिथ्ये गोत्रादिप्रश्न- |
| | निषेधः ४०४ |
| | १० |
| | देवबुद्ध्याऽतिथिं पूजयेत् ४०५ |
| | ६ |
| | तत्र हेतुः ४०५ |
| | १३ |
| | गोत्रादिप्रश्ने बाधः . . ४०५ |
| | १७ |

| पृ० पं० | पृ० पं० |
|---------------------------------|----------------------------------|
| भोजनार्थं स्वयोज्ञादिकं | प्राणाहुत्यनन्तरं यन्त्रिका- |
| न कथनीयम् . . . ४०६ १ | यां पात्रमारोप्य भोक्त- |
| यति-ब्रह्मचारिणोः | व्यम् ४१७ ४ |
| • पूज्यत्वम् ४०६ ६ | अन्नवन्दनम् ४१७ ११ |
| • भिक्षादानफलम् ४०७ १० | वन्दनानन्तरकृत्यम् . . ४१७ १४ |
| „ प्रकारः . . ४०७ १२ | जिह्वाग्रसने विशेषः . . ४१८ १३ |
| वैश्वदेवात्पूर्वं तयोरगमने | प्राणह्युतिष्वङ्गुलिनियमः ४१८ १७ |
| कर्तव्यम् ४०८ १ | परिषेचनानन्तरो विशेषः ४१९ १ |
| यत्यादिपूजाकरणे प्रत्य- | उक्तविधेः सङ्ग्रहः . . . ४१९ १० |
| वायः ४०८ १३ | भोजनप्रकारः ४२१ १३ |
| यतिभिक्षादाने नियमः . ४०९ १६ | कवलसङ्ख्या ४२५ १८ |
| ऐश्वर्योपेतस्यापि स- | उच्छिष्टशेषणम् ४२२ १४ |
| त्कारः ४१० ६ | सायंप्रातश्च भोजनम् ४२२ २२ |
| विभूतिमानां शिरांशः . . ४११ २ | भोजने वर्ज्यान्नराणि . . ४२३ १० |
| अथ भिक्षुकाः ४११ ७ | भार्यया सह भोजननिषेधः ४२५ ८ |
| व्याधितादीनां भिक्षाविधा- | अन्येऽपि निषेधाः ४२८ १ |
| नम् ४११ १९ | भोजने वाग्यमः ४२७ ७ |
| वैश्वदेवाकरणे दोषः ४१२ १ | अन्येऽपि निषेधाः ४२६ १ |
| आतिथ्याकरणे दोषः . . ४१२ ७ | पङ्क्तिभेदप्रकारः ४२९ ९ |
| अन्येऽपि भोजनीयाः . . ४१२ ११ | भोजने नियमविशेषाः ४२९ १५ |
| पञ्चमहायज्ञप्रशंसा . . ४१३ ६ | भोजनविधेरुदीच्याङ्गानि ४३० १२ |
| अकरणे प्रत्यवायः . . . ४१३ १३ | आचमनप्रकारः ४३१ ३ |
| अथ भोजनविधिः ४१३ १७ | आचमनानन्तरकर्तव्यम् ४३२ १० |
| तत्र वर्जनीयाः ४१३ १८ | तत्र विशेषः ४३३ ५ |
| भोजनविधिः ४१४ १ | ताम्बूलभक्षणम् ४३४ ९ |
| भोजने इतिकर्तव्यता . . ४१४ १६ | ग्रहणकाले भोजननिषेधः ४३५ १ |
| शुद्धपात्रे भोजनं कर्त- | ग्रहणपूर्वकाले निषेधः ४३५ १६ |
| व्यम् ४१५ १८ | कालादौ विशेषः ४३६ ८ |
| यस्यैः कांस्यपात्रनिषेधः ४१६ १२ | |

| पृ० | पं० | पृ० | पं० |
|------------------------------|--------|----------------------------------|--------|
| शक्तस्य भोजने प्रायश्चि- | | प्रजापालनमेव राज्ञः प्र- | |
| त्तम्.....४३६ | ११ | धानं कर्म.....४५२ | २ |
| चन्द्रग्रहेयामत्रयस्य अप- | | प्रजारञ्जनं कर्तव्यम् ..४५३ | ४ |
| वादः | ४३६ १४ | राज्ञः षड्भागः | ४५३ १४ |
| ग्रस्तास्ते विशेषः | ४३६ १६ | युद्धोपकरणानि | ४५४ १० |
| ग्रहणदिनोपवासः.....४३८ | १ | दण्डप्रकारः | ४५४ १७ |
| पुत्रिण उपवासो न ..४३८ | १ | दण्डस्य चातुर्विध्यम् ..४५५ | ५ |
| अवशिष्टदिवसकृत्त- | | दण्डस्थानानि.....४५५ | १६ |
| व्यम् | ४३८ १७ | ब्राह्मणे न वधदण्डः ..४५६ | १ |
| सायं वैश्वदेवादौ विशेषः ४३९ | १७ | परसैन्यनिर्जयः | ४५६ १३ |
| अथ शयनप्रकारः ४४० | १२ | तत्र कालादि | ४५६ १७ |
| सुखशायिनः | ४४१ १७ | शत्रुम्प्रति यानम् | ४५७ १५ |
| शयने वर्जनीयाः | ४४१ २० | बलस्य षड्विधता | ४५८ ६ |
| उक्तस्याकरणे दोषः....४४४ | ६ | सैन्यरचना | ४५८ ९ |
| क्षत्रियस्य साधारणधर्माः ४४४ | १६ | व्यूहभेदः | ४५८ १० |
| द्विविधो राजधर्मः.....४४५ | ७ | सैन्ये सङ्ग्रहाद्याः पुरुषाः ४५९ | ३ |
| व्रतरहितब्रह्मचारिभिक्षा- | | उपरोधः | ४५९ ७ |
| प्रदो यामो दण्ड्यः ४४५ | १५ | सामादिना शत्रुः साध्यः ४५९ | १३ |
| विहिताननुष्ठायिनां सर्वे- | | देशजयानन्तरकृत्यम् ४६० | ६ |
| षां दण्डः | ४४६ ३ | मालाकार इव पुष्पं वि- | |
| दण्ड्यदण्डनप्रशंसा ..४४७ | ७४ | चिन्तयात् | ४६० १२ |
| अदण्ड्यदण्डननिषेधः ४४७ | ८ | राष्ट्रं मधुदेहं दुहेत् ..४६१ | ३ |
| द्विविधो दण्डः.....४४७ | १२ | क्रय-विक्रयादिव्यवस्था ..४६३ | १३ |
| राज्ञः दण्डयितृत्वम् ..४४७ | १७ | अन्तरङ्गा राजधर्माः ..४६२ | ९ |
| राज्ञः प्रशंसा | ४४९ ६ | बहिरङ्गा राजधर्माः ..४६३ | २ |
| राजशब्दः क्षत्रियविषयः ४४९ | १६ | दुर्गसम्पादयम् | ४६३ १८ |
| उक्तार्थे अवेष्टयधिकरणम् ४४९ | १८ | दुर्गभेदाः | ४६४ ४ |
| राजशब्दः क्षत्रियपरः ..४५१ | १७ | दुर्गसंविधानम् | ४६४ ९ |
| | | यागादिधर्माः | ४६५ ६ |

| | पृ० | पं० | | पृ० | पं० |
|-------------------------------------|-----|-----|------------------------------------|-----|-----|
| पुरोहितः कर्तव्यम् | ४६५ | १७ | पशुपालनम् | ४७६ | १३ |
| श्रोत्रियात्करो नादेयः | ४६६ | ७ | विक्रयद्रव्याणि | ४७६ | २० |
| शाला-प्रपादि कर्तव्यम् | ४६६ | १५ | पशुपालने विशेषः | ४७७ | १० |
| भूतपरित्राणं कर्तव्यम् | ४६७ | ६ | अर्घविज्ञानादयः | ४७८ | ६ |
| स्वराष्ट्रं न कर्षयेत् | ४६८ | १ | यथोक्तधर्मानुष्ठाने फलम् | ४७९ | १० |
| राज्ञो दिनचर्या | ४६८ | ६ | अननुष्ठाने दोषः | ४७९ | १४ |
| दानानन्तरकृत्यम् | ४६९ | २ | अथ शूद्रधर्माः | ४७९ | १९ |
| अष्टविधं राज्ञः कर्म | ४७० | ६ | द्विजसेवैव तस्य मुख्यो | | |
| पञ्चवर्गः | ४७१ | २ | धर्मः | ४८० | ३ |
| मध्याह्नकृत्यम् | ४७१ | ५ | अन्येऽपि धर्माः | ४८१ | ५ |
| अपराह्नकृत्यम् | ४७१ | १४ | विप्रसेवा वृत्त्यर्थापि | ४८२ | ९ |
| सायंकालकृत्यम् | ४७२ | १ | द्विजातिना शूद्रस्य | | |
| राज्ञः अन्येऽपि धर्मः | ४७२ | ८ | वृत्तिः कल्प्या | ४८२ | १७ |
| व्यसनानि वर्जयेत् | ४७२ | १६ | द्विजसेवामन्तरेण | | |
| व्यसनवर्णनम् | ४७३ | १ | अन्यत् निष्फलम् | ४८३ | १ |
| व्यसनिनो नाशः | ४७३ | १४ | विप्रसेवा उभयार्था | | |
| व्यसनानि त्यक्त्वा वर्तेत | ४७४ | १ | इतरसेवा वृत्त्यर्था | ४८३ | १ |
| प्रजारक्षणे राज्ञः श्रेयो- | | | शूद्रेण विक्रयः कार्यः | ४८४ | ६ |
| विशेषः | ४७४ | १७ | शिल्पान्यपि कर्तव्यानि | ४८५ | १३ |
| प्रजानामपालने दोषः | ४७५ | ९ | मद्य-मांसादिविक्रयनि- | | |
| वैश्यधर्मप्रकरणम् | ४७६ | १ | षेधः | ४८६ | १ |
| कुसीदादीनां वैश्य- | | | समाप्तिश्लोकः | ४८७ | १२ |
| धर्मत्वम् | ४७६ | ९ | | | |

इति प्रथमाध्यायस्यानुक्रमणिका समाप्ता ॥ श्रीः ॥

ॐ नमः श्रीगणेशाय ।

पराशरसंहिता

माधवाचार्यकृतव्याख्यासहिता ।

आचारकाण्डम् ।

प्रथमोऽध्यायः ।

(टीकाकारोपक्रमणिका ।)

*वागीशाद्याः सुमनसस्सर्वार्थानामुपक्रमे ।

यं नत्वा कृतकृत्याः स्युस्तं नमामि गजाननम् ॥ १ ॥

सोऽहं प्राप्य विवेकतीर्थपदवीमाप्नायतीर्थे परम्
मज्जन् सज्जनतीर्थसङ्गनिपुणः सद्गुणतीर्थं श्रयन् ।

लब्धेधामाकलयन् प्रभावलहरीं श्रीभारतीतीर्थतो
विद्यातीर्थमुपाश्रयन् हृदि भजे श्रीकण्ठमव्याहृतम् ॥ २ ॥

*प्रणम्य मातरं भागीरथीं भागीरथीमिव ।

पितरं गुरुमूर्तिं च हरिं नत्वा पुनः पुनः ॥

पराशरस्मृतेर्व्याख्यां माधवीयां सुविस्तृताम् ।

व्याख्यास्ये बालबोधार्थं सङ्क्षेपेण यथामति ॥*

पराशरसंहितां व्याचिख्यासुस्तत्रभवान् माधवामात्यः निर्विघ्नपरिसमा-
ति-प्रचयगमनार्थं शिष्यशिक्षार्थं च गजानननमस्कारलक्षणं मङ्गलमा-
चरति । वागीशाद्या इति । सर्वार्थानां सर्वेषां कार्याणां उपक्रमे आरम्भे ।
कृतकृत्याः कृतकार्याः । कार्यारम्भे गजानननमस्कारं शास्त्रप्रतिपादितम् ।
सोऽहमिति । सोऽहं माधवाचार्यनामा । विवेको वेदवाक्यार्थविचारः

I. gives सज्जनसङ्गतीर्थ° as a reading from the Kālamādhviya. २. D. reads बद्धा for लब्धा.

* सत्यैकव्रतपालको द्विगुणधीस्व्यर्थी चतुर्वेदिता

पञ्चस्कन्धकृती षडन्वयदृढः सप्ताङ्गसर्वसहः ।

अष्टव्यक्तिकैलाधरो नवनिधिः पुण्यदशप्रत्ययः

स्मार्त्तोच्छ्रायधुरन्धरो विजयते श्रीबुक्केणक्षमापतिः ॥ ३ ॥

तस्य तीर्थं शास्त्रं मीमांसाशास्त्रम् । मीमांसाया विचारशास्त्राभिधानं जै-
मिनीयन्यायमालाविस्तरे स्पष्टम् । तदेव पदवी मार्ग इत्यर्थः । तां प्राप्य ।
आम्नायरूपे तीर्थे निपाने परं अत्यर्थं मज्जन् । मीमांसाशास्त्रज्ञानमन्तरा
वेदार्थाकलनस्यासम्भवात् । कीदृशोऽहम् । सज्जनानां विदुषां राज्ञ एव
तीर्थः मन्त्रिस्तस्य सज्जेन निपुणः विद्वत्सहवासेन निपुणबुद्धिरित्यर्थः ।
पुनश्च सतां माधूनां यत् वृत्तं वर्तनं तदेव तीर्थं क्षेत्रं श्रयन् भगवद्भजनार्थं
पवित्रक्षेत्राश्रयणीमपेक्षितमेव । पुनश्च श्रीमान् योयं भारतीतीर्थः भारती
सरस्वती तस्याः तीर्थोऽवतारः शङ्कराचार्यः तस्मात् लब्धां प्रभावलहरीं
आकलयन् सम्यक् धारयन्नित्यर्थः । भारतीतीर्थ इति शङ्करभगवन् एवा-
भिधानं पञ्चदशैष्टीकादिषु स्पष्टम् । पुनश्च विद्यातीर्थं विद्यागुरुं उपा-
श्रयन्तन् अव्याहतं निरन्तरं श्रीकण्ठं शिवं भजे सेवां करोमीति यो-
जना । अत्र सर्वत्र तीर्थशब्दपर्यायेषु—

‘तीर्थं शास्त्राध्वर-क्षेत्र-पात्रोपाध्याय-मन्त्रिषु ।

‘अवतारार्विजुष्टाग्भःस्त्रीरजस्सु च विश्रुतम्’ ॥

इति विश्वकोशप्रामाण्यमनुमन्धेयम् ।

* धर्मपालकं स्वाश्रयं राजानं स्तौति । सत्येति । सत्यमेव यदेकं मुख्यं
व्रतं तस्य पालकः । द्वौ गुणौ वार्ता-दण्डनीतिविद्यारूपौ यस्यां तादृशी
बुद्धिर्यस्य । यदाह कामन्दकः । ‘वार्ता च दण्डनीतिश्च द्वे विद्ये इत्यव-
स्थितिः’ इति । त्रीन् धर्मार्थकामानर्थयते ऽसौ त्र्यर्थी । यदुक्तम्—

‘न्यायप्रवृत्तो नृपतिरात्मानमपि च प्रजाः ।

त्रिवर्गेषोपसन्धत्ते निहन्ति ध्रुवमन्यथा’ ॥

I. gives कृता for कला. २. D. and I. read विजयताम् for विजयते.
३. H. reads बुक्केणः and thus makes it a separate word out of the
compound बुक्केणक्षमापतिः which is the reading of all other MSS.

* इन्द्रस्याङ्गिरसोऽनलस्य सुमतिः गौव्यस्य मेधातिथिर्
धौम्यो धर्मसुतस्य वैन्यनृपतेः स्वौजा निमैर्गौतेभिः ।
प्रत्यग्दृष्टिरुन्धतीसहचरो रामस्य पुण्यात्मनो
यद्वत्तस्य विभोरभूत् कुलंगुर्मुन्त्वी तथ्य मारुध्वः ॥ ४१॥

इति । तैथी चतुर्णां राजवृत्तानां वेदिता ज्ञाता । यथेकम्—

‘न्यायेनार्जुनमर्थस्य रक्षणं वर्धनं तथा ।

सत्पात्रप्रतिपत्तिश्च राजवृत्तं चतुर्विधम्’ ॥

इति । पञ्चमु सहायादिषु स्कन्धेषु अङ्गेषु कुशलः । तथाचोक्तं काम-
न्दकीये—

‘सहायाः साधनोपाया विभागो देशकालयोः ।

विनिपातप्रतीकारः सिद्धिः पञ्च इत्युच्यते’ ॥

इति । पण्णां सन्ध्यादिगुणानामन्वयेन प्रत्या दृढः । स्याद्दामरासिंहः—

‘सन्धिर्ना विग्रहो यानमासनं द्वैधमाश्रयः । षड्गुणाः’

इति । सप्तभिः स्वाम्यादिभिरङ्गैः सुसम्पन्नैः सर्वे शत्रुकृतोपद्रवादिकं स-
हन्ते तेन न व्याकुलो भवतीत्यर्थः । सप्ताङ्गानि यथा—

‘स्वाम्यमान्यं च राष्ट्रं च दुर्गं कोशो बलं सुहृत् ।

एतावदुच्यते राज्यं सत्त्वबुद्धिव्यपाश्रयम्’ ॥

इति । अष्टौ व्यक्तयो रूपाणि यत्र शिवस्य तस्य लोकपालानां वा कलाधरः ।

जलाद्याः शिवस्याष्टौ मूर्तयः प्रसिद्धाः । नवनिधिः नवसंख्याका निधयो

यस्य । महापद्मादयो नव निधयः प्रसिद्धाः । पुण्यत् वर्धमानं दशानां

इन्द्रियणां प्रत्ययः अधीनत्वं यस्य । ‘प्रत्ययो धीन-शपथ-ज्ञान-विश्वा-

स-हेतुषु’ इत्यमरः । स्मार्तोच्छ्रायस्य धुरन्धरः श्रीबुक्कणक्षमापतिः विजयते

सर्वोत्कर्षेण वर्तते ।

* स्वस्य महत्त्वं वर्णयति । इन्द्रस्येति । आङ्गिरसो बृहस्पतिः । वैन्यनृ-
पतिः पृथुः तस्य । प्रतीची विप्रकृष्ट-व्यवहितदिप्रतिबन्धरहिता दृष्टि-

१. For गौतमिः D. and I. read गौतमः This latter appears to be a mistake, because according to the Rāmāyana of Valmiki the family priest of निमि was Shatānand, the son of गौतम and not गौतम himself.

* प्रज्ञामूलमंही विवेकसलिलैः सिक्ता बलोपघ्निका
मन्त्रैः पल्लविता विशालविट्या सन्ध्यादिभिः षड्गुणैः ।
शक्त्या कोरकिता यशस्सुरभिता सिद्ध्या समुद्यत्फला
सम्प्राप्तं भुवि भाति नीतिलंतिका सर्वोत्तरं माधवम् ॥ ५ ॥

† श्रीमती जननी यस्य सुकीर्तिर्मायणः पितरः । †

सायणो भोगनाथश्च मनोबुद्धिसहोदरौ ॥ ६ ॥

‡ यस्य बौधायनं सूत्रं शाखा यस्य च याजुषी ।

भारद्वाजं कुलं यस्य सर्वज्ञः स हि माधवः ॥ ७ ॥

§ स माधवः सकलपुराणसंहिता-

प्रवर्तकः स्मृतिसुषमापराशरः ।

यस्य । अरुन्धत्याः सहचरो वसिष्ठः कुलगुरुः कुलपुरोहितः । अनेन
पूज्यत्वं सूचितम् । आङ्गिरसादयः सप्त यथा इन्द्रादीनां कुलपुरोहिता
मन्त्रिणश्चासन् तथा माधवोऽपि वीरबुक्कणभूपतेरासीदिति भावः ।

* अधुना स्वस्य नीतिशास्त्रप्रावीण्यं वर्णयति । प्रज्ञामूलेति । प्रज्ञैव मूलं
तदाधारभूता मही च गस्याः । बलं सैन्याटिबलं तदेव उपघ्निका अन्ति-
काश्रयः यस्याः । 'स्यादुपघ्नोऽन्तिकाश्रये' इत्यमरः । शक्त्या प्रभुशक्त्या
कोरकिता मुकुलिता । सर्वोत्तरं सर्वातिशायिमम् ।

† सम्प्रति स्वकुलं वर्णयति । श्रीमतीति । श्रीमती श्रीमतीनाम्नी ।
मनोबुद्धिसहोदरौ सहोदरौ । यथा मनोबुद्धयोरेकमेवास्पदं तथेत्यर्थः ।

‡ स्वस्य गोत्रादिकमाह । यस्येति । याजुषी यजुर्वेदसम्बन्धिनी ।
कुलं गोत्रमित्यर्थः ।

§ एवं श्लोकसप्तकेन स्वस्याधिकारं प्रयोजनं चाभिधाय अधुना

१. D. and I. have सर्वोत्तमम् for सर्वोत्तरम्. २. D. and I. read सुमती
३. A. has यस्व जननी for जननी यस्य. ४. I. reads मनोबुद्धी for मनोबुद्धि
and D. and G. read बुद्धिः सहोदरौ. ५. A. has this verse first and the
verse ६ afterwards. ६. A. and D. read भारद्वाजकुलं for भारद्वाजं कुलं.

परस्वरस्मृतजगदीहिताप्तये

पराशरस्मृतिविवृत्तौ प्रवर्तते ॥ ६ ॥

*पराशरस्मृतिः पूर्वैर्न व्याख्याता निबन्धुभिः ।

मया ज्ञो माधवार्येण तद्व्याख्यायां प्रयस्यते ॥ १ ॥

मनु—नेद्यं स्मृतिव्याख्यानमर्हति । †तत्प्रामाण्यस्य दुर्निरूप्यत्वात् । यत्तु वेदप्रामाण्यकारणं जैमिनिना सूत्रितं—‘तत् प्रमाणं बादरायणस्यान्यानपेक्षत्वात्’ (पू० मी० ३. १. ५)

इति । न तत् पौरुषेयेषु ‡ मूलप्रमाणसापेक्षेषु ग्रन्थेषु यो-

व्याख्यानप्रवृत्तिं प्रतिजानीते । सेति । पुराणसंहिताः । मास्स्याद्याः तासां पठन-पाठन-व्याख्यानादिद्वारेण प्रवर्तकः । स्मृतीनां या सुषमा परमा शोभा ‘सुषमा परमा शोभा’ इत्यमरः । तस्याः व्याख्यानादिद्वारा पराशरः संशय-विपर्ययादिपराकरणपूर्वकं प्रसारकः । परावरं ऐहिकपारलौकिकं यत् स्मृतं स्मृत्युक्तं जगतः वैहितं तस्य तदर्थज्ञान-तदुक्तानुष्ठानादिद्वारा प्राप्तये । पराशरस्मृतिविवरणे प्रवर्तते प्रवृत्तौ भवतीत्यर्थः ।

* अस्या एव स्मृतेर्व्याख्यानप्रवृत्तौ कारणमाह । पराशरेति । पूर्वैः मेधातिथ्यादिभिः ।

† अत्र तच्छब्देन व्याख्यास्यमाणायाः स्मृतेः परामर्शः ।

‡ पौरुषेयाः पुरुषैः मनु-पराशरादिभिः कृताः ग्रन्थाः मूलप्रमाणसापेक्षाः । अतः जैमिनिप्रोक्तं वेदप्रमाणकारणं तेषु योजयितुं न शक्यते । अयं भग्नः—ग्रन्थास्तावत् द्विविधाः स्वतःप्रमाणाः परतःप्रमाणाश्चेति । अपौरुषेयाणामत एव स्वतःप्रमाणानां वेदानां न प्रमाणान्तरसापेक्षत्वम् । कुतः, अन्यानपेक्षत्वात् । तदितराणां पौरुषेयाणामत एव परतःप्रमाणानां स्मृति-पुराणादीनां मूलप्रमाणसापेक्षत्वम् । कुतः, जैमिनिप्रोक्तस्य अन्यानपेक्षत्वरूपस्य प्रामाण्यहेतोः तत्र अभावात् ।

१. A. reads 'जगती' for 'जगदी'. २. D. and I. have 'अयातो' for 'मयातो'. ३. A. alone has 'व्याख्येयं' प्रवर्त्यते, while B. C. and F. have 'व्याख्यायां' प्रवर्त्यते. ४. All copies except B. C. and F. have 'परवात्'. ५. I. omits 'ग्रन्थेषु'.

जयितुं शक्यते । तर्ह्यस्तु * मूलप्रमाणमुपजीव्य प्रामाण्यम् ।
तत्र । मूलस्य दुर्भणत्वात् । न तावत् प्रत्यक्षं मूलम् । तस्यो-
तीन्द्रियत्वात् । †माप्यनुमानम् । तस्य प्रत्यक्षमापेक्षत्वात् ।
‡नापि॑ पुरुषान्तरवाक्यम् । विप्रलम्भकस्य पुंसो यथादृष्टार्थ-
वादित्वाभावात् ।

अविप्रलम्भकस्यापि संशय-विपर्ययसम्भवात् । नापि चोदना ।
तस्या अनुप्रलब्धेः । न खलु स्मर्यमाणानां शौचाद्याचाराणां

* एवं मूलप्रमाणसापेक्षत्वात् अप्रामाण्यं प्रसाध्य पक्षान्तरमुत्थापयति ।
तर्ह्यस्तेति । अस्याः * स्मृतेः धर्मप्रतिपादकत्वात् मूलप्रमाणं धर्मः । स च
प्रत्यक्षादिभिः प्रमाणैः दुर्भणः । तदथा — मूलप्रमाणभूतो धर्मः न तावत्प्र-
त्यक्षः । ‘ इन्द्रियार्थसन्निकर्षोऽपन्नं ज्ञानं अव्यपदेशि अव्यभिचारि व्यव-
सायात्मकं प्रत्यक्षं ’ (गौ० सू० १ । १ । ४) भवितुमर्हति । धर्मस्य अती-
न्द्रियत्वात् । तत्र इन्द्रियस्यार्थेन सन्निकर्षः ।

† अनुमानमपि निराकरोति । नापीति । अनुमानं हि प्रत्यक्षसापेक्षम् ।
‘अथ तत्पूर्वकं त्रिविधमनुमानं पूर्ववत् शेषवत् सामान्यतो दृष्टं च (गौ०
सू० १ । १ । ५) इत्युक्तत्वात् प्रत्यक्षसिद्धौ अनुमानस्याप्यतिद्विः । एवं
‘प्रसिद्धसाधन्यात् साध्यसाधनं उपमानं’ (गौ० सू० १ । १ । ६) अपि न ।
प्रसिद्धस्यान्यस्याभावात् । उपमानस्यानुमानोन्तर्भावश्च ।

‡ शब्दप्रमाणं निवारयति । नापि पुरुषान्तरवाक्यमिति विप्रलम्भकः
विशेषेण प्रलम्भनं गिरुद्धं सम्यग्वेदनं करोति यः । एवमेव चोद-
नापि न । ‘चोदनेति क्रियायाः प्रवर्तकं वचनमाहुः’ (पू० मी० १ । १ । २)
इति शबरस्वामी । तच्च वचनं स्वतः प्रमाणं वैदिकमेव । न मूलप्रमाण-
सापेक्षं पौरुषम् ।

१. न । तन्मू &c. is the reading of B. C. and D. read न । एतन्मूल
&c. २. 1. reads दुर्लभत्वात्. ३. All the copies except A. have धर्मस्य
for तस्य. We have adopted A. for धर्मस्य does not agree with the context.
४. D. adds प्राप्त before विप्रलम्भ. ५. D. has यथार्थदृष्टार्थ. ६. D. E. G. H.
and I. read नो for न. ७. D. reads only शौचाचाराणां.

मूलभूतां काञ्चिच्चोदनां प्रत्यक्षत उपलभामहे । नाप्यनुमातुं शक्यते । * शाक्यादिप्रणीतचैत्यवन्दनादिष्वतिप्रसङ्गात् ।

अथोच्येत—मन्वादिसंस्मृतीनां शाक्यादिसंस्मृतीनां चास्ति महद्वेषम्यम् । प्रत्यक्षवेदेनैव साक्षान्मन्वादिसंस्मृत्याङ्गीकारात् ।

‘यद्वै किञ्च मनुरवदत्तद्वेदजम्’ (तै. सू. २, २, ६, २) ।

इति ह्याम्नायते । न त्वेवं शाक्यादिरूप्यनुप्राहकं किञ्चिद्वै-

* अतिप्रसङ्गं दर्शयति । शा. १ । शक्यं भिज्जो अस्य स शाक्यः । यद्वा—

‘शाक्यजप्रतिच्छन्नं वासं यस्माच्च चकिरे ।
तस्मादिश्वकुवंश्यास्ते शक्या इति स्मृताः ।’ ॥

इत्यागमान । शक्ये भवाः शाक्याः इश्वकुवंशीया राजानः । तद्वंशीयत्वात् बुद्धमुनिरपि शक्यः । चैत्यं बुद्धप्रतिमा । चैत्यनायतने बुद्धबिम्बे-
ऽप्युद्देश्यपादपे इति रुद्रः । यद्यपि आश्वलायनोक्तचैत्ययज्ञं (आ. गृ. सू. १।१२।१) चित्तं भवाश्चैत्या इति व्युपन्याशिव-विष्णवादिप्रतिमाः चैत्यशब्देनोक्ताः तथापि अत्र शाक्यादिप्रणीतचैत्यस्यैव ग्रहणम् ।

† यद्वै इति । मनुः स्वायम्भुवः । यद्वै किञ्च यन्किमपि उक्तवान् तत्सर्वमपि भेषजम् । भेषं रोगं जयतीति भेषजम् । जै क्षयं, भ्रादिः । तथाबोदाहृतं मनुवाक्यं वाचस्पतिमिश्रैः—

‘यः काञ्चित् कस्यचित् धर्मो मनुना परिकीर्तितः ।

स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः’ ॥

(यो. भा. टी. पा. १ सू. ६)

सर्वज्ञत्वात् मनोः वाक्यं भेषजवद्वित्तकारी तस्मान्तेव्यमित्यर्थः ।

‡ शाक्यादीति । आदिपदात् चार्वाकादीनां सर्वेषामपि नास्तिकानां ग्रहणम् । शाक्यादिवचनानि केवलं वैदिककृत्वनामनुगृहीतान्येवेति

१. D. has अनुष्ठानं for अनुमतिः. २. A. and D. have अथोच्यते for अथोच्येत. ३. A. D. have मन्यानाम् for स्मृतीनां. ४. G. alone has प्रस्युत for प्रत्यक्ष. D. omits the sentence ending with beginning with यद्वै किञ्चित् &c. अतो नोक्तातिप्रसङ्गः. ५. E. reads यत्किञ्चित् for यद्वै किञ्च.

दिकं वचोऽस्ति । अतो नोक्तातिप्रसङ्गः—इति । तत्र । 'यद्वै किंच' इत्यस्यार्थवादत्वेन स्वार्थे तात्पर्याभावात् ॥

'मानवी ऋचौ धाय्ये कुर्यात्' (तै. सं. २, २, ६, २)

इति विधाय तद्विधिस्तावकत्वेन 'यद्वै किंच' इत्यादेः पठितत्वात् । तस्य च विधेरयमर्थः—इष्टिविकृतिरूपे सोमारौ द्वे चैरावतिदेशतः प्राप्तासु सामिधेनीषु मध्ये प्रक्षेप्तव्यौ धाय्यासंज्ञकौ यौ द्वौ मन्त्रौ तौ मानवौ कर्तव्यौ—इति । तत्र मानवत्वमुक्तेनार्थवादेन शस्यते । अतो न स्मृतिप्रामाण्यं वेदेनोक्तं—इति शास्त्रादिस्मृतिवदप्रमाणभूता एव मन्वादिस्मृतयः ।

तथा चोक्तम्—

'प्रायेणानृतवादित्वात् पुंसां धान्त्यादिसम्भवात् ।

चोदनाभ्यनुपलब्धेश्च* श्रद्धामात्रात् प्रमाणता' ॥

इति । अस्तु वा कथञ्चित् मनुस्मृतेः प्रामाण्यं तथापि प्रकृतायाः पराशरस्मृतेः किमायातम् ? । नहि मनोरिव परान । अपि तु वेदविरुद्धान्येव तानि । यथोक्तं भट्टकुमारिलश्रीचरणैः—
'श्रद्धादिवचनानि तु कतिपयदम-दानादिवर्जं सर्वाण्येव समस्तचतुर्दशविद्यास्थानविरुद्धानि त्रयीमार्गव्युत्थितविरुद्धाचरणैश्च बुद्धादिभिः प्रणीतानि । त्रयीबाह्येभ्यः चतुर्थवर्णनिरासेतप्रायेभ्यो व्यामूढेभ्यः सम्पित्तानीति न वेदमूलत्वेन सम्भाव्यन्ते' (तं. वा. १ । ३ । ४)

* भट्टकुमारिलश्रीचरणैस्तु तन्त्रवार्तिके—

'भ्रान्तेरनुभवाद्वापि पुंवाक्याद्विप्रलम्भनात् ।

दृष्टानुगुण्यसाध्यत्वात् चोदनैव लघीयसी ॥'

इत्युक्तम् । चोदना प्रमाणभूतं वेदवाक्यम् । तस्याः कल्पनैव लघीयसी ।

१. I. reads विधानात्. २. G. and H. omit च. ३. In the place of चरी G. has चरु निर्वपतीति. ४. I. reads मानववचनमुक्तार्थवादेन शस्यते. ५. D. reads वेशोक्तमिति for वेदेनोक्तमिति.

शरस्य महिम्नानं कचिद्विदः प्रख्यापयति । तंस्मान् तदीय-
स्मृतेः प्रामाण्यं दुर्निरूपमिति ।

अत्रोच्यते । प्रामाण्यस्य स्वतस्त्वात् अप्रामाण्ये कारणा-
भावाच्च स्मृतयः प्रमाणम् । यत्तु, —अप्रामाण्यसाधकमनृतवादि-
त्वादिहेतुत्रयमुपन्यस्तम्, तदसिद्धम् । आजन्मसिद्धेषु मनु-
पराशरादिषु अनृतवदन-भ्रान्त्योरत्यन्तानाशङ्कितत्वेन हेतोः
स्वरूपासिद्धेः । नच आजन्मसिद्धावेव विवदितव्यम् । पराश-
रादिसद्भावबोधकानामेव मन्त्रार्थवादितिहासपुराणार्था तदीय-
सिद्धिबोधकत्वात् । मन्त्राद्यप्रामाण्ये च पराशराद्यसद्भावेनाश्र-
यासिद्धिः केन वार्येत ? । मानान्तराविरुद्धानामननुवादिनां
मन्त्रादीनां स्वार्थे प्रामाण्यमुत्तरमीमांसायां देवताधिकरणे*

* देवताधिकरणं उत्तरमीमांसायां प्रथमेऽध्याये तृतीयपादे षड्विंशं
सूत्रमारभ्य त्रयस्त्रिंशत्तमसूत्रपर्यन्तमष्टभिः सूत्रैः । 'तत्र मन्त्रा अपि श्रुत्या-
दिविनियुक्ताः प्रयोगसमवायिनाऽभिधानार्था न कस्यचिदर्थस्य प्रमाणमि-
त्याचक्षते' इति पूर्वः पक्षः । सिद्धान्तस्तु—'तद्यत्र सोऽवान्तरवाक्यार्थः
प्रमाणान्तरगोचरो भवति तत्र तदनुवादेनार्थवादः प्रवर्तते । यत्र प्रमाणा-
न्तराविरुद्धः तत्र गुणवादेन । यत्र तदुभयं नास्ति तत्र प्रतीतिशरणैः वि-
द्यमानवाद आश्रयणीयो न गुणवादः । एतेन मन्त्रो व्याख्यातः । उक्तं च—

१. All copies except A. and I. We adopt the latter have दुर्निरूपं
प्रामाण्यम्. २. A. reads च for त. ३. All others except A. read सिद्धौ
विवदितव्यम्. ४. We read अवबोधकानां with A. instead of बोधिनाम्
which is the reading of all others. ५. A. reads द्यभावे for द्यसद्भावेन,
that of all others. ६. For अननुवादिनां मन्त्रादीनां. A. alone has मन्त्रादि-
स्मृतीनाम्; D. reads अनुवादिनां for अननुवादिनाम् and omits मन्त्रादीनां.
७. A. D. G. and H. read स्वार्थप्रामाण्यम् for स्वार्थे प्रा० &c.

(उ० मी० १.३. अधि० ९) व्यवस्थापितम् । अर्थवादाधिकरणे तु (पु० मी० २.०२. अधि० १) स्वार्थप्रामाण्यनिराकरणं विरुद्धानुवादयोः सावकाशम् । अतः—‘यद्वै किञ्च’—इत्यर्थवादस्य विधिस्तावकस्य स्वार्थेऽपि तात्पर्यमस्ति—इति न शाक्यादिप्रतिबन्दी युक्ता । ऐतदेवाभिप्रेत्य चतुर्विंशतिमते शाक्यादिवाक्यानामनाष्ट्रणीयत्मुक्तम् ।

‘अर्हच्चावकवाक्यानि बौद्धादिपठितानि तु ।

विश्रुतम्भकवाक्यानि तानि सर्वाणि वर्जयेत्’ ॥

इति । नच पराशरमहिम्नोऽश्रौतत्वम् ।

‘स होवाच व्यासः पाराशर्यः’ (तै. आ. १, १, ३, ३७)

इति श्रुतेः पराशरपुत्रत्वमुपजीव्य व्यासस्य स्तुतत्वात् । यदा सर्वसम्प्रतिपन्नमहिम्नो वेदव्यासस्यापि स्तुतये पराशरपुत्रत्वमुपजीव्यते तदा किमु वक्तव्यमन्विन्यमहिमा पराशर इति । किञ्च वाजसनेयिशाखायां वंशब्राह्मणे वेदसम्प्रदायप्रवर्तकगुरुशिष्यपरम्परायां पराशरस्य पुत्रपौत्रौ श्रूयेते ।

‘धृतकौशिकः पाराशर्यायणात्, पाराशर्यायणः पाराशर्यात्, पाराशर्यो जातूकर्ण्यात्’ ।

‘विरोधे गुणवादः स्यात् अनुवादोऽवधारिते ।

भूतार्थवादस्तद्धानात् अर्थवादस्त्रिधा मतः’ ॥ इति ।

१. D. reads व्यवस्थितम् for व्यवस्थापितम्. २. In A. अपि follows विधिस्तावकस्य instead of अर्थे. ३. B. C. D. E. F. and G. read तद्वै for एतदेव. ४. A. reads अत्र for अर्हत्; though अत्र is not incorrect does not give the sense of अर्हत् which is quite suitable here. ५. II. reads वर्तयेत् for वर्जयेत्. ६. C. omits सर्व.

इति । तस्मात् परमेश्वरोऽपि मनुसमान एव ।

एष एव न्यायो वसिष्ठात्रि-याज्ञवल्क्यादिषु योजनीयः ।
तत्तद्विषयश्रुतीनामुपलम्भात् । 'ऋषयो वा इन्द्रं प्रत्यक्षं नाप-
श्यन् । तं वसिष्ठः प्रत्यक्षमपश्यत्' (तै० सं० ३, ५, २, ५) ।
'अत्रिरददौ दौर्वाय मजां पुत्रकामाय' (तै० सं० ७, १, ८, १) ।

'अथ है याज्ञवल्क्यस्य द्वे भार्ये बभूवतुः' ।

इत्याद्याः श्रुतयः । न चैवं सति मन्वादिस्मृतौ कुतो ज्ञा-
दरः?—इति शङ्कनीयम् । मन्वादिस्मृतेर्भेदातिव्यादिभिरव्याख्या-
तत्वात् ।

या च मूलभूतचोदनाऽनुपलब्धिरुपन्यस्ता*, साऽप्यसिद्धा ।

'पञ्च वा एते महायज्ञाः सतीति प्रतायन्ते सतीति सन्तिष्ठ-
न्ते—देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञः'
(तै० आ० २, १०, ७)

इत्यादीनां स्मार्तधर्ममूलभूतचोदनानामुपलम्भात् । 'सतीति'

* सर्वेषां स्मृतिप्रतिपादितानां धर्माणां मूलभूताः चोदनाः कुतो
नोपलभ्यन्ते ? इति चेत् । तदुक्तं तन्त्रवार्तिके—

'शास्त्रानां विप्रकीर्णत्वात् पुरुषाणां प्रमादतः ।

नानाप्रकरणस्थत्वात् स्मृतेर्मूलं न दृश्यते' ॥

'पुरुषाणां' अर्वाचीनानां स्मृतिपाठकानां न तु मन्वादीनां स्मर्तृणाम् ।
स्मृतेः मूलभूतं श्रुतिवाक्यं कस्यां शाखायां कुत्र कस्मिन् प्रकरणे वर्तते
इति न दृश्यते तथापि तत् कुत्रापि वर्तयेव । अतो न निर्मूलत्वं स्मृतेः ।

† अस्तु वा अदृष्टार्थानां पञ्चमहायज्ञादिप्रातिपादिकानां स्मृतीनां
कथंचित् वेदमूलत्वं तथापि—गुर्वनुगमादीनां दृष्टार्थप्रतिपादिकानां स्म-

सततं नित्यमित्यर्थः । यत्रापि शौचादौ* चोदना नोपलभ्यते
तत्रापि सा सम्भाव्यते । तथा चोक्तं भट्टाचार्यैः—

‘वैदिकैः स्मर्यमाणत्वात् तत्परिग्रहदाढ्यतः ।

‘सम्भाव्यवेदमूलत्वात् स्मृतीनां मानतोचिता’ ॥

इति । मनुना ऽप्येतदेवोक्तम्—

‘श्रुतिं पश्यन्ति मुनयः स्मरन्ति च तथा स्मृतिम् ।

तस्मात् प्रमाणमुभयं प्रमाणैः प्रमितं भुवि ॥

तीनां कुतो वेदमूलत्वं? इति चेत् । न । गुर्वनुगमादिकं न केवलं दृष्टार्थम् ।
यथोक्तम्—‘धर्मं प्रति यतोऽत्रेदं प्रामाण्यं प्रस्तुतं स्मृतेः । तस्मात्कृष्यादि-
वत्तेषामुपन्यासो न युज्यते’ ॥ इति ‘तस्माच्छ्रेयांसं पूर्वं यन्तं पापीयान्
पश्चादन्वेति’ इत्यस्यां स्मृतौ ‘श्रेयांसं’ इत्यभिधानात् अदृष्टार्थत्वमस्येव ।
अत्र भाष्यकृद्भिः श्रीशङ्करस्वामिचरणैः ‘दृष्टार्थत्वादेव प्रामाण्यं’ इति यदुक्तं
तत्पूर्वपक्षवादातिशयार्थम् । एतदुक्तं भवति—यास्तावददृष्टविषयाः स्मृ-
तयः ताः कथञ्चित् कोऽपि अप्रमाणीकुर्यात् । कथं पुनरिमाः दृष्टविषयाः
गुर्वनुगमनादिविषयाः अप्रमाणं भविष्यन्ति—इति ।

* शौचादावपि कञ्चित् चोदना उपलभ्यते । यथा—‘मलवद्वात-
सा सह न संवदेत् । तस्मान्न ब्राह्मणायावगुरेत्’ इत्याद्याः ।

१. C. only omits नित्यम्. २. चोदना is omitted by all except A.

३. These two are according to the author quoted from Manu ; but
the MSS. and published editions of Manu which we have examined
give the following in the place of the first :—

‘श्रुतिस्तु वैश्वे विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः ।

ते सर्वार्थैर्व्यभीमांस्ये ताभ्यां धर्मो हि निर्बभौ’ ॥

As, however, the spirit of both is one and the same, and as the one
can replace the other without affecting the contest of the preceding
and succeeding texts, we think that the verse quoted by Madhava is
simply a reading of the verse we have given above from Manu.

४. For प्रमितं D. has प्रथितं; and I. प्रापितम्.

यो ऽत्रमन्येत ते तूभे *हेतुशास्त्राश्रयाञ्चरैः ।
स साधुभिर्बहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः' ॥

[अ. २ । ११]

इति । आनुशासनिके ऽपि—

‘धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं प्रथमं श्रुतिः ।

द्वितीयं धर्मशास्त्रं† तु तृतीयं लोकसंग्रहः’‡ ॥

इति । तस्मात् व्याख्यातुं योग्या पराशरस्मृतिरिति सिद्धम् ।

* हेतुशास्त्रं बौद्धादिप्रणीतचैत्यवन्दनादिशास्त्रं वैदिकप्रमाणरहितम् ।
तस्य आश्रयात् नास्तिकवादावलम्बनेनेत्यर्थः । यथोक्तं वार्तिके—

‘शाक्यादयश्च सर्वत्र कुर्वाणा धर्मदेशनाम् †

हेतुजालविनिर्मुक्तां न कदाचन कुर्वते ॥

न च तैर्वेदमूलत्वमुच्यते गौतमादिबन्तः ।

हेतवश्चाभिधीयन्ते, ये धर्माद्भूतः स्थिताः ॥

एत एव च ते येषां ‘वाङ्मात्रेणापि नार्चनम् ।

पाखण्डिनो विकर्मस्था हेतुकाश्चेत एव हि’ ॥

† धर्मशास्त्रं मन्वादिस्मृतयः । तत्र धर्मोपदेश एव प्रधानः । इतिवृत्ता-
ख्यानं त्वानुषङ्गिकम् । यद्यपि पुराणादिष्वपि धर्मोपदेशो वर्तते तथापि
तत्र इतिवृत्ताख्यानमेव प्रधानम् । धर्मोपदेशस्त्वानुषङ्गिकः । अतः पुराणा-
दिकं न धर्मशास्त्रम् ।

‡ लोकस्य सङ्ग्रहः लोकाचारः शिष्टाचार इति यावत् ।

१. In this verse it is found in the original with slight differences of readings, &c. मूले is found in the place of तूभे. But it is not quite clear which of the two is the reading of *Medhātithi*, *Sarvajñanārayana*, *Kāllookbhatta*, *Rāghavānanda*, and *Nandana*, which *Rāmchandra* and *Govindrāja*, distinctly adopt the reading तूभे for the original मूले.

२. द्विजः is the reading for नरः as found in the original and adopted by all the commentaries. ३. We read प्रथमं with A. but all others read परमं. We cannot find the whole verse in *Mahābhārata Anushāsani* Purva, but the first half of the same is the latter half of the *Manusmṛiti* 2,13; and the commentaries of Manu read परमं.

पराशरस्मृतावस्थां ग्रन्थकृतिर्विविच्यते ।
 द्वे काण्डे द्वादशाध्यायाः श्लोका अष्टोनवदशतम् ॥
 आचारस्यादिमः काण्डः प्रायश्चित्तस्य चान्तिमः ।
 इष्टप्राप्तिरनिष्टस्य निवृत्तिश्चानयोः क्रमात् ॥
 'एते सर्वे पुण्यलोका भवन्ती'ति श्रुतिर्जगौ—
 ब्रह्मितादश्रमाचारादिष्टांति पारलौकिकीम् ॥
 प्रसक्तो नरको निष्ठो निषिद्धाचरणेन ये ।
 तन्निवृत्तिः स्फुटो शास्त्रे प्रायश्चित्ताभिधायिनी ॥
 परलोकप्रधानस्य* धर्मस्यैषा द्वयी गतिः—
 प्रायश्चित्तं तथाऽऽचारः श्रौते^१ धर्मे तथेक्षणात् ॥
 श्रौतो^२ धर्मोऽग्निहोत्रादिराचारस्तदनुष्ठितिः ।
 अथर्थाविध्यनुष्ठाने प्रायश्चित्तं श्रुतौ श्रुतम् ॥
 कल्पसूत्रकृतः^३ श्रौते^४ प्रायश्चित्तमनुष्ठितिम् ।

* भगवता महर्षिणा पराशरेण काण्डद्वयमेवोक्तं तत्र हेतुमाह । पर-
 लोकेति । धर्मो द्विधा । परलोकप्रधान एतल्लोकप्रधानश्च । तत्र तावत्
 श्रौतो धर्मः परलोकप्रधानः एतल्लोकोपसर्जनः । तस्यैव विवक्षितत्वात्
 आचारः प्रायश्चित्तं चेति काण्डद्वयमेवोक्तम् । न व्यवहारः ।

† कल्पसूत्राणि^५ बोधायनीय-आश्वलायनीय-द्राह्यायणीयादिनामभिः
 प्रसिद्धाः कर्मप्रयोगप्रतिपादका ग्रन्थाः । तेषां कर्तारः तत्तन्नामका ऋ-
 षयः । कल्पसूत्रलक्षणमुक्तं भट्टपादैः—

१. A. reads इष्टांतिः; and २. पारलौकिकी for पारलौकिकीम्. ३. A. has
 स्फुटं for स्फुटा. ४. All but A. G. and I. read श्रौतधर्मे for श्रौते धर्मे.
 ५. D. and I. read श्रौतधर्मो for श्रौतो धर्मो. ६. B. C. have अन्यथा for
 अथथा. ७. A. alone reads सूत्रे for श्रौते.

असूत्र्यनुभे एव व्यवहार* तु नाब्रुवम् ॥
 तद्वदेवायमाचार्यः परलोकप्रधानकम् ।
 स्मार्त्तं धर्मं विवक्षुः सन् काण्डद्वयमवोचत ॥
 ननु†—चोदनया गम्ये व्यवहारेऽपि धर्मता—
 अस्तीति चेदस्त्वं, सा तु लोके अस्मिन्नुपयुज्यते‡ ॥
 कारीर्यादिश्रौतधर्मो दृष्टैकफलको यथा ।
 लाभ-पूजा-ख्यातिमात्रफला व्यवहृतिस्तथा ॥
 जेतुर्लाभादिकं तद्वत् पराजितुश्च दण्डनम् ।
 तावेव स्वर्ग-नरकौ विहित-प्रतिषिद्धौ ॥

‘सिद्धरूपः प्रयोगो यैः कर्मणामनुगम्यते ।

ते कल्पा लक्षणार्थानि सूत्राणीति प्रचक्षते ॥

कल्पनाद्वि प्रयोगाणां कल्पो अनुष्ठानसाधनम् ।

सूत्रं तु सूचनान्तेषां स्वयं कल्प्यप्रयोगकम्’ ॥ इति ।

* व्यवहारशब्दस्य निरुक्तिर्यथा—

‘वि-नानार्थे, ज्व-सन्देहे, हरणं हार उच्यते ।

नानासन्देहहरणात् व्यवहार इति स्मृतः’ ॥

सोऽयं व्यवहारः चतुष्पात् अग्रे तृतीयकाण्डे विस्तरेणाभिधास्यति ।

† अब्रुव शङ्कते । ‘चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः’ (पू. मी. १ । १ ।

२) इत्युक्तत्वात् चोदनाया व्यवहारोऽपि गम्यते । तस्मात् तस्यापि धर्मत्वं वर्तते । अतो व्यवहारोऽपि वक्तुमुचित एव ।

‡ सीमाधत्ते । अस्तु नाम व्यवहारस्य धर्मता । सां अस्मिन्नेव लोके उपयुज्यते । दृष्टैकफलत्वात् । अयमभिसन्धिः—व्यवहाररूपो धर्मः एत-
 लोकप्रधानः । परलोकेऽस्तु उपसर्जनीभूतः । परलोकप्रधानस्यैव धर्मस्य
 विवक्षितत्वादाज्यार्येण व्यवहारोऽत्र नोक्तः ।

१. H. and I. have असूचयन् for असूचयन्. २. H. and I. read प्रसाधनम् for प्रधानकम्. ३. A. substitutes न तत्र for ननु. ४. For इत्तु सा तु B. C. E. F. G. H. and I. read अनुष्ठानः; अनुष्ठानः is correct; but it is not idiomatic. ५. H. has खण्डनम् for दण्डनम्.

ननु*—राज्ञश्च सभ्यानां साक्षिणीं चान्यथाकृतौ ॥

प्रत्यवायात् व्यवहृतिः परलोकप्रयोजना ।

‘अदण्ड्यान्’ दण्डयन् राजा दण्ड्यांश्चैवाप्यदण्डयन् ।

अयंशो महदाप्नोति नरकं चापि गच्छति ।

[अ. ८. श्लो. १२८]

संभा वा न प्रवेष्टव्या वक्तव्यं वा समञ्जसम् ॥

अब्रुवन् विब्रुवन् वापि नरो भवति किल्बिषी ।

[अ. ८. श्लो. १३]

साक्ष्ये ऽनृतं वदन् पाशैर्वध्यते वारुणैर्भृशम् ॥

विवशः शतमोजातीः तस्मात् साक्षी वदेदृतम् ।

[अ. ८. श्लो. ८२]

राजादेः प्रत्यवायोऽस्तु व्यवहारे किमागतम्? ॥

व्यवहारो न राजादेरर्थि-प्रत्यर्थिनोस्तु सः ।

प्रत्यर्थिनोर्र्थिनो वाऽत्र प्रत्यवायो नहि स्मृतः ॥

पराजयनिमित्तेन प्रायश्चित्तं च न स्मृतम् ॥

* व्यवहारस्यैतलोकप्रधानत्वमाशङ्कते । नन्विति । राजादीनामन्यायेन व्यवहारनिरीक्षणे प्रत्यवायोक्तेः । तदपाकरणे प्रायश्चित्तानुष्ठानमपेक्षितम् । तथा सति व्यवहारस्यापि परलोकप्रधानत्वं सिद्धम् ।

† राजादीनां प्रत्यवायविषये मनुवाक्यानि पठति । अदण्ड्यान्निति ।

‡ समाधत्ते । अस्तु नाम राजादीनां प्रत्यवायः । व्यवहारो न राजादिकृतः । अर्थिप्रत्यर्थिनोरेव व्यवहारः । तयोस्तु जयापजरूपे इष्टानिष्टे ऐहिके एव फले । न प्रायश्चित्तादिकम् ।

१. This verse is omitted by B. C. and F. Kúlookabhat and Rāghwanand prefer संभा वा न प्रवेष्टव्यम्. २. MSS. read नरः, we adopt the original. ३. A. reads वर्षाणि (or ओजातीः). ४. D. has निमित्ते तु for निमित्तेन.

ऋणोद्यैर्नरकोक्तिर्या* सा ऽप्याचारनिबन्धना ।
 अस्तु† वा नरकः शास्त्रविरुद्धव्यवहारिणः ॥
 परलोकप्रधानत्वमेवास्माभिर्निवार्यते ।
 एतल्लोकप्रधानो व्यः परलोकौपसर्जनः ॥ .
 स धर्मो व्यवहारः स्यादाचास्तु विपर्यये ।
 प्राधान्ये‡ ऽप्यस्य लोकस्य स्यादेवास्मायमूलत्वा ॥
 गान्धर्वाद्युपवेदेषु तादृशेषु तदीक्षणात् ।
 'जग्राह पाठ्यमृग्वेदात्सामभ्यो गीतिमेव'§ कृ ॥ .

* यातु ऋणापाकरणादिना नरकप्राप्तिरुक्ता सापि आचारनिबन्धना लोकव्यवहारमूलभूता । नरकोक्त्या निन्द्यत्वमेवाभिहितमिति भावः ।

† ननु—'ऋणानां चानपक्रिया' (अ. ११. श्लो. ६५) इत्यत्र मनुना ऋणानपाकरणस्योपपातकमध्ये परिगणितत्वात् प्रत्यवाय एव गम्यते । तत्कथमुच्यते आचारनिरुधनेति ! । एवमेव व्यवहारनिर्णयस्य राजादीनामनुष्ठेयत्वात् अन्यथाकरणे तेषामपि प्रत्यवायः स्यादेव । उभयथापि व्यवहारस्य परलोकप्रयोजनकत्वं दुर्निवारमित्यत आह । अस्त्विति । व्यवहारस्य परलोकप्रधानत्वमेवास्माभिर्निवार्यते न उपसर्जनत्वम् । अतो न कश्चिद्विरोध इत्यर्थः ।

‡ एतल्लोकप्रधानत्वेऽपि व्यवहारस्यास्मायमूलत्वं स्यादेव । कुतः, तादृशेषु व्यवहारसदृशेष्वेव गान्धर्वादिषु वेदमूलत्वदर्शनात् ।

§ गान्धर्वोपवेदस्य आस्मायमूलत्वप्रदर्शनार्थं भरतोक्तिमवतारयति । जग्राहेति । प्रकारान्तरेणाप्यस्य क्रतुत्वं प्रतिपादितं भरतेन । यथा—

१. A. and D. read ऋणाद्यै for ऋणाद्यैः; and G. has for the same ऋणाद्यैः. २. D. reads निबन्धिनी for निबन्धना. ३. A. substitutes पाठ्य for पाठ्यम्; and I. reads वाक्यम्.

यजुर्वेदांशंभिनयान् रसानाथर्वणदपि' ।
 किं बहुक्त्या ज्यमाचार्यः परलोकैकदृष्टिमान् ॥
 व्यवहारं तु नावोचत् किन्तु सूचितवानेमुम् ।
 राजधर्मप्रसङ्गेन 'क्षितिं धर्मेण पालयन्' ॥
 इति ब्रुवन् राजदृश्यं व्यवहारमसूचयन् ।
 साक्षादिष्टासिद्धेतुत्वादाचारः पूर्वमीर्यते ॥
 आचारस्यान्यथात्वे तु प्रायश्चित्तगवेषणम् ।
 इहाचारे त्रयो ज्ञायाः प्रायश्चित्ते न वेरिताः ॥
 आचारेतश्चतुर्वर्णधर्मो साधारणतरौ ।
 शिष्टाचारान्वितस्तत्र धर्मः साधारणः स्मृतः ॥

* प्रयोगं यश्च कुर्वीत प्रेक्षते वा विधानवान् ।

या गतिर्वेदविदुषां या गतिर्यजयाजिनाम्

या गतिर्दानशीलानां तां गतिं प्राप्नुयाचरः ॥

इत्यर्थवादेन कर्तुं भवति ।

* आचारस्यैव प्रथममुक्तौ हेतुमाह । साक्षादिति । प्रत्यक्षत्वेन इष्टासिद्धेतुत्वमाचारस्य परलोकप्रधानत्वेन ।

† साधारणः तद्विपरः असाधारणः । आचारकाण्डे वर्णचतुष्टयस्य साधारणो जसाधारणश्च द्विविधो जपि धर्म उक्त इति भावः ।

१. सूचितवानमुम् is replaced by सूचितवानुत्तम् in D. and G. २. A. reads पालयेत् for पालयत्. ३. A. alone has, इष्यते for ईर्यते. ४. A. and I. read नवेरिताः for 'नवेरिताः'. ५. For आचारः II. substitutes अवतारः. ६. All except A. and I. have the following:—शिष्टाचारादिके तत्र धर्मो साधारणो मत्तौ for the text; this appears to be a mistake when we take into consideration what has been said in the previous line.

षट्कर्म-क्षितिरक्षाद्याः वर्णांसाधारणाः* स्मृताः ।
 आचारे प्रथमाध्याये त एते र्थाः प्रकीर्तिताः ॥
 कृष्यादि जीवनोपाया द्वितीये अध्याय ईरिताः ।
 चतुराश्रमधर्माश्च सूचिता आश्रमोक्तितः ॥ •
 उक्तो† तृतीय आशौचविस्नार-आह्नसङ्ग्रहौ ।
 अध्यायत्रयगा अर्थाः प्रोक्ता आचारकण्डगाः ॥
 तुर्ये‡ प्रकीर्णपापस्य प्रायश्चित्तं प्राम्निवत् ॥
 प्रसङ्गात् पुत्रभेदादि प्रोक्तं च परिवेदनम् ॥ •

* वर्णानां असाधारणाः विशिष्टा इत्यर्थः । तथा हि । षट्कर्माणि ब्राह्मणस्यैव, क्षितिरक्षा क्षत्रियस्यैव, एवं वैश्य-शूद्रयोरपि वाणिज्य-सेवादयः असाधारणा धर्माः प्रतिपादिताः ।

† ननु-आचारानन्तरं व्यवहारः कुतो नोक्तः ? इति चेत् । आचारस्य अन्यथात्वे प्रायश्चित्तगवेषणं कर्तव्यम् । अतः क्रमप्राप्तत्वेन प्रायश्चित्तस्यैव वक्तव्यत्वात् व्यवहारस्य नावकाशः । तुर्ये इति । 'मदनुक्तं तत्प्रकीर्णम्' इत्युक्तलक्षगस्य महापातकादन्यतमत्वेन नोक्तस्य प्रकीर्णपापस्य प्रायश्चित्तं चतुर्थे अध्याये अभिहितमित्यर्थः ।

‡ पुत्रभेदादिकस्य परिवेदनस्य च विषयान्तरत्वेन अपि प्रसङ्गात् तदुक्तमित्याह । प्रसङ्गादिति । प्रसङ्गस्तु 'द्वौ कृच्छ्रौ परिवेदनेस्तु' इत्यादि-प्रायश्चित्तकथनरूपः । परिवेदनं तु ज्येष्ठे भ्रातर्यकृतदाराभिहोत्रसंयोगे कनिष्ठस्य तत्करणम् । एतच्चाग्रे मूल एव स्पष्टम् ।

१. All but D. reads वर्णसा-for वर्णासा-; H. substitutes धर्माः for वर्णाः, which in the original is corrected in the margin to धर्माः.
 २. All except A. and I. have for the text the following: कृष्यादिजीव-
 नोपाया द्वितीयेऽध्याय ईरिताः ।

प्रकीर्णशेषः संस्कारः आहिताग्नेश्च पञ्चमे ।
 मलावहं* च सङ्कीर्णं तथा चैवोपपातके ॥
 प्रायश्चित्तं षष्ठ उक्तं शुद्धिश्चात्रे रसेऽपि च ।
 अत्रांशिष्ठेऽव्यशुद्धिः सप्तमाध्याय ईरिना ॥
 प्रायश्चित्तं गोवधे च सामान्येनाष्टमे स्मृतम् ।
 रोधनादिविशेषेण नवमे तदुदीरितम् ॥
 अगम्यागमने प्रायश्चित्तं दशम ईरितम् ।
 अभोज्यभोजनादौ तदेकादश उदीरितम् ॥
 द्वादशः परिशेषः† स्यात् काण्डयोरुभयोर्स्तयोः ।
 अत्रान्येषामनुक्तानामुपलक्षणमीक्ष्यताम् ॥

* मलावहं मलो दोषः तं आवहति । मलावहलक्षणं यथा—

‘कृमि-कीट-वयोहत्या मद्याबुगतभोजनम् ।

फलैधः-कुमुमस्तेयं अधैर्यं च मलावहम्’ ॥

[मनुस्मृ० ११. ७०]

इत्युक्तलक्षणं पापं मलावहमित्यर्थः । सङ्कीर्णं सङ्करीकरणम् । तदपि यथा—

‘खराश्वोष्ट्र-मृगेभानामजाविकवधस्तथा ।

सङ्करीकरणं जैर्यं मीनाहि-महिषस्य च’ ॥

[मनुस्मृ० ११. ६८]

इत्युक्तलक्षणम् । उपपातकं तु अनेकविधं मन्वादेरभिहितम् ।

† द्वादशेऽध्याये काण्डद्वयस्यापि परिशेष उक्तः । अनुक्तः परिशेषः । अनुक्तानामप्यन्येषां प्रायश्चित्तानामुपलक्षणं ईक्ष्यताम् ।

१. A. reads अवशिष्टा for अवशिष्ट.- २. A. and D. read गोवधस्य for गोवधे च. ३. D. and H. read द्वादशे for द्वादशः. ४. G. substitutes खण्डयोः for काण्डयोः. ५. A. and I. have तयोः, while all others have-द्वयोः, which seems to be a mistake. ६. A. has स चा- for अत्रा-; for the same D. E. and G have यस्या-; and H. and I. read स्याद-.

अनुपातकमुख्येषु* प्रायश्चित्तं क्वचित् क्वचित् ।
 नोक्तं तथा रहस्यं च प्रायश्चित्तं च वर्णितम् ॥
 सौम्य-पर्णादिरुच्छ्राणि नोदितान्यङ्ग कानिचित् ।
 नोक्तः कर्मविपाकश्च† तत्सर्वमुपलक्षितम् ॥
 इत्थं नवभिरध्यायैः प्रायश्चित्तं प्रपञ्चितम् ।
 कलि‡ प्रति प्रवृत्तत्वात् प्रायश्चित्तप्रपञ्चनम् ॥
 कलौ हि पापबाहुल्यं दृश्यते स्मर्यतेऽपि च ।
 नराः प्रायोऽल्पसामर्थ्यास्तेषामनुजिघृक्षया ॥
 समकोचयदाचारं प्रायश्चित्तं व्रतानि च ।
 'तेषां निन्दा न कर्त्तव्या युगरूपा हि ते दिजाः' ॥
 (प. स्मृ. १. ३३; ११. ५१)

* येषामुपलक्षणं वर्तते तान्याह । अनुपातकेति ।

† कर्मविपाकः कृतस्य कर्मणः जन्मान्तरे व्याध्यादिरूपेण परिणामः ।
 स च शातातपसंहितायां विस्तरेणोक्तः—

‘प्रायश्चित्तविहीनानां महापातकिनां नृणाम् ।

नरकान्ते भवेज्जन्म चिह्नाङ्कितशरीरिणाम् ॥’

इत्यादिना । विस्तरस्तत्रैवानुसन्धेयः ।

‡ नवभिरध्यायैः विस्तरेण प्रायश्चित्तकथने हेतुमाह । कलिमिति ।
 भगवता पराशरेण कलिं प्रकृत्यैव धर्मा उक्ताः । कलौ च पापबाहुल्यमतः
 विस्तरेण प्रायश्चित्तकथनमपेक्षितमिति भावः ।

१. All but A. and I. read अनुपातकमुख्येषु for अनुपातकमुख्येषु. The former is not a good reading. २. D. and G. read प्रपञ्चयते for प्रपञ्चितम्. ३. A. and I. read प्रायश्चित्तं प्रपञ्चितम् for प्रायश्चित्तप्रपञ्चनम्; while H. omits the whole of the first line, vital, कलिं प्रति प्रवृत्तत्वात् प्रायश्चित्तप्रपञ्चनम्. ४. C. reads समकोचयदाचारं प्रायश्चित्तैषा कृपालुता, thus omitting the whole:—प्रायश्चित्तं व्रतानि च । तेषां निन्दा न कर्त्तव्या युगरूपा हि ते दिजाः । इत्युक्तिमाशङ्कते च.

इत्युक्तिमादावन्ते च प्रायुक्तैषां कृपालुता ।
 वेदैकदेशाध्ययनं कृत्वा विप्रादिजीवनम् ॥
 इत्यादिवचसाऽऽचारे सङ्कोचो भासते स्फुटम् ।
 प्राज्ञापत्यं गोवधे स्यात् ब्रह्मध्वं सेतुदर्शनम् ॥
 इति मुख्यव्रतत्वोक्तेः सङ्कोचाऽत्रापि गम्यते ।
 स्मृत्यन्तरानुसारेण विषयस्य व्यवस्थितिः ॥
 कैल्पनीया—इति चेत् ब्रूहि* सर्वज्ञमन्य साधकम् ।
 यावन्त्यः स्मृतयस्तासां सर्वासामनुसारतः ॥
 साकल्यात्—वेदस्मदादेस्तत्रां शक्तिर्न विद्यते ।
 स्वेन दृष्टास्तु यावन्त्यस्तासां—इत्यप्युक्तिमतः ॥

* यदुक्तं 'सङ्कोचोऽत्रापि गम्यते' इति तत्र । गोवधे प्राज्ञापत्यं ब्रह्म-
 णवधे सेतुदर्शनं च न मुख्यव्रतम् । येन सङ्कोचः सिद्ध्येत् । अतः—

‘यथावयो यथाकालं यथाप्राणं च ब्रह्मणे ।

प्रायश्चित्तं प्रवक्तव्यं ब्रह्मणैर्धर्मपृष्ठकैः ॥

तस्मात् कृत्स्नतथाप्यर्थं पादं वापि विधानतः ।

‘जात्रा बलाबलं कालं प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् ॥

इत्यादिस्मृत्यन्तरदर्शनात् गोवधादौ त्रैमासिकादिव्रतविधायक-
 स्मृत्यन्तरसद्भावाच्च शक्त्यादितारतम्येन स्मृत्यन्तगानुसारेण विषयस्य
 व्यवस्थितिः कार्या—इति चेत् हे सर्वज्ञमन्य तस्य साधकं ब्रूहि । सर्वज्ञं विना
 सर्वासां स्मृतीनां ज्ञातुमशक्यत्वात् । स्मृत्यन्तरानुसारेण विषयस्य व्यवस्थितिः
 सर्वज्ञं विना न भवेदित्यर्थः ।

† तदेव विकल्प्य परिहरति । यावन्त्य इति । साकल्येन सर्वाः स्मृतयो

१. D. H. and I. have इत्युक्तिमादा- for 'इत्युक्तिमादा-'. २. I. reads प्रायुक्तै-
 षा for प्रायुक्तैषां. ३. D. E. G. and I. ब्रह्मध्वं for ब्रह्मध्वे. ४. I. reads
 सर्वज्ञं- for सर्वज्ञं-. ५. We take our reading from A. while all other
 read मन्त्रसे कथम्; this reading does not give good sense to the sentence.
 ६. D. reads यावन्त्यः for यावन्त्यः. ७. Again D. has यावन्त्यः for यावन्त्रः.

कचित् कदाचिदन्यासां दर्शनादव्यवस्थितैः ।
 अल्पिकां मानुषी* बुद्धिः सा च न व्यवनिष्ठते ॥
 अत एव निबन्धेषु दृश्यते नैकवाक्यता । .
 हन्तेव† खण्डने शास्त्रं भवेन्नजलाञ्जलि- ॥
 न खण्डये वारये तु पण्डितमन्यतां तत्र ।
 शृणु‡ निर्णयमात्रं त्वं स्वतःप्रामाण्यवादिनः ॥
 प्रतीतिं ऽर्थे अखिलं शास्त्रं प्रमाणं बाधया विना ।
 न पराशरवाक्यस्य बाधः स्मृत्यन्तरं कश्चित्

दृष्ट्वा तदनुसारतः विषयव्यवस्था कर्तव्या-इति चेत् अस्मदादेस्तत्र
 शक्तिर्न विद्यते । स्मृतीनामानन्यात् । स्वेन यावत्सो दृष्टाः वासामनुसारत
 एव व्यवस्था कर्तव्येति चेत् तदपि अयुक्तिमत् । कश्चित् देशे कदाचित्
 काले अन्यस्मिन्निदर्शने तद्विरोधे च अव्यवस्थापत्तेः । अतो न स्मृत्यन्तरा-
 नुसारेण विषयस्य व्यवस्थितिर्भवति ।

* यतो मनुष्यस्य बुद्धिरल्पा अतः सा एकस्मिन्विषये न व्यवस्थिता
 भवति । अत एव च निबन्धेषु अपराकादिषु एकवाक्यता न दृश्यते ।
 यदि निबन्धकर्तृणां साकल्येन सर्वं स्मृत्यवलोकने समर्थं भवेत्, तर्हि
 तेषामेकवाक्यता स्यात् । तत्तु न भवति ।

† पूर्वपक्षी शङ्कते । हन्तेति । एवं रीत्या मत्कृतपूर्वपक्षस्य खण्डने कृते
 सति विषयव्यवस्थाभावेन परस्परविरोधात् शास्त्रं दनजलाञ्जलि भवेत् ।
 परस्परविरोधपरिहाराभावात् अग्राह्यं स्यादित्यर्थः । सिद्धान्ती समाधत्ते ।
 न खण्डये इति । अहं त्वन्मतं न खण्डये अपि तु तव पण्डितमन्यतां वारये ।

‡ निर्णयमाह । शृण्वति । स्वतःप्रामाण्यवादिनः प्रामाण्यस्य स्वत-
 स्त्ववादिनः, बाधो न चेत् प्रतीते ऽर्थे अखिलमपि शास्त्रं प्रमाणं भवति ।
 निराबाधत्वात् कारणान्तरापेक्षाविरहः ।

१. A. alone has व्यवस्थितिः for-व्यवस्थितैः. २. D. reads कल्पिता
 for अल्पिका. ३. A. has चारयितुम् for वारये तु. ४. D. reads अखिले
 शास्त्रं for-अखिलं शास्त्रं.

व्रतान्तरोपदेशश्च न बाधो* ऽस्थानिवारणात् ।
 प्रियङ्गु-ऋग्व-ब्रीहि-गोधूमादीन्यनेकशः ॥
 साधनानि यथैकस्यास्तस्मिन् दृष्टान्यबाधया ।
 यथा च स्वर्ग एकास्मिन् विश्वजिज्ञाग्निहोत्रकम् ॥
 अग्निष्टोमश्च दर्शान्या हेतवो बहवः श्रुताः ।
 यथा वा ब्रह्मलोकस्य होकस्य प्राप्तिहेतवः ॥
 उपास्तयो विकल्प्यन्ते †शाण्डिल्य-दहरादयः ।
 तथैवैकस्य ‡ पापस्य निवृत्तौ बहवः स्मृताः ॥

* अस्य पराशरवाक्यस्य यतो निवारणं न भवति अतः व्रतान्तरोपदेशे न बाधः । स्मृत्यन्तरेषूपलब्धेन व्रतान्तरोपदेशेन पराशरोक्तस्य बाधो न भवतीत्यत्र लौकिकं दृष्टान्तमाह । प्रियङ्गिति ।

अधुना वैदिकं दृष्टान्तमाह । यथेति । यथा एकस्यैव स्वर्गस्य प्राप्तेः विश्वजिज्ञादयो बहवो हेतवः वेदे उपदिष्टाः सन्ति तथापि ते न परस्परस्य बाधका भवन्ति तथेत्यर्थः ।

† शाण्डिल्योपासितः छान्दोग्योपनिषदि तृतीयाध्यायस्य चतुर्दशे खण्डे 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' इत्युपक्रम्य 'ऽवाक्यनादर' इत्यन्तेन मन्त्रजातेनोक्ता तत्रैवानुसन्धेया । दहरोपासनापि तत्रैव अष्टमे ऽध्याये प्रथमखण्डे 'अथ यदिदमस्मिन् ब्रह्मपुरे' इत्यत्रोक्ता । आदिशब्देन अन्या अपि वैश्वानराद्युपासना अनुसन्धेयाः । औपनिषदोऽयं दृष्टान्तः ।

‡ स्वसिद्धान्तनिष्कर्षमाह । तथेति । उक्तदृष्टान्तत्रये यथा एकस्य प्राप्तिहेतवो बहव उपाया न विरुद्धयन्ते तथैव एकस्य पापस्य निवृत्तौ पराशरोक्तं स्मृत्यन्तरोक्तं च प्रायश्चित्तं मुख्यत्वेनैव तन्निवर्तकं भविष्यति । अतस्तयोर्विकल्प एव । न बाधः ।

१. All others except A. read स्मृताः for श्रुताः, the latter is better.
 २. C. D. F. G. and H. have विकल्पन्ते for विकल्प्यन्ते.

व्रतभेदा विकल्प्यन्तां श्रद्धाजाड्यं नु ते वृथा ।
 ननु—क* पञ्चगव्यादिः कुत्र वा मरणान्तिकम् ॥
 तयोः समविकल्पत्वं वदतस्ते अतिसाहसम् ।
 क† विश्वजित् कामिहोत्रं स्वर्गं साधयतोस्तयोः ॥
 विकल्पं वदतस्ते वा कुतो नैवातिसाहसम् ।
 कर्माधिक्यात्फलाधिक्यमिति‡ न्यायसमाश्रयात् ॥

* पूर्वपक्षी शङ्कते । नन्विति । समानयोः विकल्पः स्यात् न पुनरल्प-म-
 हतोः । यद्येकेन मुनिना कस्यचित् पापस्य निवृत्त्यर्थं पञ्चगव्यादि लघु-
 प्रायश्चित्तमुक्तं तस्यैव निवृत्तावन्येन ऋषिणा प्राणान्तिकं प्रायश्चित्तमुक्तं
 चेत् तयोरल्प-महतोः समविकल्पत्वं वदतस्ते अतिसाहसं भवेत् ।

† समाधत्ते । एवं चेत् स्वर्गसाधकयोः विश्वजिदमिहोत्रयोः अल्पत्वं
 महत्त्वं च वर्तते । विश्वजयपूर्वकमनुष्ठानव्यो यागः क । क चाल्पकममि-
 होत्रम् । स्वर्गसाधने तयोः समविकल्पत्वं वदतः ते अपि अतिसाहसं कुतो
 न भवति ? ।

‡ पूर्वपक्षी विकल्पमेवोपपादयति । कर्माधिक्यादिति । अयमाशयः—
 अल्पायास-महायाससाध्यानां कर्मणां यत्र विकल्पः कर्तव्यः तत्र महायास-
 साध्यानां कर्मणां अननुष्ठानलक्षणमप्रामाण्यमापद्यते । कः खलु अनु-
 मत्तो ह्यल्पायाससाध्यं फलमुत्पादयितुं महायाससाध्यं कर्मानुष्ठीतः ? तस्मात्
 सत्यपि समफलत्वे महायासात् किञ्चित् फलाधिक्यं वाच्यम् । तावता
 उभयोः समानत्वेनानुष्ठानयोग्यत्वात् विकल्पोपपत्तेः । अन्यथा तु एकस्यै-
 वाल्पायाससाध्यस्य नियमेन अनुष्ठानप्रसङ्गात् । फलाधिक्यकल्पने तु
 नैवं भवेत् । यावान् क्लेशः तावत् फलं इति उभयत्र साम्यात् । अतः
 एवोक्तम्—

‘यत्र स्यात् क्लेशभूयस्त्वं श्रेयसो अपि मन्त्रिणिनः ।

भूयस्त्वं ब्रुवते तत्र कच्छात् श्रेयो ह्यवाप्यते ॥’

साहसं परिहर्त्तव्यमित्येतदुभयोः समम् ।

न्यायश्रये* त्वस्मदुक्ता व्यवस्था द्विष्यते कुतः? ॥—

इति चेदव्यवस्थोक्ता त्वयाऽतो द्वेष्मि ते वचः ।

देशभेदात् कालभेदात् पुंभेदादन्यथाऽन्यथा ॥

विपर्यस्यति शास्त्रार्थ इति पूर्वमवादिषम् ।

अतो आस्यार्थवादांशं विधिवाक्येषु यद्यथा ॥

इति । तथा सति प्रधानफलस्य स्वर्गमात्रस्य विश्वजिदग्निहोत्रयोः
सगणत्वैऽपि उक्तरीत्या महायाससाध्यस्य विश्वजितः अल्पायाससाध्य-
स्य अग्निहोत्रस्य च अवान्तरफलं न्यूनमधिकं च स्यात् । एवं च उभयत्रापि
प्रवृत्तिर्भवेत् । अतो विश्वजिदग्निहोत्रयोः विकल्पो नानुपपन्न इति
पूर्वपक्षवादिनो अभिप्रायः ।

सिद्धान्ती वदति । एतदुभयोः समानमेव । विश्वजिदग्निहोत्रवेदेव
पञ्चगव्यस्य मरणान्तिकप्रायश्चित्तस्य च उक्तपापनिवृत्तिरूपप्रधानफल-
साम्येन अवान्तरफलस्य न्यूनाधिकभावेन च समविकल्पत्वं भवेत् ।

* पूर्वपक्षी पृच्छति । ननु—यदि उक्तन्यायाश्रयणं तवाप्यभिमतं तर्हि
'स्मृत्यन्तरानुसारेण विषयस्य व्यवस्थितिः कार्य्या' इति अस्मदुक्ता व्यवस्था
कुतो द्विष्यते? ।

आह सिद्धान्ती । त्वया अव्यवस्थोक्ता अतः ते वचः द्वेष्मि ।

† तदेवाह । देशभेदादिति । देशभेदादिना शास्त्रार्थविपर्ययो भव-
ति । अतः अर्थवादांशमपस्य विधिवाक्येषु वाचनिकं बाधं विना यत्र
यत्यतीतं तत् तत्रैव ग्राह्यम् ।

१. D. reads—हर्त्तव्यं मन्येतदुभयोः for हर्त्तव्यमित्येतदुभयोः. २. For त्वस्म-
दुक्ता—II. and I. read त्वस्मदुक्त—; A. has the following— त्वस्मदुक्त्या
अव्यवस्था दृश्यते कुतः? । इति भेदव्यवस्थोक्ता त्वयातो द्वेषितं वचः । ३. A. and
I. have पर्यवस्यति for विपर्यस्यति. ४. A. and G. read अतो for अतो.
५. I. reads वास्यार्थ—for आस्यार्थ.

प्रतीतं तत्तथा ग्राह्यं बाधं वाचनिकं विना* ।
 स्मृतिव्याख्यातृभिः सर्वैर्वचनानां व्यवस्थितिम् ॥
 ब्रुवाणैर्मन्दमतयो व्युत्पाद्यन्ते हि केवलम् ।
 अन्यथा ऽल्पस्य पापस्य कृते द्वादशवार्षिके ॥
 न स्यान्नित्वृत्तिस्त्वैत्प्रोक्ता व्यवस्था तादृशी यतः ।
 अथा ऽल्पं† महता नश्येन्नाल्पेनान्यत्तदा वद ॥
 इदमल्पं महच्चेदमिति ते किं नियामकम् ? ।
 अल्पायास-महायासो‡ यद्यल्पत्व-महत्त्वयोः॥

* ननु-यदि स्मृत्यन्तरानुसारेण विषयस्य व्यवस्थितिर्न भवति तर्हि प्राचीनैः निबन्धुभिः कुतः तथाविधा व्यवस्था कृतेत्याशङ्क्याह । स्मृतीति । स्मृतिषु आपाततो विरुद्धवचनदर्शनात् मन्दमतस्ये मा मुद्गेर-म् इति तत्प्रबोधाय तैस्तादृशी व्यवस्था कृता । येन केनचिदल्पेन महता वानुष्ठितेन कर्मणा फलनिष्पत्तिर्भूयादिति तेषामाशयः । अन्यथा द्वादशवार्षिकेण महता प्रायश्चित्तेन अल्पस्य पापस्य नित्वृत्तिः न स्यात् । महापापनित्वृत्तिरेव तस्य हेतुत्वेन व्यवस्थितेति भाग्नः ।

† अल्पं पातकं महता प्रायश्चित्तेन न नश्येत् महत् च अल्पेन प्रायश्चित्तेन न नश्येच्चेत् अल्पत्व-महत्त्वनिश्चये तव किं नियामकमस्ति ? न किमपीत्यर्थः ।

‡ ननु — नियामकं कुतो नास्ति । अल्पायास-महायासोर्वै तयोः नियामकौ-इति चेत् । हन्त तर्हि महायासराध्यां कृषिमनुतिष्ठन्तो कृषि-काः महाव्रता भवेयुः । कथमेनमतिप्रसङ्गं भवान् वारयेत् ? ।

१. B. and F. have-निश्चैवं for-निःसर्वैः. २. C. omits the two lines:- अन्यथा ऽल्पस्य पापस्य कृते द्वादशवार्षिके । न स्यान्नित्वृत्तिस्त्वैत्प्रोक्ता व्यवस्था तादृशी यतः । ३. D. reads तस्यानित्वृत्ति- for न स्यान्नित्वृत्ति-; and for the same G. has तस्याऽनित्वृत्ति-. ४. A. reads तथा for तदा. ५. A. D. E. G. and I. substitute अनायास- for अल्पायास-.

हेतुः, महाव्रतास्तर्हि भवेयुः कृषिकादयः ।

सिंह-व्याघ्रादिमूत्रादौ प्रयासबहुलत्वतः ॥

पञ्चगव्यात्प्रशस्तत्वं व्रताङ्गत्वं च ते भवेत् ।

इतिकर्तव्यबाहुल्य* महत्त्वं-चेत् तदाऽल्पता ॥

जलाग्न्यादिप्रवेशस्य प्रसज्येत व्रतान्तरात् ।

तस्माच्छास्त्रेण† यस्योक्ता प्रशंसा तन्महाव्रतम् ॥

अस्तु‡ वा चैव दुःखस्य बहुलत्वान्महाव्रतम् ।

यथाऽल्पनाशो महता महाव्रताशस्तथा ऽल्पतः ॥

* ननु—इतिकर्तव्यस्य बाहुल्यं महत्वनियामकं भवतु—इति चेत् शास्त्रोक्तस्य जलप्रवेशस्य अग्निप्रवेशस्य च इतिकर्तव्याल्पत्वेन अल्पत्वं प्रसज्येत । एवं सिंह-व्याघ्रादिमूत्रस्यापि पञ्चगव्यात् प्रशस्तत्वं स्यात् । तत्तु तव नेष्टम् ।

† उपसंहरति । तस्मादिति । शास्त्रेण यस्य प्रशंसा उक्ता तदेव महाव्रतमिति निर्णयः । एवं सति पञ्चगव्यस्य अल्पायाससाध्यत्वेन अल्पत्वे भासमाने ऽपि गुरुपापनाशकतया विधानमुख्येन प्रशंसायाः शास्त्रोक्तत्वात् तदपि महाव्रतमेवेति पर्यवसितो ऽर्थः ।

‡ ननु—वैधक्येशाधिक्यमेव महाव्रतत्वे हेतुः । अतो न कृषकादिष्वतिप्रसङ्गः—इति चेत् अस्तु नाम । तथापि यथा अल्पस्य महता नाशः अभ्युपेयते तथा अल्पनापि महाव्रताशः कुतो न भवेत् ? । दृष्टान्तमाह अल्पकेन विस्फुलिङ्गेन तृणराशिर्दह्यते इति प्रसिद्धमेव ।

१. G. and I. have हेतुर्म—for हेतु म—. २. For प्रयासबहुलत्वतः A. has प्रयासो बहुलः श्रुतः. ३. For पञ्चगव्यात्प्रशस्तत्वं. A. reads पञ्चगव्याऽप्रशस्तत्वात्. ४. Here our reading coincides with that of A. while all other MSS. read-व्रताङ्गत्वे च ते भवेत् for व्रताङ्गत्वं च ते भवेत्. ५. B. and H. have तर्ह्यग्न्यादिप्र— which is corrected to यथाग्न्यादिप्र— on the margin of B. for जलाग्न्यादिप्र—; E. and G. have for the same यथाग्न्यादिप्र— while D. and F. अस्त्वग्न्यादिप्र—. ६. A. reads वादेन and I. reads वा वैध— for वाचैव; and the whole line is omitted by D.

किं नृ स्यात्? विस्फुलिङ्गेन तृणराशिर्हि दह्यते ।
 विस्फुलिङ्गो* वर्द्धमानो दहत्येवं न तु व्रतम्—॥
 वर्धते, ऽतो महानाशो निःशेषो न भवेद्यदि ।
 तर्ह्येकदेशनाशो ऽस्तु, तच्छेषस्तूपभुज्यताम् ॥
 अमूर्त्तस्यापि† पापस्य सन्ति भागा यथोचितम् ।
 अन्यथैकेन पापेन दुःखं बहुविधं कुतः ॥
 तथा‡ महाव्रतस्यापि भागेनाल्पे विनाशिते ।
 व्रतशेषविपाकेन स्मर्यते बहुलं सुखम् ॥

* यदुक्तं 'विस्फुलिङ्गेन तृणराशिर्हि दह्यते' इति तत्पूर्वपक्षो दूषयति ।
 विस्फुलिङ्ग इति । विस्फुलिङ्ग एव तृणराशि न दहति । अपि तु दाह्यसंयो-
 गेन महानग्निर्भूत्वा दहति । व्रतं तु नैवं वर्द्धते अतो नैतत्साधकम् ।

सिद्धान्ती आह । अत इति । अस्मात् कारणात् अल्पेन व्रतेन महतः
 पापस्य निःशेषनाशो न भवेच्चेत् न भवतु नाम । एकदेशनाशस्तु
 स्यादेव । अवशिष्टपापं उपभुज्यताम् ।

† ननु—स्यादेव, अमूर्त्तस्य पापस्य यदि विभागाः स्युः—इति चेत् आह ।
 अमूर्त्तस्येति । पापस्य विभागाभावे एकेन पापेन बहुविधं दुःखं न भवेत्
 तत्तु भवति अतः सन्ति पापस्य विभागाः ।

‡ एवं यथा अल्पेन व्रतेन महतः पापस्यैकदेशो नश्यति अवशिष्टं
 पापं कर्त्ता भुज्यते तथा महाव्रतस्यैकेन भ्रगेन अल्पस्य पापस्य समूलं
 नाशो भवेत् अवशिष्टभागानां विपाकेन बहुलं सुखं भवेत् ।

१. A. reads तृणराशिर्विदह्यते for तृणराशिर्हि दह्यते. २. B. C. F. and G. have महत्तापो, while E. alone has महत्पाप-, D and I. read महत्तापो for महानाशो. ३. A omits the following —निःशेषो न भवेद्यदि । तर्ह्येकदेशनाशो ऽस्तु and thus reads for, the two lines वर्द्धते ऽतो महानाशस्तच्छेषः कोपभुज्यताम्. ४. Our reading is that of the most of the MSS., while A. only has कोपभुज्यताम् for-स्तूपभुज्यताम्; and D. reads भुज्यते for भुज्यताम्. ५. For-सन्ति भागा यथोचितम् D. reads संविभागा यथोचितम्. ६. A. D. E. G. and I. read भागेनाल्पविनाशने for-भागेनाल्पे विनाशिते.

अतोऽल्प* वा महद्वापि व्रतं पापनिवर्त्तकम् ।
 स्मर्तॄणां मखिलानां च वाक्यमेवं समञ्जसम् ॥
 न† महाव्रतवैयर्थ्यं पापस्याशेषनाशने ।
 अल्पनाशोर्ध्वभाविन्यां सुखाप्तौ चोपयोगतः ॥
 एवं‡ चैकस्य पापस्य व्रतेषूक्तेष्वयं पुमान् ।
 प्रवर्तयति विलम्भात् यस्मिन्कस्मिंश्चिदिच्छया ॥

* फलिमाह । अत इति । व्रतं अल्पं महद्वा भवतु । सर्वमपि व्रतं सकलपापनिवर्त्तकं भवति । तस्मात् स्मर्तॄणां मन्वादीनां तद्वाक्यव्यवस्थापकानां निबन्धकॄतॄणां पण्डितानां च वाक्यं उक्तीत्या समञ्जसं भवति ॥

अत्र—

‘कृच्छ्रचान्द्रायणादीनि शुद्ध्यभ्युदयकारणम्’ ।

इत्यादिभिर्भाष—

‘एते व्यस्ताः समस्ता वा प्रत्येकं चैकशोऽपि वा ।

पातकादिषु सर्वेषु पापकेषु प्रयत्नतः ॥

योज्याः पापनिवृत्त्यर्थ’—

इत्यादीनि विश्वामित्रादिवचनान्यनुसन्धेयानि ।

† ‘अल्पपापनाशार्थं महाव्रतकरणे तस्य वैयर्थ्यं भवेदिति चेन्न । पापनाशानन्तरं अवशिष्टव्रतपुण्येन सुखाप्तौ तस्योपयोगात् । -

‡ फलमाह । एवमिति । एवं चैकस्य पापस्य नाशार्थं बहुषु व्रतेषूक्तेषु सत्सु अयं पुमान् यस्मिन्कस्मिन्नपि व्रते स्वेच्छया विश्वासं प्रवर्तयेत् । अन्यथा विषयस्य व्यवस्थितिं जानतोऽजानतो वापि स्मृत्यन्तरे वचनान्तरं स्यान्न वेति शङ्कया कस्मिन्नपि व्रते तस्य विलम्भो न भवेत् अतो युक्तमेव व्रतबाहुल्यकथनमिति भावः ।

१. B. C. D., E. and G. read महद्वापि for महद्वापि. २. For अल्प- D. has अर्थ-; In the present case अल्प has its superiority over अर्थ. ३. B. C. and F. read नाशो तु for नाशोर्ध्व-. ४. D. reads चोपयोगतः for चोपयोगतः. ५. A. and I. read प्रवर्ततेऽतिविलम्बं for प्रवर्तयति विलम्भात्.

अन्यथा नास्य विलम्बो विषयस्य व्यवस्थितिम् । -

अजानतो जानतोऽपि वचनान्तरशङ्कया ॥

सम्भावितेषु* सर्वेषु व्रतेषु महति व्रते ।

प्रवर्तमानः पुरुषः श्रेयः प्राप्नोत्यसंशयम् ॥ १

कलौ† पराशरोक्तानां व्रतानामेव मुख्यतां ।

तैरल्पैरपि तत्पापं निःशेषं विनिवर्त्तते ॥

एतदेव‡ विवक्षित्वा प्रतिजज्ञे विशेषतः॥

पराशरेण यत्प्रोक्तं प्रायश्चित्तमितीदृशम् ॥

§मुन्यन्तरप्रणीतानां स्वल्पानां महतामपि ।

व्रतानामुपयोगः स्यात् कलौ पूर्वोक्तनीतितः ॥

* ननु—अल्पेषु सत्सु महति व्रते प्रवर्तमानस्य को विशेषः-इति चेदाह । सम्भावितेष्विति । निर्धारणे समीचीनः । श्रेयः प्राप्तिरूपविशेषलभो भवेदित्यर्थः ।

† पराशरस्मृतिविषये विशेषमाह । कलाविति । पराशरोक्तानामेव व्रतानां कलौ मुख्यत्वात् तदुक्तेनाल्पेनापि व्रतेन महतोऽपि पापस्य समयत्वेन नाशः । नैकदेशस्य ।

‡ ननु—पराशरोक्तानां कलौ मुख्यत्वं कुतो ज्ञातं?-इति चेदाह । एतदेवेति ।

§ ननु—एवं सति मुन्यन्तरप्रणीतानां व्रतानां कोपयोगः?-इति चेदाह । मुन्यन्तरं इति । पूर्वोक्तनीतितः पूर्वोक्तन्यायेन । अल्पस्य पापस्य नाशार्थं महाव्रतानुष्ठाने तत्पापनिवृत्तिपूर्वकमवशिष्टभागेन मुखादिश्रेयःप्राप्तिरिति महतः पापस्य निवृत्तावल्परतानुष्ठाने पापैकदेशस्य निवृत्तिः अवशिष्टस्य पापस्य भोग इति पूर्वोक्तो न्यायः ।

१. For विषयस्य व्यवस्थितिम्. B. C. E. F. G. and H. read विषयस्याव्यवस्थितेः while D. have विषयस्य व्यवस्थितिः for the same. २. All but A. and G. read तैरल्पैरपि for तैरल्पैरपि. ३. A. has पूर्वोक्तनीतितः for पूर्वोक्तनीतितः.

मुनिनैकेन यत् प्रोक्तं तदन्यो न निषेधति ।
 प्रत्युतोदाहरेत्, तस्मात् सर्वोक्तिः सर्वसम्मतः ॥
 हन्तेव* सति मीमांसा निष्फला ते प्रसज्यते ।
 शास्त्रान्तरप्रणीतानां गुणानामप्यसंहतेः ॥
 शृणु† मीमांसकमन्य मुनिवाक्येषु किं बलात् ।
 उत्पाद्यापि विरोधं तु पाण्डित्यं व्यज्यते त्वया ॥
 व्रतान्तरोक्तिमात्रेण न विरोधः प्रसज्यते ।
 समुच्चये विकल्पे वा का हानिस्तत्र ते भवेत् ? ॥
 स्नानं दानं जपो होम इति नैमित्तिका यथा ।
 उपरागे समुच्चेयास्तथा व्रतसमुच्चयः ॥

कृत एतदिति चेदाह । मुनिनेति । एकेनोक्तमन्यो न खण्डयेत् प्रत्युत उदाहरेत् तस्मात् सर्वेषां मुनीनामुक्तिः सर्वेषां सम्मतः भवतीति सिद्धम् ।

* पूर्वपक्षी शृङ्गते । हन्तेति । हन्तेति विपर्यये । एवं सति येन केनचित् व्रतेन यस्य कस्यचित् पापस्य नाशे सति । मीमांसा निष्फला इत्यत्र उत्तरार्द्धं हेतुः । पूर्वोत्तरमीमांसयोः गुणोपसंहारस्य सिद्धान्तितत्वान् तव मते तदव्यवस्थापनात् मीमांसा व्यर्थेति भावः ।

† समाधत्ते । शृण्वति । मीमांसकमन्येति परिहासगर्भं सम्बोधनम् । मुनिवाक्येषु विरोधे सति त्वदुक्तो गुणोपसंहारः क्रियेत । विरोधाभावात्स न कर्तुं शक्यते । ननु-व्रतान्तरोक्तौ सत्यां विरोधो नेति कथमुच्यते-इति चेत् । न । तत्र समुच्चयस्य विकल्पस्य च सम्भवात् न कोऽपि विरोधः । दृष्टान्तमाह । स्नानमिति ।

१. For सर्वोक्तिः सर्वसम्मतः A. reads सर्वोक्तं सर्वसमतम्, for the same पूर्वोक्तं सर्वसमतं is also found in I. २. Except A. and D. all have निष्फला for निष्फला. ३. We take our reading from A. though all others read संहतिः-for संहतेः. ४. B. C. E. F. G. H. and I. read उत्पाद्याति-for उत्पाद्यापि. ५. D. and F. have व्यज्यतां तव for व्यज्यते त्वया, For the same B. C. E. F. and G. read वाक्यतां तव; this seems to be a graphical mistake. ६. In the place of जपो B. C. E. F. and G. insert तपो.

एकेन^{*} नाशिते पापे द्वितीयं चेन्निरर्थकम् ।
 न, तपोरूपतस्तस्य स्वर्गहेतुत्वसम्भवात् ॥
 चान्द्रायणादावस्त्वेवं तपस्त्वेन नदीक्षणात् ।
 भिक्षा-ब्रह्मकपालादौ स्यात् कथं नष्टपाप्मनः ? ॥
 एवं । तर्हीदृशे स्थाने विकल्पो ऽस्तु निजेच्छया ।
 न्यूनाधिकत्वसन्देहे दत्तमवोत्तरं पुरा ॥

* समुच्चयपक्षमाक्षिपति पूर्वपक्षी । एकेनेति । व्रतेनेति शेषः । अतो न समुच्चयो भवतीति चेन्नेत्याह सिद्धान्ती । एकेन व्रतेन पापं नाशिते सति अन्यत् तपोरूपत्वेन स्वर्गप्रापकं भवेत् अतो न निरर्थकत्वं तस्य ।

आह पूर्वपक्षी । चान्द्रायणादीनां तपस्त्वेनाभिधानात् भवदुक्तः समुच्चयो न । अपि तु एकस्य पापनाशकत्वमन्यस्य स्वर्गप्रापकत्वमस्तु । भिक्षाटनं ब्रह्मकपालधारणं च यदुक्तं तस्य तपस्त्वनाभिधानात् एकेन आचरितव्रतेन नष्टपाप्मनो भिक्षाटनादिकं निरर्थकमेव भविष्यति । एवं सति तत्र त्वदुक्तः समुच्चयः कथं स्यात् ? ।

‡ समाधत्ते । एवमिति । यत्र स्वर्गादिहेतुत्वं शास्त्रादवगम्यते तत्र नानामुनिभिरुक्तानां व्रतानां समुच्चयः । एकेनैव पापनाशे ऽप्यन्येषां स्वर्गहेतुत्वसम्भवात् । यत्र तु स्वर्गसाधनत्वं शास्त्रान्नावगम्यते तत्र नानाव्रतानां कर्तुरिच्छया विकल्प एव भवतीति सिद्धान्तनिष्कर्षः ।

ननु — 'तुल्यबलविरोधे विकल्पः' इति गौतमोक्तत्वात् न्यूनाधिकबलानां व्रतानां कथमिच्छया विकल्पः स्यात् ? इत्याशङ्क्याह । न्यूनाधिकत्वेति । 'तस्माच्छास्त्रेण यस्योक्ता प्रशंसा तन्महाव्रतम्' इत्यादिग्रन्थेन पूर्वमेवास्योत्तरं दत्तम् ।

१. B C and F. read तपस्त्वे च for तपस्त्वेन, for the same D. and G. have तपस्त्वेव, and E. and H. have तपस्त्वेव. All these three readings are equally bad in point of good sense. २. I. reads तदीक्षणात् for तदीक्षणात्

सर्वथाऽपि* त्वयो प्रोक्तां निर्मूलां बुद्धिकल्पिताम् ।
 कामाकामादिभेदेन नाङ्गीकुर्मो व्यवस्थितिम् ॥
 वचनेष्वेव! कामादिव्यवस्था लभ्यते यदि ।
 सुखेनाभ्युपगच्छामो वाक्यैकशरणा वयम् ॥
 ।‘कपिलो यदि सर्वज्ञः कणादो नेति का प्रमा?’
 इति न्यायः प्रसज्येत बुद्धिमात्रव्यवस्थितौ ॥
 मीमांसकत्वमेतत् § स्याद्वाक्यानुसरणेन यत्— ।
 व्यवस्थापनमन्यन्तु पाण्डित्यख्यापनं गरम् ॥
 ‘इयं विशुद्धिरुदिता प्रमाप्याकामतो द्विजम् ।’
 (म. स्मृ. ११. ८९)
 इत्थंकामकृते पापे नाशो निःशेष उच्यते ॥

* उपसंहरति । सर्वथा ऽपीति । कामाकामादिभेदेन नानामुन्यु-
 क्तानां वचनानां व्यवस्था । बुद्धिकल्पितामिति निर्मूलत्वे हेतुः । बुद्धिक-
 ल्पितव्यवस्थायां—एकेन कचित् एका विषयव्यवस्था कल्पिता, तदन्येन
 च तद्विपरीता चेत् तत्र कस्या व्यवस्थायाः प्रामाण्यं कस्या वा अप्रामा-
 ण्यम् ? उभयोः प्रामाण्ये तैव स्फुटा जनवस्था । तस्मान्न बुद्धिमात्रकल्पिता
 व्यवस्था युक्ता । पुरुषस्य सर्वज्ञत्वाभावात् बूद्धेरप्रतिष्ठानाच्चेति भावः ।

† ननु— यदि वचनेष्वेव कामाकामादिव्यवस्था उपलभ्येत चेत् ?—
 अभ्युपगच्छाम इत्याह । वचनेति । वाक्यैकशरणत्वं मीमांसकत्वद्योतनाय ।

‡ ननु— वचनोपलब्ध्याः कामाकामादिव्यवस्थायाः स्वीकारे मदुक्ता एव
 किं न स्वीक्रियते ?— इति चेत्तत्राह । कपिल इति । बुद्धिमात्रकल्पित-
 व्यवस्थास्वीकारे उक्तन्यायः प्रसज्येत । तथा सति ‘उभौ च यदि सर्वज्ञौ
 व्याख्याभेदः कथं कृतः ?’ इत्यापतेत् । तस्मान्न सा गृह्यते इत्यर्थः ।

§ मीमांसाया वाक्यार्थविचारशास्त्रत्वात् वाक्यानुसरणेन यत् विषयस्य
 व्यवस्थापनं तदेव मीमांसकत्वम् । अन्यन्तु पाण्डित्यस्य ख्यापनम् ।

१. A. reads तथा for त्वया. २. Here our reading is that of A. and H.; while all others read सुखेनाभ्युपगच्छामो for सुखेनाभ्युपगच्छामो. the latter of which is more idiomatic.

न तु कामकृते शुद्धेरकिञ्चित्करतोच्यते ।
 स्मृत्यन्तरेषु तच्छुद्धेः सामान्येनाभिधानतः ॥
 विशेषादर्शनं यावत् तावत् सामान्यदर्शनम् ।
 मानमेवान्यथा ते स्यात् सर्वज्ञत्वे अधिकारिता ॥
 गुणोपसंहृतिश्चैवं* यथादर्शनाभिव्यक्ताम् ।
 अदृष्टानुपसंहारेणाकिञ्चित्करतैव ते ॥
 यथावत् दृश्यते वाक्यं शक्तिश्चात्रास्य यावती ।

ननु — वाक्यानुसरणे कृते सति 'इयं विशुद्धिः' इत्यत्र 'अकामतः
 इत्युक्तत्वात् अकामकृतस्यैव पापस्य विशुद्धिः तत्राभिहिता । कामकृतस्य
 तु पापस्य शुद्धिर्न भवेत्तेन व्रतेन-इति चेन्नैवम् । अन्वस्मृतिषु कामकृ-
 तस्यापि पापस्य शुद्धेरभिधानात् अकिञ्चित्करत्वं नोच्यते । अयमर्थः—
 'इयं विशुद्धिः' रित्यादिना अकामकृतस्य पापस्य निःशेषनाशः । कामकृ-
 तस्य तु अंशतो नाशो अभिहितः । न तु सर्वधैवानाशः । स्मृत्यन्तरेषु सामा-
 न्येनाभिधानात् इति तत्र प्रमाणमित्याशङ्क्य 'विशेषादर्शनाभिव्यक्तं सामा-
 न्यदर्शनमेव प्रमाणमिति परिहरति । विशेषेति ।

* नन्वेवं सति गुणोपसंहारो न भवेत् इत्याशङ्क्याह । गुणेति ।
 यथा यत् दृश्यते तथैव तस्य गुणानुपसंहृत्य अनुष्ठानं कर्तव्यम् ।
 अदृष्टाशङ्क्यगुणानामनुपसंहारे तु न कोऽपि दोषः । गुणोपसंहारो नाम
 विभिन्नेषु ग्रन्थेषु प्रतिपादितानां एकजातीयकानां कर्मणां नाम- रूप-
 धर्मविशेष- पुनरुक्ति- जिन्दा- शक्ति- समाप्तिवचन- प्रायश्चित्तान्यार्थ-
 दर्शनेऽपि अभेदः । स च पूर्वमीमांसायां । (अ. २ पा. ४ सू. ८-३२)
 उत्तरमीमांसायां च (अ. ३ पा. ३ सू. १-१३) विस्तरैर्नोक्तः ।

१. D. reads -रकिञ्चित्करतोच्यते for -रकिञ्चित्करतोच्यते. २. G.
 reads तस्मिन्नेः for तच्छुद्धेः. ३. D. and H. have -श्चैवं for -श्चैवं.
 ४. D. has स दृष्टानुपसंहारो न for अदृष्टानुपसंहारेण; while B. in its
 correction has स दृष्टानुपसंहारेणा for the same. ५. For-णाकिञ्चित्करतैव
 ते A. reads न किञ्चित्करता व्रते; All others except I. read नाकिञ्चित्करता
 व्रते. ६. A. and I. read यथा च for यथावत्. ७. -श्चैवास्य is the reading
 of A. and I., and D. has -आस्याच्च for -आवास्थ.

तावत् कार्यं नतूपेक्षा युक्ता वैगुण्यशङ्कया ॥
 प्रायश्चित्ते* तथाऽऽचारे यानि स्मृत्यन्तराण्यहम् ।
 दृष्ट्वांस्तान्युदाहृत्य संहारिष्ये गुणांस्ततः ॥
 विषयस्य व्यवस्थां च मन्दव्युत्पत्तिसिद्धये- ।
 प्रवक्ष्यामि, यथा पूर्वे निबन्धनकृतस्तथा ॥
 यत् यस्मिन् विषये प्रोक्तं तत्र तस्य प्रशस्तता- ।
 विवक्षिता, नेतरस्य निषेधोऽत्र विवक्ष्यते ॥
 तद्विवेकाय कुर्वेऽहं व्याख्यां पाराशरस्मृतेः ।

(इति टीकाकारोपक्रमणिका)

प्रारीप्सितग्रन्थे† श्रोतबुद्धि-मनःसमाधानाय सम्बन्धाधि-
 कारि-विषय-प्रयोजनरूपमनुबन्धचतुष्टयमादौ श्लोकद्वयेनोप-
 निबन्धाति-

* स्वकर्तव्यं प्रतिजानीते । प्रायश्चित्त इति । मया यावन्ति स्मृत्यन्त-
 राणि दृष्टानि तेभ्यो गुणोपसंहारं कृत्वा विषयस्य व्यवस्थां करिष्यामि ।
 मन्दव्युत्पत्तिसिद्धये इत्यनेन सर्वस्मृतिभ्यः गुणोपसंहाराभावेऽपि न निष्प्र-
 योजनत्वमिति भावः ।

स्वसिद्धान्तमुपसंहरति । यदिति । तद्विवेकाय कुत्र कस्य प्रशस्तत्वमि-
 न्येतद्विवेचनाय ।

† उपोद्घातत्वेनागतं विवेचनं समाप्य ग्रन्थं व्याख्यास्यमाण आदाव-
 वतरणमारचयेति । प्रारीप्सितेति । प्रारब्धुमिष्टः प्रारीप्सितः । अनुबध्यते
 ऽनेनेत्यनुबन्धः । अनुबन्धपदं सम्बन्धादिचतुष्टयपरम् । 'प्रयोजनमनु-
 दिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्तते' इति न्यायात् ग्रन्थप्रवृत्तौ प्रयोजनमपेक्षि-

१. For वैगुण्यशङ्कया D. वै गुणशङ्कया. २. D. संहारिष्ये for संहारिष्ये.
 ३. D. व्यवस्थायै for व्यवस्थां च. ४. F. has पूर्वनिबन्धन- for पूर्वे निबन्धन-
 ५. A. reads ततः for तथा. ६. A. omits मनः. ७. A. reads नोपनिबन्धाति
 for नोपनिबन्धाति.

‘अथात्रो हिमश्रैलाग्रे देवदारुवनालये ।

व्यासमेकाग्रमासीनमपृच्छन्नृषयः पुरा ॥ १ ॥

मानुषाणां हितं धर्मे वर्त्तमाने कलौ युगे ।

शौचाचारं यथावच्च वद सत्यवतीसुत ॥ २ ॥

अयेति । अथ शब्द आनन्तर्यार्थः । अनन्तरमपृच्छन् इत्य-
न्वेतुं योग्यत्वान् । आरम्भार्थतायाम्, *आरम्भे ते अपृच्छन्
इत्यनन्वयः स्यात् । प्रश्नार्थत्वे अपि स एव दोषः । पृच्छयते अ-
पृच्छन्-इति पुनरुक्तिश्च । कात्स्न्यार्थतायां, कृत्स्नमपृच्छन्-इति
सत्यप्यनन्वये सम्बन्धो न सूचितः स्यात् । आनन्तर्यार्थतायां तु
तत्प्रतियोगिनः पूर्ववृत्तस्य उत्तरकालीनप्रश्नस्य च हेतुहेतु-
मद्भावः[†] सूचितो भवति ।

तम् । एवं तत्प्रतिपादो विषयो अपि प्रवृत्तौ प्रयोजकः । विषयलालसया
प्रवृत्तिसम्भवात् । उक्तोभयान्ध्रितत्वात् सम्बन्धोऽप्यपेक्षितः । एवमधिका-
र्यपि । तदभावे कस्य प्रवृत्तिः स्यात् ? तस्मादनुबन्धचतुष्टयमप्यपेक्षितं
शास्त्रादौ । एतच्च मीमांसायां (१. १. १) वार्तिके च द्रष्टव्यं विस्तरेण ।

* ‘मङ्गलानन्तरारम्भ-प्रश्न-कात्स्न्येष्वथो अथ’ इति कोशोक्तेष्वयश-
ब्दार्थेषु सर्वेषु प्राप्तेषु आरम्भादीनामर्थानामसम्भवं प्रतिपादयति । आर-
म्भार्थतायामित्यादिना ।

† आनन्तर्यं हि पूर्वापररूपप्रतियोगिद्वयनिरूप्यम् । हेतोः पूर्ववर्तित्व-
नियमात् । तयोर्मध्ये पूर्वस्य हेतुत्वं उत्तरस्य च हेतुमत्त्वं गम्यते ।

१ अत्र I. संज्ञितपुस्तके पाठान्तरेषु ‘सहाशिवसुतं वन्दे विद्वद्विरचितविपश्चयम् ।
मुने जगन्नाथमोदकारणं वारणाननम्’ ॥ इति मङ्गलाधरणश्लोको वर्तते । अस्मि
नवीनस्वमसङ्गतत्वं च व्यवक्तमेव । २. D. reads -पुत्रालये for -वैनालये. ३. B.C.
D. and G. read पृच्छार्थत्वेऽपि for प्रश्नार्थत्वेऽपि. ४ A. reads -कालिक-
for -कालीन--

ननु- 'हृदयस्याग्रे ऽवद्यत्यर्थः* जिह्वाया अथ वक्षसः' (तै.सं. ६.३.११) इत्यत्र सत्यप्यानन्तर्ये हेतुहेतुमद्भावो नास्ति—इति चेत् । नायं दीषः । तत्रापेक्षितस्यानुष्ठानक्रममात्रस्याभिधानात् । प्रकृते तु सामग्री-तत्कार्ययोर्यः क्रमविशेषः स एव परिगृह्यते । मुख्यत्वात् । विलम्ब-व्यभिचारयोरभावेन हि मुख्यत्वम् । न खलु सत्यां सामग्र्यां कार्यं विलम्बते व्यभिचरति वा । एतच्च 'अथास्तो ब्रह्मजिज्ञासा' (शा. सू. १. १. १) इत्यत्र विवरणकारेण प्रपञ्चितम् । सामग्री च प्रश्नस्य, प्रष्टव्यविषयं सामान्यज्ञानम् । अत्यन्तमज्ञाते विशेषेण ज्ञाते वा प्रश्नादर्शनात् । धर्माविषयन्तु सामान्यज्ञानं 'धर्मेण पापमपनुदति' (म. ना. उ. २२. १) । 'धर्म. चर' (तै. उ. १. ११. १) इत्यादिर्वेदवाक्याध्ययनादुपजायते । नस्मादध्ययनानन्तर्यमथशब्दार्थः† । अथवा 'वर्तमाने कलौ युगे' इति विशेषणात् युगान्तरधर्मज्ञानानन्तर्यमस्तु ।

* यज्ञे आलभनीयस्य पशोरवदानत्रयं विहितम् । त्रयस्यापि युगपद्वहितुमशक्यत्वात् क्रमो ऽवश्यमपेक्षितः । स च हृदयस्याग्रे अनन्तरं जिह्वाया अथ वक्षसः इति श्रुत्या दार्शितः ।

† निर्देशस्यास्य सावधारणत्वात् प्रष्टव्यविषयसामान्यज्ञानं विशेषज्ञानाभावश्च प्रश्नेहेतुरित्यवगम्यते ।

‡ नन्दपण्डितस्तु—'अथ उपनयनानन्तरं' इत्याह । धरणीधरो ऽपि—'अथ' शब्द उपनयनानन्तर्यार्थे इत्याह । तन्न युक्तमिति प्रतिभाति । उपनयनानन्तर्यं स्वाध्यायस्य वक्तुमुचितम् । विशेषधर्मविषयकस्य प्रश्नस्य तु अध्ययनानन्तर्यमेव भवितुं युक्तमिति सुधियो विदाङ्कुर्वन्तु ।

१. D. and G. add अपेक्षते to ज्ञानम्, thus making ज्ञानमपेक्षते.
२. A prefixes तत् to विशेषेण, and thus reads तद्विशेषेण. ३. E. reads वक्ष for चर.

ननु—कृत्यारम्भे मङ्गलाचरणस्य शिष्टाचारप्राप्तत्वात् माङ्ग-
ल्यं अथशब्देन कुतो नाभिधीयते? । मृदङ्गादिध्वनिवदथश-
ब्दश्रवणमात्रेण माङ्गल्यसिद्धिरिति ब्रूमः । अत एवोक्तम्—

‘ॐकारश्चाथशब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणो मुखत् ।

‘कण्ठं भित्त्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ’ ॥

इति । एवं तर्हि ॐकारी च प्रयुज्यतामिति चेत् । न । तस्य
श्रुतिर्मात्रविषयत्वात् । अत एवाचार्यैः प्रपञ्चसारे अभिहितम् ।

‘अस्य तु वेदादित्वात् सर्वमनूनां प्रयुज्यते ह्यदौ’ इति ।
ततः स्मृत्यादावथशब्द एव महर्षिभिः प्रयुज्यते । अधिकारि-
पर्यालोचनेनापि ॐकाराथशब्दयोरुक्तविषयव्यवस्था सिद्धय-
ति । त्रैवर्णिकमात्राधिकारा हि श्रुतिः प्रसिद्धा । ॐकारश्च
तथाविधः । ‘सावित्रीं प्रणवं यजुर्लक्ष्मीं स्त्री-गूढ्राय नैच्छन्ति’*

* सावित्रीम् गायत्रीम् प्रणवं ओङ्कारम् । यजुः यजुर्वेदः तम् । यजुर्लक्ष-
णमुक्तं पूर्वमीमांसायाम् । तथा च—‘यत्र पादकृता अवस्था सा ऋक् । विशि-
ष्टा काचिद् गीतिः साम’ इत्यभिधाय ‘शेषे यजुः शब्दः (जै.सू. २. १. ३७)’
इत्यस्मिन् सूत्रे ‘या न गीतिः न च पादवद्धं तत् प्रक्षिष्टपठितं यजुः’
इत्युक्तम् । लक्ष्मीः श्रीश्रीजम् । ‘स्त्री-गूढ्रौ न प्रधीयेताम्’ इति श्रुत्या सर्वेषा-
मपि वेदानामध्ययननिषेधे सति अत्र यजुरध्ययननिषेधो दोषाधिक्यसूच-
नायेति केचित् ।

१. B. C. E. F. and H. read मङ्गलं for माङ्गल्यम्. २. B. C. and F.
retain मङ्गल in the place of माङ्गल्य- here also. ३. B. C. F. and I.
substitute -सिद्धिरिति for -सिद्धिरिति. ४. D. omits ब्रूमः. ५. A. omits
इति. ६. All except A. omit मात्र. ७. B. C. and F. omit the whole of
the following :—‘अस्य तु वेदादित्वात् सर्वमनूनां प्रयुज्यते ह्यदौ’ इति । ततः
स्मृत्यादावथशब्द एव महर्षिभिः प्रयुज्यते. ८. A. omits च. ९. A. has
-गूढ्राणां and I. has गूढ्रायाः for गूढ्राय.

(नृसिंहपू. ता. १.३) इति श्रुतेः । अथशब्दस्य पौरुषेयग्रन्थानां
*च सर्ववर्णविषयत्वात् स एव तेषु योग्यः ।

अतः शब्दो हेत्वर्थः । यस्मादेकशाखाध्यायिनो नाशेष-
धर्मज्ञानं यस्माच्च युगान्तरधर्मावगत्या न कलिधर्मावगतिः
तस्मात्, इति हेतुर्दृष्टव्यः ।

अशेषधर्ममूलभूतानां विप्रकीर्णानन्तवेदवाक्यानां योगि-
दृष्टयैव* ग्राह्यत्वात्, तस्याश्च दृष्टेयौगावस्थायां सम्भवात्
तदेवस्थायोग्यं देशविशेषं पदद्वयेन निर्दिशति । हिमशैलाग्रे
देवदारुवृक्षमालये इति । तत्र हिमशैलाग्र इत्यनेन सर्वप्राणि-
दुर्गमत्वेन विविक्ततामाह । तथा च कैवल्योपनिषदि श्रूयते—

‘विविक्तदेशे च सुखासनस्थः ।’

(कै. उ. ४)

*पौरुषेयाः पुरुषकृता ग्रन्थाः मन्त्रव्यादिप्रणीताः स्मृतयः, रामायणादी-
नि काव्यानि, भारतादय इतिहासाः, मात्स्यादीनि पुराणानि च पौरुषेय-
ग्रन्थाः । नात्र कालिदासादिकृतानां संग्रहः । पौरुषेयशब्देन तेषामपि
ग्रहणे कर्तव्यं अपि आर्षत्वाभावात् तेषु विधिर्मिषेधश्च । एतच्च—

‘चतुर्णामपि वर्णानां यानि प्रोक्तानि श्रेयसे ।

धर्मशास्त्राणि राजेन्द्र शृणु तानि नृपेत्तम ॥’

इत्यादीनि बहूनि वचनान्युदाहृत्य कमर्लाकरभट्टैः शूद्रधर्मतत्त्वे
विस्तरेण प्रपञ्चितमित्यत्र संक्षेपः ।

† नन्दपण्डितस्तु—‘उपनीय शौचाचारान् शिक्षयेत् इत्यनेन उपनय-
नानन्तरं शौचाचाराणां यतो विज्ञेयत्वमुपादिश्यते अतो हेतोः’ इति हेतु-
माह । धरणीधरोऽपि तथैव ।

१. For न कलिधर्मावगतिः A. reads सकलधर्मावगतिः. २. A. reads—युक्ता-
वस्थायां for—योग्यावस्थायां. ३. D. has तस्मात् in the place of सन्.
४. A. reads—योग्यदेश—for—योग्यं देश—. ५. For देवदारुवृक्षमालये D. and G.
read देवदारुवृक्षमालये.

इति । क्षुरिकायामपि श्रुतम्,—

‘निःशब्दं देशमास्थाय तत्रासनमुपाश्रितः ।’

(क्षु. उ. २)

इति । ‘देवदारुवनालये’ इत्यनेन मनोऽनुकूलतामाह* ।

अत एव श्रुताश्चतराणां ‘मन्त्रोपनिषदि श्रुतम्,—

‘समे शुचौ शर्करा-वह्नि-वालुका-

विवर्जिते शब्दजलाश्रयादिभिः ।

मनोऽनुकूले न च चक्षुःपीडने ।

गुह्यानिवाताश्रयणे प्रयोजयेत् ॥

(श्रु. उ. २. १०)

इति । चक्षुःपीडनो मशकोपेतो देशः ।

ननु—‘यत्रैकाग्रता तत्राविशेषात्’ (शा. सू. ४.१.७)

* नन्दपण्डितस्तु —‘देवदारुवनालयत्वेन विविक्ते मनोऽनुकूले च विक्षेपकारणाभावेन तत्रप्रतिभासयोग्य इति यावत्’ इति व्याख्यातवान् ।

† शब्दः कलहादिध्वनिः । आश्रयः मण्डपादिः । मनोऽनुकूले प्रसिद्धाद्यभिमुखेन मनोरमे । चक्षुःपीडनेत्यत्र ‘छान्दसो विसर्गलोप’ इति तद्वाच्यकारः । शारीरभाष्ये (अ. ४. पा. १ सू. ११) उदाहृतेयं श्रुतिः । तत्र तु ‘चक्षुःपीडने’ अयमेव पाठो वर्तते । तद्वैकायामपि तथैव । परमात्मानि चित्तं प्रयोजयेदित्यर्थः ।

१. Here we read with D. while all others read क्षुरिका. २. H. reads श्रूयते for श्रुतम्. ३. A. and D. read तत्रासनमर्थास्थितः; and E. G. and H. तत्रासनमुपाश्रितः for तत्रासनमुपाश्रितः. ४. All but A. and D. read देवदारुवन इत्य- for देवदारुवनलये इत्य-, while G. reads देवदारुवनालय इत्य- for the same. ५. B. C. F. read शब्द जलाश्रयादिभिः and E; G. H. and I. वाय जलाश्रयादिभिः; and in the margin of B. शिवजलाश्रयादिभिः. ६. A. D. and G. have अश्रयणे प्रयोजयेत्; C. E. F. and H. अश्रयणे योजयेत् both these are for अश्रयणे नियोजयेत्.

इत्यस्मिन् अधिकरणे (शा. भा. ४. १. अ. ६) ओगाभ्यासस्य दिग्देश-कालनियमो वारितः । बाढम् । अदृष्टहेतुवैधनियमाभावेऽपि दृष्टस्य चित्तैकाग्र्यस्य हेतुर्नियमो न निवार्यते* ।

‘एकाग्रम्’—इत्यनेन पञ्चविधासु चित्तभूमिषु अतीन्द्रिय-वस्तुदर्शनयोग्यां चतुर्थी-भूमिर्निर्दिश्यते । तथाहि—पतञ्जलि-प्रोक्तान् योगसूत्राणां व्याख्याने वैय्यासिकभाष्ये भूमिपञ्चकं प्रदर्शितम् । ‘क्षिप्तं मूढं विक्षिप्तमेकाग्रं निरुद्धमिति चित्त-भूमयः’ (यो. भा. १. १)—इति । तत्र प्रतिक्षणं कर्मवायु-ना नानाविधेषु भोग्यवस्तुषु व्यग्रतया प्रेर्यमाणं चित्तं क्षिप्त-म् । निद्रा-तन्द्रायुक्तं मूढम् । कादाचित्कसमाधियुक्तं क्षिप्तादि-शिष्टं विक्षिप्तम् । यम-नियमाद्यष्टाङ्गाभ्यासपाटवादेकस्मिन्

* आह भगवान् भाष्यकारः । ‘अस्वेवंजातीयको नियमः । सति त्वे-स्मिन्स्तद्व्रतेषु विशेषेषु अनियम इति सुहृद्भूतार्च्य आचष्टे । ‘मनोऽनुकू-ले’ इति चेष्टा श्रुतिः यत्रैकाग्रता तत्रैवेत्येतदेव दर्शयति (शा. भा. ४. १. ११) इति । यत्र मनस एकाग्रता भवेत् तत्रैवोपासीत । अपेक्षिताया एकाग्रतायाः सर्वत्राविशेषात् इति सूत्रार्थः ।

† अष्टाङ्गानि पतञ्जलिनोक्तानि । ‘यम-नियमासन-प्राणायाम-प्रत्या-हार-धारणा-ध्यान-समाधयोऽष्टावङ्गानि वृत्तेः’ (यो. सू. १. २९) । चित्त-स्य ध्येयाकारपरिणामस्य प्रवाहोऽविच्छेदः । इयमेव एकाग्रवस्था चतु-र्थी भूमिः ।

१. A. omits वैध-. २. For दृष्टस्य चित्तैकाग्र्यस्य हेतुर्नियमो. A. writes दृष्टचित्तैकाग्र्यहेतुर्नियमो. ३. B. C. F. read वैय्यासिकभाष्ये for वैय्यासिक-भाष्ये. ४. B. C. E. F. H. and I. read काचित्कसमाधियुक्तम् for कादा-चित्कसमाधियुक्तम्.

विषये वृत्तिप्रवाहरूपेण प्रतिष्ठितमेकाग्रम् । अवृत्तिकं* संस्कार-
रूपं निरुद्धम् । तत्र क्षिप्त-मूढयोर्योगानुपयोगः प्रसिद्धः । वि-
क्षिप्तेऽपि चेतसि विक्षेपोपसर्जनीभूतः समाधिर्न योगपक्षे
वर्तते । विपक्षधर्मान्तर्गतत्वेन देहान्तर्गतबीजवदक्षिञ्चित्क*
त्वात् । 'यस्त्वेकाग्रे । चेतसि सद्रूपमर्थं प्रद्योतयति, क्षिणो-
ति च क्लेशान्, कर्मबन्धनानि स्मर्ययति, निरोधमभिमुखं
करोति, स सम्प्रज्ञातो योग इत्याख्यायते' (योः भा. १५. १) ।
तत्र संयमविशेषात् नानाविधयोगैश्वर्यमाविर्भवति । धारणा-

* चित्तस्य त्रिगुणात्मकत्वात् गुणानां च परिणामिस्त्वभावत्वात् चित्तस्य
अवृत्तिकत्वासम्भवः । तथापि चित्त निरुद्धं सत् अवृत्तिकमुच्यते । तत्र
हि संस्कारशेषेऽपि निरोधरूपपरिणामातिरिक्तपरिणामाभावात् कथ-
ञ्चिदवृत्तिकत्वं सम्भवति । विस्तरस्तु पातञ्जले तृतीयपादेऽनुसन्धेयः ।

† य इति समाधिः परामर्शः । भूतं सत्यम् । अननारोपितार्थव्यवच्छेदः ।
आरोपितस्य असत्यत्वात् । सत् शोभनम् । अनेन निद्रावृत्तेर्व्यवच्छेदः ।
निद्रावृत्तिर्हि स्वावलम्बने तन्मसि भवत्येकाग्र्या । तथापि तदवलम्बनं तमः
क्लेशहेतुत्वान्न शोभनम् । द्योतनं तत्त्वज्ञानम् । प्र-शब्देन तस्य साक्षात्कार-
तामाह । शास्त्रानुमानप्रभवस्य परोक्षतत्त्वज्ञानस्य अपरोक्षमिथ्याज्ञान-
निवर्तकत्वम् । दिङ्मोहादौ तथा दर्शनात् । तत्त्वज्ञानेन मिथ्याज्ञानरू-
पाविद्याविनाशे सुतस्व, तन्मूलानामस्मितादीनामपि नाश इत्याह ।
'क्षिणोति च क्लेशानिति' । 'अविद्याऽस्मिता-राग-द्वेषादयः क्लेशाः'
(यो. सू. २-३) तान् नाशयति । कर्मण्येव बन्धनानि तानि श्ल-
थयति । कर्मपदेन धर्माधर्मयोर्ग्रहणम् । कार्ये कारणोपचारात् । निरोधं
असम्प्रज्ञातं निर्वाजसमाधिम् । यत्र न किञ्चित्सम्प्रज्ञायते ऽसौऽसम्प्रज्ञातः ।
विस्तरस्तु पातञ्जले द्रष्टव्यः ।

१. A. reads अतिवृत्तिकम् for अवृत्तिकम् २. समाधिर्न योग १ विक्षेपान्तर्ग-
तत्वेन is the reading of A. for समाधिर्न योगपक्षे वर्तते । विपक्षधर्मान्तर्गतत्वेन.
३. A. reads -वर्गान्त for -धर्मान्त-. ४ B, D E G. and H read व्यञ्जति;
and C. and F. व्यपनयति for स्मर्ययति.

ध्यान-समाधित्रयमेकविषयं* संयम इत्युच्यते । 'शब्दार्थ-
प्रत्ययेष्वन्योन्यविभक्तेषु यः संयमः तेनाशेषशब्दादिसाक्षा-
त्कारे सति पदयदिभाषा ज्ञायन्ते'-इति पतञ्जलिनोक्तम् ।
'तेनैव न्यायेनानेकविधवेदशाखाज्ञानमित्यभिप्रेत्य 'एकाग्रं'
इत्युक्तम् ।

एकाग्र्याङ्गतामासनस्य मत्वा 'आसीनम्' इत्याह । तथा
च व्याससूत्रम् । 'आसीनः सम्भवात्' (शा. सू. ४. १. ७)
इति । शयानस्याकस्मादेव निद्राभिभवात्, उत्थितस्य देहधारणं
चित्तव्यपारात्, गच्छतो धावतो वा विक्षेपबाहुल्यात्, पारि-
शेष्योदासीनस्यैव चित्तैकाग्र्यसम्भवात् आसीनो योगमभ्य-
सितुमुपासीन इत्यर्थः ।

अन्वय-व्यतिरेकाभ्यां प्रश्नस्यावगत्युपायतामभिप्रेत्य 'अपृ-
च्छन्' इत्युक्तम् ।

'तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया' । (भ. गी. ४. ३४)

* अत्र 'देशबन्धश्चित्तस्य धारणा' (३. १) -यत्र देशे ध्येयं चिन्तनी-
यं तत्र देशविशेषे हृदयपुण्डरीकादौ चित्तस्य स्थापनं धारणा इति
सूत्रार्थः । 'तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्' (३. २) -तस्मिन्देशे ध्येयगोचर-
प्रवाहो ध्यानम् । 'तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः' (३. ३) -
ध्यानमेव ध्येयमात्रनिर्भासं 'समाधिः । 'एवमेकत्र संयमः' (३. ४) -धारणा-
ध्यान-समाधित्रयमेकविषयं चेत् संयम इत्युच्यते इत्यनुसन्धेयम् ।

१. B. alone reads न्यायेनानेकविध- for न्यायेनानेकविध-. २. We take our reading from A: though all others more or less differ from it. B. C. and F. read ऐकाग्र्यमासीनस्य मन्वानः; D. G. H. and I. read ऐकाग्र्यतामासीनस्य मन्वानः; and E. reads ऐकाग्र्यतामासीनस्य. ३. A. reads पारिशेष्यासनै and I. reads परिशेष्यासीनस्यैव- for पारिशेष्यादासीनस्यैव. ४. A. and G. read योगमभ्यस्यनुपासीन इत्यर्थः; and D. E. H. and I. read योगमभ्यस्यनुपासीनैत्यर्थः for योगमभ्यसितुमुपासीन इत्यर्थः. ५. A. adds गीतायाम् before अन्वय-.

इत्यन्वयः । 'नापृष्टः कस्यचिद्भूयात्' (म. स्मृ. २.११०)—
इति व्यातिरेकः ।

१) 'ऋषिशब्दोऽतीन्द्रियार्थदर्शनमाचष्टे' १ ज्ञास्यमानधर्मा-
नुष्ठानोत्तरकालीनमृषित्वम् । यथा भाविन्या संज्ञया 'कटं
'कुरु' २ इति व्यवहारः तद्वत् । अन्यथा अतीन्द्रियार्थं पश्यतां
तेषामबुभुसुतया प्रश्नो न सङ्गच्छेत् । अथवा स्वप्नमबुभु-
त्सूनामपि मन्दबुद्ध्यनुग्रहार्थं ३ आचारशिक्षार्थो ४ वा प्रश्नोऽस्तु ।

अपृच्छन् इत्यनेनैवातीतकालत्वे ५ सिद्धे पुरेति शब्दं प्रयु-
ञ्जानः सर्वेष्वपि कल्पेष्वीदृशी ६ धर्मशास्त्रप्रवृत्तिरासीदिति
सूचयति । तच्च विश्वासातिशयोक्त्यादने कारणम् । अन्यान्

* 'ऋषिः' गत्यर्थः । गत्यर्थानां च ज्ञानार्थत्वं प्रसिद्धमेव ।

† अत्र भाविनि भूतवदुपचार इत्यर्थः । तत्र 'कटं कुरु' इति दृष्टान्तः ।
संज्ञिनमन्तरेण संज्ञाया असम्भवात् । उत्तरकालमेव संज्ञाप्रवृत्तिर्भवति ।
तथापि व्यवहारस्तु संज्ञिन उत्पत्तेः प्रागपि संज्ञया यथा भवति
तथेत्यर्थः ।

‡ मन्दबुद्ध्यनुग्रहस्तु — अस्मत्प्रश्नेन आचार्यो धर्मं प्रकाशयिष्य-
ति । तं श्रुत्वा ऽन्ये ऽन्येभ्यो धर्ममुपदेक्ष्यन्ति । इतरे तदान्नरणेन फल-
भाजो भविष्यन्ति इत्यादिरूपः ।

§ 'अपृच्छन्' इत्यत्र लङः अतीतकालत्व एव विधानादिति
भावः ।

१. B. C. and F. read -दर्शितामाचष्टे ; while E. G. and H. -दर्शिनमाचष्टे
for -दर्शनमाचष्टे. २. A. and I. reads कालिकृषित्वम् for कालीनकृ-
षित्वम्. ३. D. reads तत्राप्य- for तेषाम- ४. A. has विश्वासोत्पादनकारणम्
for विश्वासातिशयोक्त्यादने कारणम्. •

मुनीनुपेक्ष्य व्यासमेव पृच्छतामृषीणां—वैदिकधर्मे वेदव्यासः * प्रवीण इत्याशयः ।

तदेवं चिकीर्षितास्य ग्रन्थस्य मुनिप्रश्नेन साक्षात् सम्बन्धः विपृच्छिषोत्पादनं द्वारेणाध्ययनेन सम्बन्ध इति सम्बन्धद्वयमस्मिन् श्लोके प्रतिपादितम् । अधिकार्यादित्रयं तु द्वितीयश्लोके प्रतिपाद्यते ॥

ननु—‘ब्राह्मणो बृहस्पतिसत्वेन† यजेत । सजा राजसूयेन‡ यजेत । वैश्यो वैश्यस्तोमेन यजेत’ इत्याधिकारिविशेषो§

* व्यासो विस्तारः । पुरा कृतयुगे एकमेव सन्तं वेदं चतुर्धा विभजत् भगवान् पाराशर्यः । भारतव्यपदेशेन आम्नायार्थं च दाक्षितवानतस्तस्य प्रावीण्यम् ।

† बृहस्पतिसत्वे नाम एकाहो यज्ञः । स च ‘आधिपत्यकामो ब्रह्मवर्चसकामो वा बृहस्पतिसत्वेन यजेत’ (श्रौ. सू. ९. ५. ३) इत्याश्वलायनेनोक्तः । ब्रह्मणो वर्चः तेजः ब्रह्मवर्चसमित्युच्यते । अथवा ब्रह्मशब्देन ब्राह्मण्यं वेदो वा तयोर्यद्वर्चः तेजः तद्ब्रह्मवर्चसं तत्कामः ब्रह्मवर्चसकामः । एवमेव आधिपत्यमपि स्वजातिश्रेष्ठत्वम् । न राजादिवद्देशाध्याधिपत्यम् । अस्य च श्रुत्या ब्राह्मणमधिकृत्यैवोक्तत्वात् नान्येषां वर्णानामधिकारः ।

‡ ‘स्वाराज्यकामो राजसूयेन यजेत’ इत्युक्तः । ‘राजा तत्र सूयते तस्माद्राजसूयः राज्ञे वा यज्ञो राजसूयः’ इति शबरस्वामी । अस्य चेति-कर्तव्यतादिकं आश्वलायनेन ‘अथ राजसूयाः’ (श्रौ. सू. ९. ३. १) इत्यारभ्योक्तम् । राजानमधिकृत्यैवोक्तत्वात् क्षत्रियस्यैवात्राधिकारो नाग्न्यस्य ।

§ यदुक्तं ‘अधिकार्यादित्रयं द्वितीयश्लोके प्रतिपाद्यते’ इति तत्र अधिकारिनिर्देशाभावात् कथं निर्णयः स्यादिति शङ्कते । नन्विति ।

यथा श्रूयते, न तथा पराशरोक्तधर्माः ईदृशैरनुष्ठेया-इति किञ्चिद्वचनमस्ति । तत् कथं निर्णयः?—इत्यत आह । 'मानुषाणाम्' इति । अर्वाचीनानां पश्वादीनामसामर्थ्यात् । उत्तमानां देवादीनां धर्मानुष्ठाने प्रयोजनाभावाच्च मनुष्या एव परिशिष्यन्ते । विशेषानिर्णयात्* सर्वेषां मनुष्याणामधिकारो ऽस्तु ।

ननु-† नक्षत्रेष्ट्यादौ देवानामधिकारः श्रूयते । 'अग्निर्वा अकामयत । अत्रादो देवानां स्यामिति । स एजमग्रये कृत्तिकाभ्यः पुरोडाशमष्टाकपालं निरपवत्' (तै. ब्रा. ३. १. ४) इति । मैवम् । मनुष्यस्यैव कस्यालित् यजमानस्य भाविनी संज्ञामाश्रित्य प्रथमान्तेनाग्निशब्देन व्यवहारात् । अन्यथा युगपदग्निद्वयसंसृष्टिप्रसङ्गात् ।

ननु-यत्र द्वैगुण्यदोषो नास्ति तत्रास्तु देवताधिकारः । तथाहि श्रूयते । 'बृहस्पतिरकामयत अन्मे देवादधीरन् गच्छेयं पुरोधामिति । स एतं चतुर्विंशतिरात्रमपश्यत् । तमाहरत् तेनायजत । ततो वै तस्मै देवाः श्रद्धधन् अगच्छत्

* 'विशेषानिर्णयात्' ब्राह्मण-क्षत्रियादिवर्णानां ब्रह्मचार्याश्रमाणां च निर्णयाभावात् मनुष्यमात्रस्याधिकारः । इदं तु साधारणधर्म एव । विशिष्टधर्मे तु वर्णाश्रमादिप्रयुक्तो अधिकारिभेदो वर्तत एव ।

विशेषानिर्णयात् सर्वेषां मनुष्याणामेव कस्मादधिकारः ? । नक्षत्रेष्ट्यादाविव देवानामपि कुतो न भवति ?—इत्याशङ्क्याह । नन्विति ।

१. B. C. E. F. G. and H. read विशिष्टानिर्णये तु for विशेषानिर्णयात् ; while D. has विशेषपर्याये तु. २. D. E. and G. read मैवम् for मैवम्. ३. B. C. F. read विद्यमानस्य for यजमानस्य. ४. D. adds यागात् to अन्यथा. ५. We read with A. -यसंसृष्टिप्रसङ्गात्, though all others read -यसृष्टिप्रसङ्गात्.

पुरोधाम्' (तै. सं. ७. १. १) इति । 'अथ' विश्वासम् । 'मे' मयि । 'पुरोधाम्' पौरोहित्यम् । 'चतुर्विंशतिरात्रम्'—एतन्नामकं सत्रयागमित्यर्थः । मैवम् । अत्रापि भाविसंज्ञाया एवादरणीयत्वात् । अन्यथा बृहस्पतेः कश्चित् कालं विश्वसनीयत्व-पौरोहित्ययोरभावप्रसङ्गात् । तच्च श्रुत्यन्तरविरुद्धम् । 'बृहस्पतिर्वै देवानां पुरोहित आसीत्' (तै. सं. ६. ४. ११) इति श्रुत्या पौरोहित्यपुरःसर एव बृहस्पतिसद्भावः प्रकाश्यते ।

अथवा । स्वोपयोगाभावे ऽपि मनुष्यान् प्रवर्त्तयितुं देवाः कर्माण्यनुतिष्ठन्तु ।

‘यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।’

(भ. गी. ३. २१)

इति न्यायात् । अस्तु वा स्वोपयोगो ऽपि । जगन्निर्वाहे अधिकृतानां देवानां तद्धेतोः तपसश्चरणीयत्वात् । 'वसन्ते ब्राह्मणो ऽग्निमादधीत । ग्रीष्मे राजन्य आदधीत । शरदि वैश्य आदधीत' । (तै. ब्रा. १. १. २) —इति विहितस्याधानस्य देवेष्वप्यत्रैवार्णिकेष्ववासम्भवः—इति चेत् । न । रथकारवदुपपत्तेः । अथ मन्यसे—अस्ति रथकारस्य समन्तकाधानविधायकं वचनम् —‘ऋभूणां

१. All but A. omit the word मे. २. After सत्रयागमित्यर्थः an extra sentence is found in A. which is as follows—इत्यादौ फलश्रवणत्वात् कर्मानुष्ठाने कथं प्रयोजनाभावः इति । whose propriety we do not see any in this place. ३. D. and H. read कर्माण्यनुतिष्ठन् for कर्माण्यनुतिष्ठन्तु; while E, G. and I. have कर्माण्यनुष्ठितवन्तः for the same. ४. D. omits. देवानां. while I. reads देवादीनां. ५. E. G. and H. omit तपसः. ६. B. C. and F. read स्वयमाचरणीयत्वात् for चरणीयत्वात्. ७. We take our reading from A. All others read देवेष्वत्रैवार्णिकेष्वसम्भवः. This reading gives the required sense only when च is added to it. ८. A. alone reads -विधायकवचनं for -विधायकं वचनं.

न्वा देवानां सुतपते व्रतेनादधामीति स्थकारस्य' (तै. ब्रा. ३. १. २. १५) इति श्रुतेः । न त्वेवं देवानां विधिरस्ति-इति । एवं तर्हि निषादस्थपतिन्यायो ऽस्तु । यथा निषादस्य प्रभोराधानविभ्यश्रवणे ऽपि यागोऽभ्युपगतः तथा देवानामभ्युपेयत्वं ।

'एतस्या निषादस्थपतिं याजयेत्-' इत्यस्ति निषादविषयं वचनं-इति चेत् । किं त्वया विस्मृतानि देवविषयाणि पूर्वोदाहृतवचनानि ? तेषामर्थवादत्वे ऽपि मानान्तराविरोधात् अननुवादाच्च स्वार्थे ऽपि तात्पर्यं किं न स्यात् ?

अथोच्येत-स्मृतीनां धर्मशास्त्रत्वात् तासु धर्ममीमांसा अनुसर्तव्या । तस्यां च न कस्याप्यर्थवादस्य वाच्यार्थे प्रामाण्यमभ्युपगतं-इति । तदेतद्वचनं स्मृतिनिर्वाहकमन्यस्य मीमांसकमन्यस्य चानर्थायैव स्यात् । 'मूषकभयात् स्त्रगृहं दग्धम्' इति न्यायावतारात् । कस्यचिदर्थवादस्य स्वार्थे प्रामाण्यं भविष्यति-इति भयेन अर्थवादिकप्रसिद्धानां स्मर्तॄणां मन्वादीनां मीमांसासूत्रकृतो जैमिनेश्च सद्भावस्यैव परित्यक्तव्यत्वात् अशेषेतिहासलोपप्रसङ्गाच्च । तस्मात् प्रमाणमेव भूतार्थवादः । तथा च सति 'तं पूषाऽऽधत्त० । तं त्वष्टाऽऽधत्त० । तं मनुराधत्त० । तं धाताऽऽधत्त०' (तै. सं. १. ५. १. २-३) इत्यर्थवादक्यादाधा-

१. For विषयं वचनं A. reads विषयवचनं. २. B. C. E. F. and G. insert वेदे between विस्मृतानि and देव-; and read विस्मृतानि वेदे देवविषयाणि. ३. I. omits च. ४. All but I. omit च. ५. All others except A. read वाक्यार्थ- for वाच्यार्थे. ६. All but A. read -भक्तमन्यस्य, and I. -भक्तस्य for -निर्वाहकमन्यस्य. The latter has a decided superiority of sense. ७. A. and I. read -नियः for -भयात्; the latter is more colloquial. ८. All except A. have -सूत्रकृत्-; and I. has -मात्रकृतो for -सूत्रकृतो. ९. All but A. read एवं for एव. १०. A. D. E. G. H. and I. omit च. ११. B. omits the word तस्मात्.

नमपि देवानां किं न स्यात् ? । ब्राह्मण्याद्यभावे ह्येकामं वस-
न्तादिकालविशेषनियमो माभूत् । किमायातमाधानस्य ? ।
किञ्च अन्तरेणापि आधानं लौकिकं यौ यागः क्वचिदुपलभ्यते ।
'अवकीर्णपशुश्च तद्वदाधानस्याप्राप्तकालत्वात्' (पू. मी.
६. ८. २२) इति जैमिनिसूत्रात् । 'यो ब्रह्मचारी त्रियमुपे-
यात् सो ध्वकीर्णः । स गर्दभं पशुमालभेत्' (बौ. स्मृ. २. १. १.
३०-३१) इत्यवकीर्णपशुः* । यथा उपनयनहोमो लौकि-
काग्नौ तथा असौ पशुः इति सूत्रार्थः । एतावता प्रयासेन
देवानां कर्माधिकारे साधिते किं तत्र फलित्वेति ? । तथा
मीमांसायां किं छिद्यते ? । अभिनिवेशः केवलं शिष्यते ।
फलं तु जगन्निर्वाहः—इति पूर्वमेवोक्तम् । अशेषाश्च पुगणादयः
एतै सति अनुगृहीता भवन्ति । मनुष्यवद्देवानां स्वर्गाय क-
र्माणि साभूवन् जगन्निर्वाहाय तु भविष्यन्ति । तपसैव तन्निर्वा-
हः—इति चेत् । न । स्नान-दान-याग-होम-मौन-ध्यानादिव्यति-
रिक्तस्य तपसोऽनुपलम्भात् । अत एव सत्यसङ्कल्पोऽपि परमेश्वरः
राम-रुष्णाद्यवतारेषु लौकिक-वैदिककर्मनटनेनैव जगन्निर्वह-

* अवकीर्णं विक्षिप्तं हिंसितं वा वृत्तमनेन. इत्यवकीर्णं । 'क' विक्षेपे
'कृञ्' हिंसायां क ५ भावे क्तः । इष्टादिभ्यश्च (पा. ५. २. ८८) इतीनिः ।
खण्डितवत् इत्यर्थः । तस्य पशुः गर्दभः तदर्थं नाम्याधानम् । अपि तु
लौकिकाग्नेवेव स कर्तव्यः ।

१. A. and D. read ब्राह्मण्याद्यभावे for ब्राह्मण्याद्यभावे. २. H. replaces
तु and thus reads किन्त्वन्तरेण for किञ्चान्तरेण. ३. B. alone has फ-
लित्वेति for फलित्वेति. ४. A. reads भिद्यते for छिद्यते. ५. D. inserts
य after एवं. ६. A. omits तु. ७. A. and I. omit स्नान. ८. A. and I. omit स्नान.

हत् । देवा अपि तथा न कन्तु—इति चेत् । एवमापि नटमीय-
कर्माधिकारो भवता अभ्युपगम्यताम् । एवं तर्हि 'मानुषाणां'
इति कथमुक्तं?—इति चेत् । पौष्टवेयग्रन्थापेक्षया—इति वदामः ।
न खलु स्वयंप्रभातनिखिलवेदानां देवानां धर्मज्ञानाय पौ-
ष्टवेयग्रन्थापेक्षा श्चिन्ति । मनुष्याणां तु अतथाविधत्वात् अ-
स्त्यपेक्षा ।

ननु—पशूनामपि धर्मं अधिकारः श्रूयते । गोवो वांभूतत्
सर्वमासतागृह्णाः सर्ताः गृह्णाणि नो जायन्ता इति कामेन
जासां दश मासा निवृण्णा आसन्नय गृह्णाण्यजायन्त । ता
उदतिश्च त्ररास्मेत्यय यासां नाजायन्त ताः संवत्समास्वोदति-
श्च त्ररास्मेति' (तै. सं. ७. ५. १. १) इति श्रुत्या तिरश्चां गवां सवा-
नुष्ठात्त्वाभिधानात् । 'अरास्म' इति कामितार्थसिद्धिं प्राप्ता
इत्यर्थः । नायं दोषः । अस्याः श्रुतेरर्थवादत्वात् । 'य एवं विद्वांसः
संवत्सरमुपयन्ति' (तै. सं. ७. ५. १. २) इति कद्विकामस्य
संवत्सरसर्वं विधातुं प्रथमतः—'गोमत्तं वै संवत्सरः' (तै.

* एतदेवाक्तं भगवता—

‘न मे पार्था ज्ञस्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन ।

नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि ॥

यदि ह्यहं न वर्तये जातु कर्मण्यर्थादन ।

सम वर्तानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वदा ॥

इत्यादिना ।

(भ. गी. ३. २२—२३)

१. All others except A. and I. read भर्माधिकारो for कर्माधिकारो.
२. A. reads वचनापे- for ग्रन्थापे- ३. A. reads अन्यन्तमपेक्षा for अस्त्य-
पेक्षा. ४ Here our reading coincides with that of A.; all others read
सन्नेऽनु- for सवानु- ५. B. C. and F. read आरास्म, D. अरास्म, and E. G.
and H. आरास्म for अरास्म. ६. Between संवत्सरमुपयन्ति and इति B. C.
F. and G. insert एव in addition. Between the same E. and H.
have कर्तव्यन्वेति in addition. ७. A. and I. drop संवत्सर-

सं. ७. ६. १. १-२) इति प्रशंसा कृता । तां सभ्भावयितुं 'गावो वा'-इत्यादि पठितम् । न चैतस्यार्थवादस्य 'यद्वै किञ्च मनुस्वदन्तद्वेषजम्'-इत्यादिवत् स्वार्थेऽपि तात्पर्यं वर्णयितुं शक्यम् । प्रत्यक्षेण श्रुत्यन्तरेण च विरुद्धत्वात् । तिरश्चा हि मन्त्रोच्चारणे कर्मानुष्ठाने च सामर्थ्याभावः प्रत्यक्षसिद्धः । श्रुत्यन्तरं च—'अथेतरेषां पशूनां अशनायापिपासे वा अभिज्ञानं वदन्ति । न विज्ञातं पश्यन्ति । न विदुः श्वस्तनम्'-इति पशूनां विवेकाभावं दर्शयति । अस्तु वा अस्यार्थवादस्य स्वार्थे तात्पर्यम् । गोशब्देन गवाभिमानिदेवतानां विवक्षितत्वात् । अत एव 'अभिमानिव्यपदेशस्तु' (शा. सू. २. १. ५) इति सूत्रे भगवान् वादरायणः सर्वेषां मृदादिवस्तूनां श्रुतिमूलत्वेनाभिमानिदेवतः प्रतिपादयामास । तस्मात् सर्वथा मनुष्यमात्राधिकारकं स्मृतिशास्त्रम् ।

'हितम्' इत्यनेन शब्देन प्रयोगं न निर्वह्यते । अभिमतफलसाधनत्वं हि धर्मस्य हितत्वम् । तच्च फलं द्वेधा । ऐहिकमासुखिकं च इति । अष्टकादिसाध्यं पुष्ट्यादिकमैहिकम् । आसुखिकं द्वेधा । अभ्युदयो निःश्रेयसं च । तत्राभ्युदयस्य साक्षात् साधनत्वम् । निःश्रेयसस्य तु तत्त्वज्ञानोत्पादनद्वारेण । तथा च स्मर्यते—

१. A. reads श्रुत्यन्तरे च for श्रुत्यन्तरं च. २. A. drops अस्य and reads अस्तु वा अर्थवादस्य. ३. All omit तद्वेषजम्. ४. All but A. and I. omit यद्वै. ५. II. reads धर्मस्य तत्त्वं for धर्मस्य हितत्वं. ६. Here our reading coincides with that of A. and I.; while others read साध्यपुष्ट्यादिकम् for साध्यं पुष्ट्यादिकम्. ७. We take our reading from A.; though all others read साक्षात्साधनं धर्मः for साक्षात् साधनत्वम्. The former is a correct reading. The word धर्म carries no meaning in it.

‘धर्मैः सुखं च ज्ञानं च क्षामान्मोक्षे अधिगम्यते’ ।

इति । अत्र केचिदाहुः—‘नित्यकर्मणां फलमेव नास्ति । अकरणे प्रत्यवायाद्भेदेः केवलमनुष्ठीयन्ते । तत्र कुतोऽभ्युदयहेतुत्वं निःश्रेयसहेतुत्वं च’—इति । अपरे पुनरन्यथाहुः—‘अभावाद्भवोत्पत्तेरदर्शनात् अकरणे प्रत्यवायो न युक्तिसहः । नापि तत्र प्रमाणमस्ति’—इति । ननु—उपनयनाध्ययनादिविहितानामकरणे प्रत्यवायः स्मर्यते—

‘अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः ।

सावित्रीपतिता ब्राह्म्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः’ ॥

(म. स्म. २. ३९; वि. स्म. २७. २७)

* ननु—भट्टिः अनुपलम्भस्य अभावप्रमितिहेतुत्वमिष्यते । ताकिं कैश्च प्रतिबन्धकाभावस्य तत्तत्प्रागभावस्य च तत्तत्कार्यव्यवस्थापकत्वमिष्यते । तवापि अकरणस्य प्रत्यवायलक्षणत्वमभिमतम् । नक्त्यं भावस्यैव कारणत्वम् ! अभावस्यापि कुतो न स्यात् । उक्तं च—

‘भावो यथा तथाऽभावः कारणं कार्यवन्मतम्’ ।

इति चेत् । न । अस्माभिस्तावदभावस्य स्वरूपेणैव कारणत्वं नेष्टम् । किन्तु तज्ज्ञानस्य प्रत्यवायगमकत्वमिष्टम् । तेन च रूपेण न प्रत्यवायजनकत्वमिष्यते । नित्यकरणज्ञाने प्रत्यवायाभावप्रसङ्गत् । भट्टानामपि च केषांचित् ज्ञानस्य योग्यानुपलम्भस्य अभावप्रमितिहेतुत्वं सतया तु प्रमितिहेतुत्वेऽभावप्रमायाः प्रत्यक्षत्वापातः । एवमेव तादृशिकाणामपि प्रतिबन्धकाभावस्य कारणत्वेऽन्याऽन्याश्रयत्वप्रसङ्गात् न प्रामाणिकत्वमिति नाभावस्य कारणत्वम् ।

† उपलभ्यते चैतद्वचनं मनुसंहितायां विष्णुस्मृतौ अन्यत्र च । यथाकालं यो यस्यानुकल्पिकोऽप्युपनयने काल उक्तः । षोडशवर्षादिः । आर्यैः शिष्टैः विगर्हिताः ब्राह्म्यसंज्ञा भवन्ति ।

१. D. reads अभिगम्यते for अधिगम्यते. २. B. C. D. F. G. and I. read भीतिः for भेदे; and D. reads भित्ति for the same. ३. A. D. H. and I. have मनुष्ठीयन्ते for अनुष्ठीयन्ते. ४. A. and I. omit अन्वयात्. ५. D. reads प्रमाणमिति for प्रमाणमस्ति. ६. All except A. and I. read विहितानामकरणे for विहितानामकरणे.

‘योऽनधीत्य* द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते, अन्यस्मिन् ।

स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥

(म. स्मृ. २. १६४; ब. स्मृ. २. १९)

‘अकुर्वन्† विहितं कर्म निन्दितं च समाचरन् ।

अनिग्रहाच्चेन्द्रियाणां नरः पतनमृच्छति ॥

*अन्यत्र अर्थशास्त्रादौ । स जीवन्नेव सान्वयः पुत्र-पौत्रादिसहितः शूद्रत्वं गच्छति । उशनसा तु—

‘योऽन्यत्र कुरुते यत्नमनधीत्य श्रुतिं द्विजः ।

स वै मूढो न सम्भाष्यो वेदब्राह्मो द्विजातिभिः’ ॥

(उ. स्मृ. ३. ११)

इति असम्भाष्यत्वमुक्त्वा—

‘योऽधीत्य विधिवद्वेदं वेदान्तं न विचारयेत् ।

स सान्वयः शूद्रकल्पः स पाण्यं न प्रपद्यते’ ॥

(उ. स्मृ. ३. ८३)

इति वेदानधीत्यापि वेदान्तविचाराकरणे शूद्रकल्पत्वमुक्तम् । वेदमनधीत्यापि वेदाङ्गस्मृत्याद्यध्ययने न दोषः । एतदेवाभिप्रेत्य शङ्ख-लिखितावाहनुः—‘न वेदमनधीत्यान्यां विद्यामधीयीत, अन्यत्र वेदाङ्ग-स्मृतिभ्यः’ इति ।

† अग्न्य पूर्वार्धं याज्ञवल्क्यस्मृतौ—

‘विहितस्याननुष्ठानान्निन्दितस्य च सेवनात् ।

(अ. ३ श्लो. २१९)

इति । उत्तरार्धं मनुस्मृतौ—

प्रसक्तश्चेन्द्रियार्थेषु प्रायश्चित्तीयते नरः ।

(अ. ३ श्लो. ४४)

इति च दृश्यते । तस्मात् पूर्वार्धं मानवं उत्तरार्धं याज्ञवल्कीयमिव प्रतिभसि तथापि आनन्दगिरिस्वामिभिः तैत्तिरीयोपनिषद्वाच्यस्य वार्तिकस्य च टीकायां संप्रत्यक्षेनैव सङ्गृहीतं वर्तते । तत्र तु ‘प्रसक्तश्चेन्द्रियार्थेषु’ इति पाठः ।

इति धैवम् । एतानि हि धैवमानि नित्यकर्मानुष्ठायिनः
 आलस्यनिमित्तं पूर्वसञ्चितं दुरितं यत् तत्सद्भावं सूचयन्ति ।
 एतच्च तैत्तिरीयोपनिषद्व्याख्याने भाष्यकार-वार्तिककाराभ्यां
 प्रतिपादितम् । यदि अकरुणं प्रत्यवायस्योत्पादकं यद्वा सूच-
 कं उभयथा अपि नित्यकर्मानुष्ठानेन प्रत्यवायस्य प्रागभावप्रे-
 तिपादनं प्रध्वंसाभावोत्पादनं च सम्पद्यते । दुरितप्रध्वंसित्वं
 च त्रिसन्ध्यमनुष्ठीयमानेषु—‘सूर्यश्च’ (म. ना. उ. १.४. ४.)
 ‘आपः पुनन्तु’ (म. ना. उ. १.४. २.) ‘अग्निश्च’ (म. ना. उ.
 १.४. ३.) इति मन्त्रेषु विस्पष्टमवभासते । एवं च सति उपभो-
 ग्यफलरहितानां नित्यकर्मणां अभ्युदयं ह्येतत्त्वं दुर्गमम्—इति ।

* ननु—यथा निषिद्धेऽर्थवादावगतप्रत्यवायपरिहारार्थमेव पुनरर्थत्वं
 तथा विहितेऽर्थवादावगताकरणजन्यप्रत्यवायपरिहारार्थता कस्मान्न
 स्यात्!—इति चेत् । मैवम् । नहि सर्वत्र अपिहितवादिषु तादृग्विधा अर्थवादाः
 सन्ति । न च ‘विहितस्याननुष्ठानाच्चरः पतनमृच्छति’ इतीयं स्मृतिरेव
 वाक्यशेषस्थानीयेति चतुरस्रम् । नहि वाक्यान्तरप्रतीतिः कार्ये वाक्या-
 न्तरेणार्थवादः सम्भवति । भवतु वा कथञ्चित् एकवाक्यतया अर्थवादः ।
 तथापि न अभावरूपविहिताकरणं कार्यान्तरं जनयितुं क्षमते । •

† भाष्यं करोतीति भाष्यकारः श्रीभारतीतीर्थः । भाष्यलक्षणं यथा—

‘सूत्रस्थं षट्पदादाय वाक्यैः सूत्रानुकारिभिः । •

स्वपदानि च वर्ण्यन्ते भाष्यं भाष्यविदो विदुः ॥’

इति । वार्तिकं करोतीति वार्तिककारः सुरेश्वराचार्यः । वार्तिकलक्षणं यथा—

‘उक्ता-ऽनुक्त-दुरुक्तार्थव्यतिकारी तु वार्तिकम्’ ।

इति । तैत्तिरीयोपनिषद्वाग्भाष्योपाख्याते वार्तिके च नित्यानां न प्रत्यवाय इति
 विस्तरेण प्रपञ्चितम् । तत्तु तत्रैवानुसन्धेयम् । • • •

१. A. and I. omit हि. २. प्रत्यवायस्य is omitted by A. I. A. इति
 I read प्रतिपालनं; and D. प्रतिपालनं for प्रतिपालनं. ३. A. reads
 उपभोग्य- for उपभोग्य. ४. A. and I. insert -कल- between अभ्युदय- and
 हेतुत्वं. ५. For दुरगमम् A. B. C. D. E. and I have दुरत्येयम्.

अथोच्यते । अस्तु वा प्रत्यवायविरोधित्वम् । नैतद्भेदा-फला-
भावः । मन्त्रलिङ्गेन श्रुति-स्मृतिवाक्याभ्यां च तत्फलावगमात् ।
'मयि वर्चो ब्रह्ममोजो निधत्त'—इति मन्त्रलिङ्गम् । छान्दोग्य-
परस्य च आश्रमत्रयस्य लोकहेतुतां चतुर्थाश्रमस्य मोक्ष-
हेतुतां दर्शयति । 'त्रयो धर्मस्कन्धाः यज्ञो ध्ययनं दान-
मिति । प्रथमस्तप एव द्वितीयो ब्रह्मचार्याचार्यकुलवासी तृती-
यो ज्येष्ठानात्माश्रमाचार्यकुले ऽवसादयन् । सर्व एते पुण्यलोका
भवन्ति ब्रह्मसंस्थो ऽमृतत्वमेति' (छां. उ. २. २३. १) इति । एतस्य
च वाक्यस्य आश्रमपरत्वं—'परामर्शं जैमिनिः' (शा. सू. ३ ४. १८)
'इत्यादिभिर्णिससूत्रैः प्रतिपादितम् । स्मृतिवाक्यं चैतत् । 'त-

* ओङ्कारस्य उपासनविन्यर्थ 'त्रयो धर्मस्कन्धा' इत्यागन्धम् । धर्म-
स्कन्धाः धर्मप्रविभागा इत्यर्थः । यज्ञः अग्निहोत्रादिः, अध्ययनं नियमपू-
र्वकं वेदाभ्यासः, दानं भिक्षमाणेभ्यो यथाशक्ति द्रव्यसंविभागः, इत्येषः
प्रथमो धर्मस्कन्धः । एतेन गृहस्थाश्रमो ऽभिधीयते । कृच्छ्र-चान्द्रायणा-
दितपकर्ता तापसः वानप्रस्थो वा द्वितीयो धर्मस्कन्धः । ब्रह्मचारी सन्
आचार्यकुलवासी अत्यन्तं गुरुगृहे आत्मानं क्षपयन् नैष्ठिकः तृतीयो
धर्मस्कन्धः । त्रयो ऽप्येते आश्रमिणः पुण्यो लोको येषां ते पुण्यलोका
भवन्ति । अत्रशिष्टस्तु परित्राट् ब्रह्मणि सम्पक्क स्थितः अमृतत्वं मोक्षं प्रा-
प्नोति इति श्रुत्यर्थः ।

+ 'त्रयो धर्मस्कन्धाः' इत्यादयो ये शब्दा ऊर्ध्वरेतसाश्रमाणां सद्वा-
यायोदाहृताः न ते तस्यातिपादनाय प्रभवन्ति । यतः एषु शब्देषु
आश्रमान्तराणां परामर्शं जैमिनिराचार्यो मन्यते । न विधिम् । न ह्यत्र

१. D. omits the whole of the following—अस्तु वा प्रत्यवायविरोधि-
त्वं । नैतावता फलाभावः । मन्त्रलिङ्गेन श्रुति-स्मृतिवाक्याभ्यां च तत्फलावगमात्.

२. L. omits वा. ३. B, C. and F. read न तावता for नैतावता. ४. J.
adopts तत्त्वम्. ५. A. omits च ६. A. has सूत्रे for सूत्रे.

यथा आम्ने फलार्थे निमित्ते छायागन्ध इत्यनूद्येति । एवं धर्मे चर्यमाणमर्था अनूद्यन्ते'—इति । इदं च वाक्यं नित्यकर्मविषयत्वेन वार्तिके विश्वरूपाचार्य उदाजहार—

‘आम्ने फलार्थे’ इत्यादि ह्यापस्तम्बस्मृतेर्वचः ।

‘फलवत्त्वं समाचष्टे नित्यानामपि कर्मणाम्’ ॥

(वृ. उ. भा. वा. १. १. ९७).

इति । तथा च मनुः—

“ वेदोदितं स्वकं कर्म नित्यं कुर्यादतन्त्रितः ।

तद्धि कुर्वन् यथाशक्ति प्राप्नोति परमां गतिम्’ ॥

(म. स्मृ. ४. १४)

लिङादीनामन्यतमश्चोदनाशब्दो ऽस्ति । यतो धर्मस्कन्धत्वेन त्रीनाश्रमानुदाहृत्य ‘सर्व एते’ इत्यनेन परामर्शपूर्वकं आश्रमाणामनात्यन्तिकफलत्वं सङ्गीत्य आत्यन्तिकफलतया ब्रह्मसंस्थता स्तूयते इति सूत्रार्थः ।

* न केवलं वेदोदितमेव वेदोक्तं अपि तु स्मृतीनां वेदमूलत्वात् इमां तमपि वेदोक्तमेव । स्वकं स्वाश्रमोक्तम् । परमां गतिं मोक्षलक्षणां प्राप्नोति । नित्यकर्मानुष्ठानात् पापक्षये सति निष्पापान्तःकरणेन ब्रह्मसाक्षात्कारान्मोक्षावाप्तेः ।

‘ ज्ञानमुत्पद्यते पुंसां क्षयात् पापस्य कर्मणः’ ।

इति भारते मोक्षधर्मोक्तेः ।

१. We read with A. नित्यकर्मविषयत्वेन for which all others have only नित्यकर्मत्वेन. २. For आम्ने फलार्थे B. C. F. and H. substitute आत्मे निमित्तः ; while G. E. and the text of Brihadāranyaka vārtika read आत्मे निमित्तः. ३. A. reads कर्मणामपि for अपि कर्मणाम्.

इति । कूर्मपुराणे अपि—

‘यथाशक्ति चरेत्कर्म निन्दितानि विवर्जयेत् ।

विधूय मोहकलिलं लब्ध्वा योगमनुत्तमम् ॥

‘गृहस्थो मुच्यते बन्धात् पात्र कार्या विचारणा’ ।

(कू. पु. १. २. १९. २८-२९)

इति । ननु-अस्त्वेवम् । अभ्युदयहेतुत्वं तु न सम्भवति ।

प्रमाणाभावात् ! प्रत्युत श्रुति-स्मृतिभ्यां तन्निषेद्ध्यते—

‘न कर्मणा न प्रजया धनेन’—

(म. ना. उ. १०. ५; कै. उ. २)

इति श्रुतिः ।

‘ज्ञानादेव तु कैवल्यम्’ ।

इति स्मृतिः । मैवम् । परमात्मप्रकरणे निःश्रेयसहेतुवे-
दनेच्छासाधनत्वेन यज्ञादीनां विधानात् । ‘तमेतं वेदानुवचनेन
ब्राह्मणा विविदिषन्ति । यज्ञेन दानेन’—इति श्रुतेः । निषेधस्तु
साक्षान्निःश्रेयससाधनत्वं गोचरयिष्यति । तस्मात् न मु-
क्तानां अग्न्याधानादिकर्मापेक्षा अस्ति । देदनेत्यतौ सा वि-
द्यते । एतच्च उभयं—*‘अत एव चाग्नीन्धनाद्यनपेक्षा’ (शा. सू. ३

‘पुरुषार्थो ऽतःशब्दात् (शा. सू. ३ । ४ । १) इत्येतत्सूत्रं व्यव-
हितमपि अत्र परामृश्यते । ‘अत एव च’ विद्यायाः पुरुषार्थहेतुत्वात् ।
अग्नीन्धनादीनि आश्रमकर्माणि विद्यायां स्वार्थसिद्धौ नैपक्षितव्यानि
इति सूत्रार्थः ।

४. २५) 'सर्वापेक्षा च यज्ञादिश्रुतेरश्वत्' (शा. सू. ३. ४. २६) इत्याभ्यामधिकरणाभ्यां निर्णीतम् । तथा च कर्मणां परम्परया मोक्षहेतुत्वं वायवीयसंहितायामभिहितम्—

‘कर्मातिशयमासाद्य पशोः पशपरिक्षयः* ।

एवं प्रक्षीणपापस्य बहुभिर्जन्मभिः क्रमत् ॥ (६९)

भवेद्विषयवैराग्यं वैराग्याद्वावशोधनम् ।

भावगुद्गुपपन्नस्य शिवज्ञानसमन्वयः ॥ (७०)

ज्ञान-ध्यानाभियुक्तस्य पुंसो योगः प्रवर्त्तये ।

योगेन तु परां भक्तिः प्रसद्भस्तदनन्तरम् ॥ (७१) .

प्रसादान्मुच्यते जन्तुर्मुक्तः शिवममो भवेत् । (७६)

(शि. पु. ५. १. २. ६९-७६)

* उक्तसूत्रेण आश्रमकर्मणामत्यन्तमेवानपेक्षायां प्राप्तिर्यामुच्यते । सर्वापेक्षेति । विद्या सर्वाण्याश्रमकर्माणि अपेक्षते । न अन्यन्तमनपेक्षा । विद्या उत्पन्ना सति फलसिद्धिप्रति न किञ्चिदन्यदपेक्षते तथापि स्वोत्पत्तिप्रति तु आश्रमकर्मादिकमपेक्षत्येव । एतदेवाह श्रुतिः—

‘तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति ।’

‘यज्ञेन दानेन तपसा ज्ञाशकेन’ ॥

(बृ. उ. ४. ४. २२.)

इति ।

१. A. reads वायुसंहितायाम् for वायवीयसंहितायाम्. २. In the text of Shivapurāṇa धर्मा-. ३. Here we take our reading from A. though all others read पाप- for पाश-. In Shivapurāṇa we find पाप-. The former of these is not incorrect in its own way, but this verse comes from the philosophy of the Pāshupatas and the words पशु and पाश are technical ones in that philosophy. ४. In Shivapurāṇa we find different reading for this verse as:—साम्भवे सर्वेदधरे भक्तिर्ज्ञानपूर्वा प्रजायते । भावानुगुणमीशस्य प्रसादो व्यतिरिच्यते ॥७०॥. ५. A. and I. read ज्ञानध्यानभियुक्तस्य for ज्ञान-ध्यानाभियुक्तस्य. ६. H. alone reads -स्तदनन्तरः for -स्तदनन्तरम्.

इति । ननु—प्रत्यवायपरिहाराय पुण्यलोकप्राप्तये ब्रह्म-
वेदनाय च मतिदिनं नित्यकर्मणस्त्रिःप्रयोगः प्राप्तः । तत्र ।
खादिरवत् सकृत्प्रयुक्तस्यैव वचनसंयोगभेदेन फलाभेदोपपत्तेः ।

‘खादिरो यूपो भवति’ । (तै. ब्रा. २. ४. २४.) —इति
क्रत्वर्थं वचनम् । ‘खादिरं वीर्यकामस्य यूपं कुर्वीत’ —इति
वचनं पुरुषार्थम् । तदेतत् वचनद्वयं एकस्यैव खादिरस्य
प्रयोजनद्वैविध्ये हेतुः । ‘एकस्य तूभयत्वे संयोगपृथक्त्वम्’
(पू. मी. ४. ४. ३१) इति जैमिनिसूत्रात् । एवमत्रापि पूर्वो-
दाहृतवचनत्रयबलात् प्रयोजनत्रैविध्येऽपि सकृदेव प्रयोगः ।
तच्च ‘विहितत्वाच्चाश्रमकर्मापि’ (शा. सू. ३. ४. ३२) —इत्य-
स्मिन्नधिकरणे निर्णीतम् । न च नित्यस्यापि फलवत्त्वे नित्य-
काम्ययोर्भेदाभावः—इति शङ्कनीयम् । करणे फलसाम्ये
ऽपि अकरणे प्रत्यवाय-तदभावाभ्यां तद्भेदात् । न खलु
आगुष्काम-वृष्टिकामेष्ट्याद्यकरणे कश्चित् प्रत्यवायः श्रूयते ।
एष एव नित्यन्यायो नैमित्तिकेऽप्यवगन्तव्यः । ‘स्कन्ने

* आयुष्कामेष्टिः आश्वलायनश्रौतसूत्रे ‘आयुष्कामेष्ट्यां’ (२. १०. २)
इत्यत्र द्रष्टव्या । वृष्टिकामेष्टिरपि तत्रैव ‘वृष्टिकामेष्टिः करीरी’ (१. १३. १)
इत्यत्र द्रष्टव्या । ‘करीर्या वृष्टिकामो यजेत’ इत्यादिना चास्य क्रत्वर्थत्वम् ।

१. H. has -स्त्रिः प्रयोगः for -स्त्रिः प्रयोगः. २. For तत्र B. C. F. and H. read न simply, and E. omits the whole तत्र; while G. reads न च for it. ३. All except A. omit एव. ४. A. omits the word खादिरं. ५. All but A. and I. read करणे ऽतिशयसाम्येऽपि for करणे फलसाम्येऽपि; which is the reading of A. and I. ६. G. reads नित्य-काम्ययोर्भेदो for नित्यन्यायो.

जुहोति । भिन्ने जुहोति' इत्यादि अनियतवेदेवाक्याधिकारिविशेषणोपेतं नैमित्तिकम्* । नित्यवत् काम्यस्मापि विहितत्वेन शुद्धिहेतुत्वात् मोक्षसाधनत्वं—इति चेत् । न । रागाप्राधान्यात् । शुद्धिस्तु उपसर्जनत्वेन रागविषयं भोगं सम्पाद्योपक्षीयते । अत एव गीतायां भगवता मुमुक्षोरर्जुनस्य फलासक्तिर्निषिद्धा—

‘योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय ।

सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥

(भ. गी. २. ४८)

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।

मा कर्मफलहेतुर्भूः - - - - - ॥

(भ. गी. २. ४७)

* केचित्तु—‘निमित्तं पर्वण्यादिकमनुरुध्य प्रवृत्तं नैमित्तिकं’ इत्याहुः । अनियतवेदेवाक्याधिकारिविशेषणोपेतत्वे हि चैत्यवन्दनादिकस्यापि नैमित्तिकत्वं भवेदिति नेषामाशयः ।

† ‘राग’ शब्देनात्र विषयसिक्वनाभिलाष एव ग्राह्यः । नेच्छामात्रम् । ‘सुखानुशयी रागः’ (२. ७) इति योगसूत्रात् ‘सुखाद्रागः’ (६. २. १०) इति वैशेषिकसूत्राच्च विषयगोचराभिलाषस्यैव रागत्वाभिधानात् ।

१. For वेदेवाक्याधिकारि- A. and I. read भेदनादिकार्य-; B. G. E. and F. read वेदेवाक्याधिकारि-. २. A. and I. read रागविषयभोगं for रागविषयं भोगं. ३. For सम्पाद्योपक्षीयते E. and G. read सम्पाद्योपजायते. ४. All but A. read कथञ्चन for कदाचन.

इत्यादिना । नित्यकर्मणि तु बुद्धिशुद्धिः प्रधानम् । फलमुप-
सर्जनम् । अत एव भुज्यमानेनापि फलेन तदनित्यत्व-साति-
शयत्वदोषदर्शनरूपो विवेको न प्रतिबध्यते । तदुक्तं वार्तिक-
कारेण—

‘नित्येषु* शुद्धेः प्राधान्यात् भोगो ऽप्यतिबन्धनः ।

भोगं भङ्गुरमीक्षन्ते बुद्धिशुद्ध्यनुरोधतः’ ॥

(बृ. उ. भा. वा. १. १. ६०८)

इति । नित्यं च कर्म द्विविधम् । संस्कारकं विविदिषाजन-
कञ्च । विहितत्वमात्रबुद्ध्या क्रियमाणं संस्कारकम् । तथा च
स्मर्यते । ‘यस्यैते ऽष्टाचत्वारिंशत् संस्काराः स ब्रह्मणः सा-
युज्यं सलोकतां गच्छति’ इति । ईश्वरार्पणबुद्ध्या क्रियमाणं
विविदिषाजनकम् । तच्च भगवतां दर्शितम्—

‘यत् करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् ।

यत् तपस्यसि कौन्तेय तत् कुरुष्व मदर्पणम्’ ॥

(भ. गी. ९. २७)

* नित्येषु कर्मसु चित्तशुद्धेः प्रधानफलत्वात् उपसर्जनत्वेन भविष्यतो-
ऽपि भोगस्य तदनुष्ठानाणां नापेक्षति भावः । यतस्ते हि बुद्धिशुद्ध्यनुरो-
धेन भोगं भङ्गुरं क्षणविनाशिनं अवलोकयन्ति । कः खलु शाश्वत-
सुखप्राप्तिसाधनं फलं विहाय क्षणभङ्गुरमिच्छेत् ? न कोऽपीत्यर्थः ।

१. All but A. omits बुद्धिः. २. G. omits एव. ३. D. omits the whole from शुद्धिस्तु- (p. 60, l. 8) to सातिशयत्व.- ४. For अष्टाचत्वारिंशत् A. and G. read षाचत्वारिंशत्. ५. A. adds अष्टावात्मगुणा after संस्काराः; and omits स. ६. All except A. and I. substitute जयति for गच्छति. ७. H. and I. read भगवतेरितम् for भगवता दर्शितम्.

इति गौतम्यामपि । तत्र संस्कारेण चित्तस्य वेदनयोग्यतामात्रं सम्पद्यते । विविदिषा तु प्रवृत्तिमुत्पाद्य अवश्यं वेदनं सम्पादयति । तस्मात् मुमुक्षोरीश्वरार्पणं प्रशस्तम् । तदेव हितशब्देन धर्मस्याभिमतसाधनत्वाभिधानात्—अभीष्टसिद्धिः प्रयोजनं—इत्युक्तं भवति ।

धर्मशब्देन विषयो निर्दिश्यते । अभ्युदय-निःश्रेयसे साधनत्वेन धारयति—इति धर्मः । स च लक्षणं-प्रमाणाभ्यां* चोदनासूत्रैर्व्यवस्थापितः । ननु—चोदनाश्रवणस्य न स्मृतिविषयत्वम् । सर्वत्रानन्यलभ्यस्यैव विषयत्वावगमात् । अथ मन्यसे चोदनागम्योऽपि अर्थवादपरिहारेण शाखान्तरगतविशेषोपसंहारेण च अनुष्ठानक्रमसौकर्याय सङ्गृह्यते इति । तत्र । कल्पसूत्रेषु तथा सङ्गृहीतत्वात् । अतो न धर्मस्य विषयत्वम्—इत्याशङ्क्याह । ‘शौचाचारम्’ इति । अयं भावः । द्विविधो धर्मः । श्रौतः स्मार्तश्च । तत्र अग्न्याधाना-

*लुप्यते येन तल्लक्षणं यथा धूमोऽग्नेः । यो ऽर्थः पुरुषं निःश्रेयसेन संयुनक्ति स धर्मः निःश्रेयःसम्पादकत्वं धर्मस्य लक्षणम् । प्रमाणं तु चोदना । क्रियायाः प्रवर्तकं वचनं चोदनेऽयुच्यते । आचार्यचोदितः करोति इति हि दृश्यते । विस्तरस्तु शबरभाष्ये द्रष्टव्यः ।

† ‘चोदनालक्षणो ऽर्थो धर्मः’ (पू. मी. १ । १ । २) इत्यादीनि चोदनासूत्राणि ।

१. A. omits the whole from विविदिषाजनकं (p. ६१: 1. १८) to सम्पद्यते both inclusive. २. A. omits तु. ३. A. reads साधक for साधन-. ४. A. and I. read सूत्रे व्यवस्थापितः for सूत्रैर्व्यवस्थापितः. ५. For चोदनागम्योऽपि B. C. D. E. and F. read चोदनागम्येऽपि. ६. A. and I. omit अग्नि-.

दिपूर्वकोऽधीतप्रत्यक्षवेदमूलो दर्श-पूर्णमासादिः श्रौतः । अनु-
मितपरोक्षशाखामूलः शौचाचमनादिः स्मार्तः । तत्र आधा-
नादिः कल्पसूत्रेषु सङ्गृहेऽपि शौचादेरसङ्गहात् विषयत्वं
—इति ।

ननु—स्मृत्यन्तरेष्वपि शौचादिरुक्तः— इत्यत आह ।
'वर्त्तमाने कलौ युगे' इति । कलौ युगे वर्त्तमाने सति
याजनाध्यापनादीनां जीवनाय असम्पूतैः मानुषाणां जीव-
नाय अभ्युदयाय निःश्रेयसाय च हितः सुकरो यो धर्मः
ब्राह्मणकर्तृकः* कृष्यादिः सोऽत्र प्राधान्येन प्रतिपाद्यते—इति
अनन्यलभ्यत्वात् विषयत्वमित्यर्थः ।

‘यथावत्’ इतिपदेन कात्स्न्यमभिदधानः सङ्कोचं निवा-
रयति । न त्वन्यथाकथनं निवार्यते । स्मर्तृणामभ्रान्त्यवि-
प्रलम्भाभ्यां तदप्रसक्तेः । अत एव सत्यवतीसुत इति सम्बो-
धनम् । यद् योषिदपि सती सत्यवती माता सत्यवादिनी†

* इदमग्रे मूल एव विस्तरेण स्पष्टीभविष्यति ।

† यथोक्तं महाभारते—

‘रूप-सत्त्वसमायुक्ता सर्वैः समुदिता गुणैः ।

सा तु सत्यवती नाम सत्यवादित्वसंश्रयात्’ ॥

इति । अत्र चतुर्थचरणे ‘मत्स्यघात्यभिसंश्रयात्’ इत्यपि पाठांतरं
मुंबईमुद्रितपुस्तके दृश्यते ।

१. D. read: -मूलशौचा- for -मूलः शौचा- २. For कात्स्न्यमभिदधानः A.
and I. read कात्स्न्याभिधायिना. ३. For स्मर्तृणामभ्रान्त्यविप्रलम्भाभ्यां
तदप्रसक्तेः A. and I. read स्मर्तृणां भ्रान्ति-विप्रलम्भाद्यप्रसक्तेः ४. A. omits
सती ; while all others except I. omit सत्यवती and retain सती.

तदा किमु वक्तव्यं वेदाचार्यस्तत्पुत्रः सत्यवादी-इति ।
चकारेण सुप्रहृत्वं समुच्चिनोति ।

अत्र-प्रोक्तानामधिकारि-प्रयोजन-विषयाणां परस्परसम्बन्धो
विस्पष्टः । तत्र प्रयोजनाधिकारिणोरर्थमानार्थित्वम् । अधिकारी
हि प्रयोजनमर्थयते । प्रयोजन-विषययोश्च जन्यजनक-
भावः । ज्ञाते धर्मे तदनुष्ठानेनाभ्युदय-निःश्रेयससिद्धेः । अधि-
कारि-विषययोश्चोपकार्योपकारकभावः । विषय-प्रयोजनमुत्पा-
द्याधिकारिणं प्रत्युपकरोति । विषय-ग्रन्थयाश्च प्रतिपाद्य-प्रति-
पादकभावः । तदेवमनुबन्धचतुष्टयस्य सुलभत्वात्सुग्राहित-
मनस्कैः श्रोतृभिरस्मिन् ग्रन्थे प्रवर्त्तनीयं इति श्लोकद्वयस्य
तात्पर्यार्थः ॥ १-२ ॥

ननु-पराशरस्मृत्यवतारे व्यासं प्रति प्रश्नो व्यधिकरण-
इत्याशङ्क्य श्लोकद्वयेन परिहरति-

तच्छ्रुत्वा ऋषिवाक्यं तु सशिष्यो ऽग्न्यर्कसन्निभः ।
प्रत्युवाच महातेजाः श्रुति-स्मृतिविशारदः ॥ ३ ॥
न चाहं सर्वतत्त्वज्ञः कथं धर्मं वदाम्यहम् ।

अस्मत्पितैव प्रष्टव्यं इति व्यासः सुतोऽब्रवीत् ॥ ४ ॥

तदित्यादिना । सुमन्तु-वैशम्पायन-जैमिनि-पैलैः चतुर्वेदप्रव-
र्त्तकैः पुराणप्रवर्त्तकसूतसहितैः शिष्यैः सह वर्तते इति स-

१. D. E. G. and I. read सत्यवदीति प्रकारेण सुप्रहृत्वं, and this brings the two sentences into one. २. A. and I. read अधिकारिभिः प्रयोजन-मर्थयते for अधिकारी हि प्रयोजनमर्थयते ; while D. omits हि. ३. A. alone reads मुनिवाक्यं for ऋषिवाक्यं. ४. B. C. and F. read धर्मतत्त्वज्ञः for सर्वतत्त्वज्ञः.

शिष्यः । यथा अग्निर्ज्वालाभिरूपेतः ग्रथा च सूर्यो रश्मिभिः
 एवमसौ स्वसंमानविद्यैः शिष्यैरूपेतः । अत एव महाते-
 जस्त्वम् । तेजःशब्देनात्र ब्रह्मवर्चसं विवक्षितम् । इतरेण
 तेजसा प्रयोजनाभावात् । तामेव विवक्षां 'श्रुतिविशारदः'
 इत्यनेन स्पष्टयति । श्रुति-स्मृत्योः क्रमेणाभ्यर्कदृष्टान्तौ योज-
 नीयौ । अग्निः सन्निरुष्टमेव दहन्नपि अहनि रात्रौ चाविशेषेण
 दहति । एवमभ्यस्यमानप्रत्यक्षश्रुतिषु कतिपया एव धर्मा ज्ञाय-
 माना युक्तावस्थायामयुक्तावस्थायां चाविशेषेण ज्ञायन्ते ।
 अर्को दिव्यैव भासयन्नपि सन्निरुष्टं विप्ररुष्टं च अखिलं भास-
 यति । एवं युक्तावस्थायामेव स्मर्यमाणा अपि विप्रकीर्णाने-
 कशाखानिष्ठधर्माः सर्वे अपि स्मर्यन्ते । अथ वा तपसा अत्यन्त-
 परिशुद्धो ज्य इत्यस्मिन्नर्थे अग्निदृष्टान्तः । 'अग्निः शुचित्रत-
 तमः' (ऋ. सं. ६. ३. ४०. १; तै. सं. ५. ३. ५. १४)
 इति श्रुतेः । बहुविषयाभिव्यक्तिसमत्वे अर्कदृष्टान्तः ॥ ३ ॥

ननु—एवं सति—'न चाहं सर्वतत्त्वज्ञः'—इति वचनं व्या-
 हतम् । न । तस्य पितृप्रशंसारूपार्थधादत्वात् । 'अपशवो
 वा अन्ये गो-अश्वेभ्यः' (तै. सं. ५. २. ९. ४) इति वचनं
 यथा गव्यश्वप्रशंसापरम् । न त्वजादीनां पशुत्वं निषेधति ।
 प्रत्यक्षविरोधात्, आग्नीषोमीयादिपशुविधिविरोधाच्च । एवमिदं
 व्यासवचनं न व्यासस्य सर्वज्ञत्वं निषेधति । किन्तु पितरं

१. After ज्ञायमाना A. and I. add भवन्ति ; but it seems to have no proper use in this place. B. C. and F. omit ज्ञायमाना. २. B. C. and F. omit अयुक्तावस्थायां. ३. B. C. E. and F. read अग्निदृष्टान्तः for अग्निदृष्टान्तः. ४. B. C. E. and F. read अर्को दृष्टान्तः for अर्कदृष्टान्तः. ५. Except A. and I. all others omit न. ६. D. reads अग्निदोमीयादि- for आग्नीषोमीयादि-.

प्रशंसति । यद्वा । गुरुविषये विनयः कर्तव्य-इत्याद्याचार-
शिक्षार्थमिदमुक्तम् । अथवा 'न चाहम्'-इति वदतो व्यास-
स्यायमाशयः-सम्प्रति कलिधर्माः पृच्छन्ते । तत्र न तावदहं
स्वतः कलिधर्मतत्त्वं जानामि । अस्मत्पितुरेव तन्न प्राची-
न्यात् । अत एव 'कलौ पराशराः स्मृताः' (प. स्मृ. १. २४) इति वक्ष्यते । यदि पितृशब्दात् मम तदभिज्ञानं
तर्हि स एव पिता प्रष्टव्यः । न हि मूलवक्तरि लभ्यमाने प्रणालिका
युज्यते-इति* ।

पालनात् 'पिता' । पालकत्वं च अत्र कलिधर्मोपदेशेन-इति
प्रस्तावानुसारेण द्रष्टव्यम् । अन्यैव विवक्षया जनक-तातादि-
शब्दानुपेक्ष्य पितृशब्दं प्रयुक्ते । एवकारेण अन्ये स्मर्त्तारो
व्यावर्त्यन्ते । यद्यपि मन्वादयः कलिधर्माभिज्ञाः तथापि
पराशरस्यास्मिन्विषये तेषां विशेषबलादसाधारणः कश्चिदति-
शयो द्रष्टव्यः । यथा कृष्ण-माध्यन्दिन-काठक-कौथुम-तैत्ति-
रीयादिशाखासु कृष्णादीनामसाधारणत्वं तद्वदत्रैव गन्तव्यम् ।

'व्यासः सुतः' इत्युक्तेरयमाशयः-कलिधर्मसम्प्रदायो-
पेतस्यापि पराशरसुतस्य यदा तद्धर्मरहस्याभिधाने सङ्कोच-

* नन्दपण्डितस्तु-‘पराशरस्यैव प्रतिकल्प कलिधर्मप्रवचनाधिकारि-
पुरुषत्वं श्रुति-स्मृतिभ्यामवगत्य स्वस्यानुचितं कलिधर्मानुशासनं म-
न्वानो व्यासः सुतो ऽहं धर्मं कथं वदामि अस्मत्पितैव प्रष्टव्य इत्यवदत्’
इत्याह । धरणीधरो ऽपि-‘पराशरस्यैव प्रतिकल्पं कलिधर्मप्रवचनाधि-
कारित्वमिति गूढोऽभिप्रायः’ इत्युक्तवान् ।

१. A. and I. omit तत्र. २. We read प्रणालिका though the MSS. read प्रणाडिका, there being no difference between ड and ण in Sanskrit.
३. A. omits अत्र. ४. All but H. read सुतो व्यासः (or व्यासः सुतः).

तदा किमु वक्तव्यमन्येषाम्—इति । तदेवं व्यासमुखेन परा-
शरे गौरवार्तिशयबुद्धिमुत्पादयितुं पराशरस्मृत्यवतारे अपि व्यासं
प्रति प्रश्नो न व्यधिकरणः इत्यवगन्तव्यम् ॥ ४ ॥

यथात्रिधि पुरुषसत्त्व विद्याप्राप्तिः इत्यभिप्रेत्य उपसत्तिं
दर्शयति—

तैतस्त ऋषयः सर्वे धर्मतत्त्वार्थकाङ्क्षिणः

ऋषिं व्यासं पुरस्कृत्य गता बहुरिकाश्रमम् ॥५॥

इति । सर्वत्र वस्तुनि सामान्येन ज्ञाते विशेषेणाज्ञाते ज्ञाना-
काङ्क्षा भवति । धर्मशब्दो ऽत्र सामान्यमभिधत्ते । तत्त्वार्थ-
शब्दो विशेषम् । तत्र सामान्यं अधीतवेदेन श्रुतव्याकरणेन
लक्षण-प्रमाणकुशलंन पुरुषेण ज्ञायते । वेदो हि धर्मसामान्यं
निरूपयति । ‘धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा’ (म. ना.
उ. १. २२)—इति । शाखान्तराध्यायिनस्तु व्याकरणवलात्
तदभिज्ञानम् । अभ्युदय-निःश्रेयसे धारयति—इति व्युत्प-
त्तेर्दर्शयितत्वात् । औणादिकप्रक्रियायां कुशलश्चेत् लक्षणेन
जानातु । अर्थत्वे तु—चोदनागम्यो धर्मः—इति लक्षणम् । तत्र
अर्थशब्देन इत्येनार्थभिचाराणां अनर्थानां निवृत्तिः । ‘इत्येन-

१. D. E. G. and H. read उपसत्ति for उपसत्ति. २. K. and L. read ततस्तु for ततस्त. ३. A. and I. read गत्वा for गता. ४. D. E. and G. read बहुरिकाश्रमान for बहुरिकाश्रमम्. ५. B. C. and F. read अधीते वेदे for अधीतवेदेन. ६. E. and G. read श्रुतव्याकरणेन for श्रुतव्याकरणेन. ७. B. has प्रमाणकुशलंन for प्रमाणकुशलं. ८. A. omits हि. ९. A. D. E. and I. read प्रक्रियायामकुशल for प्रक्रियायां कुशल. १०. A. and I. read जानाति for जानातु. ११. A. replaces सति by तु. १२. A. alone reads इत्येनाभिचाराणीनां for इत्येनाभिचाराणां.

नाभिचरन् यजेत*’ इति श्रुत्युक्तस्य श्येननामर्कयागफलस्य शत्रुवधस्य ‘न हिंस्यात् सर्वभूतानि’—इति निषेधविषयत्वेन अनर्थत्वात् तद्वेतोः श्येनस्याप्यनर्थत्वम् । श्येनस्य स्वरूपतो निषेधाविषयत्वात् विधेयत्वमप्यकिरुद्धम् । न च निषेधविषयत्वेन आग्नीषोमीयवधस्यापि अर्थशब्देन व्यावर्त्यत्वादव्याप्तिः—इति शङ्कनीयम् । तत्र विशेषविधिना सामान्यनिषेधस्य अपाङ्कितत्वात् । चोदनाशब्देन प्रत्यक्षादेर्व्यावृत्तिः । ‘घटं कुरु’ इति लौकिकविधावतिव्याप्तिः—इति चेत् । न । चोदनाशब्दस्य वेदविषये प्रसिद्धत्वात् । पङ्कजादाविव अवयवार्थस्य प्रवृत्तिनिमित्तमात्रत्वात् । उक्तलक्षणाभिधानेनैव ‘धर्मे चोदनाप्रमाणम्’—इत्यर्थादभिहितं भवेति । एवं लक्षणादिभिः सामान्येन ज्ञाते अपि कृषीणां नद्विशेषज्ञानं भवत्येवाकाङ्क्षा ।

तत्र विशेषप्रश्नकुशलत्वात् व्यासस्य पुरस्कारः । कलि-

* अयं च श्येनयागः आश्वलायनश्रौतमूत्रे (अ. ९. ७) उक्तः । तस्य च इतिकर्तव्यतादिकं तत्रैव द्रष्टव्यम् । आभिचारिकमिदं कर्म अस्वर्गत्वेनैव वेदे उक्तम् ।

† नन्दपण्डित-धरणीधरौ तु—‘धर्मतत्त्वार्थकाङ्क्षिणः इति—कलिकालानुष्ठेयस्य धर्मस्य तत्त्वं अबाधितं रूपं स एवास्ति तत् काङ्क्षन्ति’ इति व्याख्यातवन्तौ ।

१. A. reads श्रुतेः उक्तस्य for श्रुत्युक्तस्य : while all others except I. omit श्रुति altogether. २. B. C. and F. read अप्राप्तिः for अव्याप्तिः. ३. We read with A. while all others read विधिब्युत्तिव्याप्तिः for विधावतिव्याप्तिः. ४. A. and I. read प्रवृत्त्यतिमित्तत्वात् for प्रवृत्तिनिमित्तमात्रत्वात्. ५. Here we read with A. and I.; while all others read सामान्ये ज्ञाते अपि for सामान्येन ज्ञाते अपि.

कल्मषविमोचेतहेतुत्वात् अक्षय्यफलहेतुत्वाच्च बहिरिकाश्रम-
निवासः । तदेतत् कूर्मपुराणे—

‘बदयश्चिन्ममासाद्य मुच्यते कलिकल्मषात् ।

तत्र ज्ञारायणो देवो नरेणास्ते सनातनः ॥

अक्षय्यं तत्र दत्तं स्याज्जप्यं वा अपि तथाविधम् ।

महादेवप्रियं तीर्थं पावनं तद्विशेषतः ।

नारयेण पितॄन् सर्वान् दत्त्वा श्राद्धं विशेषतः’ ॥

(कू. पु. १. २. ३६. ४८-४९)

इति ॥ ५ ॥

पराशरस्य तपोमहिमानं प्रख्यापयितुमाश्रमं विशिनाष्टि—

नानापुष्पलताऽऽकीर्णं फलवृक्षैरलङ्कृतम् ।

नदीप्रस्त्रवणोपेतं पुण्यतीर्थोपशोभितम् ॥ ६ ॥

मृग-पक्षिनिर्वादाढ्यं देवताऽऽयतनावृतम् ।

यक्ष-गन्धर्व-सिद्धैश्च * नृत्य-गीतैरलङ्कृतम् ॥ ७ ॥

* अत्र कुत्रचित् ‘नृत्य’शब्दः कुत्रापि ‘नृत्त’शब्दश्च वर्तते । यद्यपि नृत्य-नृत्तशब्दयोः व्याख्याकृद्भिर्न विशेषः प्रतीतः तथापि तत्रास्ति क-
श्चिद्विशेषः । यथोक्तं चन्द्रिकायां—‘नृत्यं पदार्थाभिन्नयो नृत्तं ताललया-
श्रितम्’ इति ।

१. All but A. read -विमोक्त- for -विमोचन-. २. All but A. D. and G. read अक्षय- for अक्षय्य-. ३. A. and L. read मुच्येत for मुच्यते; all others read मुच्ये for the same. ४. In Kūrma Purana we find सर्वकि-
र्त्तिषात्. ५. Except A. D. and I. All others and the text of Kūrma
Purana read अक्षय्यं for अक्षय्यं. ६. D. has कर्म for दत्तं; and Kūrma
Purana हानं. ७. B. G. and F. read -जप्तं for -जप्यं. ८. Except J. K.
I. and L. all others read फल-पुष्पैः for फलवृक्षैः. The commentators
prefer the word फलवृक्षैः. ९. For -निनादाढ्यं G. reads -निनादाद्य,
while L. reads -निनादाढ्य-; and D. reads -भिराढ्यं च for -निनादाढ्यं.
१०. A. and I. read नृत्त- for नृत्य-.

इति । अत्युत्कटेन* तपसा फलमिहैवाविर्भवति । तथा सति यादृशं फलमुत्कृष्टमुपलभ्यते तादृशस्य तपस उत्कर्षो निश्चेतव्यः । इह च तेषु तेषु ऋतुषु सम्भाव्यमानानां नाना-विधानां पुष्पाणां निरन्तरं सङ्कीर्णत्वमुपलभ्यते । ततो देवार्चनलक्षणं तपः पक्वं इति गम्यते । एवं फलवृक्षोत्कर्षात् आहारनियतेः परिपाको निश्चीयते । धर्मकालेऽपि अविच्छिन्नेन नदीप्रवाहेण स्नाननियतिपाकावगमः† । पुण्यतीर्थं विष्णुगङ्गादि । पुण्यतीर्थशोभया च आश्रमस्यैतस्य तपोऽतिशयजनकत्वे हेतुरुपन्यस्तः ॥ ६ ॥

मृगादीनामन्योन्यवैरत्यागेन निर्भयाणां विलम्बो यो निनादः तेन अहिंसाऽनुष्ठानसिद्धिर्दर्शिता । तथा च योगशास्त्रे पतञ्जलिः यम-नियमादीनां क्रमेण सिद्धिलिङ्गानि सूचयन्

* 'अत्युत्कटेः पुण्य-पापैरिहैव फलमश्नुते' इति वसिष्ठोक्तिरपि अत्रानुसन्धेया ।

† 'नियति' शब्दोऽत्र नियमवाची । भगवता पतञ्जलिना 'वितर्काहिंसादयः' (पा० २. ३४)-इत्यादिना प्रतिपक्षभावनामुक्त्वा-प्रतिपक्षभावनाद्वैतोर्हया वितर्का यदाऽस्य स्युरप्रसवधर्माणः तदा तत्कृतमैश्वर्यं योगिनः सिद्धिसूचकत्वेन भवतीति दर्शयितुं वैरत्याग-क्रियाफलश्रयत्वादाः सिद्धयोऽभिहिताः । तास्तु योगसूत्रभाष्ये द्रष्टव्याः । •

१. A. omits च. २. All but A. and I. omit ऋतुषु, which is necessarily wanted here. ३. II. and I. read फलवृक्षोत्कर्षात् for फलवृक्षोत्कर्षात्. ४. For -नियति- B. C. and E. read -नियमः, while D. E. and II. -नियत-. ५. For पुण्यतीर्थं विष्णुगङ्गादि । पुण्यतीर्थशोभया. D. reads उष्णतीर्थं विष्णुगङ्गादिपुण्यतीर्थशोभया ; while H. reads पुण्यतीर्थविष्णुगङ्गादिपुण्य-. ६. Except A. all others omit च. ७. G. reads तपोऽतिशयजनकत्वे हेतुः ; and D. तपोऽतिशयजनकत्वे हेतुः for तपोऽतिशयजनकत्वे हेतुः •

अहिंसासिद्धिं सूत्रयामास । 'नत्सन्निधौ वैरत्यागः' (पा. यो. सू. २. ३५.) इति ।

पूर्वे महर्षयो ऽत्र तपश्चरन्तः एकैकं देवालयं स्वस्वकाले निर्मिमिरे । तेः सर्वैरावृतत्वमस्याश्रमस्य तापोऽतिशयहेतुतायां सर्वसम्प्रतिपत्तेर्लिङ्गम् । अथवा चन्द्र-सूर्यादयो देवाः पूर्वस्मिन् जन्मनि मनुष्याः सन्तो ऽत्रैव नानाविधेष्वायतनेषु तपस्तप्त्वा देवत्वं लेभिरे-इति विवक्षया देवनामाङ्कितैरायतनैरावृतत्वमुक्तम् । यक्षादयः* पूर्वजन्मानुष्ठिततपःफलदेवयोनित्वमनुभवन्तो† ऽयत्रागत्य एतदीयतपोऽतिशयं दृष्ट्वा हृष्यन्तो नृत्यन्ति गायन्ति च । अनेन देवैरपि अर्थनीयत्वमाश्रमस्य प्रदर्शितम् । युक्तं चैतत् । देवजन्मनो ऽयुनमस्य फलस्यात्र सम्पादयितुं शक्यत्वात् । अथवा यक्षादयो मुमुक्षवः सन्तो ऽत्रागत्य मोक्षसाधनत्वेन नृत्त-गीताभ्यां ईश्वरं भजन्ते । अत एव याज्ञवल्क्येनैदमुक्तम्—

* 'यक्ष पूजयाम्' । यक्षयते पूजयते इति यक्षः । 'अकर्तरि' (३. ३. १९) चेति कर्मणि घञ् । यक्षादीनां देवतांशत्वात् देवयोनित्वम् । यथा-
** 'हामरसिंहः' —

'विद्याधरो-ऽप्तेरो-यक्ष-रक्षो-गन्धर्व-किन्नराः ।

पिशाचो गुह्यकः सिद्धो भूतो ऽग्नी देवयोनयः' †

इति । सांप्रतं 'ह्रसोबा' इत्यादिनामभिः महाराष्ट्रेषु प्रसिद्धाः यक्षशब्द-वाच्या एवेति प्रतिभाति ।

† देवा योनिरेषु ते देवयोनयः देवांशका इत्यर्थः । न तु, देवानामिव योनिरुत्पत्तिकारणं अविभाज्यमेपां ते-इति व्यधिकरणबहुव्रीहिः ।

‘वीणवादनतत्त्वज्ञः श्रुति-जातिविशारदः ।

तालज्ञश्चाप्रयासेन मोक्षमार्गं निगच्छति*’ ॥

(या. स्मृ. ३. ११५.)

इति ॥ ७ ॥

गुरूपसत्तावनुष्ठेयं प्रकारविशेषं दर्शयति--

तस्मिन्नृषिसभामध्ये शक्तिपुत्रं पराशरम् २ . .

सुखासीनं महतेजा मुनिमुख्यगणावृतम् ॥ ८ ॥

कृताञ्जलिपुटो भूत्वा व्यासस्तु ऋषिभिः सह ।

प्रदक्षिणाभिवादैश्च स्तुतिभिः समंपूजयत् ॥ ९ ॥

इति । ‘तस्मिन्’ इति आश्रमाक्तिः । वक्ष्यमाणधर्माणाम-
शेषमुनिसम्मतत्वं दर्शयितुं ‘ऋषिसभा’ इत्युक्तम् । ऋषि-
ष्वपि विशेषेण स्मृतिकाराणां गोत्रप्रवर्त्तकानां च अत्रि-
याज्ञवल्क्यादीनां सम्पत्तिं विवक्षित्वा आह । ‘मुनिमुख्य’
इति । न केवलं तपोवलेन पराशरस्य महिमा किन्तु वि-

* ‘अपगुन्तकमुलोप्य’ इत्यादीनि सप्त गीतानि महागीतानि चोक्तम् ।
‘गेयमेतत्तदभ्यासकरणं मोक्षसंज्ञितं’ इति गीताभ्यासस्य ऐक्याग्र्यता-
पादकत्वेन आत्मैकतापत्तिकारणत्वं प्रदर्श्य, तन्साधकानां वीणावादना-
दीनामपि मुक्तिपथप्रापकत्वमाह । वीणेति । श्रुतिः द्वाविंशतिप्रकारा ।
जातयस्तु षड्जाद्याः सप्त तासु विशारदः । तालः गीतकालपरिमाणम्
तत्स्वरूपज्ञोऽपि, तत्र मानसस्यैकाग्र्यात् सुलभत्वेनैव मोक्षमार्गं गच्छति ।
एतदपि भगवत्प्रीत्यर्थमेवानुष्ठितं चेत् मोक्षसाधकं, अन्यथा तु बन्ध-
हेतुरेव ।

१. H. reads -मार्गं for -मार्गं. २. M. reads महास्मानं for महातेजा. ३. K.
and L. read तमूषि for स्तुतिभिः. ४. A. reads रक्षितकारिणां for स्तुतिकाराणां.

शिष्टजन्मनाषि इत्याह । 'शक्तिपुत्रम्' इति । अयं च महि-
मा पराशरशब्दनिर्वचनपर्यालोचनया विस्पष्टमवगम्यते । तच्च
निर्वचनं महद्भिरुक्तवृत्तम्—

‘पशुकृताः शरा यस्मान् राक्षसानां वधार्थिनाम् ।

अतः पराशरो नाम ऋषिरुक्तो मनीषिभिः ॥’

परस्य कामदेवस्य शराः सम्मोहनादयः ।

न विर्यन्ते यतस्तेन ऋषिरुक्तः पराशरः ॥

परेषु पापचित्तेषु नादत्ते कोपलक्षणम् ।

शरं यस्मात् ततः प्रोक्तः ऋषिरेव पराशरः ॥

परं मातुर्निजाया यदुदरं तदयं गतः ।

ऋचमुच्चार्य निर्भय निरगान् स पराशरः’* ॥

इति । 'मुख' शब्देनैकाग्र्यं च विवक्षितम् । चित्तस्या-

शेषविक्षेपपरिहारेणैकाग्र्यं यथा भवति तथोपविष्टमित्यर्थः ।

‘एकाग्र्य-आसीन-महातेजः’पदानि पूर्वं व्याख्यातानि ॥ ८ ॥

‘अञ्जलि’, पदेन भक्त्यतिशयो द्योत्यते । परया भक्त्या
गुरुरूपदिष्टार्थतत्त्वमाविर्भवति । तथाच श्वेताश्वतरशाखायां
श्रूयते—

‘यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।

तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः’ ॥

(श्वे. उ. ६. २३.)

* अत्र 'पराशर' नाम्नश्चतुर्धा निरुक्तिः । सा च परस्परं भिन्ना ।
उत्तानार्था च । वाक्यानीर्माणि कुत्रत्यानीति न ज्ञायते ।

१. B. D. E. and H. omit इति. २. All except A. and I. read पराशरभ-
क्त्या for परया भक्त्या. This is a real mistake though to be found in all
the MSS. ३. B. and E. read गुरुसन्विष्टार्थतत्त्वं for गुरुरूपदिष्टार्थतत्त्वं.

इति । अन्तरेण गुरुभक्तिमुपदिष्टो ऽप्यर्थो निष्फलो भवति ।
एतदपि कश्चित् श्रूयते,—

‘अध्यापिता ये गुरुन् नै नाद्रियन्ते’

विप्रा* वाचा मनसा कर्मणा वा ।

यथैव ते न गुरोर्भिर्भोजनीयाः

तथैव तान् न भुनक्ति श्रुतं तत् ॥

(व. स्मृ. २. ११)

इति । यथा गुरुमनाद्रियमाणाः शिष्याः न गुरुणा पालनीयाः
तथा तत् श्रुतमपि तान् शिष्यान् स्वफलदानेन न पाल-
यति इत्यर्थः । देववद्गुरोः पूजनीयत्वात् नस्मिन् प्रदक्षिणादयो
युज्यन्ते । तर्हि आवाहनासन-स्वागतादयो ऽप्युपचाराः प्रा-
प्यन्ते—इति चेत् । प्राप्यन्तां नाम । प्रदक्षिणादीनामुपलक्षण-
त्वान् । अथवा दूरादागत्य गुरुदर्शनं कुर्वतामुचिताः प्रदक्षिणा-
दय एव इति तावन्तो ऽत्र निर्दिश्यन्ते ॥ ९ ॥

उक्तोपसत्तेर्यथाविधित्वं द्योतयितुं गुरोः परितोषपूर्वकं
रूपाविशेषमार्दर्शयति—

ततः सन्तुष्टहृदयः पराशरमहामुनिः ।

आह सुस्वागतं ब्रूहीद्व्यासीनो मुनिपुङ्गवः ॥ १० ॥

अत्र ‘विप्र’ शब्दो न केवलं ब्राह्मणवाची । अपि तु गुरुपमत्ति-
पूर्वकमध्ययनाधिकारिशिष्यवाचकः । अन्यथा क्षत्रियादीनां गुर्वनाद-
रणे दोषाभावप्रसङ्गः स्यात् ।

१. A. and I. read तदपि for एतदपि. २. All but A. and H. read गुरुं
for गुरुन्. ३. गुरोः for गुरुभिः; while H. omits गुरुं altogether and
then reads गुरोः. ४. D. reads कृतमपि for श्रुतमपि. ५. For अपि तान्
A. reads अधीतान्. ६. A. reads -य, दर्शयति—for वमार्दर्शयति. ७. Except
A., J., K. and L. all others read अथ for ततः.

इति । गुरुसन्तोषस्य श्रेयोहेतुत्वमन्वय-व्यतिरेकाभ्यां पुराणसारे अभिहितम्—

‘गुरावतुष्टे तुष्टाः स्युः सर्वे देवा द्विजोत्तमाः ।

तुष्टे तुष्टा यतस्तस्मात् सर्वदेवमयो गुरुः ॥

श्रेयोऽर्था यदि गुर्वाज्ञां मनसाऽपि न लङ्घयेद् ।

गुर्वाज्ञापालको यस्मात् ज्ञानसम्पत्तिमश्नुते ’ ॥

इति । अंदरपूर्वकेण स्वागतप्रश्नं कृपाविशेषो दर्शितः । आदरार्थां सुशब्दस्य द्विरुक्तिः । अथवा सुशब्देनैकेन आगमने लौकिकं सौख्यशुक्तम् । द्वितीयेन यथाविध्युपसत्तिलक्षणं शास्त्रीयं सौष्ठवमुच्यते । ऋषिष्वागतेषु पराशरेणाभ्युत्थातव्यम्—इति शङ्कां वारयति । ‘आसीनः’ इति । तत्र हेतुत्वेन पराशरो महामुनि-मुनिपुङ्गवशब्दद्वयेन विशेष्यते । महामुनि-मुनिपुङ्गवशब्दौ क्रमेण वयसा विद्यया च ज्येष्ठत्वमाहतुः । उभयविधज्यैष्ठ्यात् न अनेनाभ्युत्थानव्यम् ॥१०॥

आसन्नेन यथा स्वागतं पृष्ठम् एवमागतेनाप्यवस्थितस्य

* महामुनिः ‘मन् ज्ञाने’ इत्यस्मात् ‘मनेरुत् च’ (५, ४, १२३) इत्यनेन क्त् । मननशीलो मुनिः । अमरसिंहस्तु ‘वाचंयमो मुनिः’ इत्याह ।

१. D. has पुराणसारेण for पुराणसारे. २. D. reads मनसा न विलंघयेत् for मनसापि न लंघयेत्. ३. A. omits आगमने. ४. B. reads लौकिकसौख्यं for लौकिकं सौख्यं. ५. A. reads पराशरेणाप्युत्थातव्यम् for पराशरेणाभ्युत्थातव्यम्. ६. All but A. read simply पराशरः शब्दद्वयेन विशेष्यते for पराशरो महामुनि-मुनिपुङ्गवशब्दद्वयेन विशेष्यते. ७. Except A. and I. all others put in an additional शब्द after महामुनि and thus read महामुनिशब्द-मुनिपुङ्गवशब्दौ.

कुशलं प्रष्टव्यम् । अतः प्रथमं तत् पृष्ट्वा गुरुणा स्वकीयकुश-
लेऽभिहिते सति पश्चात् बुभुक्षितार्थं पृच्छति—इत्याह—

कुशलं सम्यगित्युक्त्वा व्यासः पृच्छत्यनन्तरम् ।

इति उक्त्वा । 'गुरुमुखात् कुशलं श्रुत्वा च' इत्यर्थ्याहृत्य
योजनीयम् ॥

बुभुक्षितार्थं प्रश्नप्रकारं दर्शयति—

यदि जानासि भक्तिं मे स्नेहाद्वा भक्तवत्सलं ॥ ११ ॥
धर्मं कथय मे तात अनुग्राह्यो ह्यहं तव ।

इति । प्रियः शिष्यः पुत्रो वा रहस्योपदेशमर्हति । नेतरः ।
सोऽयमर्थः छन्दोगैर्मधुविद्यायामाम्नायते । 'इदं वाव तज्ज्येष्ठा-
य पुत्राय पिता ब्रह्म प्रब्रूयात् प्रणय्याय वा अन्तेवासिने ॥५॥
नान्यस्मै कस्मै चन*' (छां. उ. ३. ११. ५-६) इति । अतो
ऽत्र व्यासस्य पुत्रत्वं शिष्यत्वं चास्ति इत्यभिप्रेत्य पक्षद्वयो-

* 'इदं' ज्ञानं । 'तत्' यथोक्तम् । ज्येष्ठायैव वक्तव्यमिति पूर्ववामयं
नियमः । नेदानीन्तनानाम् । ज्येष्ठाय पुत्राय सर्वप्रियार्हाय कनिष्ठाय-
पि वा । अथवा 'प्रणय्याय' योग्याय 'अन्तेवासिने' शिष्याय ब्रह्म प्रब्रू-
यात् इति तात्पर्यम् ।

१. A. reads तत्त्वविदा for तत् पृष्ट्वा. २. A. and I. read स्वकीये कुशले for
स्वकीयकुशले. ३. M. reads कुशलं कुशलेत्युक्त्वा for कुशलं सम्यगित्युक्त्वा.
Before this line G. has an additional line not to be found in any other
MS., namely ;—वत्स सुस्वागतं तेषां ऋषीणामात्मदत्तम्; M. also has an
additional line in the place of above, and it reads thus :—व्यास
सुस्वागतं ये च ऋषयश्च समन्ततः. ४. A. J. and M. read -स्यतः परम् for
-स्वमन्तरम्. ५. E. G. and H. read इत्यस्याऽऽवृत्त्या for इत्यध्याहृत्य.
६. Before अनुग्राह्यो A. adds हि. ७. A. reads ऽप्यहं for ह्यहं.

पन्यासः । यदि लिङ्गैर्मदीयो मानसो भक्तिविशेषोऽनुमीयेत
तदा तव भक्तवत्सलत्वात् शिष्यबुद्ध्या मामनुगृहाण । अन-
नुमाने ऽपि पुत्रस्नेहात् अनुग्राह्यो ऽहम् । सर्वथा ऽप्युपदेष्टव्य
एव धर्मः ॥ ११ ॥

ननु-सन्ति ब्रह्मो धर्माः मन्वादिभिः प्रोक्ताः । तत्र को धर्मो
भवता बुभुत्सितः ? इत्याशंक्य बुभुत्सितं परिशेषयितुं बुद्धान्
धर्मानुबन्धस्यति ।

श्रुता मे मानवा धर्मा वासिष्ठाः काश्यपास्तथा ॥ १२ ॥

गर्गेयो गौतमीयाश्च तथा चौशनसा स्मृताः ।

अत्रेर्विष्णोश्च संवर्त्तात् दक्षादङ्गिरसस्तथा ॥ १३ ॥

शातातपाश्च हारीतात् याज्ञवल्क्यात्तथैव च ।

आपस्तम्बकृता धर्माः शङ्खस्य लिखितस्य च ॥ १४ ॥

कात्यायनकृताश्चैव तथा प्राचेतसान्मुनेः^१ ।

१. A. H. and L. read मदीये मानसे भक्तिविशेषोऽनुमीयते for मदीयो मानसो भक्तिविशेषोऽनुमीयेत. २. A. omits सन्ति. ३. All but A. take धर्मः after प्रोक्ताः. ४. D. E. G. J. K. and L. read गार्गीया for गार्गेयाः, while A. reads गार्गीया-गौतमीयाश्च. for गार्गेया गौतमीयाश्च. ५. B. and E. read चौशनसा स्मृताः; D. G. H. J. K. L. and M. have चौशनसाः स्मृताः. ६. A. and I. read श्रुताः for स्मृताः keeping चौशनसाः. ७. In this Shloka for all the ablatives M. substitutes respective nominatives and reads as follows:—अत्रेर्विष्णोश्च संवर्त्ता दक्षा आंगिरसास्तथा । शातातपाश्च हारीता याज्ञवल्क्यकृताश्च ये ॥ ८. M. takes the second line, namely :—कात्यायन- &c., before the first half आपस्तम्ब- &c ९. A. reads -कृतान् धर्मान्, for -कृता धर्माः. १०. Before this line G. adds an extra line धर्मेराजकृताश्चैव बृहस्पतिकृताश्च ये । ११. M. reads प्राचेतसकृताश्च ये for तथा प्राचेतसान्मुनेः. १२. D. and H. read प्राचेतसो मुनेः for प्राचेतसान्मुनेः. १३. After all the above lines G. has an additional line श्रुतिरन्वोद्भवास्तात श्रुत्यर्था मानवास्तथा ।

इति । मे० श्रुताः मया श्रुता इत्यर्थः । संबन्धसामान्य-
वाचिन्यः षष्ठ्याः कर्तृकृतिलक्षणे विशेषे पर्यवसानात् । अत्रेः
इत्यादीनां पञ्चम्यन्तानां श्रुताः—इत्यनेनानुशक्तेन सम्बन्धः ।
आपस्तम्बेन कृताः प्रोक्ताः इति यावत् । शङ्खस्य लिखितस्य
सम्बन्धिनो धर्माः । ताभ्यां प्रोक्तत्वं तत्सम्बन्धित्वम् ।
प्राचेता एव प्राचेतसः । वाग्रस-राक्षसादाविव स्वार्थे तद्धितः ।
अस्तु वा प्राचेतसः पुत्रः कश्चित् धर्मशास्त्रकारः ॥ १२,
१३, १४ ॥

ननु—मानवादयः स्मार्त्ता धर्माः श्रुताश्चेत् सङ्गि मां नाम
ते बुभुत्स्यन्तां श्रौतास्त्वग्निहोत्रादयो बुभुत्सिष्यन्ते इत्या-
शङ्क्याह—

श्रुता ह्येते भवत्प्रोक्ताः श्रुत्यर्था मे० न विस्मृताः ॥ १५ ॥
अस्मिन् मन्वन्तरे धर्माः कृतं-त्रेतादिके युगे ।

इति । ये प्रत्यक्षश्रुतीनामर्थाः अग्निहोत्रादयो धर्माः एते
मया श्रुताः । तदेतत् तथापि प्रसिद्धं इति द्योतनार्थं हि-

† वयः एव वायसः † रक्ष एव राक्षसः इत्यत्र यथा स्वार्थे तद्धितः तथा
प्राचेतस इत्यत्रापि तद्धित इति भावः । प्राचेतस इति वाष्मीकेरपि नामा-
स्तीति रामायणादिभ्यो ऽवगम्यते ।

१. B. C. D. and F. read कर्तृलम्बने for कर्तृकृतिलक्षणे; while E. G. and H. omit it altogether. २. Except A. all others omit यावत्. ३. For शङ्खस्य E. G. and H. read याज्ञवल्क्यस्य. ४. H. omits च. ५. A. and I. read स्मार्तधर्माः for स्मार्ता धर्माः. ६. All but A. omit नाम. ७. A. reads बुभुत्स्यन्ते for बुभुत्सिष्यन्ते. ८. B. C. E. F. G. H. M. read श्रौतार्थाः for श्रुत्यर्थाः; but the Tikakar prefers श्रुत्यर्थाः. ९. For मे M. substitutes ते. १०. K. reads कृते त्रेतादिके for कृतं त्रेतादिके.

शब्दः । तत्र हेतुः भवत्प्रोक्ताः—इति । व्यासः पराशरादधी-
तवान्—इति पुराणिकाः । श्रुतानामपि विस्मृतिश्चेत् पुनरपि
स्मरणमपेक्षितं—इत्याशंक्य न विस्मृताः—इत्युक्तम् । प्रायणा-
ग्निहोत्रादीनां कलौ दुर्लभत्वंमभिप्रेत्य 'कृतत्रेतादिके'—इत्यु-
क्तम् । आदिशब्देन द्वापरं गृह्यते । 'अस्मिन् मन्वन्तरे' इति
निर्देशः प्रदर्शनार्थः । नतु मन्वन्तराण्यतीतान्यनागतानि
वा व्यवच्छिन्नानि । तद्व्यवच्छेदे प्रयोजनाभावात् । न हि
नानाविधेषु मन्वन्तरेषु धर्म भिद्यमानं कचिदुपलभामहे ।
अस्मिन्मन्वन्तरं कृतादिषु त्रिषु युगेषु प्रायेण सम्भावितानुशा-
नाः प्रत्यक्षश्रुत्यर्थाः ये धर्माः तेषां मानवादिस्मार्तधर्मवत्
श्रुतत्वात्तु बुभुत्सिताः ॥ १५ ॥

• इदानीं परिशिष्टं बुभुत्सितं पृच्छति—

सर्वे धर्माः कृते जाताः सर्वे नष्टाः कलौ युगे ॥ १६ ॥
चातुर्वर्ण्यसमाचारं किञ्चित् साधारणं वद ।

इति । सर्वशब्दो देश-कालावस्थादिभेदेन धर्माणां बहु-
विधत्वमात्रे । एतच्च महाभारते आनुशासनिकं^१ पर्वणि
उमामहेश्वरसंवादे प्रपञ्चितम्—

* अस्मिन्नित्यनेन प्रकृतं वैवस्वतमन्वन्तरमेव गृह्यते । किञ्चिदधिका
दिव्यानां युगानामेकसप्ततिः मन्वन्तरमिति तु प्रसिद्धमेव ।

१. A H and I. read स्मरण for स्मारण . २ For धर्म भिद्यमानं B. C
and F. read धर्माभिधान and धर्माभिमानं is that of E. and G.
३ I. reads कृतादिकेषु for कृतादिषु. ४. H and I. omit त्रिषु. ५ All but
I. read श्रुतत्वात्, but the latter appears to be more correct.
६. D. reads विधनां for विधम् ७. A. reads अनुशासनिकपर्वणि for
आनुशासनिकं पर्वणि

‘धर्मा बहुविधा लोके श्रुतिभेदमुखोद्भवाः’* ।

देशधर्माश्च दृश्यन्ते कुलधर्मास्तथैव च ॥

जातिधर्मा वयोधर्मा गुणधर्माश्च शोभने ।

शरीर-कालधर्माश्च आपद्धर्मास्तथैव च ॥

‘एतद्धर्मस्य नानात्वं क्रियते लोकवासिभिः’ ।

इति । ते च सर्वे धर्माः प्राणिभिः कृतयुगेऽप्यथावदनुष्ठिता भवन्ति । युगसामर्थ्येन धर्मस्य चतुर्ष्वपि अपि अपरिक्षयात् । वेतादिषु क्रमेण क्षीयमाणा धर्माः कलियुगवसाने सर्वात्मना विनष्टा भवन्ति । तदेतत् सर्वं पुराणसारे विस्तरेण प्रदर्शितम्—

* श्रुतीनां यो भेदः अनेकत्वं तन्मुखेन उद्भवो येषाम् । धर्मस्य चोदनालक्षणत्वात् तासां चानेकत्वात् धर्माणामनेकत्वमिति भावः ।

१ । धर्मस्य अनेकविधत्वे अन्यान्यपि कारणानि दर्शयति । देशेति । देश-कुलादीन्यपि धर्मस्य भेदे कारणानि । अत्र धर्मस्य बहुत्वद्योतनयैव देशधर्म-कुलधर्मादीनां ग्रहणम् । अन्यथा तेषामवैदिकत्वात् अननुष्ठाने प्रत्यवायाभावाच्च विवाहादिष्वेव ग्रहणं न सम्भवेत् ।

१. D. E. and G. read चतुर्विधा for बहुविधाः. The former seems to be not correct as there are more four Dharmas mentioned in the following lines. २. For this line J. (नन्वपण्डित) देशभेदाश्च दृश्यन्ते कुलभेदास्तथैव च । ३. All but A. read सामर्थ्येन for सामर्थ्येन. ४. B. C. and F. read चतुर्ष्वपिपरिक्षयात्; while D. E. G. and H. read चतुर्ष्वपिपरिक्षयात् for चतुर्ष्वपिपरिक्षयात्. ५. For पुराणसारे विस्तरेण प्रदर्शितम् B. C. and F. read पुराणसारेण दर्शितम्; while D. E. G. and H. read पुराणकारेण विस्तरेण दर्शितम्.

‘कृते चतुष्पात्* सकलो व्याजोपाधिविर्जितः ।

वृषः प्रतिष्ठितो धर्मो मनुष्येष्वभवत् पुरा ॥

धर्मः पादविहीनस्तु त्रिभिरंशैः प्रतिष्ठितः ।

त्रेतायां, द्वापरेऽर्धेन व्यामिश्रो धर्म इष्यते ॥

त्रिपादहीनस्तिष्ठत्ये तु सत्तामात्रेण तिष्ठते ’ ॥

इति । सिष्यः कलिः । तथाच बृहस्पतिरपि—

‘कृतेऽभूत् सकलो धर्मस्त्रेतायां त्रिपदः स्थितः ।

पादः प्रविष्टो धर्मस्य मत्सरद्वेषसंभवः ॥

धर्माधर्मौ समौ भूत्वा द्विपादौ द्वापरे स्थितौ ।

तिष्ठत्ये धर्मस्त्रिभिः पादैर्धर्मः पादेन संस्थितः ’ ॥

इति । तथा लैङ्गपुराणे कलौ धर्मनाशं प्रस्तुत्य तद्वेतु-
त्वेन पुरुषदोष उपन्यस्तः—

* वृषरूपस्य धर्मस्य—‘तपः शौचं दया दानमिति पादाः प्रकीर्तिताः’ ।
एवमधर्मस्यापि—‘स्मय-सङ्ग-मदा अनृतं’ चेति चत्वारः पादाः । त्रेतादि-
ध्वनुक्रमेण अधर्मपादैः धर्मप्रादानां नाशो भवतीति भावः ।

१. All but A, J. (नंदपण्डित) read निव्याजोपाधिविर्जितः for व्याजोपा-
धिविर्जितः. २. Except A. and I. all others read अवसत् for अभवत्.
३. For द्वापरेऽर्धेन व्यामिश्रो धर्म इष्यते B. C. E. and F. read द्वापरेऽर्धे-
न व्यामिश्रो धर्म इष्यते, while D. and G. द्वापरेऽर्धे तु गमिते व्यामिश्रो धर्म इष्यते;
and H. reads द्वापरेऽर्धे नष्टौ वै वृषो धर्मोऽवतिष्ठति. These two readings
for the who line. ४. A. reads तथा बृहस्पतिनापि for तथाच बृहस्पतिरपि
I. omits च. ५. पादप्रविष्टो धर्मः स्यात् is the reading of D. for पादः
प्रविष्टो धर्मस्य. ६. A. reads धर्मस्थितिः पादैः &c., for धर्मस्त्रिभिः पादैः.

“आद्ये कृते तु यो धर्मः स त्रेतायां प्रवर्तते ।

द्वापरे व्याकुलीभूतः प्रणश्यति कलौ युगे ॥

(लिं. पु. १. ३९. ७०. कू. पु. १. १. २८. ५७).

तिष्ठे मायामसूत्राच्च वधञ्चैव तपस्विनाम् ।

‘साधयन्ति नरांस्तत्र तमसा व्याकुलेन्द्रियाः’ ॥

(लिं. पु. १. ४०. १; कू. पु. १. १. २९. १.)

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘वर्णाश्रमाचारवती प्रवृत्तिर्न कलौ नृणाम् ।’

न साम-यजु-ऋग्वर्गविनिष्पादनहेतुकी । ॥

(वि. पु. ६. १. १०)

इति । आदित्यपुराणे अपि—

* आद्ये चतुर्षु युगेषु आदिभूते । ननु सृष्टिप्रवृत्तिकालीने ।

† वर्णा ब्राह्मणादयः आश्रमा ब्रह्मचर्यादयः तेषां ये आचाराः ‘शमो दमः’ इत्यादिना वक्ष्यमाणाः तद्विशिष्टा लोकानां प्रवृत्तिः यतो न भवति कलौ अतः ऋक्-सामादिवेदाध्ययन-तदुक्तकर्मानुष्ठानादिकमपि न भवतीति तात्पर्यम् ।

१. In Ling Purāna and Kūrma Purāna we find धर्मोऽस्ति for यो धर्मः.
२. A. reads व्याकुलीभूतः. In Ling Purāna व्याकुलीभूत्वा and in Kūrma Purāna व्याकुलीभूय. for व्याकुलीभूतः. ३. H. omits अपि. ४. For न साम-यजु-ऋग्वर्ग- B. C. and P. read न च सामर्ग्यजुर्वर्ग-; and H. reads न साम-ऋग्यजुर्वर्ग-. Weshnu Purāna -ऋग्यजुर्वर्गः. ५. A. and I. read हेतुका ; while B. and P. read हेतुकी for हेतुकी.

‘*यस्तु कार्त्युगो धर्मो न कर्तव्यः कलौ युगे ।

पापप्रसक्तास्तु यतः कलौ नार्यो नरास्तथा’ ॥

इति । अतः कलौ प्राणिनां प्रयाससाध्ये धर्मे प्रवृत्त्य-
सम्भवात् सुकरो धर्मो ऽत्र बुभुक्षितः । स च द्विविधः । चतुर्णां
वर्णानां साधारणो ऽसाधारणश्च । तत्र साधारणो बृहस्पतिना
निरूपितः—

‘दया क्षमा ऽनसूया च शौचानायासमङ्गलम् ।

अकार्पण्यास्पृहेत्वे च सर्वसाधारणा इमे’ ॥

इति । तथा विष्णुना ऽपि—

‘क्षमा सत्यं दमः शौचं दानमिन्द्रियसंयमः ।

अहिंसा गुरुशुश्रूषा तीर्थानुसरणं दया ॥

आत्मवच्चमलोभत्वं देवतानां च पूजनम् ।

अनभ्यसूया च तथा धर्मः सामान्य उच्यते’ ॥

(वि. स्मृ. २. १६-१७)

* युगान्तरधर्मः कलियुगे नानुष्ठातव्य इति दर्शयति यस्मिन्त्यादिना ।
कार्त्युगः कृतयुगे भवः । तत्र हेतुमाह । पापप्रसक्ता इति ।

१. A. E. G. H. and I. read कार्त्युगे. for कार्त्युगो. २. D. E. and G. read नाहर्तव्यः for न कर्तव्यः. ३. All but A. read अकार्पण्यास्पृहत्वे for अकार्पण्यास्पृहेत्वे च. ४. B. C. and F. read सर्वसाधारणानि च for सर्वसाधारणा इमे ; For the same D. सर्वसाधारणानि तु. and E. G. and H. सर्वसाधारणी विधिः. ५. D. reads तीर्थानुसरणं for तीर्थानुसरण. ६. E. G. and H. read आत्मवच्चमलोभत्वं for आत्मवच्चमलोभत्वम्. In the text of Viṣṇu Smṛiti we find the whole line as follows:—आर्जव लोभभून्वत्यं देव-प्राक्ष्यपूजनम् ।

* असाधारणो ऽपि बृहस्पतिना स्मर्यते—

‘स्वाध्यायो ऽध्यापनं चापि यजनं याजनं तथा ।

दानं प्रतिग्रहश्चापि षट्कर्माण्यग्रजन्मद्वयः ॥’

इज्या ऽध्ययन-दाने च प्रजानां परिपालनम् ।

शस्त्रास्त्रधारणं सेवा कर्माणि क्षत्रियस्य तु ॥

स्वाध्यायो यजनं दानं पशूनां पालनं तथा ।

कुसीद-कृषि-वाणिज्यं वैश्यकर्माणि सप्त वै ॥

शौचं ब्राह्मणशुश्रूषा सत्यमक्रोध एव च ।

शूद्रकर्म तथा मन्त्रो नमस्कारो ऽस्य नोदितः ॥

इति । गीतास्वपि भगवानाह—

* नारदेन तु साधारणधर्मः— ‘त्रिशलक्षणवान् राजन् सर्वात्मा येन तुभ्यति’ इति त्रिशलक्षणवानुक्तः । स तु श्रीमद्भागवते सप्तमस्कन्धे युधिष्ठिरनारदसंवादे द्रष्टव्यः ।

† शूद्रस्य वैदिकमन्त्रानधिकारित्वात् तेन ‘नमः’ इत्याकारं कर्मन्त्रेणैव सर्वाणि कर्माणि कर्तव्यानीति तात्पर्यम् ।

१. A. and D. read असाधारणः for असाधारणो substituting स्मर्यन्ते for स्मर्यते. • २. D. and G. substitute वा- for चा-. ३. B. C. E. F. and H. read च तत्; and D. and G. च यत्, for तथा. ४. All but A. read -दानं च for -दाने च. ५. D. reads धर्माणि for कर्माणि; the form धर्माणि is common in the Vedic language but not in the ordinary one. ६. D. has सत्यं for दानं. ७. H. has च; and I. reads तु for वै. ८. H. reads गो-ब्राह्मणानां शुश्रूषा for शौचं ब्राह्मणशुश्रूषा. ९. D. reads सत्य-मन्त्रापरं वचः for सत्यमक्रोध एव च. १०. A. reads ऽस्य चोदितः; and I. ऽस्य नोदितः for ऽस्य नोदितः.

‘ब्राह्मण-क्षत्रिय-विशां शूद्राणां च परन्तप ।’
 कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥
 शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च ।
 ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मं कर्म स्वभावजम् ॥
 कृषि-गोरक्ष-वाणिज्यं त्रैश्वक्यं स्वभावजम् ।
 शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
 दानसौश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ।
 परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥

(भ. गी. १८. ४१-४४)

इति । एवं द्वैविध्यं सति साधारणोऽस्मिन् श्लोके पृच्छयते ।
 ‘किञ्चित्’—इति क्रियाविशेषणम् । तथा सति किमः संको-
 चवाचित्वात् संक्षेपेणेत्यर्थः सम्पद्यते । युक्तञ्चैतत् । असा-
 धारणधर्मप्रश्ने विस्तरात् ॥ १६ ॥

‘अथ असाधारणं धर्मं पृच्छति—

१. D. and Bhagavad-gītā read ब्रह्मकर्म for ब्रह्मं कर्म. But the former is the more general expression. २. E. and G. read धृति रक्षां and H. पृतीरक्षा for धृतिर्दाक्ष्यं. ३. A. reads कलौ for श्लोके, and D. E. G. and H. read लोके for the same. ४. B. reads कथनसंकोचेन वदति संक्षेपेण C. and F. read कथनसंकोचनेन वादिवत् संक्षेपेण; and D. E. G. and H. कथनसंकोचवाचित्वात् संक्षेपेण, for किमः संकोचवाचित्वात् संक्षेपेण. ५. B. C. D. and F. read सम्पद्यते for सम्पद्यते. ६. After विस्तरात् A. reads -इति वक्ष्यमाणत्वादिति; B. C. and F. विस्तरादिनियमापातात्, E. G. and H. विस्तरादिति द्वितीयापातात् and D. विस्तरादिति च नियमापातात्. ७. D. omits अथ. ८. All but A. read असाधारणधर्मं for असाधारणं धर्मं.

चतुर्णामपि वर्णानां कर्त्तव्यं धर्मकोविदैः ॥ १७ ॥

ब्रूहि धर्मस्वरूपज्ञ सूक्ष्मं स्थूलं च विस्तरात् ॥

इति । धर्मस्वरूपे वादिप्रतिपत्तेः तदीयविवेकश्च दुःशक्तवान् चे तत्र प्रावीण्यं विवक्षित्वा धर्मस्वरूपज्ञ इति सम्बोध्यते । तार्किकास्तावत् आत्मगुणौ धर्माधर्मौ-इत्याहुः-

‘विहितक्रिया* साध्यो धर्मः पुंसो गुणो नरः ।

प्रतिषिद्धक्रियासाध्यः पुंगुणो धर्म उच्यते ’ ॥

इति । मीमांसकास्तु ‘चोदनालक्षणो धर्मः’ (पू. मी. १. १. २.) इत्यसूत्रयन् । तत्र भाट्टा मन्यन्ते-

‘द्रव्य-क्रिया-गुणादीनां धर्मत्वं स्थापयिष्यते ।

तेषामैन्द्रियकत्वे† अपि न तद्रूप्येण धर्मता ॥

श्रेयःसाधनता ह्येषां नित्यं वेदात् प्रतीयते ।

तद्रूप्येण च धर्मत्वं तस्मान्नेन्द्रियगोचरः’ ॥

(तं. वा. १. १. २. १३-१४.)

* विहिता वेदेन विहिता या क्रिया तया साध्यः अर्थात् वेदोक्त-कर्मणा प्राप्यः ।

† द्रव्यादीनां लक्षणमपि न्यून-वैशेषिकभाष्यादौ द्रष्टव्यानि । चो-दनया प्रकृतानां कर्मणां श्रेयःसाधनत्वं ‘अक्षय्यरू वै चातुर्मास्यया-जिनः सुखं भवति’ इत्यादिवेदवाक्येभ्यः प्रतीयते ।

१. D. reads कर्मकोविदैः for धर्मकोविदैः. २. D. reads धर्मस्वरूपज्ञ सूक्ष्ममूलज्ञ for धर्मस्वरूपज्ञ सूक्ष्मं स्थूलज्ञ. ३. D. omits च. ४. In A. धर्मः and पुंसः interchange their places. ५. B. C. and F. read सगुणो for षड्गुणो. ६. B. reads भट्टा for भाट्टा. ७. D. A. and MSS. of Tantra Vartica read धर्मः स्थापक इष्यते for धर्मत्वं स्थापयिष्यते. ८. B. C. D. and F. read तद्रूपेण for तद्रूप्येण. •

इति । प्रामाकरास्तु कार्यनियोगापूर्वशब्दैरुच्यमानं धा-
त्वर्थसाध्यं स्वर्गादिफलसाधनमात्मगुणं धर्ममाहुः ।

दुर्विवेच्यत्वं च महाभारते धृष्टद्युम्नेनोक्तम्—

‘अधर्मो धर्म इति च व्यवसायो न शक्यते ।

कर्तुमस्माद्विधैर्ब्रह्मन् अतो न व्यवसाम्यहम्’ ॥

(म. भा. आ. १९६. ११. १२)

इति । ईदृशस्यापि धर्मस्य स्वरूपमव्याकुलो जानातीत्यस्ति
तत्र प्रावीण्यम् । धर्मस्वरूपं च विश्वामित्र आह—

‘यमार्याः क्रियमाणं तु शंसन्त्यागमवेदिनः ।

स धर्मो यं विगर्हन्ते तमधर्मं प्रचक्षते ॥

ईदृशस्य हि धर्मस्य स्वरूपं व्याकुलो न तु ।

जानातीत्यस्ति तत्रापि प्रावीण्यं धर्मशालिनाम्’ ॥

इति । मनुरपि—

* आर्याः पूज्या विद्वांसः यं धर्ममिति शंसन्ति स धर्मः । यं निन्दन्ते
स अधर्मः एतेन वेदप्रोक्तोऽपि आर्याणां दृष्टो धर्मो न भवतीति स्पष्टं
भवति ।

१. B. C and F. read -शब्देन for -शब्दैः. २. All but A. and I. read
दुर्विवेचकत्वं for दुर्विवेच्यत्वं. ३. A. B. C. D. E. F. and I. substitute
ततो for अतो. In the Mahābhārat text in the first line we find वा for
च; and in the second line ततोऽयं न व्यवस्यते. ४. For विगर्हन्ते D.
reads गर्हयन्ते.

‘विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः ।

हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तं* निबोधत’ ॥

(म. स्मृ. २. १.)

इति । नन्वेवं धर्मस्वरूपमनिरूपितमेव स्यात् । तथाहि
विश्वामित्रमनुवाक्याभ्यां तावत् सामान्याकारः प्रतीयते । नतु
द्रव्य-गुणादिरूपो विशेषाकारः । वादिनस्त्वत्र विप्रतिपत्ताः—
इति भवतैवोक्तम् । एतदेवाभिप्रेत्य महाभारते राजर्षेः संन्यते—
‘न कल्माषो न कपिलो न कृष्णो न च लोहितः ।

अणीयान् क्षुरधारायाः को धर्मं वक्तुमर्हति’ ॥

इति । नैष दोषः । उक्तवाक्येणैव धर्मव्यावृत्तस्याकारवि-
शेषस्य स्फुटं प्रतीयमानत्वात् । वादिविप्रतिपत्तेश्च समाधातुं
शक्यत्वात् । स्वर्गादिसाधनस्य शास्त्रैक्यसमधिगम्यस्याति-
शयस्य धर्मत्वेन सर्वसम्प्रतिपत्तेः । स चातिशयो द्विविधः ।
द्रव्यादिनिष्ठः आत्मनिष्ठश्च । तत्रात्मनिष्ठस्यातिशयस्य साक्षात्

* राग-द्वेषरहितैः विद्वद्भिः वेदविद्भिः । सद्भिः धार्मिकैः । हृदयेन
आभिमुख्येन श्रेयसाधनत्वेन अभ्यनुज्ञातः एवंविधो यो धर्मः तं नि-
बोधत’ इति योजना । एतेन— ‘वेदप्रमाणकः श्रेयसाधनं धर्मः’
इति धर्मलक्षणं मनुरीहित्यवगन्तव्यम् । हस्तीतोऽयमेवाह—‘श्रुति-
प्रमाणको धर्मः’ इति । एवं सति मीमांसकाभिमतस्य मन्वादिस्मृतिका-
राभिमतस्य च धर्मलक्षणस्य न कश्चिद्वेद इति स्पष्टम् ।

१. D. reads तदेवं धर्मस्वरूपं निरूपितमेव for नन्वेवं धर्मस्वरूपमनिरूपितमेव.
२. A. reads धर्मस्वनिरूपित- for धर्मस्वरूपमनिरूपित-. ३. A. omits
हि. ४. D. omits गुणादि-. ५. D. reads तदेव- for एवदेव-. ६. The same
राजधर्मेषु for राजधर्मे. ७. A. has तु for च. ८. B. C. and E. read नैवो-
क्तदोषः for नैष दोषः. ९. All MSS. concur in reading शक्यते for
शक्यत्वात्. १०. D. reads समधिगम्यस्यापि विषयस्य धर्मत्वेन for समधि-
गम्यस्यातिशयस्य धर्मत्वेन.

फलसाधनत्वात् फलनिष्पत्तिपर्यन्तं चिरकालमुपस्थानाच्च तद्विवक्षया आत्मगुणोऽपूर्वशब्दवाच्यो धर्मः—इति तार्किक-प्रभाकरावाहृतुः। उक्तस्यापूर्वस्य फलोत्पत्तिदर्शात्त्वमभिप्रेत्य तत्साधनभूतो द्रव्याद्यतिशयो धर्मः—इत्याहुर्भाट्टाः। ब्रह्मवादिनामप्येतदविरुद्धम्। ‘व्यवहारे भट्टनयः’* इत्यभ्युपगमात्। एवं धर्मस्वरूपे निरूपिते सति अव्याकुलत्वेन तदभिज्ञत्वं संभवति।

चतुर्णां वर्णानां मध्ये धर्मकोविदैरसाधारणधर्माभिज्ञैः कर्तव्यं विस्तरात् ब्रूहि। स च कर्तव्यो धर्मो द्विविधः। स्थूलः सूक्ष्मश्च। मन्दमतिभिरपि सुखेन बुध्यमानः शौचाचमन-सन्ध्यावन्दनादिः स्थूलो धर्मः। शास्त्रपारङ्गतैः पण्डितैरेव बोद्धुं योग्यः इतरेषामधर्मत्वभ्रान्तिविषयो द्रौपदीविवाहादिः सूक्ष्मो धर्मः। तथा च महाभारते—द्रुपदः एकस्याः

* वेदान्तिनस्तु ‘सर्वं खल्विदं ब्रह्म’ इत्यादिवाक्येभ्यः आत्मज्ञानमेव परमं धर्मं वदन्ति। तथापि व्यवहारदशायां तस्यानुपयोगात् आत्मज्ञानसमकालमेव व्यवहारस्य लोपाभावाच्च ‘व्यवहारे भट्टनयः’ इति मीमांसकोक्त्या एव आदत्तव्यं इत्याहुः।

१. B. C. and F. read -मवस्थानात् for -मुपस्थानात्. २. D. reads प्रभाकरा- for प्राभाकरा-. ३. B. C. and F. prefix भाट्टास्तु to उक्तस्य; and omit the भाट्टा at the end of the sentence. ४. D. reads -वृद्धयस्व- for -वृद्धास्व-. ५. Except A. and I. all others read द्रव्याद्यतिशयो for द्रव्याद्यतिशयो. ६. All but A. read तरेष instead of सति. ७. A. reads भवति for संभवति. ८. B. reads ‘साधारणधर्मातिरिक्तं; while all others except A. and I. read -साधारणधर्मातिरिक्तं for -साधारणधर्माभिज्ञैः. ९. Except B. C. and F. all others read स्थूलधर्मः for स्थूलो धर्मः. १०. G. reads शास्त्रधर्मपारङ्गतैः for शास्त्रपारङ्गतैः. ११. All but H. omit महा-

कन्योयाः बहुपतित्वं लोक-वेदविरुद्धं मन्वानः अधिचिक्षेप ।
 तत्र लोकविरोधः स्फुट एव । तिर्यक्ष्वपि एकस्यां गावि वृषभ-
 द्वययुद्धदर्शनात् । वेदे ऽप्येवं श्रूयते । 'एकस्य बह्वो जायते'
 भवन्ति नैकस्यै बहवः सह पतयः' (तै. सं. ६. ५. ४) इति ।
 'यदेकस्मिन् यूषे द्वे रशने परिव्ययति तस्मादेको द्वे जाये
 विन्दते । यत्रैकां रशनां द्वयोर्यूपयोः परिव्ययति तस्मात्रैका द्वौ
 पती विन्दते'— इति च ।

तत्र—

* 'लोक-वेदविरुद्धो ऽयं धर्मो धर्मभृतां वर' ।

(म. भा. आ. १९५. २८.)

* लोकविरुद्धः लोकाचारविरुद्धः । वेदविरुद्धः 'एकस्य बह्वो'
 इत्यादिवेदवाक्यविरुद्धः । 'नैकस्यै बहवः सह पतयः' इत्यस्यां श्रुतौ
 'सह' इत्यनेन युगपद्बहुपतित्वनिषेधो विहितः न तु समयभेदेन ।
 अतो नैकस्मिन् समये पञ्च पतयो भवितुमर्हन्ति इति भावः । अत्र
 'कर्तुमर्हसि कौन्तेय कस्मात्तै बुद्धिरीदृशी' इत्युत्तरार्द्धमनुसन्धेयम् ।

१. A. and I. योषिते for कन्यायाः. २. A. reads आचक्षेप; and all the remaining MSS. except H. and I. read आचिक्षेप for अधिचिक्षेप. ३. All but A. add इति to एव. ४. All except A. read यथैकस्यां for तिर्यक्ष्वपि एकस्यां. ५. H. reads वेदे चैवं for वेदे ऽप्येवं. ६. A. B. C. F. and I. read नैकस्या for नैकस्यै. ७. B. C. D. F. H. and I. omit सह; while A. and I. read स्युः for it. ८. H. reads उपव्ययति for परिव्ययति. ९. A. omits च. १०. A. reads धर्मवतां for धर्मभृतां; in all MSS. and printed copies both these lines are said to be the saying of बुधष्ठिर, but in the original Mahābhārata we find that the first line is addressed to बुधष्ठिर by द्रुपद; and reads as follows:—लोक-वेदविरुद्धं स्वं नाधर्मं धर्मविद्वद्विद्वत् । कर्तुमर्हसि कौन्तेय, &c. The second line is addressed to द्रुपद by बुधष्ठिर and reads as विप्रो वयं गतिम्. This change of lines is evidently a mistake.

इति वदतुः रुपदस्य भ्रान्तिनिवृत्तये युधिष्ठिर आह—

‘सूक्ष्मो* धर्मो महाराज नास्य विशेषो गतिं वयम् ’ ॥

(म. भा. आ. १९१. २९.)

इति । धर्मत्वं च बहुपातित्वस्य तत्रैव बहुधा प्रपञ्चितम् ।
एवं धर्मव्याधोपाख्यानं—विद्याभ्यासात् गरीयसो मातापितृ-
शुश्रूषा । त्रिनाभ्यभ्यासं तच्छुश्रूषयैव तस्य ज्ञानोत्पत्तेः—
इति प्रतिपाद्य सूक्ष्मत्वं धर्मस्य निगमितम्—

‘बहुधा दृश्यते धर्मः सूक्ष्म एव द्विजोत्तम’ ॥

(म. भा. व. २०६. ४२)

इति । इत्थं स्थूल-सूक्ष्मयोः सद्भावात् युक्तस्तदभय-
विषयः प्रश्नः ॥ १७ ॥

उक्तप्रश्नस्य वक्ष्यमाणोत्तरस्य च असाङ्कर्यायोत्तरमव-
तारयति—

व्यासवाक्यावसाने तु मुनिमुख्यः पराशरः ॥ १८ ॥

धर्मस्य निर्णयं प्राह सूक्ष्मं स्थूलं च विस्तरात् ।

इति । मुनिमुख्य इति विशेषणेन सूक्ष्मानिर्णयकौशलं
दर्शितम् । ननु—कस्यायं श्लोकः ? । न तावत् व्यासस्य ।

* अत्र ‘पूर्वेषामानुपूर्व्येण यातं वर्त्मानुयामहे’ इत्युत्तरार्धमनुसन्धे-
यम् । पूर्वेषां प्रचेतःप्रभृतीनाम् । तथा च प्रचेतसो नाम दश भ्रातरः
एकस्मिन्नेव समये वार्क्षी नामैकां कन्यामुपयेमिरे इति श्रीमद्भागवते
चतुर्थस्कन्धे दृश्यते ।

१. H. J. (नवपण्डित) reads विशेषो for विश्व. २. D. reads प्रश्न उक्तः ।
प्रश्नस्य वक्ष्यमाणो-; and H. also has the same but only omits प्रश्नस्य.
३. D. substitutes वा for च. ४. A. omits इति.

प्रश्नरूपत्वाभावात् । नापि पराशरस्य । उत्तररूपतयाः अभा-
वात् । ननु—अत्यल्पमिदमुच्यते । आद्यश्लोके अपि च समा-
नमिदं चोद्यम् । एवं तर्हि ईदृशेषु सर्वेषु परिहारो ज्ञेयः ।
उच्यते । पराशर एव भाविशिष्यबुद्धिसमाधानाय स्वकी-
यवृत्तान्तज्ञापकान् ईदृशश्लोकान् निर्मिते—इति द्रष्टव्यम् ।
भारतादौ व्यासवृत्तान्तश्लोकानां व्यासैव निर्मितत्वं सर्व-
सम्प्रतिपत्तेः ॥ १८ ॥

वक्ष्यमाणधर्मरहस्यग्रहणाय अप्रमत्तत्वं विधत्ते—

शृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि शृण्वन्तु मुन्यस्तथा ॥ १९ ॥

इति । तत्र मुनिस्त्वोधनैव पुत्रस्य स्त्वोधने सिद्धे
अपि सम्प्रदायप्रवर्तकत्वेन विशेषतस्तत्स्त्वोधनम् ॥ १९ ॥

धर्मे श्रद्धानिश्चयाय धर्मस्य प्रवाहरूपेण अनादितां वक्तुं
स्मृतिशास्त्रस्य स्मर्तॄणां च सृष्टि-संहारौ संक्षिप्याह—

कल्पे कल्पे क्षयोत्पत्त्या ब्रह्म-विष्णु-महेश्वराः ।

श्रुति-स्मृति-सदाचारनिर्णेतारश्च सर्वदा ॥ २० ॥

इति । कल्प्यते जगदस्मिन् काले इति सृष्ट्यादिमारभ्य
प्रलयोपक्रमपर्यन्तो जगदवच्छिन्नः कालः कल्पः । स च

१. B. C. and F. read प्रश्नरूपत्वस्याभावात्; and D. E. and G. प्रश्नरूपस्या
आभावात् for प्रश्नरूपत्वाभावात्. २. All but A. read उत्तररूपत्वा आभावात्
for उत्तररूपतायाः अभावात्. ३. A. D. and I. omit च. ४. D. reads
-क्षिप्यबुद्धि समाधाय for -क्षिप्यबुद्धिसमाधानाय. ५. A. reads निर्मितत्वेन
for निर्मितत्वे. ६. C. and F. read शास्त्रस्मर्तॄणां for शास्त्रस्य स्मर्तॄणां
७. A. and I. reads कर्तॄणां for स्मर्तॄणां. ८. Except A. J. and K.
all others read क्षयोत्पत्तौ for -क्षयोत्पत्त्या; but B. has in its margin
-त्त्या for -त्तौ. ९. A. reads -समाचार for -सवाचार.

द्विविधः । महाकल्पोऽवान्तरकल्पश्च । मूलप्रकृतैर्यः सर्गः ।
तमारभ्य चतुर्मुखायुःपरिमितो महाकल्पः । चतुर्मुखस्य दिन-
मात्रमवान्तरकल्पः । तदुक्तं कूर्मपुराणे—

‘ब्राह्ममिकमहः कल्पस्तावली रात्रिरुच्यते ।

चतुर्युगसहस्रं तत् कल्पमाहुर्मनीषिणः’ ॥ १

इति । सोऽयमवान्तरः कल्पः । महाकल्पस्तु ब्राह्मेण मानेन
शतसंवत्सरपरिमितः इति पुराणादिषु प्रसिद्धम् । ‘कल्पे कल्पे’
-इति वीप्सायां द्विविधानामपि कल्पानामसंख्यत्वं विवक्षितम् ।
तथा च लिङ्गपुराणे—

‘एवं कल्पास्त्वसंख्याता ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।

कोटिकोटिसहस्राणि कल्पानां मुनिसत्तमाः’ ॥

(लि. पु. १. ४. ४९.)

इति । तत्र द्वयोर्द्वयोः कल्पयोर्मध्ये क्षयो भवति । स च क्ष-
यश्चतुर्विधः । नित्यो नैमित्तिकः प्राकृतिक आत्यन्तिकश्चे-
ति । तदुक्तं कूर्मपुराणे—

‘नित्यो नैमित्तिकश्चैव प्राकृतात्यन्तिकौ तथा ।

चतुर्धाऽयं पुराणेषु प्रोच्यते प्रतिसञ्चरः* ॥

* प्रतिसञ्चरः प्रलयः । ब्रह्मणो दिवसानुरूपं निमित्तमनुरुध्य प्रवृत्तः
नैमित्तिकः । महदादीनां प्रकृत्युद्धूतत्वात् तेषां यत्र लयो भवति स प्रा-
कृतो लय इत्यभिधीयते । आत्मतत्त्वज्ञानेन जगन्मिथ्यात्वनिश्चये सर्व-

१. H. adds अत्र before मूल- and D. reads आमूल instead of मूल-. २. D. reads चतुर्मुखयुगपरिमितो for चतुर्मुखायुःपरिमितो. ३. A. omits अयं. ४. D. reads -महतादिकल्पः for -मवान्तरः कल्पः. ५. H. reads प्रसिद्धः for प्रसिद्धम्. ६. D. reads वीप्सायां for वीप्साया. ७. Except H. all others read लिंगपुराणम् for लिङ्गपुराणे. ८. In Ling Purana we find कल्पास्तु संख्याता. ९. B. C. F. and H. omit कल्पयोः; while C. and F. omit also the second द्वयोः. १०. In Kūrma Purana we find पुराणेऽस्मिन्.

यो ऽयं सन्दृश्यते नित्यं लोके भूतक्षयस्त्विह ।
 नित्यः संकीर्त्यते नाम्ना मुनिभिः प्रतिसङ्चरः ॥
 ब्राह्मो नैमित्तिको नाम कल्पान्ते यो भविष्यति ।
 महदादिविशेषान्तं यदा संधाति संक्षयम् ॥ :
 प्राकृतः प्रतिसर्गोऽयं प्रोच्यते कालचिन्तकैः ।
 ज्ञानादात्यन्तिकः प्रोक्तो योगिनः परमात्मनि ॥

(कू. पु. १. २. ४३-५-९)

इति । तत्र प्राकृतः प्रलयः स्कन्दपुराणे सूक्तसंहिता-
 मेवं निरूपितः—

‘ त्रिशतैः षष्टिभिः कल्पैर्ब्रह्मणो कर्षमीरितम् ।
 वर्षाणां यत् शतं तस्य तत्पराधमिहोच्यते ॥
 ब्रह्मणो ऽन्ते मुनिश्रेष्ठाः मायायां लीयते जगत् ।
 तथा विष्णुश्च रुद्रश्च प्रकृतौ विलयं गतौ ॥ •
 ब्रह्मणश्च तथा विष्णोस्तथा रुद्रस्य सुव्रताः ।
 मूर्त्तयो विविधास्तेषु कारणेषु लयं ययुः ॥
 माया च प्रलये काले परस्मिन् परमेश्वरे ।
 सत्य-बोध-सुखा-ऽनन्त-ब्रह्म-रुद्रादिसंज्ञिते’ ॥ •

(मू. सं. १. ८. १४-१८.)

स्यापि जगत् शुक्तिस्वरूपज्ञानसमकालमेव यथा तत्रारोपितस्य रजतस्य
 नाशः तद्वत् नाशो भवति स एव आत्यन्तिकः प्रलयः । अधिष्ठानज्ञानोत्तरं
 भ्रमस्यात्यन्तिकनाशात् अस्यात्यान्तिकप्रलयसंज्ञा

१. In the text of K. P. we find त्रैलोक्यस्यास्य कथितः प्रतिसर्गो मनी-
 षिभिः after this line. २. In Kūrma Purana we find महदाद्यं. ३. A.
 reads तत्पराधमिहोच्यते; and II. reads तन्महायुग्मिहोच्यते for तत्पराध-
 मिहोच्यते; and in the text of Sūta Sanhita we find द्वि- for the same.
 ४. J. (नन्वपण्डित) reads मुनिश्रेष्ठ for मुनिश्रेष्ठाः. ५. A. and I. read
 सुखानन्ते ब्रह्म- for सुखानन्त-ब्रह्म. ६. E. G. and II. read -संज्ञिते for
 -संज्ञिते.

इति । तथा च कौर्मे ब्रह्म-विष्णवादिलयानन्तरं पञ्चभूता-
दिलयः पठ्यते—

‘*संस्थितेष्वेव देवेषु ब्रह्म-विष्णु-पिनाकिषु ।
गुणैरक्षैः पृथिवीं विलयं याति वारिषु ॥
तद्वारितत्त्वं सगुणं प्रसते हव्यवाहनः ।
तेजस्तु गुणसंयुक्तं वायौ संयाति संक्षयम् ॥
अक्रुधि सगुणो वायुः प्रलयं याति विश्वभृत् ।
भूतादौ च तथा ऽऽकाशो लीयते गुणसंयुतः ॥
इन्द्रियाणि तु सर्वाणि तेजसे यान्ति संक्षयम् ।
पैकारिके देवगणाः प्रलयं यान्ति सत्तमाः ।
वैकारिकस्तैजसश्च भूतादिश्चेति सत्तमाः ॥
त्रिविधो ऽयमहङ्कारो महति प्रलयं व्रजेत् ।
महान्तमेभिः सहितं प्रकृतिर्प्रसते द्विजाः ॥’

(कृ. पृ. १. २. ४४. १४-१९)

इति । एवं विष्णुपुराणादिषु प्राकृतप्रलयो द्रष्टव्यः । एव-
मेव प्रलयमभिप्रेत्य भगवान् बादरायणः सूत्रयामास—‘वि-

‘* संस्थितेषु स्वस्वकारणे लीनेषु । ब्रह्म-विष्णु-शिवाः रजः-सत्त्व-तमो-
पाधयः । ते स्वस्वगुण एव लीयन्ते । यदा भगवान् सिमक्षुर्भवति तदा
रजोगुणमाविश्य ब्रह्मरूपेण जगत्सृजति । एवं स्थित्यर्थं प्रलयार्थं च
सत्त्वतमसी आविश्य विष्णु-शिवरूपेण जगत् पालयति नाशयति च ।
एवमेव प्रलये निर्गुणस्वरूपेणावतिष्ठन् गुणान् विसृजति तदा तदुपा-
धयः ब्रह्मादयः विलीयन्ते इति पौराणिकानामाशयः ।

१. A. C. E. F. G. and H. omit च ; D. reads कूर्मपुराणे for कौर्मे. and omits च. २. B. C. E. F. G. and H. read -एवैव for -एवथ; while D. -एवपि for the same. ३. D. reads वारिणि for वारिषु. ४. All except A. and I. read स वास्तत्त्वं, for तद्वारितत्त्वं; and in Kūrma Purana we find स वारितत्त्वं. ५. In Kūrma Purana, we find स्वगुणसंयुक्तं. ६. In Kūrma Purana this word is treated as neuter gender. ७. All except A. and I. read -र्जायते for -प्रसते. ८. Except H. and I. all others read -लयो for -प्रलयो.

पर्ययेण तु क्रमो ऽत उपपद्यते च' (शा. सू. ३. ३. १४)
 इति । अतो ऽस्मात् सृष्टिक्रमात् विपर्ययेण प्रलयक्रमो
 ऽभ्युपगन्तव्यः । सृष्टिक्रमस्य तत्रत्येषु पूर्वसूत्रेषु विचारितत्वात्
 'अतः' शब्देन परामर्शः । उपपद्यते ह्ययं विपरीतक्रमः ।
 उपादानकूरणभूतायां मृद्ववस्थितायां कार्यस्य दृष्टस्य विली-
 यमानत्वात् । यदि सृष्टिक्रम एव प्रलये ऽप्यादिष्येत तर्ह्यवस्थिते
 घटे मृद्विनाशः प्राप्तुयात् । न त्वेवं कश्चित् दृष्टम् । तस्मादुपपन्नो
 विपरीतक्रमः । तथा सति-सृष्टौ परमात्माद्येतद्देहान्तस्य क्रमस्य
 वक्ष्यमाणत्वात् प्रलये तद्विपर्ययेण अस्मद्देहादिपरमात्मन्तः
 क्रमो युक्तः । प्राकृतप्रलये प्रकृत्यन्तः क्रमो वर्तमानः—इति
 चत् । बाढम् । उच्यत एवासौ । परमात्मनः प्रकृतित्वात् ।
 तथा च बह्वचोपनिषदि परमात्मनो जगत्प्रकृतिर्वै श्रूयते—
 'आत्मा* वा इदमेक एवाग्र आसीन्नान्यत् किञ्चन मिषत् ।
 स ईक्षत लोकानुत्पृजा इति । स इमान् लोकानसृजत' (ऐ.
 उ. १. १.) इति ।

* आप्रोतेः अत्तेः अततेः वा आत्मा परः सर्वज्ञः सर्वशक्तिः सर्वसंसार-
 धर्मवर्जितः स्निग्ध-शुद्ध-तुल्य-मुक्तस्वभावः अजः अजरः अमरः अमृतः
 अभयः अद्वयो 'वा' । 'इदं' नाम्न-रूप-कर्मभेदाभिन्नं जगत् । 'अग्रे'
 सृष्टेः प्राक् । 'एक एव आसीत्' । 'नान्यत्किञ्चन' किञ्चिदपि 'मिषं-
 त्' निमिषत् व्यापारवत् इतरद्वा । मायायाः सत्त्वेऽपि तदानीं तस्या
 व्यापाराभावात् व्यापारवतो ऽन्यस्य निषेधः । 'स ईक्षत' इत्यादि सुग-
 ममन्यत् ।

१. Except A. and I. all others read न चैष for न त्वेवं. २. B. C. F. and G. read परमात्मादेतेतद्देहान्तस्य, and E. H. and I. परमात्मादेरस्मद्देहान्तस्य. ३. H. adds तु after प्रलये; while omitting तत्-. ४. B. C. and F. read अस्मद्देहादिपरमात्मा- for अस्मद्देहादिपरमात्मा-.

ननु-श्वेताश्वतरोपनिषदि मायायाः प्रकृतित्वं परमात्म-
नस्तन्नियन्तृत्वं श्रूयते-

‘मायान्तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनन्तु महेश्वरम्’ ।

(श्वे. उ. ४. १०.)

इति । नाथं दोषः । मायायाः परमात्मशक्तित्वेन शक्ति-
मतो ज्ञात्मनः प्रकृतित्वावश्यम्भावात् । दहनशक्तियुक्ते
ग्नौ दाहकत्वव्यवहारदर्शनात् । आत्मशक्तित्वं च मायाया-
स्तस्यामेवोपनिषदि श्रुतम् -

‘तं ध्यानयोगानुगता अपश्यन्

देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्निगूढाम्’ ।

(श्वे. उ. १. ३.)

इति । वादरायणश्च प्रथमाध्यायोपान्तप्राधिकरणे माया-
विशिष्टस्य ब्रह्मणः प्रकृतित्वं निमित्तत्वं च-इत्युभयविध-
कारणत्वमुपपादयामास* । कुलालवत् चेतनत्वात् निमित्तत्वम् ।
घटे मृद इव स्वकार्ये तस्यानुगमात् प्रकृतिवत् । अनुगम्यते
हि जगति मायाविशिष्टं ब्रह्म । तत्र सच्चिदानन्दत्वं ब्रह्मणो
लक्षणम् । विकारित्वन्तु मायायाः । तदुभयमपि हि जगत्-
वेक्षामहे । ‘घटेऽस्ति’-इति सद्रूपत्वम् । ‘घटो भानि’-इति चिद्रू-

* द्रष्टव्यमिदं ‘प्रकृतिश्च प्रतिज्ञादृष्टान्तानुपरोधात्’ (१. ४. २३.)
इत्यादिषु सूत्रेषु शारीरभाष्ये ।

१. D. reads दाहकत्वेन for दाहकत्व-; while B. C. and F. दाहकत्वे
for the same. २. Except A. E. G. and I. all others read चेतनत्वं for
चेतनत्वात्. ३. A. and I. read कार्ये for स्वकार्ये. ४. All but A. and I.
omit हि. ५. H. reads नास्ति for भानि.

पत्वम् । 'घटः प्रियः'—इत्यानेन्दरूपत्वम् । 'घट उत्पद्यते विनश्यति च'—इति विकारित्वम् । अयमेवार्थः उत्तरतापनीये श्रूयते—'सच्चिदानन्दरूपमिदं सर्वं सद्ब्रह्मैदं सर्वं सत् सदिति । चिद्ब्रह्मैदं सर्वं काशने काशने च इत्यादि' । (वृत्तिः उ. ता. २७.) तदेवमौपनिषदे मते ब्रह्मणो मूलप्रकृतित्वात् स्मृति-पुराणयोश्च श्रुत्यनुसारित्वात् ब्रह्मावशेषो जगद्विलयोऽत्र विवक्षित उति अवगन्तव्यम् । वैशेषिकादिभिर्वा सिद्धस्तु लयोऽस्माभिर्नान्न प्रपञ्च्यते । तस्य पुरुषबुद्धिरूपतर्कमूलत्वेन युद्धिमद्भिः स्वयमेवेदितुं शक्यत्वात् ।

सम्पत्तिः श्रुत्यनुसारेणोत्पत्तिरभिधीयते । सन्ति हि सृष्टि-प्रतिपत्तिश्चाः पक्षः श्रुतयः । तत्र 'आत्मा वा उदमेक एवाग्र आसीत्' (ऐ. उ. १. १.) इत्यादि ब्रह्मचोपनिषद्वाक्यं पूर्व-मुदाहृतम् । 'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म' (तै. उ. २. १. ३) इत्युपक्रम्य 'तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः'

* 'जगत' इति शेषोऽत्रानुसन्धेयः ।

† व्याख्यातेयं श्रुतिः पूर्वम् ।

‡ 'तस्मात्' इत्यनेन मूलवाक्यसूत्रितं ब्रह्म परामृश्यते । 'एतस्मात्' इत्यनेन अनन्तरं 'सत्यं ज्ञानम्' इति यथा लक्षितं ब्रह्म ग्राह्यम् । तस्मादेतस्मात् ब्रह्मणः आत्मशब्दवाच्यात् आकाशः सम्भूतः समुत्पन्नः । आकाशो नाम शब्दगुणोऽवकाशकरो मूर्तद्रव्याणाम् ।

१. A. reads इत्याद्यानेन्दरूपत्वम् for इत्यानेन्दरूपत्वम्. २. A. and I. omit सद्ब्रह्मैदं सर्वं and read सत् सदिति चिन्तित्थं सर्वं for सत् सदिति चिद्ब्रह्मैदं सर्वं. ३. B. C. D. F. and G. have only one काशने; and A. and I. प्रकाशने only. ४. A. स्मृत्यनुसारित्वात् for श्रुत्यनुसारित्वात्. ५. A. reads ब्रह्मावशेषो-जगद्विलयो for ब्रह्मावशेषो जगद्विलयो. ६. All but A. and G. read प्रसिद्धस्तु. ७. A. प्रलयो for लयो. ८. All except A. and D. read नोऽस्माभिः प्रपञ्च्यते omitting अत्र in the middle. ९. C. and F. omit संपत्तिः; while A. and I. substitute अथ for it.

(तै. उ. २. १. ७) इत्यादिकं तैत्तिरीयवाक्यम् । 'सदेव सोम्येदमग्र आसीत्' (छां. उ. ६. २. १) इत्युपक्रम्य 'तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति तत्तेजो स्मृतं' (छां. उ. ६. २. ३) इति छन्दोगवाक्यम् ।

‘यथा सुदीप्तात्पावकादिस्फुलिङ्गाः

सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः ।

तथाऽक्षरादिविधाः साम्य भावाः

प्रजायन्ते तत्र चैवापि यन्ति’ ॥

(मुं. उ. २. १. १.)

इत्यथर्ववाक्यम् । 'तद्वेदं तर्ह्यव्याकृतमासीत् । तन्नाम-
रूपाभ्यामेव व्याक्रियत' (वृ. उ. १. ४. ७) इति वाजस-
नेयवाक्यम् ।

ननु—नैतेषु वाक्येषु सृष्टिर्व्यवस्थापयितुं शक्यते । विप्रति-
पत्तेर्वहुलत्वात् । आत्म-ब्रह्म-सद्-क्षरा-ऽव्याकृतशब्दैर्वाच्यानि
वस्तूनि कारणतया श्रूयन्ते । न च एकस्य जगतो विलक्षणानि
बहून्युपादानानि युक्तानि । नैष दोषः । आत्मादिशब्दैरेकस्यैव

* व्याकृतस्य जगतः व्याकरणात् प्राक् या बीजावस्था तां निर्दि-
दिक्षुः श्रुति-स्मृति-पुराणेषु वृक्षरूपत्वेन प्रतिपादितो ऽयं संसारवृक्षः इत्याह ।
तद्वेतदिति । 'तत्' बीजावस्थं जगत् प्रागुत्पत्तेः । भूतकाल स-
म्बन्धित्वादव्याकृतभाविता जगतः सुखग्रहणार्थं ऐतिह्यप्रयोगो 'ह'
शब्दः । तदेव इदं इदमेव च तत् अव्याकृतं आसीत् ।

१. A. and I. read तैत्तिरीयक- for तैत्तिरीय-. २. For विविधाः साम्य
भावाः A. reads प्रवर्तन्ते हि भावाः. ३. D. omits the passage from वाच्यानि
up to आत्मादिशब्दैः. ४. A. omits युक्तानि.

वस्तुनो अभिधीयमानत्वात् । आत्म-ब्रह्मशब्दयोस्तत्रवेदेकार्थत्वं स्पष्टम् । ब्रह्मवाक्यशेषे 'तस्माद्वा एतस्मादत्मान् आकाशः सम्भूतः' इत्युक्तत्वात् । सदात्मशब्दयोश्चैकार्थत्वं युक्तम् । आत्मशब्दस्य स्व-परवाचित्वात् । सत्तायाश्चौपनिषदेः * सर्व-स्वरूपत्वाभ्युपगमात् । अनुभूयते च सत्तायः सर्वस्वरूप-त्वम् । नरविषाणादीनामपि ज्ञानजनकत्वस्वीकारेण सत्स्वरूप-त्वात् । अक्षरशब्दश्च 'अश्रुतः'—इति वा 'न क्षरति'—इति वा परमात्मानमाचष्टे । अव्याकृतशब्दोऽपि तस्मिन् योजयितुं शक्यते । वि-स्पष्टं आ-समन्तात्कृतम्—इति व्युत्पत्त्या जगतः प्रतीतियोग्यस्थूलत्वदशा व्याकृतम् । 'न व्याकृतम्'—इति अव्याकृतशब्दः सूक्ष्मत्वदशामाह । एकस्यैव वस्तुनः स्थूल-सूक्ष्मदशो जगद्ब्रह्मशब्दाभ्यामुच्येते । विवर्तवादिभिः† अखण्डैकरसस्य ब्रह्मणो जगद्रूपेण प्रतिभासाभ्युपगमात् । तस्मात् अव्याकृतब्रह्मादीनां पञ्चानां शब्दानां एक एवार्थः ।

* उपनिषत्प्रमाणका औपनिषदाः वेदान्तिन इत्यर्थः । *

† विवर्तो नाम अन्यस्यान्यरूपेण प्रतिभासनम् । अस्मिन् विवर्तवादे आधेष्टानस्य विवर्तरूपेण प्रतिभासनं न तु तद्रूपत्वप्राप्तिः । यथा शुक्ले रजतरूपेण प्रतिभासनं न तु रजतरूपता । एवं ब्रह्म जगदाकारेण प्रतिभासते न तु तदन्यथाभावः । परिणामवादे तु जगद्रूपेण ब्रह्मणः परिणमनम् । तत्तु नेष्टम् । आरम्भवादस्तु वैशेषिकाद्यनुमतः मूलप्रमाणाभावादुपेक्षितः ।

१. A. and I. read -देकार्थ्ये for -देकार्थत्वं. २. Except A. and I. all others take only तस्माद्वा एतस्मादत्मानः. ३. A. D. E. G. H. and I. read -जनक-त्वाकारेण for -जनकत्वस्वीकारेण. ४. A. omits न व्याकृतम्. ५. D. omits एव. ६. E. G. and H. omit वस्तुनः, but read च in its place. ७. B. C. D. E. and H. read विवर्तनादिभिः for विवर्तवादिभिः. ८. B. C. D. and E. read अव्याकृतान्तानामात्मादीनां पञ्चानां for अव्याकृतब्रह्मादीनां पञ्चानां.

ननु-कच्चित् असतो जगत्कारणत्वं श्रूयते । 'असद्वा इद-
मग्र आसीत्, ततो वै सदजायत' (तै. उ. २. ७. १. २)
इति । मैवम् । तत्र सत्-असत् शब्दाभ्यां व्याकृताव्याकृत-
योरभिधाभात् । श्रुत्यन्तरे- 'कथमसतः सज्जायेत' (छां. उ.
६. २. २) इति शून्यस्य कारणताप्रतिषेधात् !

ननु-प्रतीयमानजगदाकाररहितं शून्यादपि विलक्षणं चेत्
ब्रह्म तर्हि तत् कीदृशं बुद्धावारोपयितव्यम् ?-इति चेत् ।
त्वयेदानीं प्रष्टुं यादृशमनूदितं तादृशमेव तदिति बुद्धिं समा-
धत्स्व । दृष्टान्तं चेत् पृच्छेसि न वयं वक्तुं शक्नुमः । तत्समन्य
वस्त्वन्तरस्याभावात् । तथा च श्रुतिः-

‘न तस्य कार्यं करणं च विद्यते
न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते’ ।

(श्वे. उ. ६. ८)

इति । यदि शिष्यव्युत्पादनाय दृष्टान्तभासो ज्येष्ठितः
तर्हि अद्वैताकारे सुषुप्तिर्निर्दर्शनम् । पुरुषार्थस्वरूपत्वे च विषया-
नन्दो निर्दर्शनीयः । 'आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्' (तै. उ.
३. ६. १) । 'विज्ञानमानन्दं ब्रह्म' (दृ. उ. ३. १. २८)

१. Except A. H. and I. all omit कच्चित्. २. For असतो, A. II. and I. read शून्यस्य ; D. अविकृतस्य ; while E. and G. विकृत्यन्यस्य. ३. D. II. and I. read -ज्जायत for -ज्जायेत. ४. We read with II. and I.; while all others read शून्यकारणता for शून्यस्य कारणता. ५. A. and D. omit ननु. ६. A. omits अपि. ७. A. reads बुद्ध्यावारोपयितव्यम् for बुद्धावारो-
पयितव्यम्. ८. A. and I. omit त्वया. ९. D. read यादृशमुदितं for यादृ-
शमनूदितं. १०. D. and G. have पृच्छति instead of पृच्छसि. ११. A. has
वृष्टान्ताभ्यासो for वृष्टान्तभासो. १२. D. II. and I. सुषुप्तिर्निर्दर्शनम् for
सुषुप्तिनिर्दर्शनम्. १३. D. reads -स्वेऽत्र for -स्वे च ; while A. omits it
altogether. १४. After व्यजानात् A. and I. put in an इति before विज्ञान-

इत्यादिश्रुतेः । अशेषशङ्कानिवृत्त्यपेक्षा चेत् ब्रह्ममीमांसां पठ
इत्यलमतिविस्तरेण ।

यावन्तं कालमभिव्यक्तजगदाकारोपेतं, ब्रह्म पूर्वमासीत्
तावन्तमेव कालमनभिव्यक्तिदशायामवस्थाय पश्चादभिव्यक्तौ
प्रयतते । ननु—महाप्रलये कालो वा तदियत्ता वा कथं पठते ? ।
उच्यते । कं प्रत्येतच्चोद्यम् ? । न तावत् ब्रह्मवादिनं प्रति ।
तन्मते विप्रदाद्यनन्तभेदभिन्ने जगत्प्रतीतिं कल्पयन्त्या भाया-
याः कश्चिन्महाप्रलयः एतावत्कालपरिमित आसीत्— इत्येवं
विधप्रतीतिमात्रकल्पने को भारः ? । परमाणुवादेऽप्यस्त्येव
नित्यः कालः । प्रधानवादे पञ्चविंशतितत्त्वैर्भूतस्य
कालतत्त्वस्याभावात् प्रधानमेव कालशब्देन व्यवह्रियताम् ।
अनः प्रलयकालावसाने परमेश्वरः सृष्टिं कामयमे । तथा च
श्रुतम्—‘कामस्तदग्रे समवर्त्तताधि’ (नृ. पू. १. १)
‘सो ऋणयत । बहुस्यां प्रजायेय’ (नै. उ. २. ६. १)
इति । ‘तदैक्षत बहुस्यां प्रजायेय इति’ । (छां. उ. ६. २. ३)
‘स ईक्षां चक्रे’ (प्र. उ. ६. ३) इत्याद्याः ।

ननु—कामोऽन्धम मनोवृत्तिविशेषः । ‘कामः सङ्कल्पो
विचिकित्सा श्रद्धा श्रद्धा धृतिरधृतिः ह्रीर्धूर्भीरित्येतत् सर्वं
मन एव’ (श्वे. उ. १. ५. ३; मै. उ. ६. ३०) इति श्रुतेः ।
मनश्च भौतिकम् । ‘अन्नमयं हि सौम्य मनः’ (छां. उ. ६.-
५. ४) इति श्रुतेः । तथा सति भूतोत्पत्तेः पूर्वमविद्यमाने

१. A. reads अभिव्यक्त्यै for अभिव्यक्तौ. २. II. reads तदायत्ता for तदियत्ता. ३. A. and I. drop -भिन्ने-. ४. E. G. and II. read तावत्- instead of एतावत्-. ५. A. and I. read इत्यादि for इत्याद्याः. ६. All but A. and I. read च for सति.

मनसि कुतः कामः ? । उच्यते । न तावत् सर्गसमर्थे चोद्य-
मिदमुदेति । तन्मनसो भौतिकत्वाभावात् । नित्यायाः ईश्व-
रेच्छायाः मर्षोऽनपेक्षत्वाच्च । सिमृक्षात्वं तु सर्गोपहितत्वाका-
रणे नित्येच्छायामुपपद्यते । औपनिषदे मते तु जीवेच्छायाः
भौतिकमनःकार्यत्वेऽपि ईश्वरेच्छायाः मायापरिणानरूपत्वात्
न मनसो अपेक्षाऽस्ति । अन्तरेणापि देहेन्द्रियाणि अशेषव्यव-
हारशक्तिर्यत्तन्त्या परमेश्वरस्य श्रुतिष्ववगम्यते—

‘न तस्य कार्यं करणं च विद्यते
न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते ।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते
स्वाभाविकी ज्ञान-बलक्रिया च’ ॥

(श्रे. उ. ६. ८)

इति ।

‘अपाणिपादो जवनो ग्रहीता

पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः’ ।

(श्रे. उ. ३. १९)

* तस्येश्वरस्य कार्यं शरीरम् । करणम् चक्षुर्गादिमाधनम् । तस्य स्व-
भावसिद्धा ज्ञानक्रिया बलक्रिया च शक्तिः श्रूयते । सर्वविषयज्ञानप्रवृत्तिः
ज्ञानक्रिया । स्वसन्निधिमात्रेण सर्वं वशीकृत्य नियमनं बलक्रिया ।

१. Except A. and I. all others substitute तत्कं for सर्ग. २. All
except A. and I. omit तु. ३. E. G. and H. omit अपि, and D. reads
-कार्यत्वेन for -कार्यत्वेऽपि; while H. reads -कार्यत्वं for the same. ४. B.
and F. -रूपत्वेन, and C. -रूपत्वे for -रूपत्वात्. ५. A. D. and I. read
मनोऽपेक्षा for मनसोऽपेक्षा. ६. C. D. E. F. G. and H. read परस्य शक्तिः
for परास्य शक्तिः.

इति च । एवं च सति-असद्भ्यस्य कथमुत्पादकत्वम् ? उत्प-
त्त्यमानानि वा विद्यदादीनि योग्यसामग्रीमन्तरेण कथमुत्पद्ये-
रन् ?-इत्यादीनि चाद्यान्यनवकाशानि । अचित्यज्ञान्यैव
अशेषचोद्यानां दत्तोत्तरत्वात् । तस्मात् यथाश्रुतिं निःशङ्कैः
सृष्टिरभ्युपेतव्या । श्रुतिश्चैवमाह- 'तस्माद्वा इतस्मादात्मन
आकाशः सम्भूतः । आकाशाद्वायुः । वायोरग्निः । अग्रेरापः ।
अद्वयः पृथिवी । पृथिव्या ओषधयः । ओषधीभ्यो ज्ञम् । अन्नात्
पुरुषः' (तै. उ. २. १. ७-१४) इति । तत्र पुरुषशब्देन शिरः-
पाण्याद्या कृतियुक्तो देहो अभिधीयते । स च देहो ब्रह्मादिः स्त-
म्यान्तो बहुप्रकारः । तत्र ब्रह्मदेहस्य निरतिशयपुण्यपुञ्जफल-
रूपत्वात् इतरसकलदेहकारणत्वेन अनादित्वम् । तथा च-

‘हिरण्यगर्भः समवर्त्तनाग्रं

भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्' ।

(ऋ. सं. ८. ७. ३. १; तै. सं. ४. १. ८)

इति श्रुतिः ।

‘ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्भूव ।

विश्वस्य कर्त्ता भुवश्च गोप्ता' ।

(मुं. उ. १. १)

१. D. and H. read -मुत्पद्यन्ते, G. -मुत्पाद्यन्ते for -मुत्पद्येरन्; B. C. and F. -मुत्पाद्येरन् for the same. After कथमुत्पद्यन्ते (the reading of H.) the same puts in a new sentence तन्न । and then proceeds with इत्यादीनि.
२. D. omits अनवकाशानि. ३. A. substitutes अनन्त- for अचित्त्य-.
४. -द्याकार- is the reading of A. instead of ब्रह्माकृति- of all others.
५. A. and D. read -करणत्वेन. for -कारणत्वेन. ६. After तथा च A. adds श्रुतिः; and B. C. D. F. H. and I. add श्रुति-स्मृती. ७. A. omits श्रुतिः.

इति च ।

* स वै शरीरी प्रथमः स वै पुरुष उच्यते ।

आदिदर्त्ता स भूतानां ब्रह्मा ऽग्रे समवर्त्तत ' ॥

(कू. पु. १. ५. ३८; वा. पु. १. ४. ६८-६९.)

इति स्मृतिः ।

एतेन विष्णु-महेश्वरदेहयोरप्यादित्वं व्याख्यातम् । एकेनैव चेतनेन गुणत्रयव्यवस्थायै देहत्रयस्य स्वीकृतत्वात् । तथा च मैत्रशाखायां श्रूयते—

‘तस्य शोक्ता अप्यास्तनवो ब्रह्मा रुद्रो विष्णुरिति ।

अथ यो ह खलु वा वाऽस्य राजसो ऽंशो ऽसौ स

यो ऽयं ब्रह्मा । अथ ह खलु वा वाऽस्य तामसो ऽंशो

ऽसौ स यो ऽयं रुद्रः । अथ यो ह खलु वा वाऽस्य

सात्त्विको ऽंशो ऽसौ स यो ऽयं विष्णुः । स वा एष

एकस्त्रिधा भूतः ।’

(मै. उ. ५. २)

* नायं श्लोकः उपलब्धस्मृतिपुस्तकेषु कुत्राप्युपलभ्यते । केषु चित् निबन्धेषु मनुनाम्ना ऽयं सङ्गृहीतः परं सम्प्रत्युपलब्धपुस्तकेषु नोपलभ्यते । अद्वैतब्रह्मसिद्धौ चतुर्थे मुद्रप्रहारे ऽयं श्लोक उदाहृतः । न तत्र मनोर्नाम । प्रथमः शरीरी निर्गुणपरमेश्वरस्य प्रथमं सगुणं रूपमित्यर्थः ।

१. A. reads only विष्णु-महेश्वरयो- omitting -देहयो-; C. and F. substitute -देवयो- for -देहयो-. २. B. C. and F. read चैतन्येन for चेतनेन. ३. A. and H. in its correction on the margin read मैत्रेय- for मैत्रः. ४. In A. the words विष्णु and रुद्र interchange their places. ५. A. and I. read ह before यो and insert an additional वै after यो. ६. A. and I. replace the each अथ in the beginning of both the lines by यथा. ७. Except A. D. H. and I. all others read भुवः for भूतः.

इति । तथोत्तरतापिनीये मायां प्रकृत्य श्रूयते—

‘सैषा चित्रा सुदृढा बह्वङ्कुरा स्वयं
गुणभिन्नाङ्कुरेष्वपि गुणभिन्ना सर्वत्र
ब्रह्म-विष्णु-शिवरूपिणी धैतेन्यदीना ।
‘तरमादात्मन एव त्रैविध्यं सर्वत्र’

(नृ. उ. ९)

इति । स्कन्दपुराणे अपि—

‘एक एव शिवः* साक्षात् सृष्टि-स्थित्यन्तसिद्धये ।

ब्रह्म-विष्णु-शिवाख्याभिः कलगाभिर्विजृम्भितः ॥

इति । तदेवं ब्रह्म-विष्णु-महेश्वराः तस्मिन् महाकल्पावसाने
क्षीयन्ते । पुनस्तत्तन्महाकल्पादावुत्पद्यन्ते इति सिद्धम् ।

अक्षरार्थस्तु—क्षयसहिता उत्पत्तिः क्षयोत्पत्तिः तयोपल-
क्षिता भवन्ति—इति । एवं तत्तद्वान्तरकल्पानामवसाने
प्रारम्भे च श्रुत्यादीनां निर्णेतारः क्षयोत्पत्तिभ्यामुपलक्ष्यन्ते ।
तत्र श्रुतिनिर्णेतारः—वेदविभागकारी व्यासः, तत्तद्वदशाखा-
सं प्रक्षयप्रवर्तकाः कठ-कौथुमादयः, कल्पसूत्रकाराः बौधाय-

* शिवः परमात्मा । ‘शिवं शान्त’मिति श्रुतेः । स एक एव सत्
सृष्ट्यादिसिद्धये मायागुणानाश्रित्य ब्रह्मादिरूपैः प्रकाशिते ।

१. B. C. D. and F. यथोत्तर- for तथोत्तर-. २. D. and G. read
चैतत्परीक्षा. ३. A. reads -विजृम्भते for -विजृम्भितः. ४. A. reads स्वस्मिन्
for तस्मिन्. ५. D. and I. eliminate -कल्प-. ६. For -तत्तन्महाकल्पादौ A.
and I. read only -तत्कल्पादौ; and B. C. D. E. and H. read तत्र महा-
कल्पादौ. ७. A. omits क्षयोत्पत्तिः. ८. A. reads वेदविभागकारी for वेद-
विभागकारी. ९. A. and I. omit one तत्. १०. D. and F. read कठ- for
कठ-. ११. Except D. and G. all others read बौधायना for बौधायना.

नाश्वलायनापस्तम्बादयः, मीमांसासूत्रकृतौ जैमिन्यादयश्च ।
स्मृतिनिर्णेतारो, मन्वादयः प्रसिद्धाः । तत्र पैडीनसिः—

‘तेषां मन्वक्षिरोव्यास-गौतमाव्युशानो-यनाः ।

वसिष्ठ-दक्ष-संवर्त्त-शातानन-पराशराः ॥

विष्णवावसाम्ब-हारीताः शङ्खः कात्यायनो भृगुः ।

प्रचेता नारदो योगी बौधायन-पितामहौ ॥

सुमन्तुः कश्यपो बभ्रुः पैडीनो व्यास एव च ।

सत्यवतो भरद्वाजो गार्ग्यः काष्णार्जिनिस्तथा ॥

आत्रातिर्जमदभिध्व, लौगाक्षिर्ब्रह्मसम्भवः ।

इति धर्मप्रणेतारः* षट्त्रिंशद्वयस्तथा ॥

ननु—किमियं परिसंख्या ? । मैवम् । तथा सति वत्स-म-
रोचि-देवल-भारस्कर-पुलस्त्य-पुलह-कर्तु-ऋष्यशृङ्ग-लिखित-
छागलेया-ऽऽत्रेयादीनां धर्मशास्त्रप्रणेतृत्वं न स्यात् । आश्वमे-
धिके पर्वण्यैपि तत्तन्मुनिप्रोक्तधर्मानुक्रमणान् धर्मशास्त्रकर्तारो
वर्गगम्यन्ते । ‘श्रुता मे मानवा धर्माः’-इत्युपक्रम्य एवं पठ्यन्ते—

* ‘धर्मप्रणेतारः’ धर्मशास्त्रकर्तार इति यावत् । धर्मप्रणेतृसंख्या
विभिन्नासु स्मृतिषु पुराणादिषु च विभिन्नैव दृश्यते । कचिदष्टादश क-
चिन्विंशतिरेवं कचिदधिका कचिद्व्यूना च दृश्यते सा च पूर्वमुपोद्धाते
विस्तरेण प्रदर्शितेत्यत्र संक्षेपः ।

१. A. B. C. F. G. and I. read बौधायन- for बौधायन . २. C. substitutes
पैङ्गिनो for पैडीनो. ३. For व्यास A. and I. read व्यस्र. ४. D. reads
-काष्णार्जिनि- instead of काष्णार्जिनि-. ५. A. and I. have लौगाक्षि- in the
place of लौगाक्षि-; the former is not heard of. ६. A. omits -कर्तु-
७. After आश्वमेधिके पर्वण्यैपि D. adds -एत. ८. A. and I. drop एव.
९. A. reads इत्यनुक्रम्य. for इत्युपक्रम्य.

‘औमोमहेश्वराश्चैव नन्दिधर्माश्च पावनाः’ ।

ब्रह्मणा कथिताश्चैव कौमाराश्च श्रुताः मृत्योः ॥ (१७)

धूम्रायेनकृता धर्माः काण्वा वैश्वानरा अपि ।

भार्गवा याज्ञवल्क्याश्च मार्कण्डेयाश्च कौशिकाः ॥ (१८)

भरद्वाजकृता ये च बृहस्पतिकृताश्च ये ।

कुणेश्च कुणिबाहोश्च विश्वामित्रकृताश्च ये ॥ (१९)

सुमन्तु-जैमिनिकृताः शाकुनेयास्तथैव च ।

पुलस्त्य-पुलहोद्गीताः पार्वकीयास्तथैव च ॥ (२०)

अगस्त्यगीताः सौधन्याः शाण्डिल्याः सौलभायनाः ।

वालखिल्यकृता ये च ये च सप्तभिभिः कृताः ॥ (२१)

१. The author quotes this from Āsvamedhika Parva, but though we searched three different editions of that Parva, we have not found it. This and the subsequent quotations which the author says to have been quoted from the said Parva belong to Vṛiddha Gautama Smṛiti. The above mentioned Smṛiti contains a conversation between Yudhishthira and Kṛiṣṇa. Therefore we call the said Smṛiti the text of these quotations. Before this verse, the text inserts the following three lines:-

श्रुता मे मानवा धर्मा वासिष्ठाः काश्यपास्तथा ॥ (१५)

गार्गीया गौतमीयाश्च तथा चापालितस्य च ।

पराशरकृताः पूर्वमात्रेयस्य च धर्मतः ॥ (१६).

All except A. and I. substitute उमा- for औमा-. २. D. reads मम for मृत्योः.

३. B. C. E. F. and G. read धूम्रायवकृताः for धूम्रायेनकृताः. ४. A. reads काण्वा, B. C. and F. काष्ठा and E. G. काठ्या, while H. reads काव्या all for काण्वा. ५. D. and G. substitute वैखानसा for वैश्वानरा. ६. The text reads भारण्डव्याः कौशिकास्तथा. ७. B. C. E. F. G. and H. read कुणितहेश्च for कुणिबाहोश्च; while D. has कुणिनहेश्च. ८. The text reads पाराशर्याः, A. reads पावनीयाः for पार्वकीयाः, but we do not think that it ever was the name of any ऋषि or देवता. ९. A. I. and the text substitute सौधन्याः for सौधन्याः. १०. B. C. and F. read शौत्यभाजनाः, D. शौत्यभाजनाः, E. reads शौलभाजनाः, G. शौलभाजनाः and H. शौलभाजनाः all for सौलभायनाः. ११. The text inserts the following lines:-

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

अमरकृतधर्माः शङ्खम्य लिखितस्य च ।

वैयाघ्रा व्यासगीताश्च विभाण्डककृताश्च ये ।

तथा विदुरवाक्यानि भृगोरङ्गिरसस्तथा ।

वैशम्पायनगीताश्च ये चान्ये एवमादयः । (२६)

इति । 'सदाचारः' होलकोद्वृषभयज्ञाहिनैवुकादिः ।

१. A. and I. read विभण्डक- for विभाण्डक-; while all others read वितण्डक- for the same. २. After this line there appears the following line in the text—

नरसीयकृता धर्माः कापोताश्च श्रुता मया ॥ (२३)

३. After this line the text inserts—

क्रौञ्च-मातङ्ग-गीताश्च वत्स-हारीतकास्तथा ॥ (२४)

पिङ्गवर्मकृताः काश्याः ये च वा वसुपालिताः ।

उद्दालककृता धर्मस्तथा औशनसाः पुनः ॥ (२५)

४. The following Ślokas we find in Vishnu Dharmottara, Vol. I., Chap. 146, Ślokas 36-42 both inclusive. Here also we find a conversation between Yudhishthira and Krishna. The Ślokas are as follows:—

श्रुता मे मानवा धर्मा वासिष्ठा वा महाफलाः ।

पराशरकृताश्चैव तथाऽऽत्रेयस्य धीमतः ॥

ऋष्यशृङ्गस्य गार्ग्यस्य लिखितस्य यमस्य च ।

जाबालश्च महाबाहो मुनेर्द्विपायनस्य च ॥

औमामहेन्द्राश्चैव जातिधर्माश्च पावनाः ।

कुण्डश्च कुणिबाहोश्च काश्यपेयास्तथैव च ॥

बह्वायनकृताश्चैव शाकुनेयास्तथैव च ॥

अगस्त्यगीता मौद्गल्याः शाण्डिल्याः सौरभारतया ॥

भृगोरङ्गिरसश्चैव काश्यपोद्दालकोदिताः ।

सौमन्ता जैमिनीयाश्च पुलस्त्यस्य महात्मनः ॥

वैशम्पायनगीताश्च पिप्पलावकृताश्च ये ।

ऐम्प्राश्च वारुणाश्चैव कौबेरा वात्स्य-शौनकाः ॥

आपस्तम्बकृता धर्मास्तथा गोपालकस्य च ।

भृङ्गङ्गिरःकृताश्चैव सौरा हारीतकास्तथा ॥

५. A. reads समाचारः for सदाचारः. ६. A. reads the following:— लोको वृषभयज्ञाहिनैर्कृतादिः तस्य in the place of होलकोद्वृषभयज्ञाहिनैवुकादिः; while the sentence is altogether omitted by B. C. and F., but in the margin of B. सदाचारादयः precedes तस्य. At the beginning of the following sentence. E. H. and I. read होलाको- for होलको- and G. हलाको- for the same.

तस्य निर्णेतारस्तेतत्कुलवृद्धाः । चकारः उक्तानुक्तसमुच्च-
यार्थः । उक्ताः मन्वादयो ब्रह्मादयश्च स्मृतिशास्त्रकर्तारः ।
अनुक्तस्तु धर्मः । तस्यापि पूर्वकल्पान्ते क्षीणस्योत्तरकल्पादौ
सृष्टिर्भवति । तथा च वाक्सनेयि-ब्राह्मणे सृष्टिप्रकरणे प्रजा-
पति-मन्वोर्मनुष्यादि-पिपीलिकान्तप्राणिनां चतुर्वर्णाभिमानीदे-
वतानाञ्च सृष्टिमाप्नाय अत्युग्रमपि क्षत्रियादिकं नियन्तं
समर्थस्य धर्मस्य सृष्टिराम्नामते—

‘स नैव व्यभवत् ।

तत् श्रेयोरूपमत्यसृजत् धर्मम् ।

तदेतत् क्षत्रस्य क्षत्रं यद्धर्मः ।

तस्मात् धर्मात् परं नास्ति* ।

(बृ. उ. १. ४. १४.)

इति । अस्यायमर्थः । स प्रजापति-मन्वादिरूपधारी जग-
त्सृष्टा परमेश्वरः प्रजाः सृष्ट्वा अपि तन्नियामकाभावात् कृत-
कृत्यतारूपं विभवं नैव प्राप्तवान् । ततो विचार्य नियामकत्वेन
श्रेष्ठं धर्ममतिशयेनासृजत् इति । अहो महदिदं धर्मस्य
सामर्थ्यम् । यत् क्षत्रियादिहो मारणे समर्थो अपि धर्माद्रीतः
करप्रदाद्यानुपयोगिनं याचकं विप्रादिकं न न्यारयति । प्रत्युत
तस्मै धनं ददाति । भट्टाश्चातिगूराः धनुः-खड्गादिधारिणो

१ D. substitutes तत्र for तत्तत्- २. A, H. and I. read वाक्सनेय- for वाक्सनेयि- ३. A. and I. read प्रजापतिभ्यः- ४. H. drops -अपि.
५. All except A. and I. read समस्तस्य for समर्थस्य. ६. A. and I. omit
धर्मात्. ७. E, G. and H. omit जगत्- ८. D. reads प्राप्तयति for प्राप्तवान्.
९. A. and I. read -मतिशयेना- for -मतिशयेना-. १०. A. substitutes
ताडयति for न्यारयति.

लक्षेशः एकेन^१ निरायुधेन उद्येण स्वामिना अभिक्षिप्यमाणा-
स्ताड्यमानाः सन्तो ऽपि स्वामिद्रोहाद्विभ्यति । ततो धर्मा-
दप्युत्कृष्टं न किञ्चिन्नियामकमस्तीति । प्रलयकाले धर्मस्यापि
संहारे भाविसृष्टिर्धर्मकार्याया असम्भवः—इति चेत् । न ।
पूर्वकल्पानुष्ठानसञ्चितस्य फलबीजस्यापूर्वस्य संहारानङ्गीका-
रात् । द्रव्य-गुण-क्रियारूप एव हि धर्मः संह्रियते पुनरुत्पद्यते
च । ‘सर्वदा’ इत्यनेन सृष्टि-संहारप्रवाहस्यानादितामनन्तताञ्च
दर्शयति ॥ २० ॥

यदर्थं सृष्टि-संहारौ संक्षिप्योक्तौ तत् प्रवाहानित्यत्वमि-
दानीमाह—

न कश्चिद्वेदकर्त्ता च वेदं स्मृत्वा चतुर्मुखः ।

तथैव धर्मान् स्मरति मनुः कल्पान्तरेऽन्तरे ॥ २१ ॥

इति । स्मृतिनिर्णेतृणां मन्वादीनां स्मृतिकर्तृत्वदर्शनात्
तथैव श्रुतिनिर्णेतृणामपि वेदकर्तृत्वमाशङ्क्य निराचष्टे । न
कश्चित् इति । न तावत् व्यासो वेदकर्त्ता । तस्य विभागमात्र-
कारित्वात् । नापि चतुर्मुखः । ईश्वरं चतुर्मुखाय वेदप्रदानात् ।

१. A. and I. read लक्षसंख्याकाः for लक्षशः. २. All except A. read स्वकीयेन for एकेन. ३. B. C. E. and F. read रुग्णेन for उद्येण ; while A. omits it altogether. ४. A. reads विक्षिप्यमाणा-; and D. क्षिप्यमाणा- for अभिक्षिप्यमाणा-. ५. Except D. G. and I. all others read धर्माधर्मे- instead of only धर्मे-. ६. A. reads पुनरुत्पाद्यते for पुनरुत्पद्यते. ७. C. reads सृष्टिसंहारस्या- omitting प्रवाह-. ८. A. substitutes श्रुत्वा for स्मृत्वा ; while M. reads वेदकर्मता for वेदं स्मृत्वा. ९. M. takes धर्म for धर्मान्.

नोपि जगदीश्वरः । तस्य सिद्धवेदाभिव्यञ्जकत्वात् । तदुक्तं
मत्स्यपुराणे—

‘अस्य वेदस्य सर्वज्ञः कल्पादौ परमेश्वरः ।
व्यञ्जकः केवलं विप्राः नैव कर्त्ता न संशयः॥
ब्रह्माणं मुनयः पूर्वं सृष्ट्वा तस्मै महेश्वरः ।
दत्तवानखिलान् वेदान् विप्रा आत्मानि संस्थितान् ॥
ब्रह्मणा चोदितो विष्णुर्व्यासरूपी द्विजोत्तमः ।
हिताय सर्वभूतानां वेदभेदान् करोति सः ॥

इति । इतरेषां तु तत्कर्तृत्वं दूरापेतम् । उपपत्तयस्तु वेदापौ-
र्ण्यत्वाधिकरणे (पृ. मी. १. १. २७) द्रष्टव्याः । ननु—शास्त्र-
योनित्वाधिकरणे (शा. सू. १. १. ३) ब्रह्मणः सर्वज्ञत्व-सर्व-
शक्तित्वदाढ्याय वेदकर्तृत्वं व्यासेन सूत्रितम् । ननु—तैत्ति-
देवताधिकरणे वेदनित्यत्वमपि । ‘अत एव च नित्यत्वम्’ (शा.
सू. १. ३. २९) इति सूत्रेण प्रदर्शितम् । एवं तर्हि विरोधः
परिहर्त्तव्यः । उच्यते । वर्णानां पदार्थ-तत्सम्बन्धानां वाक्या-
नां चानित्यत्वं वैशेषिकादर्थो वर्णयन्ति तान् प्रति भीमांसकाः
प्रथमपदे कालाकाशादीनामिव वर्णादीनां नित्यत्वं वर्णया-
मासुः । ‘व्यवहारे भट्टनयः’ इत्यभ्युपगमं सूचयितुं देवता-

१. D. reads अनादि—for नापि. २. A. omits सिद्धः; D. सिद्धये वेदवेदाभि-
व्यञ्जकत्वात्. thus prefixing an additional वेद- and makes सिद्धये
independent. ३. A. substitutes धर्मस्य for वेदस्य. ४. D. has सुस्थितान्
instead of संस्थितान्. ५. D. नोदितो for चोदितो. ६. D. G. and H. read
द्विजोत्तमः for द्विजोत्तमाः. ७. Except A. all others substitute कदाचिनां
for इतरेषां. ८. A. and I. have दूरापास्तम् for दूरापेतम्. ९. D. substitutes
वा for -च. १०. A. and I. read वैशेषिक-काणादर्थो instead of वैशेषिका-
दर्थो. ११. A. and I. drop आदि and read simply वर्णानां for वर्णादीनां.
१२. A. reads इत्यभ्युपगमं for इत्यभ्युपगमं.

धिकरणे तद्वैक व्यावहारिकं नित्यत्वं सूचितम् । अतः कालिदासादिग्रन्थेष्विव वेदेष्वर्थविबोधपूर्विकायाः पदविशेषा-
वापोद्वापाभ्यां प्रवृत्तायाः वाक्यरचनायाः अभावादपौरुषेयत्वं
युक्तम् । ब्रह्मद्विवर्त्तत्वं विद्युद्भादेरिव वेदस्याप्यस्ति—इति मत्त्वा
शास्त्रयोनित्वाधिकरणे वेदकर्तृत्वं ब्रह्मणो दर्शितम् । अत एव
भट्टपादाः सत्यपि पुरुषमम्बन्धे स्वातन्त्र्यं निर्वारयामासुः—

‘यत्नतः प्रतिषेध्या नः पुरुषाणां स्वतन्त्रता’ ।

इति । तस्मात् ‘स्वतन्त्रः कर्त्ता’ (पा. सू. १. ४. ५४)
इत्यनेन लक्षणेन लक्षितः कर्त्ता न कोऽपि वेदस्यास्ति ।

चकारः तु—शब्दार्थे वर्त्तमानो वैलक्षण्यमाह । सन्ति हि
बहवश्चतुर्मुख-मनुप्रभृतयः स्मृतिकर्त्तारः । वेदकर्त्ता तु न को-
ऽपीति वैलक्षण्यम् । ‘वेदं स्मृत्वा’ इत्यत्र वाक्ये अनुषङ्गन्यायेन
द्वितीयार्थगतं पदत्रयमन्वेतव्यम् । अनुषङ्गन्यायश्च द्विती-
याध्याये प्रथमपादं वर्णितः । तथा हि । ज्योतिष्टोमप्रक्रियायां
उपसंहोमेषु त्रयो मन्त्राः श्रूयन्ते । ‘याते ऽग्ने ऽयाशया, रजा-

* उपलभ्यते चायं मन्त्रः वाजसनेयिसंहितायाम् । तत्र तु—

‘याते अग्ने ऽयाशया तनूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा

उग्रं वचो अपावधीत् विषं वचो अपावधीत्स्वाहा ।

१. All except H. omit तु. २. B. C. and F. read वाक्यानुषङ्गन्यायेन
instead of वाक्ये अनुषङ्गन्यायेन. After वाक्य- A. adds—पुराणानां before
अनुषङ्गन्यायेन. ३. A. omits च. ४. For द्वितीयाध्याये प्रथमपादे A. only
reads द्वितीयाध्यायप्रथमपादे. ५. A. substitutes ईदितः for वर्णितः. ६. A.
drops the letter प्र- and reads -क्रियायां. ७. A. and I. read उपसह-
मुपहोमेषु for उपसंहोमेषु; while D. reads simply उपहोमेषु for the same.
८. The author has quoted this mantra omitting the common words,
and Sabar Swamī quotes (१. १. ४८) as follows:—याते अग्ने ऽयाशया तनु-
र्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा उग्रं वचो अपावधीत्त्वेषं वचो अपावधीत्स्वाहा, याते अग्ने रजा-
शया, याते अग्ने हराशया. Kānvaś reads हरीशया. After reading the
Bhāṣya of Mahīdhara on अयाशया, रजाशया and हराशया we think these
readings are incorrect.

शया, हराशया तनूर्वर्षिष्ठा गव्हरेष्ठा उग्रं वचो, अपावधीत्
 त्वेषं वचो अपावधीः स्वाहा' (वा. सं. ५. ८. ८) —इति ।
 तत्र 'अयाशया, रजाशया, हराशया' —इति पदभेदान्मन्त्र-
 भेदः । तत्र प्रथममन्त्रस्य तनूरित्यादि वाक्यशेषापेक्षा अस्ति ।
 चरममन्त्र 'याति अग्ने' —इत्यमुं वाक्यादिमपेक्षते । *मध्य-
 ममन्त्रश्चाद्यन्तावपेक्षते । तत्रैवं संशयः न किमपेक्षितार्थपरिपू-
 रणाय लौकिकः क्रियानपि पदसन्दर्भो अध्याहर्णीयः ? किं वा
 श्रूयमाणं पदजालमनुषस्त्रनीयम् ? इति । वाक्यदेः प्रथमम-
 न्त्रेणैव सम्बन्धात् वाक्यशेषस्य च चरममन्त्रेणैव सम्बन्धात्
 लौकिकाध्याहारः —इति पूर्वः पक्षः । वैदिकाफाङ्गायाः सति
 सम्भवे वैदिकशब्दैरेव पूरणीयत्वात् अन्यमन्त्रसम्बद्धानामपि
 पदानां बुद्धिस्थित्वेनाध्याहार्येभ्यः पदेभ्यः मर्यासन्नत्वाच्च
 अनुषङ्ग* एव कर्त्तव्यो नाध्याहारः —इति सिद्धान्तः । एवं च
 सति प्रकृते अपि 'कल्पान्तरे धर्मान् स्मरति' —इति पदत्रयं

याति अग्ने रजःशया तनूर्वर्षिष्ठा० ।

याति अग्ने हरिशया तनूर्वर्षिष्ठा० ।

(वा. सं. ५. ८. ८.)

एवं वर्तते । अत्र तु स एव संक्षेपेण गृहीतः । कश्चित् 'अयःशयाः० ।
 रजःशयाः० । हरिशयाः० ।' इति पाठो अपि दृश्यते । स तु प्रामादिकत्वात्
 चिन्त्यः ।

* अयमनुषङ्गन्यायः शत्रुभाष्ये अनुषङ्गाधिकरणे (पू. मी. २.
 १. ४८) द्रष्टव्यः ।

१. II. reads इत्यनुवाक्यादिगतम्- for इत्यमुं वाक्यादिम्-; but all others
 except A. keep इत्यमुं and read वाक्यादिगतम्- for वाक्यादिम्-. २. A.
 and I. drop the second -म्- and read सम्बन्धस्त्वा- E. also with A.
 and I. substitute तु for च. ३. A. II. and I. omit च. ४. D. omits एवं.
 ५. All but B. and I. read सम्बन्धानां for सम्बद्धानां. ६. A. reads बुद्धि-
 स्थित्वेना- for बुद्धिस्थित्वेना-. ७. B. C. and F. omit च. ८. D. reads पूर्वे
 for प्रकृते. ९. B. C. E. and F. repeat अन्तरे.

पूर्वार्धे ऽनुषञ्जनीयम् । चतुर्मुखस्तस्मिन् महाकल्पे परमेश्वरेण
दत्तं वेदं स्मृत्वा, तत्र विप्रकीर्णान् वर्णाश्रमादिधर्मान् सङ्क-
ल्य स्मृतिग्रन्थरूपेण उपनिबध्नाति । तथा च पितामहव-
चनानि तत्र तत्र निबन्धकारैरुदाह्रियन्ते । चतुर्मुखस्य स्मृति-
शास्त्रकर्तृत्वं मनुना ऽप्युक्तम्—

‘इदं शास्त्रं तु कृत्वा ऽसौ मामेव स्वयमादितः ।

‘विधिवद्वाहयामास मरीच्यादीनहं मुनीन्’ ॥

(म. स्मृ. १. ५८)

इति ! यथा चतुर्मुखः तथैव स्वायम्भुवो मनुः तस्मिन्त्र-
वान्तरकल्पे वेदोक्तधर्मान् ग्रथ्नाति । मनुग्रहणेन अत्रि-
विष्णु-याज्ञवल्क्यादयः उपलक्ष्यन्ते । तदेवं प्रतिमहाकल्पं
तेन तेन चतुर्मुखेन प्रत्यवान्तरकल्पं च तैस्तेर्मन्वादिभिः
स्मृतिप्रणयनात् धर्मादिः प्रवाहनित्यत्वं सिद्धम् । एतदेवा-
भिप्रेत्य आश्रमेधिके पर्वणि पठ्यते—

‘युगेष्वादत्तमानेषु धर्मो ऽप्यावर्त्तते पुनः ।

धर्मेष्वौवर्त्तमानेषु लोको ऽप्यावर्त्तते पुनः’ ॥

इति । युगभेदेन धर्मवैलक्षण्यमभिप्रेत्य ‘धर्मान्’—इति
बहुवचननिर्देशः ॥ २१ ॥

१. B. C. and V. read only पूर्वार्धे ऽनुषञ्जनीयम् for पूर्वार्धे ऽनुषञ्जनीयम्.
२. All repeat तस्मिन्, but we do not see the necessity of it. ३. A. reads
विप्रकीर्णे for विप्रकीर्णान्. ४. D. and G. read संकल्प्य for संकलय्य. ५. A.
D. E. G. H. and I. निबन्धनकारैः instead of निबन्धकारैः. ६. B. C. E. F.
and G. मानेवाश्रयमादितः for मामेव स्वयमादितः. ७. A. and I. after तथैव
add च. ८. Except E. G. and H. repeat तस्मिन्. ९. A. reads
मनुग्रहणेनात्र, omits अत्रि; and changes the places of -विष्णु- and
-याज्ञवल्क्य-. १०. H. reads धर्मो व्यावर्त्तते for धर्मो ऽप्यावर्त्तते. ११. धर्मो
व्यावर्त्तमाने तु for धर्मेष्वौवर्त्तमानेषु. १२. We take our reading from D.
while all others have -मनुष्येभ्यः for -मभिप्रेत्य.

तदेवं वैलक्षण्यं प्रतिजानीते—

*अन्ये कृतयुगे धर्मास्वेतायां द्वापरे युगे ।

अन्ये कलियुगे नृणां युगरूपानुसारतः ॥ २२ ॥.

इति । अत्र अन्यशब्दो न धर्मस्य स्वरूपान्यत्वमाचष्टे । किन्तु प्रकारान्यत्वम् । अन्यथा धर्मप्रमाणचोदनानामपि युगभेदेन भेदापत्तेः । नहि इयं चोदना कृते ऽध्येतव्या इयं तु त्रेतायाम्—इत्यादिव्यवस्थापकं किञ्चिदस्ति । प्रकारान्यथात्वे त्वस्ति दृष्टान्तः । 'एकस्याप्यभिज्ञेन त्रयस्य' सायं प्रातः कालभेदेन अनुष्ठानप्रकारभेदश्रवणात् ।

‘ऋतं त्वा सत्येन परिषिञ्चामि इति सायं

परिषिञ्चति । सत्यं त्वर्त्तेन परिषिञ्चामीति प्रातः ।

(तै. ब्रा. २. ११)

* दृश्यते चायं श्लोको मनुस्मृतौ (अ. १. श्लो. ८५) महाभारते (शां. मो. २३१. २७; २६० अध्याये च ८) च । तत्र तु 'युगे' इत्यत्र 'ऽपरे' इति 'युगरूपानुसारतः' इत्यत्र 'युगहासानुसारतः' इति च पाठभेदो दृश्यते । अत्र मेधातिथिः । 'युक्तो ऽस्य कालभेदेन पदार्थस्वभावभेदस्यैवपसंहारः' । धर्मशब्दो न यागादिवचन एव । किं तर्हि पदार्थगुणमात्रे वर्तते । अन्ये पदार्थानां धर्मः प्रतियुगं भवन्ति । यथा प्राक्दर्शिकम् । यथा वसन्ते अन्यः पदार्थानां स्वभावः अन्यो ग्रीष्मे अन्य एव वर्षासु । एवं युगेष्वपि । अन्यत्वं चात्र न कारणानां दृष्टकार्यव्यागेन कार्यन्तरजनकत्वमपि । अपरिपूर्णस्य कार्यस्योत्पत्तेः शक्तेरपचयात् । तदाहुः । युगहासानुरूपतः इति । हासो न्यूनता ।

१. D. reads तदेवं for तदेव. २. M. and J. read परे for युगे. ३. A. reads कलौ युगे instead of कलियुगे. ४. D. reads चोदना for चोदना. ५. E. in its correction has तर्हि इयं for नहि इयं; D. has नहि इयं for the same. ६. A. B. C. F. and G. read प्रकारान्यत्वे for प्रकारान्यथात्वे.

इति । ननु-तत्रार्थवादेन मन्त्रप्रकारभेद उपपादितः-

‘अग्निर्वा ऋतम् । असावादित्यः सत्यम् । अग्निमेव
तदादित्येन सायं परिषिञ्चति । अग्निनादित्यं प्रातः स-’

(तै. ब्रा. २. ११)

इति । एयं तर्हि अत्रापि ‘युगरूपानुसारतः’-इत्यनेन
प्रकारभेदः उपपद्यते । युगानां स्वरूपमनुष्ठातृपुरुषशक्तितार-
तम्योपेतम् । तदनुसारेणानुष्ठानवैषम्यं सम्भवति । ‘यथा
शक्रुयात् तथा कुर्यात्’-इति नित्यकर्मसु निर्णीतत्वात् ।
तथाहि षष्ठाध्याये तृतीयपादादौ (पू. मी. ६. ३. १) विचारि-
तम् । ‘यावज्जीवमग्निहोत्रं जुहुयात्’-इति श्रूयते । तत्र
संशयः । किं सर्वाङ्गोपसंहारेणाधिकारः ? उत यदा यावन्ति
शक्नोत्युपसंहर्तुं तदा तावद्भिरङ्गैरुपेतं प्रधानं कुर्वन्नधिक्रियेत ?
इति । सर्वाङ्गोपेतस्य प्रधानस्य फलसाधनत्वात् अङ्गवैकल्ये
फलानुदयात् सर्वोपसंहारः-इति पूर्वः पक्षः । अत्र हि जीव-
नमग्निहोत्रस्यैव निमित्ततया श्रूयते । न त्वङ्गानाम् । सति च
निमित्ते नैमित्तिकमवश्यम्भावि । अन्यथा निमित्तत्वासम्भ-
वात् । ततो शक्याद्भूतित्यागेन प्रधानं कर्तव्यम् । तावतैव
शास्त्रवशात् फलसिद्धिः-इति । बौधायनश्च स्मरति-

१. A. and I. read मन्त्रः प्रकारभेदेन उपपादितः instead of मन्त्रप्रकारभेद उपपादितः. २. A. has सह in the place of स-. ३. G. reads एवं च तर्हि instead of एवं तर्हि. ४. All except A. and D. read उपपाद्यते for उपपद्यते. ५. A. and I. read तृतीयपादे instead of तृतीयपादादौ. ६. A. D. and I. read -नधिक्रियते for -नधिक्रियेत. ७. B. C. D. and F. read पूर्वपक्षः for पूर्वः पक्षः. ८. A. reads -मवश्यभावि ; while II. reads -मवश्यम्भाव्यम् for -मवश्यम्भावि. ९. II. reads बौधायनः omitting च with all others except A. ; while D. reads for the whole बौधायनस्मृतिरपि.

‘यथाकथञ्चिन्नित्यानि शक्त्यवस्थाऽनुरूपतः ।

येन केनापि कार्याणि नैव नित्यानि लोपयेत् ॥

इति । पुरुषशक्तितारतम्यकृतमंत्रानुष्ठानत्रैषम्यमिति विवक्षया ‘नृणाम्’-इत्युक्तम् ॥ २२ ॥ •

अथ प्रतिज्ञातं वैलक्ष्ण्यं षड्भिः श्लोकेरुपन्यस्यति । तत्र चतुर्षु युगेषु प्राधान्येनानुष्ठातुं सुशक्तान् परमपुरुषार्थहेतून् धर्मान् विभजते—

* तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते ।

द्वापरे यज्ञमेवाहुः दानमेव कलौ युगे ॥ २३ ॥

* अयमपि श्लोकः मनुस्मृतौ (१. ८६) महाभारते (शां. मो. २३१ २८; २६० अध्याये ९) च दृश्यते । तत्र पूर्वार्द्धे ‘ज्ञानमुत्तमं’ इति पाठः । भारते । उत्तरार्द्धे ‘दानमेकं’ इति उभयोरपि पाठः । अत्र मेधातिथिः । ‘अयमन्यो युगस्वभावभेदः कथ्यते । तपःप्रभृतीनां वेदे युगभेदेन विधानाभावात् सर्वदा सर्वाण्यनुष्ठेयानि । अयं त्वनुवादो यथाकथञ्चित् व्याख्येयः । इतिहासेषु हि एवं वर्ण्यते । तपः प्रधानम् । तच्च महाफलं दीर्घायुषो रोगवर्जितास्तपसि समर्था भवन्ति अनेनाभिप्रायेणोच्यते । ज्ञानं अध्यात्मविषयम् । शरीरक्लेशान्तर्नियमो नातिदुष्करः । यागे तु न महान् क्लेश इति द्वापरे यज्ञः प्रधानम् । दाने तु न शरीरक्लेशो नान्तःसंयमो न चातीव विवक्षितोपयुज्यत इति सुसम्पादना । नीलकण्ठस्तु—‘तपः परं परविदा । ज्ञानं अपरविदा । ते च ‘अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते ।

१. Except A. and I. all others read शक्त्यवस्त्वनुरूपतः for शक्त्यवस्थानुरूपतः. २. D. substitutes तेनापि for नित्यानि. ३. A. and I. omit अत्र. ४. D. and G. विषयाय for विवक्षया; E. reads विषयात् for the same. ५. H. has चतुर्षु युगेषु instead of चतुर्षु युगेषु. ६. A. and I. read सुकरान्; D. सुशक्तान् for सुशक्तान्. ७. B. C. D. and F. read हेतुधर्माश्च for हेतून् धर्मान्; while E. reads हेतुश्च धर्मान् for the same. ८. M. reads यज्ञमेवाहुः for यज्ञमेवाहुः. ९. M. reads दानमेकं for दानमेव.

इति । तपः कृच्छ्र-चान्द्रायणादिरूपेण आहारवर्जनम् ।

‘तपोनानुशनात् परम्’ (म. ना. उ. २१. २)

—इति श्रुतेः । यद्यपि दानस्यापि तपस्त्वं श्रूयते । ‘एतत् खलु वाद्य तप इत्याहुः यत्स्वं ददाति’ (तै. सं. ६. १. ६. ३)

इति । तथापि नात्र तद्विवक्षितम् । दानस्य पृथगुक्तत्वात् । ननु—व्यासेन तपो अन्यथा स्मर्यते—

‘तपः स्वधर्मवर्तित्वं शौचं सङ्गनिवर्हणम्’ ।

इति । नायं दोषः । कृच्छ्रदेरपि स्वधर्मविशेषत्वात् । ‘तप् एन्तापि’ इत्यस्माद्धातोरुत्पन्नस्य तपःशब्दस्य देह-शोषणे वृत्तिर्मुख्या । अत एव स्कान्दे अभिहितम्—

‘वेदोक्तेन प्रकारेण कृच्छ्र-चान्द्रायणादिभिः ।

शरीरशोषणं यत्तत् तप इत्युच्यते बुधेः’ ॥

इति । यत्तु तत्रैवोक्तम्—

‘को ऽहं मोक्षः कथं केन संसारं प्रतिपन्नवान् ।

इत्यालोचनमर्थज्ञास्तपः शंसन्ति पण्डिताः’ ॥

इति । सोऽन्य एव तपःशब्दः । ‘तप् आलोचने’—इत्य-स्माद्धातोस्तदुत्पत्तेः । तत् तपो ऽत्र ज्ञानशब्देन रुद्धं हितम् ।

यत्तदद्रेक्ष्यमग्राह्यं (मुं उ. १. १. ५-६)—इत्यादिना ‘तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः’ (मुं उ. १. १. ५)—इत्यादिना चाथर्वणे प्रसिद्धे’ इति व्याचक्ष्यौ ।

१. A. and I. read अशन- for आहार-. २. A. B. C. E. F. H. and I. read यः स्वं ददाति; D. यत्स्वयं ददाति for यत्स्वं ददाति. ३. A. D. and I. read शौचं सङ्गनिवर्जनम् for शौचं सङ्गनिवर्हणम्. ४. We take our reading from A. and I.; though all others read तथा for कृच्छ्र-; D. omits it altogether. ५. A. and I. read कोऽसौ for कोऽहं. ६. E. G. and H. substitute तेन for केन. ७. A. has तत्र instead of सत्.

‘पर’शब्दः प्राधान्येनानुष्ठेयतामाह । तर्हि—त्रेताद्विष्णु तपो ना-
द्रियेत । कृते च ज्ञान-यज्ञ-दानानि नाद्रियेरन्—इति चेत् । न ।
इतरव्यावृत्तिरूपायाः परिसंख्यायाः अत्र अक्विक्षितत्वात् । न
खलु इदानीं कश्चिदनुष्ठानविधिः वक्तुमुपक्रान्तः येन विधि-
विशेषः परिसंख्या शङ्क्येत* । भविष्यति तु ‘षट्कर्माभिरत’
(प. स्मृ. १. ३८) इत्यादिना तदुपक्रमः । युगसामर्थ्यं केवल-
मत्र निरूप्यते । युथा वसन्ते पुष्पप्राचुर्यं ग्रीष्मे सन्तापबाहु-
ल्यं इत्यादि ऋतुसामर्थ्यं तथा कृतादिसामर्थ्येन तपआदिप्राचुर्यं
विवक्षितम् । अतएव ‘युगे युगे तु सामर्थ्यम्’ (प. स्मृ. १. ६४)
इति वक्ष्यति । सामर्थ्यज्ञानप्रयोजनं चाभिधानस्यते—

‘तेषां निन्दा न कर्तव्या युगरूपा हि ते द्विजाः’ ॥

• (प. स्मृ. १. ३३)

इति । एतत्सामर्थ्यं बृहस्पतिरपि दर्शयति—

‘तपो धर्मः कृतयुगे ज्ञानं त्रेतायुगे स्थितम् ।

द्वापरे चाध्वरः प्रोक्तस्तिष्ये दानं दया दमः’ ॥

इति ॥ २३ ॥

* यत्र विधित्वस्यैवाभिधानः तत्र तद्विशेषरूपायाः परिसंख्यायाः शङ्कैव
नास्तीति भावः । अज्ञातज्ञापकं प्रवृत्त्यङ्गप्रमितिजनकं अभिधानामक-
पदार्थान्तरबोधरूपदघटितं वा वाक्यं विधिः । त्रिविधोऽपि सोऽत्र न
सम्भवतीति तात्पर्यम् ।

१. Except A. D. and I. all others omit च. २. G. reads सुपाक्रान्तः
for मुपक्रान्तः. ३. D. and I. read विधिविशेषः शङ्क्येत for विधिविशेषः
परिसंख्या शङ्क्येत. ४. A. omits तु. ५. H. reads तदुपक्रमे युगसामर्थ्यं
instead of तदुपक्रमः । युगसामर्थ्यं. ६. E. omits विवक्षितम्. ७. From
विवक्षितम् up to एतत्सामर्थ्यं the whole passage has been omitted by
E. ८. A. reads स्थितम् for स्मृतम्. ९. G. substitutes वा for च.

धर्मान् विभज्य तत्प्रमाणानि विभजते—

कृते तु मानवा धर्मास्त्रेतायां गौतमाः स्मृताः ।

द्वापरे श्राद्धलिखिताः कलौ पाराशराः स्मृताः ॥ २४ ॥

इति । मानवादिग्रन्थोक्तधर्माणां प्रचुरप्रवृत्त्या ग्रन्थ-
प्रामाण्यप्राचुर्यमर्थसिद्धम् ॥ २४ ॥

धर्मवदधर्मस्यापि वक्तुमिष्टत्वात्* अधर्मप्रापकं स्थानावि-
शेषं हेयतया विभजते—

त्यजेद्देशं कृतयुगे त्रेतायां ग्राममुत्सृजेत् ।

द्वापरे कुलमेकं तु कर्त्तारं तु कलौ युगे ॥ २५ ॥

इति । पतितः पुमान् प्राधान्येन यस्मिन् एकेन राज्ञा प-
रिपालिते ग्रामसमूहात्मिनि देशे निवसेत् स देशः सर्वो अपि कृते
सामर्थ्यात् अधर्मापादकः । एवं ग्रामेऽपि योज्यम् । कुलत्यागो
नाम पतितस्य कुले विवाह-भोजनाद्यप्रवृत्तिः कर्तव्यागः
सम्भाषणादिवर्जनम् ॥ २५ ॥

* केचन अधर्मो न वक्तव्य इत्याचक्षते । तेषां मते धर्मस्वरूपे उक्ते
तदतिरिक्तोऽधर्म इति पारिशेष्येणैव तदभिधानं भवतीति ।

१. Our reading coincides with A. and I., while B. C. E. F. G. read विवक्ष्य, D. विवक्षन्; and II. विविच्य for विभज्य. २. Here we take our reading from D., but A. and I. read तद्वत् प्रमाणानि; and all others तद्वत्प्रमा-
णानि for the simple तत्प्रमाणानि. ३. B. reads विवक्ष्यन्ते, C. and F. वि-
वक्ष्यते, E. and G. विवक्षयति, A. and I. विभज्यन्ते; and for विभजते. ४. A.
D. I. J. K. and L. read श्राद्ध—for श्राद्ध; M. takes singulars of the
plurals. ५. A. and I. read विभज्यते for विभजते. ६. Except A. D. and
I. all others omit पुमाश्च. ७. A. and D. omit प्राधान्येन. ८. A. substitutes
येन केन for एकेन. ९. E. H. and I. read परिपाल्यमाने instead of परिपा-
लिते; D. परिपालितग्रामः. १०. D. reads -समाहारात्मनि instead of -समूहात्मनि.

त्याज्यदेशवत् निमित्तान्यपि त्याज्यानि विभज्यते-

कृते सम्भाषणादेव त्रेतायां स्पर्शनेन च ।

द्वापरे त्वन्नमादाय कलौ पतति कर्मणा ॥ २६ ॥

इति । कृतादिष्विव कलौ पतितसम्भाषणादिना न स्वयं पतति । किन्तु वधादिनां कर्मणा पतितो भवति ॥ २६ ॥

महापुरुषतिरस्कारादौ तदीयशापपरिपाकहेतुं कालं विभज्यते-

कृते ताल्कालिकः शापः त्रेतायां दशभिर्दिनैः ।

द्वापरे चैकमासेन कलौ संवत्सरेण तु ॥ २७ ॥

इति ॥ २७ ॥

धर्मस्य तारतम्यापादकानि निमित्तानि विभज्यते-

अभिगम्य कृते दानं त्रेतास्वाहूय दीयते ।

द्वापरे याचमानाय सेवया दीयते कलौ ॥ २८ ॥

इति । यत्र प्रतिग्रहीता वर्त्तते तत्र दाता स्वयं गत्वा गुरु-
मिव तमभिगम्य कृते दानं करोति । त्रेतायां तु प्रतिग्रहीतार-
माहूयं तस्मै दीयते । त्रेतासु इति बहुवचनं कृत-द्वापरा-

१. B. C. and F. read विभज्यन्ते for विभज्यते. २. M. reads the verse as follows:—कृते सम्भाषणात् पापं त्रेतायां चैव दर्शनात् । द्वापरे चात्रमादाय कलौ पतति कर्मणा ॥ But it seems that none of the three commentators regard the reading. ३. C. D. and F. read पतितकर्मणा instead of पतति कर्मणा. ४. All except A. read -परिपाकहेतुकालं for -परिपाकहेतुं कालं. ५. We prefer this reading because it is reading of many, and secondly it seems though there is no commentation on the verse still नन्दपाडित seems to prefer this reading. A. I. J. K. and L. read तत्कालिकः for it, this also is the reading of धरणीधर; and D. reads तत्कालतः for the same; while M. has तु तत्क्षणात् for तात्कालिकः. ६. A. and J. omit तु.

दिषु जातवेदकवचनमिति प्रदर्शनार्थम् । द्वापरे स्वयमागत्य
याचमानाय प्रतिग्रहीत्रे दीयते । कलौ न याज्यामात्रेण
दीयते । किन्तु सेवया । बृहस्पतिरपि अमुं विभागमाह-

“ कृते प्रदीयते गत्वा त्रेतास्वानीयते गृहे ।
द्वापरे च प्रार्थयतः कलावनुगमान्विते ” ॥

इति ॥ २८ ॥

निमित्तकृतं तारतम्यं दर्शयति-

अभिगम्योत्तमं दानमाहूयैव तु मध्यमम् ।

अधमं याचमानाय सेवादानं तु निष्फलम् ॥ २९ ॥

इति । उत्तमत्वाद्यवान्तरविशेषः पुराणसारे फलद्वारेणोप-
पादितः ।

‘ गत्वा यत् दीयते दानं तदनन्तफलं स्मृतम् ।

सहस्रगुणमाहूय याचितं तु तदर्द्धकम् ॥

अभिगम्य तु यज्ञानं यद्वा दानमयाचितम् ।

विद्यते सागरस्यान्तः तस्यान्तो नैव विद्यते ’ ॥

इति ॥ २९ ॥

कलिधर्माणामस्मिन् ग्रन्थे प्राधान्येन वक्ष्यमाणत्वात्
कलिसामर्थ्यं विशेषतः प्रपञ्चयति-

जितो धर्मो ह्यधर्मेण सत्यं चैवानृतेन च ।

जिताश्चौरैश्च राजानः स्त्रीभिश्च पुरुषाः कलौ ॥ ३० ॥

१. A. and I. omit सीयते. २. M. reads आहूतश्चैव मध्यमम् for आहूयैव
तु मध्यमम्. ३. G. याच्यमाहं स्यात् instead of याचमानाय. ४. H. च for तु.
५. M. reads धर्मो जितो ह्यधर्मेण instead of जितो धर्मो ह्यधर्मेण, C. and F.
जिता धर्मस्त्वधर्मेण for the same. ६. D. जितः सत्यो ऽनृतेन च for सत्यश्चै-
वा ऽनृतेन च. ७. M. substitutes मृत्यैः for चौरैः. ८. A. substitutes तु for
च. ९. M. replaces कलौ by जिताः.

सीदन्ति चाग्निहोत्राणि गुरुपूजा प्रणश्यति ।
कुमार्यश्च प्रसूयन्ते अस्मिन् कालियुगे सदा ॥ ३१ ॥

इति । अधर्मस्य जयो नाम् पादत्रयेपेतत्त्वम् । एकेन ।
पादेन वर्त्तमानत्वं धर्मस्य पराजयः । तदाह बृहस्पतिः—

‘तिष्ठे धर्मस्त्रिभिः पादैर्धर्मः पादेन संस्थितः’ ।

इति । सत्यानृतयोर्धर्माधर्मरूपत्वेऽपि पृथगुपग्रादानं धर्मा-
धर्माविदाहृत्य प्रदर्शनार्थम् । यावत् यावत् कलिविवर्द्धते
तावत्तावदधर्मो विवर्धत इति त्रिवक्ष्या चोत्पाद्यदाहरणवा-
हुल्यम् । तदुक्तं विष्णुपुराणे—

‘यदा यदा सतां हानिर्वेदमार्गानुसारिणाम् ।

तदा तदा कलेर्वृद्धिरनुमेया विचक्षणैः ॥

न प्रीतिर्वेदवादिषु पाषण्डेषु दयारसः ।

तदा तदा कलेर्वृद्धिरनुमेया द्विजोत्तमैः’ ॥

(वि. पु. ६. १. ४५-४६)

इति ॥ ३०-३१ ॥

यदुक्तं ‘तपः परं कृतयुगे’ इत्यादि तत्र हेतुमाह—

१. A. B. C. E. F. G. H. I. and M, read तस्मिन् for अस्मिन्; while D. reads कस्मिन्. २. C. D. F. and G. have only one यावत् followed by only one तावत्; B. repeats यावत् but not तावत्. ३. C. and G. read द्विजोत्तमैः for विचक्षणैः, this appears to be a mistake of the writer who has mistaken अनुमेया in the second verse for that of the first verse, and consequently has passed over the second verse altogether. ४. D. reads सदा रतिः for दयारसः. ५. For द्विजोत्तमैः D. reads विचक्षणैः.

कृते त्वस्थिगताः प्राणास्वेतायां मांसमाश्रिताः ।

द्वापरे रुधिरं चैव कलौ त्वन्नादिषु स्थिताः ॥ ३२ ॥

इति । प्राणशब्दो वायुविशेषं वृत्तिपञ्चकोपेतं हृदयादि-
स्थाननिवासिनमाचष्टे । प्राणस्वरूपं च मैत्रेयैशाखायां विस्पष्टं
श्रूयते—

‘पञ्जापातेवा एको ऽग्रं ऽर्तष्टत् स नारमतैकः स आत्मान-
मभिध्यायन् बह्वीः प्रजा असृजन । ता अश्मेवाऽप्रवृद्धा अप्राणाः
स्थाणुरित् सन्तिष्ठमानाः सो ऽपश्यत् । स नारमत सो ऽमन्यत
एतासां प्रतिबोधनायाभ्यन्तरं विशानि इति । स वायुमिवात्मानं
कृत्वा ऽभ्यन्तरं प्राविशत् स एको नादात्मकं पञ्चधा ऽऽत्मानं प्र-
विभज्योच्यते । यः प्राणो ऽपानः समान उदानो व्यान इति । अथ
योयमतिर्यग्धूर्ध्वमुत्क्रामयति एष वाव स प्राणः । अथ यो ऽयम-
वाश्च संक्रामति एष वाव सो ऽपानो ऽथ यो ऽयं स्थविष्ठमन्नधानु-
मपाने स्थापयति अणिष्ठे चाङ्गे समं नयति एष वाव समानो ऽथ
यो ऽयं पीताशितमुद्गिरति निगिरति एष वाव स उदानो ऽथ
येनैताः शिरा अनुव्याप्ता एष वाव स व्यानः’ ।

(मै. उ. २. ६)

इति । अश्मेव पाषाणवदित्यर्थः । वाक्-चक्षुरादीनीन्द्रिया-

१. M. places this verse before the two previous verses ३० and ३१ of the original that is before जितोऽधर्मो, &c, reading-कृते चास्थिगताः, मांससं-स्थिताः, रुधिरं यावत् and कलावन्नादिषु. २. II. reads -निवास' for -निवासिनं. ३. All except A. and D. read मैत्रेय- for मैत्रेय - ४. B. C. E. and F. ऽमे अतिसत्, G. ऽमेऽतिसत्, H. ऽमे निवसत् and D. ऽमे अतिष्ठत्; all for ऽमे अतिष्ठत्.

प्यपि प्राणोधीनव्यापारत्वात् प्राणशब्देन व्यवहियन्ते । अत एव छन्दोगा आमनन्ति—

‘न वै वाचो न चक्षुषि न श्रोत्राणि न
मन्त्रांसीत्याचक्षते प्राण इत्येवाचक्षते’ ।

(छां. उ. ६. १. १६)

इति ।

तस्मात् इन्द्रिय-वायुसमूदायरूपं लिङ्गशरीरं लोकान्त-
रगमनागमनक्षमं प्राणशब्देन विवक्षितम् । तच्च अस्थि-
मांसादिमये स्थूलशरीरे कर्मरज्जुभिर्निबध्यते । तच्च बन्धनं
तत्तद्युगसामर्थ्यादस्थ्यादिषु व्यवतिष्ठते । तथा च कृच्छ्र-चा-
न्द्रायणाद्यर्थ आहारपरित्यागात् मांसाद्यपक्षयेऽप्यस्थनां सह-
साऽनुपक्षयात् प्राणानामव्याकुलतेति कृतयुगे तपः सुकरम् ।
त्रेतादिषु मांसाद्यपक्षयेण प्राणानां व्याकुलत्वात् तपो दुष्करम् ।
यद्यपि प्राणानां मांसाद्याश्रयेण ज्ञानादिषूपयोगविशेषो दुर्भगः ।
तथापि तपसोऽसम्भवं वक्तुं तद्वर्णनम् । अत एव कूर्मपुराणे
युगान्तराभिप्रायेण तपोऽन्तरं वर्णितम्—

१. D. reads प्राधान्य- for प्राणार्धनि-. २. H. reads व्यापारवत्त्वात् instead of व्यापारत्वात्. ३. A. and I. read -गमनक्षमं instead of -गमनागमनक्षमं. ४. B. C. F. and I. -विवध्यते, and E. G. H. simply -बध्यते for -निबध्यते. ५. G. and H. read तत्र for तच्च, as also B. C. and F. ६. B. C. and F. read merely -युगसामर्थ्यादिषु instead of -युगसामर्थ्यादस्थ्यादिषु. ७. A. and I. read -चान्द्रायणादिषु अन्नाद्याहार- for -चान्द्रायणाद्यर्थ आहार-. ८. A. and I. read मांसाद्यपक्षये for मांसाद्यपक्षये; D. reads for the same मांसाद्यपक्षया. ९. A. and H. read -द्युपक्षयेण instead of -द्युपक्षयेण. १०. B. C. and F. read ज्ञानादिरूपयोगविशेषो; and E. G. H. ज्ञानाद्युपयोगविशेषो for ज्ञानादिरूपयोगविशेषो. ११. I. reads दुर्भगः for दुर्भगः.

‘अहिंसा सत्यवचनमानृशंस्यं दमो घृणा ।

एतत्तपो विदुर्धीरा न शरीरस्य शोषणम् ’ ॥

(म. भा. शां. रा. ७९. १८)

इति ॥ ३२ ॥

इदानीं युगसामर्थ्यवर्णनस्य प्रयोजनमोह—

युगे युगे च ये धर्मास्तत्र तत्र च ये द्विजाः ।

तेषां निन्दा न कर्त्तव्या युगरूपा हि ते द्विजाः ॥ ३३ ॥

इति । युगरूपाः युगानुरूपाः कालपरतन्त्रा इति यावत् ।
तेदुक्तमारण्यपर्वणि—

‘भूमिर्नद्यो नगाः शैलाः सिद्धा देवर्षयस्तथा ।

कालं तमनुवर्तन्ते यथा भावा युगे युगे ॥

कालं कालं समासाद्य नराणां नरपुङ्गव ।

बल-वर्त्म-प्रभावादि प्रभवन्त्युद्भवन्ति च ’ ॥

इति ॥ ३३ ॥

ननु—एवं कलौ पापिनामनिन्द्यत्वात् कृत्स्नधर्माधर्म-
व्यवस्थापकं शास्त्रं विप्रवेत । तथा हि—

‘जितो धर्मो ह्यधर्मेण’

(पः स्मृ. १. ३०)

१. A. reads तपो घृणा instead of दमो घृणा. २. B. C. and F. read तत्र हि ते, and E. G. H. तत्र हि ये ; both for तत्र च ये. ३. A. reads यदुक्तं for तदुक्तं. ४. A. and I. read -गाश्चेते instead of -गाः शैलाः, and कालं तमनुवर्तन्ते for कालं तमनुवर्तन्ते; II. for the same कालान्तमनुवर्तन्ते. ५. A. and I. read तथा for यथा. ६. For the first कालं D. reads काले. ७. A. and I. read नरपुङ्गवः instead of नरपुङ्गव. ८. A. and I. read बल-वर्त्म- for बल-वर्त्म-. ९. A. D. and I. read -प्रभावा हि instead of -प्रभावादि. १०. Except B. all others read कृत्स्नं धर्माधर्म- for कृत्स्नधर्माधर्म-. ११. All except H. read -व्यवस्थापकशास्त्रं for -व्यवस्थापकं शास्त्रं. १२. B. C. and F. omit हि.

इति यदुक्तं तत्र 'धर्मं चर' (नै. उ. ११, १.) इति
श्रूयमाणो विधिः पीडयेत् ।

'नास्ति सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम् ।

स्थितिर्हि सत्ये धर्मस्य तस्मात् सत्यं न लोपयेत् । ॥

इति राजधर्मेषूक्तम् । तच्च अनृतस्यानिन्द्यत्वे बाध्येत ।

'अदण्डयान् दण्डयन् राजा दण्ड्यांश्चैवाप्यदण्डयन् ।

अयगो मुहृदाप्नोति नरकं चैव गच्छति । ॥

(म. स्म. ८. ३२८)

इति वचनं चोरस्यानिन्द्यत्वे बाध्येत् ।

'स्त्रीभिर्भर्तृवचः कार्यमेष धर्मः परः स्त्रियाः ।

(या. स्म. १. ७७.)

इति याज्ञवल्क्योक्तिः—

'भर्तारं लङ्घयेद् या नु स्त्री ज्ञातिगुणदर्पिता ।

तां श्रभिः खादयेद्राजा संस्थाने बहुसंस्थिते । ॥

(म. स्म. ८. ३७१.)

इति मनूक्तिः—

'परित्याज्या त्वया भार्या भर्तुर्वचनलङ्घिनी ।

तत्र दोषो न चास्तीति त्वं हि वेत्थ यथातथम् ॥

१. All except A. and I. read चरत् for चर. २. D. reads simply इति
यत् omitting the following :—राजधर्मेषूक्तम्. ३. D. बाध्यते for बाध्येत.
४. D. reads प्रति in the place of चैव. ५. D. adds राजधर्मेषूक्तं after
इति and before वचनं, and again बाध्यते for बाध्येत. ६. D. याज्ञवल्क्योक्तिः
for याज्ञवल्क्योक्तिः. ७. B. C. and F. add अपि after मनूक्तिः. D. reads
मनूक्तिः. ८. B. reads तु या ; D. च या for स्वया. ९. Except A. D. and
I. all others read वेत्सि for वेत्थ.

सर्वलक्षणयुक्तापि या तु भर्तुर्न्यतिक्रमम् ।

करोति सा परित्याज्येत्येष धर्मः सनातनः ॥

इति ब्रह्मपुराणे महर्षीणामुक्तिः । तदिदमुक्तित्रयं स्त्री-
जितेस्य अनिन्दायां बाधितं स्यात् । अच्छिद्रकाण्डे अग्निहोत्र-
प्रायश्चित्तं बह्व्या भुतम् । आश्रमेधिके पर्वणि चैवाप्युक्तम् ।

‘होतव्यं विधिवद्राजन् ऊर्वाभिच्छति यो गतिम् ।

आजन्मसत्रमेतत् स्यादग्निहोत्रं युष्मिष्ठिर ॥ (८८)

न त्याज्यं क्षणमप्येतद् गृहीतव्यं द्विजातिभिः । (८९)

यच्चैतन्न्यं पृथिव्यां हि किञ्चिदस्ति चराचरम् ॥

तत् सर्वमग्निहोत्रस्य कृते सृष्टं स्वयम्भुवा ॥ (९६)

भावबुध्यन्ति ये चैवं नरास्तु तमसा ऽऽवृताः ।

तं यान्ति नरकं घोरं रौरवं नाम विश्रुतम् ॥ (९९)

(वृ. गौ. स्मृ. १५)

इति । तदेतत् श्रुति-स्मृतिद्वयमग्निहोत्रावसादस्यानिन्दायां
बाध्येत ।

‘गुरोरनिष्टाचरणं गुरोरिष्टविवर्जनम् ।

गुरोश्च सेवाऽक्षरणं ज्ञानानुत्पत्तिकारणम् ॥

१. D. reads परित्याज्या ह्येष for परित्याज्येत्येष. २. D. reads only तदि-
दमुक्तं omitting त्रय. ३. We read with H.; all others read स्त्रीविजयस्य
for स्त्रीजितस्य. ४. A. B. and E. read आश्रमेधिकपर्वणि instead of
आश्रमेधिके पर्वणि. ५. A. and I. read -भिच्छन्ति ये for -भिच्छति यो.
६. Except A. and D. all read आजन्मसत्रमेतत् for आजन्मसत्रमेतत्;
D. आजन्मसत्र-. ७. For यच्चैतन्न्यं B. C. and E. यज्जेतन्न्यं, E. यज्जेतन्न्यं,
and G. H. यज्जेतन्न्यं. ८. B. C. and E. चैनं for चैवं; A. D. G. I.
चैतन् for the same; and F. चैतं. ९. A. omits तदेतत्. १०. H. and I.
read simply स्मृतिद्वय-.

आचार्यनिन्दाश्रवणं तद्वाधस्य* च दर्शजम् ।

विवादश्च तथा तेन ज्ञानानुत्पत्तिकारणम् ॥

इति स्कन्दपुराणवचनम् । एतच्च गुरुपूजाप्रणाशस्य अनि-
न्दायां बाध्यते ।

‘प्रप्तिं तु द्वादशे वर्षे यः कन्यां न प्रयच्छति ।

मासि मासि रजस्तस्याः पिनां पिबति शोणितम्’ ॥

(य. स्मृ. २२)

इति यमवचनम् ।

‘पितुर्गृहे तु या कन्या रजः पश्यत्यमस्कृता ।

भूणहत्या पितुस्तस्याः सा कन्या यपत्नी स्मृता’ ॥

(वि. स्मृ. २.४. ४१.)

इति वचनम् । एतदुभयं कुमारीप्रसूवस्यानिन्दायां बाध्यते ।

ततः कथमनिन्दा? इत्यत आह--

युगे युगे तु सामर्थ्यं शेषं मुनिविभाषितम् ।

पराशरेण चाप्युक्तं प्रायश्चित्तं विधीयते ॥ ३४ ॥

इति । शेषं अवशिष्टं तत्तद्युगमामर्थ्यं मुनिभिरन्यैर्विगे-
षेण भाषितम् । तथा चारण्यपर्वणि पठ्यते-

‘कृतं नाम युगं श्रेष्ठं यत्र धर्मः सनातनः ।

कृतमेव न कर्त्तव्यं तस्मिन् काले युगात्तमे’ ॥ (११)

*बाधः परिभवः । कश्चित् ‘तद्वाधस्य’ इत्यपि पाठः ।

१. A. and I. स्कान्दपुराण- for स्कन्वपुराण. २. A. and D. substitute
‘युगपूषा’- for -पूजा-. ३. All except A. and I. read प्राप्ते द्वादशमे instead
of प्राप्ते तु द्वादशे. ४. A. D. and H. read तस्य for तस्याः. ५. All except
D. read तदुभयं; while B. तदीय. ६. D. reads धर्माः सनातनाः instead
of धर्मः सनातनः.

न तु ब्रह्मर्माः सीदन्ति न क्षीयन्ते च वै प्रजाः ।
 ततः कृतयुगं नाम कालेन गुणतां गतम् ॥ (१२)
 कृते युगे चतुष्पादः श्वेतवर्णः स चाच्युतः ।
 एतत् कृतयुगं नाम त्रैगुण्यपरिवर्जितम् ॥ (२२)
 पादेन ऋसते धर्मो रक्ततां याति चाच्युतः ॥ (२३)
 सत्यप्रवृत्ताश्च नराः क्रियाधर्मपरायणाः ।
 ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते धर्म्यश्च विविधाः क्रियाः ॥ (२४)
 स्वधर्मस्थाः क्रियावन्तो जज्ञास्त्रेतायुगे भवन् । (२६)
 दिष्णुः पीतत्वमायाति चतुर्धा वेद एव च । (२७)
 सत्यस्य इह विभ्रंशः सत्ये कश्चिदवस्थितः ।
 सत्यात् प्रच्यवसानानां व्याधयो बहवो भवन् ॥ (३०)
 कामाश्चोपद्रवाश्चैव तथा दैवतकारिताः । (३१)
 कामकामा ह्यर्थकामा यज्ञास्तन्वन्ति चापरे ।
 एवं द्वापरमासाद्य प्रजाः क्षीयन्त्यधर्मतः ॥ (३२)
 पादेनैकेन कौन्तेय धर्मः कलियुगे स्थितः । (३३)
 वेदाचारः प्रशाम्यन्ति धर्म-यज्ञक्रियास्तथा ।
 ईतयो व्याधयस्तन्त्री दोषाः क्रोधादयस्तथा ॥ (३४)

(म. भा. व. १४९. ११-३४)

१. A. and I. substitute जीयन्ते for क्षीयन्ते. २. B. C. E. F. G. and H. read चतुर्वर्ण्यश्च शाश्वतः; whose correct form appears to be चतुर्वर्ण्यं च शाश्वतम्, to be found in A. I. When we read in the next but one line, we think we are justified in adopting the reading in the text. ३. A. omits the whole line. ४. A. reads सत्ये नाऽस्त्येव विभ्रंशो; and E. G. H. सत्यस्य इह विभ्रंशो; for सत्यस्य इह विभ्रंशः. ५. B. and H. read कामाश्चोपद्रवाश्चैव instead of कामाश्चोपद्रवाश्चैव. ६. B. C. E. F. G. and H. धर्मा यज्ञ- for धर्म-यज्ञ-. ७. A. reads आधयो for ईतयो.

इति । तत्रैव—

‘ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः सङ्कीर्यन्तः परस्परम् ॥ (१७)

शूद्रतुल्या भविष्यन्ति तपःसत्यविवर्जिताः ।’ (१८)

स्वभावात् क्रूरकर्माणश्चान्योन्यनभिषाङ्गिनः ॥ (१६)

भक्तितापो नराः सर्वे सम्प्राप्ते युगसङ्गते ।’ (१७)

(म. भा. व. १९०. १७-१७)

इत्यादि । ब्रह्मपुराणे अपि—

‘दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं धारणं च कमण्डलोः* ।

गोत्रान्मातुः सपिण्डात्तु विव्राजो गोवधस्तथा ॥

नराऽश्वमेधौ मद्यं च कलौ वज्र्यं द्विजातिभिः’ ।

इति । क्रतुरपि—

‘देवराच्च† सुतोत्पत्तिर्दत्ता कन्या न दीयते ।

न यज्ञे गोवधः कार्यः कलौ न च कमण्डलुः’ ॥

* एतद्वचनमारभ्य ‘निर्वर्तितानि कर्माणि’ (पृ. १३७ पं. १०) इत्यन्तानि वाक्यानि बहुभिर्निबन्धकारैः कलिवज्र्यप्रकरणत्वेन तत्र तत्र सङ्गृहीतानि दृश्यन्ते । कुत्रचित् पञ्चैव कर्माणि वज्र्याभ्युक्तानि कुत्रापि बहून्विति भेदः । तानि च मुखावबोधार्थं सङ्क्षेपेण व्याख्यास्यामः । कमण्डलोर्धारणमुक्तं व्यासेन, स्नातकव्रतेशु—

‘यज्ञोपवीतद्वितयं सोदकं च कमण्डलुम्’ ।

इति । एतादृशः मृण्मयो वा कमण्डलुः ।

† देवरात् सुतोत्पत्तिस्तु—

१. -मविशङ्किताः is that of II., for -मभिषाङ्गिनः; these three lines beginning with ब्राह्मणा- are omitted by A. २. A. and G. read दीर्घकालब्रह्मचर्यं for दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं. ३. Except E. and II. all others read वज्र्या for वज्र्यं. ४. B. C. E. F. and H. reverse the order of न and च.

इति । वायुपुराणे अपि—

‘ऊढायाः पुनरुद्वाहं* ज्येष्ठांशं गोवधं तथा ।

कलौ पञ्च न कुर्वीत भ्रातृजायां कमण्डलुम्’ ॥

इति । तथा अन्ये अपि धर्मज्ञसमयप्रमाणकाः सन्ति । यथा—

‘विधवायां प्रजोत्पत्तौ देवरस्य नियोजनम् ।

‘बालिका-ऽक्षतयोन्याश्च वर्णान्येन संस्कृतिः ॥

कन्यानामसवर्णानां विवाहश्च द्विजातिभिः ।

आतदायिद्विजाभ्याणां धर्मयुद्धे न हिंसनम् ॥

‘अपुत्रां गुर्वनुज्ञातो देवरः पुत्रकाम्यया ।

सुपिण्डो वा सगोत्रो वा घृताभ्यक्त ऋतावियात्’ ॥

इत्यादिवचनैरुक्ता व्यासादिभिराचरिता चेति ज्ञेयम् ।

ऊढाया अपि कन्यायाः पत्न्यौ मृते सति पुनरुद्वाह उक्तः । यथा—

‘पुरा पुरुषसंयोगात् मृते देयेति केचन’ ।

इति ।

† हेमाद्रौ. ‘बालायाः क्षतयोन्यास्तु’ इति पठ्यते । अयमेव पाठो युक्त इति प्रतीमः । ‘बालिका-ऽक्षतयोन्योः’ इति द्विवचनान्तत्वात् द्वन्द्वे कृते, बालिकाशब्दस्य नकोऽप्यर्थविशेषः सम्पद्यते । अनेन क्षतयोन्या अपि पूर्वस्मिन् युगे विवाहो विहित आसीदिति गम्यते । अन्यथा निषेधस्य वैयर्थ्यापातात् ।

१. Except D. ‘all’ other merely पुराणेऽपि for वायुपुराणेऽपि. २. B. reads ज्येष्ठांशो गोवधस्तथा and II. ज्येष्ठांशं गोवधस्तथा. ३. D. कमण्डलुः for कमण्डलुम्. ४. G. reads धर्मज्ञे instead of धर्मज्ञ-. ५. A. and I. omit यथा. ६. All except A. substitute संस्कृतिः for संस्कृतिः.

द्विजस्याब्धौ तु नौयातुः शोधितस्यापि* सङ्ग्रहः ।
 सत्रदीक्षां च सर्वेषां कमण्डलुविधारणम् ॥
 महाप्रस्थानगमनं† गोसंज्ञमिश्र गोसवे ।
 सौत्रामण्यामपि‡ सुराग्रहणस्य च संग्रहः ।
 अग्निहोत्रहवण्याश्च§ लेहो लीढापरिमहः ।
 वानप्रस्थाश्रमस्यापि प्रवेशो विधिचोदितः ॥
 वृत्त-स्वाध्यायमापेक्षमयसङ्कोचनं तथा¶ ।
 प्रायश्चित्तविधानं च विप्राणां मरणान्तिकम् ॥
 भंसर्गदोषः स्नेनाद्यैर्महापातकनिष्कृतिः ।
 वरातिथि-पितृभ्यश्च पशुपाकर्षणक्रिया ॥

शोधितस्य कृतप्रायश्चित्तस्य ।

। एतच्च मनुनोक्तम् । यथा—

‘अपराजितां वास्थाय ब्रजेदिशमजिह्वगः । आनिपाताच्छरीरस्य
 युक्तो वार्यनिलाशनः’ ॥

। अत्र सुराग्रहस्यैव निषेधात् ‘पयोग्रहा वा स्युः’ इत्यापस्तम्बोक्तेः
 भुराग्रहस्य वैकल्पिकत्वात् पयोग्रहैः सौत्रामण्यानुष्ठाने न दोष इति
 सुधीभिरुक्तम् ।

§ अग्निहोत्रहवनी यज्ञपात्रविशेषः । तत्र स्थितस्य हविषो लेह उक्तः ।

¶ वृत्तं यायावर-गृहस्थादाचारः । स्वाध्यायो वेदः, तदध्ययनं वा ।
 अद्य आशीचम् ।

१. A. D. E. G. H. and I. read निर्वाणं and B. C. F. निर्वाणः
 both for नौयातुः. २. D. substitutes वयी- for सत्र. ३. D. E. and
 G. substitute न for च. ४. G. and I. -हवण्याः for -हवण्याः. ५. B. C. D.
 E. and F. read लीढ-परिमहः for लीढापरिमहः ; A. reads लीढो-लेढापरिमहः
 for लेहो लीढा परिमहः. ६. B. C. and F. read पशुपाकर्षणी क्रिया for
 पशुपाकर्षणक्रिया.

दत्तैरसंतरेषां तु पुत्रत्वेन परिग्रहः ।
 सवर्णान्याङ्गनादुष्टौ संसर्गः शोधितैरपि ॥
 अयोनौ सङ्गहे वृत्ते परित्यागो गुरुस्त्रियाः ।
 अस्थिसन्ध्यानादूर्ध्वमङ्गस्पर्शनमेव च ॥
 शांमित्रं[†] चैव विप्राणां सोमविक्रयणं तथा[‡] ॥
 षड्भक्तानशनेनान्नहरणं[§] हीनकर्मणः^{||}
 गूत्रेषु दास-गोपाल-कुलमित्रा-^{||}र्द्धसमिरीणाम् ।
 भोज्यान्नता गृहस्थस्य तीर्थसेवाऽनिदूरतः ॥
 शिष्यस्थ गुरुदारेषु गुरुवद्वृत्तिगीरिता ।
 आमद्वृत्तिर्द्विजाभ्याणामश्वस्तनिकता तथा ॥
 प्रजार्थं तु द्विजाभ्याणां प्रजाश्रणिपरिग्रहः ।
 ब्राह्मणानां प्रवासित्वं मुखाग्निधमनक्रिया ॥

* अत्रेदमधिकं हेमाद्री—

भरोद्देशाभ्यसन्त्याग उद्दिष्टस्यापि वर्जनम् ।

प्रतिमाभ्यर्चनार्थाय सङ्कल्पश्च सधर्मकः[†] ॥ इति ।

† शमित्रा यज्ञीयपशुहिंसकः तस्य कर्म शांमित्रम् ।

‡ षड्दिनपर्यंतमलब्धाहारेण सप्तमे दिने हीनकर्मणोऽपि ग्राह्यम् ।

यथा—

‘तथैव सप्तमे भक्ते भक्तानि षडनश्नता ।

अश्वस्तनविधानेन हर्तव्यं हीनकर्मणः’ । इति ।

१. A. B. C. D. E. and F. read सवर्णानां तथा दुष्टैः for सवर्णान्याङ्ग-
 नादुष्टौ. २. D. C. D. and F. read सयोनौ for अयोनौ. ३. Except E.
 G. H. and I. all others read षड्भुक्ता for षड्भक्ता. ४. D. reads
 षड्भुक्ता for हरणम्.

बलात्कारादिदुष्टस्त्रीसङ्ग्रहो विधिचोदितः ।
 यतेस्तु सर्ववर्णेषु भिक्षाचर्या विधानतः ॥
 नवोदके दशाहं* च दक्षिणा गुरुचोदिता ।
 ब्राह्मणादिषु शूद्रस्य पचनादिक्रियापि च ॥
 भृक्कम्पितनैश्चैव वृद्धादिमरणं तथा ।
 गोतृप्तिमात्रे पयसि शिष्टैराचमनीक्रिया ॥
 पिता-पुत्रविरोधेषु† साक्षिणां दण्डकल्पनम् ‡
 यत्र सायंगृहत्वं च सूरिभिस्तत्त्वैतत्परैः ॥
 एतानि लोकगुह्यार्थं कलेरादौ महात्मभिः ।
 निवर्तितानि‡ कर्माणि व्यवस्थापूर्वकं बुधैः ॥
 समयश्चापि साधूनां प्रमाणं वेदवद्भवंत् ॥१॥

* 'दशाहेनैव शुद्धयेन भूमिष्ठं च नवोदकं' इत्युक्तो दशाहो ज्ञानु-
 सन्धेयः ।

† पिता-पुत्रविवादे तु साक्षिणां त्रिपणो दमः' इत्यादिनोक्तः ।

‡ एतानि कर्माणि निवर्तितानि । तथापि देवलेन 'यावद्वर्णविभागो-
 ऽस्ति यावद्देदः प्रवर्तते । संन्यासं चाग्निहोत्रं च तावत्कुर्यात्कलौ युगे' ॥
 इत्यादिना व्यवस्थोक्ता ।

§ इमान्युपरितनानि वचनानि कुत्रन्यानीति सम्यङ् न जायते । हेमाद्रौ
 आदिशंपुराणान्तर्गतानीति मदनपारिजाते सारसङ्ग्रहस्थानीति कचित्
 देवलवचनानीति चोक्तम् । मूलं तु न कुत्रापि दृश्यते ।

१. D. substitutes एतेषु for यतेस्तु. २. A. and I. reads -वर्णैः-यः for
 -वर्णेषु. ३. A. and I. read -पतनाद्यैश्च, G. -तपनैश्चैव for -पतनैश्चैव. ४. All
 except D. read गोतृप्तिशिष्टे, and D. गोतृप्तिमृष्टे; for गोतृप्तिमात्रे. ५. A.
 reads यतेः सायंगृहस्थत्वं, and all others except II. and G. यत्र सायं
 गृहस्थत्वं for यत्र सायंगृहस्थत्वं च. We read with H. and G. ६. D. substi-
 tutes तत्त्वैर्गर्भिणः- for तत्त्वैतत्परैः.

इति । तदुक्तमापस्तम्बेनापि— 'धर्मज्ञसमयः प्रमाणं वेदाश्च' (आ. ध. सू. १. २) इति । एवमन्यदप्युदाहार्यम् । यथा मुनिभिस्तत्तद्युगसामर्थ्यं विधि-निषेधाभ्यां विशेषेण भाषितम् । तथा विहितातिक्रम-निषिद्धाचरणयोः प्रायश्चित्तमपि चिरन्तनेन पराशरेणोक्तम् । पठ्यन्ते हि वृद्धपराशरस्य वृचभानि—

‘जरायुजोऽण्डजाश्चैव जीवाः संस्वेदजाश्च ये ।
अव्याः सर्वे एवैते बुधैः समनुवर्णितम् ॥
निश्चयार्थं विबुद्धानां प्रायश्चित्तं विधीयते ।
अनस्थिशतमेकं तु यदि प्राणैर्वियोजयेत् ॥
उपोष्यैकाहमादध्यान् प्राणायामांस्तु षोडश ।
त्रिःस्थानमुदक्ते कृत्वा तस्मात् पापात् प्रमुच्यते ॥
अस्थिमद्वधे तु द्विगुणं प्रायश्चित्तं विधीयते ।
अनेन विधिना वाऽपि स्थावरेषु न संशयः ॥
कायेन पञ्चां हस्ताभ्यामपराधाद्विमुच्यते ।
चतुर्गुणं कर्मरुते द्विगुणं वाक्यदूषिते ॥
कृत्वा तु मानसं पापं तथैवैकगुणं स्मृतम् ।

इति । चकारो याज्ञवल्क्य-मन्वादिरुच्चयार्थः । प्रसिद्धा हि तदीयग्रन्थेषु प्रायश्चित्ताध्यायाः । पराशरग्रहणं तु

१. D. reads चिरन्तरेण for चिरन्तनेन. २. B. C. D. and F. read जरायुजोऽण्डजाश्चैव, and G. जरायुजोऽण्डजाश्चैव for जरायुजाऽण्डजाश्चैव. ३. D. continues जीवा यः स्वेदजाश्च यः instead of जीवाः संस्वेदजाश्च ये. ४. B. C. E. F. and G. read सर्वे एवैते for सर्वे एवैते. ५. A. reads अनस्थि-मल्पमेकं तु for अनस्थिशतमेकं तु. ६. Except A. and I. all others read षोडश instead of षोडश. ७. E. reads अस्थिमद्वधेषु, and H. अस्थिवद्वधेषु ; for अस्थिमद्वधे तु. ८. All except A. and E. read न मुच्यते, E. तमुच्यते ; for विमुच्यते. ९. A. D. H. and I. read वाक्यदूषिते for वाक्यवृषिते.

कलियुगाभिप्रायम् । सर्वेष्वपि कल्पेषु पराशरस्मृतेः कलि-
युगधर्मपक्षपातित्वात् । प्रायश्चित्तेष्वपि कलिर्विषयेषु पराशरः
प्राधान्येनादरणीयः । अतः पराशर-मन्वादिप्रोक्तं प्रायश्चित्तं
तत्तत्पापपरिहाराय विद्वत्पट्टिषदा विधीयते । एतदुक्तं भवति ।
नानामुनिभिस्तु तद्युगसामर्थ्यस्य प्रायश्चित्तस्य च प्रपञ्चितत्वात् ।
तदुभयं पर्यालोच्य निन्दाऽनिन्दयोः व्यवस्था कल्पनीया ।
यः पुरुषो युगसामर्थ्यमनुसृत्य विहितानुष्ठानं प्रतिविद्भवर्जनं
प्रमादकृतपापस्य प्रायश्चित्तं च कर्तुं शक्नोति न कुर्यात्
तद्विषयाणि—

‘भृणहत्या पितुस्तस्याः सां कन्या नृषली स्मृता ’ ।

(वि. स्मृ. ३४: ४१)

इत्यादि निन्दावचनानि । अशक्तविषयं ‘तेषां निन्दा न
कर्तव्या’ इत्यादि वचनम् । अत एव शैवागमे पठ्यते—

‘अत्यन्तरोगयुक्ताऽद्भ-राज-चोरभयादिषु ।

गुर्वग्नि-देवकृत्येषु नित्यहानौ न पपभाक्’ ॥

इति । तस्मात् न कोऽपि धर्मशास्त्रस्य विप्लवं इति ॥३४॥

ननु—उक्तप्रकारेण युगसामर्थ्यस्याशेषस्यानेकग्रन्थपरि-
चयमन्तरेण दुर्बोधत्वात् कथं मन्दप्रज्ञानामल्पायुषां युगसाम-
र्थ्यानुसारिणश्चातुर्वर्ण्यसमाचारस्य निर्णयः ? इत्यत आह—

१. Between कलि- and विषयेषु, A. and I. insert -युग-. २. D. substitutes
-नानुसरणीयः for -नादरणीयः. ३. Except B. C. and F. all others omit च.
४. G. E. and H. read निन्दानिन्दयोः for निन्दानिन्दयोः. ५. D. reads
व्यवस्थाः कल्पनीयाः for the singulars. ६. All except A. and I. -कृतपापप्रा-
यश्चित्तं for -कृतपापस्य प्रायश्चित्तं. ७. A. and I. read -युक्तऽङ्गे, D.
-युक्ताङ्गे and H. -युक्ताङ्गे, for -युक्ताङ्ग-. ८. All except H. read धर्मधर्म-
शास्त्रस्य instead of simply धर्मशास्त्रस्य.

अहंमद्यैव तत् सर्वमनुस्मृत्य ब्रवीमि वः ।

चातुर्वर्ण्यसमाचारं शृण्वन्तु ऋषिपुङ्गवाः ॥ ३५ ॥

इति । अनुस्मृतस्य सर्वस्य सङ्कल्पग्याभिधानात् मन्दानामप्येतत् सुग्रहम् । 'अद्यैव'—इति कालविलम्बनिषेधात् अल्पायुषामप्यत्र ग्रन्थे निर्णयः सुलभः । चत्वारो वर्णाश्चातुर्वर्ण्यम् । तस्य समाचारो धर्मः । आचारशब्दः शीलपरपर्यायं लौकिकं वृत्तमाचष्टे । समीचीनः शिष्टाभिगत आचारो यस्य धर्मस्य कारणत्वेन वर्तते सोऽयं यजन-याजनादिकर्म-लक्षणो धर्मः समाचारः । अत एव आचार-धर्मयोर्हेतु-हेतुमद्रूपेण भेदं वक्ष्यति । 'आचारो धर्मपालकः' (प. स्मृ. १. ३७) इति । श्रुतिश्च धर्माचारौ भेदेन व्यपदिशति—

‘यथाकारी यथाऽऽचारी तथा भवति ।’

(वृ. उ. ४.४.५)

इति । श्रुत्यन्तरे च कर्म-वृत्तयोर्भेद आघ्रायते—

‘अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्’

(तै. उ. १.११.३)

—इति । यद्यपि—

‘शृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि शृण्वन्तु मुनिपुङ्गवाः’ ।

इत्यप्रमत्तत्वं पूर्वमेव उदितं तथापि युगसामर्थ्यप्रपञ्चनेन व्यवहितत्वात् तदेव पुनः स्मर्यते । अथ वा पूर्वोक्तं युग-

१. M. substitutes तद्धर्म for तत् सर्व. २. D. substitutes च for वः.
३ Except D. E. G. H. and J. all others मुनिपुङ्गवाः for ऋषिपुङ्गवाः.
४. A. and I. read अनुस्मृत्य for अनुस्मृतस्य. ५. A. and I. read simply शीलपर्यायः for शीलपरपर्यायं. ६. A. D. and I. read विहित for उदितं. ७. A. reads स्मर्यते for स्मायते.

सामर्थ्यश्रवणविषयम् । इदं तु धर्मश्रवणविषयम् । इत्यपु-
नरुक्तिः ॥३५॥

वक्ष्यमाणधर्मज्ञानस्य परमपुरुषार्थहेतुत्वं कैमुतिकन्यायेन
अभिधातुं ग्रन्थपाठ-तदर्थज्ञाने प्रशंसति-

पराशरमतं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ।

चिन्तितं ब्राह्मणार्थीयं धर्मसंस्थापनाय च ॥३६॥

इति । पराशरेण प्रोक्तं ग्रन्थजातं 'पराशरमतं' । तच्च
पाठमात्रेण पुण्यप्रदम् । पुण्यं च द्विविधम् । इष्टप्रापकमनिष्ट-
निवर्तकं च । तदुभयं 'पवित्र-पापनाशन' शब्दाभ्यां विवक्ष्य-
ते । तदेवं ग्रन्थजातं 'चिन्तितं' अर्थतो विचारितं सत्
पूर्ववत् पुण्यप्रदं भवति । अर्थविचारस्य प्रयोजनं द्वेधा ।
स्वानुष्ठानं परोपदेशश्च । तदुभयं 'ब्राह्मण' इत्यादिपदद्व-
येनोच्यते । ब्राह्मणस्यार्थो ब्राह्मण्यनिमित्तं स्वधर्मानुष्ठानमिति
यावत् । 'धर्मसंस्थापनं' परेषां धर्मोपदेशेनानुष्ठानपथम् । अत्र
ग्रन्थपाठ-तदर्थज्ञानयोरपीदृशो महिमा तदा किमु वक्तव्यम-
नुष्ठानं पुरुषार्थहेतुः-इति । युक्तं चैतत् । पराशरस्य

१. A. reads श्रवणं धर्मविषयम् for धर्मश्रवणविषयम्. २. A. D. and I.
read जातस्य for ज्ञानस्य; and B. C. F. read अनुष्ठानस्य; for the same.
३. B. and F. read -उच्यते; D. विभज्यते; and C. E. G. H. विवृण्वते for
विवक्ष्यते. ४. Except H. all others read तदेव ग्रन्थ- for तदेवं ग्रन्थ-.
५. D. E. G. and H. read तत् instead of सत्. ६. B. C. and F. read
merely अनुष्ठानं for स्वानुष्ठानं. ७. A. reads ब्राह्मणार्थं instead of
ब्राह्मणस्यार्थो. ८. C. and D. read अनुष्ठानम् for अनुष्ठानम्. ९. A. and
D. substitute यथा for यथा.

पुलस्त्य-वसिष्ठप्रसादलब्धवरेण सर्वशस्त्रहृदयाभिज्ञत्वम् । तथा
च विष्णुपुराणम्—

‘वैरे महति मद्वाक्यात् गुरोरग्याश्रिता क्षमा ।
त्वय तस्मात् स्मस्तानि भवान् शास्त्राणि वेत्स्यति ॥
सन्ततेर्न ममोच्छेदः क्रुद्धेनापि यतः कृतः ।
त्वया तस्मान्महाभाग ददाम्यन्यमहं वरम् ॥
पुराणसंहिताकर्त्ता भवान् वत्स भविष्यति ।
देवतापारमार्थ्यं च यथावद्वेत्स्यते भवान् ॥
प्रवृत्ते च निवृत्ते च कर्मण्यस्त्वमला मतिः ।
मत्प्रसादादसंदिग्धा तव वत्स भविष्यति ॥
ततश्च प्राह भगवान् वसिष्ठो ऽस्मत्पितामहः ।
पुलस्त्येन यदुक्तं ते सर्वमेतद्विष्यति ’ ॥

(वि. पु. १. १. २८-३१)

इति ॥ ३६ ॥

इत्याचारकाण्डे प्रथमाध्याये आचारावतारः समाप्तः ॥

॥ ग्रन्थानुक्रमणिका च समाप्ता ॥

१. Except A. and D. all others read -अभिज्ञत्वात् for -अभिज्ञत्वम्.
२. B. reads तद्वाक्यात्, E. G. H. तद्वाक्ये, and D. यद्वाक्यात् ; all for मद्वाक्यात्. ३. Except A. and D. all others read गुरोरग्याश्रिता for गुरोरग्याश्रिता. ४. After वेत्स्यति A. adds इति outside the verse. ५. E. G. H. and I. read समुच्छेदः for ममोच्छेदः. ६. B. C. F. H. and I. read क्रुद्धेनापि for क्रुद्धेनापि. ७. B. C. F. and G. read ददाम्यन्यं महद्वरम्; while D. and H. ददाम्यन्यन्महद्वरम्; both ददाम्यन्यमहं वरम्. ८. H. reads कर्मणि त्वमला मतिः for कर्मण्यस्त्वमला मतिः. ९. A. and I. omit the verse; but we think it is necessarily required here. For, in the preceding lines, the commentator says पुलस्त्य-वसिष्ठप्रसादलब्धवरेण. Then there must appear two gifts. Of these one only is described in the preceding eight lines. Then there should be one वर as appearing in the introduced verse-
१०. B. C. and F. read वसिष्ठो मत्पितामहः for वसिष्ठोऽस्मत्पितामहः.

अथाचारो निरूप्यते । यत् पृष्ठम्—

‘चातुर्वर्ण्यसमाचारं किञ्चित् साधारणं वद’ ।

(प. स्म. १. १७)

इति तत्रोत्तरमाह—

चातुर्णामपि वर्णानामाचारो धर्मफलकः ।

आचारभ्रष्टेदेहानां भवेद्धर्मः पराङ्मुखः ॥ ३. ७ ॥

इति । आचारस्यान्वय-व्यतिरेकाभ्यामैहिकामुष्मिक-
श्रेयोहेतुत्वम् । आचारलक्षणं च आनुशासनिके पर्वण्यभि-
हितम्—

‘आचाराद्भते ह्यायुराचाराद्भले श्रियम् ।

आचारात् कीर्तिमाप्नोति पुरुषः प्रेत्य चेह च ॥

दुराचारो हि पुरुषो नेहायुर्विन्दते महत् ।

व्रसेन्ति चास्य भूतानि तथा परिभवन्ति च ॥

तस्मात् कुर्यादिहाचारं यदीच्छेद् भूतिभान्मेनः ।

अपि पापशरीरस्थ आचारो हन्त्यलक्षणम् ॥

आचारलक्षणो धर्मः सन्तश्चाचारलक्षणाः ।

‘साधूनां च यथावृत्तमेतदाचारलक्षणम्’ ॥

(म. भा. आ. १. ०४. ६-९)

१. Except A, C. and F. all others read -हेतुत्वम् for -हेतुत्वम्. २. A, D, E. and G. substitute च for हि. ३. E. and G. अद्वन्ति, D. व्रस्यन्ति; for व्रसन्ति; and in the text of Mahābhārāt यस्मात् व्रसन्ति. ४. D. reads ह्यस्य for हन्त्य. ५. In the text of Mahābhārāt चारिणः.

इति । हारीतोऽपि स्मरति—

‘साधवः क्षीणदोषाः स्युः सच्छब्दः साधुवाचकः ।

तेषामिचरणं यत्तु सै सदाचार उच्यते ’ ॥

‘इति । मनुरप्याह—

‘यस्मिन् देशे य आचारः पारम्पर्यक्रमागतः ।

वर्षाणि सान्तरालानां स सदाचार उच्यते ’ ॥

(म. स्मृ. २. १८)

इति । सन्तः शिष्टाः । तेषां स्वरूपमाह भगवान्बोधायनः—

‘शिष्टाः खलु विगतमत्सरा निरहङ्काराः कुम्भीधान्याः

अलोलुपाः दम्भ-दर्प-लोभ-मोह-क्रोधविवर्जिताः’—

(बौ. स्मृ. १. १. ५)

इति । आरण्यपर्वणि—

‘अक्रुध्यन्तोऽनसूयन्तो निरहङ्कार-मत्सराः ।

ऋजवः शमसम्पन्नाः शिष्टाचारा भवन्ति ते ॥

त्रैविद्यवृद्धाः शुचयो वृत्तान्तो यशस्विनः ।

गुरुशुश्रूषवो दान्ताः शिष्टाचारा भवन्ति ते ’ ॥

(म. भा. व. २०७. ७८-७९)

१. All but A. and I. substitute तु for स्युः. २. B. C. F. and G. सच्छब्दाः साधुवाचकाः instead of the singulars. ३. In A. स follows सदाचारः instead of preceding it. ४. Except A. and H. all others omit मनुरप्याह, together with the following śloka. ५. I. and in the text of manu तस्मिन् for यस्मिन्. ६. A. and I. read बोधायनः for बोधायनः. ७. D. reads विद्याः for वृद्धाः. ८. In the text of Mahābhārāt मनस्विनः for यशस्विनः. ९. In the text of Mahābhārāt भवन्त्युत for भवन्ति ते.

इति । अत्र सर्वत्र-शिष्टानामभिमतो दया-द्राक्षिण्य-विन-
याद्यन्वितो वृत्तिविशेष आचारः-इत्युक्तं भवति । स सदाचारः
श्रौतं स्मार्तं च धर्मं पालयति । सति सदाचारे धर्मविधातिनां
नैर्घृण्य-क्रोधादीनामभावात् । असन्ति त्वाचारे विरोधिसङ्गा-
वात् धर्म एष न प्रवर्त्तते । कथञ्चित् प्रवृत्तोऽपि परावर्त्तते । सो
ऽयं धर्मपालक आचारश्चतुर्णां वर्णानां साधारणः । ननु-
'किञ्चित् साधारणं वद'-इति धर्मः पृष्टः प्रत्युत्तरं त्वान्नार-
विषयं इति न सङ्गच्छते-इति चेत् । न । निमित्त-नैमि-
त्तिकयोराचार-धर्मयोरभेदस्य विवक्षितत्वात् ॥ ३७ ॥

इदानीं ब्राह्मणस्यासाधारणं धर्मं दर्शयति—

षट्कर्माभिरतो नित्यं देवता-ऽतिथिपूजकः ।

हुतशेषं तु भुञ्जानो ब्राह्मणो नावसीदति ॥ ३८ ॥

इति । यजन-याजना-ऽध्ययना-ऽध्यापन-दान-प्रतिग्रहाः
षट्कर्माणि । तदाह मनुः—

‘अध्यापनं चाध्ययनं यजनं याजनं तथा ।

१. A. omits सर्वत्र; while E. and H. read सर्वशिष्टानां for simply शिष्टानां.
२. A. reads आचारः for सदाचारः; D. G. and H. omit सः and read
सदाचारः merely. E. altogether omits the whole sentence. ३. Except
A. and I. all others omit the expression श्रौतं स्मार्तं च; but H. in its
margin has श्रौतस्मार्तं. ४. With the exception of E. all omit सति सदाचारे.
This expression is not found in any of the MSS., but I think that
the sentence without this expression gives no consistent complete idea.
५. D. विरोधिसङ्गावात् for विरोधिसङ्गावात्. ६. A. and I. प्रवर्त्तते for प्रवर्त्तते,
७. Again परावर्त्तते for परावर्त्तते. ८. All except A. read चतुर्वर्णानां instead
of चतुर्णां वर्णानां. ९. Except A. and D. all others read असाधारणधर्मं
instead of असाधारणं धर्मं.

‘दानं, प्रतिग्रहश्चापि षट्कर्मण्यग्रजन्मनः’ ॥

(म. स्मृ १०. ७५)

इति । तत्र अध्यापनं कूर्मपुराणे प्रपञ्चितम् —

‘एवमाचारसम्पन्नमात्मवन्तमदाम्भिकम् ।

वेदमध्यापयेद् धर्मं पुराणाङ्गानि नित्यशुः ॥

संवत्सरोषिते शिष्ये गुरुर्ज्ञानमनिर्दिशन् ।

हरते दुष्कृतं तस्य शिष्यस्य वसतो गुरुः ॥

आचार्यपुत्रः शुश्रूषुः कनिष्ठो धार्मिकः शुचिः ।

आप्तः शक्तोऽर्थदः साधुरध्याप्या दश धर्मतः ॥

कृतज्ञश्च तथा श्रोही मेधावी शुभकृत्तरः ।

आप्तः प्रियोऽथ विधिवत् षडध्याप्या द्विजोत्तमैः’ ॥

(कृ. पु. १. २. १४. ३७-४०)

इति । विष्णुरप्याह —

‘नापरीक्षितं याजयेत् नाध्यापयेत् नोपनयेत्’ ।

(वि. स्मृ. २९. ४-६)

इति । वसिष्ठश्च —

१. A. and E. read -धर्मपुराणा- for -धर्म पुराणा. २. A. substitutes वसते for हरते. ३. A. and in the text of Kūrma Purāṇa ज्ञानको for कनिष्ठो. ४. All except A. read शक्तोऽर्थकोऽर्थस्वः साधु- for आप्तःशक्तोऽर्थदः साधु-; and in the text of Kūrma Purāṇa सूक्तार्थकोऽरस्तः. ५. A. reads स्वोऽध्याप्या दश- instead of merely अध्याप्या दश. ६. B. C. and F. read कृत्यो यतो यो अश्रोहि, for कृतज्ञश्च तथाऽश्रोही. ७. All except G. read -कृत्तरः for -कृत्तरः, and in the text of Kūrma Purāṇa तूपकृत्तरः for शुभकृत्तरः. ८. In the text of Kūrma Purāṇa द्विजातयः for द्विजोत्तमैः. ९. B. C. and F. read नापरीक्षायाध्यापयेत्; E. G. and H. नापरीक्षितमध्यापयेत् for नापरीक्षितम्. १०. With the exception of A. D. and G. all others omit याजयेत्; G. interchanges the places of याजयेत् and अध्यापयेत्. ११. A. and I. omit च.

‘विद्य ह वै ब्राह्मणमाजगाम
 गोपाय मा शेवधिष्ठे ऽहमास्मि ।
 असूयकाया ऽनृजवे ऽयतायै
 न मां ब्रूयाद्वीर्यवती तथा स्यात्’ ॥

(य. स्मृ. २. ८ ; वि. स्मृ. २९. ९ ; सु. उ. १. ६१)

इति । अध्यापने नियममाह यमः—

‘सततं प्राद्वरुथाय दन्तधावनपूर्वकम् ।
 स्नात्वा हुत्वा च शिष्येभ्यः कुर्यादध्यापनं नरः’ ॥

इति । मनुरपि—

‘अध्येष्यमाणं तु गुरुर्नित्यकालमतन्द्रितः ।
 अधीष्व भो इति ब्रूयादिरामो ऽस्त्विति चारमेत्’ ॥

(म. स्मृ. २. ७३)

इति । अध्येष्यमाणः, शिष्यः । तं प्रति वेदमुच्चारयिष्यन्
 प्रतिदिनमध्यापनप्रारम्भे अतन्द्रितः— ‘अधीष्व भोः’—इति
 ब्रुवन्नारभेत । समाप्तौ ‘विरामो ऽस्तु’—इति ब्रुवन्नुपरमेत ईश्वर-
 प्रीतये । एतत् सर्वमभिप्रेत्य श्रुतिराह—

१. In the text of Vasishtha Smṛiti शेवधिष्ठे for शेवधिष्ठे. २. A. and I. read शात्राय for ऽयताय. ३. Except E. and II. all others read मा for मां. ४. With the exception of II. all read अध्येष्यमाणस्तु for अध्येष्यमाणं तु. ५. E. reads अधीहि for अधीष्व. ६. For शिष्येः तं प्रति B. C. E. F. G. and II. read शिष्यान्प्रति ; besides C. and F. read अध्येष्यमाणशिष्यान्. ७. D. drops प्रति. ८. E. omits अध्यापनप्रारम्भे and reads अधीहि भो for अधीष्व भो, B. C. D. E. and G. omit the following:—प्रति-
 क्तिनं अध्यापनप्रारम्भे अतन्द्रितः ‘अधीष्व भो’ इति ब्रुवन्नारभेत and read प्रतिदिनमध्यापनसमाप्तौ &c. II. reads भो अधीष्व instead of अधीष्व मां. ९. With the exception of A. and I. all omit ईश्वरप्रीतये. •

‘अष्टवर्णे, ब्राह्मणमुपनयति । तमध्यापयति’—इति ।

अत्र प्रभाकरो मन्यते—‘उपनयति’—इति नयतेरात्मने-
पदस्य आचार्यकरणे पाणिनिना सूत्रितत्वात् (पा.सू. १.३.३६)
उपनयनाध्यापिनयोश्चाङ्गीङ्गीरूपत्वेनैककर्तृकत्वात् आचार्य-
त्वकामो ऽध्यापने ऽधिकारी । अत एव मनुना स्मर्यते—

‘उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद्विजः ।

सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते’ ॥

(म. स्मृ. २. १४०)

इति । एवं चाध्यापनविधौ सुस्थिते सत्यप्यध्ययनस्य
पृथग्विधिर्न कल्पनीयो भविष्यति । विहितस्याध्यापनस्याध्य-
यनमन्तरेणानुपपत्तेरध्ययनस्यार्थे—सिद्धत्वात् । ननु—नाध्ययन-
विधौ कल्पनादोषो ऽस्ति । क्लृप्तस्यैव विधेः सत्त्वात् । ‘स्वा-
ध्यायोऽध्येतव्यः’ (तै. आ. २. ११) इति श्रुतेः । मैवम् ।
अधिकार्यश्रवणेनास्य विधेरनुष्ठापकत्वाद्योगात् । अथोच्यते—
विश्वजिज्ञ्यायेन रात्रिसत्रन्यायेन वा अधिकारी परिकल्प्यताम् ।
‘विश्वजिता यजेत’ इत्यत्र ‘एतैस्त्वेनाम्’—इति नियोज्यविशे-
षणस्याश्रवणात् अनुष्ठानाप्राप्तौ स्वर्गस्य सर्वैरिष्ट्यमाणत्वात् स

* १. B. C. E. F. and H. read प्राभाकरो for प्रभाकरो. २. For तु यः B. C. D. and F. substitute गुरुः. ३. D. reads प्रकल्पते for प्रचक्षते. ४. Except H. all others omit अपि. ५. G. reads नाध्यापन- for नाध्ययन-; and D. चाध्ययन- for the same. ६. A. replaces अस्ति by स्यात्, and omits the following—क्लृप्तस्यैव विधेः सत्त्वात्. ७. D. and E. read -श्रवणे instead of -श्रवणेन. ८. All except G. and H. substitute तस्य for अस्य. ९. D. अथोच्यते. १०. A. reads विश्वजिज्ञ्यायेन for विश्वजिज्ञ्यायेन. ११. G. omits रात्रिसत्रन्यायेन. १२. H. reads कल्पताम् for -कल्प्यताम्. १३. A. तत् for एतत्. १४. A. विशेषस्य instead of विशेषणस्य. १५. All except A. read अनुष्ठानप्राप्तौ for अनुष्ठानाप्राप्तौ.

एव तद्विशेषणत्वेन पारिकल्पितः । एवमत्र स्वर्गकामो माणवको
 नियोज्यो ऽस्तु । रात्रिसत्रे 'प्रतितिष्ठन्ति ह वा एते य एता रात्री-
 रूपयन्ति' इत्यर्थवादे श्रुतायाः प्रतिष्ठायाः अत्यन्तमश्रु-
 तात् स्वर्गतः प्रत्यासन्नतया प्रतिष्ठाकामो अधिकारी कल्पितः ।
 एवमत्र पयःकुल्यादिकामो अधिकारी स्यात् । 'यदृचो धी-
 ते पयसः कुल्या अस्य पितृन् स्वधा अभिवहन्ति । यद्यजुषि
 घृतस्य कुल्याः । यत्सामानि सोम एभ्यः पवते' (तै. आ. २.
 ११) इत्यर्थवादात्-इति । मैवम् । पयःकुल्यादिर्ब्रह्मयज्ञ-
 विधिशेषत्वात् माणवकस्याप्रबुद्धत्वेन स्वर्गकामत्वात्सम्भ-
 वाच्च । कथञ्चित् सम्भवे ऽप्यन्योन्याश्रयत्वं दुर्वारम् । अधीते
 स्वाध्याये पश्चादध्ययनविध्यवगमः । तदवर्गमे चाध्ययनम्-
 इति । तस्मात् अध्ययनस्याध्यापनप्रयुक्तत्वादध्यापनमेव वि-
 धीयते नाध्ययनम्' इति ।

तदेतद्गुरुमतमन्ये ऋदिनो न क्षमन्ते । अनित्येनाध्यापनेन
 नित्यस्याध्ययनस्य प्रयोक्तुमशक्यत्वात् । अनित्यं चाध्यापनम् ।
 जीवनकामस्य तत्राधिकांगुत् । तदाह मनुः-

‘पण्णां तु कर्मणामस्य त्रीणि कर्माणि जीविका ।

यजनाध्यापनं चैव विगुह्याच्च प्रतिग्रहः’ ॥

(म. स्मृ. १०. ७६.)

१. D. omits अत्यन्तम्. २. All except A. and (A) read एकेभ्यः for एभ्यः. ३. B. C. and F. read इतोऽस्त्विति. D. इत्यादि अस्ति. E. G. इत इति, and H. इत्यादिस्तुतिरिति, for simply इति. ४. D. and H. read अयं for अयत्वं. ५. G. and E. read अवगमने for अवर्गमे. ६. A. reads तथाह for तदाह.

इति । अध्ययनं तु नित्यम् । अकरणे प्रत्यवायस्य मनुना स्मृतत्वात्—

‘योऽनधीत्य द्विजो वेदानन्यत्र कुरुते श्रमम् ।

‘स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः’ ॥

(म. स्मृ. २. १६८; ब. स्मृ. ३. २.)

इति । अतः स्वविधिप्रयुक्तमेवाध्ययनम् । न चास्त्यन्योन्या-
श्रयः । अध्ययनात् प्रागेव सन्ध्यावन्दनादाविव पित्रादिमुखेन
विध्यर्थावगमात् । पित्रादिनियमितत्वादेव माणवकस्य न अप्र-
बुद्धत्वदोषो ऽस्ति । यद्यपि तैत्तिरीयशाखायाम्—‘स्वाध्या-
यो ऽध्येतव्यः’ इति वाक्यस्य पञ्चमहायज्ञप्रकरणे पठितत्वा-
द् ब्रह्मयज्ञविधिरूपता । तथाप्यशेषस्मृतिषूपनयनपूर्वकस्या-
ध्ययनस्य प्रपञ्च्यमानत्वान्मूलभूता श्रुतिरनुमातव्या । विव-
रणकारस्तु—‘अध्यापयीत’ इत्यत्रापि निजर्थस्य जीवनार्थ-
त्वेन रागतः प्राप्तत्वात् प्रकृत्यर्थस्याध्ययनस्य विधेयताम-
भिप्रेत्य ‘अष्टवर्षो ब्राह्मण उपगच्छेत् । सो ऽधीयीत’ इति
वाक्यं विपरिणम्य उपपादयामास । सर्वथाऽस्ति नित्यं
स्वाध्यायाध्ययनविधिः ‘स्वाध्यायोऽध्येतव्य’ इत्येयमात्मकः
श्रौतः । तथा स्मृतिरपि—

१. A. E. G. and H. omit अस्ति ; A. and G. substitute आ for अ.
२. H. and I. read पित्रादिभिः instead of पित्रादि-. ३. A. reads एवं for एव.
४. A. reads विधिरयम् for विधिरूपता ; B. विधिः श्रूयते for the same.
५. A. reads पूर्वकं स्वाध्यायस्य for पूर्वकस्याध्ययनस्य. ६. We read with
A. and I. all others read अनुगन्तव्या for अनुमातव्या. ७. Except B.
C. and F. all others omit अपि. ८. E. G. and H. read विपरिणम्य for
विपरिणम्य. ९. A. reads सर्वथाऽस्ति, B. C. E. F. H. सर्वथाऽस्ति,
and D. सर्वथा स्वस्थः; all for सर्वथाऽस्ति. १०. All others except A.
and D. read merely नित्य dropping the visarga after it.

‘तपोविशेषैर्विबिधैर्ब्रतैश्च विधिचोदितैः ।’

वेदः कृत्स्नो अधिगन्तव्यः सरहस्यो द्विजन्मना ।

(म. स्मृ. १. १६५)

इति । अधिगतिरर्थविचारपर्यन्तमध्ययनम् । तथा च

कूर्मपुराणे अध्ययन-तदर्थविचारयोरभावे प्रत्यवायः स्मर्यते—

‘यो अन्यत्र कुरुते यत्नमनधीत्य श्रुतिं द्विजः ।

स वै मूढो न सम्भष्यो वेदबाह्यो द्विजातिभिः ॥

न वेदपाठमात्रेण संस्तुष्टो वै भवेद्द्विजः ।

पाठमात्रावसायी तु पङ्के गौरिव सीदति ॥ ००

यो धीत्य विधिवद्वेदं वेदार्थं न विचारयेत् ।

स सान्वयः शूद्रसमः पात्रतां न प्रपद्यते ॥

(कू. पु. १. २. १४. ८६-८८)

इति । अध्ययनस्येति कर्तव्यतामाह याज्ञवल्क्यः—

‘गुरुं चैवाप्युष्मसीत स्वाध्यायार्थं समाहितः ।

आहूतश्चाप्यधीयीत लब्धं चास्मै निवेदयेत् ॥

हितं चास्याचरोन्नित्यं मनो-वाक्काय-कर्मभिः ।’

(या. स्मृ. १. १६-२७)

इति । विष्णुपुराणे उपनि-

१. A. reads श्रुतैः, and D. श्रुतैः for ब्रतैः. २. D. reads अधिगम्य-विचार- instead of अधिगतिरर्थविचार-. ३. Except A. E. and I. all others read श्रुतं for श्रुति. ४. In the text of Kūrma Purāna द्विजाः for द्विजः and for सवै मूढो न संमूढो ५. In the text of Kūrma Purāna संस्तुष्टो वै for संस्तुष्टो वै भवेत्. ६. In the text of Kūrma Purāna एवमाचारहिमस्तु for पाठमात्रावसायी तु. ७. At the end of the line B. C. and F. have a redundant इति. ८. B., C. E. and F. read कर्तव्यमाह for कर्तव्यतामाह. ९. D. reads तस्य for चास्य. १०. A. omits अपि.

‘उभे सन्ध्ये रविं भूप तथैवाग्निं समाहितः ।
 उपतिष्ठेत् तथा कुर्याद्गुरोरप्यभिवादनम् ॥
 स्थिते तिष्ठेद् व्रजेत् यांते नीचैरासीत चासिते ।
 श्लिष्यो गुरोर्नरश्रेष्ठ प्रतिकूलं न सञ्चरेत् ॥
 तेनैवोक्तः पठेद्देदं नान्यचित्तः पुरःस्थितः ।
 अनुज्ञातश्च भिक्षात्रमश्रीयात् गुरुणा ततः ॥
 भृतानि चरता ग्राह्यो वेदश्च कर्तुं बुद्धिना ’ ।

(वि. पु. ३. ९. २-५)

इति । कौर्मैऽपि—

‘आहूतो ऽध्ययनं कुर्याद्वीक्षमाणो गुरोर्मुखम् ।
 नित्यमुद्धृतपाणिः स्यात् साध्वाचारः सुसंयतः’ ॥
 (कू. पु. १. २. १४. १-२)

इति । स्वकुलपरम्पराऽऽगतायाः शाखायाः पाठो ऽध्ययनम् ।
 तदाह वसिष्ठः—

‘पारम्पर्यागतो येषां वेदः स परिवृंहणः ।
 तुच्छाखं कर्म कुर्वति तच्छाखाध्ययनं तथा ’ ॥
 (व. स्मृ. ६. ४३)

इति । स्वशाखापरित्यागं स एव निषेधति—

‘यः स्वशाखां परित्यज्य पारक्यामाधिगच्छति ।
 स शूद्रवद्बहिः कार्यः सर्वकर्मसु साधुभिः ॥

१. A. has instead of याति for याति. २. A. B. C. and F. read चासने for चासिते, and D. reads वाऽऽसिते. ३. D. reads तेनैवोक्तः. ४. D. changes कृत- into धृत-. ५. With the exception of D. and H. all others read कूर्मैऽपि. ६. E. reads नित्यमक्षतपाणिः for नित्यमुद्धृतपाणिः, and in the text of Kûrma Purâna नित्यमुद्यतपाणिः स्यात् सन्ध्या-पारसमन्वितः. ७. A. reads तच्छाखाकर्म- for तच्छाखं कर्म. ८. B. C. D. and F. read पारक्यामाधिगच्छति.

स्वीया शाखोज्झिता येन ब्रह्म तेनोज्झितं परम् ।

ब्रह्मैव स विज्ञेयः सद्भिर्नित्यं विगर्हितः ॥

इति । स्वशाखाध्ययनपूर्वकं त्वन्यशाखां अध्ययनेन ते-
नैवाङ्गीकृतम्—

‘अधीत्य शाखामात्मीयां परशाखां ततः पठेत्’

इति । वेदवद्धर्मशास्त्रमप्यधीयीत । तदाह बृहस्पतिः—

‘एवं दण्डादिकैर्युक्तं संस्कृत्य तनयं पिता ॥

वेदमध्यपियेत् पश्चात् शास्त्रं मन्वादिकं तथा ॥

ब्राह्मणो वेदमूलः स्याच्छ्रुति-स्मृत्योः समः स्मृतः ।

सदाचारस्य च तथा ज्ञेयमेतत्त्रिकं सदा ॥

अधीत्य चतुरो वेदान् साङ्गोपाङ्ग-पद-क्रमान् ।

स्मृतिहीना न शोभन्ते चन्द्रहीनैव शर्वरी ॥

इति । अत्र अध्ययनेन पञ्चधा वेदाभ्यास उपल-
क्षितः । तदाह दक्षः—

‘वेदस्वीकरणं पूर्वं विचारोऽभ्यसनं जपः ।

तद्ज्ञानं चैव शिष्येभ्यो वेदाभ्यासो हि पञ्चधा’ ॥

इति । हारीतो अपि—

‘मन्त्रार्थज्ञो जपन् जुह्वन् तथैवाध्यापयन् द्विजः ।

स्वर्गलोकमवाप्नोति नरकं तु विपर्यये’ ॥

१. D. reads the following:— स्वीयशाखापलापे तु for स्वीया शाखोज्झिता येन ; A. reads स्वीय- for स्वीया- retaining all the rest according to text. २. All except A. omit तु. ३. After-शाखाध्ययनम् D. adds पूर्ववत्. ४. All the MSS. omit अपि. ५. D. reads साङ्गोपाङ्ग-पदक्रमान् instead of the compound word. ६. All except A. omit the expression तदाह दक्षः; and I. reads तथा च. ७. A. substitutes अध्ययनं for अभ्यसनं ; D. भासनं for the same. ८. D. and G. read पुनः instead of जपः. ९. E. and H. read स्वर्गं लोकम् for स्वर्गलोकम्.

इति । गुरुमुखादेवाध्येतव्यं नतु लिखितपाठः कर्त्तव्यः । तदाह नारदः—

‘पुस्तकप्रत्ययाधीतं नाधीतं गुरुसन्निधौ ।

‘भ्राजते न सभामध्ये जागरर्भ इव स्त्रियाः’ ॥

(ना. शि. २. १३)

इति । अध्ययने वर्जनीयानाह मनुः—

‘नाविस्पष्टमधीयीत न शूद्रजनसन्निधौ ।

न निशान्ते प्रतिश्रान्तो ब्रह्माधीत्य पुनः स्वपेत्’ ॥

(म. स्मृ. ४. ९९)

इति । नारदो ऽपि—

‘हस्तहीनस्तु यो ऽधीते स्वर-वर्णविर्वर्जितः ।

ऋग्यजुः-सामभिर्दग्धो वियोनिमाधिगच्छति’ ॥

(ना. शि. २. २७; पा शि. १०. ६)

इति । व्यासो ऽपि—

‘अनध्यारोऽवधीतं यत् यच्च शूद्रस्य सन्निधौ ।

प्रतिग्रहनिमित्तं च नरकाय तदुच्यते’ ॥

॥ इत्यध्ययना-ऽध्यापनयोः प्रकरणम् ॥

अथानध्यायाः । ते च द्विविधाः । नित्या नैमित्तिकाश्च । तत्र नित्यानाह हारीतः—

‘प्रतिपत्सु चतुर्दश्यामष्टम्यां पर्वयोर्द्वयोः ।

श्रीऽनध्यागे ऽद्य शर्वर्या नाधीयीत कदाचन’ ॥

१. D. and H. read परिश्रान्तो for प्रतिश्रान्तो. २. All except A. and I. omit नारदो ऽपि. ३. B. C. D. and F. read -सामनिर्दग्धो for -सामभिर्दग्धो. ४. All the copies consulted read पर्वणोः instead of पर्वयोः.

इति । नैमित्तिकानाह-याज्ञवल्क्यः—

‘श्व-क्रोष्टु-गर्दभोलूक-साम-बाणार्त्त-निःस्वने ।

अमध्य-शव-शूद्रान्त्य-श्मशान-पतितान्तिके ॥

देशे शुचावात्मनि च विद्युत्-स्तनित-संप्रवि ।

भुक्त्वा ऽऽर्द्रपाणिरम्भोन्तरद्वात्रे अतिमारुते ॥

पांसुवर्षे दिशां दीहे सन्ध्या-नीहार-भीतिषु ।

धावतः पूतिगन्धे च शिष्टे च गृहमागवै ॥

खरोष्ट्र-यान-हस्त्यश्व-नौ-वृक्षेरिण-रोहणे ।

सप्तत्रिंशदनध्यायानेतांस्तत्कालिकान् विदुः ॥

(या. स्मृ. १. १४८-१५१)

इति । अन्ये ऽयनध्यायास्तत्र तत्र स्मर्यन्ते । तदाह
नारदः—

‘अयने विषुवे चैव शयने बोधने हरेः ।

अनध्यायस्तु कर्त्तव्यो मन्वादिषु युगादिषु ’ ॥

इति । मन्वादयौ मत्स्यपुराण शर्भाङ्गिताः—

‘आश्वयुक्शुक्लनवमी कार्तिके द्वादशी तथा ।

तृतीया चैत्रमासस्य तथा भाद्रपदस्य च ॥

१. D. and G. read शिष्ये for देशे. २. All except A. read भक्तार्द्र- for भुक्त्वा. ३. D. and G. read पांसुवर्षे दिग्दीहे for पांसुवर्षे दिशां दीहे. ४. A. and I. read तु for अपि. ५. A. and I. read तथा च, while others except D. read तथाह for तदाह.

फाल्गुनस्य त्वमावास्या नौषेस्यैकादशी तथा ।
 आषाढस्याथ दशमी भाद्रमासस्य सप्तमी ॥
 श्रावणस्याष्टमी कृष्णा आषाढस्यापि पूर्णिमा ।
 कार्तिकी फाल्गुनी चैत्री ज्यैष्ठी पञ्चदशी सिता ॥
 मन्वन्तरादयश्चैते दत्तस्याक्षय्यकारकाः ॥

(म. पु. १७. ६-८)

इति । युगादयो विष्णुपुराणे वर्णिताः—

‘वैशाखमासस्य च या तृतीया
 नवम्यसौ कार्तिकशुक्लपक्षे ।
 नभस्य मासस्य च कृष्णपक्षे
 त्रयोदशी पञ्चदशी च माघे ’ ॥

(वि. पु. ३. १४. १३)

इति । कूर्मपुराणे—

‘उपाकर्मणि चोत्सर्गे त्रिरात्रक्षपणं स्मृतम् ।
 अष्टक्लासु त्वहोरात्रमृत्वन्तासु च रात्रिषु ॥
 मार्गशीर्षे तथा पौषे भाद्रमासे तथैव च ।
 तिलोऽष्टकाः समाख्याताः कृष्णपक्षे तु सूरिभिः ’ ॥

(कू. पु. १. २. १४. ७७-७८)

इति । गौतमो ऽपि—‘कार्तिकी फाल्गुन्याषाढी पौर्ण-
 मासी तिलोऽष्टकाः त्रिरात्रम्’ (गौ. स्मृ. १६. ७)—इति । उक्त-

१. A., D., E., G. and H. read पुष्यस्य for पौषस्य २. H. and I. with the exception of all others have आषाढस्यापि for आषाढस्याथ. ३. D. reads अषाढस्य तु for आषाढस्यापि. ४. B., C., D. and F. read एताः for एते. ५. All except A. and I. omit वर्णिताः. ६. A., D. and I. omit इति. ७. A., D., G., H. and I. read त्रिरात्रं क्षपणं for त्रिरात्रक्षपणं. ८. D. reads पौर्णमासीः तिलोऽष्टकाः. ९. All except A. omit इति.

पौर्णमासीरारभ्य त्रिरात्रम् । तथा तिस्रोऽष्टकाः सप्तम्यादयः ।
तास्वपि त्रिरात्रमनध्ययनमित्यर्थः । पैठीनासिः—

‘कृष्णे भवाः तिस्रोऽष्टकाः । मार्गशीर्षप्रभृतय इत्येके’ ।

इति । आपस्तम्बस्तु उपाकर्माऽऽरभ्यमासं प्रदोषेऽनध्ययमाह—

‘श्रावण्यां पौर्णमास्यामध्यायमुप-

कृत्य मासं प्रदोषे नाधीयीत’ ।

(आ. ध. सू. ९. १)

इति । प्रदोषशब्देनात्र पूर्वरात्रिः विवक्षिता । त्रयोद-
श्यादिप्रदोषेष्वपि नाधीयीत । तथा च आदित्यपुराणम्—

‘मेधाकामस्त्रयोदश्यां सप्तम्यां च विशेषतः ।

चतुर्थ्यां च प्रदोषेषु न स्मरेन्न च कीर्तयेत्’ ॥

इति । चतुर्थ्यादितिथिद्वैविध्ये प्रज्ञापतिः—

‘षष्ठी च द्वादशी चैव अर्द्धरात्रौ न नाडिका ।

प्रदोषे न त्वधीयीत तृतीया नवनाडिका’ ॥

इति । याज्ञवल्क्यो अपि—

‘अहं प्रेतेऽनर्ध्यायः शिष्यत्विग्-गुरु-बन्धुषु ।

उपाकर्मणि चोत्सर्गे स्वशाखाश्रीत्रये मृते ॥

सन्ध्या-गर्जित-निर्घात-भूकम्पोल्कानिपातने ।

समाप्य वेदं द्यु-निशमारण्यकमधीत्य च ॥

१. D. reads मत्स्यपुराणे for अदित्यपुराणम्, all others except A. read simply पुराणम् omit आदित्य-. २. D. substitutes न, and G. तु; for च. ३. A. omits इति. ४. A. reads अर्धरात्रौ न नाडिका. ५. D. reads अहं for अहं. ६. We read with A.; all others read तथा for मृते. ७. D. reads ह्य-निशम् for द्यु-निशम्.

पञ्चदश्यां चतुर्दश्यामष्टम्यां राहुसूतके ।

ऋतुसन्धिषु भुक्त्वा वा श्राद्धिकं प्रतिगृह्य च ॥

पशुभण्डूक्त-नकुल-श्राहि-मार्जार-मूषकैः ।

कृतेऽन्तरे त्वहोरात्रं शक्रपाप्मे तथोच्छ्रये' ॥

(यां. स्मृ. १० १४४-४७.)

इति । गनुरपि—

‘चोरैरुपप्लुते ग्रामे सम्भ्रमे वा अग्निकारिते ।

आकालिकमनध्यायं विद्यात्सर्वाद्भुतेष्वपि’ ॥

(म. स्मृ. ४. ११८)

इति । कूर्मपुराणे—

‘श्लेष्मातकस्य छायायां शात्मलेर्मधुकस्य च ।

कदाचिदपि नाध्येयं कोविदार-कपित्थयोः’ ॥

(कूर्. पु. १. २. १४. ७९)

इति । उक्तानामप्यनध्यायानामपवादमाह मनुः—

‘वेदेषकरणे चैव स्वाध्याये चैव नैत्यके ।

नानुरोधो ऽस्त्यनध्याये होममन्त्रेषु चैव हि’ ॥

इति । वेदेषकरणानि अङ्गानि । नित्यस्वाध्यायो ब्रह्मयज्ञः ।

शौनकोऽपि—

‘नित्ये जपे च काम्ये च क्रतौ पारायणेऽपि च ।

नाऽनध्यायो ऽस्ति वेदानां ग्रहणे ग्राहणे तथो’ ॥

१. All except G. read -द्विति for -द्वपि. २. A. C. F. and I. read नित्यके for नैत्यके. ३. All except H. substitute स्तुतः for तथा.

इति । कूर्मपुराणेऽपि—

‘अनध्यायस्तु नाङ्गेषु नेतिहास-पुराणयोः ।

न धर्मशास्त्रेष्वन्येषु पर्वण्येतानि वर्जयेत् ॥

(कूः पु. १. २. १४. ८४)*

इति ५

॥ इत्यनध्यायप्रकरणम् ॥ ।

पूर्वमध्ययना-ऽध्यापने सेतिकर्तव्यते निरूपिते । अथ
यजन-याजने निरूपयामः ।

तत्र यजनस्य सृष्टि प्रयोजनं चाहं भगवान्—

‘सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।

अनेन प्रसविष्यध्वमेव वो ऽस्विष्टकामधुक् ॥

देवान् भावयताऽनेन ते देवा भावयन्तु वः ।

परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥

इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।

तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः ॥’

(भ. गी. ३. १०-१२)

इति । तस्य च यजनस्य सात्त्विक-राजस-तामसभेदेन
त्रैविध्यं सु एवाह—

‘अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ।

यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः ॥

१. B. C. E. F. and G. omit अपि; while D. omits the whole sentence together with the following verse and the subsequent इति.
२. A. reads पूर्वमध्यापना-ऽध्ययने इतिकर्तव्यत्वेन निरूपिते. ३. E. reads तस्य च सर्वस्य; while all others except A. read तस्य चाध्वरस्य, but D. omits तस्य reading अध्वरस्य for यजनस्य; and for तस्य च यजनस्य.

अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् ।
 इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसमं ॥
 विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।
 श्रद्धात्पिरहितं यत्नं क्षामसं परिचक्षते ॥

(भ. गी. १७. ११-१३)

इति । अश्वमेधिके पर्वणि द्विजातिप्रभृतिसृष्टेर्यज्ञार्थत्व-
 प्रतिपादनेन प्रस्तूयते—

‘यजनार्थं द्विजाः सृष्टास्तारका दिवि देवताः ।
 गावो यज्ञार्थमुत्पन्ना दक्षिणार्थं तथैव च ॥
 सुवर्णं रजतं चैव पान्त्री-कुम्भार्थमेव च ।
 इध्मार्थमथ यूपार्थं ब्रह्मा चक्रे वनस्पतीन् ॥
 ग्राभ्याऽऽरण्याश्च पशवो जायन्ते यज्ञकारणात् ’ ।

(वृ. गौ. स्मृ. १५. ६३-७७)

इति । हारीतोऽपि अन्वय-व्यतिरेकाभ्यां यज्ञमहिमानं
 दर्शयति—

‘यज्ञेन लोका विमलौ विभान्ति
 यज्ञेन देवा अमृतत्वमाप्नुवन् ।

१. A. reads यः instead of यत्. २. A. G. and I. read द्विजाविसृष्टेः for द्विजातिप्रभृतिसृष्टेः; while all others merely omit प्रभृति-. ३. A. and I. read प्रशस्यते for प्रस्तूयते. We think that the author supposing that the conversation being between Yudhishtira and Krishna, his memory have failed him, and he mentioned it as from Mahābhārat, but we find it in Vṛiddha Gowtam Saṁhitā 15, from 74-79, and this conversation is between Yudhishtira and Krishna. ४. A. reads पात्रं कुम्भार्थमेव च for पात्रीकुम्भार्थमेव च. ५. All except D. read वनस्पतिम् for वनस्पतीन्. ६. A. omits अपि. ७. D. reads प्रदर्शयति instead of simply दर्शयति.

यज्ञेन पापैर्बहुभिर्विमुक्तः

प्राप्नोति लोकानजरस्य विष्णोः ॥

नास्त्ययज्ञस्य लोको वै नायज्ञो विन्दते शुभम् ।

अनिष्टयज्ञो ऽपूतात्मा भ्रूयंति छिन्नपर्णवत् ॥

- इति । यज्ञविशेषास्त्वग्निहोत्रादयः । तथा च श्रूयते-

‘प्रजापतिर्यज्ञानसृजताग्निहोत्रं चाग्निष्टोमं च । पौर्णमासीं चोक्थ्यं चामावस्यां चातिरात्रं च’-इति । अग्निहोत्रादीनां संस्कृतैराग्निभिः साध्यत्वात् तत्संस्कारकमाधानमादावनुष्ठेयम् । तत्र प्रजापतिः-

‘सर्वसंस्थाधिकारः स्यादाहिताग्निर्धने सति ।

आदध्याग्निर्धनोऽप्यग्निं नित्यं पापभयात् द्विजः’ ॥

इति । अकरणे प्रत्यवायः कूर्मपुराणे दर्शितः-

‘नास्तिक्यादथवा ऽऽलस्याद्यो ऽग्नीन्नाऽऽधातुमिच्छति ।

यजेत वा न यज्ञेन स याति नरकान् बहून् ॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन ब्राह्मणो हि विशेषतः ।

• अध्याग्नीन् विगुह्वात्मा यजेत परमेश्वरम् ॥ •

• • (कू. पु. १. २. २४. ७, १०)

१. All except D. read -नमरस्य for -नजरस्य. २. All except A. and I. read नद्वयति. for भ्रद्वयति. ३. B. C. and E. read तत्संस्कारकमाधानमादा-, D. तत्संस्कारसाधनमादा-, and E. तत्संस्कारकसाधनत्वेन आधानमादा-; all for तत्संस्कारकमाधानमादा-. ४. A. substitutes -वतुमेयम् for -वतुष्ठेयम्. ५. We read with A., but all others read the following:—सर्वयज्ञाधिकारी स्यादाहिताग्निर्धने सति । ६. All except A. read पापभयात् instead of पापभयात्. ७. D. substitutes अभिहितः for दर्शितः; while H. omits both. ८. A. omits -यो. ९. A. substitutes नौ for हि. १०. All read -आग्निं for -अग्नीन्.

इति १. श्रुतिश्च कालादिविशिष्टमरधानं विधत्ते—

‘वसन्ते ब्राह्मणो ऽग्नीनादधीत । वसन्तो वै ब्राह्म-
णस्यर्तुः । स्व एवैनमृतावाधाय ब्रह्मवर्चस्वी भ-
वति । ग्रीष्मे राजन्य आदधीत । ग्रीष्मो वै राजन्य-
स्यर्तुः । स्व एवैनमृतावाधाय इन्द्रियावी वीर्यवान्
भवति । शरदि वैश्य आदधीत । शरद्वै वैश्य-
स्यर्तुः । स्व एवैनमृतावाधाय पशुमान् भवति ।’

इति । आश्वमेधिकेऽपि—

‘वसन्ते ब्राह्मणस्य स्यादाधेयोऽग्निर्नराधिप ।

वसन्तो ब्राह्मणः प्रोक्तो वेदयोनिः स उच्यते ॥

अर्ध्याधानं तु येनाथ वसन्ते क्रियते नृप ।

तस्य श्रीब्रह्मवृद्धिश्च ब्राह्मणस्य विवर्द्धते ॥

क्षत्रियस्याग्निराधेयो ग्रीष्मे श्रेष्ठः स वै नृप ।

येनाधानं तु वै ग्रीष्मे क्रियते तस्य वर्द्धते ॥

श्रीः प्रजाः पशवश्चैव वित्तं चैव बलं यशः ।

शरत्काले तु वैश्यस्याप्याधानीधो हुताशनः ॥

१. A. reads अग्निनादधीत for ऽग्नीनादधीत. २. Except A. E. and H. all others read स एवैन- instead of स्व एवैन- repeating the same in the places of all स्व coming hereafter in the passage. ३. With the exception of B₆ all omit वीर्यवान् ; H. and I. besides this read इन्द्रियवान् for इन्द्रियावी of all others. ४. A. omits अपि but adds पर्वणि in its place. This quotation is also Vridhh Gowtama Sanhitâ 15, 46-52. ५. A. reads अग्न्याधेयं for अग्न्याधानं. ६. B. C. D. G. and H. read शरद्वर्द्धते ऽथ for शरत्काले तु; while E. शरत्काले ऽथ for the same.

शरद्वात्रेः स्वयं वैद्यो वैद्ययोनिः स उच्यते ।

शरद्वाधानमेवं वै क्रियते येन पाण्डव ॥

तस्य वै श्रीः प्रजा ऽऽयुश्च पशवो ऽर्थश्च वर्द्धते ।

• (वृ. गौ. स्मृ. १५: ४७-५२) •

इति । आधानपूर्वकारश्च यज्ञाः दर्शादयः । तथा च वसिष्ठः—

‘अवश्यं ब्राह्मणो ऽग्नीनादधीत । दर्श-पूर्णमासा-

ऽऽग्नयेणष्टि-चातुर्मास्य-पशु-सोमैश्च यजेत’ ।

इति । हारीतो अपि—

‘पाकयज्ञान् यजेन्नित्यं हविर्यज्ञांस्तु नित्यशः ।

सौम्यांस्तु विधिपूर्वेण य इच्छेत् ब्रह्म चाव्ययम्’ ॥

इति । ते च गौतमेन दर्शिताः—

‘अष्टका पार्वणश्रोद्धं श्रावण्याषाढी प्रौष्ठपदी

चैत्र्याश्वयुजीति सप्त पाकयज्ञसंस्थाः । अर्ध्याधि-

यमग्निहोत्रं दर्श-पूर्णमासौ चातुर्मास्यान्याग्नये-

१. A. reads शरद्वात्रेः instead of शरद्वात्रः. २. All except A. read तेन for येन. ३. A. B. C. D. E. and F. read तस्यैव श्रीः for तस्य वै श्रीः; while H. reads तस्यै श्रीः for the same. ४. D. omits च. ५. D. reads for the sentence: आधानपूर्वकार्याश्च यज्ञा दर्शादयस्तथा. ६. B. and F. read पूर्ण-दर्शमासा for दर्श-पूर्णमासा-. ७. All except A. read पशु-सोमाश्च instead of पशु-सोमैश्च. ८. A. reads धर्ममव्ययम् for ब्रह्म चाव्ययम्. ९. इति is omitted by all. १०. B. C. and F. omit -आहुः, and read पार्वणं श्रावण्याग्नयेण चैत्र्याश्वयुजीति सप्तपाक- &c.; G. reads अष्ट-कापार्वणश्रोद्धं श्रावण्याग्नयेण चैत्र्याश्व- &c.; H. reads अष्टकां पार्वणश्रोद्धं चैत्र्याश्वयु; and A. reads अष्टका-पार्वणश्रोद्धं श्रावण्याग्नयेण चैत्र्याश्वयुजीति &c. ११. B. reads आग्न्याधेयमग्निहोत्रं for अग्न्याधेयमग्निहोत्रं. १२. B. E. C. F. and H. read दर्शपूर्णमास्ये; D. दर्शपूर्णमास्य; both for दर्श-पूर्णमासौ; and A. reads दर्शपूर्णमासावाग्नयेण चातुर्मास्य for दर्शपूर्णमासौ चातुर्मास्यान्याग्नयेण.

ष्टिर्निर्गृहपशुबन्धः सौवामणीति सप्त हविर्यज्ञ-
संस्थाः । अग्निष्टोमोऽप्यग्निष्टोम उक्थ्यः षोडशी
वाजपेयोऽतिरात्रोऽप्सोर्यामः इति सप्त सोमसंस्थाः ।

(गौ. स्मृ. ८. ३.)

इति । अपरांस्तु महायज्ञक्रतून् देवलो दर्शितवान्—

‘अश्वमेध-राजसूय-पौण्डरीक-

गोसवादयो महायज्ञक्रतवः’ ।

इति । एते सर्वे यज्ञाः यथायोगं नित्य-नैमित्तिक-काम्य-
भेदेन त्रिविधाः—

‘नित्यं नैमित्तिकं काम्यं त्रिविधं कर्म पौरुषम्’ ।

(मा. पु. ३४. ४)

इति मंडालसोक्तेः । तेन यज्ञानां नित्यत्वं कुथुमशा-
खायां श्रूयते—

‘मन्त्रेषु कर्माणि कवयो यान्यपश्यंस्तानि त्रे-
तायां बहुधा सन्ततानि । तान्यार्चयथ नियतम् ।

(मुं. उ. १. २. १)

इति । वाजसनेयिशाखायामपि—

‘कुर्वध्वेह कर्माणि जिजीवीषेच्छतं समाः’ ।

(ई. उ. २)

इति ।

१. D. inserts -याग- between सोम- and -संस्थाः. २. A. reads महायज्ञाः क्रतवः for महायज्ञक्रतूः. ३. With the exception of A. all read अत्र for तत्र. ४. A. reads अथर्वणशाखायां for कुथुमशाखायां ५. A. reads तान्धाद्वय for तान्यार्चयथ.

‘एतद्वै जरामृर्यमग्निहोत्रं जरसा
वा होवास्मान्मुच्यते मृत्युना च’ ।

(म. नां. उ. २५. १)

इति च । विधिवाक्येषु च औबनाद्युपबन्धस्तु नित्यत्व-
लक्षकः । तद्वत्था-

‘यावज्जीवमग्निहोत्रं जुहुयात्’ ।

‘यावज्जीवं दर्श-पौर्णमासाभ्यां यजेत’ ।

‘वसन्ते वसन्ते ज्योतिषा यजेत’ ।

इति । अकरणे प्रत्यवायश्च नित्यत्वगमकः । तथा चार्थवर्णे
श्रूयते-

‘यस्यानग्निहोत्रमदर्श-पौर्णमासमच्चातुर्मास्यम-
नाग्रयण-मतिथिर्वर्जितं वै ऋतुमवैश्वदेवमुवि-
धिना हुतमासममांस्तस्य लोकान् हिनास्ति-’

(मु. उ. १. २. ३)

इति तथैव श्रुत्यन्तरम्-

‘यस्य पिता पितृमहो वा

• सोमं नृ पिबेत् स ब्राह्मणः’ ।

१. B. reads एतद्वै राजमयमग्निहोत्रं for एतद्वै जरामृर्यमग्निहोत्रं. २. Except A. all others read जरसा for जरसा. ३. B. C. and F. read मृत्युना वेति च for मृत्युना च. ४. All but A. replace च by तु. ५. A. reads simply तथा for तद्वत्था. ६. A. and II. read दर्श-पौर्ण-मासाभ्यां. for दर्श-पौर्णमासाभ्यां. ७. A. omits expression वसन्ते वसन्ते ज्योतिषा यजेत; D. reads वसन्ते only once. ८. D. reads चार्थवर्णः for चार्थवर्णे. ९. B. C. and F. read होत्रमदर्शमच्चातुर्मास्यमपौर्णमासमना- for होत्रमदर्श-पौर्णमासमच्चातुर्मास्यमना-. All others omit only अच्चातुर्मास्यम्. १०. A. and D. read चाहुत- for वाहुत-. ११. D. reads यथा for तथा. १२. All except A. omit च. १३. II. reads श्रुत्यन्तरे.

इति १. जीवन-कामनाव्यतिरिक्तं गृह-दाहाद्यनियत-
निमित्तमुपजीव्य प्रवृत्तं नैमित्तिकम् । तथा च श्रुतिः—

‘यस्य गृहान् दहत्यग्निरग्नये क्षाम-

वते पुरोडाशमष्टाकपालं निर्वपेत्’ ।

इति । कामनया प्रवृत्तं काम्यम् । तद्यथा—

‘आयव्यं श्वेतमालभेत् भृतिकामः’ ।

(तै. सं. २. ३. १)-

इत्याद्याः काम्यपशवः ।

‘ऐन्द्राग्रमेकादशकपालं निर्वपेत् प्रजाकामः’ ।

(तै. सं. २. २. ५)

इत्याद्याः काम्येष्टयः । तत्र काम्यानां कामितार्थसिद्धिः
फलम् । नित्य-नैमित्तिकयोस्तु यथाविध्यनुष्ठितयोरिन्द्रलो-
कप्रापकत्वमाथर्वणे श्रूयते—

‘काली कराली च मनोजवा च

सुलोहिता या च सुधूमवर्णा ।

स्फुलिङ्गिनी विश्वरूची च देवी

लेलायमाना इति सप्त जिह्वाः ॥

१. A. reads —व्यतिरिक्तमह- instead of व्यतिरिक्तं गृह- separate.
२. A. reads गृहं दहत्यग्नये for गृहान्दहत्यग्निरग्नये D. omits the word अग्निः. ३. E. reads विनिर्वपेत् for निर्वपेत्; H. adds च before निर्वपेत्.
४. After भृतिकामः A. continues in the inverted commas वायुर्वै क्षेपिष्ठा देवता. ५. A. reads चापि for या च. ६. A. reads लेलायमाना for लेलायमाना; H. reads लालायमाना for the same.

एतेषु यश्चरते भ्राजमानेषु
 रथेणाकालं चाहुतयो ह्याददायन् ।
 तं नयन्त्येताः सूर्यस्य रश्मयो
 यत्र देवानां पतिरेकोऽधिवासः ॥
 ऐह्येहीति तमाहुतयः सुवर्चसः
 सूर्यस्य रश्मिभिर्यजमानं वहन्ति ।
 प्रियां वाचमभिवदन्त्योऽर्चयन्त्य
 एष वः पुण्यः सुकृतो ब्रह्मलोकः ॥

(मुं. उ. १. २. ४)०

इति । आनुशासनिके ऽपि—

‘सुशुद्धैर्यजमानैश्च ऋत्विग्भिश्च तथ्याविधैः ।
 शुद्धैर्द्रव्योपकरणैर्यष्टव्यमिति निश्चयः ॥ ..
 तथाकृतेषु यज्ञेषु देवानां तोषणं भवेत् ।
 तुंष्टेषु देवसङ्घेषु यज्वा यज्ञफलं लभेत् ॥
 देवाः सन्तोषिता यज्ञैर्लोकान् संवर्द्धयन्त्युत ।
 उभयोर्लोकयोर्देवि भूतिर्यज्ञे प्रदृश्यते ॥
 तस्माद्यज्ञाद्विवं याति अमरैः सह मोदते ।
 नास्ति यज्ञसमं दानं नास्ति यज्ञसमो विधिः ।
 सर्वधर्मसमुद्देशो देवि यज्ञे समाहितः ॥’

१. G. omits the whole passage from श्वेतमालभेत भूतिकामः &c., up to यथा both inclusive. २. G. repeats तं twice. ३. C, D. and F. read सुशुभैः for सुशुद्धैः. ४. D. reads तथ्युक्तेः for तथ्याविधैः. ५. A. substitutes यज्ञी for यज्वा; D. reads यज्ञात् for the same. ६. A, C, D, F. and G. read भूतिर्यज्ञैः प्रदृश्यते; B. reads भूतिर्यज्ञः प्रदृश्यते; H. reads प्रदृश्यते for प्रदृश्यते, all for भूतिर्यज्ञे प्रदृश्यते. ७. D. reads यान्ति for याति. ८. D. reads केन यज्ञे for देवि यज्ञे.

इति । यदि कथञ्चिन्नित्यकर्माणि लुप्येरन् तदा तत्स-
माधानमाह प्रज्ञापतिः—

‘दर्शं च पूर्णमासं च लुप्त्वा ऽथोभयमेव वा ।
‘एकस्मिन् कृच्छ्रपादेन द्वयोरङ्गेन शोधनम् ॥
हविर्यज्ञेष्वशक्तस्य लुप्तमप्येकमादिनः ।
प्राज्ञापत्येन शुध्येत पाकसंस्थासु चैव हि ॥
सन्त्योपासनहानौ तु नित्यस्नानं विलोप्य च ।
होमं च नैत्यकं शुध्येद् गायत्र्यष्टसहस्रकृत् ॥
‘समाप्ते सोमयज्ञानां हानौ चान्द्रायणं चरेत् ।
अकृत्वाऽन्यतमं यज्ञं यज्ञानामधिकारतः ॥
उपवासेन शुध्येत पाकसंस्थासु चैव हि ’ ।

इति । कात्यायनोऽपि—

‘पितृयज्ञात्यये चैव वैश्वदेवात्ययेऽपि च ।
अनिष्टा नवयज्ञेन नवान्नप्राशने तथा ॥
भोजने पतितान्नस्य चरुवैश्वानरो भवेत् ’ ।

(का. स्मृ. ३. १८. १९-२०)

इति । विहितदक्षिणापर्याप्तद्रव्याभावोऽपि नित्यं न लोप-
येत् । तदाह बोधायनः—

१. D. reads यदा कथञ्चिन् for यदि कथञ्चित्. २. B. C. and F. read लुप्त्वा बोधायन- for लुप्त्वाऽथोभय-. ३. B. C. D. and F. replace वा by च. ४. B. C. E. F. and G. read तु लोप्य च for विलोप्य च; A. reads विलुप्य च for the same. ५. A. and D. read होमं नैमित्तिकं for होमं च नैत्यकम्; G. reads होमं च नैमित्तिके for the same. ६. All except A. read द्रव्याभावेऽपि न for द्रव्याभावेऽपि न. ७. A. B. C. and F. read बोधायनः for बोधायनः.

‘यस्य नित्यानि लुप्तानि तथैवाऽऽगन्तुकाणि च ।
 विषेद्यपि न स स्वर्गं गच्छेत्तु पतितो हि सः ॥
 तस्मात् कन्दैः फलैर्मूलैर्मधुना ऽऽज्यरसेन वा ।
 नित्यं नित्यानि कुर्वीत न च नित्यानि लोपयेत् ॥
 इति न ननु—सम्पूर्णव्यसम्पत्तावेव सोमयागः कार्यः ।
 तदाह मनुः—

‘यस्य त्रैवार्षिकं वित्तं पर्याप्तं भृत्यवृत्तये ।
 अधिकं वाऽपि विद्येत स सोमं पातुमर्हति ॥
 इति । याज्ञवल्क्योऽपि— (म. स्मृ. ११. ७)
 ‘त्रैवार्षिकाधिकान्नो यः स हि सोमं पिबेद्विजः ।
 (या. स्मृ. १. १२४)

इति । त्रैवार्षिकान्नालाभे सोमयागादर्वाचीना दशादय एव
 कार्याः । एतदपि स एवाह—

‘प्राक् सौमिकीः क्रियाः कुर्याद्यस्याऽन्नं वार्षिकं भवेत् ।
 (या. स्मृ. १. १२४)

इति । अल्पधनस्य यज्ञो मनुना निषिध्यते—

‘पुण्यान्यन्यानि कुर्वीत श्रद्धधानो जितेन्द्रियः ।
 न त्वल्पदक्षिणैर्यज्ञैर्यजेताऽर्थं कथञ्चन ॥
 इन्द्रियाणि यशः स्वर्णमायुः कीर्तिं प्रजाः पशून् ।
 हन्त्यल्पदक्षिणो यज्ञस्तस्मान्नाल्पधनो यजेत् ॥
 (म. स्मृ. ११. ३९-४०)

१. A. reads सुपथस्थोऽपि न for विषेद्यपि न स; G. and D. विपविस्थोऽपि न,
 and B. C. F. विषद्य सोऽपि न for the same. २. A. and D. read मधुनाय
 रसेन for मधुनाऽऽज्यरसेन. ३. A. reads तृमये for वृत्तये. ४. D. reads
 सौमिकी क्रिया dropping the visarga; E. reads सौमिकी क्रिया both for
 सौमिकीः क्रियाः. ५. D. reads यजेताऽपि for यजेताऽथ; and G. यजेताऽथ
 किञ्चन for यजेताऽथ कथञ्चन. ६. All but A. read प्रजा for प्रजाः.

इति । मत्स्यपुराणे अपि—

अक्षहीनो दहेद्वाष्टं मन्त्रहीनस्तथोर्व्विजः ।

आत्मानं दक्षिणाहीनो नास्ति यज्ञसमो रिपुः ॥

(म. स्मृ. ११. ४१)

इति । एवञ्च सत्येष्टानि वचनानि 'कन्दैर्भूलैः' इत्यादि-
वचनेन विरुद्धेरेण—इति चेत् । मैवञ् । एतेषां वचनानां काम्य-
यागविषयत्वात् । 'सम्पूर्णानुष्ठानशक्तौ पत्यामेव काम्यं
कर्तव्यम्'—इति षष्ठाध्याये मीमांसितम् । तथा हि—'ऐन्द्राग्र-
मेकादशकपालं निर्व्वपेत् प्रजाकामः'—इत्यत्र किं यथा-
शक्तिप्रयोगेणाप्यधिकारः? उन सर्वाङ्गोपसंहारेण?—इति संशयः ।
नित्येषु यथाशक्तिप्रयोगस्य पूर्वाधिकरणे निर्णीतत्वात् का-
म्येष्वपि तथा—इति प्रोक्ते ब्रूमः । नित्यानामसमर्थेनाप्यपरित्या-
ज्यत्वात् तत्र यथाशक्तिप्रयोगः । अपरित्याज्यानि हि नित्यानि ।
जीवनादिनिमित्तवशेन तत्प्रवृत्तेः । नैमित्तिकं प्रत्यप्रव-
र्तकत्वे । नैमित्तत्वमेव हीयेत । कामना तु न निमित्तं ये-
नावश्यमिष्टिं प्रवर्त्तयेत् । अतो न काम्यस्याप्यपरित्याज्यत्वम् ।
तथा सति फलसिद्ध्यर्थमेव काम्यस्यानुष्ठेयत्वात् फलस्य
च कृत्स्नाङ्गोपकृतप्रधानमन्तरेणानिष्पत्तेः । यदा कृत्स्नाङ्गानुष्ठान-
शक्तिस्तदैव काम्यमनुष्ठेयम्—इति सिद्धान्तः ॥

॥ इति यजनप्रकरणम् ॥

१. B. C. and F. read तथस्विजम for तथस्विज . २. G. reads -प्यधिकारः
for प्यधिकारः. ३. D. and G. omit प्राप्ते. ४. D. replaces तत्र by तथा.
५. A. reads यथाप्रशक्तिः for यथाशक्ति. ६. H. reads -मिष्टिं for -मिष्टि.
७. G. reads काम्यः for काम्यस्य. ८. A. reads कृत्स्नाङ्गानुष्ठाने शक्तिः
for कृत्स्नाङ्गानुष्ठानशक्ति. ९. D. omits इति यजनप्रकरणम्.

इत्थं यजनं निरूपितं याजने तु विधिः श्रूयते—
 'द्रव्यमर्जयन् ब्राह्मणः प्रतिगृहीयाद्याजयेदध्यापयेद्वा' । न
 चायं नित्यविधिः । अकरणे प्रत्यक्षायादिनित्यलक्षणाभावात् ।
 अपि तु काम्यविधिः । द्रव्यार्जनं काम्यस्य तत्राधिकारात् ।
 तत्रापि नापूर्वविधिः । जीवन्नोपायत्वेन याजनस्य प्राप्तत्वात् ।
 तद्धेतुत्वं च मार्कण्डेयपुराणे दर्शितम्—

‘याजनाध्यापने शुद्धे तथा शुद्धः प्रतिग्रहः ।

एषा सम्यक् समाख्याना त्रिविधा तस्य जीविका' ॥

(मा. पु. २८. ४)

इति । नापि परिसंह्या । नित्यप्राप्तेरभावात् । तस्मात् पक्षे
 प्राप्तत्वान्नियमविधिरयम् । स चायं नियमः पुरुषार्थ एव । न तु
 क्रत्वर्थः । द्रव्यार्जनविधानस्य पुरुषार्थत्वेन लिप्तासूत्रे वि-
 चारितत्वात् ।

तथा हि—द्रव्यप्राप्तिः क्रत्वर्था पुरुषार्था वा?—इति संश-
 यः । तत्र पूर्वं पक्षः क्रत्वर्थेयम् । तथा सति नियमस्यार्थवत्त्वात् ।
 ब्राह्मणस्य याजनादिना क्षौत्रियस्य • जयादिना • वैश्यस्य
 कृष्यादिना—इति नियमः । स च पुरुषार्थपक्षे • अन्यैः स्यात् ।

१. A. reads 'द्रव्यमर्जयन्' for 'द्रव्यमर्जयन्'. २. We read with A.; and B. E. G. H. read 'पूतप्रतिग्रहः'; and C. D. F. 'पूतःपरिग्रहः' for 'शुद्धः प्रतिग्रहः'. ३. B. C. D. E. and H. read 'चित्तं' instead of 'चिविधा'. ४. H. reads 'क्षेत्र्यमविधिः' for 'क्षेत्र्यमविधिः'. ५. A. C. and E. read 'पुरुषार्थः' for 'पुरुषार्थः'; and D. reads 'पुरुषार्थे' for the same. ६. B. C. F. and H. read 'तत्रापि' for 'तथा सति'; E. reads 'तथा हि'; while G. only 'तथा'. ७. A. omits 'क्षेत्र्यस्य जयादिना'.

उपायान्तरेणार्जिस्यापि द्रव्यस्य. क्षुप्रतिघातादिपुरुषार्थ-
सम्पादकत्वात्. । क्रतुस्तु नान्यथा सिद्ध्यति । अतस्तत्र निय-
मो ऽर्थवान्-इति. प्राप्ते ब्रूमः । द्रव्यं हि सम्पादितं सत् पुरुषं
'प्रीणयति । अतस्तस्य 'पुरुषार्थत्वं' प्रत्यक्षदृष्टम् । क्रत्वर्थता
तु नियमान्यथाऽनुपपत्त्या कल्प्यते । क्लृप्तं च कल्प्याद्बलीयः ।
सति च पुरुषार्थत्वं क्रतोरपि भोजनादिवत् पुरुषकार्यतया
तदर्थता ऽऽमर्थात् सम्पद्यते । नियमस्तु पुरुषार्थे ऽप्यर्जनविधौ
किञ्चिददृष्टं जनयिष्यति । क्रत्वर्थत्ववादिनो जीवनेलोपेन क्रतु-
रपि न सिध्येत् । अतः पुरुषार्थो याजनादिः-इति सिद्धम् ।

ऋत्विग्भिर्विना याजयिता ऽन्यो न कोऽप्यस्ति-इति चेत् ।
मैवमे । आपस्तम्बसूत्रे षोडशानामृत्विजां वरणमभिधाय या-
जयितुः सप्तदशस्य पृथग्वरणाभिधानात्-

'सदस्यं सप्तदशं कौषीतकिनः समामनन्ति । स कर्मणा-
मुपद्रष्टा भवति'-इति । अत एव त्रसिष्टवंशीत्यन्नस्य सौत्य-
हव्यनामकस्य सहर्षेः प्रश्नवाक्ये देवभागस्य सृञ्जयनामकान्
ब्राह्मणान् प्राति याजकत्वं तैत्तिरीयकब्राह्मणे श्रूयते-

'वासिष्ठो ह सात्यहव्यो देवभागः पश्नच्छत् सृञ्जयान् बहु-
याजिनो यजे'-तै. सं. ६. ६. २) ० ०

१. D. reads नियमो ऽनर्थवानिति. for नियमो ऽर्थवानिति. २. A. reads प्रत्यक्षं द्रष्टव्यम् instead of प्रत्यक्षदृष्टम्. ३. H. in the original has क्लृप्तं च; but in the margin it has been corrected to भुक्तं च. ४. A. omits च. ५. A. and D. read पुरुषार्थतया for पुरुषकार्यतया. ६. A. reads क्रत्वर्थ-
वादिनो for क्रत्वर्थत्ववादिनो. ७. B. C. and F. read सिध्येत् for सिध्येत्.
८. A. substitutes तर्मात् for अतः; while B. C. D. and F. omit both.
९. D. reads ऋत्विग्विना instead of ऋत्विग्भिर्विना. १०. D. omits अस्ति.
११. All except I. omit the following from मैवम् up to वर्णमभिधानात् both
inclusive in the next line. १२. A. reads सात्यहव्यनामकस्य instead of
सात्यहव्यनामकस्य.

इति । तथा कौषीतेकिब्राह्मणे चित्रनामकं प्रति, श्वेतकेतो-
र्याजकत्वमाम्नातम्—

‘चित्रोद्भवो गार्ग्यायणिर्यक्षमाण औरुणि वज्रं । स ह पुत्रं
श्वेतकेतुं प्रजिघाय याजयेत्’—

इति । तस्मिन् ऋत्विज्योऽन्यः सदस्यो याजयिता । ऋ-
त्विजो वा याजयितारः सन्तु । सर्वथा ऽन्यस्ति ब्राह्मणानां
जीवनहेतुर्याजनम् ।

तत्रैतिकर्तव्यतारूपेण कृष्णाजिन-वाससोरन्यतरेणोपवीति-
त्वं तैत्तिरीयके विधीयते—

‘तस्माद्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजयेद्यजेत् वा यज्ञस्य
प्रमृत्या अजिनं वासो वा दक्षिणत उपवीय’— (सै. आ. २. १)

इति । मन्त्रेषु ऋग्यादिज्ञानं च याजनाङ्गत्वेन छन्दो-
गब्राह्मणे समाम्नायते—

‘यो ह वा अविहितार्षेयच्छन्दोदैवतब्राह्मणेन मन्त्रेण
याजयति वा अध्यापयति वा स्थाणुं वर्च्छति गर्त्तं वा पद्यते
वा म्रियते पापीयान् भवन्ति । यातयामान्यस्य छन्दांसि
भवन्ति । अथ यो मन्त्रे मन्त्रे वेदं सर्वमायुरेति । श्रेयान् भवन्ति ।
अयातयामान्यस्य च्छन्दांसिभवन्ति । तस्मादेतानि मन्त्रे मन्त्रे
विद्यात्’— (छं. ब्रा. ३. ७. ५) इति ।

१. A. reads कौषीतिकब्राह्मणे for कौषीतकिब्राह्मणे. २. A. reads चित्रो ह
वे for चित्रोद्भवो. ३. We read with A., all others read -यक्षमाणमारुणि for
-यक्षमाण औरुणि. ४. A. reads प्रतिहूय for प्रजिघाय. ५. D. omits the
whole quotation तस्मात् &c., up to इति after the sentence. ६. B. C. D.
E. and F. read मन्त्रे instead of मन्त्रेषु; and G. H. read मन्त्र-ऋग्यादि-
७. G. reads गर्ते वा पाद्यते for गर्ते वा पद्यते. ८. A. E. G. and H. प्रवर्त्त-
यते for वा म्रियते. ९. A. omits वेदं.

मनु-कचित् याजनेस्य कचित् प्रतिग्रहस्य च निन्दिते-
त्वात् तदनुष्ठानवतः स्वाध्याय-गायत्र्योर्जप आम्नायते-

‘रिच्यते इव वा एष प्रैव रिच्यते यो याजयति प्रति वा
गृह्णाति । याजयित्वा प्रतिगृह्ण वा अनश्नन् त्रिःस्वाध्यायं वेद-
मधीयीत । त्रिंशत् वा सावित्रीं गायत्रीमन्त्रान्तिरिचयति’-

(तै. आ. २. १५)

इति । तथा अन्यत्रापि-

‘हुहे ह वा एष छन्दांसि यो याजयति स येन यज्ञ-
क्रतुना याजयेत् । सो ऽरण्यं परेत्य शुचौदेशे स्वाध्यायमेवे-
नमधीयन्नासीत । तस्यानशनं दीक्षा, स्थानमुपसदः, आसनस्य
सुत्या, वाष् जुहूः, मन उपभृत्, धृतिः सुवा, प्राणो हविः,
सामाध्वर्युः, स वा एष यज्ञः प्राणदक्षिणोऽनन्तदक्षिणः
समृद्धतरः’ ।

(तै. आ. २. १६)

इति चेत् । नायं दोषः । तस्य अयाज्ययाजनविषयत्वात् ।
जीवितात्ययमोपन्नस्य प्राणरक्षणार्थमथाज्ययाजनमपि सम्भा-
व्यते । तथा च वाजसनेयब्राह्मणम्-

‘प्राणस्य वै सम्राट्कामायाज्यं याजयति अप्रतिग्रा-
ह्यस्य वा प्रतिगृह्णाति’-

(बृ. उ. ४. १. ३)

इति । तत्र प्रायश्चित्तं छन्दोसा आसनान्ति-

१. All except A. read यजनं for याजनस्य; and omit the following:—
कचित् प्रतिग्रहस्य च. २. B. C. E. F. and H. read निन्दितत्वात् instead
of निन्दितत्वात्. ३. All except A. omit वा. ४. A. and G. read प्रैव for
प्रैव. ५. All except A. omit the whole of the remaining beginning with
तस्यानशनं; and ending with समृद्धतरः in the next but one line. For
इति चेत् they all read only इति. ६. None of the copies referred men-
tion तस्य, but we think that the connection requires it here. ७. B. C.
E. F. and H. read प्राणरक्षणार्थम् for प्राणरक्षणार्थम्. ८. D. omits अपि.
९. B. C. D. E. F. and G. read अप्रतिगृह्यस्य; and H. reads अप्रतिगृह्यः
and all omit वा.

‘तदा अयाज्ययाजने दक्षिणास्त्यक्त्वा मासं चतुर्थकाले भुञ्जानः तन्मन्त्रान् गायेत्’—छं. ब्रा. ५. १. ३)

इति । तथा सुमन्तरपि स्मरति—

‘गूढयाजकः सर्वद्रव्यपरित्यागात् भूतो भवति। अभिशस्त-
पतित-पौनर्भव-भूणह-पुंश्चल्यशुचि-शस्त्रकार-तैलिक-चाक्रिक-
ध्वजि-सुवर्णकार-वर्मकार-पङ्क-वर्धकि-गण-गणिक-सौनि-
क-व्याध-निषाद-रजक-बुरुड-वर्मकारा अभोज्यान्त्रा अप्रति-
ग्राह्या अयाज्याश्च’ ।

इति । तथा च वसिष्ठः—

‘दक्षिणात्यागाच्च पूतो भवतीति विज्ञायते’ ।

इति । तथा बौधायनोऽपि—

* ‘बहुप्रतिग्राह्यस्य वा प्रतिगृह्य अयान्यं वा याजयित्वा

* अत्रेदमगुह्यमिव प्रतिभाति । बौधायनस्मृतौ तु—‘बहु प्रतिग्राह्यस्याप्रतिग्राह्यस्य वा प्रतिगृह्य अयाज्यं वा याजयित्वा अनाश्वानस्य वा ऽन्मशित्वा तरत्समन्दीयं जपेदिति’ ।

१. A. omits तदा; II. reads तत्रायाज्ययाजने for तदा अयाज्ययाजने.
२. D. reads दक्षिणां instead of दक्षिणाः. ३. B. C. and F. read
-जाने इत्येतद्वारयेदिति; E. reads जान इत्येतद्वारयेदिति; G. जान
इत्येतद्वारयेदिति; and H. जान इत्येतद्वारयेदिति all for तन्मन्त्रान् गाये-
दिति. ४. All except A. and D. read गूढद्रव्यपरित्यागात् for सर्वद्रव्यपरित्या-
गात्. ५. Excepting A. and I. others read -वस्त्रकार-; G. reads -वस्त्रकारि-
for -वस्त्रकार-. ६. A. reads आलेख्यक- for -वर्मकार-; and omits -बुरुड-; B.
C. and F. read -वेष्टक- for -वर्मकार- with no other difference; E. reads
after -सुवर्णकार-, -वर्मक-पङ्क-बन्धकिनेय गाणिक-सौनिक-व्याध-निषाद-रजक-
बुरुड-वर्मकारा for all that follows in the text; G. continues after स्वर्णकार,
वर्मकर-पङ्क-बन्धकिलागणिक- all the rest is that given in the text with
the exception -वर्मकार- for which it substitutes वर्मकारा; and II. proceeds
after -सुवर्णकार-, वर्मकर-पङ्क-बन्धकि- all the remaining being that of the
text except -बुरुड- for which it reads -वरुड-. ७. A. reads विज्ञायते for
विज्ञायति. ८. B. C. D. and F. read -बहुप्रतिग्राह्यस्य for बहुप्रतिग्राह्यस्य.
९. All except A. omit वा.

नाद्योत् । तद्वै चोन्नमशिव्वा तरस्सैमन्दोयं जपेत् ।

(बौ. स्मृ. २. २. ५. ८)

इति । अयाज्ययाजकलक्षणं देवलेन दर्शितम्—

यः शूद्रान् पतिताश्चापि याजयेदर्थकारणात् ।

याजितो वा पुनस्ताभ्यां ब्राह्मणो ज्याज्ययाजिकः ।

इति ।

॥ इति याजनप्रकरणम् ॥

तदेवं याजनं निरूपितम् । अथ दान-प्रतिग्रहौ निरूप्येते ।

तत्र दानदिषया श्रुतिः—

‘दानमिति सर्वाणि भूतानि प्रशंसन्ति ।

दानान्नातिदुश्चरं तस्माद्दाने रमन्ते’—

(म. ना. उ. २१. २)

इति । तथा वाक्यान्तरमपि—

‘दानं यज्ञानां वरूथं दक्षिणां लोके दातारं सर्वभूतान्युपजीवन्ति । दानेनारातीनपानुदन्त । दानेन द्विषन्तो मित्रा भवन्ति । दाने सर्वं प्रतिष्ठितम् । तस्माद्दानं परमं वदन्ति’—

(म. ना. उ. २२. १.)

अयमेव पाठो युक्तः । प्रतिग्राह्यस्य बहु प्रतिगृह्य अप्रतिग्राह्यस्य वा प्रतिगृह्येति योजना । प्रतिग्राह्यस्यापि बहुप्रतिग्रहो निषिद्धः । ‘यावता पञ्चयज्ञानां कतुर्निर्वहणं भवेत्’ इत्यादिना मूलं स्पष्ट एव ।

१. A. reads नाद्यात् for नाद्यात्. २. A. D. and G. substitute वा for च. ३. A. omits तरस्समन्दीय जपेति. ४. E. reads only अयाजकलक्षणं for अयाज्ययाजकलक्षणं. ५. A. omits इति. ६. A. reads इत्थं for तदेवं. ७. B. C. D. E. and F. read भूतानि for भूतानि. ८. A. reads दुश्चरम् for दुश्चरम्.

इति । आदित्यपुत्रेण अपि—

‘न दानादेधिकं किञ्चित् दृश्यते भुवनत्रये ।

दानेन प्राप्यते स्वर्गः श्रीदानेनैव लभ्यते ।

दानेन शत्रून् जयन्ति व्याधिदानेन नश्यन्ति ।

दानेन लभ्यन्ते त्रिव्या दानेन युवतीजनः ॥’

धर्मा-र्थ-काम-मोक्षाणां साधनं परमं* स्मृतम् ।

इति । एवं श्रुति-स्मृतिभ्यां प्रशंसापूर्वको दानविधि-
र्ज्ञातः । याज्ञवल्क्यस्तु साक्षाद्दानं व्यधत्—

‘दातव्यं प्रत्यहं पात्रे निमित्तेषु विशेषतः ।

याचितेनापि दातव्यं श्रद्धापूर्वं तु शक्तितः ॥ (२०३)

गो-भू-तिल-हिरण्यादि पात्रे दातव्यमार्चितम् ।

नापात्रे विदुषा किञ्चिदात्मनः श्रेय उच्छ्रुतम् ॥

(या. स्मृ. १. २०१)

इति । एतयोरेकन्यतरः स्वरूपविधिः । इतरस्तु गुणविधिः ।
मनुरपि—

‘दानधर्मं निधेवेत नित्य-नैमित्तसंज्ञकम् ।

परितुष्टेन भावेन पात्रमासाद्य शक्तितः ॥

(म. स्मृ. ४. २३७)

* अत्र ‘दानं’ इति शेषः ।

१. H. reads दानावधिराम्नातः instead of दानविधिरुर्जातः. २. All except A. read याज्ञवल्क्योऽपि for याज्ञवल्क्यस्तु. ३. B. C. and F. read -पूतं तु for -पूर्वं तु. ४. We read with A., while all others read -मार्चितम् for -मर्चिते. ५. A. D. E. G. and H. read तयोः for एतयोः. ६. A. and D. read दानं धर्मं for दानधर्मं. ७. B. C. G. and H. read नित्य-नैमित्तक-पौष्टिकम् for नित्य-नैमित्तसंज्ञकम्, D. for the same reads नित्यपौष्टिक-पौष्टिकम्; while E. and F. read नित्य-नित्यक-पौष्टिकम्. ८. D. reads वेदेन for भावेन.

इति । ब्रह्मपुराणे च अदाने विज्ञवैयर्थ्योक्तिपुरःसरं दानं विहितम्—

‘यस्य वित्तं न दानाय नोपभोगाय देहिनाम् ।
नापि कर्त्तव्यं न धर्माय तस्य वित्तं निरर्थकम् ॥
तस्माद्वित्तं समासाद्य देवाद्वा पौरुषादथ* ।
दद्यात् सत्यम् द्विजातिभ्यः कीर्त्तनानि न कारयेत्’ ॥

इति । विष्णुधर्मोत्तरे दानाभावे बाधमाह—

‘सीदते द्विजमुख्याय यो धनं न प्रयच्छति ।
सामर्थ्ये सति दुर्बुद्धिर्नरकायोपपद्यते’ ॥

इति । ब्रह्मपुराणे अपि—

‘सदाचाराः कुलीनाश्च रूपवन्तः प्रियंवदाः ।
बहुश्रुताश्च धर्मज्ञा याचमानाः परान् गृह्णन् ॥
दृश्यन्ते दुःखिताः सर्वे प्राणिनः सर्वदा मुने ।
अदत्तदाना जायन्ते परभाग्योपजीविनः’ ॥

इति । व्यासोऽपि—

‘अक्षरद्वयमभ्यस्तं नास्तिनास्तीति यत् पुरा ।
तदिदं देहिदेहीनि विपरीतमुपस्थितम्’ ॥

* देवं पुरुषकारश्चेत्युभावपि न गृह्यत्वेन कार्यकरणक्षमौ । देव-पौरुषादिनस्तु तयोरितरेतरानपेक्षत्वं सादोषं प्रतिपादयन्ति । तथापि ‘उभयमेव पक्षयोर्भावा यथा खे पक्षिणां गतिः । देवं पुरुषकारश्च निर्दिष्टौ कार्यतिद्वयं’ अयमेव सिद्धान्तः । उभयथापि प्राप्तं वित्तं देयमित्यर्थः ।

१. A. substitutes अग्निः for बह्वि-; २. D. E. G. and H. omit अदाने.
३. B. C. E. F. and H. read -व्यर्थोक्ति- for -वैयर्थ्योक्ति-; while G. reads -व्यवोक्ति- for the same. ४. D. reads पुरुषादथ for पौरुषादथ. ५. B. C. D. and F. read बाधकमाह for बाधमाह. ६. All except A. substitute हु for च. ७. A. B. C. D. and E. read दुःखिता for दुःखिताः.

इति । स्कान्दे अपि—

‘देहीत्येवं ब्रुवन्नर्था जनं बोधयतीव सः ।
यदिदं कष्टमर्थित्वं प्रागदानफलं हि तत् ॥
एकेन तिष्ठता अधस्तादन्धेन्ध्रेपरि तिष्ठता ।
दातृ-याचकयोर्भेदः कराभ्यामेव सूचितः ॥
दीयमानं तु यो मोहात् गो-विषा-ग्नि-क्षेत्रेषु च ।
निवारयति पापात्मा तिर्यग्योनिं व्रजेत्तु सः’ ॥

इति । शातार्त्तपो अपि—

‘मो ददस्वेति यो वृथात् गव्यग्नौ ब्राह्मणेषु च ।
तिर्यग्योनिशतं गत्वा चाण्डालैर्वभिजायते’ ॥

(वृ. गौ. स्मृ. १४. ४१)

इति । दानस्य स्वरूपं तत्रैतत्कर्तव्यतां च देवलोदर्शयति—

‘अर्थानामुदिते पात्रे श्रद्धया प्रतिपादनम् ।
दानमित्यभिनिर्दिष्टं व्याख्यानं तस्य वक्ष्यते ॥
द्विहेतुं षडधिष्ठानं षडङ्गं षड्विपाकयुक् ।
चतुःप्रकारं त्रिविधं त्रिणारं दानमुच्यते’ ॥
नाल्पत्वं वा बहुत्वं वा दानस्याभ्युदयावहम् ।
श्रद्धा-भक्ती*, च दानानां वृद्धि-श्रेयस्करे हि ते ॥

* यस्मात् श्रद्धा च भक्तिश्च दानस्य वृद्धि-श्रेयस्करे तस्मादिमौ द्वौ हेतू भवतः इति योजना ।

१. A. omits इति. २. B. C. D. and F. read य इदं. ३. D. reads अदस्वेति for मा दस्वेति. ४. A. D. G. and H. read इवपि जायते for ष्वभिजायते. ५. D. reads दानध्वरूपं for दानस्य स्वरूपं. ६. A. E. G. and H. read द्विहेतुः for द्विहेतु. ७. A. reads त्रिनारं for त्रिणारं; E. त्रिवाचं; G. त्रिवाचां and H. त्रिवाचं; all for the same. ८. All except A. read श्रद्धाभक्तिश्च. for श्रद्धा-भक्ती च. ९. We read with A., all others read वृद्धि-श्रेयस्करे for वृद्धि-श्रेयस्करे.

'धर्मभर्थं च कामं च व्रीडा-हर्ष-भयानि च ।
 अधिष्ठानानि दानानां षडेतानि प्रचक्षते ॥
 पात्रेभ्यो* दीयते नित्यमनपेक्ष्य प्रयोजनम् ।
 केवलं त्यागबुद्ध्या यत् धर्मदानं तदुच्यते ॥
 प्रयोजनमुपेक्ष्यैव प्रसङ्गात् यत् प्रदीयते ।
 तदर्थदानमित्याहुरैहिकं फलहेतुकम् ॥
 स्त्री-पान-मृगया-श्वाणां प्रसङ्गाद् यत् प्रदीयते ।
 अनर्हेषु च रागेण कामदानं तदुच्यते ।
 संसदि व्रीडया तुल्यैवर्थो र्थभ्यः प्रयाचितः ॥
 प्रदीयते च यद्दानं व्रीडादानमिति स्मृतम् ।
 दृष्ट्वा प्रियाणि श्रुत्वा वा हर्षाद् यद्यत् प्रयच्छति ॥
 हर्षदानमिति प्राहुर्दानं तद्धर्मचिन्तकाः ॥
 आक्रोशा-ऽनर्थ-हिंसानां प्रतीकाराय यद्दद्यात् ।
 दीयते वापकर्तृभ्यो भयदानं तदुच्यते ॥
 दाता प्रतिग्रहीता च श्रद्धा देयं च धर्मयुक् ।
 देश-कालौ च दानानामङ्गान्येतानि षड्विदुः ॥

* अधिष्ठानान्येव विवृणोति पात्रेभ्य इत्यादिना ।

१. D. reads -मनपेक्ष्य for -मनपेक्ष्य. २. A. reads धर्मबुद्ध्या for त्यागबुद्ध्या. ३. D. reads वैदिकम् for ऐहिकम्. ४. B. C. and F. read राजेन्द्र for रागेण. ५. For तुल्यैवर्थो र्थभ्यः प्रयाचितः A. reads -स्तुत्या चार्थो र्थभ्यः यत्प्रयाचितम्; and B. C. E. F. H. read स्तुत्या चार्थो र्थभ्यः प्रयाचितः. ६. A. omits तत् and reads -विचिन्तकाः for -चिन्तकाः. ७. A. and I. read आक्रोशानार्थं for आक्रोशानर्थः, and D. चिन्तानां for -हिंसानां. ८. All others except A. read भवेत् for भयात्. ९. B. C. and F. read वापहारिभ्यो; and D. reads the whole line दीयते तापकर्तृभ्यः तापघ्नानं तदुच्यते; E. G. वापकर्तृभ्यः, and H. reads तत्प्रकर्तृभ्यः for वापकर्तृभ्यः. १०. D. has तु for च; and all others except A. D. read कर्मयुक् for धर्मयुक्.

अपापरोगी* धर्मात्मा दित्सुरव्यसनः शुचिः ।
 अनिन्यजीवकर्मा च षड्भिर्दाता प्रशस्यते ॥
 त्रिशुक्लः कृशवृत्तिश्च घृणालुः सकलेन्द्रियः ।
 विमुक्ता योनिर्दोषेभ्यो ब्रह्मणः पात्रमुच्यते' ॥
 इति । 'त्रिशुक्ल' इति त्रिभिर्माता-पित्राचार्यैः शिक्षितत्वेन शुद्धः ।
 'शौचं शुद्धिर्महाप्रीतिरर्थिनां दर्शने' तथा ।
 सत्कृतिश्चाप्नमूया च दानैश्च द्वेत्युदाहृता ॥
 अपराबाधमक्लेशं स्वयत्नेनार्जितं धनम् ।
 स्वल्पं वा विपुलं वा ऽपि देयमित्यभिधीयते ॥
 यद्यत्र दुर्लभं द्रव्यं यस्मिन् काले ऽपि वा पुनः ।
 दानार्हो देश-कालौ तौ स्यातां श्रेष्ठौ न चान्यथा ॥
 अवस्था-देश-कालानां पात्र-दात्रोश्च सम्पदा ।
 हीनं वापि भवेच्छ्रेष्ठं श्रेष्ठं वा ऽप्यन्यथा भवत् ॥
 दुष्फलं निष्फलं हीनं तुल्यं विपुलमक्षयम् ।
 नास्तिक-स्तेन हिंसेभ्यो जाराय पतिताय च ॥

* अज्ञान्येव विभजति अपापरोगीत्यादिना ।

१. A. reads अन्व्यजत for अह्वयसन. if this reading is applied here the number shown in the text falls below, i. e., it becomes only five.
 २. A. only reads शुक्लवृत्ति- for कृशवृत्ति-. ३. A. and I. read संयतेन्द्रियः for सकलेन्द्रियः; but this does not give good meaning. ४. A. and I. read शौचं शुद्धिः for शौचशुद्धिः. ५. I. only reads -रर्थिनां for -रर्थिनां. ६. A. and I. read हाने- for दान-. ७. A. and I. read आचारा- for अपरा-; this reading does not give good sense. We refer to the twelfth line from this line.
 ८. A. reads चा- for वा-. ९. All others except A. and I. read चोराय for जाराय; we do not accept this because स्तेन being in the verse before the word चोर gives the same meaning, therefore our reading gives good sense.

मङ्ग्याकयुगुद्दिष्टं षडेतानि, विपाकृतः ।
 पिशुन-भूणहन्तृभ्यां प्रदत्तं दुष्फलं भवेत् ॥
 महदप्यफलं दानं श्रद्धया परिवर्जितम् ।
 परबाधोकरं दानं स्कीतमप्यूनतां व्रजेत् ॥
 यथोक्तमपि चेद्दत्तं चित्तेन क्लृप्तेन तु १ ,
 तत्तु सङ्कल्पदोषेण दानं तुल्यफलं भवेत् ॥
 युक्ताङ्गैः सकलैः पङ्क्तिर्दानं स्याद्विपुलोदयम् ।
 अनुक्रोशवशात्तं दानमक्षयतां व्रजेत् ॥
 ध्रुवमाजलिकं काम्यं नैमित्तिकमिति क्रमात् ।
 वैदिको दानमार्गोऽयं चतुर्धा वर्ण्यते बुधैः ॥
 प्रपा-ऽऽराम-तडागादि सर्वकामफलं ध्रुवम् ।
 तदाऽऽजलिकमित्याहुर्दीयते यद्दिने दिने ॥
 अपत्य-विजयैश्वर्य-स्त्री-बालार्थं यदिष्यते ।
 इच्छासंज्ञं तु यद्दानं काम्यमित्यभिधीयते ॥
 कालापेक्षं क्रियापेक्षमर्थापेक्षमिति स्मृतम् ।
 त्रिधा नैमित्तिकं प्रोक्तं, सहोमं होमवर्जितम् ॥

१. All others except A. and I. read बाधकरं for बाधाकरं. २. All others except A. read कृतं for स्कीतं; and D. reads remaining half line कृतं च न कृतं भवेत् १. ३. A. and I. read यद्दानं for चेद्दत्तं; and E. G. H. read चेद्दत्तं, but this does not give good sense. ४. B. C. E. F. and H. read यत्तु for तत्तु; but this is not applicable to the past line. ५. D. reads दोषेण for दोषेण. ६. B. C. F. and H. read अनुक्रोशवता for अनुक्रोशवशात्; F. and G. read वरावत्तम्. ७. A. and D. read अक्षयतां for अक्षयतां. ८. A. reads दिव्यं च, and I. इविको for वैदिको. ९. D. reads वर्णितो for वर्ण्यते. १०. All others except A. I. read द्विजैः for बुधैः. ११. A. D. and G. read फलप्रदं for फलं ध्रुवम्; as the four divisions are quoted in the preceding line such as ध्रुवं, आजलिकं, काम्यम्, नैमित्तिकम्, the reading फलप्रदं is not applicable here. १२. D. reads तत्तु for यत्तु.

तत्रोत्तमानि चत्वारि मध्यमानि विधानतः ॥
 अधमानि तु शेषाणि त्रिविधत्वमिदं विदुः ।
 अन्न-विद्या-मधु-स्त्रीणां गो-भू-रुक्मा-ऽश्व-हस्तिनाम् ॥
 दानान्युत्तमदानानि उत्तमद्रव्यदानतः ।
 विविधाद्वाच्छादनं वासः परिभोगौषधानि च ॥
 दानानि मध्यमानीति मध्यमद्रव्यदानतः ।
 उपानत्-प्रेष्य-यानानि छत्र-पात्रा-ऽसनानि च ॥
 दीप-काष्ठ-फलादीनि चरमं बहुवार्षिकम् ।
 बहुत्वादर्थज्ञानानां संख्या शेषेषु नेष्यते ॥
 अधमान्यवशिष्टानि सर्वदानान्यतो विदुः ।
 इष्टं* दत्तमधीतं वा प्रणश्यत्यनुकीर्तनात् ॥
 श्लाघा-ऽनुशोचनाभ्यां वा भग्नंतेजो विपद्यते ।
 तस्मादात्मकृतं पुण्यं न वृथा परिकीर्तयेत् ॥
 इति । नित्य-नैमित्तिक-काम्य-विमलाख्याश्चत्वारो दान-
 भेदाः पुराणसरे दर्शिताः । सात्त्विकादिभेदान् भगवानाह—
 'दातव्यमिति यत्नं दीयते अनुपकारिणै ।
 देशे कुले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥

*यदुक्तं त्रिणाशमिति तानेव त्रिविधान् नाशानाह । इष्टमित्यादिना ।

१. A. and I. read न चोत्तमानि, and D. reads न चोत्तमानि for तत्रोत्तमानि.
 २. D. reads अन्नविद्या for अन्न-विद्या. ३. A. -वधू-वस्त्र- for-मधु-स्त्रीणां
 and D. II. read -मधुवस्त्राणां for the same. ४. D. reads -हस्तिनाम् for
 -हस्तिनाम्. ५. A. D. G. and H. read विद्यात् for विद्यात्. ६. A. reads
 -साक्षिकं for -वार्षिकम्. ७. E. H. and I. read -तेजो for-तेजा-. ८. A. B. C.
 and F. omit इति. ९. I. alone takes च. १०. G. H. read काले देशे च
 for देशे काले च ; but such reading does not occur in गीता.

मत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः ।
 दीयते च परिक्रिष्टं तद्राजसमुदाहृतम् ॥
 अदेश-काले यज्ञानमपात्रेभ्यश्च दीयते ।
 असंस्कृतमवज्ञानं तत्तामसमुदाहृतम् ॥

(भ. गी. १७. २०-२२)

इति । तत्र फलविशेषो विष्णुधर्मोत्तरे दर्शितः—
 तामसानां फलं भुङ्क्ते तिर्यक्त्वे मानवः सदा ।
 वर्णसङ्करभावेन वार्द्धके यदि वा पुनः ॥
 बाल्ये वा दासभावेन नात्र कार्या विचारणा ।
 अपोऽन्यथा तु मानुष्ये राजसानां फलं भवेत् ॥
 सात्विकानां फलं भुङ्क्ते देवत्वं नात्र संशयः ।

इति । तत्र दानपात्रमाह याज्ञवल्क्यः—

‘ न विद्याया केवलया तपसा वाऽपि पात्रता ।
 यत्र वृत्तमिमे चोभे तद्धि पात्रं प्रचक्षते ’ ॥
 (या. स्मृ. १. २००)

इति । यमोऽपि—

‘ विद्यायुक्तो धर्मशीलः प्रहमान्तः
 क्षान्तो दान्तः सत्यवादी कृतज्ञः ।
 स्वाध्यायवान् धृतिमान् गोशरण्यो
 दाता यज्वा ब्राह्मणः पात्रमाहुः ’ ॥

१. G. alone reads तिर्यक्त्वं for तिर्यक्त्वे. २. All except A. II. I. read समभा- for ससभा-, the reading समभावेन is marginally noted afterwards on II. by striking off that the समभाव. ३. D. and G. read राक्षसानां for राजसानां; this is quite contrary to what is meant by the author. ४. D. omits the word ज्ञान- before -पात्र-. ५. A. धर्मवान्. ६. This quotation cannot be found in the यमस्मृति (Calcutta Edition by Jivanand).

इति । वसिष्ठः—

‘किञ्चिद्वेदमयं पात्रं किञ्चित् पात्रं तपोमयम् ।

पात्राणामपि तत्पात्रं गूढात्रं यस्य नोदरे’ ॥

(व. स्मृ. ६. २६१; व्या. स्मृ. ४. ३३)

इति । बृहस्पतिः—

‘आगमिष्यति यत् पात्रं तत् पात्रं तारयिष्यति’ ।

(व्या. स्मृ. ४. ३२)

इति । विष्णुधर्मोत्तरे—

‘पतनात् त्रायते यस्मान् तस्मान् पात्रं प्रकीर्तितम्’ ।

इति । स्कन्दपुराणे पात्रविशेषो ऽभिहितः—

‘प्रथमं तु गुरोर्दानं दद्याच्छ्रेष्ठमनुक्रमात् ।

ततो ऽन्येषां च विप्राणां दद्यात् पात्रानुसारतः ॥

गुरोरभावे तत्पुत्रं तद्वार्या तत्सुतां तथा ।

पौत्रं प्रपौत्रं दौहित्रमन्यं वा तत्कुलोद्भवम् ॥

तेदानातिक्रमे दानं प्रत्युताऽधोगतिप्रदम्’ ।

इति । यमो ऽपि—

‘सममब्राह्मणे दानं द्विगुणं ब्राह्मणब्रुवे ।

प्राधीते शतसाहस्रमनन्तं वेदपारगे’ ॥

(व्या. स्मृ. ४. ४१; द. स्मृ. ३. २५)

इति । ‘प्राधीतः’ प्रारब्धाध्ययन इत्यर्थः । संवर्तः—

१. D. reads वसिष्ठः, and all others except A. read विहितः for ऽभिहितः. २. D. reads -विष्ट- for -अष्ट-. ३. B. C. E. and F. read तदाना-, and H. reads नदाना- for तदाना-. In II. its original reading being struck there on the margin written as न तस्यातिक्रमे दानं &c. ४. D. reads -क्रमान् for -क्रमे. ५. D. reads ब्राह्मणे ऽग्रते for ब्राह्मणब्रुवे.

‘उत्पत्ति-प्रलयौ चैव भूतान्धमागतिं गतिम् ।

वेत्ति विद्यामविद्यां च स भवेद्वेदपारगः’ ॥

इति ।

‘शूद्रे समगुण दानं वैश्ये तद्विगुणं स्मृतम् ।

क्षत्रिये त्रिगुणं प्राहुः षड्गुणं ब्राह्मणे स्मृतम्’ ॥

इति । शूद्रादीनां पात्रत्वप्रतिपादनमन्नदानादिविषयम् ।

‘कृतान्नमितरेभ्यः’ (गौ. स्मृ. ५. ९)

इति नौतमवचनान् । व्यासः—

‘माता-पित्रोश्च यद्वत्तं भ्रातृ-स्वसृ-मुतासु च ।

जाया-ऽऽत्मजेषु यद्वत्तं सो ऽर्जन्यः स्वर्गसंक्रमः ॥

पितुः शतगुणं दानं सहस्रं मातुरुच्यते ।

अमन्नं दुहितुर्दानं सोदर्ये दत्तमक्षयम्’ ॥

(व्या. स्मृ. ४. ३०-३१)

इति । भविष्योत्तरे—

‘न केवलं ब्राह्मणानां दानं सर्वत्र शस्यते ।

भगिनी-भागिनेयानां मातुलानां पितुः स्वसुः ॥

दरिद्राणां च बन्धूनां दानं कौटिल्यं भवेत्’ ।

इति । शास्त्रातपो अपि—

१. II. omits ‘प्राधीतः प्रारब्धाध्ययन इत्यर्थः । संवर्त -’ उत्पत्ति-प्रलयौ चैव भूतानामागतिं गतिं । वेत्ति विद्यामविद्यां च स भवेद्वेदपारगः’ इति. २. D. omits इति. ३. A. B. C. I. read दानविषयं for दानादिविषयम्; while H. reads अन्नदातिरिक्तविषयम्. ४. स धर्मः for सो ऽर्जन्यः. ५. A. इति is superfluous. ६. D. omits इति. ७. D. reads सर्वं प्रशस्यते for सर्वत्र शस्यते. ८. D. reads भगिनां for भगिनी-. ९. A. B. C. and E. read पितृव्यसुः for पितुः स्वसुः.

‘सन्निरुष्टमधीयानमतिक्रामति यो द्विजम् । .

भोजने चैव दाने च दहत्यासप्तमं कुलम् । ॥

(व्या. स्मृ. ४. ३७)

इति । महाभारते अपि—

‘हुतस्वा हतदाराश्च ये विप्रा देशविप्लवे । .

अर्थार्थमभिगच्छन्ति तेभ्यो दत्तं मन्नाफलम् । ॥

इति । अपात्रमाह मनुः—

‘न वार्यपि* प्रयच्छेत्तु बैडालव्रतिके द्विजे । .

न व्रकव्रतिके पापे नावेदविदि धर्मवित् ॥

त्रिष्वप्येतेषु दत्तं हि त्रिभिर्नाऽप्यर्जितं धनम् ।

दातुर्भवत्यनर्थाय परत्राऽदातुरेव च ॥ .

यः कारणं पुरस्कृत्य व्रतचर्यां निषेवते । .

पापं व्रतेन संज्ञाय बैडालं नाम तद्व्रतम्” ॥

* ‘वार्यपि’ इत्यनेन अतिशयोक्त्या द्रव्यान्तरदाननिषेधो ज्ञेयः ।
वारिणस्तु सर्वार्थत्वादनिषेध इति बोध्यम् । ‘पापे’ इत्यत्र ‘विप्रे’ इति
मूले विष्णुस्मृतौ च पाठः ।

† मनुस्मृतौ तु नायं श्लोक उपलभ्यते । अस्य स्थाने—

‘धर्मध्वजी सद्ग्रा लुब्धश्छात्रिको लोकदम्भकः ।

बैडालव्रतिको ज्ञेयो हिंस्रः सर्वाभिसन्धकः’ ॥

इति दृश्यते । विष्णुस्मृतावप्येवमेव । मेधातिथ्यादिभिस्त्वमेव व्याख्यातः ।

‘यस्य धर्मध्वजो नित्यं सुरध्वज इवोच्छ्रितः ।

प्रच्छन्नानि च पापानि बैडालं नाम तद्व्रतम्” ॥

इति चोपलभ्यते । त्रयो ज्ञेयते बैडालव्रतप्रतिपादकाः प्रायशः स-
मानार्थका एव । उपलभ्यन्ते च तत्र तत्र विभिन्नेषु पुराणादिग्रन्थेषु ।

१. A. alone reads -मतिक्रिष्टं for -मधीयानं. २. A. D. and I. omit अपि;
while H. omits the whole. महाभारते अपि. ३. I. only reads दानं for दत्तं.
४. B. C. E. F. and H. read अण्वपि, and A. reads अन्येपि for, वार्यपि.

अधोदृष्टिर्नैकृतिकः स्वार्थसन्धानतत्परः ।

शठो मिथ्याविनीतश्च बकव्रतेचरो द्विजः' ॥

(म. स्मृ. ४. १९२-१९६ ; वि. स्मृ.

इति । शातातपो ऽपि-

९३. ७-९)

‘नष्टं देवलके दत्तमप्रतिष्ठं च वार्धुषौ ।

यच्च वाणिजके दत्तं न च तत् प्रेत्य नो इह' ॥

इति । देवलकश्च स्कान्दे दर्शितः-

‘देवार्चनरतो विप्रो वित्तार्थी वत्सरत्रयम् ।

स वै देवलको नाम हव्य-कव्येषु गर्हितः' ॥

इति । वृद्धमनुः-

‘पात्रंभूतो ऽपि यो विप्रः प्रतिगृह्य प्रतिग्रहम् ।

असत्सु विनियुञ्जीत तस्मै देयं न किञ्चन ॥

सञ्चयं कुरुते यश्च प्रतिगृह्य समन्ततः ।

धर्मार्थं नोपयुञ्जे च न तं तस्करमर्चयेत्' ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरे-

‘परस्वादेर्वृथा दानमशेषं परिकीर्तितम् ।

आरूढपतिने चैव अन्यथासैर्धनैश्च यत् ॥

व्यर्थमब्राह्मणे दानं पतिते तस्करे तथा ।

गुरोश्चा ऽप्रीतिजनके कृतघ्ने ग्रामयाजके ॥

१. A. reads 'वृत्तिकरः, and G. द्रतधरः for द्रतचरः. २. H. omits शातातपो ऽपि. ३. D. omits from देवलकश्च स्कान्दे दर्शितः to गर्हितः. ४. A. reads 'कव्येषु गर्हि' for 'कव्येषु गर्हि'. ५. A. reads नोपयुञ्जीत for नोपयुञ्जे च. ६. A. D. E. G. H. and I. read परस्थाने for परस्वादेः. ७. I. reads आरूढे for आरूढः.

वेदविक्रयके चैव यस्य चोपपत्तिर्गृहे, ।
 स्त्रीभिर्जितेषु यद्वत्तं व्योलग्राहे तथैव च ॥
 ब्रह्मबन्धौ च यद्वत्तं यद्वत्तं वृषलीपतौ ।
 परिचारेषु यद्वत्तं वृथा दानानि षोडश' ॥

इति । महाभारते—

‘पञ्चन्ध-वधिरा मूका व्याधिनोप्रेहताश्च ये ।
 भर्तव्यास्ते महीराज न तु देयः प्रतिब्रहः’ ॥

इति । पात्रोपेक्षणमपात्रदानं च मनुर्निषेधति—

‘अनर्हते यद्वदाति न ददाति यदर्हते ।
 अर्हानर्हापरिज्ञानाज्ञानाद्धर्माश्च हीयते’ ॥

(म. स्मृ. ३. ९९; म. भा. शां. २०. ९)

इति । भविष्योत्तरे देयस्वरूपं निरूपितम्—

‘यद्यदिष्टं विशिष्टं च न्यार्यशप्तं च यद्ववेत् ।
 तत्तद् गुणवते देयमित्येतद्दानलक्षणम्’ ॥

(म. स्मृ. ३. ११९; वि. स्मृ. ९३. ३५;

सं. स्मृ. ४६; म. पु. १४५. ५१)

इति । अशेषस्य देयत्वप्राप्तौ विशेषमाह याज्ञवल्क्यः—

‘स्वकुटुम्बाविरोधेन देयं दार-सुतादृते ।

नान्वये* सति सर्वस्वं यच्चान्यस्मै प्रतिश्रुतम्’ ॥

(या. स्मृ. २. १७५)

* कुटुम्बभरणावशिष्टं दार-सुतौ वर्जयित्वा देयम् । पुत्र-पौत्रादिरूपे
 ऽन्वये सति तु विशमानं सर्वं धनं न दद्यादित्यर्थः ।

१. D. reads कालग्राहे for व्योलग्राहे. २. H. reads व्याधिना उप. for
 व्याधिनोप. ३. B. C. E. F. and G. read धर्मा ऽधर्माश्च for दानाद्धर्माश्च, and in
 H. the original धर्मा ऽधर्माश्च being stricken दानाद्धर्माश्च is written on the
 margin. ४. D. reads समप्रा. for न्यायप्रा. ५. D. reads यथा. for यथा.

इति । 'बृहस्पतिरपि—

‘कुटुम्बभक्त-वसनाद्देयं यदतिरिच्यते’ ।

इति । शिवधर्मे—

‘तूस्मान्निभागं *वित्तस्य जीदनाय प्रकल्पयेत् ।

भागद्वयं तु धर्मार्थमनित्यं जीवितं यतः’ ॥

इति । कुटुम्बाधिरोधेन देयमित्युक्तं तस्यापवादमाह
व्यासः—

‘कुटुम्बं पीडयित्वा अपि ब्राह्मणाय महात्मने ।

दातव्यं भिक्षवे† चान्नमात्मनो भूतिमिच्छता’ ॥

इति । देयविशेषेण फलविशेषमाह मनुः—

‘वारिदस्तृप्तिमाप्नोति सुखमक्षय्यमन्नदः ।

तिलप्रदः प्रजामिष्टां दीपदश्चक्षुरुत्तमम् ॥

भूमिदो भूमिमाप्नोति दीर्घमायुर्हिरण्यदः ।

गृहदो ऽग्न्याणि वेदमानि रूप्यदो रूपमुत्तमम् ॥

वासोदश्चन्द्रसालोक्यमश्विसालोक्यमश्वदः ।

अनङ्गुदः श्रियं जुष्टां गोदो ब्रध्नस्य विष्टपम् ॥

* नारदेन तु वित्तस्य पञ्चधा विभागो दर्शितः । तदथा—

‘धर्माय यज्ञाये ऽर्थाय कामाय स्वजनाय च ।

पञ्चधा विभजन्वित्तमिहामुत्र च मोदते’ ॥

इति । अयमेव युक्तो द्रव्यविभाग इति भाति ।

† इदमपि मोक्षमार्गैर्करतस्य दानशूरस्य वा संभवति । नान्यस्य ।

यतः कुटुम्बनिर्वाहावशिष्टस्यैव अंशतः दानमुचितम् ।

१. A. reads तस्मात्तु for तस्मान्नि-. २. B. C. -F. ऽच्छानि, F. and H. ऽर्घ्याणि, and G. उक्तानि for ऽग्न्याणि. ३. For जुष्टां I. reads जुष्टः.

यान-शय्याप्रदो भार्यामैश्वर्यमभयप्रदः ।

धान्यदः शाश्वतं सौख्यं ब्रह्मदो ब्रह्म शाश्वतम् ॥

सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते ।

(म. स्मृ. ४. २२९-२३३; वृ. गौ. स्मृ. १०. २३-२८)

इति । भविष्योत्तरे पात्रविशेषेण देयविशेषो दर्शितः—

‘ तथा द्रव्यविशेषांश्च दद्यात् पात्रविशेषतः ।

आर्तानामन्नदानं च गोदानं च कुटुम्बिने ॥’

तथा प्रतिष्ठाहीनानां क्षेत्रदानं विशिष्यते ।

सुवर्णं याजकानां च विद्यां चैवोर्ध्वरेतसाम् ॥

कन्यां चैवानपत्यानां ददतां गतिरुत्तमा ।

इति । स्कान्दे अपि—

‘ श्रान्तस्य यानं तृषितस्य पानम् ..

अन्नं क्षुधार्तस्य नरो नरेन्द्र ।

दद्याद्विमाषेन सुराङ्गनाभिः

संस्तूयमानं त्रिदिवं नयन्ति’ ॥

इति । अङ्गिराः—

‘ देवतानां गुरुणां च माता-पित्रोस्तथैव च ।

पुण्यं देयं प्रयत्नेन नापुण्यं चोदितं क्वचित्’ ॥

इति । विष्णुधर्मोत्तरे—

१. E. G. and H. read सौख्यं for सौख्यं. २. For दानानां G. reads देवानां. ३. A. reads परं स्मृतं for विशिष्यते. ४. A. B. C. D. and F. read पात्रे for पात्र-. ५. E. reads धनदानं कुटुम्बिने, and for the same A. reads गोदानं यज्वने तथा ; for गोदानं च कुटुम्बिने. ६. A. reads याजकानां for याजकानां. ७. A. and I. omit इति. ८. A. reads चाजितं, and H. जोहितं for चोदितं.

‘यस्योपयोगि यद्रव्यं देयं तस्यैव तद्भवेत्’ ।

इति । दाननिमित्तान्याह शातातपः—

‘अयनादौ, सदा देयं द्रव्यमिष्टं गृहे तु यत् ।

षडशीतिमुखे चैव विमोक्षे चन्द्र-सूर्ययोः ॥

संक्रान्तौ यानि दत्तानि हव्य-कव्यानि दातृभिः ।

तानि नित्यं ददात्यर्कः पुनर्जन्मानि जन्मानि ॥

इति । वृद्धवासिष्ठोऽपि अयनादीन् दर्शयति—

‘क्षर्ष-कर्कटसंक्राती द्वे तूदग-दक्षिणायने ।

विषुवे च तुला-मेषौ तयोर्मध्ये ततो अपराः ॥

वृष-वृश्चिक-कुम्भेषु सिद्धे चैव यदा रविः ।

एतद्विष्णुपदं नाम विषुवादधिकं फलम् ॥

कन्यायां मिथुने मीने धनुष्यपि रवेर्गतिः ।

षडशीतिमुखाः प्रोक्ताः षडशीतिगुणाः फलैः ॥

इति । विष्णुधर्मोत्तरे—

‘वैशाखी कर्तिकी माघी पूर्णिमा तु महाफला ।

पौर्णमासीषु सर्वासु मासर्क्षसहितासु च ।

दत्तानामिह दानानां फलं दशगुणं भवेत् ॥

इति । मनुः—

‘सहस्रगुणितं दानं भवेद्भूतं युगादिषु ।

कर्म श्राद्धादिकं चैव तथा मन्वन्तरादिषु ॥

इति । याज्ञवल्क्यः—

१. A. reads गृहादि for गृहे तु. २. D. and G. read दानानि for दत्तानि.
३. All others except B. C. and F. omit अपि. ४. D. reads उपरागादीन्
for अयनादीन्. ५. A. and I. read मृग- for क्षंज. ६. A. reads विष्णु-
पाशाधिकं for विषुवादधिकं. ७. D. reads गुणादिषु for युगादिषु.

‘शतमिन्दुक्षये दात्रं सहस्रं तु दिनक्षये ।’

विषुवे शतसाहस्रं व्यतीपाते त्वेनन्तकम् ॥

इति । भारद्वाजः—

‘व्यतीपाते वैधृतौ च दत्तमक्षयकृद्भवेत् ।’

इति । विष्णुः—

‘दिनक्षयो दिनच्छिद्रं पुत्रजन्मादि चां श्रुम् ।

आदित्यादिग्रहाणां च नक्षत्रैः सह सङ्गमः ॥ •

• विज्ञेयः पुण्यकालो अयं ज्योतिर्विद्विचित्रायै च ।

तत्र दानादिकं कुर्यादात्मनः पुण्यवृद्ध्यै ॥

इति । दिनक्षयलक्षणमुक्तं वसिष्ठेन—

‘एकस्मिन् सावने त्वह्नि तिथीनां त्रितयं यदा ।

तदा दिनक्षयः प्रोक्तः शतसाहस्रिकं फल्म् ॥

दिनच्छिद्रस्य तु लक्षणं ज्योतिःशास्त्रे अभिहितम्—

‘तिथ्यर्ध-तिथियोगर्क्षच्छेदादी राशिपर्वणः’ ।

सदृशौ दिवस-च्छिद्रसमाख्यौ ग्राह भागवः ॥’

इति ।

‘छेदादिकालः कथितः तिथिकृत्योर्घटिद्वयम् ।

ऋक्षादिसङ्गमोपेतं तच्छिद्वत्फलैर्युतम् ॥’

१. A. E. II. and I. read -द्वनन्त-, and D. G. ह्यनन्त- for त्वनन्त-.
 २. A. reads this line as follows:—दिनक्षये दिनच्छिद्रे पुत्रजन्मादिके अपि च. ३. A. B. and D. read सङ्गमे for सङ्गमः. ४. D. reads वासरे for सावने. ५. A. G. and I. omit तु. ६. A. and I. read तिथ्यर्ध- for तिथ्यर्ध-
 ७. A. D. G. and I. read राशिपर्वणः for राशिपर्वणः. ८. I. reads -समा-
 ख्याः for -समाख्यौ. ९. A. omits तिथिकृत्योर्घटिद्वयम्. १०. All others
 except A. read as follows:—नागवह्नि समोपेतं तद्वे तत्त्वपलेयुतम् ; while I.
 तच्छिद्र- and D. G. -फलैः for -पलैः according to the reading.

पलैः१. षोडशभिर्युक्तं नाडिकाद्वितयं युतौ ।

छेदादिसमयः प्रोक्तो दाने ऽनन्तफलप्रदः२ ॥

इति । दानस्य निषिद्धकालमाह तुः शङ्ख-लिखितौ—

१ ‘आहारं मैथुनं निद्रां सन्ध्याकालेषु वर्जयेत् ।

कर्म चाध्यापनं चैव तथा दान-प्रतिग्रहौ३ ॥

इति४ । स्कन्दपुराणे—

‘रात्रौ दानं न कर्त्तव्यं कदाचिदपि केनचित् ।

हरन्ति राक्षसा यस्मात्तस्माद्वातुर्भयावहम् ॥

विशेषतो निशीथे तु न शुभं कर्म शर्मणे ।

अतो विवर्जयेत् प्राज्ञो दानादिषु महानिशाम्५ ॥

इति । तत्र प्रतिश्रुतमाह देवलः—

‘राहुदर्शन-संक्रान्ति-यात्रा ऽदौ प्रसवेषु च ।

दानं नैमित्तिकं ज्ञेयं रात्रावपि तदिष्ट्यते६ ॥

इति । अत्र संक्रान्तिशब्दो मकर-कर्कटविषयः ।

स्मृत्यन्तरे संक्रान्तिषु रात्रिदानादेनिषेधं प्रक्रम्य ‘मुक्त्वा मकर-कर्कटौ’—इति पर्युदासात् ।

मत्स्यपुराणे दानस्य प्रशस्ता देशनिशेषा निर्दिष्टाः—

‘प्रयागादिषु तीर्थेषु पुण्येष्वायतनेषु च ।

दत्त्वा चा ऽक्षय्यमाप्नोति नदी-पुण्यवनेषु च७ ॥

इति । तथा व्यासेना ऽपि—

१ A. reads फलेः for पलैः. २. A. reads युगे for युतौ. ३. A. reads निमित्त- for निषिद्ध-, probably this might be an error. ४. H. omits इति. ५. D. reads स्कान्दे for स्कन्दपुराणे. ६. D. reads -यात्राति- for -यात्रादी. ७. D. reads न पुण्यति for तदिष्ट्यते. ८. B. C. and F. add च after संक्रान्तिषु. ९. A. adds काल- to देश-.

‘गङ्गाद्वारे प्रयागे च अविमुक्ते च पुष्करे ।’

मकरे चा ऽद्वेहासे च गङ्गा-सागरसङ्गमे ॥

कुरुक्षेत्रे गयातीर्थे तथा चा ऽमरकण्टके ।

एवमादिषु तीर्थेषु दत्तमक्षय्यतामियात् ॥१॥

॥ इति दानप्रकरणम् ॥

तदेवं सेतिकर्तव्यं दानप्रकरणं निरूपितम् । अथ प्रतिग्रहो निरूप्यते । तत्र श्रौतो विधिः पूर्वमुदाहृतः । ‘द्रव्यमर्जयन् ब्राह्मणः प्रतिगृहीयात्’-इति । तत्र याजने येयं चर्चा पूर्वमनुक्रान्ता सेयं प्रतिग्रहे अपि यथासम्भवमनुसन्धातव्या ।

ननु-प्रतिग्रहो मनुना निन्दितः-

‘प्रतिग्रहः प्रत्यवरः स तु विप्रस्य गर्हितः’ ॥

(म. स्मृ. १०. १०९)

इति । मैवम् । अस्या निन्दाया असत्प्रतिग्रहविषयत्वात् । तच्चोपरितने वचने स्पष्टीकृतम् ।

‘प्रतिग्रहस्तु क्रियते शूद्रादप्यन्यजन्मनः’ ।

(म. स्मृ. १०. ११०)

इति । यः प्रतिग्रहो नृचात् क्रियते स गर्हित इत्यर्थः । सत्प्रतिग्रहस्तु तेनैवाभ्यनुज्ञातः--

‘नाध्यापनात् याजनाद्वा अर्हिनाद्वा प्रतिग्रहात् ।

दोषो भवति विप्राणां ज्वलना-ऽर्कसप्ताहि ते’ ॥

(म. स्मृ. १०. १०३; म. भा. व. २००. ८७)

१. II. reads च प्रभासे for चाद्वेहासे; the प्रभासे is written on margin.
२. A. omits येयं चर्चा. ३. A. reads अयं for सेयं. ४. A. reads असन्धातव्यः for -सन्धातव्या. ५. A. reads असाधु- for असत्. ६. A. and I. read प्रतिग्रहो अर्हितः स्यात् for प्रतिग्रहस्तु क्रियते. ७. A. substitutes विप्राणां प्रतिग्रहः for the whole verse नाध्यापनात् &c., and omits अर्हिनादिति छेदः.
८. In Manu Smṛiti ज्वलनाग्नि- for ज्वलनार्कः. ९. This verse is to be found in Mahābhārata 3, 200, 87.

इति । अगर्हितादिति छेदः । अगर्हितप्रतिग्रहादप्यप्रति-
ग्रहः श्रेयान् । तथा च याज्ञवल्क्यः—

‘प्रतिग्रहसमर्थो अपि नादत्ते यः प्रतिग्रहम् ।

ये लोका दानशीलानां स तानामोति पुष्कलान्’ ॥

(या. स्मृ. १. २१३)

इति । ननु—यमः प्रतिग्रहं प्रशंसति—

प्रतिग्रहा-ऽध्यापन-याजनानाम्

प्रतिग्रहं श्रेष्ठतमं व्रदन्ति ।

प्रतिग्रहात् शुध्यति जप्य-होमैर्

योज्यं तु पापं न पुनन्ति वेदाः’ ॥

इति । मनुस्तु तद्विपर्ययमाह—

‘जपः होमैरपैत्येनो याजना-ऽध्यापनैः कृतम् ।

प्रतिग्रहनिमित्तं तु त्यागेन तपसैव च’ ॥

(म. स्मृ. १०. १११)

इति । नायं दोषः । द्विजातिभ्यः प्रतिग्रहः प्रशस्तः शूद्रात्
प्रतिग्रहो निन्दितः—इति व्यवस्थायाः सुवचत्वात् ।

ननु—सत्प्रतिग्रहे अपि कियानपि प्रत्यवायः प्रतीयते ।

‘प्रतिग्रहः शुद्ध्यति जप्य-होमैः’—इत्युक्तेः । ब्रह्मम् ।
अस्त्येव वेदपारगत्वादिसामर्थ्यरहितस्य प्रतिग्रहे प्रत्यवायः ।
एतदेवा अभिप्रेत्य स्कान्दे वेदपारगस्य प्रत्यवायो निवारितः—

१. G. reads तानवाप्नोति for स तानाप्नोति. २. Except A. and I. all read प्रतिग्रहः for प्रतिग्रहात्. ३. A reads याज्यास्तु पापान् for याज्यं तु पापं. ४. G. reads तपसा न for तपसैव. ५. E. omits this. ६. A. reads दोषः for प्रत्यवायः. ७. D. reads एतदेवाभिप्रेत्योक्तं. स्कान्दे वेदपारगस्य प्रत्यवायो नाति for एतदेव- &c.

‘षडङ्गवेदविद्विप्रो यदि कुर्यात् प्रतिग्रहम् १ ।

न स पापेन लिप्येत पद्मपत्रमिवाम्भसा’ ॥

इति । एष एव न्यायो याजना-ऽध्यापनयोर्योजनीयः ।
अयाज्ययाजन-भृतकाध्यापन-दुष्टप्रतिग्रहेष्वेनोबाहुल्यम् । स्वे-
स्मिन्नीर्षदधिकारबैकल्ये सति प्रवर्त्तमानस्य स्वल्पः प्रत्यवायः ।
मुख्याधिकारिणो विहितयाजनादिप्रवृत्तौ न किञ्चिदप्येन-
इति विवेकः । सदसत्प्रतिग्रहौ विवेचयति व्यासः—

‘द्विजातिभ्यो धनं लिप्सेत् प्रशस्तेभ्यो द्विजोत्तमः ।

अपि वा जातिमात्रेभ्यो न तु शूद्रात् कश्चन’ ॥

इति । सतामसम्भवे संति असतोऽपि प्रतिग्रहश्चतुर्विंश-
तिमते ऽभ्यनुज्ञातः—

‘सीदंश्चेत् प्रतिगृहीयाद् ब्राह्मणेभ्यस्ततो नृपात् ।

ततस्तु वैश्य-शूद्रेभ्यः शङ्खस्य वचनं यथा’ ॥

इति । शूद्रप्रतिग्रहे विशेषमाहाङ्गिराः—

‘यत्तु राशीकृतं धान्यं खले क्षेत्रे ऽथवा भवेत् ।

शूद्रादपि ग्रहीतव्यमित्याङ्गिरसभाषणम्’ ॥

इति । तत्रैव विशेषान्तरमाह व्यासः—

‘कुटुम्बार्थे तु संच्छूद्रात् प्रतिग्राह्यमयाचितम् ।

१. E. and H. read अन्यस्मिन्, D. reads तस्मिन् for इवस्मिन्. २. D. reads विशेषात् for ईषत्. ३. I. reads वैकल्येन for वैकल्ये सति. ४. For -वप्येन D. has -दप्येतत्. ५. A. substitutes सदा च for सीदंश्चेत्. ६. A. reads धान्यमिति for धान्यं खले. ७. D. and I. read तथा for ऽथवा. ८. D. alone has भाषितम्. ९. B. C. and F. read कुटुम्बार्थे तुयः शूद्रा-
त्प्रतिग्राह्यं तु याचितम्. १०. D. E. G. and H. have यत् for सम्-
११. D. reads प्रतिगृह्णाति-याचितम्, and G. प्रतिगृहीत याचितम्, for
प्रतिग्राह्यमयाचितम्.

क्रात्वर्थमात्मने चैव न हि यत्चेत् कर्हिचित् ॥

इति । मनुरपि—

‘न यज्ञार्थं धनं गृध्रात् विप्रो भिक्षेत धर्मवित् ।
यजमानोऽपि भिक्षित्वा चाण्डालः प्रेत्य जायते’ ॥
(म. स्मृ. ११. ३४)

इति । असत्प्रतिग्रहोचितोऽवस्थाविशेषः स्कन्दपुराणे
दर्शितः—

‘दुर्भिक्षे दारुणे प्राप्ते कुटुम्बे सीदति क्षुधा ।

‘असतः प्रतिगृहीयात् प्रतिग्रहमतन्द्रितः’ ॥

इति । याज्ञवल्क्योऽपि—

‘आपद्रंतः सम्प्रगृह्णन् भुञ्जानोऽपि यतस्ततः ।

न लिप्येतैनसा विप्रो ज्वलनाऽर्कसमो हि सः’ ॥

इति । मनुरपि— (या. स्मृ. ३. ४१)

‘वृद्धौ च माता-पितरौ साध्वी भार्या सुतः शिशुः ।

अप्यकार्यशतं कृत्वा भर्तृव्या मनुरब्रवीत् ॥

(म. स्मृ. ११. ११)

जीवितात्ययमापन्नो योऽन्नमत्ति यतस्ततः ।

आकाशमिव पङ्केन न स पापेन लिप्यते’ ॥

(म. स्मृ. १०. १०४)

इति । गारुडपुराणे प्रतिग्राह्यस्य द्रव्यस्येयत्ता दर्शिता—

‘यावता पञ्चयज्ञानां कर्तुर्निर्वहणं भवेत् ।

‘तावदेव हि गृहीयात् कुटुम्बस्यात्मनस्तथा’ ॥

१. A. reads द्विजो for विप्रो. २. चाण्डालः is substituted by A. D. E. and H. for चाण्डालः. ३. A. and J. read वा for अपि. The text of Yajñavalkya Smṛiti reads वाग्यतस्ततः. ४. All MS. read -समप्रभः ; but the Smṛiti itself has समो हि सः. ५. G. adds पुरो after दर्शिता. ६. A. reads करणं नियतं भवेत्, D. and G. कर्तुर्निर्वाहतां व्रजेत् for कर्तुर्निर्वहणं भवेत्.

इति । व्यासोऽपि—

‘प्रतिग्रहं रुचिर्न स्यात् यज्ञार्थं तु समाचरेत् ।
स्थित्यर्थादधिकं गृह्णन् ब्राह्मणो यात्यधोगतिम् ॥
वृत्तिसङ्कोचमन्विच्छेत्नेहेत धनविस्तरम् ।
धनलाभे प्रवृत्तस्तु ब्राह्मण्यादेव हीयते’ ॥

इति । अनापदि राजप्रतिग्रहं निन्दति याज्ञवल्क्यः—

‘न राज्ञः प्रतिगृहीयात् लुब्धस्योच्छास्त्रवार्त्तिनः ।
प्रतिग्रहे सूनि-चक्रि-ध्वजि-वेद्या-नराधिपाः ।
दुष्टा दशगुणं पूर्वात् पूर्वादिते यथोत्तरम्’ ॥
(या. स्मृ. १. १४०-१४१)

इति । संवर्त्तः—

‘राजप्रतिग्रहो घोरो मध्वास्वादो विषोपमः ।
पुत्रमांसं वरं भोक्तुं न तु राजप्रतिग्रहः’ ॥

इति । स्कान्दे—

‘मरुदेशे निरुदके ब्रह्मरक्षस्त्वमागतः ।
राजप्रतिग्रहात् पुष्टः पुनर्जन्म न विन्दति ॥
ब्राह्मण्यं यः परित्यज्य द्रव्यलोभेन मोहितैः ।
विषयमिषलुब्धस्तु कुर्याद्राजप्रतिग्रहम् ॥
रौरवे नरकं घोरं तस्यैव पतनं ध्रुवम् ।
वृक्षा दवाग्निना दग्धाः प्ररोहन्ति घनगमे ॥
राजप्रतिग्रहाद्गन्धा न प्ररोहन्ति कर्हिचित्’ ।

इति । विष्णुधर्मोत्तरे—

१. A. यात्रार्थं, D. स्थित्यर्थे for यज्ञार्थं. २. G. has स्थितो यदधिकं for स्थित्यर्थादधिकं. ३. D. substitutes लब्धं स्याच्छास्त्र- for लुब्धस्योच्छास्त्र-. ४. D. reads सूति-, G. स्वानि-for सूनि-. ५. The text of याज्ञवल्क्यस्मृति reads यथाक्रमम्. ६. D. omits following-प्ररोहन्ति घनगमे । राजप्रतिग्रहाद्गन्धा-, and reads वृक्षा दवाग्निना दग्धा न प्ररोहन्ति कर्हिचित्-

‘देशसूनिःसमश्चक्री दशचक्रिसमो ध्वजी ।
 दशध्वजिसमा वेद्या दश वेद्यासमो नृपः ॥
 दशसूनासहस्राणि यो वाहयति सौनिकः ।
 सैन तुल्यः स्मृतो राजा घोरस्तस्मात् प्रतिग्रहः’ ॥
 (मः स्मृ. ४. ८६-८६)

इति । अधार्मिकराजविषयेयं निन्दा । तथा च तत्रैव
 विशेषितम्—

‘येषां न विषये विप्राः यज्ञैर्यज्ञपतिं हरिम् ।
 यजन्ते भूभुजां तेषामेतत् सूनोदितं फलम् ॥
 येषां पाषण्डसङ्कीर्णं राष्ट्रं न ब्राह्मणोत्कटम् ।
 एते सूनासहस्राणां दशानां भागिनो नृपाः ॥
 येषां न यज्ञपुरुषः कारणं पुरुषोत्तमः ।
 ते तु पापसमाचाराः सूनापापोपभोगिनः’ ॥

इति । अदुष्टान्तु राज्ञः प्रतिग्रहो न निन्दितः । अत एव
 छन्दोगशाखायां प्राचीनशालादीन् महामुनीन् राजप्रतिग्रहे
 प्रवर्त्तयितुमश्वपतिनामकेन राज्ञा दोषाभाव उपन्यस्तः—

‘न मे स्तेनो जनपदे न केदार्यो न मद्यपः ।
 नाऽनाहिताग्निर्नाऽविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः’ ॥
 (छां. उ. ५।११।६)

१. This verse is altogether omitted by B. C. and F. also ; we find this and the foregoing verse in Manu Smṛiti, but this verse is differently written there as:—दशसूनीसमं चक्रं दशचक्रसमो ध्वजः । दशध्वजसमो वेशो दशवेद्यासमो नृपः ॥ २. D. E. G. and H. read -सूना- for -सूनि-. ३. Manu Smṛiti has तस्य for तस्मात्. ४. All except A. E. and I. omit ह्ये. ५. D. reads the verse as:—येषां न विद्यते विप्राः प्राज्ञैर्यज्ञपरिग्रहः । जायते भूभुजां तेषां. ६. A. reads ब्राह्मणास्पदम् for ब्राह्मणोत्कटम् ७. A. has पापा हि ते स्मृताः for पापोपभोगिनः. ८. D. omits महामुनीन्. ९. D. has च for मे, and for the same G. reads यः. १०. A. reads तथा for कुतः.

इति । योजवल्क्यवचने अपि राजप्रतिग्रहनिन्दायां 'लुब्ध-
स्योच्छास्त्रवर्तिनः'-इति विशेषणात् अदुष्टराजप्रतिग्रहो न नि-
न्दित इति गम्यते । तथा च नारदो अपि—

‘श्रेयान् परिग्रहो राज्ञां नान्येषां ब्राह्मणादृते ॥’ (४१)

ब्राह्मणश्चैव राजा च द्वावप्येतौ धृतरत्रौ ।

नैतयोरन्तरं किञ्चित् प्रजाधर्माभिरक्षणे ॥ (४२)

शुचीनामद्युचीनां च सन्निवेशो यथाम्भसाम् ।

समुद्रे समतां याति तद्वद्राज्ञां धनागमः ॥ (४५)

यथा श्मौ संस्थितं चैव शुद्धिमायाति काञ्चनम् ।

एवं धनागमाः सर्वे शुद्धिमायान्ति राजनिः ॥ (४६)

(ना. स्मृ. १७. ४१-४६)

इति । दुष्टप्रतिग्रहवत् सत्प्रतिग्रहस्यापि ‘अनापद्विषयता
कुतो न कल्प्यते?’-इति चेत् तन्न । ब्रह्माण्डपुराणे सत्प्रति-
ग्रहस्य अनापद्यपि विहितत्वात् ।

‘अनापद्यपि धर्मेण याज्यतः शिष्यतस्तथा’ ।

गृह्णन् प्रतिग्रहं विप्रो न धर्मात् परिहीयते ॥

गृह्णीयाद् ब्राह्मणादेव नित्यमाचारवर्तिनः ।

श्रद्धया विमलं दत्तं तथा धर्मान्न हीयते ॥

१. D. omits the whole from याज्ञवल्क्य to गम्यते. २. A. and G. read -रक्षणं for -रक्षणे. ३. A. has सन्निपातो for सन्निवेशो. ४. D. omits this whole line. ५. All except A. and I. read दुष्टप्रतिग्रहः. ६. A. omits अपि. ७. A. C. F. and I. omit सत्. ८. A. substitutes ब्रह्मपुराणे. Brahmanda Purāṇa is a Mahā Purāṇa and Brahma Purāṇa is an Upa Purāṇa, therefore it is difficult to find out the above quotation. ९. D. E. G. and H. have प्रति- for परि. १०. A. reads धर्मो for धर्मान्.

इति । 'केलुः' चिद्वस्तुविशेषेषु अयाचितेषु न प्रतिग्रह-
दोष इत्याह .भारद्वाजः—

‘अयाचितोपपन्नेषु नास्ति दोषः प्रतिग्रहे ।

‘अमृतं तद्विदुर्देवास्तस्मात्तन्नैव निर्णुदेत्’ ॥

इति । तत्र भारद्वाजाऽभिप्रेतान् वस्तुविशेषान्निर्दिशति
याज्ञवल्क्यः—

‘कुशाः शाकं पयो मत्स्या गन्धः पुष्पं दधि क्षितिः*।

मांसं शय्या ऽऽसनं धानाः प्रत्याख्येयं न वारि च ॥

अयाचितार्हतं ग्राह्यमपि दुष्कृतकर्मणः ।

अन्यत्र कुलटा-षण्ड-पतितेभ्यस्तथा द्विषः’ ॥

(या. स्मृ. १. २१४-१५)

इति । मनुरग्नि—

‘शय्यां कुशान् गृहान् गन्धानपः पुष्पं मणिं दधि ।

मत्स्यान् धानाः पयो मांसं शाकं चैव न निर्णुदेत्’ ॥

(म. स्मृ. ४. २५०)

‘एधोदकं मूलफलमन्नमभ्युद्यतं च यत् ।

सर्वतः प्रतिगृह्णीयान्मधु चाऽभयदक्षिणाम्’ ॥

(म. स्मृ. ४. २४७)

* नात्र क्षितिशब्देन भूमिर्विवक्षिता अपि तु मृत्तिकैव । भूमिग्रहणे
दोषश्रवणत्वात् ‘क्षितिर्मृत्तिका’ इति विज्ञानेश्वरः ।

१. All others except A. G. read भारद्वाजः. २. D. reads नैव विनिर्णुदेत्
for तल्लैव निर्णुदेत्. ३. B. C. and F. read गन्धान् for गन्धाः. ४. A. has
धान्य. ५. D. reads अयाचितार्हतं. ६. D and G. have द्विजः. ७. A
reads वासः. ८. A. and I. read असत्. ९. D. reads वाऽभयदक्षिणाम् for
वाभयदक्षिणाम्, and the text of M'nu अथ for च.

इति । प्रतिग्रहानधिकारिणं स एवाह—

‘हिरण्यं भूमिमश्वं गामन्नं वासस्तिलान् घृतम् ।
अविद्वान् प्रतिगृह्णीनो भस्मी भवति काष्ठवत्’ ॥
(मं. स्मृ. ४. १. ८६)

इति । याज्ञवल्क्योऽपि—

‘विद्या-तपोभ्यां हीनैर्न न तु ग्राह्यः प्रतिग्रहः ।
गृह्णन् प्रदातारमधो नयत्यात्मानमेव च’ ॥
(या. स्मृ. १. २०२)

इति । विदुषस्तु न कोऽपि प्रतिग्रहो दोषावह इति वाजस-
नेयिब्राह्मणे गायत्रीविद्यायां श्रूयते—

‘यदि ह वा अप्येवंवित् बह्विव प्रति-
गृह्णाति न हैव तद्रायत्र्या एकं चनपदं
प्रति स य इमास्त्रील्लोकान् पूर्णान् प्रति-
गृह्णीयात् सोऽस्या एतत्प्रथमं पदमाप्नु-
यादथ यावतीयं जयी विद्या यस्तावत्
प्रतिगृह्णीयात् सोऽस्या एतत् द्वितीयं
पदमाप्नुयादथ यावदिदं प्राणि यस्ता-
वत् प्रतिगृह्णीयात् सोऽस्या एतत्
तृतीयं पदमाप्नुयादथास्या एतदेव
तुरीयं दर्शितं पदं परो रजा य एष
तर्पति । नैव केनच नोऽप्यं कुत

१. D. reads प्रतिगृह्णीति. and the text of Manu reads the whole line
thus:—प्रतिगृह्णन्विद्वान् भस्मीभवति काष्ठवत्. २. A. reads नयते.

‘उ हूतावत् प्रतिगृह्णीयात्’—इति ।

(बृ. उ. ५. १४. ५-६)

॥ इति प्रतिग्रहप्रकरणम् ॥

ऐवं निरूपितानामध्यापनादीनां प्रतिग्रहान्तानां शब्दान्तराधिकरणन्यायेन (पू. मी. २. २. १.) कर्मभेदमभिप्रेत्य ‘षट्कर्माभिरतः’—इत्युक्तम् । स च न्याय इत्थं प्रवर्त्तते । यजति ददाति जुहोतीत्युदाहरणम् । तत्र संशयः किं सर्वधात्वर्थानुरक्तैका भावना उत प्रतिधात्वर्थं भिन्ना? तत्र भावनावाचकस्याख्यातस्यैकत्वात् भिन्नानामपि धात्वर्थानामुपसर्जनत्वेन प्रधानभेदकत्वासम्भवाच्चैकैव भावनेति पूर्वपक्षः । धात्वर्थानुरञ्जनमन्तरेण केवलाख्यातेन भावनाया अप्रतीतिः उत्पत्तिशिष्टधात्वर्थेनैकेनानुरक्ते आख्यातार्थे धात्वर्थान्तराणामननुप्रवेशात् प्रतिधात्वर्थं भावनाभेदः—इति सिद्धान्तः । एवं चार्ध्यनादिभिः षड्भिर्धात्वर्थैः षोढा भावना भिद्यते—इति भवन्त्येतानि षट्कर्माणि । तेषु ‘अभिरतिः’ श्रद्धापूर्वकमनुष्ठानम्, अश्रद्धालुना ऽनुष्ठितमप्येफलं स्यात् । तदाह भगवान्—

१. Al. others except A and I. read इति, and B. C. F. omit both. २. H. omits नि- and reads रूपितानां. ३. D. has the following wonderful reading—किं सर्वधनार्थैका भावना उत न प्रतिधात्वर्थं ज्ञात्वा तत्रभवतो वाचकस्याख्यातस्यैकत्वाभिन्नानामपि धात्वर्थानां उपसर्जनेन प्रधानभेदकत्वात् संभवाच्चैकभावने’ति पूर्वपक्षस्याद्धात्वर्थानुरञ्जनमन्तरेण केवलाख्यातेन भावनाया अप्रतीतिः उत्पत्तिशिष्टधात्वर्थेनैकेनानुरक्ते आख्याता ये धात्वन्तराणाम्—. ४. All others except A. substitute नाना for भिन्ना. ५. E. omits the following:—स्यैव प्रधानभेदकत्वासम्भवाच्चैकैव भावनेति पूर्व पक्षः । धात्वर्थानुरञ्जनमन्तरेण केवलाख्यातेन भावनाया अप्रतीतिरुत्पत्तिशिष्टधा— ६. A. reads—ख्याते. ७. F. has—नानुक्त fo. —नानुरक्त. ८. A. and I. read अध्यापना—. ९. H. has धात्वर्थ. १०. D omits अभि.

‘अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत् ।

असदित्युच्यते पार्थ न च तत् प्रेत्य नो ब्रूहे’ ॥

(भ. गी. १७. २८)

इति । ‘नित्यम्’ इत्युत्तरत्रान्वेति नै पूर्वत्र १ अध्यापना-
दीनां त्रयाणामनित्यत्वात् । देवता च अतिथिश्च देवता-
तिथी तयोः प्रतिदिनं पूजको भवेत् । देवतास्वरूपं च वाज-
सनेयिब्राह्मणे शाकल्य-याज्ञवल्क्यसंवादे विचार्य निर्णी-
तम् । तत्र शाकल्यः प्रष्टा याज्ञवल्क्यो वक्ता देवतावि-
स्तार-संक्षेपौ स्वरूपं च प्रष्टव्योऽर्थः । तत्र त्रैषा श्रुतिः—

‘अथ हैनं विदग्धः शाकल्यः प्रच्छ’ । कति

देवा याज्ञवल्क्येति । स हैतयैव निविदा प्र-

तिपेदे । यावन्तो वैश्वदेवस्य निविद्युच्यन्ते ।

त्रयश्च त्री च शता त्रयश्च त्री च सहस्रेति ।

ओमिति होवाच कृत्येव देवा याज्ञवल्क्येति ।

त्रयस्त्रिंशदिति । ओमिति होवाच कृत्येव

देवा याज्ञवल्क्येति । त्रय इति । ओमिति

होवाच कृत्येव देवा याज्ञवल्क्येति । द्वा-

विति । ओमिति होवाच कृत्येव देवा या-

ज्ञवल्क्येति । अध्यर्थ इति । ओमिति हो-

वाच कृत्येव देवा याज्ञवल्क्येति । एक

१. Except A. D. and I. all others read नेह च. २. B. has उत्तर-
तोऽन्वेति न तु पूर्वत्र, C. and F. उत्तरतो नान्वेति न, D. उत्तरत्वात् नेति पूर्वत्र,
G. उत्तरत्वात् नेति न पूर्वत्र, H. उत्तरत्र नान्वेति पूर्वत्र. ३. E. substitutes किन्तु
for न. ४. D. reads देवतानां. ५. D. omits the following :—शाकल्यः प्रष्टा
याज्ञवल्क्यो वक्ता देवताविस्तार-संक्षेपौ स्वरूपं च प्रष्टव्योऽर्थः अथ त्रैषा श्रुतिः ।
अथ हैनं विदग्धः. ६. A. omits स्वरूपं.

इति । ओमिति होवाच कतमे ते त्रयश्च त्री
 च शता त्रयश्च त्री च सहस्रेति ॥ १ ॥ स
 हीवाच महिमान एवैषामेते त्रयस्त्रिंशच्चैव
 देवा इति । कतमे ते त्रयस्त्रिंशदिति । अष्टौ
 वसव एकादश रुद्रा द्वादशादित्यास्त एका-
 त्रिंशदिन्द्रश्चैव प्रजापतिश्च त्रयस्त्रिंशं शांति
 ॥ २ ॥ कतमे ते वसव इति । अग्निश्च
 पृथिवी च वायुश्चान्तरिक्षं चाऽऽदित्यश्च द्यौश्च
 चन्द्रमाश्च नक्षत्राणि चैते वसव एतेषु हीदं
 सर्वं वसु निहितमेते हीदं सर्वं वासयन्त
 तस्माद्वसव इति ॥ ३ ॥ कतमे ते रुद्रा इति ।
 दश वै पुरुषे प्राणा आत्मैकादशस्ते यदा
 ऽस्माच्छरीरादुत्क्रामन्त्यथ रोदयन्ति यस्मा-
 द्रोदयन्ति तस्माद्रुद्रा इति ॥ ४ ॥ कतम
 आदित्या इति । द्वादश एव मासाः संवत्स-
 रस्यैत आदित्या एते हीदं सर्वमाददानायन्ति
 तद्यदिदं सर्वमाददानायन्ति तस्मादादित्या
 इति ॥ ५ ॥ कतम इन्द्रः कतमः प्रजाप-
 तिरिति । स्तनयित्नुरेवेन्द्रो यज्ञः प्रजाप-
 तिरिति । कतमस्तनयित्नुरित्यशानिरिति ।
 कतमो यज्ञ इति । पशव इति ॥ ६ ॥ कतमे
 षडिति । अग्निश्च पृथिवी च वायुश्चान्तरिक्षं
 चाऽऽदित्यश्च द्यौश्चैते षडेते हीदं सर्वं
 षडिति ॥ ७ ॥ कतमे ते त्रयो देवा इति ।

इमे एव त्रयी लोका एषु हीमे सर्वे देवा इति ।
 कतमौ तौ द्वौ देवाविति । अत्र चैव प्राण-
 श्चेति । कतमो ऽयं इति । योयं पवंत
 इति ॥ ८ ॥ तदाहुर्यदयमिह इवैव पवते ॥
 • स कथमध्यर्ध इति । यदस्मिन्निदं सर्व-
 मध्यात्तेनाध्यर्ध इति । कतम एको देव
 इति । प्राण इति स ब्रह्मेत्याचक्षते इति ॥

(वृ. उ. ३. ९. १-९)

अस्याः श्रुतेरयमर्थः । उपासनार्हाणां देवानां सङ्ख्यावि-
 स्तारेण कर्तृतीति पृष्टो याज्ञवल्क्यो विजिगीषुकथायां प्रवृत्तत्वात्
 परबुद्धिव्यामोहाय निविदा प्रत्युत्तरं प्रतिषेदे । निविच्छब्दो
 वैश्वदेवनामके शास्त्रविशेषे ऽवस्थितानां सङ्ख्यावाचिनां पदानां
 समुदायमाचष्टे इति वैदिकप्रसिद्धिः । ततो यावन्तो देवा
 वैश्वदेवस्य निवव्युच्यन्ते । तावन्त उपास्या इत्युक्तं भवति ।
 तानि च पदानि त्रयश्च त्री चेत्यादीनि । शतत्रयं सहस्रत्रयं
 षट्कं च देवविस्तारः । कृत्येवैवकारेण तत्र तत्र देवान्तरसङ्ख्या
 व्युदस्यते । य एव देवाः पूर्वं विस्तृताः त एव सङ्क्षेपेण
 कियन्त ? इति तत्र तत्र प्रश्नार्थः । कर्तृतीति सङ्ख्याप्रश्नः ।
 कतमे त इति स्वरूपविशेषप्रश्नः । तत्र शतसहस्रसङ्ख्याका

१. A. reads संख्याविस्तारे, C. and F. read संख्याव्यवस्तारेण.
 २. A. and I. omit कर्तृतीति, A. adds शाकल्येन, and I. साकल्येन. ३. D.
 and G. have शास्त्र- for शास्त्र-. ४. D. omits ऽव-. ५. D. has संभा-
 वितानां, and G. संख्याभाविनां for संख्यावाचिनां. ६. D. omits पदानां.
 ७. A. reads विविधैवमादीनि. ८. I. has तत्रस्य-. ९. All except A. and
 I. read कथमेतदिति for कतमे त इति.

ये देवा उक्तास्ते सर्वे प्रधानभूताः न भवन्ति । किं तर्हि प्राधान्येन हविर्भुजां त्रयस्त्रिंशद्देवानां योगमहिम्ना स्वीकृतै-
च्छिकविग्रहा एव ततो न तेषां स्वरूपविशेषः पृथक् निरूप-
णीय इति । त्रयस्त्रिंशद्देवेषु श्रुता वस्वादयः पुराणप्रसिद्धेभ्यो
वस्वादिभ्यो अन्ये । तेषु शब्दप्रवृत्तिर्यौगिकी । प्राणा बाह्यो-
न्ध्रियाणि । आत्मा ऽन्तःकरणम् । इन्द्र-प्रजापतिशब्दौ लक्षणया
स्तगणितुः यज्ञयोर्वर्त्तेते । लक्षितलक्षणया त्वशनि-पञ्चोः^१ ।
अन्न-प्राणौ भोग्य-भोक्त्रभिमानिनौ । अर्धशब्दो रूढयो
सङ्ख्यावाची । योगेन तु समृद्धं वायुं वक्ति । वायुः सूत्रात्मा ।
'वायुर्वै गौतम तत्सूत्रम्' (बृ. उ. ३. ७. २) इति श्रुतेः । अन्ते
प्राणशब्देः परमात्मवाचकः । तदेव स्पष्टयितुं स ब्रह्मेत्युक्तम् ।
तत् शब्दः परोक्षवाची । अकृतब्रह्मविचारं पुरुषं प्रति ब्रह्मणः
शास्त्रैकसमधिगम्यत्वात् पारोक्ष्यम्—इति । तत्र प्राणशब्दवा-
च्यः परमात्मैवैको मुख्यो देवः । तत्स्वरूपं च श्वेताश्वतरा
विस्पष्टसामनन्ति—

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः

— सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ।

कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः

साक्षी चेत्ता केवलो निर्गुणश्च^२ ॥

(श्वे. उ. ६. ११; बृ. उ. ३.)

१. B. C. and F. omit ऐच्छिकं-, and E. G. H. substitute भौतिक for the same. २. इति is omitted by all except A. and I. ३. G. reads स्तनविलो. for -पञ्चोः. ४. D. omits रूढया. ५. A. omits स. ६. स्वत् is substituted by all except A. and I. ७. A. and I. read परोक्षम्. ८. H. reads चेत्ता. We think this reading is more correct, but the Bhāṣya and others prefer चेत्ता, while D. reads चेत्ता.

इति । एतमेव देवं शास्त्रकुशलास्तैस्तैः शब्दविशेषैर्बहुधा व्यवहरन्ति । तथा चे मन्त्रवर्णः—

‘सुपर्ण* विप्राः कवयो ब्रह्मोभि-
रेकं सन्तं बहुधा कल्पयन्ति’ ।

इति । ते च शब्दविशेषा विस्पष्टमन्त्रास्मिन्मन्त्रे श्रूयन्ते—

‘इन्द्रं मित्रं वरुणमाग्निमाहु-
रथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् ।

• एकं सद्विप्रा बहुधा वदं-

त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः’ ॥

इति । ननु—इन्द्र-मित्र-वरुणादयः शब्दा भिन्नदेववा-
चिनो न त्वेकं देवमभिदधति । अन्यथा वारुणयोगे ऐन्द्रो^१
मन्त्रः प्रयुज्येत । नायं दोषः । एकत्वे अपि देवतात्वम् । मूर्ति-
भेदेन मन्त्रव्यवस्थोपपत्तेः । यथा शैवागमेषु शिवस्यैकत्वे अपि
प्रतिमाभेदेन दक्षिणामूर्ति-चिन्तामणि-मृत्युञ्जयादयो मन्त्रा

* शोभने पर्णे पक्षावस्य सुपर्णः । ‘बृहद्रथन्तरे ते पक्षौ’ इति श्रुतेः न
सुपर्णः परमेश्वरः । विप्रातीति विप्रः । ‘प्रा पूर्तो’ स्वज्ञानेन पूरणकृत्तुरि-
विद्वांसो विप्राः । ते एकं सत्तमप्येनं बहुधा कल्पयन्ति उपास्त्यादिसिद्धये ।
वस्तुतस्त्वेक एव परमेश्वरः । एतेन—चन्दमतीनामनुग्रहार्थं विविधकर्मानु-
ष्ठानसिद्धयर्थं च कल्पितं शिव-विष्णवादिमूर्तिभेदमेव परमार्थसत्यं मत्वा
ईश्वरबाहुल्यादुद्विजमानाः अनाकलितवैदिकधर्मरहस्याः पारक्यधर्ममुर-
रीकुर्वन्तो जल्पप्रज्ञत्वादुपेक्ष्या इत्यलमतिप्रसङ्गेन ।

१. E. G. H. omit च. २. A. has वरुणयागस्य. ३. B. adds अपि before
ऐन्द्रो. ४. B. C. and F. read युज्येत for प्रयुज्येत. ५. A. G. and I.
read देवस्य मू.; D. E. देवत्वमू., and H. देवत्वस्य मू., for देवतात्वम् । मू.
६. A. substitutes प्रासाद- for प्रतिमा- and reads प्रासाददक्षिणामूर्ति-; B. C.
and F. प्रतिमाभेदे इ-, D. E. and H. प्रतिमाभेद- and G. प्रतिमाभेदान् इ-.

मूर्तिविशेषेषु व्यवस्थिताः । यथा श्री वैष्णवागमेषु गोपाल-
वामनादयो मन्त्राः तथा देवैः अपि किं न स्यात् ।

ननु—द्रव्य-देवते यागस्य स्वरूपम् । रूपभेदाच्च कर्मभेदः
प्रतिपादितः । 'तमे' पश्यसि दध्यानयति सा वैश्वदेव्यामिक्षा
वाजिभ्यो वाजिनम्—इत्यत्र यथा ऽभिमिक्षावाजिनयोर्द्रव्य-
योर्भेदः तथा विश्वेषां देवानां वाजिभ्यो देवभ्यो भेदो ऽभ्युपग-
न्तव्यः—इति । बाढम् । अभ्युपगम्यन्ते ह्येकस्यैव वास्तवस्य
देवस्य कर्मानुष्ठानदशायासौपाधिका भेदः । अत एव वाज-
सनेयिब्राह्मणे इष्टप्रकरणे कर्मानुष्ठानतृप्तिसद्वं देवभेदमनूद्य
तदपवादज्ञ वास्तवं देवैकत्वमवधारितम्—

‘तद्यदिदमादुरमुं यजेतामुं यजेनेत्येकं देवमेतस्यैव
सा विसृष्टिरेव उ होव सर्वे देवा इति’ ।

न चैकस्माद्देवात् फलभेदो दुःसम्पाद इति शङ्कनीयम् ।
उपास्तिप्रकारभेदेन तदुपपन्नः । ‘तं यथायथोपासन्ते तद्व
भवति’—इति श्रुतेः । यथैको ऽपि राजा छत्र-चामरादिसे-
वाप्रकारभेदेन फलभेदे हेतुस्तद्वत् ।

* उपाधिशब्देनात्र सत्त्व-रजस्तमो गुणाः तज्जनितत्वेन कल्पितानि
शरीराणि वा ग्राह्याणि । तद्यथा—कर्मरम्भे विघ्ननाशनाय, कल्पितस्य
गजमुखाद्याकारविशेषोपाधिर्विशिष्टस्य गणपतेः कल्पनम् । एवमेवेन्द्र-
वरुणादीनां देवानां कर्मानुष्ठानकाले तत्तत्कार्यसिद्धयर्थं कल्पनम् ।

१. A. omits वा, and D. substitutes च. २. A. and I. read वेहे for
देवे. ३. A. and I. have स्वरूप-. ४. H. reads विशेषात्. ५. H. and I.
read वास्तवस्य. ६. A. and D. have कर्मानुष्ठान-. ७. E. G. and H. read
तदनुवादेन for तदपवादेन. ८. All others except A. and I. read फलभेदे-

ननु-देवः फलं ददातीत्येतन्मीमांसका न.सूत्रे । तथा हि नवमाध्याये विचारितम् । किं यागेनाराभिन्नाया देवतायाः फलं ? उतापूर्वद्वारकं यागस्य फलसाधनत्वं ? इति संशयः । तत्र भङ्गुरस्य यागस्य कालान्तरभाविफलम्प्रति सम्प्रदानत्वा योगादवश्यं द्वयं किञ्चित् कल्पनीयम् । देवताप्रसादश्च श्रुति-युक्तिभ्यां तद्वारं स्यात् ।

‘तुम एवैनमिन्द्रः प्रजया पशुभिस्तरपयति’ ।

• (तै. सं. २. ५. ४. ३) •

इति श्रुतिः । युक्तिरप्युच्यते । क्रियया प्राप्तुमिष्टतमत्वात् कर्मकारकं प्रधानम् । तेन कर्मणा व्याप्यत्वात् सम्प्रदानं ततोऽपि प्रधानम् । इन्द्रादिदेवताश्च सम्प्रदानत्वेन प्राधान्यात् पूजार्मर्हन्ति । यागश्च पूजारूपत्वादतिथिर्भोजनमिव देवताया अङ्गं स्यात् । तस्मात् राजादिवेदेवः फलं ददतीति पूर्वः पक्षः । अत्रोच्यते । याग-देवतयोयोऽयमङ्गाङ्गीभाव उपन्यस्तुः स तु शब्दाकाङ्क्षानुसारेण विपर्येति । तथा हि— यजेतेत्याख्यातेन भावना अभिधीयते । सा च— किं ? केन ? कथं ? इति भङ्गुरस्य इतिकर्तव्यतालक्षणमंशत्रयं क्रमेणाकाङ्क्षते । तत्र यागस्य समानपदोपनीतत्वे ऽप्ययोग्यत्वाच्च भाव्यता । स्वर्गस्य तु वाक्यादुपनीतस्यापि पुरुषार्थत्वेन योग्यत्वात् भाव्यता स्यात् । तस्य च स्वर्गस्य साधनाकाङ्क्षायां यागः करणत्वेनान्वेति ।

१. A. inserts कर्तुः. २. A. B. C. E. insert च before कर्मणा. ३. A. and I. read व्याप्तत्वात्. ४. All others except A. and I. take singular. ५. A. has यागस्य. ६. A. retains plural. ७. C. and F. read सर्वस्य for स्वर्गस्य.

तच्च करणं साध्यरूपत्वात् स्वनिष्पादकं *सिद्धं द्रव्यदैवतमितिकर्चव्यत्वेन गृह्णाति—इति । ततो यागो ऽङ्गी देवता च तदङ्गम् । एवं च सति नातिथिवद्देवता यागेनोराध्यते । या तु श्रुतिः—‘नृषा एवैनम्’—इति नासौ स्वार्थे तात्पर्यवती । प्रत्यक्षादिविरोधात्* । न हि काचिद्विग्रहवती देवता हविर्भुक्त्वा तृप्ता फलं प्रयच्छतीति प्रत्यक्षेणोपलभ्यते । प्रत्युत तदभावेः प्रत्यक्षेण योग्यानुपलब्ध्या वा प्रमीयते । किं च अश्वमेधे ‘गां दंष्ट्राभ्यां मण्डूकान् दन्तैः’ इत्यादावश्वावयवानां दंष्ट्रादिद्रव्याणां हविषां भोक्तृत्वेन गोमण्डूकादयस्तिर्यञ्चो ऽपि* देवताविशेषाः श्रूयन्ते । न च तेषां फलप्रदानृत्वं सम्भाव्यते ।

‘ओषधीभ्यः स्वाहा वनस्पतिभ्यः स्वाहा मूलेभ्यः स्वाहा’—

(तै. सं. ७. ३. १९; ७. ३. २०)

इत्यादावच्येतनानामोषधि-वनस्पति-तदवयवानां देवतात्वं श्रूयन्ते । तत्र कुतो हविर्भोक्तृत्वं कुतस्तरां तृप्तिः कुतस्तमां

* अमुति प्रत्यक्षोपलम्भे अर्थो बाधितो भवति । इन्द्रस्य प्रत्यक्षत्वाभावात् श्रुतिरपि न स्वार्थे तात्पर्यवती भवतीति भावः ।

१. A. and I. read-स्वरूपत्वात्. २. G. reads-न राध्यते. ३. D. omits from भुक्त्वा to प्रत्यक्षेण, both inclusive. ४. This mantra is differently read by the following manuscripts as:—A. has स्तेगां दंष्ट्राभ्यां मण्डूकान् जम्भेभिः, B. and C. स्तेगां दंष्ट्राभ्यां मण्डूकान् जम्भेभिः, E. and F. स्तेगां दंष्ट्राभ्यां मण्डूकान् दन्तैः, D. and G. गां दंष्ट्राभ्यां मण्डूका काङ्क्षन्. ५. A. has इत्यादावयव-, B. C. E. F. H. इत्यादावयवयव-, and I. इत्यादावयव-. ६. A. B. C. F. have स्तेगमण्डूः, ७. Except A and I. all omit अपि. ८. C. F. and H. read फलदानृत्वं.

फलदानम् । तस्माद्विग्रहरदिमतां देवानांमभावात्तदेवताप्रसा-
दो यागस्य फलद्वारम् । किन्तु श्रूयमाणफलसाधनत्वान्यथा-
नुपपत्तिकल्प्यमपूर्वं तद्वारम् । अभ्युपगतेष्वपि देवेष्वपूर्वस्यैव
फलद्वारत्वमवश्यं वक्तव्यम्* । मन्त्रा-[†]र्थादेतिहासपुराणेषु
देवतानामपि तपश्चरण-कृत्वनुष्ठान-ब्रह्मास्त्रादिमन्त्रप्रयोगेभ्यः*
समीहितैसिद्ध्यनुकीर्तनात् । तस्मात्तदेवः फलप्रदः इति
सिद्धम् । औपनिषदास्त्वीश्वरस्य† फलदातृत्वं मन्यन्ते ।
तथाहि तदीये शास्त्रे तृतीयाध्याये विचारितम् । किं धर्मः
फलं ददाति ? आहोस्विदीश्वरः ? इति संशयः । तत्र स्मीमां-
सकोक्तन्यायेन धर्मः फलप्रद इति मूर्खपक्षः । सिद्धान्तस्तु
किं धर्मो न्यायानधिष्ठित एव फलप्रदः ? किं वा केनचिच्चेतने-
नाधिष्ठितः ? नाद्यः । अचेतनस्य तारुतम्यानभिज्ञस्य यथो-
चितफलदातृत्वायोगात् । द्वितीये तु येनाधिष्ठितः स एव
फलदाता ऽस्तु । न चैवं धर्मस्य वैयर्थ्यमिति शङ्कनीयम् ।
वैषम्य-नैर्घृण्यपरिहाराय धर्मापेक्षणात् । असति तु धर्मे
कांश्चिदुत्तममुखं कांश्चिन्मध्यमं कांश्चिदधमं प्रापयन्तीश्वरः कथं
विषमो न भवेत् । कथं वा विविधं दुःखं प्रापयन्निर्घृणो न
स्यात् । धर्माधर्मानुसारेण तत् प्रापणे गुरु-पितृ-राजादीना-

* अयमर्थः— मन्त्रार्थादेतिहासपुराणादिषु देवतानामपि समीहितं तैष-
श्वरणादिद्वारेव सिद्धमित्यनुवर्णितं न साक्षात् तस्मात् कर्मैव फलप्रदं
न देवता ।

† औपनिषदा वेदान्तिनः । ते च कर्मानुरूपं शुभमशुभं वा ईश्वरः
फलं ददातीति मन्यन्ते ।

१. A. has देवादीना-. २. C. and F. देवात्मनामपि, ३. देवानामपि.
३. D. F. G. and H. have समीहित- for समीहित-. ४. A. reads फलं
ददातु. ५. All except A. II. and I. have धर्मवैयर्थ्य-. ६. A. has चिञ्ज
for विविधं, and all others except B. विविचं for the same.

मिव न वैषम्य-नैर्घृण्ये प्राप्नुतः । न हि दुष्टशिक्षां शिष्ट-
परिपालनं च कुर्वतां गुर्वादीनां वैषम्य-नैर्घृण्ये विद्येते ।
यदुक्तं—‘गो-मण्डूकादीनां तिरश्चामोपधि-वनस्पत्यादीनां च
स्थावराणां फलप्रदत्वमयुक्तम्’—इति । तत् तथैवास्तु ।
ईश्वरस्य फलदातृत्वे कः प्रत्युद्भः । यदपि—

‘तुम् एवैनमिन्द्रः प्रजया पशुभिस्तर्पयति’ ।

(तै. सं. २. ५. ४. ३)

—इति तत्रापीन्द्रदेवतायामवस्थितो अन्तर्यामी फलप्रदत्वेन
विवक्षितः ।

‘अन्तः प्रकिष्टः शास्ता जनानाम्’ ।

इति श्रुतः । तस्मादीश्वरस्य प्रसाद एव फलद्वारम् ।
न च जैमिनेय-वैयामिकयोर्मतयोः परस्परं विरोधः ।
विवक्षाविशेषेण तत्समाधानात् । यथा देवदत्तस्यैव पक्त्व्ये
ऽपि सम्यगभिज्वेलनं विवक्षित्वा ‘काष्ठानि पचन्ति’— इति
व्यवहारः तथा परमेश्वरस्यैव फलप्रदत्वे ऽपि तारतम्यार्पादन-
निमित्ततया प्राधान्यं विवक्षित्वा—‘धर्मः फलप्रदः’— इति
व्यवहारः किं न स्यात् । तस्मादविरोधात् फलप्रदो जगदीश्वर
एक एव सर्वत्र पूजनीयो देव इत्यलमिति प्रसङ्गेन ।

॥ इति देवतास्वरूपनिरूपणप्रकरणम् ॥

अतिरिक्तं स्वयमेव वक्ष्यति । उभयोः पूजनप्रकार-
मुपरितनद्धोक्ते निरूपयामः । ‘देवता इति धिपूजको नावसी-

१. A. B. C. and F. स्तेग- for गो- २. All others except H. 1. read ईश्वरप्रसाद. ३. H. has अभिज्वालनं. ४. A. and I. read पावनिमित्त-
५. From फलप्रदः to the end is omitted by H. ६. All others except A. and I. read पूजनीय एवाल- ७. H. -मिति प्रसं-

दति '—इत्युक्तेरपूजायामवसीदति इत्यवगम्यते । न तथा च
कूर्मपुराणे—

‘यो मोहादथवाऽऽलस्य दृष्ट्वा देवतार्चनम् ।

भुङ्क्ते स याति नरकं, सूक्तेरप्यभिजायते ’ ॥

(कू. पु. १. २. १८. १२१)

‘अकृत्वा देवपूजां च महायज्ञान् द्विजोत्तमः ।

भुञ्जीत चेत्स मूढात्मा तिर्यग्योनिं निगच्छति ’ ॥

(कू. पु. १. २. १८. १२१)

इति । मार्कण्डेयः—

‘अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहान् प्रतिनिवर्त्तते ।

स तस्य दृष्ट्वा पुण्यमादाय गच्छति ’ ॥

(मा. पृ. २१. ३१; वि. पु. ३. ९. १५; वि. स्मृ. ६७. ३३)

इति । देवला र्षप—

‘अतिथिर्हृमभ्येत्य यस्य प्रतिनिवर्त्तते ।

असकृतो निरुगश्च स मर्त्यो हन्ति तत्कुलम् ॥

१. In Kūrma Purāṇa we find as अज्ञानात्. २. A. and I. read -ष्विह.
३. In the text of Kūrma Purāṇa we find the reading as follows :—
अकृत्वा तु द्विजः पञ्चमहायज्ञान् द्विजोत्तमो referring to both these verses
(this reading is more correct. ४. All others except A. and D. as also
the text of the Kūrma Purāṇa read स गच्छति. ५ This quotation
from मार्कण्डेयः to -गच्छति is omitted by A. and I.; the author
quotes this verse from Mārkaṇḍeya, but we also find it in Viṣṇu
Smṛiti and Viṣṇu Purāṇa.

इति । पूजायां तु न केवलं पापाभावः किन्त्वभ्युदयो ऽप्य-
स्ति । तथा च विष्णुधर्मोत्तरे—

‘ये ऽर्चयन्ति सदा विष्णुं शङ्ख-चक्र-गदाधरम् ।

५. सर्वपापत्रिनिर्मुक्ता ब्रह्माणं प्रविशन्ति ते’ ॥

इति । बृह्मपुराणे—

‘वेदाभ्यासो ऽन्वहं शक्त्या महायज्ञक्रियास्तथा ।

नाशयन्त्याशु पापानि देवानामर्चनं तथा’ ॥

(कृ. पु. १. २. १८. १९.)

इति । मनुरपि—

‘अतिथिं पूजयेद्यस्तु श्रान्तं चादुष्टमानसम् ।

सर्वृषं गोशतं तेन दत्तं स्यादिति मे मतिः’ ॥

(व. स्मृ. २७. ७)

इति । विष्णुगपि—

‘स्वाध्यायेनाग्निदेवेण यज्ञेन तपमा तथा ।

नाश्वप्नोति गृही लोकान् यथा त्वतिथिपूजनात्’ ॥

(वि. स्मृ. ६७. ४४.)

इति । कैश्वदेवाद्यर्थमोदनं पाचयित्वा तेन हामे कृते सति
यो ऽवशिष्ट ओदनः स हृतशेषः । तमेव भुञ्जीत न तु
स्वभोजनार्थं पाचयेत् । यदाह भगवान्—

१. B. C. D. and E. add एव to केवलं. २. A. and I. read अवसाहः
for पापाभावः. ३. A. and I. -माभूतम्. B. C. F. -मानस; and F. वा
बुद्धमानसम्. ४. D. सर्वसं. ५. A. on, ts इति. ६. All except A. and I.
omit, या. ७. A. reads तथाह; and the other all except I. तदाह.

‘यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।

भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्’ ॥

(भ. गी. ३. १३)

इति । ‘हुतशेषम्’—इत्यत्र हुतशब्दो महाभारते व्याख्यातः—

• ‘वैश्वदेवादयो होमा हुतमित्युच्यते बुधैः’ ।

इति । तस्य शेषो हुतशेषः । स च हुतशेषशब्दो देवर्षि-
मनुष्यादिपूजोपयुक्तावशिष्टमुपलक्षयति । तदाह मनु—

• ‘देवानृषीन् मनुष्यांश्च पितॄन् गृह्यांश्च देवताः ।

पूजयित्वा ततः पश्चाद् गृहस्थः शेषभुग्भवेत् ॥

अघं स केवलं भुङ्के यः पचत्यात्मकारणात् ।

यज्ञशिष्टाशनं ह्येतत् सतामन्नं विधीयते’ ॥

(म. स्मृ. ३. ११७-११८)

इति । ‘ब्राह्मणो नावसीदति’ इत्यत्र विवक्षितस्य ब्राह्मण-
स्य लक्षणं महाभारते दर्शितम्—

• ‘सत्यं दानं तपः शौचमानृशंस्यं दमो घृणा ।

दूयन्ते यत्र विप्रेन्द्र स ब्राह्मण इति स्मृतम् ॥

जितेन्द्रियो धर्मपरः स्वाध्यायनिरतः शुचिः ।

• काम-क्रोधौ वशे यस्य तं देवा ब्राह्मणं विदुः ॥

यस्य चात्मसमो लोको धर्मज्ञस्य मनस्विनः ।

स्वयं धर्मेण चरति तं देवा ब्राह्मणं विदुः ॥

१. D. omits from ‘हुतशेषम्’—to अघं स केवलं भुङ्के यः पचत्यात्मकारणात् both inclusive, this is only on account of the writer’s carelessness.

२. G. ब्राह्म्याश्च, E. and H. read ब्राह्म्याश्च. ३. H. adds इति after मनेक्.

४. A. and I. वशौ. ५. All except A. and I. read सर्वे धर्मेण चरिष्ये.

श्रो मध्यापयेदधीते वा याजयेद्वा यजेत वा ।

दद्याद्वा अपि यथाशक्ति तं देवा ब्राह्मणं विदुः ॥

क्षमा दया च विज्ञानं सत्यं चैव दमः शमः ।

अध्यात्मनि रतिज्ञानमेतद्ब्राह्मणलक्षणम् ॥

इति । तथा च अनाहिताग्नितायाभपि उक्तलक्षणलक्षितो ब्राह्मणो नावसीदतीति वाक्यार्थः पर्यवसितो भवति ।

‘चतुर्णामपि वर्णानाम्’—इति ‘षट्कर्माभिरतः’—इति वचनद्वयेन साधारणा-ऽसाधारणधर्मौ संक्षिप्योपदर्शितौ । यद्यप्यध्यापनादित्रयमेव विप्रस्याऽसाधारणं नाध्ययनादित्रयम् । तस्य वर्णत्रयसाधारणत्वात् । तथापि षट्कर्माभिरतत्वं विप्रस्यैवेति न कोऽपि विरोधः ॥ ३८ ॥

अथोत्र साधारणाध्ययनादिप्रसङ्गेन बुद्धिस्थं साधारणमाहिकं संक्षिप्याह—

सन्ध्यास्नानं जपो होमो देवतातिथिपूजनम् ।

आतिथ्यं वैश्वदैवं च षट्कर्माणि दिनेदिने ॥३९॥

इति । ‘सन्ध्यास्नानम्’—इत्यत्र यवागूपाकन्यायेन स्नानस्य प्राथम्यं व्याख्येयम् । स च न्यायः पञ्चमाध्याये प्रथमपादे प्रतिपादितः । ‘यवाग्वामग्निहोत्रं जुहोति । यवागुं च पचति’—इति श्रूयते । तत्र संशयः किमग्निहोत्र-यवागूपाकयोर-

१. All others except A. and I. have रतं for रतिः. २. From तथा च—to पर्यवसितो भवति is omitted by all except A. and I. ३. A. reads तथात्र, and all others except I. तत्र. ४. All except K. and L. read देवतानां च for देवतातिथिः. ५. A. omits यवाग्वाम्. ६. Except K. G. H. All others omit च. ७. A. omits तत्र.

नियतः क्रमः? उत नियतः? यदपि नियतः तदपि पाठेषु निय-
म्यते उताऽर्थेन? तत्र विध्योरनुष्ठानमात्रपर्यवसानात् क्रमस्य नि-
यामकभावात् अनियतैः—इत्येकः पूर्वः पक्षः । पूर्वोपकरणेषु
'अध्वर्युर्गृहपतिं दीक्षयित्वा ब्राह्मणं दीक्षयति' * इत्यत्र पाठ-
स्य नियामकत्वाभ्युपगमात् अत्रापि तत्सम्भवात् यथापाठक्रम-
नियमः—इत्यपरः पूर्वः पक्षः । 'यवाग्वा'—इति तृतीयया श्रुत्या
होमसाधनत्वावगमादसति च द्रव्ये होमानिष्पत्तेरर्थाद् अवीगू-
पाकः पूर्वभावी-इति सिद्धान्तः । एवमत्रापि स्नानस्य शुद्धिहे-
तुत्वाच्छुद्धस्यैव सन्ध्यावन्दनाधिकारित्वात् स्नानं पूर्वभावि-
इति द्रष्टव्यम् । तत्र स्नानं तत्पूर्वभाविनां ब्राह्ममुहूर्त्तोत्थान-हि-
तचिन्तनादीनां सर्वेषामुपलक्षणम् । तत्र याज्ञवल्क्यः—

‘ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्थाय चिन्तयेदात्मबो हितम् ।’

धर्माऽर्थकामान् स्वं काले यथाशक्ति न हापयेत् ॥

(या. स्मृ. १. ११५)

इति । मनुरपि—

‘ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत धर्मार्थावनुचिन्तयेत् ।’

काश्याक्रेषां च तन्मूलान् वेदतत्त्वार्थमेव चक्षते ।

(म. स्मृ. ४. ९३)

* द्रष्टव्यमिदं पूर्वमीमांसायां पञ्चमे ऽध्याये प्रथमे पार्श्वे ‘श्रुतिलक्ष-
णमानुपूर्व्यं तत्प्रमाणत्वात्’ इत्येतत्सूत्रव्याख्यायां शबरभाष्ये ।

१. A. and I. read यदा नियतस्तदा, and others except H. यदपि निय-
तस्तदापि. २. A. has नियामकत्वा. ३. A. adds क्रमः after अनियतः.
४. D. omits पूर्वः. ५. D. reads -धिकरणे. ६. B. D. and E. read ब्राह्मणं.
७. A. reads तथापाठक्रम- ८. D. reads असति द्रव्यहोमो निःपतेत्, अर्थाद्यवागू-
पाकः पूर्वभावीति द्रष्टव्यम् । तत्र स्नापूर्वभावि -for the intermediate portion
of साधनत्वावगमान् and ब्राह्ममुहूर्त्तः. ९. अत is added to एव by A.
१०. D. reads एवापयेत् for न हापयेत्.

इति । 'वैदतत्त्वार्थः' परमात्मा । तथा च कूर्मपुराणे—

‘ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्थाय धर्ममर्थं च चिन्तयेत् ।

कायकेशं तदुद्धृतं ध्यायीत मनसेश्वरम्’ ॥

(कू. पू. १. २. १८. ३)

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्थाये मानसे मतिमान्नृप ।

‘विबुद्धे चिन्तयेद्धर्ममर्थं चास्योऽविरोधिनम् ॥

अपीडया तयोः काममुभयोरपि चिन्तयेत् ।

परित्यजेदर्थ-कामौ धर्मपीडाकरौ नृप ॥

धर्ममप्यसुखोदकं लोकविद्विष्टमेव च’ ॥

(वि. पु. ३. ११. ५-७)

इति । सूर्योदयात् प्रागर्द्धप्रहरे द्वौ मुहूर्त्तौ । तत्राद्यो ब्राह्मो द्वि-
तीयो रौद्रः । तत्र ब्राह्मे चिन्तनीयार्थविशेषं दर्शयति विष्णुः—

‘उत्थायोत्थाय बोद्धव्यं किमद्य-सुकृतं कृतम् ।

दत्तं वा दापितं वाऽपि वाक् सत्या वाऽपि भाषिता ॥

उत्थायोत्थाय बोद्धव्यं महद्भयमुपस्थितम् ।

‘मरण-व्याधि-शोकानां किमद्य निपतिष्यति’ ॥

इति । ‘ध्यायीत मनसेश्वरम्’ इति यदुक्तं तत्र प्रकार-
विशेषो वामनपुराणे दर्शितः—

१. The text of Vishṇu Purāṇa सुखे च for उत्थाय. २. In Vishṇu Purāṇa विबुद्धः for त्रिविध्यः. ३. All except I. read चाप्यविरोधिनम्. ४. In Vishṇu Purāṇa the following one line is seen between अपीडया, &c., and परित्यजेदर्थकामौ, &c., but the author did not find it necessary to the present. ‘वृष्टावृष्टविनाशाय त्रिवर्गेऽत्र दर्शिता. ५. A. reads अनयोः for तयोः. ६. A. reads अपि कृतं for दापितं. ७. E. II. and I. read चापि. ८. D. and G. have यद्भयं समुप-. ९. I. omits दर्शितः.

‘ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी
भानुः शंशी भूमिसुतो बुधश्च ।
गुरुश्च शुक्रः शनि-राहु-केतवः
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्’ ॥

(वा. पु. १४. २३) :

इत्यादि ।

॥ इति ब्राह्मे मुहूर्त्ते आत्महितचिन्तनप्रकरणम् ॥
हितचिन्तनानन्तरं श्रोत्रियादिकमवलोकयेत् न तु ष्वापि-
ष्ठादिकम् । तदाह कात्यायनः—

‘श्रोत्रियं सुभगं गां च अग्निमग्निचिह्नं तथा ।
प्रातरुत्थाय यः पश्येदापद्भ्यः स प्रमुच्यते ॥
पापिष्ठं दुर्भगं चान्धं नम्रमुत्तनासिकम् ।
प्रातरुत्थाय यः पश्येत् तत्कलेरुपलक्षणम्’ ॥

(का. स्मृ. १९. ९—१०)

इति । ततो मूत्र-पुरीषे कुर्यात् । तदाहाङ्गिराः—

‘उत्थोय पश्चिमे रात्रे तत आचम्य चोदकम् ।
अन्तर्धाय तृणैर्भूमिं शिरः प्रावृत्य वाससा ॥
वाचं नियम्य यत्नेन धीर्वनोच्छ्वासवर्जितः ।
कुर्यान्मूत्र-पुरीषे तु शुचौ देशे समाहितः’ ॥

१. A. substitutes त्रिपुरान्तकोऽस्मिन्- २. All others except D. and G. substitute सहभानुजेन for शनि-राहु-केतवः. ३. A. omits ब्रह्मा. ४. All except A. and G. read सुभगां. ५. A. reads-दासिभ्यः स विमुच्यते. ६. A. and I. read मद्यं for चान्धं. ७. A. reads तथाचोऽङ्गिराः. ८. E, G. H. and I. read निष्ठीवो- for धीवनो-.

इति । तत्र तृणनियमं विशिनष्टि—

‘शिरः प्रावृत्य कुर्वीत शकृन्मूत्रविसर्जनम् ।

अयज्ञीयैरनार्द्रैश्च तृणैः सञ्छाद्य मेदिनीम्’ ॥

इति । तत्र कालभेदेन दिङ्मयममाह याज्ञवल्क्यः—

‘दिवा सन्ध्यासु कर्णस्थब्रह्मभूत्र उदङ्मुखः ।

कुर्यान्मूत्र-पुरीषे तु रात्रौ चेद्दक्षिणामुखः’ ॥

(या. स्मृ. १.१६)

इति । कर्णश्च दक्षिणः ।

‘पवित्रं दक्षिणे कर्णे कृत्वा विण्मूत्रमुत्सृजेत्’ ॥

इति स्मृत्यन्तरे पवित्रस्य दक्षिणकर्णस्थत्वाभिधानात् । य-
ज्ञोपवीतस्यापि तदेव स्थानं न्याय्यम् । अङ्गिरास्तु विकल्पेन
स्थानान्तरमाह—

‘कृत्वा यज्ञोपवीतं तु पृष्ठतः कण्ठलम्बितम् ।

विण्मूत्रं तु गृही कुर्यात् यत्र कर्णे समाहितः’ ॥

इति । तत्र कर्णे निधानमेकवस्त्रविषयम् । तथा च
सांख्यायनः—

‘यद्येकवस्त्रो यज्ञोपवीतं कर्णे

कृत्वा मूत्र-पुरीषोत्सर्गं कुर्यात्’ ॥

१. D. substitutes तत्र नियमं वसिष्ठ आह for तत्र तृणनियमं विशिनष्टि. If we allow the reading of D. it means that it is of Vasishṭa; but we cannot find it in Vasishṭa Smṛiti. For the same तृणनियमान् appears in A. I.; and in B. C. E. G. H. तृणनियमो. This is grammatically incorrect. २. B. E. and H. omit द्विक. ३. All except A. and I. read -स्थानाभिः. ४. G. has विकल्पे for विकल्पेन. ५. G. reads यदेकवस्त्रो for यद्येकवस्त्रो. ६. D. omits उत्सर्गं and reads मूत्रपुरीषे कुर्यात्; while B. C. E. F. and H. read - उत्सर्गे.

इति । ननु-उक्तो दिङ्निनियमो न व्यवतिष्ठते । अन्यैरन्यथा-
स्मरणात् । तत्र यमः-

‘प्रत्यङ्मुखस्तु पूर्वाह्ने अपराह्णे प्राङ्मुखस्तथा ।

उदङ्मुखस्तु मध्याह्ने निशार्थी दक्षिणामुखः’ ॥

इति । अत्र केचिद्विकल्पमाश्रित्य व्यवस्थापयन्ति । तदयु-
क्तम् । सामान्य-विशेषशास्त्रयोर्विकल्पायोगात् । सामान्य-
शास्त्रं हि याज्ञवल्क्यवचनम् । दिवसे कृत्स्ने ऽप्युदङ्मुखत्वं
विधानात् । यमवचनं तु विशेषशास्त्रम् । उदङ्मुखत्वस्य
मध्याह्नविषयत्वेनात्र सङ्कोचप्रतीतिः । मा ऽस्तु तर्हि विकल्पः ।
यमवचनोक्ता तु व्यवस्था भविष्यति-इति चेत् । तदपि न
युक्तम् । प्राक्-प्रत्यङ्मुखत्वनिराकरणायैव देवलेन सदैवेति
विशेषितत्वात् ।

‘सदैवोदङ्मुखः प्रातः सायाह्ने दक्षिणामुखः’ ।

इति । अत्र प्रातः-सायाह्नशब्दौ दिवा-रात्रिविषयौ । तथा च
मनुः-

‘मूत्रोच्चार-समुत्सर्गं दिवा कुर्यादुदङ्मुखः ।

दक्षिणाभिमुखो रात्रौ सन्ध्ययोश्च यथा दिवा’ ॥

(म. स्मृ. ४. ५०)

इति । एवं तर्हि यमोक्तयोः प्राक्-प्रत्यङ्मुखत्वयोः को गतिः ?
सूर्याभिमुखनिषेधगमकाक्तिरिति ब्रूमः । तदुक्तं महाभारते-

१. G. has तदेतदयुक्तम्. २. D. omits हि. ३. B. C. and F. omit
आपि. ४. D. and G. omit -स्व-; while H. reads उदङ्मुख इति वचनात् for
उदङ्मुखत्वविधानात्. ५. D. reads विशेषवच्छास्त्रम्. ६. A. reads यमवचनोक्तो
नियमः for यमवचनोक्ता तु व्यवस्था भविष्यति-इति चेत्, D. substitutes
अव्यवस्था भविष्यतीति चेत्, this reading is correct and gives different
sense. ७. H. omits तु. ८. A. reads एतदपि for नवपि. ९. A. and I.
read सूर्याभिमुखनिषेधपरा यमोक्तिरिति. The reading is correct, but it
seems the repetition ‘यमोक्तिरिति’ is contrary to the style.

‘प्रत्यादित्यं प्रत्येनलं प्रतिगां च प्रतिद्विजम् ।

मेहन्ति ये च पथिषु ते भवन्ति गतायुषः’॥

इति । यत्तु देवलेनोक्तम्—

‘धिष्णमूत्रमाचरेन्नित्यं सन्ध्यासु परिवर्जयेत्’॥

इति तन्निरुद्धेतरविषयम् ।

‘न वेगं धारयेत् । नोपरुद्धः क्रियां कुर्यात्’

इति स्मरणात् । यदपि मनुनोक्तम्—

‘ऊआयामन्धकारे वा रात्रावहनि वा द्विजः ।

यथासुखमुखः कुर्यात् प्राणवाधेभ्येषु च’ ॥

(म. स्मृ. ४. ५१; ग. पु. १. २१७. २७)

इति । तदपि नीहारान्धकारादिजनितदिङ्मोहनविषयम् ।

देशनियमो विष्णुपुराणे अभिहितः—

‘नैऋत्यामिषुविक्षेपमतीत्याभ्यधिकं भुवः ।

दूरादावसथान्मूत्रं पुरीषं च समाचरेत्’॥

(वि. पु. ३. ११. ८-९)

इति । आपस्तम्बोऽपि—

‘दूरादावसथान्मूत्र-पुरीषे कुर्यात्

दक्षिणां दिशमपरां वा’ ।

(आ. ध. सू. १. ११. ३१. २)

इति । मनुसपि—

‘दूरादावसथान्मूत्रं दूरात् पादावसेचनम् ।

उच्छिष्टान्ननिषेकं च दूरादेव समाचरेत्’॥

(म. स्मृ. ४. १५१)

इति । स एव वर्ज्यदेशानाह—

१. D. reads प्रत्यमरं प्रतिगज्जनां, E. प्रत्यबलं for प्रत्यनलं. २. I. reads यथापि for यत्तु. ३. H. I. and also the text of manu read प्राणवाधा-. ४. The text of the Āpastambhadharm sūtra, reads आरादा-..... दक्षिणां दिशं दक्षिणापरां वा. (See G. Bühler's 1st Edition which seems to be incorrect.)

‘न मूत्रं पथि कुर्वीत न भस्मनि न गोव्रजे ॥ (४५)

न फालकृष्टे न जले न चित्यां न च पर्वते ।

न जीर्णदेवायतने न बहुमीके कदाचन ॥ (४६)

न सप्तत्वेषु गर्तेषु न गच्छन्नापि च स्थितः ।

न नदीतीरमासाद्य न च पर्वतनस्त्वके ॥ (४७)

वाय्वग्नि-विप्रानादित्यमपः पश्यंस्तथैव गाः ।

न कदाचन कुर्वीत विष्णुवंस्य विसर्जनम् ॥ (४८)

(म. स्मृ. ४. ४५-४८)

इति । पर्वतमस्तक इति पुनर्ग्रहणं दंष्ट्राधिक्यज्ञापनाय ।

यमोऽपि—

‘तुषाङ्गार-कपालानि देवताऽऽयतनानि च ।

राजमार्ग-उमशानानि क्षेत्राणि च खलानि च ॥

उपरुद्धा न सेवेत छायां दृश्यं चतुष्पथम् ।

उदकं चोदकान्तं च पन्थानं च विवर्जयेत् ॥

वर्जयेत् वृक्षमूलानि चैव्य-उवध्र-विलानि च’ ।

इति । हारीनः—

‘आहारं तु रहः कुर्यात् विहारं चैव सर्वदा ।

गुणभ्यां लेक्ष्म्युपेतः स्यात् प्रकाशे हीयति श्रिया’ ॥

१. A. हलकृष्टे न च जले for न फालकृष्टे न जले. २. All others except D. H. and I. read बहुले for न जले. ३. H. reads न शादले for कदाचन. ४. A. has चैत्येषु for गर्तेषु. ५. Others except D. read नाप्यवास्थितः. for नापि च स्थितः; while A. reads नाधिरोहितः. ६. H. reads आश्रित्य for आसाद्य. ७. I. reads च for गाः. ८. This sentence is omitted by all others except H. ९. I. reads छायां दृश्यं चतुष्पथम्; G. छायां दृश्यं चतुष्पथम् and A. छायादृश्ये चतुष्पथे for छायां दृश्यं चतुष्पथम्. १०. A. reads संध्या. ११. A. and D. read लक्ष्म्युक्तः.

इति । आपस्तम्बो अपि—

‘न च सोपानत्को मूत्र-पूरीषे कुर्यात् ।’

(आ. ध. सू. १. १०. ३०. १८)

इति । यमो अपि—

‘प्रत्यादित्यं न मेहेत न पश्येदात्मनः शक्नुत् ।

दृष्ट्वा सूर्यं निरीक्षेत गामग्निं ब्राह्मणं तथा’ ॥

इति । ततो लोष्टादिना पग्निमृष्टगुदमेहनो गृहीतशिश्न-
श्चोत्तिष्ठेत् । तथा च भरद्वाजः—

‘अथापकृष्य विण्मूत्रं लोष्ट-काष्ठ-तृणादिना ।

उदस्तवासा उत्तिष्ठेत् दृढं विधृतमेहनः’ ॥

इति ।

॥ इति विण्मूत्रोत्सर्जनप्रकरणम् ॥

अथ शौचप्रकरणम् । तत्र याज्ञवल्क्यः—

‘गृहीतशिश्नश्चोत्थाय भृद्भिर्भ्यः दृतैर्जलैः ।

गन्धलेपक्षयकरं शौचं कुर्यादतन्द्रितः’ ॥

(या. स्मृ. १. १७)

इति । देवलो अपि—

‘आ शौचान्तं मृजेच्छिन्नं प्रस्नावोच्चारयोरपि ।

गुदं हस्तं च निर्मृग्यान्मृदम्भोभिर्मुहुर्मुहुः’ ॥

१. -गुद- is omitted by A. २. I. reads अवकृष्य च for अथापकृष्य, and A. यथा प्रकृष्य for the same. ३. A. & others except I. read -विधिः for -प्रकरणम्. ४. D. and I. read आ शौचान्तोत्सर्जेत्, B. C. and F. आ शौचात्तान्मृजेत् for आ शौचान्तं मृजेत्.

इति । दक्षो ऽपि—

‘तीर्थं शौचं न कुर्वीत कुर्वीतोद्धृतवारिणा’ ॥

इति । अभ्युद्धरणासम्भवे विशेषमाह विवस्वान्—

‘रत्निमात्राज्जलं त्यक्त्वा कुर्याच्छौचमनुद्धृतं ।

‘पश्चात्तच्छोधयेत्तीर्थमन्यथा ह्यगुचिर्भवेत्’ ॥

इति । शौचयोग्यां मृत्तिकांमाह यमः—

‘आहरेन्मृत्तिकां विप्रः कूलात् ससिकतां तथा’ ॥

इति । तत्रैव विशेषमाह मरीचिः—

‘विप्रे गुह्या तु मृच्छौचे रक्ताक्षत्रे विधीयते ।

हारिद्रवर्णा वैश्ये तु शूद्रे कृष्णां विनिर्दिशेत्’ ॥

इति । उक्तविशेषासम्भवे या काचित् प्राह्या । तदाह मनुः—

‘यस्मिन् देशे तु यत्तोयं या च यत्रैव मृत्तिका ।

सैव तत्र प्रशस्ता स्यात् तथा शौचं विधीयते’ ॥

(म. स्मृ. १०. ४७)

इति । विष्णुपुराणे वर्ज्या मृद्विशेषा दर्शिताः—

‘वल्मीक-मूषकोन्वातां मृदमन्तर्जलात्तथा ।

शौचावशिष्टां गेहाच्च नोदद्याल्लिपसम्भवाम् ॥ (१६)

अन्तःप्राण्यवपन्नां च हलोत्खातां न कर्दमात्’ ।

(वि. पु. ३. ११. १५-१६)

१. A. omits विवस्वान्, and I. reads विश्वामित्रः for the same. २. D. reads रत्निमात्रजलं त्यक्त्वा, and I. रत्निमात्रजलात्तीर्थं for रत्निमात्राज्जलं त्यक्त्वा. ३. All others except I. read कृष्णं विनिर्दिशेत् for कृष्णां विनिर्दिशेत्. ४. All others except I. read -मूषकः, but मूषक is correct. ५. D. reads -जले and I. -जलां for जलात्.

इति । अत्र तर्जलमृत्तिकाप्रतिषेधस्तु वापी-कूपादिव्यतिरिक्त-
विषयः । अत एव यमः—

‘वापी-कूप-तडागेषु नाहरेद्वाह्यतो मृदम् ।

आहरेज्जलमध्यात् तु परतो मणिबन्धनात्’ ॥

इति । देवलौ अपि काश्चिन्निषिद्धा मृदौ दर्शयति—

‘अङ्गार-तुष-कीटा-स्थि-शर्करा-वालुकान्विताम् ।

वन्मीकोपरि तोयान्त-कुड्या-फाल-श्मशानजाम् ॥

ग्रामबाह्यान्तरालस्थां वालुकां पांसुरुपिणीम् ।

आहृतामन्यशौचार्थमाददीत न मृत्तिकाम्’ ॥

इति । हस्तनियममाह देवलः—

‘धर्मविद्वक्षिणं हस्तमधः शौचे न योजयेत् ।

तथा च वामहस्तेन नाभेरुर्ध्वं न शोधयेत्’ ॥

इति । ब्रह्माण्डपुराणे दिङ्नियमो अभिहितः—

‘उद्धृत्योदकमादाय मृत्तिकां चैव वाग्यतः ।

उदङ्मुखो दिवा कुर्याद्वात्रौ धेद्वक्षिणमुखः’ ॥

इति । मृत्सङ्ख्यामाह शान्तातपः—

‘एका लिङ्गे करे सव्ये तिलो द्वे हस्तयोर्द्वयोः ।

मूत्रशौचं समाख्यातं शकृति त्रिगुणं भवेत्’ ॥

१. I. reads तोयान्त for तोयान्त-. २. D. reads कुड्या-यूप-श्मशानजाम्; while all others except A. and I. read कुड्या-पूतश्मशानजाम्, and on the margin of II. appears the correction -रूप- for -पूत-. ३. A. reads पुरीषे द्विगुणं भवेत्; while D. reads शकृति द्विगुणं भवेत्.

इति । मनुेरपि—

‘एका लिङ्गे गुदे तिलस्तथैकत्र करे कशः ।

उभयोः सप्त दातव्या मृदः शुद्धिमभीप्सतां ॥

एतच्छौचं गृहस्थस्य द्विगुणं ब्रह्मचारिणः ।

• वानप्रस्थस्य त्रिगुणं यतीनां तु चतुर्गुणम्’ ॥

(म. स्मृ. ५. १३६—१३७; वि. स्मृ. ६०. २५—२६.)

इति । बौधायनो अपि—

‘पञ्चा ऽपाने मृदो योज्या वामपादं तथा करे ।

तिलस्तिष्ठः क्रमाद्योज्याः सम्यक्शौचं चिकीर्षताः’ ॥

इति । वसिष्ठो अपि—

‘पञ्चा ऽपानं दशैकस्मिन्नुभयोः सप्त मृत्तिकाः ।

उभयोः पादयोः सप्त लिङ्गे द्वे परिकीर्त्तिते ॥

‘एकस्मिन् विशतिर्हस्ते द्वयोर्ज्ञेयाश्चतुर्दश’ ।

(व. स्मृ. ६. १८.)

इति । विशत्यादिकं ब्रह्मचारिविषयम् ‘द्विगुणं ब्रह्मचारिणः’ इत्युक्तत्वात् । आदित्यपुराणे—

१. E. and H. omit मनुेरपि. The following two verses are found in the text of the Vishnu Smṛiti, and the latter verse is found in the text of the Vasistha Smṛiti. २. All others except A. D. and I. read शुद्धिमवाप्सतां, and B. C. F. add इति after शुद्धिमवाप्सतां. ३. E. and G. read ऽपानं गुदे योज्या, but this appears to be a mistake. ४. All others except A. and I. read वामपादो मुखेनरे; but the meaning would be contrary. ५. A. has चिकीर्षतः for चिकीर्षता. ६. All others except G. and I. read कीर्त्तितः for कीर्त्तिते. This latter half is not found in the text of the Vasistha Smṛiti. I. has आदित्यपुराणे after the end of this verse, but we do not see any use of the words in this place.

‘खीन्द्गूद्रयोरर्द्धमानं प्रोक्तं शौचं मनीषिभिः ।
 दिवाशौचस्य निश्चयर्द्धं पथि पौदं विधीयते ॥
 आर्त्तः कुर्याद्यथाशक्ति शक्तः कुर्याद्यथेदितम्’ ।

इति । बौधायनोऽपि—

‘देशं कालं तथाऽऽत्मानं द्रव्यं द्रव्यप्रयोजनम् ।
 उपपत्तिमवस्थां च ज्ञात्वा शौचं प्रकल्पयेत्’ ॥

(बौ. स्मृ. १. १. १-५३)

इति । बृहपराशरः—

‘उपविष्टस्तु विष्मूत्रं कर्तुं यस्तु न विन्दति ।
 स कुर्यादर्द्धशौचं तु स्वस्य शौचस्य सर्वदा’ ॥

(ग. पु. १. २१७-३३)

इति । आनुशासनिके ‘शौचेतिकर्तव्यता दर्शिता—

‘शौचं कुर्याच्छनैर्धीरो बुद्धिपूर्वमसङ्करम् ।

विप्रुषश्च तथा न स्युर्यथा चोरं न संस्पृशेत् ॥

बुद्धिपूर्वं प्रयत्नेन यथा नैव स्पृशेत् स्फिचौ’ ।

इति । दक्षोऽपि—

१. G. reads पावो for पावं. २. A. reads समाचरेत् for प्रकल्पयेत्. ३. A. and I. read कर्तुः. ४. All others except A. and I. substitute च for तु. ५. A. has न for स. As in the Tilgu character the letters न and स resemble each other, we cannot positively say whether this is a mistake. ६. D. reads शौनकेनेतिकर्तव्यता for शौचेनिकर्तव्यता. ७. D. reads यथाचोक्तं न संस्पृशेत्, and A. न स्पृशेत् for संस्पृशेत्. ८. B. C. and F. read नैव स्पृशेति, G. नैव स्पृशेति, and I. नैव स्पृशेति. For the same E. and H. read चोरं न संस्पृशेत्.

‘षडन्या नखगुद्दी तु देयाः शौचेप्सुनां भृदः ।
न शौचं वर्षधाराभिराचरेत्तु कदाचन’ ॥

इति । मरीचिरपि—

‘तिसृभिश्चातलात् पादौ शोध्यौ गुल्फात्तथैव च ।
हस्तौ त्वोमणिवन्धाच्च लेप-गन्धापकर्षणे’ ॥

इति । यथाविधि कृते शौचे गन्धश्चेन्नापगच्छति तदाऽऽह

मनुः—

‘यावन्नापैत्यमेध्याक्तांश्चो लेपश्च तत्कृतः ।
तावन्मृद्वारी देयं स्यात् सर्वासु द्रव्यगुद्दिषु’ ॥
(म. स्मृ. ५. १२६)

इति । मनस्तुष्ट्यभावे तु देवल आह—

‘यावत्तु गुद्दि मन्येत तावच्छौचं विधीयते ।
प्रमाणं शौचसङ्ख्यायां न विप्रैरुपदिशते’ ॥
(ग. पु. १. २१७-३६)

इति । पितामहो अपि—

‘न०युर्वदुपनीयन्ते द्विजाः, गूढास्तथाऽङ्गनाः ।
गन्धलेपक्षयकरं शौचमेषां विधीयते’ ॥

१. A. and I. read शोधयेत् for चातलात्; while D. reads चाबलात् for the same. २. G. and I. read गुल्फौ तथैव च. ३. A. has द्वौ मणिवन्धाच्च. ४. All others except I. read -गन्धापकर्षणम्. ५. All others except A. and the text of Manu read -त्यमेध्याक्तो गद्ध्योः. ६. All others except A. and the text of Manu read चादेक, but the commentators of मनु do not follow this reading, as they think वारि and कृत are used separately. ७. A. reads शौचसङ्ख्यायां. ८. G. and II. have तावत् for यावत्, but in the margin of II. appears the correction यावत्. ९. D. has शौचमेव, A. and G. शौचमेवं.

इति । अत्र स्त्री-शूद्रग्रहणं अकृतोद्वाहाभिप्रायम् । अनु-
पनीतद्विजसाहचर्यात्* । मृत्परिमाणमाह शातातपः—

‘आर्द्रमलकसादास्तु ग्रासा इन्दुव्रते† स्थिताः ।
तथैवाहुतयः सर्वाः शौचार्ये या च मृत्तिका’ ॥

इति । यत्तु दक्षाङ्गिरोभ्यां परिमाणान्तरमुक्तम्—

‘अर्धप्रसृतिमात्रा तु प्रथमा मृत्तिका स्मृता ।
द्वितीया च तृतीया च तदर्धेन प्रकीर्तिता ॥
प्रथमा प्रसृतिर्हेत्या द्वितीया तु तदर्द्धिका ।
तृतीया मृत्तिका ज्ञेया त्रिभागकरपूरणी’ ॥

(द. स्मृ. ५. ७.; ग. पु. १. २१७. २)

इति तत्र सर्वत्र न्यूनपरिमाणेन गन्धाद्यक्षये सन्त्यधि-
कपरिमाणं द्रष्टव्यम् । सन्त्यपि गन्धक्षये शास्त्रोक्तसङ्ख्या
पूरणीयैवे । यथाह दक्षः—

* ‘स्त्रीणामुपनयनस्थाने विवाहः’ इत्युक्तेः ‘स्त्री-शूद्रौ च सधर्माणौ’
इत्युक्तेश्च अनुपनीतद्विजवत् अकृतोद्वाहयोः स्त्री-शूद्रयोरपि गन्धलेपक्षय-
करमेव शौचं विधीयते इत्यभिप्रायः ।

† इन्दुव्रतं चान्द्रायणम् । तत्र ग्रासाः होमेषु आहुतयः शौचे मृत्ति-
काश्च आर्द्रमलकप्रमाणाः कर्तव्या इत्यर्थः ।

१. B, C, and F. read शौचार्ये यास्तु मृत्तिकाः, A, E, G, and H. शौचे
येयास्तु मृत्तिकाः, and I. शौचे येयाश्च मृत्तिकाः for शौचार्ये या च मृत्तिका,
२. D. reads परिमाणे for परिमाणेः. ३. All others except D. omit एव.

‘न्यूनाधिकं न कर्त्तव्यं शौचं शुद्धिमभीप्सुवा ।

प्रायश्चित्तेन पूयेत विहितातिक्रमे कृते’ ॥

(द. स्मृ. ५. १३)

इति । एवमुक्तशौचकरणेऽपि यस्य भावशुद्धिर्नास्ति न
तस्य शुद्धिरित्याह व्याघ्रपादः—

‘शौचं तु द्विविधं प्रोक्तं बाह्यमाभ्यन्तरं तथा ।

मृज्जलाभ्यां स्मृतं बाह्यं भावशुद्धिस्तथा ऽऽन्तरम् ॥

• गङ्गातीयेन कृत्स्नेन मृद्धारैश्च नैगोपमैः ।

आ मृत्योश्चाचरन् शौचं भावदुष्टो न शुद्ध्यति’ ॥ •

इति । शौचस्य द्विविधस्यापि सर्वकर्माधिकारहेतुत्वमन्वय-
व्यतिरेकाभ्यां दक्षो दर्शयति—

‘शौचे यत्नः सदा कार्यः शौचमूलो द्विजः स्मृतः ।

शौचाचारविहीनस्य समस्ता निष्फलाः क्रियाः’ ॥

इति ।

(द. स्मृ. ५. २)

॥ इति शौचप्रकरणम् ॥

अथ गण्डूषविधिः । तत्रापस्तम्बः—

‘एत्रं शौचविधिं कृत्वा पश्चाद्गण्डूषमाचरेत्’ ।

मूत्रे रेतसि विट्सर्गे दन्तधावनकर्मणि ॥

१. D. reads शौचसिद्धि- for शौचं शुद्धि-, A. B. C. and F. read शौचे सिद्धि-, and E. G. H. शौचं सिद्धि-. २. A. reads नैगोपमैः. ३. The intermediate portion from this heading to the next heading ‘अथाचमन-विधिः’ is omitted by all others except A. and I., it is difficult to state whether this portion has been entirely omitted by the author himself or it has been inserted by some one else.

भक्ष्याणां भक्षणे चैव क्रभाद्रण्डूपमाचरेत् ।
 चतुरष्ट-द्विषट्-व्यष्टगण्डूपैः षोडशैस्तथा ॥
 मुखशुद्धिं प्रकुर्वीत ह्यन्यथा दोषमाप्नुयात् ।
 , पुरस्ताद्वैवताः सर्वा दक्षिणे पितरस्तथा ॥
 पश्चिमे मुनि-गन्धर्वा वामे गण्डूपमाचरेत् ।
 गण्डूपसमये विप्रस्तर्जन्या वक्त्रताडनम् ॥
 कुर्वीत यदि मूढात्मा रौरवं नरकं व्रजेत् ।

इति ।

॥ इति गण्डूपविधिः ॥

अथाचमनविधिः । तत्र वृद्धपराशरः—

‘कृत्वाऽथ शौचं प्रक्षाल्य पादौ हस्तौ च मृज्जलैः ।
 निवेद्वशिख-कच्छंस्तु द्विजं आचमनं चरेत् ।
 कृत्वोगवीतं सव्यांसे वाङ्मनः-कायसंयतः’ ॥

इति । याज्ञवल्क्यो अपि—

‘अन्तर्जानुः शुचौ देशे उपविष्ट उदङ्मुखः ।
 प्राग्वा ब्राह्मेण तीर्थेन द्विजो नित्यमुपस्पृशेत्’ ॥
 (या. स्मृ. १. १८)

इति । गौतमो अपि—

१. A. reads प्रबद्ध- २. H. reads -कक्ष- for -कच्छ- ३. D. and H. read द्विराचमनमाचरेत् for द्विज आचमनं चरेत् ४. D. reads सव्येन; while all others except A. and I. read सव्येऽसे for सव्यांसे ५. All except D. and the text of Yājñavalkyasmṛiti or of the Visarga and read अन्तर्जानुं गच्छौ.

‘शुचौ देशे आसीनो दक्षिणं बाहुं जान्वन्तस्य
 कृत्वा यज्ञोपवीती आ मणिवन्धनात् पाणी
 प्रक्षाल्य वाग्यतो हृदयस्पृशः त्रिश्चतुर्वा अ
 आचामेत् । द्विः* प्रमृज्यात् । पादौ चाभ्युक्षेत् ।
 खानि वापस्पृशेत् शीर्षण्यानि* मूर्धनि च
 दद्यात् । (गौ. स्मृ. १. ११)

इति । तत्र त्रिश्चतुर्वैत्यैच्छिको विकल्पः । ब्रह्मतीर्थं
 तीर्थान्तरभ्यो विविनक्ति याज्ञवल्क्यः—

‘कनिष्ठा-देशिन्यङ्गुष्ठमूलान्यग्रं-करस्य च ।
 प्रजापति-पितृ-ब्रह्म-देवतीर्थान्येकमात् ॥
 (या. स्मृ. १. १९)

इति । एतदेव शङ्ख-लिखिताभ्यां स्पष्टीकृतम्—
 (या. स्मृ. १. १९)

‘अङ्गुष्ठमूलस्योत्तरतः प्रागग्रायां रेखायां
 ब्राह्मं तीर्थम् । प्रदेशिन्यङ्गुष्ठयोरन्तरा
 पित्र्यम् । कनिष्ठातलयोरन्तरा प्राजा-
 पत्यम् । पूर्वेणाङ्गुलिपूर्वाण दैक्म् ।

* खानि इन्द्रियाणि । शीर्षण्यानि शीर्षे भवानि नासिका-चक्षुःश्रो-
 त्रादीनि चोपस्पृशेत् । मूर्धनि च जलं दद्यात् इति योजना ।

१. All others except A. and the text of Gautama read दक्षिणबाहुं. २. A. reads जान्वन्तरं. ३. Except A. D. J. and the text of Gautama others read पाणी for पाणी. ४. This is omitted by all others except A. and the text of Gautama. ५. A. reads भ्युक्षेत्. ६. D. reads नखानि for खानि. ७. D. adds अपि to अङ्गुष्ठयोः. ८. A and I. read कनिष्ठिका-करतल-

इति । आचमनीयमुदकं विशिषष्टि शङ्खः—

‘अङ्गिः समुद्धृताभिस्तु हीनाभिः फेन-बुद्बुदैः ।

‘वह्निना न च तप्ताभिरक्षाराभिरुपस्पृशेत्’ ॥

(शं. स्मृ. ९. ६)

इति । याज्ञवल्क्योऽपि—

‘अङ्गिस्तु प्रकृतिस्थाभिर्हीनाभिः फेन-बुद्बुदैः ।

‘हृत्-कण्ठ-तालुगाभिस्तु यथासङ्ख्यं द्विजातयः’* ॥

शूद्धेरन् स्त्री च शूद्धेश्च सकृत्स्पृष्टाभिरन्ततः ॥

(या. स्मृ. १. २०-२१)

इति । मनुरापि—

‘हृद्गाभिः पूयते विप्रः कण्ठगाभिस्तु भूमिपः ।

वैश्योऽङ्गिः प्राशिताभिस्तु शूद्रः स्पृष्टाभिरन्ततः†’ ॥

(म. स्मृ. २. ६२)

इति । प्रचेद्वा अपि—

‘अनुष्णाभिरफेनाभिः पूताभिर्वस्त्र-चक्षुषा ।

‘हृद्गाभिरशब्दाभिः त्रिश्चतुर्वाङ्गिराचमेत्’ ॥

* द्विजातयः ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्याः शूद्धेरन् इति पूर्वोक्तान्वयः । स्त्री-शूद्रौ चकारात् अनुपनीतद्विजश्च अन्ततः अन्तेन तालुना स्पृष्टाभिरपि । तृतीयार्थे तसिः ।

† प्राशिताभिः अन्तरास्यप्रविष्टाभिः कण्ठमप्राप्ताभिरपीत्यर्थः । ‘अन्ततः जिह्वाष्ठान्तेनापि’ इति कुल्लूबभट्टः ।

१. ‘वह्निना न च तप्ताभिरक्षाराभिरुपस्पृशेत्’ याज्ञवल्क्योऽपि ‘अङ्गिस्तु प्रकृति-स्थाभिर्हीनाभिः फेन-बुद्बुदैः’ is omitted by D. २. A. and I. omit अपि. ३. A. D. and I. read शूद्राश्च. ४. H. and I. read भूपतिः.

इति । तत्रापवादमाह, यमः—

‘ योत्रायामीक्षितेनापि* शुद्धिरुक्ता मनीषिणाम् ।
उदकेनातुराणां च तथोष्णेनोष्णपायिनाम् ॥

इति । उदकस्य ग्रहणप्रकारं परिमाणं चाह भरद्वाजः—

‘ आयतं पर्वतः कृत्वा गोकर्णकृतिर्वत्करम् ।
संहतांगुलिना तोयं गृहीत्वा पाणिना द्विजः ॥
मुक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठेन शेषेणाचमनं चरेत् ।
माषमज्जनमात्रास्तु संगृह्य त्रिः पिवेदपः’ ॥

इति । स च पाणिर्दक्षिणो द्रष्टव्यः ।

‘ त्रिः पिवेदक्षिणेनापः’ ।

इति पुराणवचनात् । उदकपानानन्तरर्भाविनीमितिकर्त-
व्यतामाह दक्षः—

‘ संवृत्याङ्गुष्ठमूलेन द्विःप्रमृज्यात्ततो मुखम् ।
संहताभिस्त्रिभिः पूर्वमास्यमेवमुपस्पृशेत् ॥

* यात्रायां प्रयाणे केवलं जलावलोकनेनापि शुद्धिर्भवति । न तत्र स्पर्शनाद्यपेक्षा । ‘ रात्राववीक्षितेनापि’ इति पाठस्तु असङ्गत इव प्रतिभति ।

१. B. C. and F. add अपि to तत्र. २. A. substitutes यात्रावेत्ययः for यमः, but we do not find this verse in the text of the same. ३. All others except D. read रात्राववीक्षितेनापि for यात्रायामीक्षितेनापि, but we would not see the meaning of अवीक्षितेनापि; if right, would be an exception to an आचमन how the सायंसंश्यावन is to be performed. ४. A. and I. read सवतः. ५. I. reads -मत्करम्. ६. A. reads संहताङ्गुलिना. ७. D. reads -व्य for -वपः. ८. D. reads भावि निमित्तकर्तव्यता. ९. A. reads सम्पृत्याङ्गुष्ठ, B. C. D. and F. संमृज्याङ्गुष्ठ, and E. G. H. संमृश्याङ्गुष्ठ for संवृत्याङ्गुष्ठ. १०. A. reads संहताभिश्चतसृभिः पूर्वमास्यमुपस्पृशेत्, B. C., E. F. and H. संहताभिस्त्रिभिः पूर्वमास्यमेतमुपस्पृशेत्. and D. संहताङ्गुलिभिः पूर्वमास्यमेतमुपस्पृशेत्.

अङ्गुष्ठेन प्रदेशिन्या घ्राणं स्पृष्ट्वा त्वनन्तरम् ।
 अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तु चक्षुःश्रोत्रे ततः परम् ॥
 कनिष्ठाङ्गुष्ठयोर्नाभिं हृदयं तु तलेन वै ।
 सर्वाभिश्च शिरः पश्चात् बाहू चाग्नेण संस्पृशेत् ॥

(द. स्मृ. २. १४-१७)

इति । बृद्धशङ्खस्त्वन्यथास्पर्शनमाह—

‘तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन स्पृशेन्नासापुटद्वयम् ।
 मध्यमाङ्गुष्ठयोगेन स्पृशेन्नेत्रद्वयं ततः ॥
 नाभिं च हृदयं तद्वत् स्पृशेत् पाणितलेन तु ।
 संस्पृशेच्च तत् शीर्षमयमाचमने त्रिभिः’ ॥

(शं. स्मृ. ९. ५-७)

इति । एवमन्येऽप्यन्यथान्यथा वर्णयन्ति । तत्र यथा-
 शाखं व्यवस्था द्रष्टव्या । आचमननिमित्तान्याह मनुः—

‘कृत्वा मूत्रं पुरीषं वा खान्याचान्त उपस्पृशेत् ।
 वेदमध्येष्यमाणश्च अन्नमश्रंश्च सर्वदा’ ॥

(म. स्मृ. ५. १३८)

इति । कूर्मपुराणे अपि—

१. B. C. and F. reads बाहूनाग्नेण for बाहू चाग्नेण. २. D. omits the portion intervening between तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन स्पृशेत् in the first half of the first line and स्कन्धद्वयं ततः in the latter half of the 4th line. ३. D. substitutes तु for च. ४. A. D. and I. do not repeat the word अन्यथा. ५. D. omits तत्र. ६. A. and I. read पाण्याचान्त, and D. स्नात्वाचार्य. ७. All others except A. read the text of Manu read पीत्वापो-
 ध्येष्यमाणश्च. ८. I. reads वेदमभि च; while others except A. read वेदमन्नं च. ९. A. D. II. and I. omit अपि.

‘चण्डाल-म्लेच्छसम्भाषे* स्त्री-शूद्रोच्छिष्टभाषणे ।

उच्छिष्टं पुरुषं स्पृष्ट्वा भोज्यं वोऽपि तथाविधम् ॥

आचामेदश्रुपाते वा लोहितस्य तथैव च ।

अग्नेर्भावामयाऽऽलम्भे स्पृष्ट्वा प्रयतमेव च ॥

स्त्रीणामेथाऽऽत्मनः स्पर्शो नीलीं वा परिधाय च’ ॥

(कू. पु. १. २. १३. ४-८.)

इति । ‘स्त्री-शूद्रोच्छिष्टभाषणे-’ इत्येतज्जपादिविषयम् । तथा
च पञ्चपुराणे—

‘चाण्डालादीन् जपे होमे दृष्ट्वाऽऽचामेद्विजोत्तमः’ ।

इति । मनुरपि—

‘सुप्त्वा क्षुत्त्वा च भुक्त्वा च निष्ठीव्योक्तवानूर्तं वचः ।

रथ्यां इमशानं चाक्रम्य आचामेत् प्रयतोऽपि सन्’ ॥

(म. स्मृ. ५. १४५)

इति । बृहस्पतिरपि—

* चाण्डालैः म्लेच्छैश्च सह सम्भाषे सम्भाषणे । उच्छिष्टैः स्त्री-
शूद्रैः सह उच्छिष्टेन वा तैः सह भाषणे आचामेदिति भावः ।

१. B. C. and F. read भाषणम्. २. B. C. E. F. and G. read वृष्ट्वा for स्पृष्ट्वा.
३. All others except A. and I. substitute चा for वा. ४. After this
line we find in the Kūrma Purāṇa the following two lines:— भोजने
सन्ध्ययोः स्नात्वा त्यागे मूत्र-पुरीषयोः । आचान्तोऽप्याचमेत्स्पृष्ट्वा सकृत्सकृ-
दथान्यतः. ५. A. reads तथात्मसंस्पर्शे, and I. यथात्मसंस्पर्शे for अथात्मनः स्पर्शे.
६. All others except A. and I. and the Kūrma Purāṇa read नीलीं for
नीली. ७. All others except A. and I. read पुराणम्. ८. In the text
of manu appears नृतानि च. ९. A. omits this portion, and I. omits
only अपि.

‘अधीवायुसमुत्सर्गे आक्रन्दे क्रोधसम्भवे ।
मार्जार-मूषकेस्पर्शे प्रहासे ज्वृतभाषणे ॥
निमित्तेष्वेषु सर्वेषु कर्म कुर्वन्नपि स्पृशेत्’ ॥

इति । यमो अपि—

‘उत्तीर्योदकमाचामेदवतीर्य तथैव च’ ।

एवं-स्यात्तेजसा युक्तो वरुणो अपि सुपूजितः* ॥

इति । हारीतो अपि—

‘नोत्तरेदनुपस्पृश्य जलम्’ ।

इति । वसिष्ठो अपि—

‘क्षुते निष्ठीर्य सुप्ते परिधाने श्रुपातने ।

पञ्चस्वेतेषु चाचामेच्छेत्रं वा दक्षिणं स्पृशेत्’ ॥

इति । दक्षिणकर्णस्पर्शनमाचमनासम्भवे वेदितव्यम् ।

तथा च मार्कण्डेयपुराणम्—

‘सम्यगाचम्य तोयेन क्रियाः कुर्वीत वै शुचिः ॥ (६७)

देवतानामृषीणां च पितॄणां चैव यत्नतः ॥ (६८)

कुर्यादाचमनं स्पर्शं गोपृष्ठस्यार्कदर्शनम्† ॥

* एवं कृते सति जलाधिष्ठातृदेवता वरुणोऽपि पूजितो भवतीत्यर्थः ।

† नेदमुपलब्धपुस्तकेषु दृश्यते । तथापि ‘पूर्वाभावे ततः परं’—इत्यस्य ग्रहणे इदमपेक्षितमेवेति स्पष्टमेव ।

१. All others except A. and D. read -मूषिकास्पर्शे, which appears to be a mistake. If the word मूषिका meaning a female rat is kept then the meaning would be that at the touch of the female rat alone the आचमन is to be performed. २. All others except D. read कुर्वन्नुपस्पृशेत्. ३. A. and I. read वरुणेन सुपूजितः, and D. वरुणेनापि पूजितः for the same. ४. D. and I. substitute वा for वा. ५. A. H. and I. read क्रियाः.

कुर्वीतालम्भज्ञं चोपि दक्षिणश्रवणस्य वा । (५०)

यथाविभवन्तो ह्येतत् पूर्वाभावे ततः परम् ।

न विद्यमाने पूर्वोक्ते उत्तरप्राप्तिरिष्यते । ॥ (५१)

(मा. पु. ३४. ६७-७१)

इति । दक्षिणकर्णप्रशंसा च 'प्रभासादीनि तीर्थानि'—
इत्यादिना वक्ष्यते । अथ वा बौधायनोक्तं द्रष्टव्यम्—

‘नीवीं विमृज्य परिधायाप उपस्पृशेत् ।

आर्द्रं तृणं गोमयं भूमिं वा समुपस्पृशेत् ।’

(बौ. स्मृ. १. १०. १६-१७)

इति । षट्त्रिंशन्मते द्विराचमननिमित्तं दर्शितम्—

‘होमे भोजनकाले च सन्ध्ययोरुभयोरपि ।’

आचान्तः पुनराचामेज्जप-होमार्चनादिषु ॥

इति । याज्ञवल्क्यो अपि—

‘स्नात्वा पीत्वा क्षुते सुप्ते भुक्त्वा रथ्यौपसर्पणे ।

आचान्तः पुनराचामेद्वासे विपरिधाय च’ ॥

(या. स्मृ. १. १९६)

इति । बौधायनो अपि—

‘भोजने हवने दाने उपहारे प्रतिग्रहे ।

हविर्भक्षणकाले* च तत् द्विराचमनं स्मृतम् ॥’

हविर्भक्षणं पुरोडाशैर्वादिभक्षणम् ।

१. A. B. C. D. and F. substitute वा for च. B. C. and F. read गोभूमिं गोमयं वा संस्पृशेत्; while A. E. H. and I. भूमिं गोमये वा संस्पृशेत्.

इति । कूर्मपुराणे अपि—

‘प्रक्षाल्य पाणी पादौ च भुञ्जानो द्विरुपस्पृशेत् ।

गुचौ देशे समासीनो भुक्त्वा च द्विरुपस्पृशेत् ॥

(कू. पु. १. २. १२. ६४)

ओष्ठौ विलोमकौ स्पृष्ट्वा वासो विपरिधाय च ।

रेतो-मूत्र-पुरीषाणामुत्सर्गे अयुक्तभाषणे ॥

जृम्भित्वा अध्ययनारम्भे कास-श्वाशगमे तथा ।

चत्वरं वा इमशानं वा समागम्य द्विजोत्तमः ॥

‘सन्ध्ययोरुभयोस्तद्ब्रदाचान्तोऽप्याचमेत् पुनः’ ॥

(कू. पु. १. २. १३. १-३)

इति । अयुक्तभाषणं निष्ठुरभाषणम् । आचमनापवादमाह
बौधायनः—

‘दन्तवदन्तलम्बेषु दन्तसक्तेषु धारणा ।

‘ग्रस्तेषु तेषु नाचामेत्तेषां संस्थानवच्छुचिः’ ॥

(बौ. स्मृ. १. ४. १. २४)

१. A. D. E. G. and H. read शुष्कभाषणे for अयुक्तभाषणे. २. D reads शयित्वा; while A. and the text of Kūrma Purāṇa read स्त्रीविश्राम्. ३. The text of the Kūrma Purāṇa reads समागम्य. ४. A. and I. read ततः for पुनः. ५. A. D. E. G. and H. read शष्क- for अयुक्त. ६. A. and I. read अस्थितेषु च; while D. reads सस्तेषु तेषु for ग्रस्तेषु तेषु. ७. The text of the Baudhāyana smṛite reads the whole verse as follows:—

‘दन्तवदन्तसक्तेषु दन्तवत्तेषु धारणा ।

सस्तेषु तेषु नाचामेत्तेषां संस्थानवच्छुचिः’ ॥

In this verse both the readings संस्थानवत् and संस्थानवत् are doubtful. They do not give any proper meaning. Dr. Bühler corrects संस्थानवत्, but we think संस्थानवच्छुचिः would be a more correct reading.

इति । दन्तलग्नः दन्तसक्तयोर्निर्हार्या निर्हार्यरूपेण भेदः ।

अत एव देवलः—

‘भोजने दन्तलग्नानि निहत्या च मनं चरित् ।

दन्तलग्नमसंहार्यं लेपं मन्येत दन्तवत् ॥

न तत्र बहुशः कुर्याद्यत्नमुद्धरणे पुनः ।

भवेच्चाशौचमत्यर्थं तृणवेधाद्वर्णे कृते’ ॥

इति । ग्रंस्तेषु तेषु स्वस्थानाच्युतेषु च निगीर्णेद्विवृत्यर्थः ।

तत्र मनुः—

‘दन्तवदन्तलघ्नेषु जिह्वास्पर्शकृते न तु ।

परिच्युतेषु च स्थानान्निगिरन्नेव तच्छुचिः’ ॥

(बौ. स्मृ. १. ६. १. २९)

इति । एतच्च रसानुपलब्धौ वेदितव्यम् । यथा ऽहं शङ्खः—

‘दन्तवदन्तलघ्नेषु रसवर्जनमन्यतो जिह्वाभिस्पर्शनात्’ ।

इति । फल-मूलादिषु विशेषमाह शातातपः—

१. A. and I. read अस्थिषु च, while D. reads वस्तेषु for ग्रन्थेषु.
२. A. and I. omit स्व-. ३. Except A. D. and I. all others read स्वस्थानेषु तेषु, omitting च्युतेषु. ४. This verse the author quotes from Manu ; but we find this only in one manuscript with Govind Rajā's commentary (5 between 141 and 142 verse), but neither Govindrāja nor any of the other six commentators on Manu has commented it, the reading of it being—

दन्तवदन्तलघ्नेषु दन्तीस्पर्शेषु चैव हि ।

च्युतेष्वप्यवद्विद्यान्निगिरन्नेव तच्छुचिः ॥

५. All others except A. and I. read स्पर्शे कृते for स्पर्शकृते.

‘दन्तलग्ने फले मूले भुक्तरनेहावशिष्टके ।

ताम्बूले चेक्षुदण्डे च नोच्छिष्टो भवेति द्विजः’ ॥

इति । षट्त्रिंशन्मते ऽपि.—

‘ताम्बूले चैव सोमे* च भुक्तस्नेहावशिष्टके ।

दन्तलग्नस्य ‘संस्पर्शे नोच्छिष्टस्तु भवेन्नरः ॥

त्वग्भिः पत्रैर्मूल-पुष्पैस्तृण-काष्ठमयैस्तथा ।

सुगन्धिभिस्तथा द्रव्यैर्नोच्छिष्टो भवेति द्विजः’ ॥

इति । एतच्च मुखसौरभ्याद्यर्थोपभुक्तावशिष्टविषयम् ।
ताम्बूलसाहचर्यात् । ‘दन्तलग्नस्य संस्पर्शे’ इति अनिर्हार्यस्य
दन्तलग्नस्य जिह्वायां संस्पर्शे इत्यर्थः । याज्ञवल्क्यो ऽपि—

‘मुखजा विप्रुषो मेध्यास्तथा ऽऽचमनविन्दवः ।

श्मश्रु चास्यगतं दन्तसक्तं त्यक्त्वा ततः शुचिः’ ॥

(या. स्मृ. १. १९५)

इति । मुखनिःसृता विन्दवो यद्यङ्गे पतन्ति तदा नाचम-
नापादकाः । तथा च गौतमः—

* सोमः सोमवलीरस इति यावत् ।

१. G. reads भवतु for भवति. २. E. and H. read षट्त्रिंशत्त्रिंशन्मते ऽपि but we do not find any work of this name on Dharmasâstra. Probably this is a mistake of the writer. ३. A. adds इति after भवेन्नरः. ४. B. reads फलेः पुष्पैः for मूल-पुष्पैः. ५. All others except A. and I. read सौत्माद्यर्थो. ६. D. reads प्रतिहार्यस्य, B. C. and F. निर्हार्यस्य, E. G. and H. हार्यस्य for अनिर्हार्यस्य. ७. B. C. and F. read न पतन्ति, D. E. G. and H. निपतन्ति for पतन्ति. ८. A. reads आचमनापादकाः, I. and D. आचमनापादकाः for नाचमनापादकाः.

ने मुख्या विप्रुष उच्छिष्टं कुर्वन्ति तांश्चैदङ्गे 'निपतन्ति' ।
(गौ. स्मृ. १. १६)

इति । आचमनविन्दवस्त्वैद्वंस्पृष्टा अपि मेध्याः । तथा च
मनुः—

‘स्पृशन्ति विन्दवः पादौ यं आज्ञामयतः परान् ।

भौमिकैस्ते समा ज्ञेया न तैरप्रयतो भवेत्’ ॥

(मं. स्मृ. ६. १४२; वि. स्मृ. २३. ६४)

इति । अत्र पादग्रहणं अवयवान्तरस्याप्युपलक्षणार्थम् ।

तथा च यमः—

‘पतन्त्यार्चामतो यांश्च शरीरे विभुषो नृणाम् ।

उच्छिष्टदोषो नास्त्यत्र भूमितुन्यास्तु ताः स्मृताः’ ॥

इति । इमश्रुविषये विशेषमाहाऽऽपस्तम्बः—

‘न इमश्रुभिरुच्छिष्टो भवत्यन्तरास्ये

सद्भिः यावन्न हस्तेनोपस्पृशति’ ।

(आ. ध. सू. १. ६. १६. ११)

इति । औचमने वङ्ग्यानाह भृगुः—

१. A. and I. omit न; for the same E. G. and H. substitute अ.
२. All others except A. and the text of Gautama read न चैदङ्गे for तांश्चैदङ्गे.
३. D. reads अङ्गास्पृष्टा, B. C. E. F. and H. अङ्गे स्पृष्टा, and A. I. G. अङ्गं स्पृष्टा for अङ्ग-स्पृष्टा.
४. All others except A. I. and the text of Manu read यस्याचामयतः for यं आचामयतः.
५. D. reads भूमिगैः; while the commentator Govindrāja reads भूमिकैः for भौमिकैः.
६. Except Govindrāja, all other commentators and A. read रामयतो.
७. D. reads अवान्तरस्य for अवयवान्तरस्य.
८. A. B. C. E. F. and I. read आचमतो.
९. A. reads यस्य for याश्च.

‘दिना यज्ञोपवीतेन तथा श्रौतेन वाससा ।
मुक्त्वा शिखां वाप्याचामेत् कृतस्यैव पुनः क्रिया ॥
सोष्णीषो बद्धपर्यङ्कः प्रौढपादश्च* यानगः ।
‘दुर्देशप्रगतश्चैव नाचामन् दृद्धिमाप्नुयात्’ ॥

इति । बौधायनो अपि—

‘पादप्रक्षालनोच्छेषेण नाचामेत् । यद्याचामेत् भूमौ
स्नावयित्वाऽऽचामेत् । नाङ्गुलीभिर्न सङ्कुट्टाभिर्न
संफेनाभिर्नोष्णाभिर्न क्षीराभिर्न विवेर्णाभिर्न दुर्ग-
न्धरसाभिर्न कलुषाभिः । न हसन् न जल्पन् न तिष्ठन्

* प्रौढपादो यथा—

‘आसनारूढपादस्तु जानुनोर्जङ्गयोस्तथा ।
कृतावसक्थिको यस्तु प्रौढपादः स उच्यते’ ॥

इत्युलक्षणः । जानुनोः जङ्गयोः कृतावसक्थिकः कृतपृष्ठजानुजङ्गाबन्ध
इति भातः ।

१. B. C. and F. read वा नाचामेत्, H. and I. चाचामेत् for वाप्याचामेत्.
२. Except D. all others read सोष्णीषी. ३. B. C. E. F. and H. read
‘दुर्देशप्रगतश्चैव, G. दुर्देशः प्रपदश्चैव, and D. दुर्वेषश्च प्रपदश्चैव for दुर्देशप्रगतश्चैव.
४. All others except G. and the text of Baudhāyana read पादप्रक्षालना-
च्छेषेण. ५. Except D. and the text of Baudhāyana all others omit
यद्याचामेत्. ६. Except A. and the text of Baudhāyana all others
omit नाङ्गुलीभिः. ७. D. substitutes च for स-. ८. All others except
A. I. and the text of Baudhāyana omit स-. ९. A. and I. read नोच्छि-
ष्टाभिः. १०. B. C. and F. read न जाताभिः, E. न जात्याभिः, and G. न
जातिभिः for न क्षाराभिः. ११. D. omits न विदग्धाभिः, and A. adds नोष्णाभिः
before न कलुषाभिः. १२. This is omitted by all others except A. and
the text of Baudhāyana. १३. B. C. and F. read जलस्थो for जल्पन्.
१४. A. omits न जल्पन् न तिष्ठन्.

न विलोकेन्न न प्रहो न प्रणतो न मुक्तेशिखो
 न प्रावृतकण्ठो न वेष्टितशिरा न बद्धकक्ष्यो
 न बहिर्जानुः न त्वरमाणो नाप्यज्ञोपवीती न प्रसारितपादः
 शब्दमुकुर्वन् त्रिरपि हृदयङ्गमाः पिबेत् ।
 (बौ. स्मृ. १. ६. १२-१९)

इति । देवलौ अपि—

‘सोपानत्को जलस्थो वा मुक्तकेशो अपि वा नरः ।

उट्णीषी वापि नाचामद्वस्त्रेणाबध्य वा शिरः’ ॥

इति । आपस्तम्बो अपि—

न वर्षभाराभिराचामेत् ।

(आ. ध. सू. १. ६. १६. ४)

इति । यमो अपि—

‘अपः कर-नखैस्पृष्टा य आचामति वै द्विजः ।

सुरां पिबति स व्यक्तं यमस्य वचनं यथा’ ॥

इति । ब्रह्माण्डपुराणे अपि—

‘कण्ठं शिरो वा प्रावृत्य रथ्या-ऽऽपणगतो अपि वा ।

अकृत्वा पदिर्यः शौचमाचान्तो ऽप्यशुचिर्भवेत्’ ॥

इति । गौतमो अपि—

१. B. C. E. F. and I. omit न विलोकयन्; while H. in its correction reads नाविलोकयन्. २. B. C. D. E. F. G. H. and I. add after this word नाबद्धकच्छो न बहिर्जानुर्न वेष्टितशिरा न बद्धकक्ष्यो न पञ्चमानो नाप्यज्ञोपवीति न प्रसारितपादः for न प्रावृतकण्ठो न वेष्टितशिरा न बद्धकक्ष्यो न बहिर्जानुः न त्वरमाणो नाप्यज्ञोपवीती न प्रसारितपादः. ३. A. and D. read मुक्तकेशो ऽथ वा. ४. D. reads नाबद्धशीर्षकः. ५. A. and I. read धीराभिराचामेत्. ६. This verse and the words ब्रह्माण्डपुराणेऽपि following it are omitted by D. ७. A. and I. read नखैः. ८. All others except A. and I. read व्यक्तां.

‘न्याञ्जलिना पिवेत्र तिष्ठन् उद्धृतोदकेनाचामेत्’ ।

(गौ. स्मृ. ९. ३)

इति । न तिष्ठन्निति स्थूलविषयम् । जले तु तिष्ठन्नप्योचा-
मेत् । तथा च विष्णुः—

‘जान्वोरूध्वं जले तिष्ठन्नाचान्तः शुचितामियात् ।

*अधस्ताच्छेतकृत्वोऽपि समाचान्तो न शुद्ध्यति’ ॥

इति । कौशिकोऽपि—

‘अपवित्रकरः कश्चिद्वाहाणोऽप्ये उपस्पृशेत् ।

अकृतं तस्य तत् सर्वं भवत्याचमनं तथा ॥

वामहस्ते स्थिते दर्भे दक्षिणेनाचमेद्यदि ।

‘रक्तं तु तद्भवेत्तोयं पीत्वा चान्द्रायणं चरेत्’ ॥

इति । मार्कण्डेयस्तु दक्षिणहस्तस्य सपवित्रतां विधत्ते—

‘सपवित्रेण हस्तेन कुर्यादाचमनक्रियाम् ।

नोच्छिष्टं तत्पवित्रं तु भुक्तोच्छिष्टं तु वर्जयेत्’ ॥

इति । गोभिलो हस्तद्वयेऽपि पवित्रं प्रशंसाति—

‘उभयत्र स्थितैर्दर्भैः समाचामति यो द्विजः ।

सोमपानफलं तस्य भुक्त्वा सप्तफलं भवेत्’ ॥

अधस्तात् जान्वोरधः परिमाणे जले स्थित्वा शतकृत्वोऽप्याचमनं
निष्फलमित्यर्थः ।

१. A. and I. add न and read नोद्धृतोदकेन. २. D. omits अपि.
३. D. and H. read, ब्राह्मणो य उपस्पृशेत्. ४. H. substitutes अपि for तु.
E. omits the portion from मार्कण्डेयस्तु.....गोभिलो. H. also
has omitted this portion, but it appears as correction in its margin.
५. G. and H. omit स-. ६. A. and I. add तु. after गोभिल-. ७. All
others except A. omit अपि. ८. I. reads सपवित्रत्वं. ९. A. reads
हस्तद्वय-. १०. G. reads -चरति for -चादति. ११. G. reads द्वेत्.

इति । स्नानानन्तरभाविन्याचमने दक्षो विशेषमाह—

‘ स्नात्वा ऽऽचामेत्तदा विप्रः पादौ कृत्वा जले स्थले ।

उभयोरप्यसौ शुद्धस्तनः कार्यक्षमो भवेत् ॥

इति । हारतिः—

‘ आर्द्रवामा जले कुर्यात्तर्पणाचमनं जपम् ।

शुष्कवासा स्थले कुर्यात्तर्पणाचमनं जपम् ’ ॥

इति । स्थलीवृषभं विशेषो दर्शितः स्मृत्यन्तरे—

‘ अलाभे ताम्रपात्रस्य करकं च कमण्डलुम् ।

गृहीत्वा स्वयमाज्जामेत् नरो नाप्रयतो भवेत् ॥

करकालावुकाद्यैश्च ताम्रपर्णपुटेन च ।

स्वहस्ताचमनं कार्यं स्नेहलेपाश्च वर्जयत् ॥

करपात्रे च यत्तायं यत्तायं ताम्रभाजने ।

सौवर्णे राजते चैव नैवाशुद्धं तु तत् स्मृतम् ॥

इति । एवमुक्तलक्षणस्याचमनस्य प्रशंसामाह व्याघ्रपात्—

‘ एवं यो ब्राह्मणो नित्यमुपस्पर्शनमाचरेत् ।

ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं जगत् स परितर्पयेत् ॥

* कार्यक्षमः सध्यावन्दनादीन्व्यानि वा कार्गणिः कर्तुं योग्यः भवति॥

१. B. C. E. P. G. and H. omit कार्य- and read ततः क्षमो भवेदिति. in the margin of H. appears correction. २. D. G. and F. omit this latter half of this verse. ३. All others except A. and I. read अलाभे ताम्रपात्रं च for अलाभे ताम्रपात्रस्य. ४. All others except A. and I. read चर्मपुटेन for पर्णपुटेन. ५. All others except A. D. and I. read करपत्रे for करपात्रे. ६. B. C. and F. substitute च for यो while G. substitutes स for the same.

इति । वृद्धशङ्खो अपि—

‘ त्रिःप्राश्नीयाद्यदम्भस्तु प्रीतास्तेनास्यं देवताः ।
 ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च भवन्तीत्यनुशुश्रुमे ॥
 गङ्गां च यमुनां चैव प्रीयेते परिमार्जनात् ।
 पादाभ्यां प्रीयते विष्णुर्ब्रह्मा शिरसि कीर्तितः ॥
 नासत्य-दसौ प्रीयेते स्पृष्टे नासापुटद्वये ।
 स्पृष्टं लोचनयुग्मे तु प्रीयेते शशि-भास्करो ॥
 कर्णयुग्मे तथा स्पृष्टे प्रीयेते त्वनिला-ज्जलौ ।
 स्कन्धयोः स्पर्शनादेव प्रीयन्ते सर्वदेवताः ॥
 नाभिसंस्पर्शनाच्चागाः प्रीयन्ते चास्य नित्यशः ।
 संस्पृष्टे हृदये चास्य प्रीयन्त सर्वदेवताः ॥
 मूर्धसंस्पर्शनादस्य प्रीतस्तु पुरुषो भवेत् ।
 (शं. स्मृ. ९. ९-१३)

इति । आचमनाकरणे प्रत्यवायो दर्शितः पुराणसारे—

‘ यः क्रियाः कुरुते मोहादनाचम्यैव नास्तिकः* ।
 भवन्ति हि तथा तस्य क्रियाः सर्वा न संशयः’ ॥

इति ।

॥ इति आचमनप्रकरणम् ॥

* अत्र नास्तिकशब्देन आचमनस्यावश्यककर्तव्यत्वमनादृत्य कर्म कर्तुं प्रवृत्त इति ज्ञेयम् । ननु नास्ति कश्चित् परलोक इति वदन् इत्युक्तलक्षणो नास्तिकः । तस्य प्राप्तेरभावात् निषेधस्य वैयर्थ्यमेव स्यात् ।

१. This line and the following lines the author quotes from Vṛidhaśaṅkha. We have no such work as Vṛidhaśaṅkha. The work we have bears the name Śaṅkha wherein these eleven lines appear. It is difficult to say whether the work we have is the work of Vṛidhaśaṅkha or Śaṅkha. २. All except A. and D. read अनुशुश्रुमे. ३. D. reads स्पृशेत् for स्पृष्ट. ४. A. omits पुराणसारे. ५. D. substitutes च for एष.

अथ दन्तभावनविधिः तत्रात्रिः—

‘मुखं पर्युषिते नित्यं भवत्यप्रयतो नरः ।

तदर्द्रकाष्ठं शृङ्गं वा भक्षयेद्दन्तधावनम्’ ॥

(लं. अं. स्मृ. ४. ५-६)

इति । व्यासोऽप्ये—

‘प्रक्षाल्य हस्तौ पादौ च मुखं च सुसमाहितः ।

दक्षिणं ब्राह्ममुद्धृत्य कृत्वा जान्वन्तरा ततः ॥

त्तित्तं कषायं कदुर्कं दुर्गन्धं कण्टकान्वितम् ।

क्षीरिणो वृक्षगुल्मादीन् वर्जयेद्दन्तधावनम्’ ॥

इति । विष्णुः—

‘कण्टकिक्षीरवृक्षोत्थं द्वादशाङ्गुलसम्मितम् ।

कनिष्ठाङ्गुलिवत् स्थूलं पर्वाद्धकृतकूर्चकम् ॥

दन्तधावनमुद्दिष्टं जिह्वोल्लेखनिका तथा ।

सुसूक्ष्मं सूक्ष्मदन्तस्य समदन्तस्य मध्यमम् ॥

स्थूलं विषमदन्तस्य त्रिविधं दन्तधावनम् ।

द्वादशाङ्गुलकं विप्रे काष्ठमाहुर्मनीषिणः ॥

क्षत्र-विद्-गृह्-जातीनां नव-षट्-चतुरङ्गुलम्’ ।

इति । अङ्गिराः—

१. A. and I. read अ- for त-. २. D. reads जान्वन्तरात् for जान्वन्तरा
३. A. reads सगन्धं, and others सुगन्धं for दुर्गन्धं. ४. B. C. and F. read
-गुल्माद्वा for -गुल्मादीन्. ५. All others except A read भक्षयेत्, but this
reading is quite useless. ६. D. omits this word. ७. A. D. H. and I.
read -ङ्गुलिकं; while D. reads -ङ्गुलिकं विप्रे इन्तकाष्ठं मनीषिणः.

‘आध्र-पुत्राग-बिल्वानामपामार्ग-शिरीषयोः ।
 भक्षयेत् प्रातरुत्थाय वाग्यतो दन्तधावनम् ॥
 धटाश्वत्थार्क-खदिर-करवीरांश्च वर्जयेत् ।
 जायं च बिल्व-खदिरमूलं तु ककुभस्य च ॥
 अरिमेदं प्रियङ्गुं च कण्टकिन्यस्तथैव च ।
 प्रक्षाल्य भक्षयेत् पूर्वं प्रक्षाल्यैव च सन्न्यजेत् ॥
 उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा कृषायं तिक्तकं तथा ।
 शान्तं भूत्वा च यतवाग्भक्षयेदन्तधावनम्’ ॥

इति । कात्यायनो दन्तधावनस्य काष्ठाभिमन्त्रणमन्त्रं
 दर्शयति—

‘आयुर्वलं धृशो वर्चः प्रजाः पशु-वसूनि च ।
 ब्रह्म प्रजां च मेधां च त्वं नो धेहि वनस्पते’ ॥
 (का. स्मृ. १. १०. ४.)

इति । उज्यानाहोशनाः—

‘नाङ्गुलीभिः स्वकान् दन्तान्नैरः प्रक्षालयेत्सदा ।
 दक्षिणाभिमुखो नाद्यात् नीलं धव-कटम्बकम् ॥

१. All others except D. and I. add इति after दन्तधावनम्. This word is generally used at the end of a quotation. If the word was used by the author himself then the following verses would appear to have been quoted from some other work, the name whereof is not found mentioned. २. B. C. F. and G. read भक्षयेत् for वर्जयेत्; while H. adds इति after वर्जयेत्. ३. D. reads खदिरं for खदिर-. ४. All others except D. read मुक्त्वा for भूत्वा, but it is quite incorrect and does not give any sense. ५. The text of Kātyāyana reads पशून् for पशु-. ६. D. and G. read धेहि for धेहि. ७. All others, except A. omit some letters in this line. B., C. E. F. and I. read नाङ्गुलिभिर्दन्तान्नैः प्रक्षालयेत्, D. अङ्गुलिभिर्दन्तान्नैः प्रक्षालयेत्; while G. नाङ्गुलिभिर्दन्तान्नैः प्रक्षालयेत्. This is in prose but we do not find the text of Uśanaś in prose. ८. A. and I. read नद्यां, for नाद्यात्. ९. B. C. and F. read नीलं for नीलं.

तिन्दुकेद्भुङ्क्ते बन्धुक-मोचामरज-बल्वजम् ।
 कार्पासं दन्तकाष्ठं च विष्णोरपि हरेच्छ्रियम् ॥
 न भक्षयेत् पालाशं कार्पासं शोकमेव च ।
 एतानि भक्षयेद् यस्तु क्षीणपुण्यः स ज्ञयते ॥

इति । वर्ज्यनिश्चयादीनां ह विष्णुः—

‘प्रतिपदं दर्शपष्टीषु चतुर्दश्यष्टमीषु च ।
 नवम्यां भानुवारे च दन्तकाष्ठं विवर्जयेत् ॥’

इति । यमोऽपि—

‘चतुर्दश्यष्टमी दर्शः पूर्णिमा संक्रमो रवेः ।
 एषु स्त्री-तैल-मांसानि दन्तकाष्ठं च वर्जयेत् ॥
 श्राद्धे जन्मदिने चैव विवाहेऽजीर्णदोषतः ।
 व्रते चैवोपवासे च वर्जयेदन्तर्धानम् ॥’

इति । व्यासोऽपि—

‘श्राद्धे यज्ञे च नियमात्राद्यान् प्रेषितभर्तृका ।
 श्राद्धे कर्तुर्निषेधोऽयं न तु भोक्तुः कदाचन ॥
 अलाभे दन्तकाष्ठवनां निषिद्धायां तथा तिथौ ।
 अपां द्वौद्वौगण्डूषैर्विदध्यादन्तर्धानम् ॥’

इति । वृद्धयाज्ञवल्क्यः—

१. B. C. E. F. G. and H. read मोचामरजबल्वजं for मोचामरजबल्वजं; while D. reads मोचामरजबल्वजं. २. D. reads शोकमेव च for शोकमेव च. It seems more correct. ३. B. C. F. and H. substitute च for -षु. ४. All others except A. and I. read दर्श-. ५. The next three lines after this word and the word इति after these lines are omitted by G. ६. D. reads काष्ठानि. ७. A. reads न तत् for नाद्यात्. ८. A. and D. read श्राद्धकर्तुर्निषेधो; while G. reads श्राद्धकर्तुर्निषेधो for श्राद्धे कर्तुर्निषेधो. ९. A. omits दृष्ट- and reads simply याज्ञवल्क्यः, but we do not find this verse in yājñyavalkya-smṛiti.

‘हृष्टका-लोष्ट-पाषाणैरितराङ्गुलिभिस्तथा ।

मूक्त्वा चानामिका-ऽङ्गुष्ठौ वर्जयेद्वन्तधावनम्’ ॥

इति ।

॥ इति दन्तधावनप्रकरणम् ॥

‘अथ स्नान-जप-होमादेर्दर्भपाणिना कर्त्तव्यत्वादादौ
दर्भविधिरुच्यते । तत्र हारीतः—

‘आच्छिन्नाग्रान् सपत्रांश्च समूलान् कोमलान् शुभान् ।

पितृ-देव-जपार्थं तु समादध्यात् कुशान् द्विजः ॥

कुशहस्तेन यज्जपं दानं चैव कुशैः सह ।

कुशहस्तस्तु धो भुङ्क्ते तस्य संख्या न विद्यते’ ॥

इति-पुराणे ऽपि—

‘कुशपूतं भवेत् स्नानं कुशेनोपस्पृशेत् द्विजः ।

कुशेन चोद्धृतं तोयं सोमपात्रेण सम्मितम्’ ॥

इति । गोभिले ऽपि—

‘कुशमूलैः स्थितो ब्रह्मा कुशमध्ये जनार्दनः ।

कुशाग्रे शङ्करं विद्यात् त्रयो देवा व्यवस्थिताः’ ॥

इति । कौशिकः—

‘शुचौ देशे शुचिर्भूत्वा स्थित्वा पूर्वोत्तरामुखः ॥

ॐकारेणैव मन्त्रेण कुशाः स्पृश्या द्विजोत्तमैः’ ॥

१. B. C. and F. read न कुर्यात् for वर्जयेत्. २. A. omits -जप-
३. A. reads पवित्रांश्च for सपत्रांश्च. ४. A. and I. read पितृ-देवविपूजार्थं for
पितृ-देव-जपार्थं तु; while D. substitutes च in the place of तु. ५. A. and I
read पानं for दानं. ६. A. and I. read पुरीणान्तरे ऽपि, but it seems
incorrect. ७. D. substitutes खानं in the place of स्नानं. ८. All others
except A. D. and I. read चाहृतं for चोद्धृतं. ९. D. reads स्थितः. १०. D.
reads ‘कुशान् स्पृश्या for कुशाः स्पृश्या.

इति । उत्पादनमुन्वस्तु—

‘विरिञ्चिना सहोत्पन्न परमेष्ठिनिसर्गजं ।

नुद पापानि सर्वाणि दर्भ स्वस्तिकरो मम’ ॥

इति । वर्णभेदेन विनियोगभेदमाह कृत्यायनः—

‘हरिता यज्ञिया दर्भाः पीतकाः पाकयज्ञियाः ।

समूलाः पितृदैवत्याः कल्माषा वैश्वदेविकाः’ ॥

(का. स्म. १. २. ३)

इति । कुशाभावे शङ्कः—

‘कुशाभावे द्विजश्रेष्ठः काशैः कुर्वीत यत्नतः’ ॥

तर्पणादीनि कर्माणि काशाः कुशसम्पाः स्मृताः’ ॥

इति । यमोऽपि—

‘कुशाः काशा यवा दूर्वास्तथा व्राह्मण एव च ।

बल्वजाः पुण्डरीकाश्च समधा बर्हि उच्यन्ते’ ॥

इति । वज्यानाह हारीतः—

‘चितौ* दर्भाः पथि दर्भा ये दर्भा यज्ञभूमिषु ।

स्तरणासन-पिण्डेषु षट् कुशान् परिवर्जयेत् ॥

ब्रह्मयज्ञेषु ये दर्भा ये दर्भाः पितृर्तर्पणे ।

हता मूत्र-पुरीषाभ्यां तेषां त्यागे विधीयते ॥

* अस्मिन्श्लोके पूर्वार्द्धे ‘भवाः’ इत्यध्याहृत्यान्वयः कार्यः । उत्तरार्धे भवानिति योजनीयम् ।

१. A. reads निसर्गतः, and I. निसर्गजः. २. E, G, and II. read पाकयज्ञिकाः for पाकयज्ञियाः. ३. D. omits इति. ४. D. reads द्विजः. ५. All others except A. and I. read -श्रेष्ठ. ६. All others except A. and I. read तत्त्वतः for यत्नतः. ७. D. reads बिल्वकाः for बल्वजाः. ८. A. reads गर्त्तेषु. ९. A. reads ब्रह्मयज्ञे च. १०. D. reads तर्पिताः.

अपूता गौर्हिता दर्भा ये संच्छिन्ना नखैस्तथा ।

कथितानग्निदग्धांश्च कुशान् यत्नेन वर्जयेत् ॥

इति । कुशोत्पादने कालनियममाह हारीतः—

‘मासे नभस्यमावास्या तस्यां दर्भोच्चयो मतः ।

अयातयामासो दर्भा नियोज्याः स्युः पुनः पुनः’ ॥

इति । शङ्खो अपि—

‘दर्भाः कृष्णाजिनं मन्त्रा ब्राह्मणाश्च विशेषतः ।

अयातयामान्येतानि नियोज्यानि पुनः पुनः’ ॥

इति । पवित्रधारणे फलमाह मार्कण्डेयः—

‘कुशपाणिः’ सदा तिष्ठेत् ब्राह्मणो दम्भवर्जितः ।

स नित्यं हन्ति पापानि तूलराशिमिवानलः’ ॥

इति । ऋतातपः—

‘जपे होमे च दाने च स्वाध्याये पितृतर्पणे ।

अशून्यं तु करं कुर्यात् सुवर्णरजतैः कुशैः’ ॥

इति । पवित्रप्रकारमाह कात्यायनः—

१. H. in its margin reads गर्भिनाः. २. All others except A. and I. read नखैः स्मृताः. ३. B, C. and F. read कालनियमेनायातयामतामाह for कालनियममाह. ४. A. reads दर्भोच्चयो, and I. दर्भचयो for दर्भोच्चयो. ५. A. and I. omit अपि; while E. omits the words शङ्खोऽपि and the verse following it. H. also omits, but it appears in its marginal correction excepting the word अपि after शङ्खः, and in D. it appears after the next quotation of Markandeya. ६. G. reads दर्भवर्जितः for दम्भवर्जितः, but it does not give any good sense. ७. A. and D. read अशून्यं for अशून्यं.

‘अनन्तर्गभिणं साग्रं कौशं द्विदलमेव च ।
प्रादेशमात्रं विज्ञेयं पवित्रं यत्र कुत्रचित्’ ॥

(का. स्मृ. १. २. १०)

इति । मीकर्ण्डेयो अपि—

‘चतुर्भिर्दर्भपिञ्जलैर्ब्राह्मणस्य पावित्रकम् ।
एकैकन्यूनमुद्दिष्टं वर्णे वर्णे यथाक्रमम् ॥

त्रिभिर्दर्भैः शान्तिकर्म पञ्चभिः पौष्टिकं तन्ना ।
चतुर्भिश्चाभिचारांश्च* कुर्वन् कुर्यात् पवित्रकम् ॥

इति । अत्रिः—

‘ब्रह्मयज्ञे जपे चैव ब्रह्मग्रन्थिर्विधीयते ।
भोजने वत्तुलः प्रोक्त एवं धर्मो न हीयते’ ॥

इति ।

॥ इति दर्भविधिप्रकरणम् ॥

* अभिचारः शत्रुहननाद्यर्थमनुष्ठीयमानं कर्म । तच्च श्येनभगादि वैदिकं भैरवमन्त्रादितान्त्रिकमिति द्विविधम् ।

१ A. and I. read कुशं for कौशं. २. All others except A. B. C. F. and I. omit इति. ३. I. omits अपि. ४. In the margin of H. after this verse appears the following portion:—

स्मृत्यर्थसारे—‘सर्वेषां वा भवेद्वाभ्यां पवित्रं प्रथितं नवम्’ ।

५. A. reads अभिचारार्थं for अभिचारांश्च. ६. A. and I. read वत्तुलः प्रोक्तः. ७. A. reads विधीयते for न हीयते. ८. A. and I. omit विधि. and read दर्भप्रकरणम्.

तदेवं "सन्ध्या स्नानम्" इत्यस्मिन् वचने स्नानशब्दोप-
लक्षितानि ब्राह्ममुद्धृतीत्यानादीनि कुशविध्यन्तानि कर्माणि
निरूपिताणि । अथेदानीं मूलवचनोक्त स्नानं प्रपञ्च्यते । तत्र
कर्मपुष्टाणम्—

‘प्रक्षाल्य दन्तकाष्ठं वै भक्षयित्वा यथाविधि ।

आशम्य प्रयतो नित्यं प्रातःस्नानं समाचरेत् ॥

(कू. पु. १. २. १८. १८)

इति । व्यासः—

‘उपश्रुत्वा तु शृम्भति कृत्वा चावश्यकं बुधः ॥

स्नायान्नदीषु शुद्धासु शौचं कृत्वा यथाविधि’ ।

(व्या. स्मृ. १. २-३)

इति । दक्षोऽपि—

‘अस्नात्वा नाचरेत् कर्म जप-होमादि किञ्चन ।

लाला-स्वेदसमाकीर्णः गयनादुत्थितः पुमान् ॥ (९)

अत्यन्तमलिनः कार्यो नर्वच्छिद्रसमन्वितः ।

‘सवत्येव दिवा-रात्रौ प्रातःस्नानं विशेषधनम् ॥ (७)

प्रातःस्नानं प्रशंसन्ति दृष्टादृष्टफलं हि तत् ।

‘सर्वमर्हति शुद्धात्मा प्रातःस्नायी जपादिकम्’ ॥ (१२)

(द. स्मृ. २. ७-१२)

इति । व्यासः—

१. A. reads प्रक्षम्यते. २. This is omitted by A. ३. A. substitutes यः for अ. ४. A. and D. read दिवा-रात्रं प्रातःस्नानेन शुध्यति. ५. G. omits इति.

‘ ऋषीणामृषिता भित्त्वं प्रातःस्नानान्न संशयः ।
 अलक्ष्मीः कालकर्णा च दुःस्वप्नं दुर्विचिन्तितम् ॥
 प्रातःस्नानेन पापानि पुन्यन्ते नात्र संशयः ।
 (व्या. स्मृ. १. ४-६)

इति । दक्षो अपि—

‘ अज्ञानाद्यदि वा मोहाद्वाचौ दुश्चरितं कृत्स्नम् ।
 प्रातःस्नानेन तत् सर्वं शोधयन्ति द्विजातयः ॥

इति । स्नानप्रकारः धनुर्विंशतिमते अभिहितः—

‘ स्नानमब्देवतैर्मन्त्रैर्वारुणेश्च मृदा सह ।
 कुर्याद्व्याहृतिभिर्वाप्य ‘ यत् किञ्चेद’मृचा ऽपि वा ॥

इति । कात्यायनो अपि—

‘ यथाऽहनि तथा प्रातः नित्यं स्नायादतन्निश्चितैः ।
 दन्तान् प्रक्षाल्य नद्यादौ गृहे चेत् नदमन्त्रवत् ॥

(का. स्मृ. १. १०. १.)

इति । अमन्त्रवदिति मन्त्रसंक्षेपेऽभिप्रेतः । यतः स एवाह—

* अब्देवत् मन्त्राः—‘ अपोहिष्ठा मयोभुवः०, यो वः शिवत्सो रसः०
 तस्मा अरंगमामवः०, एते वयः । ते च—ऋक्संहितायां (१०. १. ९) शान्तस-
 नेयिसंहितायां (११. १) सामसंहितायां उत्तरार्चिके (९. १०) द्रष्टव्याः ।
 वारुणमन्त्राश्च—‘ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानः ’ (ऋ. सं. १. ६. १.) इति
 पञ्च ‘ तन्नोऽग्रे वरुणस्य ’ (ऋ. सं. १. १. ४-५.) इति द्वौ ‘ इमं मे वरुण
 श्रुधि० ’ (ऋ. सं. १. ६. १) इत्येकः एतेऽष्टौ ऋक्संहितायां प्रसिद्धाः ।
 ‘ यत्किञ्चेदं ’ (ऋ. सं. ७. ५. १९) एषो अपि प्रसिद्ध एव ।

१. I. reads दुर्विचिन्तितम्. २. A. and D. substitute च for वा. ३. I.
 reads अनानुर for अतन्निश्चितः. ४. D. reads अभिहितः for अभिप्रेतः.

अल्पत्वाद्दोमकालस्य बहुधात् स्नानकर्मणः ।

प्रातः संक्षेपतः स्नानं होमलोपो विगर्हितः' ॥

(का. स्मृ. २. १२. ६)

इति । कालनियममाह जाबालिः—

‘सततं प्रातरुत्थाय दन्तधावनपूर्वकम् ।

आचरेदुदसि स्नानं तर्पयेद्देव-मानुषान्’ ॥

इति । चतुर्विंशतिमते अपि—

‘उषस्युषसि यत् स्नानं सन्ध्यायामुदिते अपि वा ।

प्राजापत्येन तत्तुल्यं सर्वपापप्रणाशनम्’ ॥

इति । उदिते उन्मुदयाभिमुखे इत्यर्थः । उदयस्याप्युपरि स्नानं धत्ते सन्ध्याऽप्युत्कृष्येत । स्नानपूर्वकत्वात् सन्ध्यायाः । सन्ध्योत्कर्षश्च योगियाज्ञवल्क्येन निषिद्धः—

‘सन्धौ सन्ध्यामुपासीत नास्तगे नोदिते रवौ’ ।

इति । यथोक्तकाले स्नानं कुर्वन्नघमर्षणं* कुर्यात् । तथा—
ह शौनकः—

‘स्नात्वा ऽऽवान्तो वारिमध्ये त्रिः पठेदघमर्षणम् ।

इति । ब्रह्माण्डपुराणे स्नानाङ्गनर्षणं विहितम्—

*अघमर्षणं तु—‘ऋतं च सत्यं’ (ऋ. सं. १०. १९०. १२; तै. आ. १०. १.) इति तृचेन सूक्तेन त्रिरावृत्तेन कर्तव्यम् । कात्यायनाजो तु ‘दुपदा दिवे’ इति मन्त्रेणाघमर्षणं विहितम् ।

१. Stautachandrikā reads ‘प्रातर्न तनुयात्स्नानं वैव- २. D. omits अपि. ३. G. reads चेत् स्नानं for स्नानं चेत्. ४. A. omits this word and reads simply याज्ञवल्क्येन; while all others except I. read योग- for योगि-. ५. D. reads चो षगे; while all others except A. and I. read चोदिते for नोदिते. ६. A. and I. read यथोक्तं स्नानं धुर्वन् for यथोक्तकाले स्नानं कुर्वन्. ७. A. and I. read तयाह for तयाह. ८. D. reads पिबेत् for पठेत्.

‘नित्यं नैमित्तिकं* काम्यं त्रिविधं ज्ञानमुच्यते ।
तर्पणं तु भवेत्तस्य अङ्गत्वेन प्रेकीर्तितम् ॥

इति । अथो अपि—

‘द्वौ हस्तौ युग्मतः कृत्वा पूरयेदुदकाञ्जलिम् १
गोगृङ्गमात्रमुद्धृत्य जलमध्ये जलं क्षिपेत् ॥
इति । काष्ठाजिनिः—

‘नाभिम्भक्त्रे जले स्थित्वा चिन्तयन्नूर्ध्वमानसः’ ।
इति । तर्पयेदिति शेषः । नृसिंहपुराणे अपि—

‘स्वेन तैर्येन† देवादीनङ्गिः सन्तर्पयेत्ततः ।
देवान् देवगणांश्चापि मुनीन्मुनिगणानपि ॥
पितॄन् पितृगणांश्चापि नित्यं सन्तर्पयेत्ततः’ ।

(नृ. पु. ५८. ४८-८९)

इति । चतुर्विंशतिमते—

* नित्यं प्रत्यहमवश्यं कर्तव्यं सन्ध्यावन्दनादि नित्यकर्माङ्गत्वेन विहितम् । काम्यं घर्मादिपरिहासार्थं मलापकर्षणार्थं वा कृतम् । नैमित्तिकं ग्रहण-सङ्क्रान्त्याकिनिमित्तेषु कृतम् ।

†अत्र तृतीयार्धे वर्जयित्वा ‘पितॄन् पितृगणान् देवान्’ इत्यादि केचन पठन्ति तत्प्रामादिकमिव प्रतिभार्ति । पूर्वं सामान्यतः देव-पितृ-ऋषी-स्तर्पयेदित्युक्त्वा पुनः विशेषेण तर्पणमभिहितमिति ज्ञेयम् ।

१. A. reads व्यवस्थितम्. २. D. reads पूजयेत् for पूरयेत्, but it seems incorrect. ३. D. omits this. ४. D. reads काष्ठाजिनिः. ५. D. reads चिन्तयेत् for चिन्तयन्. ६. A. B. C. F. and I. omit अपि. ७. I. reads पितॄन् पितृगणान् देवानङ्गिः, while all others except A. and the text of Nrisinha Purāṇa read, पितॄन् ऋषिगणान् देवानङ्गिः. ८. B. C. and F. read सर्वान् for देवान्. ९. This line is omitted by A. and I.

‘स्नाभादनन्तरं तावत् तर्पयेत् *फित्देवताः ।
उत्तीर्य पीडयेद्वस्त्रं सन्ध्याकर्म ततः परम्’ ॥

इति । भरद्वाजो अपि—

‘वस्त्रोदकमपेक्षन्ते ये मृता दासकर्मिणः ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन जलं भूमौ निपातयेत्’ ॥

इति । वस्त्रनिष्पीडनमन्त्रस्तु—

‘ये के चास्मत्कुले जाता अपुत्रा गोत्रिणो मृताः ।
ते गृह्णन्तु मया दत्तं वस्त्रनिष्पीडनोदकम्’ ॥

इति ।

॥ इति स्नानप्रकरणम् ॥

स्नानानन्तरं वासः परिध्यात् । तथा च भक्त्यपुराणे—

‘एवं स्नात्वा ततः पश्चादाचम्य च विधानतः ।
उत्थाय वाससी शुक्लं शुद्धं तु परिधाय च’ ॥

(म. पु. ११२. १३)

इति । कर्म कुर्यादिति शेषः । योगियाज्ञवल्क्यः—

* इदं च स्नानाङ्गतर्पणमिति ज्ञेयम् । तच्च ‘भूर्देवांस्तर्पयामि’ इत्या-
दिरूपं व्याहृतिभिरेव कर्तव्यमित्युक्तमन्यत्र ।

१. B. C. and F. read दासकर्मिणः, and D. दासकर्मणः for दासकर्मिणः.
२. A. reads वामनपुराणे; while all others except I. read भक्त्यपुराणम् for
भक्त्यपुराणे. ३. A. and D. read यथाविधि for विधानतः. ४. D. reads
मुक्ते for शुद्धे. ५. All others except A. and I. substitute वा for च.
६. All others except A. and I. substitute योग- for योगि-

‘स्नात्वैवं वस्मसीधौते’ अच्छिन्ने परिधायकं च ।
प्रक्षाल्योरुं मृदाऽद्भिश्च हस्तौ प्रक्षालयेत्ततः ॥

इति । अत्र विशेषमाह व्यासः—

‘नोत्तरीयमधः कुर्यान्नोपर्यधस्यैमम्बरम् ।
नान्तर्वासो विना जातु निवसेद्भूतनं बुधः’ ॥

इति । अत्र मार्कण्डेयपुराणे विशेषो अभिहितः—

‘अवमृज्यान्नं च स्नातो गात्राण्यम्बर-पाणिभिः* ।
न च निर्धुनुयात् केशान् वासश्चैव न निर्धुनेत्’ ॥
(मा. पु. ३४. २६ः) ।

इति । अत्र कारणमाह गोभिलः—

‘पिबन्ति गिरसो देवाः पिबन्ति पिसरो मुखात् ।
मध्यतः सर्वगन्धर्वा अधस्तात् सर्वजन्तवः ॥
तस्मात् स्नातो न प्रमृज्यात् स्नानशाट्या न पाणिना’ ।
इति । व्यासो अपि—

‘तिलः कोटयोऽर्द्धकोटी च यावन्यङ्गरुहाणि वै ।
वैसान्तं सर्वतीर्थानि तस्मान्न परिमार्जयेत्’ ॥

इति । जावगलिः—

* इदं नैमित्तिकस्नाने क्रियाङ्गस्नाने वा भवितुमर्हति । न तु मलाप-
र्षणादौ । अवमार्जनं विना मलापकर्षणस्यैवासम्भवात् ।

१. A. reads शुक्ले. २. A. and I. read मृदा चाद्भिः. ३. A. substitutes
इति in the place of ततः. ४. All others except A. D. and I. read अधस्थ-
for अधस्थ-. ५. D. reads विवसेत्. ६. A. reads नरः for न च. ७. I.
reads पीडयेत् for निर्धुनेत्. ८. D. reads तत्र for अत्र. ९. A. reads
देवलः for गोभिलः. १०. A. and I. read नावमृज्यात्; while D. reads न
मृज्यात् for न प्रमृज्यात्. ११. D. reads कोटिश्च for कोटी च. १२. A. and I.
read स्रवन्ति for वसन्ति, but it does not give any good sense here.

‘स्नानं कृत्वाऽऽर्द्धवासास्तु विष्मूत्रं कुरुते यदि ।

प्राणायामत्रयं कृत्वा पुनः स्नानेन शुद्ध्यति’ ॥

इति । कृत्वाविषये विशेषमाह भृगुः—

‘ब्राह्मणस्य सितं वस्त्रं नृपते रक्तमुल्बणम्* ।

पीतं वैश्यस्य शूद्रस्य नीलं मलवदिष्यते’ ॥

इति । प्रजापतिरपि—

‘क्षौमं वासः प्रशंसन्ति तर्पणे सदेशं तथा ।

कोषायं धातुरक्तं वा नोल्बणं तत्र कर्हिचित्’ ॥

इति । देवलो अपि—

‘स्वयं धौतेन कर्त्तव्या क्रिया धर्म्या विपश्चिता ।

न तु नेजकधौतेन† नाहतेन न कुत्रचित्’ ॥

इति । नाहतेनेति समस्तं पदम् । अहतलक्षणमाह
पुलस्त्यः—

‘ईषद्धौतं नवं श्वेतं सदेशं यन्न धौरितम् ।

अहतं तद्विजानीयात् सर्वकर्मसु पावनम्’ ॥

इति । बोधायनो अपि—

* उल्बणं विशेषेण रक्तमित्यर्थः । रक्तस्यैव विशेषगमितम् ।

† नेजको वस्त्रनिर्णयनकर्ता रजक इत्यर्थः । केरलादयस्तु रजक-
धौतमेव वस्त्रं शुद्धं मन्यन्ते ।

१. A. reads रक्तम्बरं. It seems more correct. २. D. reads विशदं, but this is quite incorrect. ३. B. C. and F. read कोषायं. ४. A. reads धातुवस्त्रं च. ५. I. reads सोल्बणं for नोल्बणं. ६. This is omitted by A. ७. I. reads सेवक- for नेजक-, and A. B. C. E. F. G. and H. read रजक- for the same. This is grammatically correct but incorrect as regards prosody. ८. A. G. and H. substitute च for न. ९. I. reads आहत- for अहत-. १०. I. reads धूरुक्षं for सवक्षं. ११. E. reads धावितं for धाशिम. १२. Except A. D. G. and I. all others read बोधावनः for बोधायनोऽपि.

‘कर्तव्यमुत्तरं वासिः पञ्चस्वेतेषु कर्मसु’ ।

स्वाध्यायोत्सर्ग-दानेषु भुक्त्याचमनयोस्तथा ॥

इति । एतत् सर्वकर्मोपलक्षणार्थम् । अमुत्तरीयस्य कर्म-
मात्रनिषेधाद् । तथा च भृगुणोक्तम्—

‘विकच्छोऽनुत्तरीयश्च नम्रश्चाऽवस्त्र एव च ।

श्रौतं स्मार्त्तं तथा कर्म न नम्रश्चिन्तयेदपि ॥

नम्रो मल्लिभवस्त्रः स्यान्नम्रश्चाद्रपटः स्मृतः ।

नम्रस्तु दग्धवस्त्रः स्यान्नम्रः स्यूतपटस्तथा’ ॥

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘होम-देवार्चनाद्यासु क्रियासु पटने तथा ।

नैकवस्त्रः प्रवर्त्तेत द्विजो नाऽऽचमने जपे ॥

(वि. पु. ३. १२. २०)

इति । गोभिलो अपि—

‘एकवस्त्रो न भुञ्जीत न कुर्याद्देवताञ्चनम्’ ।

इति । अत्रानुकल्पमाह योगियाज्ञवल्क्यः—

‘अलम्ने यौतवस्त्रस्य शाण-क्षौमाविकानि च ।

कुतुपं योगपटं च विवासास्तु न वै भवेत्’ ॥

१. I. only reads -होम- for -उत्सर्ग-. २. A. and I. read भुक्त्वाचमनयोः; while D. and G. read भुक्त्वाचमनयोः, but the latter seems incorrect.
३. D. reads -लक्षणार्थे. ४. D. has वा for च. ५. A. reads -चिन्तयन्निति.
६. The text of Vishnu Purāṇa reads द्विजवाचनके for द्विजो नाऽऽचमने. The commentator Śrīdhara uses this word in the sense of Puṇyāhavāchana.
७. All others except A. and I. omit this word. ८. All others except A. and I. read योग-. ९. D. reads -वस्त्राणां. १०. B. C. E. G. and H. read विवास- for विवासा-.

इति । कुतपं* योगपट्टं च धारयेदिति शेषः ।

॥ इति वस्त्रधारणप्रकरणम् ॥

अथ ऊर्ध्वपुण्ड्रविधिः । स च ब्रह्माण्डपुराणे दर्शितः—

‘पर्वताग्रे नदीतीरे मर्म क्षेत्रे विशेषतः ।

सिन्धुतीरे च वल्मीके तुलसीमूलमाश्रिते ॥

मृद^१ एतास्तु सम्पाद्याः वर्जयेच्चन्यमृत्तिकाम् ।

‘इयामं शान्तिकरं प्रोक्तं रक्तं वर्यकरं भवेत् ॥

श्रीकरं पीतमित्याहुर्वैष्णवं श्वेतमुच्यते ।

अङ्गुष्ठः पुष्टिदूः प्रोक्तो मध्यमाऽऽयुष्करी भवेत् ॥

अनामिकाऽन्नदा नित्यं मुक्तिदा च प्रदेशिनी ।

एतैरङ्गुलिर्भदैस्तु कारयेन्न नखं स्पृशेत् ॥

वर्त्तिदीपाकृतिं वार्षपि त्रेणुपत्राकृतिं तथा ।

पद्मस्य मुकुलाकारं तथैव कुमुदस्य च ॥

* कुतपः छागस्य ऊर्णया घटितः कम्बलविशेषः । तथा च मेदिनी—
‘कुतपोऽस्त्रियां दौहित्रे वाद्ये छागलकम्बले’ । (२१. १९) इति । स च
‘नेपालकम्बल’ इति प्रसिद्धः । योगपट्टस्तु प्रसिद्ध एव ।

१. All manuscripts read कुतप instead of कुतपं, which is the proper word here. कुतप is a different word meaning a leather vessel in which oil or ghee is kept. It has not the sense of कुतप meaning a blanket. २. A. reads त्रिपुण्ड्रविधिः. ३. All others except A. and I. read ब्रह्मपुराणे. We cannot positively say whether this quotation is from Brāhmaṇḍa Purāṇa or from Bruhma Purāṇa. ४. D. reads समक्षेत्रे; while I. reads धर्मक्षेत्रे. ५. I. reads तुलसीमूलमृत्तिकाम्, but the next line does not keep the necessity of this reading. ६. A. and I. read सम्पाद्याः for सम्पाद्या; while D. reads सू for तु. ७. Except A. H. and I. all others read मृत्तिकाः. ८. A. and I. read नखैः for नखः. ९. D. reads पात्राकृति.

मत्स्य-कूर्मकृतिं वापि शङ्खाकारमतः परम् ।

दशाङ्गुलप्रमाणं तु उत्तमोत्तममुच्यते ॥

नवाङ्गुलं मध्यमं स्यादष्टाङ्गुलमतः परम् ।

सप्त-षट्पञ्चभिः पुण्ड्रं मध्यमं त्रिविधं स्मृतम् ॥

चतुस्त्रिंशद्व्यङ्गुलैः पुण्ड्रं कनिष्ठं त्रिविधं भवेत् ।

ललाटे केशवं विद्यान्नारायणमथोदरे ।

माधवं हृदि विन्यस्य गोविन्दं स्कन्धमूलके

उदरे दक्षिणे पार्श्वे विष्णुरित्याभिधीयते ॥

नत्पार्श्वे बाहुमध्ये तु मधुसूदनमुत्स्मरेत् ।

त्रिविक्रमं कण्ठदेशे वामकुक्षौ तु वामनम् ॥

श्रीधरं बाहुके वामे हृषीकेशं तु कर्णके ।

पृष्ठे च पद्मनाभं तु ककुद्दामोदरं स्मरेत् ॥

द्वादशैतानि नामानि बासुदेवेति मूर्द्धनि ।

पूजाकुले च होमे च सायं प्रातः समाहितः ॥

नामान्युच्चार्य विधिना धारयेद्दूर्ध्वपुण्ड्रकम् ।

इति सत्यव्रतो ऽपि—

१. All others except A. and I. read कण्ठकूपके for स्कन्धमूलके.
 २. Except A. all others read मधुसूदनमनुस्मरेत्; while I. omits तु.
 ३. Except A. and I. all others read वामे कुक्षौ for वामकुक्षौ. ४. I. reads this line first, instead of the former line. ५. B. C. D. E. F. and H. read सायंकाले, and G. सायंकालः for सायं प्रातः.

‘ऊर्ध्वपुण्ड्रो मृदा शुभ्रो ललाटे यस्य दृश्यते ।

स चाण्डालोऽपि शुद्धात्मा पूज्य एव न संशयः’ ॥

इति ।

॥ इति ऊर्ध्वपुण्ड्रप्रकरणम् ॥

अथ प्रातःस्नानप्रसङ्गेन स्नानान्तराण्युच्यन्ते । तत्र शङ्खः—

‘स्नानं तु द्विविधं प्रोक्तं गौणमुख्यप्रभेदतः ।

तयोस्तु वारुणं मुख्यं तत्पुनः षड्विधं भवेत्’ ॥

इति । तत्र मुख्यस्नानस्य षट्प्रकारता आग्नेयपुराणे दर्शिता—

‘नित्यं नैमित्तिकं काम्यं क्रियाङ्गं मलकर्षणम् ।

क्रियास्नानं तथा षष्ठं षोढा स्नानं प्रकीर्तितम्’ ॥

(अ. पु. १५५. ३-४)

इति । एतेषां लक्षणमाह शङ्खः—

‘अस्नातश्च पुमात्रार्हो जपाम्निहवनादिषु ।

प्रातःस्नानं तदर्थं तु नित्यस्नानं प्रकीर्तितम् ॥

चण्डाल-शव-यूपांश्च*, स्पृष्ट्वा स्नानां रजस्वलाम् ।

स्नानार्हस्तु यदा स्नाति स्नानं नैमित्तिकं हि तत् ॥

*युष्मत्स्पर्शनिषेधस्तु कर्मसमाप्त्यनन्तरं ऋत्विजेतरेषामिति बोध्यम् । गोर्भिलेन त्वत्र होमादिकमप्युक्तम् (गो. गृ. सू. ३. ३. ३४) ।

१. I. has the following verse before this:—

‘मन्त्राक्तो धारयेन्नित्यं ऊर्ध्वपुण्ड्रं विना तु तत् ।

यत्कर्म कारयेन्नित्यं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्’ ॥

We do not see any necessity of it in this place. २. I. reads -पुण्ड्रं मृदा शुभ्रं. ३. A. D. and G. read चाण्डालोऽपि विशुद्धात्मा. ४. D. and G. read -विधिः for -प्रकरणम्. ५. अथ is omitted by all others except A. ६. D. omits इति. ७. This line and the verse following it is omitted by G. C. A. and I. read यथाभोति for यथा स्नाति.

पुण्यस्नानादिकं* यत्तु देवशविधिचोदितम् ।
 तद्धिं काम्यं समुद्दिष्टं नाकामेस्तत् प्रयोजयेत् ॥
 जमुकामः पवित्राणि अर्चिष्यन् देवताः पितृन् ।
 स्नानं समाचरेद्यस्तु क्रियाऽङ्गं तत्प्रकीर्तितम् ॥
 मलापकर्षणं नाम स्नानमभ्यङ्गपूर्वकम्† ।
 मलापकर्षणार्थाय प्रवृत्तिस्तस्य नान्यथा ॥
 सरःसु देवखानेषु तीर्थेषु च नदीषु च ।

क्रियास्नानं समुद्दिष्टं स्नानं तत्र मता क्रिया ॥

यद्यपि मध्याह्नस्नानस्य नेदानीमवसरस्तथापि प्रातः-
 स्नानवत्तस्य नित्यत्वात् प्रसङ्गेनाभिधीयते । तस्य नित्यत्वं
 च व्याघ्रपादेनोक्तम्—

‘प्रातःस्नायी भवेन्नित्यं मध्यस्नायी अवोदति’ ।

इति । कूर्मपुराणे—

‘ततो मध्याह्नसमये स्नानार्थं मृदमाहरेत् ।

पुष्पाक्षतान् कुश-तिलान् गोमयं शुद्धमेव च ॥

* पुण्यनक्षत्रे कर्तव्यं स्नानं ज्योतिःशास्त्रे प्रसिद्धम् । तत्तु तत्रैव
 द्रष्टव्यम् ।

† अभ्यङ्गः तैलमर्दनम् । आयुर्वेदे तु—‘गृध्रि दत्तं यदा तैलं भवेत्
 सर्वाङ्गसङ्गतम् । स्रोतोभिस्तर्पयेत् बाहू अभ्यङ्गः स उदाहृतः’ इति
 अभ्यङ्गलक्षणमुक्तम् । तथापि उक्तलक्षणो अभ्यङ्गः दाक्षिणात्यानामेव ।

१. I. reads पुण्य- for पुण्य-, but our reading is more correct. २. A. reads -नोदितम् for -चोदितम्. ३. A. reads जमुकामः for नाकामः. ४. D. reads वाऽर्चिष्यन्. ५. H. reads यत्तु for यस्तु. ६. A. and I. read कीर्तितम् for नात्यथा. ७. The text of the Kūrmapurāṇa reads गोशकून for गोमयं.

नदीषु देवखातेषु तडागेषु सरःसु च ।
 स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्त्त-प्रस्रवणेषु च ॥
 परीक्षीयन्निर्पानेषु न स्नायाद्वै कदाचन ।
 पञ्च पिण्डान् संमुञ्चत्य स्नायाद्वा सम्भवे पुनः ॥

(कू. पु. १. २. १८. ५८-६०)

इति । तत्राधिकार्यनधिकारिणौ व्यासो विभजते—
 'स्नानं मध्यन्दिने कुर्यात् सुजीर्णेऽत्र निरामयः ।
 न भुक्त्वा लङ्घ्यते रोगी नाज्ञाते ऽम्भसि नाकुलः' ॥

इति । आश्रमभेदेन स्नानव्यवस्थामाह दक्षः—

'प्रातर्मध्याह्नयोः स्नानं वानप्रस्थ-गृहस्थयोः ।
 यतस्त्रिपवणं प्रोक्तं सकृत्तु ब्रह्मचारिणः' ॥

इति । अन्वय-व्यतिरेकाभ्यां स्नानस्य समन्वयतामाह
 व्यासः—

'मन्त्रपूतं जले स्नानं प्राहुः स्नानफलप्रदम् ।
 न वृथा वारिमग्नानां यादसामिव तत्फलम्' ॥

इति । योगियाज्ञवल्क्यः—

१. D. and G. read निखातेषु for निपानेषु. २. A. omits व्यासो, and D. I. read अधिकार्यनधिकारिणौ. ३. A. and G. read योगी, and D. योगी for रोगी. ४. D. reads दत्तः for दक्षः; while G. omits the portion from दक्षः to समन्वयतामाह, both the words inclusive. ५. A. substitutes स्नानं in the place of प्रोक्तं, but it is of no use here. ६. D. reads the first line of this verse as मन्त्रपूतैर्जलैर्यत्तत्प्रातःस्नानं फलप्रदम्, B. C. F. read the second line as न वृथा वारिणा स्नानं यादसामिव तत्फलम्, and G. न वृथाचारिणः स्नानं यादसामिव तत्फलम्. ७. All omit this except A.

‘मत्स्य-केच्छप-मण्डूकास्तोये मग्ना दिवा^१निशंम् ।
वसन्ति चैव ते स्नानान्नामुवन्ति फलं* क्वचित् ॥

इति । समन्त्रत्वं द्विजातिविषयम् । यदाह विष्णुः—

‘ब्रह्म-क्षत्र-विशो चैव मन्त्रवत् स्नानमिष्यते ।
तूष्णीमेव हि गृध्रस्य स्त्रीणां च कुरुनन्दन’ ॥

इति । ‘स्नानार्थं मृदमाहरेत्’— इति यदुक्तं ‘तत्र
विशेषमाह शान्तेपः—

‘शुचिदेशात्तु संग्राह्या शर्करादमादिवर्जिता ।
रक्ता गौरा तथा श्रेता मृत्तिका त्रिविधा स्मृता ॥
कर्दमा^२श्वत्कराल्लिपाद् जलाच्च पथ-वृक्षयोः ।
कृतशौचा^३श्वशेषाच्च न ग्राह्याः सप्त मृत्तिकाः ॥
मृत्तिकां गोमयं वापि न निशायां समाहरेत् ।
न गोमूत्र-मुरीषे तु गृहीयाद्बुद्धिमात्रः’ ॥

इति । योगियाज्ञवल्क्योऽपि—

* यस्मात् जले वसतामपि मत्स्यादीनां न स्नानफलं लक्ष्यते तस्मात्
अस्ति किञ्चिदधिकं तत्र । तच्च समन्त्रकत्वमेवेति ध्येयम् ।

१. A. reads -कूर्मक-. २. B. C. and E. read स्नानं for स्नानात्. ३. This word is omitted by D. ४. B. C. E. and G. read तदाह. ५. D. reads स्नानार्थं. ६. A. reads शुचौ देशे तु. ७. G. reads संग्राह्या, and all other adjectives qualifying मृत्तिका in plural. ८. All others except D. and H. read मृत्तिकाः; while H. reads वल्मीकाः. ९. A. and I. read बिलास वरि-वृक्षयोः, but the word वरि does not give any good meaning. १०. I. reads कृतशौचावशिष्टा च.

‘गन्धोदकान्तं विविधत् स्थापयेत्तत् पृथक् क्षितौ ।

द्विधा कृत्वा मृदं तां तु गोमयं तद्विचक्षणः ॥

अध्रमोक्षम-मध्यानामङ्गानां क्षालनं तु तैः^१ ।

भागैः पृथक् पृथक् कुर्यात् क्षालने मृदसङ्करः’ ॥

इति । शौनको अपि—

‘प्रयतो मृदमादाय दूर्वा-श्यामार्ग-गोमयम् ।

एकदेशे पृथक् कुर्यात् क्षालने मृदसङ्करः’ ॥

इति । वसिष्ठः—

‘मृदैकया शिरः क्षाल्यं द्वाभ्यां नाभेस्तथोपरि ।

अधश्च तिसृभिः कार्यं षड्भिः पादौ तथैव च ॥

‘प्रक्षाल्य सर्वकायं तु द्विराचम्य यथाविधि’ ।

(कू. पु. १. २. १८. ६१.)

इति । कायप्रक्षालनानन्तरभाविकर्त्तव्यमाह शौनकः—

‘गायत्र्या आदित्यो देवता ख्याता ‘अतो देवा’

* ‘अतो देवा’ इत्ययं मन्त्रः ऋक्संहितायां (१. २२. १६) साम-
संहितायां उत्तरार्चिके (८. २. ५. ६) च प्रसिद्धः । ‘यत इन्द्र’ इति
मन्त्रस्तु ऋक्संहितायां (८. ६१. १२), सामसंहितायां छन्दस्यार्चिके
(३. ३. ४. २), तत्रैवोत्तरार्चिके (५. २. १५. १), तैत्तिरीयारण्यके
(१०. १.) च प्रसिद्धः । ‘स्वास्तिदाविशम्पतिः’ इति ऋक्संहितायां
(१०. १५. ३. २), तैत्तिरीयारण्यके च (१०. ५५), अथर्वसंहितायां
चापि (८. ५. २२.) प्रसिद्धः । ‘तत्र तु विशाम्पतिः’ इति पाठः ।

१. D. E. G. and H. read गन्धोदकान्तं. २. D. and G. read वै for तै.
३. A. reads तालने मृदसङ्करम्. ४. All others except A. omit this quarter
of the verse and read only 3 quarters. ५. G. reads क्षाल्य द्वाभ्यां
नाभेस्तथोपरि; while D. reads क्षाल्यं. ६. A. reads अधश्चतसृभिः. ७. A.
reads कृत्यमाह. ८. B. C. and F. read गायत्र्या आदित्या अवहिष्यता
अतो देवा इति, E. गायत्र्या आदित्या अवहिष्यतातो, अतो देवा इति, D. गायत्र्या
आदित्या अवहिता अतो देवा इति, G. गायत्र्या आदित्यो अवहिता अतो देवा इति
and H. गायत्र्या आदित्या अवहिष्यता ततो देवा इति.

इति मृदमाभिमन्त्रयेत् । ततो यत्
इन्द्र', 'स्वस्तिदा विशस्पतिर्विरक्षो विमृध',
'इदं सुमेजेरित' इति मृदं संगृह्य प्रतिमन्त्रं
प्रतिदिशं क्षियेत् पूर्वोदिक्रमेण ।

ततः सममार्जनं कुर्यात् मृदा पूर्वं तु मन्त्रवत् ।

'अथक्रान्ते' (म. ज्ञा. उ. ४. ४.) इत्यादयो मृद-
हणमन्त्रा यूजुर्वेदे प्रसिद्धाः ।

'पुनश्च गोमयेमैवमग्रमग्रमिति ब्रुवन् ।

अग्रमग्रं चरन्तीनामोषधीनां वने वने ॥

तासामृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम् ।

त्वं मे रोगांश्च शोकांश्च पापं च नुद गोमय' ॥

(आ. ३. ५)

इति गोमयमन्त्रः । दूर्वाग्रहणे—

'काण्डात् काण्डादिति द्वाभ्यामङ्गमङ्गमुपस्पृशेत्' ।

इति । दूर्वाद्वयेन इति शेषः ।

अपापमपकिल्बिषमपकृत्यामपोरपः ।

१. B. C. E. F. and H. read इदं सुमेजनित for इदं सुमेजरि-
त. २. All others except A. and I. omit संगृह्य. ३. B. C.
E. F. and H. read रसं वने for वने वने. ४. A. and P. read सुरभीणां
शरीरतः and add extra line उत्पन्नं लोकसौख्यार्थं पवित्रं कायशोधनम्, but we
do not find this in any other manuscript. For the same B. C. E. F.
and H. read पापनं कायशोधनम्. ५. I. reads हृद for नुद. ६. I.
omits the words गोमयमन्त्रः. ७. All others except A. and H. omit
this. ८. D. reads दूर्वा and all others except A. and I. read अथ-
येत् for दूर्वाद्वयेन. ९. G. reads विशेषः. १०. B. C. E. F. and H.
read अपाघः, while G. reads अपाघ- for अपापः. ११. I. reads -मपोरप,
and B. C. F. मयोरपः for -मपोरपः.

‘अपामार्ग त्वेमस्माकमपदुष्टभयं नुद- ॥

स्वाहेत्य’थापामार्गेण अङ्गमङ्गमुपस्पृशेत् ।

अथ हिरण्यशृङ्गमापो देवीरप्स्वन्तरित्यप उपस्थाय ‘सुमि-
त्रिया न’ इत्यपः स्पृष्ट्वा ‘दुर्मित्रिया न’ इति बाहिः

क्षिपेत् । ततः—

इन्द्रः शुद्ध इत्यृचापः प्रविश्य मनसा जपेत् ।

तत्र गोयेत सामानि अपि वा व्याहृतीर्जपेत् ।

‘शेवेन मे’ जपित्वेदमाप इत्यप आप्लवेत्’ ॥

इति । वसिष्ठः—

‘ये ते शतमिति द्वाभ्यां तीर्थान्यावाहयेद्बुधः ।

कुरुक्षेत्रं गयां गंगां प्रभासं नैमिषं तथा’ ॥

इति । शङ्खः—

‘प्रपद्ये* वरुणं देवमम्भसां पतिमीश्वरम् ।

गाचितं देहि मे तीर्थं सर्वपापापनुत्तये ॥ (३)

* एते मन्त्रास्तु महानारायणोपनिषदि चतुर्ष्वष्टके चतुर्थमन्त्रा-
दितो द्रष्टव्याः ।

१. B. C. E. and F. read स्वमस्मन्पदुःस्वमे सुवः स्वाहा, G. त्वमस्मदपदु-
ष्वभ्यं सुवः स्वाहा, H. स्वमस्मदीयदुःस्वमे सुवः स्वाहा and I. त्वमस्माकं दुष्टं भयं
नुद स्वाहा. (२. D. reads इत्यङ्गमङ्गमुपामार्गेणोपस्पृशेत्, B. C. E. F. G.
H. and I. omit अथ and read स्वाहेत्यपामार्गेण अङ्गमङ्गमुपस्पृशेत्. ३. All
others except A. and I. read गायेत्सामानि for गायेत सामानि. ४. I. reads
जपेत् for तथा. ५. The text of the Sāṅkha Smṛiti reads as follows :—

प्रपद्य वरुणं देवमम्भसां पतिमश्विनम् ।

याचेत देहि मे तीर्थं सर्वपापापनुत्तये ॥

तीर्थमावाहयिष्यामि सर्वाधौघनिषूदनम् ।

सान्निध्यमस्मिन्स्तोत्रे च क्रियतां मदनुग्रहात् ॥ (४)

रुद्रान् प्रपद्ये वरदान् सर्वान् शुषदस्तथा । (५)

अर्पः पुण्याः पवित्राश्च प्रपद्ये वरुणं तथा । (६)

शमयन्त्वागु मे पापं रक्षन्तु च संदेह माम् ॥ (७)

(शं. स्मृ. ८. ३-७)

इति । वसिष्ठः—

‘आपोहिष्ठेदमापश्च द्रुपदादिव’ इत्यपि ।

तथा हिरण्यवर्णाभिः पावमानीभिरन्ततः ॥

ततो ऽर्कमीक्ष्य चोङ्कारं निमज्ज्यान्तर्जले बुधः ।

प्राणायामांश्च कुर्वीत गायत्रीं चाघमर्षणम् ॥

इति । विष्णुरपि—

‘ततो ऽर्मु निमग्नस्त्रिर्घमर्षणं जपेत् ।

तद्विष्णोः परमं पदमिति वा द्रुपदां सावित्रीं वा ।

१. D. and F. G. read सर्वपापै प्रमुच्यते. २. B. C. and F. read सान्नि-
ध्यमस्मिन्स्तोत्रे स्थीयतां, D. and G. -स्तोत्रे स्थीयतां. E. and H. सान्निध्यम-
स्मिन्स्त्वस्तोत्रे स्थीयतां and I. सान्निध्यमस्मिन्स्तोत्रे क्रियतां. ३. D. and
I. read अपः. ४. The text of the Śaṅkha Smṛiti reads वरुणं for वरुणं.
५. The text of the Śaṅkha Smṛiti read मां च रक्षन्तु सर्वशः. ६. B. C.
D. E. F. and G. read ततो ऽर्मु मानलि-, but it seems to be a mistake
of the writer. H. reads for the same ततो ऽर्मु मज्जमानलि-. ७. All
others except A. and I. omit जपेत्. ८. वा द्रुपदां is omitted by all
except A. and I.

‘युक्ताते नम-इत्यनुवाकं वा । पुरुषसूक्तं वा । स्ना-
तम्भोर्द्वासा देवर्षि-पितृतर्पणमम्भस्थं एव कुर्यात्’ ॥

(वि. स्मृ. ६४. १९-२४)

इति । मेधातिथिरपि—

‘ततोऽम्भसि तिमग्रस्तु त्रिः पठेदघमर्षेणम्’ ।

प्रदद्यान्मूर्धनि तथा महाव्याहृतिभिर्जलम्’ ॥

इति वसिष्ठः—

‘स्नात्वा संगृह्य वासोऽन्यदूरं संशोधयेन्मृदा ।

अपवित्रीकृतौ तौ तु कौपीनास्त्राववारिणा ॥

यो ज्ञेनं विधिना स्नाति यत्र ते त्राम्भसि द्विजः ।

स तीर्थफलमाप्नोति तीर्थे तु द्विगुणं फलम्’ ॥

इति । तत्रानुकल्पमाह योगियाज्ञवल्क्यः—

‘य एष विस्तृतः प्रोक्तः स्नानस्य विधिरुत्तमः ।

असामर्थ्यान् कुर्याच्चैतन्नायं विधिरुच्यते’ ॥

स्नानमन्तर्जले चैव मार्जनाचमने तथा ॥

जलाभिमन्त्रणं चैव तीर्थस्य परिकल्पनम् ।

अघमर्षणसूक्तेन त्रिरावृत्तेन नित्यम् ॥

स्नानाचरणमित्येतदुपादेष्टं महात्मभिः’ ॥

इति ।

॥ इति मध्याह्निकस्नानम् ॥

१. All others except A. and I. read वाससा देवर्षिपितृतर्पणमन्तरथ एव कुर्यात्. २. All others except A. and I. read अपवित्रीकृते ते तु. ३. A. reads कुत्राम्भसि. ४. D. and G. read त्रीयेषु. ५. A. reads भवेत्. ६. D. omits योगि- and reads याज्ञवल्क्यः, E. and H. read योग्ययाज्ञवल्क्यः. ७. All others except A. and I. read मध्याह्निकस्नानम्.

अथ नैमित्तिकस्नानम् । तत्र मनुः—

‘ दिवाकीर्त्तिमुदक्यां च पतितं सूतिकां तथा ।

शवं तत्स्पृष्टिनं चैव स्पृष्ट्वा स्नानेन शुद्ध्यति’ ॥

(म. स्मृ. ६. ८६)

इति । दिवाकीर्त्तिश्चाण्डालः । अङ्गिराः—

‘शवस्पृशमथोदक्यां सूतिकां पतितं तथा ।

स्पृष्ट्वा स्नानेन शुद्धः स्यात् सचैलेन न संशयः’ ॥

इति । गौतमोऽपि—

‘पतित-चाण्डाल-सूतिकोदक्या-शवस्पृक्-तत्स्पृ-

ष्टिस्पर्शने सचैल उदकोपस्पर्शनात् शुद्ध्येत’ ॥

(गौ. स्मृ. ७. १६)

इति । पतितादिस्पृष्टिर्न समारभ्य तृतीयस्य सचैलं स्नानम् ।
चतुर्थस्य तु उदकोपस्पर्शनाच्छुद्धिः । तथा च मरीचिः—

‘ उपस्पृशोच्चतुर्थस्तु तदूर्ध्वं प्रोक्षणं स्मृतम्’ ।

इति । यत्तु सर्वत्रेव द्वयोरेव स्नानमुक्तम्—

१. B. C. E. F. G. and H. read दिवाकीर्त्ये for दिवाकीर्त्ति, but this form is not found in Lexicographical works. २. B. C. E. F. G. and H. read दिवाकीर्त्यश्चाण्डालः. ३. All others except A. and I. read शुद्धिः. ४. Here our reading follows: A. I. and the text of Gantam, but B. C. E. F. and H. read शवस्पृशितत्स्पृष्ट्युपस्पर्शने; while D. reads शवस्पृशिनं स्पृष्ट्वा तत्स्पृष्ट्युपस्पर्शने, and G. शवस्पृशितत्स्पृष्ट्युपस्पर्शने for शवस्पृक्-तत्स्पृष्टिस्पर्शने. ५. B. C. E. F. G. and H. read न चतुर्थस्य । तस्य तु उदकोपस्पर्शनाच्छुद्धिः. ६. This is omitted by all others except D. and I.

‘तत्स्पृष्टेनं स्पृशेद्यस्तु स्नानं तस्य विधीयते ।

ऊर्ध्वमाचनं प्रोक्तं द्रव्याणां प्रोक्षणं तथा’ ॥

इति । तद्बुद्धिपूर्वस्पर्शविषयम् । तथा च संग्रहकारः—

‘अबुद्धिपूर्वकस्पर्शं द्वयोः स्नानं विधीयते ।

त्रयाणां बुद्धिपूर्वं तु तत्स्पृष्टिन्यायकल्पना’ ॥

इति । कूर्मपुराणे—

‘चाण्डाल-मूतिक-शवैः संस्पृष्टं संस्पृशेद्यदि ।

प्रमादात्तत आचम्य जपं कुर्यात् समाहितः’ ॥

तत्स्पृष्टिस्पाष्टिनं स्पृष्ट्वा बुद्धिपूर्वं द्विजोत्तमः ।

‘आचमेत विशुद्ध्यर्थं ग्राह देवः पितामहः’ ॥

(कू. पु. १. २. ३३. ६९-७०)

इति । याज्ञवल्क्योऽपि—

‘उदैक्या सूतिभिः स्नायात् संस्पृष्टस्तैरुपस्पृशेत् ।

‘अङ्गिलङ्गानि जपेच्चैव गायत्रीं मनसा सकृत्’ ॥

(या. स्मृ. ३. ३०)

इति । एतद्वण्डाद्यन्तरितस्पर्शविषयम् । अन्यथा द्वयोः स्नानमित्यनेन विरोधः प्रसज्येत । वस्त्रान्तरितस्पर्शने तु दण्डान्तरितन्यायप्राप्तावाह प्रचेताः—

१. A. substitutes यथा for तथा. २. I. reads -स्पर्शन-. ३. D. reads न बुद्धिसंस्पर्शः. ४. I. reads कूर्मपुराणम्. ५. The text of Kūrma Purāṇa reads ततः स्नत्वाथ आचम्य. ६. The text of the Kūrma Purāṇa reads -स्पृष्टस्पाष्टिनं for स्पृष्टिस्पाष्टिनं. ७. D. reads सूतक्यो सूतिभिः स्नायात्, and A. उदैक्याऽमुचिभिः. ८. D. reads प्रसज्यते. ९. A. D. and G. read यत्र वस्त्रान्तरितस्पर्शने न तत्र दण्डान्तरितन्यायः । तथाह प्रचेताः.

‘वस्त्रान्तरितसंस्पर्शो साक्षात्स्पर्शो अभिधीयते ।

साक्षात्स्पर्शो तु यत् प्रोक्तं तद्वस्त्रान्तरिते अपि च ’ ॥

इति । चतुर्विंशतिमते स्नानस्य निमित्तान्तरमभ्युक्तम्—

‘बौद्धान् पाशुपतान् जैनान् लौकायतिक-कापिलान्* ।

विकर्मस्थान् द्विजान् स्पृष्ट्वा सचैलो जलमाविशेत् ।

कौपालिकांस्तु संस्पृश्य प्राणायामो’धिको मतः’ ॥

इति । चाण्डालादिस्पर्शनिमित्तस्नाने विशेषमाह विष्णुः—

‘स्नानार्हो यो निमित्तेन कृत्वा तोयावगाहनम्† ।

आचम्य प्रयतः पश्चात् स्नानं विधिवदाचरेत्’ ॥

इति । योगियाज्ञवल्क्योऽपि—

‘तूष्णीमेवावगाहेत यदा स्यादगुचिर्नरः ।

आचम्य प्रयतः पश्चात् स्नानं विधिवदाचरेत्’ ॥

इति । गार्ग्योऽपि—

‘कुर्यान्नैमित्तिकं स्नानं शीताद्भिः काम्यमेव च ।

नित्यं यादृच्छिकं चैव यथारुचि समाचरेत्’ ॥

इति ।

* अत्र कापिलशब्देन साङ्ख्यानं ग्रहणम् । ते च निरीश्वरा एव ।

निरीश्वरादित्वात् तेषां स्पर्शस्य निषेधः । शेषराणां तु न कुत्रापि निषेधः ।

† प्रथमं अधिकारसिद्ध्यर्थं तूष्णीं तोयावगाहनं कृत्वा अनन्तरं यथाविधि स्नानं कुर्यात् । अन्यथा मन्त्रपठने नाधिकारः ।

१. D. reads वस्त्रान्तरितकः स्पर्शः, and G. वस्त्रान्तरितसंस्पर्शः. २. R. C. D. F. and G. read विधीयते for अभिधीयते. ३. All others except A. omit अपि. ४. D. and G. read कपालिकान् for कौपालिकान्. ५. This line and the following two lines are omitted by D. and H. but they appear as marginal correction in H.

अथ मलापकर्षणस्नानम् । तत्र वामनपुराणम्—

‘नाभ्यद्गमके न च भूमिपुत्रे

क्षौरं च शुक्रं रविजे च मांसम् ॥ (४९)

बुधे च योषित् परिवर्जनीया

शेषेषु सर्वेणि सदैव कुर्यात् ।

(वा. पु. १४. ४९-५०)

इति । ज्योतिःशास्त्रे ऽपि—

‘सन्त्यापः कान्तिरन्वायुर्धनं निर्धनता तथा ।

अनारोग्यं सर्वकामा अभ्यङ्गाद्वास्करादिषु’ ॥

इति । मनुरपि—

‘पक्षादौ च रवौ पश्यां रिक्तायां च तथा तिथौ ।

तैलेनाभ्यज्यमानस्तु धनायुभ्यां विहीयते’ ॥

इति । गगो ऽपि—

‘पञ्चदश्यां चतुर्दश्यामष्टम्यां रत्रिसंक्रमे ।

द्वादश्यां सप्तमी-षष्ठयोस्तैलस्पर्शं विवर्जयेत्’ ॥

इति । श्रीधायनो ऽपि—

१. We follow here A. and the text of Vāman Purāṇa, but all other read च कुजे for रविजे. २. G reads बुधेषु, and the text of Vāman Purāṇa read बुधेषु योगिन्न समाचरेत्. ३. Except A. and the text of Vāman Purāṇa all others read सर्वेषु for सर्वेणि. ४. I. omits अपि. ५. A. reads संतापयन्ति. ६. D. reads निधनमेव च, and G. निर्धनतां तथा. ७. A. reads यमोऽपि for श्रीधायनो ऽपि.

‘अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां च विशेषतः ।

शिरोऽभ्यङ्गं वर्जयेत्तु पर्वसन्धौ तथैव च’ ॥

इति । गगो अपि—

‘न च कुर्यात् तृतीयायां त्रयोदश्यां त्रिंशोऽथवा ।

शाश्वतीं भूतिमन्विच्छन् दशम्यामपि पण्डितः’ ॥

इति । एवं सर्वास्वपि निधिष्वभ्यङ्गस्य निषेधे प्राप्ते तैल-
विशेषेणाभ्यनुज्ञानानि प्रचेताः—

‘सार्पपं गन्धतैलं च यत्तैलं पुष्पवासितम् ।

अन्यद्रव्ययुतं तैलं न दुष्यति कदाचन’ ॥

इति । यमो अपि—

‘घृतं च सार्पपं तैलं यत्तैलं पुष्पवासितम् ।

न दोषः पक्वतैलेषु स्नानाभ्यङ्गेषु नित्येशः’ ॥

इति ।

॥ इश्यभ्यङ्गस्नानम् ॥

क्रियाङ्गस्नानं* तु नित्यस्नानवदनुष्ठेयम् ।

‘प्रातः शुकृतिरैः स्नात्वा मध्याह्ने पूजयेत् सूधीः’ ।

इत्यादिकं क्रियाङ्गस्नानं द्रष्टव्यम् । तस्य क्रियाङ्ग-
त्वं पुराणे स्पष्टीकृतम्—

* क्रियायाः करिष्यमाणस्य कर्मणः अङ्गभूतं स्नानं क्रियाङ्गम् । यथा
व्रतादिग्रहणादौ पूर्वं स्नात्वा सङ्कल्पादिकं कर्तव्यमित्यभिहितं तत्र
पूर्वं कर्तव्यस्य स्नानस्य क्रियाङ्गत्वम् । नतु पुत्रजन्मादौ कर्तव्यमपि क्रिया-
ङ्गमिति शङ्कनीयम् । तस्य निमित्तप्रयुक्तत्वात् नैमित्तिकत्वं स्पष्टम् ।

१. D: reads क्रियास्नानं तु for क्रियाङ्गस्नानं तु. २. This word is omitted
by all except A and I.

‘धर्मक्रियां कर्तुमनाः पूर्वं स्नानं समाचरेत् ।
क्रियाङ्गं तत्समुद्दिष्टं स्नानं वेदपरैर्द्विजैः’ ॥

इति

‘॥ इति क्रियाङ्गस्नानम् ॥’

अथ क्रियास्नानम् । तत्र शङ्खः—

‘क्रियास्नानं प्रवक्ष्यामि यथावद्विधिपूर्वकम् ।
मृद्धिरद्विश्च कर्तव्यं शौचमादौ यथाविधि ॥
जले निमग्नस्तून्मज्ज्यं चोपस्पृश्य यथाविधि ।
तीर्थस्यावाहनं कुर्यात् तत्प्रवक्ष्याम्यतः परम् ॥
प्रपद्ये वरुणं देवमम्भसां पतिमूर्जितम् ।
याचितं देहि मे तीर्थं सर्वपापापनुत्तये ॥
तीर्थमावाहयिष्यामि सर्वाघनिषूदनम् ।
सन्निध्यमस्मिस्तोये च क्रियतां मदनुग्रहात्’ ॥

इति । षट्स्थपि स्नानेषु मुख्यानुकल्पाभ्यां जलविशेषो
विष्णुपुराणे निरूपितः—

१. A. reads देवमयैर्द्विजैः; while I. reads देवमयैर्द्विजैः. २. A. reads भिममल्लिर्घृज्य; and the text of Sāukha read निमज्ज्य उन्मज्ज्य for निमग्न-स्तून्मज्ज्य. ३. All others except A., I. and the text read तीर्थमावाहनं for तीर्थस्यावाहनं. ४. I. reads पतिमीश्वरम्, D. परमर्जितम्, and the text reads the whole verse as follows :—

‘प्रपद्ये वरुणं देवमम्भसां पतिमर्जितम् ।

याचितं देहि मे तीर्थं सर्वपापापनुत्तये ॥’

५. D. reads सर्वाघनिषूदनम्. ६. All except A. are mistaken here. B. C. E. F. G. and I. read सन्निध्यमस्मिश्चित्तोये स्थीयतां, and I. सान्निध्यमस्मिश्चित्तोये क्रियतां. ७. B. C. D. and F. read स्थानेषु for स्नानेषु. ८. D. reads वसितः.

‘नदी-नद-तडागेषु’ देवखातेजलेषु च ।

नित्यं क्रियार्थं स्नायीत गिरिप्रस्रवणेषु च ॥

कूपेषु द्यूततोयेन स्नानं कुर्वीत वा भुवि ।

(वि. पु. ३. ११. २४-२८)

इति । मार्कण्डेयों अपि—

‘पुराणानां नरेन्द्राणामृषीणां च महात्मनाम् ।

स्नानं कूप-तडागेषु देवतानां समार्चयेत् ॥

भूमिष्ठमुद्धृतात्पुण्यं ततः प्रस्रवणोदकम् ।

ततोऽपि सारसं पुण्यं तस्मान्नादेयमुच्यते ॥

तीर्थतोयं ततः पुण्यं ततो गाङ्गं तु सर्वतः’ ।

इति । मरीचिः—

‘भूमिष्ठमुद्धृतं वाऽपि शीतमुष्णमथापि वा ।

गाङ्गं पयः पुनात्याशु पापमामरणान्तिकम्’ ॥

इति । निषिद्धं जलमाह व्यासः—

‘अनुत्सृष्टेषु* न स्नायात्तथैवाऽसंस्कृतेषु च ।

* अनुत्सृष्टेषु अकृतोत्तर्गेषु । असंस्कृतेषु अकृतसंस्कारेषु । हवनादि-
पूर्वको जलसंस्कारः प्रयोगग्रन्थेभ्योऽव्यन्तव्यः ।

१. I. reads बिलेषु. २. D. G. H. and I. read नित्यक्रियार्थं. ३. I. कूपे बोद्धत. ४. D. reads मार्कण्डेये अपि. ५. B. C. D. and F. read ततो गाङ्गं तु सर्वतः. ६. D. omits this word. ७. D. and I. read निषिद्धजलं. ८. I. reads संस्क्रुतेषु.

‘अग्नीयेष्वपि न स्नायात्तथैवाल्जलेष्वपि ॥

क्षेत्र्या यच्च परिभ्रष्टं नद्या यच्च विनिःसृतम् ।

‘गोक्षप्रवृत्तागतं यच्च तत्तोयं परिवर्जयेत्’ ॥

इति । शाततपो ऽपि—

‘अन्यैरपि कृते कूपे सेतौ वाण्यादिके तथा ।

तत्र स्नात्वा च पीत्वा च प्रायश्चित्तं समाचरेत्’ ॥

इति । प्रतिप्रसवमाह मनुः—

‘अलाभे देवखातानां सरसां सरितां तथा ।

उद्धृत्य चतुरः पिण्डान् पारक्ये स्नानमाचरेत्’ ॥

इति । उष्णोदकं तिषेधेति शङ्खः—

‘स्नातस्य तद्धितमेन तथैव परवारिणा ।

‘शरीरशुद्धिर्विज्ञेया न तु स्नानफलं भवेत्’ ॥

इति । याज्ञवल्क्यः—

* सेतौ ‘घाट’ इति भाषायां प्रसिद्धे ।

† विष्णुना तु— ‘परनिपानेषु न स्नानमाचरेत् । आचरेत्पञ्चपिण्डानु-
दृत्यापस्तथापदि’ (वि. स्मृ. ६.४.१-२) इति पञ्चपिण्डोद्धारः कथितः ।
बौधायनादिभिरप्येवमेव ।

१. All others except D. add इति । व्यासो ऽपि after this verse of which there is no necessity as the next verse is a quotation from the special author, and for व्यासो ऽपि A. substitutes पुण्डरीको ऽपि, but we do not find the name of पुण्डरीक in the list of Dharmaśāstrakāras nor in that of Purāṇakāras or Rishis. This name appears in the Paṇḍhari Māhātmya which is a small, modern mythological work. २. I. reads नद्यो यच्च. ३. I. reads गत्तुं प्रत्यागतं यच्च. ४. I. reads सरो वाण्यादिके, but the next quotation from Manu shows that this is a mistake. ५. A. reads उष्णोदकस्नानं. ६. I. reads निषेधयति. ७. A. reads लभेत्. ८. D. omits इति.

‘वृथा तूष्णोदकस्नानं वृथा जप्यमवैदिकम् ।

वृथा त्वश्रोत्रिये दानं वृथा भुक्तमसाक्षिकम्’ ॥

इति । यत्तूष्णोदकविधानम्—

‘आप एव सदा पूतास्तासां वह्निर्विशोधकः ।

ततः सर्वेषु कालेषु उष्णाम्भः पावनं स्मृतम्’ ॥

इति—यच्च षट्त्रिंशन्मते अपि—

‘आपः स्वभावतो मेध्याः किं पुनर्वह्निसंयुताः ।

तेन सन्तः प्रशंसन्ति स्नानमुष्णेन वारिणः’ ॥

इति—तदातुरस्नानविषयम् । तथा च यमः—

‘आदित्यकिरणैः पूतं पुनः पूतं च वह्निना ।

आघ्रातमातुरस्नाने प्रशस्तं स्यात् शृतोदकम्’ ॥

इति । यदा तु नद्याद्यसम्भवस्तदा अनातुरस्याप्युष्णोदक-
स्नानमनिषिद्धमित्याह यमः—

‘नित्यं नैमित्तिकं चैव क्रियाङ्गं मलकर्षणम् ।

तीर्थाभाजे तु कर्तव्यमुष्णोदकपरोदकैः’ ॥

इति । यदपि बृहमनुनोक्तम्—

१. D. and H. read जप्यम् for जप्यम्. २. A. and I. add -स्नान- after उष्णोदक-. ३. यच्च is omitted by all others except A. ४. A. reads तदातुरविषयं for तदातुरस्नानविषयम्. ५. B. C. E. F. G. and H. read न क्षुभोदकं; while D. reads न शृतोदकं for स्यात् शृतोदकम्. Both the readings do not give any good sense. We prefer न हिमोदकम् to either of these which is found in the marginal correction of A. ६. इति is omitted by D. and G.

भृते जन्मनि संक्रान्तौ श्राद्धे जन्मदिने तथा ।
 अस्पृश्यस्पर्शने चैव न स्नायादुष्णवारिणा ॥
 संक्रान्त्यां भानुवारे च सप्तम्यां राहुदर्शने ।
 आरोग्य-पुत्र-मित्रार्थी न स्नायादुष्णवारिणा ॥
 'पौर्णमास्यां तथा दर्शे यः स्नायादुष्णवारिणा ।
 स गोहत्याकृतं पापं प्राप्नोतीह न संशयः' ॥

इति-। तत्र उक्तेषु मरणादिषु नोष्णोदकैः स्नायात् अपि
 तु परकीयैर्दृष्टोदकैर्वेत्युक्तमिति न विरोधः । उष्णोदक-
 स्नाने विशेषमाह व्यासः-

श्रीतास्वप्सु पिबिच्योष्णां मन्त्रसम्भारसम्भृताः ।
 गेहेऽपि शस्यते स्नानं नदीफलसमं विदुः' ॥
 इति । गौणं तु स्नानमुत्तरत्र स्वयमेव वक्ष्यति ।

॥ इति क्रियास्नानम् ॥

अथ सन्ध्याविधिः । तत्र सन्ध्यास्वरूपं दक्षो दर्शयति-

'अहोरात्रस्य यः सन्धिः सूर्यनक्षत्रवर्जितः ।

सा तु सन्ध्या समाख्याता मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः' ॥

इति । यद्यपि कालवाचकत्वेनात्र सन्ध्याशब्दः प्रतीयते
 तथापि तस्मिन् काले उपास्या देवता सन्ध्याशब्देनोपलक्ष्यते ।

२. D. reads, this line as follows :-

अस्पृश्यस्पर्शने चैव स्नायादुष्णेन वारिणा ।

but this appears to be a mistake of the writer. २. D. reads नोद्धृतो-
 दकैर्वा. ३. B. C. and F. read तज्जीनमफलं च हि, and D. E. G. H.
 तज्जीनमफलं बहिः. These two readings are correct and give different
 sense. ४. D. reads नोपलभ्यते.

तथा च देवताया उपासनेमुपलक्ष्य मूलवचने कर्मपरत्वेन स-
न्ध्याशब्दः प्रयुक्तः । अथवा सन्धौ भवा क्रिया सन्ध्या ।
अत एव व्यासः—

‘उपस्ते सन्धिवेलायां निशाया दिवसस्य च ।

तामेव सन्ध्यां तस्मात्तु प्रवदन्ति मनीषिणः’ ॥

इति । तामेव क्रियां विदधाति योगियाज्ञवल्क्यः—

‘सन्धौ सन्ध्यामुपासीत नास्तगे नोद्वते रवौ’ ।

इति । सा च सन्ध्या त्रिविधा । तदुक्तमत्रिणा—

‘सन्ध्यात्रयं तु कर्त्तव्यं द्विजैर्नृत्मविदा सदा’ ।

इति । तत्र कालभेदेन देवताया नागभेदमाह व्यासः—

‘गायत्री नाम पूर्वाह्णे सावित्री मध्यमे दिने ।

सरस्वती च सायाह्णे सैव सन्ध्या त्रिधा स्मृता ॥

प्रतिग्रहादन्नदोषात् पातकादुपपातकात् ।

गायत्री प्रोच्यते तस्माद्वायन्तं त्रायते यतः ॥

सवितृन्नोतनस्तु सैव सावित्री परिकीर्तिता ।

जगतः प्रसवित्री वा वैग्रूपत्वात् सरस्वती ॥

१. I. reads तथा देवतया उपलक्षणमुपलक्ष्य for तथा च देवताया उपासन-
मुपलक्ष्य. २. D. has उपास्तिः for उपास्ते. ३. B. C. E. F. and G. read
निशाया for निशायाः. ४. Except A. and I. all others read तस्मात् तत्. ५.
B. C. and F. read तत्क्रियाम्, and एव is omitted by all others except
A. ६. All others except A. read नामाभिभेदम् for नामभेदम्. ७. All others
except A. and I. read त्रिषु. ८. After this word B. C. and F. add इति,
but it is useless here. ९. B. C. and F. read प्रतिग्रहादन्नदोषाच्च, and E.
G. II. प्रतिग्रहादन्नदोषात् for प्रतिग्रहादन्नदोषाच्च. १०. A. reads चैव
११. D. reads त्वैग्रूपत्वात्, which is probably a mistake.

इति । तर्णभेदः स्मृत्यन्तरे अभिहितः*

‘गायत्री तु भवेद्रक्ता सावित्री शुक्लवर्णिका ।

‘सरस्वती तथा कृष्णा उपास्या वर्णभेदतः ॥

गायत्री ब्रह्मरूपा तु सावित्री रुद्ररूपिणी ।

‘सरस्वती विष्णुरूपा उपास्या रूपभेदतः’ ॥ ;

इति । उपासनमभिध्यानम् । अत एव तैत्तिरीयब्राह्मणम्—

‘उद्यन्तमस्तं यन्तमादित्यमभिध्यायन् कुर्वन्

ब्राह्मणो विद्वान् सकलं भद्रमश्नुते आवादित्यो-

ब्रह्मेति । ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेद’ ।

इति । अयमर्थः— ब्रह्मयमाणप्रकारेण प्राणायामादिकं कर्म कुर्वन् यथोक्तं नैम-वर्ण-रूपोपेतं सन्ध्याशब्दवाच्यमादित्यं ब्रह्मेति ध्यायन्नैहिकमापुष्टिकं च सकलं भद्रमश्नुते । य एवं-मुक्तध्यानेन शुद्धान्तःकरणो ब्रह्म साक्षात् कुरुते स पूर्व-मपि ब्रह्मैव सन्नज्ञानात् जीवत्वं प्राप्नो यथोक्तज्ञानेन तदज्ञानाप-गमे ब्रह्मैव प्राप्नोति—इति । व्यासोऽपि एतदेवाभिप्रत्याह—

‘न भिन्नां प्रतिपद्येत गायत्री* ब्रह्मणा सह ।

‘सोऽहमस्मीत्युपासीत विधिना येन केनचित्’ ॥

* ब्रह्मणा आत्मना सह । सोऽहमस्मीति विधिना ‘देवो भूत्वा देवं य-
जेत् नादेवो देवमर्चयेत्’ इति तान्त्रिकैः ‘ब्रह्मैवाहमस्मीत्यभिध्यायेत्’
इति औपनिषदश्रौक्तेन प्रकारेणेत्यर्थः ।

१. B. C. E. F. G. and H. read विहितः for अभिहितः. २. D. reads अभि-
धानम्. ३. G. omits कुर्वन्. ४. A. reads यथोक्तनामाभिधेयरूपोप-
हितम्; while H. and I. read यथोक्तनामरूपोपेतं. ५. D. omits य and
reads एवमुक्त-. ६. B. has सिद्धान्तःकरणो. ७. I. reads प्राप्नोति, which is
a mistake. ८. H. reads साहमस्मि.

इति । तत्र प्रातःसन्ध्यायाः कालपरिमाणमाह दक्षः—

‘रात्र्यन्त्ययामनाडी द्वे सन्ध्यादिः काल उच्यते ।

दर्शनाद्विरेखायास्तदन्तो मुनिभिः स्मृतः’ ॥

इति । आ सङ्गवं श्रौतःसन्ध्यायां गौणः कालः ५ अ
प्रदोषावसानं च सायंसन्ध्यायाः । तदाह बृहन्मनुः—

‘न प्रातर्न प्रदोषश्च सन्ध्याकालोऽतिपेत्यते ।

मुख्यकल्पोऽनुकल्पश्च सर्वस्मिन् कर्मणि स्मृतः’ ॥

इति । कर्मपुराणे सन्ध्योपास्तिप्रकारो दर्शितः—

‘प्रागग्रेषु ततः स्थित्वा दर्भेषु सुसमाहितः ।

प्राणायामत्रयं कृत्वा ध्यायेत् सन्ध्यामिति श्रुतिः’ ॥

इति । याज्ञवल्क्योऽपि—

‘प्राणानायम्य संप्रोक्ष्य तृचेनाव्देवतेन तु’ ॥

इति । बृहस्पतिः— (या. स्मृ. १. २४)

‘बद्धाऽऽसनं नियम्यामून् स्मृत्वा चर्यादिकं तथा ।

सन्निमीलितदृङ्मौनी प्राणायामं समभ्यसेत्’ ॥

इति । प्राणायामलक्षणं मनुराह—

१. D. drops the visarga. २. All others except A. and I. read बृहन्मनुः for बृहन्मनुः. ३. D. reads पठ्यते; while B. C. E. F. G. and H. read पयते for पत्यते. ४. G. reads मुख्यः कालोऽनुकल्पश्च; while all others except A. and I. read मुख्यकालोऽनुकल्पश्च. ५. All others except A. read प्राकूलेषु. ६. I. substitutes च in the place of सु. ७. D. has सन्ध्यामुपासनं for सन्ध्यामिति श्रुतिः. ८. B. C. and F. read चार्यादिकं, H. वर्षादिकं, and I. चार्यादिकं for चर्यादिकं. D. reads the whole line as follows:—

‘बद्धासनं नियम्यामु स्मृत्वा चर्यादिकं तथा ।

‘तैव्याहृतिं सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह ।

त्रिः पठेदायतप्राणः प्राणायामः स उच्यते’ ॥

(म. स्मृ. ५५. ९)

इति । याज्ञवल्क्यः—

‘गायत्रीं शिरसाः सार्द्धं जपेद्याहृतिपूर्विकाम् ।

प्रतिप्रणवसंयुक्तां त्रिरयं प्राणसंयमः’ ॥

(या. स्मृ. १. २३)

इति । योगियाज्ञवल्क्यो ऽपि—

‘भूर्भुवः स्वर्महर्जनस्तपः सत्यं तथैव च ।

प्रत्योङ्कारसमायुक्तस्तथा ‘तत्सवितुः’ परम् ॥

‘ॐ आपोज्योति’ रित्येतच्छिरःपश्चात्प्रयोजयेत् ।

त्रिरावर्त्तनयोगात्तु प्राणायामः प्रकीर्तितः’ ॥

इति । स च प्राणायामः पूरक-कुम्भक-रेचकभेदेन त्रिविधो ज्ञेयः । तथा च योगियाज्ञवल्क्यः—

‘पूरकः कुम्भको रेच्यः प्राणायामस्त्रिलक्षणः ।

नासिकाऽऽकृष्टं उच्छ्वासो ध्मातः पूरकं उच्यते ॥

१. This verse appears in the Vishṇu Smṛiti. The text of, the said Smṛiti and all other manuscripts except A. and I. read सव्याहृतिकां.
 २. I. reads द्वाप्रणवसंयुक्तां, but the commentator Viṣṇūśaṅkara does not take this reading. ३. D. omits this. B. C. and E. read वृद्धयाज्ञवल्क्यो ऽपिः while G. and H. read simply याज्ञवल्क्यो ऽपि, but we don't find the following quotation in the text of yajñavalkya, and we are unable to say whether yogiyajñavalkya or the vṛiddhayajñavalkya this verse contains.
 ४. H. reads प्राणायामः शुशक्तितः, B. C. E. F. and G., प्राणायामस्तु शक्तितः, D. प्राणायामास्तु शक्तितः. ५. D. and G. have कृत.

कुम्भको निश्चलः श्वासो रेच्यमानस्तु, रेचकः* ॥

इति । मार्जनमाह व्यासः—

‘आपोहिष्ठेत्यृचैः कुर्यान्मार्जनं तु कुशोदकैः ।

प्रणवेन तु संयुक्तं क्षिपेद्धारि पदे पदे ॥’

विप्रेषोऽष्टौ क्षिपेदूर्ध्वमधो ‘यस्य क्षयाय’ च-

रजस्तमो मोहजातान् जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्तिजान् ॥

वाङ्-मनः-कायजान् दोषान् नवैतान् भवभिर्दहेत् ।

इति । प्रजामतिरपि—

‘ऋगन्ते मार्जनं कुर्यात् पादान्ते वा समाहितः ।

अर्द्धचान्ते ऽथवा कुर्याच्छिष्टानां मतमीदृशम् ॥’

इति । मार्जने तीर्थविशेषमाह हारीतः—

‘मार्जनार्चन-बलिकर्म-भोजनानि ‘देवतीर्थेन कुर्यात्’ ।

तच्च मार्जनं न धाराच्युतौ कार्यम् । तथा च ब्रह्मा—

‘धाराच्युतेन तोयेन सन्ध्योपास्तिर्विगर्हिता ।

पितरो न प्रशंसन्ति न प्रशंसन्ति देवताः’ ॥

* अयमर्थः— ओंकारसहितव्याहृतिचतुष्टयसहितं सशिरस्कं गायत्रीं जपन् दक्षिणनासापुटेन वायुं ऊर्ध्वमाकर्षयेत् एष पूरकः । तथैव तावत्कालमेव वायुं धारयेत् एष कुम्भकः । तथैव रेचयेत् एष रेचकः । एतत्रयात्मकः प्राणायाम इत्युच्यते ।

१. All others except I. read रच्यमान-for रेच्यमानः. २. A. reads -त्यृचा. ३. I. reads वपुष्यष्टौ. ४. All others except A. D. and I. read यस्य क्षयाय जित्, which seems to be a mistake, and D. substitutes क्षु for च. ५. C. omits रजः through mistake, E. and G. read रजस्तमोमोहजातान्, which does not give good sense. * A. and I. read रजस्तमो-मोहमयान्. ६. A. and I. read शातस्तपः for प्रजापतिरपि. ७. A. reads the whole line as follows:—

ऋगन्ते वाऽथ पादान्ते मार्जनं तु समाहितः ।

८. All others except, D. read हारीतो ऽपि for मार्जने तीर्थविशेषमाह हारीतः. ९. D. substitutes तच्च for तद्य. १०. च is omitted by I.

इति । कथं तर्हि मार्जनमिति तत्राह स एव—

‘नद्यां तीर्थे ह्रदे वाऽपि भाजने मृण्मये ऽपि वा ।

औदुम्बरे ऽथ सौगर्णे राजते दारुसम्भवे ॥

कृत्वा तु वामहस्ते वा सन्ध्योपास्ति समाचरेत् ।’

इति । कृत्वा उदकमिति शेषः । मृण्मयादिपात्रसद्भावे तु वामहस्तस्य प्रतिषेधः ।

‘वामहस्ते जलं कृत्वा ये तु सन्ध्यामुपासन्ते ।

सा सन्ध्या वृषली ज्ञेया असुरास्तैस्तु तर्पिताः ।’

इति स्मरणात् । मृण्मयाद्यभावे तु—‘कृत्वा तु वामहस्ते वा’ इत्यनेन वामहस्तविधानात् । एवमुक्तविधिना मार्जयित्वा ‘सूर्यश्चे’त्यर्पः पिबेत् । तदाह बौधायनः—

‘अथातः सन्ध्योपासनविधिं व्याख्यास्यामः (१) ।

तीर्थं गत्वा प्रयतोऽभिषिक्तः प्रक्षालितपाणि-

पादो विधिनाऽऽचम्य ‘अग्निश्च* मामन्युश्चेति’

सप्त्यम्पः पीत्वा ‘सूर्यश्च मामन्युश्चेति’ प्रातः ।

* ‘अग्निश्च मामन्युश्च’ ‘सूर्यश्च मामन्युश्च’ इत्येतौ मन्त्रौ महानारा-
यणोपनिषदि (१४.५-६) द्रष्टव्यौ ।

१. I. reads तटे for ह्रदे; while A. reads संध्यां तीर्थे तटे. २. I. reads तेषु for तैस्तु. ३. I. reads इत्यनेनैव विधानात् for इत्यनेन वामहस्तविधानात्. ४. Here the text of Baudhāyana (edited by E. Hultzsch, Vienna) is throughout mistaken. It reads as follows:—गत्वा प्रयतोऽभिषिक्तः प्रयतो वाऽनभिषिक्तः प्रक्षालितपादपाणिरप आचम्य सुरभिमत्यबिलङ्गानिः for गत्वा प्रयतोऽभिषिक्तः प्रक्षालितपाणिपादो विधिनाऽऽचम्य ‘अग्निश्च मामन्युश्चेति’ सप्त्यम्पः पीत्वा ‘सूर्यश्च मामन्युश्चेति’ प्रातः सप्तविज्ञेय पाणिना वसुमत्या अर्चलङ्गानिः. ५. All others except A. and I. read ऽप आचम्य for विधिनाऽऽचम्य.

सपेवित्रेण पाणिना वसुमत्या अबलिङ्गाभिर्वाह-
णीभिः हिरण्यवर्णाभिः पावमानीभिर्व्याहृतिभिः
अन्यैश्च पवित्रैरोत्मानं प्रोक्ष्य प्रयतो भवति ।

(वौ. स्मृ. २. ४. १-२)

इति । भारद्वाजः—

‘सायमग्निश्च मेत्युक्त्वा प्रातः सूर्येत्यपः पिबेत् ।

आपः पुनन्तु* मध्याह्ने ततश्चाऽऽचमनं चरेत् ॥’

इति । क्रात्यायनो ऽपि—

‘शिरसो मार्जनं कुर्यात् कुशैः सोदकबिन्दुभिः ।

प्रणवो भूर्भुवःस्वर्द्वौ^१ गायत्री च^२ तृतीयिका ॥

अद्वैतमृचश्चैव चतुर्थमिति मार्जनम्’ ।

(का. स्मृ. २. १९. ४-५)

इति । मार्जनानन्तरं प्रजापतिः—

‘जलपूर्णं तथा हस्तं नासिकाऽग्रे समर्पयेत् ।

ऋतं चेति पठित्वा च सज्जलं तु क्षितौ क्षिपेत् ॥’

इति । ततः सूर्यायार्घ्यं दद्यात् । तथा च व्यासः—

* मन्त्रो ऽयं महानारायणोपनिषदि (१४. २) द्रष्टव्यः ।

१. All others except D. read सपेवित्रेण for सपवित्रेण, and omit पाणिना.
२. A. and D. read सुवसुमत्या for वसुमत्या; while B. C. and F. read वा सुवसुमत्या, but this reading does not give any sense. ३. J. omits the portion from this word to तु मध्याह्ने &c., &c., in the next quotation. ४. B. C. E. F. and H. read भारद्वाजः. ५. A. D. and I. read प्रणवो भूर्भुवः स्वश्च, E. G. and H. read प्रणवो भूर्भुवः स्वर्द्वौ for प्रणवो भूर्भुवः स्वर्द्वौ. ६. D. reads अद्वैतमृचं चैव, G. अद्वैतमृचश्चैव and I. अद्वैतमृचं चैव.

‘कर्मभ्यां तोयमादाय गायत्र्या आभिमन्त्रितम् ।

आदित्याभिमुखस्तिष्ठन् विरूध्वं सन्ध्ययोः क्षिपेत्’ ॥

इति ।

‘उत्थायार्कं प्रति प्रोहेत् त्रिकेगाञ्जलिमम्भसाम्’ ।

(का. स्मृ. २.११.१०)

इत्येतत् कात्यायनवचनं मध्याह्नसन्ध्यापरम् । हारीतोऽपि—

‘सवित्र्याभिमन्त्रितमुदकं पुष्पमिश्रमञ्जलिना क्षिपेत्’ ।

इति । अर्घ्यदाने मन्त्रान्तरमुक्तं त्रिष्णुना—

‘कराभ्यामञ्जलिं कृत्वा जलपूर्णं समाहितः ।

उदुत्यसिति मन्त्रेण तत्तोयं प्रक्षिपेद्भुवि’ ॥

इति । ततः प्रदक्षिणं कृत्वा उदकं स्पृशेत् । तदुक्तं

वराहपुराणे—

‘सौर्यं मन्त्रवदाचम्य प्रोक्ष्य सूर्यस्य चाञ्जलिम् ।

दत्त्वा प्रदक्षिणं कृत्वा जलं स्पृष्ट्वा विशुध्यति’ ॥

इति । श्रुतिरपि—

‘यत् प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति तेन पाप्मानमवधुन्वन्ति’ ।

इति । कूर्मपुराणम्—

१. B. C. E. and G. read -ध्वमयव क्षिपेत्; while A. and I. read -ध्वमयवोत्क्षिपेत्. २. The portion from उत्थायार्कं- to मध्याह्नसन्ध्यापरम् is omitted by all others except D. E. G. and H. ३. D. and G. insert कात्यायनोऽपि ‘before उत्थाय-’, omit वचनम्, and read एतन्मध्याह्नपरम्. ४. All others except A. and I. read करपूर्णं for जलपूर्णं. ५. A. reads च क्षितौ क्षिपेत्; while all others except D. and I. read च क्षिपेद्भुवि. ६. A. reads ततः प्रदक्षिणं कृत्वा उदकं च स्पृशेत् पुनः, and adds इति in the former line after this. ७. B. C. E. F. G. and H. read only पुराणे; while D. reads ब्रह्माण्डपुराणे. ८. A. reads this line as follows :—

सर्वसन्ध्यामुपासीत कृत्वा सूर्याय चाञ्जलिम् ।

‘अथोपतिष्ठेदादित्यमुदयन्तं समाहितः । -

मन्त्रैस्तु विविधैः सैरैः ऋग्यजुः-सामसम्भवैः’ ॥

इति । ‘उपस्थानं तु स्वशाखोक्तमन्त्रैः कर्तव्यम्’ ।

‘उपस्थानं स्वकैमन्त्रैरादित्यस्यं तु कारयेत्’ ।

इति वसिष्ठस्मरणात् । कूर्मपुराणे ‘उपस्थानं तु सूक्तैः’ इत्यादिना प्रपञ्चितम् ।

‘प्रोक्तेषु’ इत्यारभ्य आदित्योपस्थानपर्यन्तं प्रातः-सन्ध्यायां यदुपवर्णितं तदितरयोरुभयोरपि सन्ध्ययोः समानम् । तत्र मध्याह्नसन्ध्यायां विशेषो नारायणेनाभिहितः-

‘आपः पुनन्तु मन्त्रेण आपोहिष्ठेति मार्जनम् ।

प्रक्षिप्य चाञ्जलिं सम्यगुदुत्यं चित्रमित्यपि ॥

तच्चक्षुर्देव इति च हंसः शुचिषदित्यपि ।’

एतत् जपेदूर्ध्वबाहुः सूर्यं पश्यन् समाहितः ॥

गायत्र्या तु यथाशक्ति उपस्थाय दिवाकरम्’ ।

इति । कालविशेषस्तु शङ्केन दर्शितः-

‘प्रातःसन्ध्यां सनक्षत्रां मध्यमां स्नानकर्मणि ।

समदित्यां पश्चिमां सन्ध्यामुपासीत यथाविधि’ ॥

इति । स्नानकर्मणीति मध्याह्निकस्नानानन्तरमित्यर्थः ।

मध्याह्निकसन्ध्याया गौणकालमाह दक्षः-

‘अध्यर्चयामादासायं सन्ध्यामाध्याह्निकीष्यते’ ।

इति । सन्ध्यात्रयस्य तारतम्येन देशविशेषमाह व्यासः-

१. D. omits इति. २. D. E. G. and H. read शुद्धिरित्यादिना.
३. All others except A. and I. read प्राक्तेष्वित्यादिस्वोपस्थानपर्यन्तं प्रातःसन्ध्याया उपवर्णितं तदितरयोः सन्ध्ययोः समानम्, but H. omits सन्ध्ययोः.
४. I. reads सन्ध्यायां. ५. I. reads चये.

‘गृहे त्वेकगुणा सन्ध्या गोष्ठे दशगुणा स्मृता ।
 शतसाहसिका नद्यामनन्ता विष्णुसन्निधौ ॥
 बहिःसन्ध्या दशगुणा गर्त्त-प्रस्रवणेषु च ।
 ख्याता तीर्थे शतगुणा साहस्रा जाह्नवीतटे ’ ॥

इति । शातातपो ऽपि—

‘अनृतं मद्यगन्धं च दिवांमैथुनमेव च ।
 पुनाति वृषलस्यान्नं सन्ध्या बहिरुपासिता’ ॥

इति । बहिःसन्ध्यायामुपासितायां यदा विहरणाद्यङ्ग-
 लोपस्तदा गृह एव सन्ध्यात्रयं कर्त्तव्यमित्याहाश्रिः—

‘सन्ध्यात्रयं तु कर्त्तव्यं द्विजेनात्मविदा सदा ।
 उभे सन्ध्ये तु कर्त्तव्ये ब्राह्मणैश्च गृहेष्वपि ’ ॥

इति । यद्यपि प्रशस्तत्वाद्बहिरेव सन्ध्यात्रयं कर्त्तव्यत्वेन
 प्राप्तं तथापि श्रौतत्वेन विहरणस्य प्राबल्यात् तदनुरोधेन सायं-
 प्रातःसन्ध्ये गृहे ऽभ्यनुज्ञायते । सायंसन्ध्यायामुपस्थाने मन्त्र-
 विशेषमाह नारायणः—

‘वारुणीभिस्तथादित्यमुपस्थाय प्रदक्षिणम् ।
 कुर्वन् दिशो नमस्कुर्याद्दिगीशांश्च पृथक् पृथक्’ ॥

इति । वारुण्यश्च —‘इमं मे वरुण’ (ऋ. सं. १. ६. १.)
 —इत्याद्याः । यद्यपि वारुणीभिर्वरुणस्योपस्थानं लिङ्गबलान् प्राप्तं

१. After the end of this verse I. has इति । महाभारते. २. D. and H. read दिवास्थापं च मैथुनम् for दिवांमैथुनमेव च. ३. B. C. and F. read बहिःसन्ध्या उपासिता; while D. E. G. and H. read बहिःसन्ध्यामुपासिता. ४. All others except A. and I. omit बहिःसन्ध्यायामुपासितायां. ५. D. reads तथा श्रौतत्वेन for तथापि श्रौतत्वेन.

तथापि श्रुतेः प्राबल्यात् तथा लिङ्गं बाधित्वा आद्वितीयोपस्थाने
एवं विनियुज्यन्ते । एतच्च तृतीयाध्याये* विचारितम् ।

तथा हि । 'ऐन्द्रा गार्हपत्यमुपेतिष्ठते' इति श्रूयन्ते । इन्द्रो
देवतात्वेन यस्यामृचि मन्त्रलिङ्गात् प्रकाशयते सैयमृमैन्द्री ।
'कदाचैन स्तरीरसि नेन्द्र सैश्वसि' इत्यादिका । तत्र लिङ्गादि-
न्द्रोपस्थाने मन्त्रस्य विनियोगः प्रतीयते । गार्हपत्यमिति
द्वितीयया श्रुत्या तु गार्हपत्योपस्थाने । तत्र संशयः ।
किमुभयं समुच्चित्योपस्थेयं ? उतैक एव ? तत्रापि, किं मः
कश्चिदैच्छिकः ? किं वेन्द्र एव ? उत गार्हपत्य एव ? इति । तच्च
श्रुति-लिङ्गयोः समबलप्रमाणत्वात् विशेषानुपलम्भाच्च समु-
च्चयः-इत्येकः पक्षः । एकोपस्थाने मन्त्रस्य निराकाङ्क्षात् नैरा-
काङ्क्ष्यलक्षणविरोधादनन्तरनियामकाद्दर्शनाच्चैच्छिकः - इति
द्वितीयः पक्षः । श्रुतेः शब्दात्मिकायाः अर्थसामर्थ्यानुसारित्वात्
सामर्थ्यस्य चोपजीव्यत्वेन प्राबल्यादिन्द्र एवोपरभेयः-इति
तृतीयः पक्षः । मन्त्रगतो हीन्द्रशब्दो रूढ्या शक्रमभिधत्ते । 'इ-
दिपरमैश्वर्ये' - इत्यस्माद्धातोरुत्पन्नत्वात् स्वकार्यविषयं परमैश्व-
र्योपेतं गार्हपत्यमभिधत्ते । 'गुणाद्वाप्यभिधानं स्यात्' - इति न्या-
येनोभयसाधारणत्वेन लिङ्गस्य सन्देहापादकत्वम् । अथोच्येत

* पूर्वमीमांसायां तृतीयाध्यायस्य तृतीये पादे सप्तमे अधिकरणे
'श्रुति-लिङ्ग-वाक्य-प्रकरण-स्थान-समाख्यानां समवाये पारदौर्बल्यम-
र्थविप्रकर्षात्' (३, ३, ४) इत्यस्मिन् सूत्रे शबरभाष्ये वार्तिके च
द्रष्टव्यमिदम् । .

१. Except A. and I. other manuscripts omit एव and insert मन्त्राः.
२. I. reads उपतिष्ठते. ३. D. reads नश्चसि.

‘रूढिर्योगमपहरति’—इति न्यायेन शीघ्रबुद्ध्युत्पादिकायाः रूढेः प्राबल्याच्छक्र एवोपस्थेयः—इति । एवं तर्हि लिङ्गादपि शीघ्रबुद्ध्युत्पादकत्वेन श्रुतिरेवात्र विनियोजिका । तथा ह्याचार्यैरुक्तम्—

‘मन्त्रार्थं मन्त्रतो बुद्ध्वा पश्चाच्छक्तिं निरूप्य च ।

‘मन्त्राकाङ्क्षाबलेनेन्द्रशेषत्वश्रुतिकल्पनम् ॥

श्रुत्या प्रत्यक्षया पूर्वं गार्हपत्याद्भतां गते ।

‘निराकाङ्क्षीकृते मन्त्रे त्रिमूला श्रुतिकल्पना ॥

तेन शीघ्रप्रवृत्तित्वाच्छ्रुत्या लिङ्गस्य बाधनम्’ ॥

तस्माद्गार्हपत्य एवोपस्थेयः इति सिद्धम् । सन्ध्यां प्रशंसाति यमः—

‘सन्ध्यामुपासते ये तु सततं शंसितव्रताः ।

विधूतपापास्ते यान्ति ब्रह्मलोकं सनातनम् ॥

यदह्ना कुरते पापं कर्मणा मनसा गिरा ।

आसीनः पश्चिमां सन्ध्यां प्राणायामैस्तु हन्ति तत् ॥

यद्रात्र्या कुरुते पापं कर्मणा मनसा गिरा ।

पूर्वसन्ध्यामुपासीनः प्राणायामैर्निर्यपोहति ॥

ऋषयो दीर्घसन्ध्यत्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुयुः ।

प्रज्ञां यशश्च कीर्तिं च ब्रह्मवर्चसमेव च’ ॥

इति । अकरणे प्रत्यवायो दर्शितो दक्षेण—

‘सन्ध्याहीनो श्रुतिर्नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु ।

यदन्यत् कुरुते कर्म न तस्य फलभाग्भवेत्’ ॥

“ (द. स्मृ. २. २०)

इति । गोभिलो ऽपि—

‘सन्ध्या येन न विज्ञाता सन्ध्या येनाऽनुपासिता ।
जीवमानो भवेद्भूदो मृतः श्वा चोपजायते’ ॥

इति । विष्णुपुराणे ऽपि—

‘उपतिष्ठन्ति वै सन्ध्यां ये न पूर्वा न पश्चिमेऽम् ।
व्रजन्ति ते दुरात्मानस्तामिह नरकं नृप’ ॥

.(वि. पु. ३. ११. १००.)

इति । कूर्मपुराणे ऽपि—

‘यो ऽन्यत्र कुरुते यत्नं धर्मकार्ये द्विजोत्तमः ।
विहाय सन्ध्याप्रणतिं स याति नरकायुतम्’ ॥

(कू. पु. १. २. १८. ३१)

इति । एतत्सर्वमनार्त्तविषयम् । तथा च याज्ञवल्क्यः—

‘अनार्त्तश्चोत्सृजेद्यस्तु स विप्रः शूद्रसम्मितः ।
प्रायश्चित्ती भवेच्चैव लोके भवति निन्दितः’ ॥

इति । अत्रिरपि—

‘नोपतिष्ठन्ति ये सन्ध्यां स्वस्थावस्थासु वै द्विजाः ।
हिंसन्ति वै सदा पापा भगवन्तं दिवाकरम्’ ॥

इति । विष्णुपुराणे ऽपि—

१. B. C. E. F. G. and H. substitute ये in the place of वै; while D. and the text of the Vishṇu Purāṇa read उपतिष्ठन्ति ये सन्ध्यां न पूर्वा न च पश्चिमां. २. D. omits अपि. ३. D. reads यो बाल्यान्कुरुते यत्नं; while B. C. E. F. G. and H. read योऽन्यत्र कुरुते कर्म. ४. There is no trace of this Śloka in the yajñavalkya smṛiti. ५. D. reads विष्णुरपि for विष्णुपुराणेऽपि, but it is evidently a mistake.

‘सर्वकालमुपस्थानं सन्ध्ययोः पार्थिवेष्यते ।

अन्यत्र सूतका-शौच-विभ्रमा-स्तुरभीतितः’ ॥

(वि. पु. ३. ११. ९७)

इति । सूतकादौ तु सत्यपि सामर्थ्ये सन्ध्योपासनं न कार्य-
मित्याह मरीचिः—

‘सूतके कर्मणां त्यागः सन्ध्यादीनां विधीयते’ ।

इति । यदपि पुलस्त्येनोक्तम्—

‘सन्ध्यामिष्टिं च होमं च थावज्जीवं समाचरेत् ।

न त्यजेत् सूतके वाऽपि त्यजन् गच्छत्यधोगतिम्’ ॥

इति—तन्मानसिकसन्ध्याभिप्रायम् । यतस्तेनैवोक्तम्—

‘सूतके मृतके चैव सन्ध्याकर्म न सन्त्यजेत् ।

मनसोच्चारयेन्मन्त्रान् प्राणायाममृते द्विजाः ॥

एतद्विदित्वा* यः सन्ध्यामुपास्ते संशितव्रतः ।

दीर्घमायुः स विन्देत् सर्वपापैः प्रमुच्यते’ ॥

इति ।

॥ इति सन्ध्याविधिः ॥

* प्रयोगपारिजाते भरद्वाजस्वेवमाह—

‘सूतके मृतके कुर्यात् प्राणायाममन्त्रकर्म ।

तथा मार्जनमन्त्रांस्तु मनसोच्चार्य मार्जयेत् ॥

गायत्रीं सम्यगुच्चार्य सूर्यायार्घ्यं निवेदयेत् ।

मार्जनं तु न वा कार्यमुपस्थानं नचैव हि’ ॥ इति ।

१. B. C. E. F. H. and I. read सन्ध्यायाः. २. All others except A. D. I. and the text of the Vishṇu Purāṇa read -जीविनः for -भीतितः. ३. Except A. all others omit तु. ४. I. reads पुनस्तेनोक्तम् for पुलस्त्येनोक्तम्. ५. A. and G. read सन्ध्यामिष्टिं च हं होमं. ६. I. reads न तु त्यजेत्. ७. Here all other manuscripts except A. and I. read संशित- for संशित, but both the readings are correct and give good sense. ८. This is omitted by all others except A. and I.

अथ सन्ध्याङ्गजपविधिः । तत्र मनुः—

‘आचम्य प्रयतो नित्यमुभे सन्ध्ये समाहितः॥

शुचौ देशे जपम् जुष्यमुपासीत यथाविधि’ ॥

इति । कथमित्यपेक्षिते आह शङ्खः—

‘कुशवृक्ष्यां समासीनः कुशोत्तरीयां वा कुशप-
वित्रपाणिः उदङ्मुखः सूर्याभिमुखो वा क्षमाला-
मादाय देवतां ध्यायन् जपं कुर्यात्’ ।

इति व्यासोऽपि—

‘प्रणव-व्याहतिर्युतां गायत्रीं च जपेत्ततः’ ।

इति । योगियाज्ञवल्क्यस्तु अन्तेऽपि प्रणवयोगार्थमाह—

‘ॐकारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः-स्वस्त्यैव च ।

गायत्रीं प्रणवं चान्ते जप एवमुदाहृतः’ ॥

इति । बौधायनोऽपि—

‘उभयतः प्रणवां सव्याहृतिकां जपेत्’ ।

इति । नृसिंहपुराणे जपयज्ञस्य भेदोऽभिहितः—

‘त्रिविधो जपयज्ञः स्यात्तस्य भेदं निबोधत ।

वाचिकंश्च उपांगुश्च मानसस्त्रिविधः स्मृतः ॥

१. B. C. E. and I. read -वृक्ष्यां; while D. E. G. and H. वृक्ष्यां. २. I. reads कुशान्निरायाम्. ३. All others except A. and D. omit उदङ्मुखः, but the next वा shows its necessity here. ४. D. reads युतां. ५. D. reads नृसिंहपुराणेऽपि जपहोमभेदो विहितः. ६. In the Narsinha Purāṇa the portion from Adhyāya 57, verse, 7, to Adhyāya 61, verse 14, treats of the conversation between Hārīta and several other Rishis. We have got a manuscript called the Laghu Hārīta Smṛiti which corresponds to the said conversation. The Laghu Hārīta Smṛiti reads तत्त्वं for भेदं and reads मानसश्च त्रिविधा कृतिः । जपयज्ञमपि यज्ञानां श्रेष्ठः स्यादुत्तरोत्तरः.

‘त्रयाणां जपयज्ञानां श्रेयान् स्यादुत्तरोत्तरः’ ॥

(नृ. पु. ५८. ७८-७९; ल. हा. स्मृ. ४. ४०-४१.)

इति । वाचिकोपांगुत्पयोर्लक्षणं पुराणे अभिहितम्—

‘यदुच्चनीचोच्चरितैः शब्दैः स्पष्टपदाक्षरैः ।

मन्त्रमुच्चारयेद्वाचा वाचिको ज्यं जपः स्मृतः ॥

शनैरुच्चारयेन्मन्त्रमीषदोष्टौ प्रचालयन् ।

अपरैरश्रुतः किञ्चित् सं उपांगुजपः स्मृतः’ ॥

(नृ. पु. ५८. ८०-८१; ल. हा. स्मृ. ४. ४२-४३)

इति । विश्वामित्रेण मानसस्य लक्षणमुक्तम्—

‘धिया यदक्षरश्रेण्या वर्णाद्वर्णं पदात्पदम् ।

शब्दार्थचिन्तनं भूयः कथ्यते मानसो जपः’ ॥

(नृ. पु. ५८. ८२; ल. हा. स्मृ. ४. ४४.)

इति । त्रयाणां तारतम्यं च तेनैवोक्तम्—

१. -2. reads श्रेय स्यात् for श्रेयान् स्यात्. २. Here all manuscripts except A. read -स्वरितैः, which is the proper word. ३. The Nrisinha Purāṇa reads शब्दमुच्चारयेद्वाचा जपः स वाचिकः, and the Laghu Hārīta मन्त्रमुच्चारयन् वाचा जपयज्ञस्तु वाचिकः. ४! The Laghu Hārīta reads किञ्चिदोष्टौ प्रचालयेत् and किञ्चित्छ्रवणयोग्यः स्यात् स उपांगुजपः स्मृतः, and the Nrisinha Purāṇa reads किञ्चिन्मन्त्रं स्वयं विद्यात् उपांगु स जपः स्मृतः. ५. G. reads प्रचालयेत्. ६. D. reads धियायदक्षरः; while I. reads ध्यायेत् यदक्षरः. We find this verse in the Narsimha Purāṇa. It reads—

‘धिया यदक्षरश्रेण्या वर्णाद्वर्णं पदात् पदम् ।

शब्दार्थचिन्तनं ध्यानं तद्वक्तं मानस जपः ॥

and Laghy Hārīta reads—

धिया पदाक्षरश्रेण्या अवर्णमपदाक्षरम् ।

शब्दार्थचिन्तनाभ्यां तु स उक्तो मानसो जपः ॥

७. D. omits च.

‘उत्तमं मानसं जप्यमुपांशु मध्यमं स्मृतम् ।
 अधमं वाचिकं प्राहुः सर्वमन्त्रेषु वै द्विजाः ॥
 वाचिकस्यैकमेकं स्यादुपांशु शतमुद्भ्यते ।
 सहस्रं मानसः प्रोक्तो मन्त्रं त्रि-मृगु-नारदैः’ ॥

इति । जपनियममाह शौनकः—

‘कृत्वोत्तानौ करौ प्रातः सायं चार्धमुखौ तथा ।
 मध्ये स्कन्ध-कराभ्यां तु जप एवमुदाहृतः ॥
 मनःसन्तोषणं शौचं मौनं मन्त्रार्थचिन्तनम् ।
 अव्यग्रत्वमनिर्वेदो जपसम्पत्तिहेतवः’ ॥

इति । मनुरपि—

‘पूर्वा सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेत् सावित्रीमार्कदर्शनात् ।
 पश्चिमां तु समासीनः सम्यगृक्षविभावनात्’ ॥

(म. स्मृ. २. १०१)

इति । मध्याह्ने जपस्य नियमः वायुपुराणे दर्शितः—

‘तथा मध्याह्नसन्ध्यायामासीनः प्रङ्मुखो जपेत्’ ॥

इति । वर्ज्वानाह व्यासः—

१. D. reads उपांशुर्मध्यमः स्मृतः. and for the same I. reads उपांशुं मध्यमं स्मृतम् which seems to be incorrect. २. I. reads उपांशुः. ३. I. reads साहस्रो मानसः. ४. F. and G. substitute वा for चा. ५. All others except A. and I. substitute ततः for तथा. ६. J. reads through mistake स्तम्ब-कराभ्यां. ७. B. C. E. F. and G. read सम्यगृक्षविभावनात्, and H. सम्यगर्क्षविभावनात्. ८. B. C. D. E. F. and G. read मध्याह्न-जपस्य. ९. All others except A. and I. omit वायु-, and read only पुराणे for वायुपुराणे. १०. B. C. E. F. and H. read तथा च मध्यसन्ध्यायाम्; while G. reads तथा मध्यमसन्ध्यायाम्.

‘पू. संक्रामेन् न च हसन् न पार्श्वमवलोकयन् ।
 नापाश्रितो न जल्पन्थ न प्रावृत्तिरास्तथा ॥
 न पदा पादमाक्रम्य न चैव हि तथा करौ ।
 न चासमाहितभना न च सश्वावयन् जपेत् ॥

इति १ बौधायनो ऽपि—

‘नाक्षेरधः संस्पर्शं कर्मसंयुक्तो वर्जयेत् ।

(बौ. स्म. १. ५, १८)

इति २ व्यासो ऽपि—

‘जपकाले न भूषित व्रत-होमादिकेषु च ।

एतेष्वेवावसक्तस्तु यद्यागच्छन् द्विजोत्तमः ॥

अभिवाद्यन्ततो विप्रं योगक्षेमं च कीर्त्तयेत् ।

इति ३ योगियाज्ञवल्क्यो ऽपि—

‘यदि वाग्यमलोपः स्याज्जपादिषु कदाचन ।

व्याहरेद्वैष्णवं मन्त्रं स्मरेद्वा विष्णुमव्ययम् ॥

इति ४ संवर्त्तो ऽपि—

‘लोकवार्त्ताऽऽदिकं श्रुत्वा दृष्ट्वा स्मृष्ट्वा प्रभाषितम् ।

संख्यां विना च यज्जपेत् तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥

इति ५ प्रभाषितं बहुभाषिणं पुरुषमित्यर्थः । गौतमो ऽपि—

१. D. reads न संक्रमन्, and G. चङ्क्रमन् for न सङ्क्रमन्. २. A. and I. read नापाश्रितो, and G. नापश्रितो. ३. I. reads संस्पर्शनं. ४. D. reads कर्मयुक्तो विवर्जयेत्, and G. कर्मयुक्तो हि वर्जयेत्. ५. A. omits व्यासो ऽपि. ६. B. C. E. and G. read यथागच्छन्, B. and H. पथा ऽऽगच्छन्. ७. D. reads विप्राः. ८. H. reads स्मृष्ट्वा ऽदृष्ट्वा. ९. B. C. E. F. and H. read जप्यं. १०. B. C. D. and F. read बहुभाषणं; while G. reads बहुभाषितं, and all except A. omit अर्थः. ११. गौतमो ऽपि is omitted by D.

‘गच्छतस्तिष्ठतो वाऽपि स्वेच्छया कर्म कुर्वतः ।
 अशुचेर्वा विना संख्यां तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥
 क्रोधं लोभं तथा निद्रां निखीवन-विन्मथ्मणे ।
 दर्शनं च श्र-नीचानां वर्जयेज्जपकर्मणि ॥
 आचामेत्संभवे चेष्टां स्मरेद्विष्णुं सुरार्चिन्म ॥
 ज्योतींषि च प्रशंसेद्वा कुर्याद्वा प्राणसंयमम् ॥
 ज्वलनं गाश्च विप्रांश्च यतीन्वाऽपि विशुद्ध्ये ॥

इति ॥ देशनियमस्तुं याज्ञवल्क्येनोक्तः—

‘अग्न्यागारे जलान्ते वा जपेद्देवालयेऽपि वा ।
 पुण्यतीर्थे गवां गोष्ठे द्विजक्षेत्रेऽथ वा गृहे ॥

इति । शङ्खेऽपि—

‘गृहे त्वेकगुणं जप्यं नद्यादौ द्विगुणं स्मृतम् ।
 गवां गोष्ठे दशगुणमग्न्यागारे शताधिकम् ॥
 सिद्धक्षेत्रेषु तीर्थेषु देवतायाश्च सन्निधौ ।
 सहस्र-शत-कोटीनामगन्तं विष्णुसन्निधौ ॥

इति । कूर्मपुराणेऽपि—

‘गुह्यका राक्षसाः सिद्धा हरन्ति प्रसभं यतः ॥
 एकान्ते तु शुभे देशे तस्माज्जप्यं सदाचरेत् ॥

(कू. पु. १. २. १८-८२)

इति । जपसंख्यामाह योगियाज्ञवल्क्यः—

१. A. reads क्रोधं मांघं कृतं for क्रोधं लोभं तथा. २. E. reads विधर्षणम्.
 ३. A. reads दर्शनं आदिनीचानां. ४. D. reads आचामि. ५. E. G. and
 H. read सिद्धतीर्थेषु क्षेत्रेषु. ६. B. C. F. and the text of Kūrma Purāṇa
 read समाचरेत्.

‘ब्रह्मचार्याहिताग्निश्च शतमष्टोत्तरं जपेत् ।
तानप्रस्थो यतिश्चैव सहस्रादधिकं जपेत् ॥
इति । स्मृत्यन्तरे—

‘दशौ श्राद्धे प्रदोषे च गायत्रीं दश संख्यया ।
‘अष्टाविंशत्यनूध्याये सुदिने तु यथाक्रमम्’ ॥
इति । यमो ऽपि—

‘सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशाव्राम् ।
गायत्रीं तु जपेन्नित्यं सर्वपापप्रेणाशिनीम्’ ॥
(नृ.पु. ५८.८६.ल.हा.स्मृ. ४.४८; ल.अ.स्मृ. २.१२.)
इति । आपस्तम्बोऽपि—

‘दर्भेष्वासीनो दर्भान् धारयमाणः सोद-
‘केन पाणिना प्राङ्मुखः सावित्रीं सहस्रकृत्व
आवर्त्तयेच्छतकृत्वो परिमितकृत्वो वा’ ॥
इति ।

॥ इति उपविधिः ॥

जपाद्गभूतामक्षमालामाह हारीतः—

‘शङ्करूप्यमयी माला काञ्चनीभिरथोत्पलैः ।
पद्माक्षकैश्च रुद्राक्षैर्विद्रुमैर्मणि-मौक्तिकैः ॥

१. The portion after the end of this line to यमो ऽपि. is omitted by D.
२. The portion from स्मृत्यन्तरे to यमो ऽपि is omitted by all others except A. and I. ३. G. and I. read -प्रणाशिनीम्. ४. A. omits अक्ष- and reads only मालाम्. ५. B. C. and F. read काञ्चनी स्फटिकोत्पलैः; D. काञ्चिनी निबजो-
त्पलैः; E. काञ्चिनी वल्लजोत्पलैः; G. काञ्चनी वनजोत्पलैः; and H., काञ्चनी निब-
जोत्पलैः; for काञ्चनीभिरथोत्पलैः. ६. D. reads पद्माक्षकैः.

रोजतेन्द्राक्षकैर्माला तथैवाङ्गुलिपर्वभिः
पुत्रजीवमयी माला शस्ता वै जपकर्मणि ॥

इति । गौतमोऽपि—

‘अङ्गुल्यां जपसंख्यानमेकमेकमुदाहृतम् ।
रेखयाऽष्टगुणं पुत्रजीवैर्दशगुणधिकम् ॥
शतं स्याच्छङ्खमणिभिः प्रवालैश्च सहस्रकम् ।
स्फटिकैर्दशसाहस्रं मौक्तिकैर्लक्षमुच्यते ॥’

‘मन्नाक्षैर्दशलक्षं तु सौवर्णैः कोटिरुच्यते ।
कुशग्रन्थ्या च रुद्राक्षैरनन्तफलमुच्यते ॥’

इति । अथाक्षमालामणिसंख्यामाह प्रजापतिः—

‘अष्टोत्तरशतां कुर्याच्चतुःपञ्चाशिकां तथा ।
सप्तविंशतिका कार्या ततो न्यूना न च स्मृता ॥
अष्टोत्तरशता माला उत्तमा सा प्रकीर्तिता ।
चतुःपञ्चाशिका या तु मध्यमा सा प्रकीर्तिता ॥
अधमा प्रोच्यते नित्यं सप्तविंशतिसंख्यका ॥’

इति । गौतमोऽपि—

‘अङ्गुष्ठं मोक्षदं विद्यात्तर्जनी शत्रुनाशिनी ।
मध्यमा धनकामायाऽनामिका पौष्टिकी तथा ॥’

१. B. C. E. F. G. and H. read रजतेन्द्राक्षकैः, and १. तथा चैन्द्राक्षकैः.
२. D. G. and I. read अष्टोत्तरशतं. ३. A. and I. read सप्तविंशतिकां वाय.
४. All others except A. read ततो नैवाधिका हिता, which contradicts the
statement in the following lines. ५. All others except A. and I. read
चतुःपञ्चाशिका वत्स. As we have not got this स्मृति we do not know
whether this reading is correct. ६. D. substitutes मता for तथा.

‘कनिष्ठा रक्षणी प्रोक्ता जपकर्मणि शोभना ।

अङ्गुष्ठेन जपेज्जप्यमन्यैरङ्गुलिभिः सह ॥

‘अङ्गुष्ठेन विना जप्यं कृतं तदफलं भवेत्’ ।

इति । गायत्रीजपं श्रद्धांसति व्यासः—

‘दशरुत्वः प्रज्ञा सा त्र्यहाय्यं कृतं खलु ।

तत् पापं प्रणुदत्याशु नात्र कार्या विचारणा ॥

‘शतजप्ता तु सा देवी पापैषशमनी स्मृता ।

सहस्रजप्ता सा देवी उपपातकनाशिनी ॥

लक्षजाप्येन च तथा महापातकनाशिनी ।

कोटिजाप्येन राजेन्द्र यदिच्छति तदामुयात्’ ॥

इति । यमो अपि—

‘गम्यत्र्या न परं जप्यं गायत्र्या न परं तपः ।

गायत्र्या न परं ध्यानं गायत्र्या न परं हुतम्’ ॥

इति । मनुष्ये—

‘योऽधीते ऽहन्यहन्येतां त्रीणि वर्षाण्येतन्निवृतः ।

स ब्रह्म परमप्येति वायुभूतश्चतुर्तिमान्’ ॥

(म. स्मृ. २. ८२)

इति । गौतमो अपि—

१. I. reads जपं, and all others except A. and D. read जपन्. २. D. omits अन्यैरङ्गुलिभिः सह ॥ अङ्गुष्ठेन विना जप्यं and reads अङ्गुष्ठेन जपेज्जप्यं कृतं तदफलं भवेत्. ३. G. reads अहाय्य; while D. reads त्र्यहाय्य, and I. is mistaken throughout. ४. D. reads शतं जप्ता. ५. D. E. G. and H. read पापैषशमना. ६. H. reads -पाशभा, and D. E. and G. नाशनी. ७. D. reads लक्षजाप्ये तथा देवी. ८. D. omits अपि and the first line of the next verse. ९. H. reads जाप्यं. १०. All others except C. D. and G. read अतीन्द्रियः; while I. reads अतन्त्रितः.

‘अनेन विधिज्ञा नित्यं जपं कुर्यात् प्रयत्नतः ।’

प्रसन्नो विपुलान् भोगान् भुक्तिं मुक्तिं न्व विन्दति ॥

इति ।

॥ इति सन्ध्या-जपयोः प्रकरणम् ॥

अथ होमविधिः । तत्र कूर्मपुराणे—

‘अथागम्य गृहं विप्रः समाचम्य यथाविधि ।

प्रज्वाल्य वह्निं विधिवज्जुहुयाज्जातवेदसम्’ ॥

(कू.पु.१.२.१८.५०)

इति । दक्षो ऽपि—

‘सन्ध्याकर्मावसाने तु स्वयं होमो विधीयते ।

स्वयं होमे फलं यस्यात्तदन्येन न लभ्यते ॥

होमे यत् फलमुद्दिष्टं जुह्वतः स्वयमेव तु ।’

हृयमाने तदन्येन फलमर्थं प्रपद्यते ॥

ऋत्विक् पुत्रो गुरुर्भाता भागिनेयो ऽथ विद्पतिः ।

एतैरपि हुतं यस्यात्तद्धुतं स्वयमेव हि’ ॥

इति । विद्पतिर्जामाता । स्वयं होम एव मुख्यः । तद-
भावे ऋत्विगीदिहोमः । तत्र विशेषः कूर्मपुराणे दर्शितः—

‘ऋत्विक् पुत्रो ऽथ वा पत्नी शिष्यो वा ऽपि सहोदरः ।

ऋष्यानुज्ञां विशेषेण जुहुयुर्वा यथाविधि’ ॥

(कू.पु.१.२.१८.५१)

इति । होतृतारतम्यं दर्शयति श्रुतिः—

१. A. reads परं for भुक्ति. २. D. omits इति. ३. All others except A. and I. substitute नु for हि. ४. All others except A. and the text of Kūrma Purāṇa read जुहुयाद्वा.

‘अन्यैः शतहुताद्धोमादेकः शिष्यहुतो वरः ।

शिष्यैः शतहुताद्धोमादेकः पुत्रहुतो वरः ॥

‘पुत्रैः शतहुताद्धोमादेको ह्यात्महुतो वरः’ ।

इति । ऋत्विगादिर्होमं यजमानसन्निधानेन भवितव्यम् ।
तदुक्तं कात्यायनेन—

‘असमक्षं तु दम्पत्योर्होमव्यं न ऋत्विगादिना ।

द्वयोरप्यसमक्षं तु भवेद्भुतमनर्थकम्’ ॥

(का. स्मृ. ३.२९.१)

इति । उभयोः सन्निधानं मुख्यम् । तदभावे त्वेकतरस-
न्निधानेनापि होतुं शक्यम् । तथा च स एवाह—

‘निक्षिप्याग्निं स्वदोषेषु परिकल्प्यात्विजं तथा ।

प्रवसेत् कार्यवान् विप्रो वृथैव न चिरं वसेत्’ ॥

(का. स्मृ. २.१९.१)

इति । होमकालोऽपि तैव दर्शितः—

‘यावत्सम्यङ् न भाव्यन्ते नभस्यक्षाणि सर्वतः ।

“लोहितत्वं” च नापैति तावत् सायं तु हूयते’ ॥

(का. स्मृ. १.१३.३)

१. All others except A. and I. omit the first line of this verse, and read as follows:—

अन्यैः शतहुताद्धोमादेकः पुत्रहुतो वरम् ।

पुत्रैः शतहुताद्धोमादेको ह्यात्महुतो वरम् ॥

But D. substitutes शिष्यहुतो वरम् for पुत्रहुतो वरम्, and the omitted line appears in the marginal correction of II. २. D. reads यदुक्तं for तदुक्तं.

३. A. omits उभयोः सन्निधानं मुख्यं, तदभावे त्वेकतरसन्निधानेनापि होतुं शक्यम् । तथा च स एवाह and reads प्रवसे विप्रो वृथैव न चिरं वसेत् in its stead.

४. D. omits च. ५. A. and I. read विभाव्यन्ते for न भाव्यन्ते. ६. The text of Kātyāyana reads न च लोहितमापैति. ७. G. reads जुहूयते, which is incorrect.

इति । आपस्तम्बो अपि—

‘समुद्रो वा एष येदहोरात्रः तस्यैते.
गाधतीर्थे यत्सन्धी तस्मात् सन्धी
होतव्यम्—इति शैलालिब्रह्मणं
भवति । नक्षत्र दृष्ट्वा प्रदोषे
निशायां वा सायम्’ ।

इति । समुद्रत्वेन निरूपितस्याहोरात्रस्य सन्धिद्वयं; सुप्र-
वेशं तीर्थं तस्मात् सन्धिर्होमकालः—इति मुख्यः कल्पः ।
नक्षत्रदर्शनादयस्त्रयः कालः सायं होमे अनुकल्पाः । एकं न-
क्षत्रोदयो नक्षत्रदर्शनं, सर्वनक्षत्रोदयः प्रदोषः, निद्रवित्तिः
निशा । प्रातर्होमकालो अपि चतुर्विधस्तेनैव दर्शितः—

‘उपस्युषोदयं समयाध्युषिते प्रातः’ ।

इति । मनुस्तु प्रथम-द्वितीयावेकीकृत्य कालत्रयमाह—

‘उदते अनुदिते चैव समयाध्युषिते तथा ।

सर्वथा वर्त्तते यज्ञ इतीयं वैदिकी श्रुतिः’ ॥

(म. स्मृ. २.१६)

इति । एतेषां लक्षणमाह व्यासः—

‘रात्र्यास्तु षोडशे भागे ग्रह-नक्षत्रभूषिते ।

काले त्वनुदितं प्राहुर्होमं कुर्याद्विचक्षणः ॥’

१. B. °C. E. F. G. and H. read य अहोरात्रस्तस्यैते गाधे तीर्थे यत्सन्धी; while D. omits य and reads अहोरात्रस्तस्यै ते तीर्थे यत्सन्धिः. २. I. reads कात्यायन- for शैलालि. ३. D. substitutes च for वा. ४. D. reads सुप्रवेशं. ५. All the manuscripts show that the following quotation is from Vyâsa, but elsewhere it is said to be a quotation from Kâtyâyana (see Râmchandra's Commentary on Manu, 2. 15). ६. All manuscripts except A. read रात्रेः षोडशमे, which is incorrect. ७. A. reads काले त्वनुदिते प्रातः, I. reads कालं त्वनुदितं प्रातः, and elsewhere the reading is कालं चानुदितं ज्ञात्वा.

तथा प्रभातसमये नष्टे नक्षत्रमण्डले ।
 रश्मिर्यावन्नदृश्येत समयाय्युषितं च तत् ॥
 रेखाभात्रस्तु दृश्येत रश्मिभिस्तु समन्वितः ।
 उदितं तं विजानीयात् तत्र होमं प्रकल्पयेत् ॥

इति । आश्वलायनस्तु अनुकल्पान्तरमाह—

‘ आसङ्गवान्तः प्रातः ’ ।

इति । होमकालः—इत्यनुवर्त्तते । अथवा सर्व एवैते कालवि-
 शेषा यथाशाखं मुख्यतयैव व्यवतिष्ठन्ते । उदितानुदितहोमवन्तः ।
 यदा तु कथाञ्चिन्मुख्यकालातिक्रमः तदा गोभिलोक्तं द्रष्टव्यम्—

‘ अथ यदि गृह्येभ्यो सायंप्रातर्होमयोर्दर्शपौर्णमासयोर्वा
 हव्यं होतारं वा नाधिगच्छेत् कथंकुर्यादिति । आसाय-
 माहुतेः प्रातराहुतिर्नात्येत्याप्रातराहुतेः सायमाहुतिः अ-
 मावास्यायाः पौर्णमासी नात्येत्यापौर्णमास्यमावास्या ’ ।

इति । ब्रौधायनो ऽपि—

‘ आ सायं कर्मणः प्रातरा प्रातः सायकर्मणः ।

आहुतिर्नातिपद्येत पार्वणं पार्वणान्तरात् ’ ॥

इति । आपन्नस्तु पक्षहोमं कुर्यात् । तथा च मरीचिः—

१. A. reads तथा च प्रातःसमये, and G. ततः प्रभातसमये. २. D. reads. रश्मिर्यावन्तु दृश्येत, which seems incorrect. ३. All others except A. and D. read समयाय्युषितस्तु सः. ४. A. reads रेखाभात्रश्च. ५. D. G. and H. read सङ्गवान्तः for, आसङ्गवान्तः, and the same I. reads आसङ्गवान्तः. ६. All others except A. and I. read यथासुखं. ७. D. E. G. and H. omit वा. ८. B. C. and F. read हव्यं वा होतारं, वा, D. E. G. and H. हव्यं होतारं नाधिगच्छेत्. ९. All others except A. D. and I. read असायकर्मणः for आ सायं कर्मणः.

‘शरीरापङ्गवेद् यत्र भयाद्वाऽऽर्त्तिः प्रजायते ।

तथाऽन्यास्वपि चापत्सु पक्षहोमो विधीयते ॥’

इति । पक्षहोमिनः तत्पक्षमध्ये आपत्तिवृत्तौ तदाप्रभृति
पुनर्होमः कर्त्तव्यः । तदाह मरीचिः—

‘पक्षहोमानथो कृत्वा गत्वा तस्मात् निवर्त्तितः ।

होमं पुनः प्रकुर्यात् न चासौ दोषभाग्भवेत् ॥’

इति । एवं होममनुतिष्ठतापि सीमोल्लङ्घने कृते पुनराधानं
कर्त्तव्यम् । तदाह कात्यायनः—

‘विहायानि सभार्यश्चेत् सीमामुल्लङ्घ्य गच्छति ।

होमकालान्त्यये तस्य पुनराधानमिष्यते ॥’

(का. स्मृ. ३. २. २.)

इति । होमकालान्त्यये तु नास्ति पुनराधानम् । तदाह
शौनकः—

‘प्रोषिते तु यदा पत्नी यदि ग्रामान्तरं व्रजेत् ।

होमकाले यदि प्राप्तः न सा दोषेण युज्यते ॥’

इति । होमकालान्तराह स एव—

‘कृतमोदनसक्त्वादि तण्डुलादि कृताकृतम् ।

व्रीह्यादि चाकृतं प्रोक्तमिति हव्यं त्रिधा नुधैः ॥

हविष्येषु यवा मुख्यास्तदनु व्रीहयः स्मृताः ।

अभावे व्रीहि-यवयोर्दध्ना वा पयसाऽपि वा ॥’

१. I. reads होमानुष्ठिताऽपि, while all others except A. omit अपि.
२. D. omits the portion from तु नास्ति to सवर्त्तादि, and reads होमकाला-
नित्यादि तण्डुलादि कृताकृतम्. ३. A reads पुनः for यदि. ४. All others
except A. and I. substitute तु for च.

तदभावे यवाग्वा वा जुहुयादुदकेन वा ।
 यथोक्तवस्त्वसंप्राप्तौ ग्राह्यं तेदनुकारि यत् ॥
 यज्ञानामिव गोधूपा व्रीहीणामिव शालयः ।
 आज्यं हव्यमर्नादेशे ओहुतीषु विधीयते ॥
 मन्त्रस्य देवतायास्तु प्रजापतिरिति स्थितिः ।

इति । आहुतिपरिमाणमाह बृहस्पतिः—

‘प्रस्थधान्यं चतुःषष्टिराहुतेः परिकीर्तितम् ।
 जिलानां तु तदर्द्धं स्यात् तदर्द्धं स्याद् घृतस्य तु’ ॥

इति । बौधायनोऽपि—

‘व्रीहीणां वा यवानां वा शतमाहुतिरिष्यते’ ।

इति । होमप्रकारः स्वगृह्योक्तविधिना द्रष्टव्यः । तदुक्तं
 गृह्यपरिशिष्टे—

‘स्वगृह्योक्तेन विधिना होमं कुर्याद्यथाविधि’ ॥

इति । विष्णुरपि—

‘बहुशुष्कैन्धने चाग्नौ सुसमिद्धे हुताग्ने ।

विधूमे लेलिहाने च हातव्यं कर्मसिद्धये ॥

यो नर्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यङ्गारे चैव मानयः ।

‘मन्दाग्निरामयावी च दरिद्रश्चोपजायते’ ॥

(का. स्मृ. १. १. १२)

इति । एतच्च ज्ञात्वैवानुष्ठेयम् । अन्यथा दोषश्रवणात् ।
 तदाहोङ्गिराः—

१. All others except A. and I. read तदनुसारि च. ०२. Except A. and G. all others read जुहोतिषु, which is grammatically incorrect.
 ३. A. and I. read बृहस्पतिः. ४. D. reads चतुःषष्टिराहुते. ५. D. reads घृतस्य तु तदर्धकर्म. ६. A. omits विष्णुरपि. ७. D. reads व्यङ्गारे.

‘स्वाभिप्रायकृतं कर्म यत्किञ्चित् ज्ञानवर्जितम् ।
क्रीडाकैर्मैव बालानां तत्सर्वं निष्प्रयोजनम्’ ॥

इति । चतुर्विंशतिमौ—

‘हृतं ज्ञानं क्रियाहीनं हतास्त्वज्ञानिनः क्रियाः ।
अपश्यन्नन्धको दग्धः पश्यन्नपि च पेङ्गुलः’ ॥

इति । श्रौत-स्मार्तयोरग्निव्यवस्थामाह याज्ञवल्क्यः—

‘कर्म स्मार्तं विवाहाग्नौ कुर्वीत प्रत्यहं गृही ।
दायकालाहते वाऽपि श्रौतं वैतानिकाग्निषु’ ॥

(या. स्मृ. १.१७) .

इति । वैतानिका गार्हपत्यादयः । यस्य पुनः श्रौत-स्मार्ता-
ग्निद्वयं तस्यानुष्ठानप्रकारमाह भरद्वाजः—

‘होमं वैतानिकं कृत्वा स्मार्तं कुर्याद्विचक्षणः ।
स्मृतीनां वेदमूलत्वात् स्मार्तं केचित् पुरा विदुः’ ॥

इति । शातातपो अपि—

‘श्रौतं यत् तत् स्वयं कुर्यादन्यो अपि स्मार्तमाचरेत् ।
अशक्तौ नैव मप्यन्यः कुर्यादाचारमन्ततः’ ॥

इति । उक्तस्याग्नेर्नित्यतामाह गर्गः—

‘कृतदारो नैव तिष्ठेत् क्षणमप्यग्निना विना ।
तिष्ठेत् चेद्विजो ब्राह्म्यस्तथा च पतितो भवेत्’ ॥

१. A. reads -कर्म च. २. I. reads अज्ञानतः. ३. I. reads पेङ्गुलः. A. and I. read श्रौत-स्मार्तयोरपि for श्रौत-स्मार्तयोरग्निः, and E. omits the portion from श्रौत-स्मार्त to स्मार्ताग्निद्वयं and D. is mistaken throughout.
५. A. reads -व्यवस्था- for -प्रकार-. ६. All others except A. and I. read श्रौतं यत् स्यात्. ७. All others except A. and I. read न वै for नैव.

‘यथा ज्ञानं यथा भार्या वेदस्याध्ययनं यथा ।

तथैवोपासनं दृष्टं नोऽतिष्ठेत्तद्वियोगतः’ ॥

इति । सत्यां वैदिकानुष्ठानशक्तौ न स्मार्त्तगात्रेण पेरितुष्येत् । तदाह स एव—

‘यो वैदिकमनादृत्य कर्म स्मार्त्तैतिहासिकम् ।

मोहात्समाचरेद्विप्रो न स पुण्येन युज्यते ॥

‘प्रधानं वैदिकं कर्म गुणभूतं तथेतरत् ।

गुणनिष्ठः प्रधानं तु हित्वा गच्छत्यधोगतिम्’ ॥

इति । अशक्तं प्रति व्यास आह—

‘श्रौतं कर्तुं न त्रैच्छक्तः कर्म स्मार्त्तं समाचरेत् ।

‘तत्राप्यशक्तः करणे सदाचारं लभेद्बुधः’ ॥

इति ॥ होमं प्रशंसत्यङ्गिराः—

‘यो दद्यात् काञ्चनं मेरुं पृथिवीं च ससागराम् ।

सत् सायं प्रातर्होमस्य तुल्यं भवति वा न वा’ ॥

इति । होमान्ते भस्म धार्यम् । तदाह बृहस्पतिः—

‘नर्यं भस्माग्निहोत्रान्तै धार्यमेवाग्निहोत्रिभिः ।

अनाहिताग्नेर्ब्रह्माख्यमौपासनसमुद्भवम्’ ॥

इति । ‘हुत्वा चैव तु भस्मजा’ इत्यादि स्मृत्यन्तरं च ।

॥ इति होमप्रकरणम् ॥

१. All others except A. and D. read न तिष्ठेत्तद्वियोगतः. २. I. reads सत्यमपि. ३. I. reads परितुष्येत्. ४. All others except A. and I. read स्मार्त्तैतिहासिकम्. ५. I. reads श्रौतं कर्तुं न चेच्छक्तः कर्म. ६. All others except A. and I. read अत्राप्यशक्तः. ७. A. and I. read सायं-प्रातर्होमस्य. The metre of the verse according to our reading is not observed, but it is not of much importance. ८. The portion from होमन्ते to स्मृत्यन्तरं च is omitted by all others except A. and I.

तदेवं 'सुध्या स्नानं जपो होमः'— इत्यस्मिन्मूल-
वचने होमान्तानि कर्माणि निरूपितानि । तान्येतान्यष्टधा
विभक्तस्य दिनेस्य प्रथमभागे समापनीयानि । यद्यपि मध्याह्न-
स्नानादीनि निरूपितानि तथापि तेषां 'प्रातःस्नानादिप्रसङ्गेन',
निरूपितत्वात् आद्यभागे न कर्तव्यता । दिवसस्याष्टधा
विभागं तत्र कर्तव्यविशेषं न्व दक्षो दर्शयति—

‘दिवसस्याद्यभागे तु कृत्यं तस्योपदिश्यते ।

द्वितीये च तृतीये च चतुर्थे पञ्चमे तथा ॥

षष्ठे च सप्तमे चैव अष्टमे च, पृथक् पृथक् ।

विभागेष्वेव यत् कर्म तत् प्रवक्ष्याम्यशेषतः’ ॥

(द. स्मृ. '२. ३-४)

इत्यादिना ।

अथ मूलवचनानुसारेण देवतापूजनं वक्तव्यम् । तच्च
पूजनं प्रातर्होमानन्तरम्—इति केचित् । तदाह मरीचिः—

‘विधाय देवतापूजां प्रातर्होमादनन्तरम्’ । . .

इति ।

१. D. omits दिनस्य. २. A. reads -नाभिहितत्वात्; while all others except D. read निरूपितानि. ३. All others except A. D. and II. omit दक्ष, but the following quotation we find in the 'Dakṣa Smṛiti. If the word दक्ष is omitted, the two verses in the quotation would appear to have been from the Parāśara Smṛiti, but we do not find the same in that Smṛiti. ४. B. C. D. G. and II. read दिवसस्याष्टभागे, but it seems incorrect. ५. All others except A. and I. read विभागेष्वेव for विभागेष्वपि. ६. D. and I. read कर्तव्यम्, which is quite useless. ७. I. reads तथा च for तदाह; while D. omits the following—केचित् तदाह मरीचिः—

‘विधाय देवतापूजां प्रातर्होमादनन्तरम्’ इति.

ब्रह्मयज्ञजपानन्तरम्—इत्यन्ये । तथा च हारीतः—

‘कुर्वीत देवतापूजां जपयज्ञादनन्तरम्’ ।

इति । कूर्मपुराणे अपि—

‘निष्पीड्य स्नानवस्त्रं वै समाचम्य च वाग्यतः ।

‘स्वैर्मन्त्रैरर्चयेद्देवान् पत्रैः पुष्पैस्तथाऽम्बुभिः’ ॥

(कू. पु. १.२.१८.९०)

इति । तत्र वयं जपयज्ञानन्तरं देवपूजां निरूपयिष्यामः ।

प्रातर्होमादनन्तरभावीनि ब्रह्मयज्ञान्ताणि मूलवचनानुक्तान्य-
प्यग्निक्रमप्राप्तत्वात्तान्युच्यन्ते । होमानन्तरकृत्यमहिं दक्षः—

‘देवकार्यं ततः कृत्वा गुरु-मङ्गलवीक्षणम्’ ॥

(द. स्मृ. २. २३)

इति । मङ्गलमादक्षादि । तदुक्तं मत्स्यपुराणे—

‘रोचनां चन्दनं हेम मृदङ्गं दर्पणं मणिम् ।

गुरुमग्निं च सूर्यं च प्रातः पश्येत् सदा बुधः’ ॥

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘स्वाचान्तश्च ततः कुर्यात् मुमान् केशप्रसाधनम् ।

आदर्शाञ्जन-माङ्गल्य-दूर्वाद्यालम्भनीनि च’ ॥

(वि. पु. ३.११.२१)

१. D. reads

निष्पीड्य स्नानवस्त्राणि समाचम्य च वाग्यतः ।

देवतां पूजयेद्धूपैर्मन्त्रैः पुष्पैस्तथाऽम्बुभिः॥

२. I. reads ततः for तत्र, and B. C. F. and I. omit वस्त्रं. ३. D. and I. read होमानन्तरभाविणि. ४. D. reads आह्निककर्मत्वेन प्राप्तत्वात्. ५. C. and F. read कूर्मपुराणे; while B. D. E. G. and H. read only पुराणे. ६. B. D. and F. read रोचना; while I. reads रोचनं. ७. The text of Vishnu Purāṇa reads, आचान्तश्च. ८. B. C. and F. read आदर्शाञ्जन. ९. C. D. and G. read ‘पूर्वाद्या’, which appears probably to be a mistake.

इति । ब्रह्मपुराणे अपि—

‘स्वमात्मानं तु धृते पश्येद्यदीच्छेच्चिरजीवितम्’ ।

इति । नारदो अपि—

‘लोके ऽस्मिन्मङ्गलान्यष्टौ ब्राह्मणो गौर्हुताशनः ।

हिरण्यं सर्पिरादित्य आपो राज्ञा तथाऽष्टमः ॥’

एतानि सततं पश्येत् नमस्येदर्चयेच्च यः ।

प्रदाक्षिणं च कुर्वीत तथा ह्यायुर्न हीयते ॥’

(ना. स्मृ. १.७.५४, ५५)

इति । मनुरपि—

‘अग्निचित् कापलां सत्री राज्ञा भिक्षुर्महोदधिः ।

दृष्टमात्राः पुनन्त्येते तस्मात् पश्येत् निग्यशः’ ।

इति । वामनपुराणे अपि—

‘होमं च कृत्वाऽऽलभनं शुभानां

ततो बहिर्निर्गमनं प्रशस्तम् ।

दूर्वा च सर्पिर्दधि सोदकुम्भम्

धेनुं सवन्सां वृषभं सुवर्णम् ॥

• मृदामयं स्वस्तिकमक्षतांश्च

तैलं मधु ब्राह्मणकन्यकां च ।

१. II. 'and I. omits अपि. २. II. reads स्वात्मानं च, and G. स्वात्मानं तु. ३. The text of Nārada reads पश्येत्स्वयम्. ४. B. C. and F. read तस्य ह्यायुर्न हीयते; while the text of Nārada reads यथा ऽस्यायुः प्रवर्धते, and D. reads तथा ह्यायुर्हि वर्धते. ५. The text of the Vāman Purāṇa reads कृत्वा for ततो, and A. तथा for the same. ६. D. substitutes वृषभं for दूर्वा, and the text of Vāman Purāṇa दूर्वा रधि सर्पिरथोदकुम्भम्. and B. C. E. F. G. दूर्वा च सर्पिर्दधि चोदकुम्भम्. ७. B. C. E. F. G. and H. read चैत्. ८. D. reads ब्राह्मणकन्यकां च

श्वेतानि पुष्पाणि तथा शर्मां च

हुताशनं चन्दनमर्कबिम्बम् ।

अश्वत्थवृक्षं च समालभेत्

ततश्च कुर्यान्निजजातिधर्मम् ॥

(वा. पु. १४. ३५-३६)

इति । भरद्वाजो अपि—

‘कण्डूय पृष्ठतो गां तु कृत्वा चाश्वत्थवन्दनम् ।

‘उपगम्य गुरुन् सर्वान् विप्रान्श्चैवाभिवादयेत्’ ॥

इति । ब्राह्मणरुभवाये प्रथमं कस्याभिवादनमित्याका-

ङ्गायामाह मनुः—

‘लौकिकं वैदिकं वाऽपि तथाऽऽध्यात्मिकमेव च ।

आददीत यतो ज्ञानं तं पूर्वमभिवादयेत्’ ॥

(म. स्मृ. २. ११७)

इति । अभिवादनकालं स्वं नाम कीर्त्तयेदित्याह स एव—

‘अभिवादात् परं विप्रो ज्यायांसमभिवादयन् ।

असौ नामा ऽहमस्मीति स्वं नामं परिकीर्त्तयेत् ॥

भोःशब्दं कीर्त्तयेदन्ते स्वस्य नाम्नो अभिवादाने’ ।

(म. स्मृ. २. १२२-२४)

१. A. reads पुष्टगां गां तु; while B. C. F. substitute तु in the place of च.
२. D. E. G. H. and I. substitute वा for च. ३. D. reads
अभिवादनं पुरो, विप्रं ज्यायांसमभिवादयेत्.

४. All others except A. omit Visarga and read भोःशब्दं. ५. I. reads स्वस्वनाम्नाभिवादनम्; while all others except A. and the text of Mānu read स्वस्व for स्वस्य.

इति । 'अभिवादाद् परं' इति अभिवादये-इति शब्दमुच्चार्य
पश्चादेतन्नामाहं भोः- इति शब्दमुच्चारयेदित्यर्थः । अभि-
वादनप्रकारमाहापस्तम्बः-

‘दक्षिणं ब्रह्म श्रोत्रसमं प्रसार्य ब्राह्मणो
‘अभिवाद्रयीत । उरःसमं राजन्यो मध्यसमं
वैश्यः नीचैः शूद्रः’ (१६) प्राञ्जलिः ।

(आ. ध. सू. १. २. ९. १६-१७.)

इति । एकहस्तेनाभिवादनं निषेधति विष्णुः-

‘जन्मप्रभृति यत्किञ्चिच्चेतसा धर्ममाचरेत् ।

सर्वं तन्निष्फलं याति ह्येकहस्ताभिवादानात् ॥

(म. स्मृ. २. ११८)

इति । एतच्च प्रत्युत्थाय कर्तव्यम् । तदाह मनुः-

‘ऊर्ध्वं प्राणाह्युत्क्रामन्ति यूनाः स्थविरा आगते ।

प्रत्युत्थानाभिवादाभ्यां पुनस्तान् प्रतिपद्यते ॥

(म. स्मृ. २. १२०.)

इति । अभिवादितेन वक्तव्यामाशिषमाह स एव-

१. I. reads अभिवादयेत्. २. This verse is found in Manu, but three of the seven commentators on Manu has commented it. ३. Here our reading follows only A.; while all others read आपस्तम्बः for मनुः. We made a search for the verse in the Āpas-tamba Dharma Sūtra and Smṛiti, but we have not found it therein. ४. Here all others except A. read मनुः for, स एव, but if the above quotation, from Manu then there is no necessity of the word मनुः here.

‘आयुष्मान् भव सौम्येति वाच्यो विप्रो अभिवादने ।
अकारश्चास्य नाम्नो ऽन्ते वाच्यः पूर्वक्षरः श्रुतः’ ॥

(म. स्मृ. २. १२५)

इति । पूर्वमक्षरं यस्यासौ पूर्वक्षरः । पूर्वमक्षरं च सौम-
र्यात् व्यञ्जनम् । स्वराणां स्वरपूर्वकत्वासम्भवात् । ‘ततश्च
अभिवादकनामर्गतो व्यञ्जननिष्ठो ऽन्तिमस्वरः प्लावनीयः ।
अकारेणान्तिमस्वरमात्रमुपलक्ष्यते । अश्लेषनाम्नामकारान्त-
त्वासम्भवात् । तथा च सति एवं प्रयोगो भवति, आयु-
ष्मान् भव सौम्य देवदत्ता ३-इति । यस्तु प्रत्यभिवादन-
प्रकारं न जानाति स नाभिवाद्य इत्याह स एव-

‘यो न वेत्त्यभिवादस्य विप्रः प्रत्यभिवादनम् ।

नाभिवाद्यः स विदुषा यथा शूद्रस्तथैव सः’ ॥

(म. स्मृ. २. १२६)

इति । यस्तु जानन्नपि न प्रत्यभिवादनं करोति तस्य दोषो
भविष्यत्पुराणे दर्शितः-

‘अभिवादे कृते यस्तु न करोत्यभिवादनम्’ ।

‘आशिषं वा कुरुश्रेष्ठ स याति नरकान् बहून्’ ॥

इति । यमोऽपि-

१. All others read आकार- except A. I. and the text of मनु. This reading appears better, but the commentators of Manu do not accept it. २. D. and G. read पूर्वक्षरश्रुतः; ३. I. reads नामस्य- for सामर्थ्यात्. ४. All others except A. and I. read आकारेण. ५. The intermediate portion between अश्लेषनाम्नामका- and ख्यं पञ्चाब्दाख्यं कलामृतां (P. 325, L. 18) appears to be omitted in D. through writer's mistake.

‘अभिवादे तु यः पूर्वमाशिषं न प्रयच्छति’ ।
 यदुष्कृतं भवेदेस्य तस्माद्भागं प्रपद्यते ॥
 तस्मात् पूर्वाभिभाषी स्याद्वृण्डालस्यापि धर्मवित् ।
 सुरां पिबेति वक्तव्यमेवं धर्मो न हीयते ॥
 स्वस्तीति ब्राह्मणो ब्रूयादायुष्मानिति भूमिपः ।
 वर्धतामिति वैश्यस्तु गूढस्तु स्वागतं वदेत् ॥

इति । मनुरपि—

‘ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत् क्षत्रवन्धुमनामयम् ।
 वैश्यं क्षेमं समागम्य गूढमारोग्यमेव च ॥ (१२७)
 परपत्नी तु या स्त्री स्यादसम्बन्धा त्र योनितः ।
 तां ब्रूयाद्भवतीत्येवं सुभगे भगिनीति च ॥ (१२९)
 (म. स्मृ. २. १२७-१२९)

इति । ‘ज्यायांसमभिवादयेत्’ (म. स्मृ. २. १२२) इत्युक्तं
 तत्र क्रियता कालेन ज्यायस्त्वमित्यपेक्षिते आह आपस्तम्बः—
 ‘त्रिवर्षपूर्वः श्रोत्रियोऽभिवादनमर्हति’ ।
 (आ. ध. सू. १. ४. १४. १३)

इति । मनुरपि—

‘दशाब्दाख्यं पौरसख्यं पञ्चाब्दाख्यं कलाभृताम् ।
 त्र्यब्दपूर्वं श्रोत्रियाणां मल्पेनापि स्वयोजिषु ॥
 (म. स्मृ. २. १३५)

१. F. reads भवेत्तस्य; while G. reads भवेद्यस्य. २. B., C. and F. read प्रत्यभिभाषी for पूर्वाभिभाषी. ३. E. reads जरां पिबेति. ४. A. reads ब्राह्मणं for ब्राह्मणः, and I. reads the whole verse as follows:—

स्वस्तीति ब्राह्मणे ब्रूयात् आयुष्मानिति राजानि ।

धनवानिति वैश्ये तु गूढे त्वारोग्यमेव च ॥

५. H. omits this word. ६. C. reads सख्यं. ७. E. and G. read अत्रपूर्वं. ८. The text of Manu reads स्वल्पेनापि, and G. II. read मध्येनापि.

इति । समानपुरवासिनां दशाभिः वर्षैः पूर्वः सखा भवति । ततो अधिको ज्यायान् । केलाभृतां गीतादिविद्यावतां पञ्चाब्द-पूर्वः सखा । श्रोत्रियाणां वेदाध्यायिनां त्र्यब्दपूर्वः सखा भवति । नतो अधिको ज्यायान् । स्वयोनिषु भ्रात्रादिषु सर्वेषु स्वल्पेनापि वयसा पूर्वः सखा भवति । ततो अधिको ज्यायानित्यर्थः ।

ननु-‘एते मान्याः’ (या. स्मृ. १. ३५) इत्यृत्विगादीनां याज्ञवल्क्येन पूज्यत्वाभिधानाद् यवीयसामपि तेषामभिवादनं प्राप्तं-इति चेत् । तन्न । प्रत्युत्थान-सम्भाषणाभ्यां मान्यत्वसिद्धेः । अत एव तेषामेनभिवाद्भवमाह गौतमः-

‘ऋत्विक्-श्वशुर-पितृव्य-मातुलानां

तुं यवीयसां प्रत्युत्थानाभिवादनम्’ ।

(गौ. स्मृ. ६. ४)

इति । अभिवादनं अभिभाषणम् । यथा च बौधायनः-

‘ऋत्विक्-श्वशुर-पितृव्य-मातुलानां तु

यवीयसां प्रत्युत्थानाभिभाषणम्’ ।

(बौ. स्मृ. १. २. ३. ४५)

१. H. omits कलाभृतां गीतादिविद्यावतां पञ्चाब्दपूर्वः सखा । श्रोत्रियाणां वेदाध्यायिनां त्र्यब्दपूर्वः सखा भवति । ततो अधिको ज्यायान्. This appears to be omitted through writer's mistake. २. I. omits गीतादि-. ३. G. and I. read -मभिवाद्यत्वं- for -मनभिवाद्यत्वं-. ४. D. and G., omit तु. ५. D. reads प्रत्युत्थानाभिभाषणम्. This reading is better, and if the same is taken there seems no necessity of the author's definition which he further gives of the word अभिवादेन. The text of Gautama reads प्रत्युत्थानमनाभिवाद्याः. ६. I. reads तथा and omits च; while all others except A. read तथा च for यथा च. D. omits the whole quotation from तथा च..... to अभिभाषणम्. इति.

इति । एतच्च ब्राह्मणविषयम् । तथा च शांतातपः—

‘अभिवाद्यो नमस्कार्यः शिरसा वन्द्य एव च ।

ब्राह्मणः क्षत्रियश्चैस्तु श्रीकामैः सादरं रुंदा ॥

नाभिवाद्यास्तु विप्रेण क्षत्रियाद्याः कथञ्चन ।

ज्ञान-कर्म-गुणोपेता यद्यप्येते बहुश्रुताः ॥’

अभिवाद्य द्विजः शूद्रं सचैलं ज्ञानमाचरेत् ।

ब्राह्मणानां शतं सम्यगभिवाद्य विशुद्ध्यति ॥’

इति । विष्णुरापि—

‘सभासु चैव सर्वासु यज्ञे राजगृहेषु च ।

नमस्कारं प्रकुर्वीत ब्राह्मणान्नभिवादयेत् ॥

इति । गुर्वादौ तूपसंग्रहणमाह गौतमः—

‘गुरोः पादोपसंग्रहणं श्रातः’ ।

(गौ. स्मृ. १. १९)

इति । गुरुरत्राचार्यः । यतः स एवाह—

‘मातृ-पितृ-तद्वन्धूनां पूर्वजानां विद्यागुरूणां

तद्वुरूणां च’ ।

(गौ. स्मृ. १. १९)

इति । उपसङ्ग्रहणलक्षणं मंनुराह—

‘व्यत्यस्तपाणिना कार्यमुपसंग्रहणं गुरोः ।

सव्येन सव्यः स्पष्टव्यो दक्षिणेन च दक्षिणः’ ॥

(म. स्मृ. २. ७२)

१. D. reads सर्वत्र मुरा. २. H. and I. read गुर्वारूपसंग्रहणम्. ३. I. reads पूर्वजातानां.

इति । गुरोः सव्य-दक्षिणौ पादौ स्वक्रीयसव्य-दक्षि-
णाभ्यां पाणिभ्यां स्पष्टव्यौ इत्यर्थः । बौधायनो अपि—

‘श्रोत्रे^१ संस्पृश्य मनः समाधायाधस्ताज्जान्वोरा षड्भ्याम्’ ।

(बौ. स्मृ. १. २. ३. २७)

इति । उपसंग्रहणं कुर्यादिति शेषः । एतच्च गुरुपत्नी-
नामपि कार्यम् । तथा च मनुः—

‘गुरुवत् प्रतिपूज्याः स्युः सवर्णा गुरुयोषितः ।

असवर्णास्तु सम्पूज्याः प्रत्युत्थानाभिभाषणैः॥ (२१०)

भ्रातृभार्योपसंग्राह्या सवर्णा ह्यन्यहन्यपि ।

विप्रोष्य तूपसंग्राह्या ज्ञाति-सम्बन्धियोषितः॥ (२३२)

(म. स्मृ. २. १३२-२१०)

इति । एवमविशेषेणोपसंग्रहणे प्राप्ते कचिदपवादमाह स एव-

‘गुरुपत्नी तु युवतिर्नाभिवाद्येह पादयोः ।

पूर्णविंशतिवर्षेण गुण-दोषौ विजानता । (२१२)

अभ्यञ्जनं स्नापनं च गात्रोद्वर्तनमव च ।

गुरुपत्न्या न कार्याणि केशानां च प्रसार्धनम् । (२११)

(म. स्मृ. २. २११-२१२)

इति । किं तर्हि तत्र कर्तव्यमित्यपेक्षितं स एवाह—

१. पाणिभ्यां is omitted by all others except A. and I.
२. D. reads श्रोत्रं for श्रोत्रे. ३. The text of Baudhāyana (edited by E. Hultzsch) reads मनःसमाधानार्थम्, but this is a mistake, neither the commentator on the text does allow this reading nor our manuscripts follow it. ४. B. C. and F. read -रापीड्यम्. Here I. is quite mistaken in adding the word उपसंग्रहणम् to the quotation of Baudhāyana. ५. I. reads गात्रोत्सादनम्, but except A. all others read गात्रोद्वाहनम्. ६. D. reads प्रकाशनम्.

‘कामं तु गुरूपत्नीनां युवतीनां युवा भुञ्चि ।
विधिवद्वन्दनं कुर्यादसावहमिति ब्रुवन् ॥’
विशेष्य पादग्रहणमन्वहं चाभिवादनम् ।
गुरुदोषेषु कुर्यात् सतां धर्ममनुस्मरन् ॥

(म. स्मृ., २. २१६-२१७)

इति । अभिवादने वर्ज्यानाह आपस्तम्बः—

‘न सोपानद्वेष्टितशिरा अनवहितपाणिर्वाभिवादेयीत’ ।

(आ. ध. सू. १. ४. १४, २२) --

इति । शब्दोऽपि—

‘नोदकुम्भहस्तोऽभिवादेयेत् न भिक्षयं चरन्
पुष्पाग्रहस्तो नाशुचिः न जपन् देव-पितृ-
कार्यं कुर्वन् न शयानः’ ।

इति । आपस्तम्बोऽपि—

‘तथा विषमगतायाऽगुरवे नाभिवाद्यम् । (१५)

तथा अप्रयताय । (१९) अप्रयतश्च न प्रत्य-

भिवदेत् । (२०) प्रतिवयसः स्त्रियः’ । (२१)

(आ. ध. सू. १. ४. १५-२१)

१. G. reads विप्रोऽप्यपादग्रहणम्. २. A. and D. read अवहित-. ३. C. and F. read अभिवादेयत्. ४. All others except A. and I. omit न. ५. D. reads रक्तपुष्पाग्रहस्तो नाशुचिम् for न पुष्पाग्रहस्तो नाशुचिः. ६. G. omits through mistake—

‘न देव पितृकार्यं कुर्वन् न शयानः’—इति । आपस्तम्बोऽपि—‘तथा विषम-
गतायाऽगुरवे नाभिवाद्यम् । (१५) तथा अप्रयताय । (१९) अप्रयतश्च न
प्रत्यभिवदेत् । (२०) प्रतिवयसः—

७. Except all, others read विषमगताय गुरवे, but we follow the text of Apastamba Dharma Sūtra. ८. All others except A. D. and the text of Apastamba Dharma Sūtra read प्रत्यभिवदेत्. ९. D. reads पतिः सव-
यसः स्त्रियः, and the text of Apastamba Dharma Sūtra (edited by G. Bühler) reads पतिवयसः.

इति । तथा अन्यत्र स एवाह—

‘समित्-पुष्प-कुशा-ज्याम्बु-मृदन्नाक्षतपाणिकः ।

जपं होमं च कुर्वीणो नाभिवाद्यस्तथा द्विजः ॥

प्राषण्डं पतितं व्रोत्यं महापातकिनं शठम् ।

नास्तिकं च कृतघ्नं च नाभिवादेत् कथञ्चन ॥

ध्रावन्तं च प्रमत्तं च मूत्रोच्चारकृतं तथा ।

भुञ्जानमातुरं नाहं नाभिवादन् द्विजोत्तमः ॥

वमन्तं जृम्भमाणं च कुर्वतं दन्तधावनम् ।

अभ्यक्तशिरसं चैव स्नास्यन्तं नाभिवादयेत् ॥

सूक्त-पाणिकमविज्ञातमशक्तं रिपुमानुरम् ।

‘योगिनं च तपःसक्तं कनिष्ठं नाभिवादयेत्’ ॥

इति । शानातपो अपि—

‘उदक्यां सूतिकां नार्गं भर्तृश्रीं गेर्भघातिनीम् ।

अभिवाद्य द्विजो मोक्षार्होरात्रेण शुद्ध्यति’ ॥

इति । ‘गुरोः पादोपसंग्रहणं’ इत्युक्तं एव कीदृशो गुरु-

रित्याशङ्कयामाह मनुः—

१. I. reads -मृदन्नाक्षत-, but it does not give good sense. २. I. reads -मृदन्नाक्षत- which is quite incorrect. ३. All others except A. add इति after द्विजः. ४. E. reads काव्यं. ५. D. reads उपपातकिनं तथा for महापातकिनं शठम्, and E. substitutes शठम् for शठम्. ६. I. reads नाभिवाद्यात् which is grammatically incorrect. ७. D. substitutes चापि in the place of नाहं. ८. I. reads नाभिवाद्यात्. ९. B. C. F. G. and H. read उन्मत्तं जृम्भमाणं च; while E. reads उन्मत्तं क्षपणं चैव. १०. B. C. D. E. F. G. and H. read अनाज्ञातं for मविज्ञातं. ११. G. reads ग्रेहघातिनीम्. १२. Here I. only reads तिरात्रेण, तु शुद्ध्यति for अहोरात्रेण शुद्ध्यति.

‘निषेकादीन् कर्माणि यः करोति यथाविधि ।

सम्भावयति चात्रेण स विप्रो गुरुमुच्यते’ ॥

(म. स्म. २. १४२)

इति । याज्ञवल्क्यो ऽपि—

‘स गुरुर्यः क्रियाः कृत्वा वेदमस्मै प्रयच्छति’ ।

(या. स्म. १. ३४)

इति । अध्यापनं विप्रविप्रयम् । निषेकादिकं तु सर्ववर्ण-
साधारणम् । पितृव्यतिरिक्तानामौपचारिकं गुरुत्वमाह मनुः—

‘अल्पं वा बहु वा यस्य श्रुतस्योपकरोति यः ।

तमपीह गुरुं विद्यात् श्रुतोपक्रियया तथा’ ॥

(म. स्म. २. १४९)

इति । हारीतो ऽपि—

‘उपाध्यायः पिता ज्येष्ठो भ्राता चैव महीपतिः ।

मातुलः श्वशुरस्त्राता मानामह-पितामहौ ॥

वर्णज्येष्ठः पितृव्यश्च पुंस्वेते गुरवः स्मृताः ।

१. D. reads चान्येन, and H. चाभेन for चात्रेण. २ इति is omitted by all others except A. ३. I. reads क्रियां, but the text of Yājñavalkya does not follow this reading. ४. H. omits -वर्ण-; while I. reads निषेकादिकर्तुः सर्वसाधारणं which is a mistake of the Editor. ५. From औपचारिकं गुरु- to सा मातुलानी (P. 332 L. 9) is omitted by E. ६. From तमपीह to मातुलमह-पितामहौ in the next quotation is omitted by G. ७. From -रु- to ज्येष्ठो भ्राता in the next quotation is omitted by F. ८. B. and C. read उपोपक्रियया while H. reads श्रुतोपक्रियया. ९. B. C. D. E. and H. read तथा for तथा.

माता मातामही गुर्वी पितुर्मातुश्च सोदराः ॥

अश्रूः पितामही ज्येष्ठा धात्री च गुरुवत् स्त्रियः ।

इति । अत्र पितृ-मातृग्रहणं तद्वदेते अपि मान्याः-इत्येत-
'दर्थम्' । अत एवाहं स एव-

‘अनुवर्त्तनमेतेषां मनोवाक्याय-कर्मभिः’ ॥

इति । व्यासो अपि-

‘मातामही मानुलश्च पितृव्यः श्रुगुरो गुरुः ।

पूर्वजः स्नातकश्चत्विङ् मान्यास्ते गुरुवत्सदा ॥

मातृष्वसा मातुलानी अश्रुधात्री पितृष्वसा ।

पितामही पितृव्यस्त्री गुरुस्त्री मातृवच्चेरेत् ॥

इति । मनुवरपि-

‘पितुर्भगिन्यां मातुश्च ज्यायस्यां च स्वसर्गपि ।

मातृवद्वृत्तिमानिष्ठन्माता ताभ्यां गरीयसी । (१३३)

उपाध्यायान् दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता ।

सहस्रं तु पितृन् माता गौरवेणान्तिरिच्यते ॥ (१४५)

(म. स्मृ. २. १३३-१४५)

इति । यत्तु-

१. I. reads सहोदराः for च सोदराः. २. B. C. D. F. G. H. and I. read गुरुवः स्त्रियाम्. ३. The portion from अनुवर्त्तनमेतेषां to गुरुवत्सदा in the next quotation is omitted by B. C. and F. ४. A. and D. read माता-मही for पितामही. ५. D. omits मनुवरपि. ६. G. reads वृत्तिमानिष्ठन्. ७. B.-C. E. F. and H. read उपाध्यायादशाचार्यः; while D. and G. read उपाध्या-यादशाचार्याः. ८. Here our reading follows A. and the text of Manu, but all others read पितुर्माता. ९. H. reads गौरवेभ्यामन्तिरिच्यते.

‘द्वौ गुरू पुङ्गवस्येह पिता माता च धर्मतुः ।’

धेरां गुरुतरा तावन्माता गुरुतरा ततः ॥

सयोरपि पिता प्रियान् वीज्जप्राधान्यदर्शनात् ।

अभावे वीजिनो माता तदभावे तु पूर्वजः ॥

इति पुराणवचनं तन्निधेकादिसमस्तसंस्कारपूर्वकाध्यापकपि-
तृविषयम् । अन्यथा ‘मातैव गरीयसी’ इति वचनं विरुद्धम् ।
तस्या गरीयस्त्वमुपपादयति व्यासः—

‘मासान् दशोदरस्थं यो धृत्वा शूलैः समाकुला ।

वेदनाविविधैर्दुःखैः प्रमृयेत विमूर्च्छिता ।

प्राणैरपि प्रियान् पुत्रान् मन्यते मुत्तवत्सला ।

कस्तस्यानेकृतिं कर्तुं शक्तो वर्षशतैरपि ॥’

इति । ‘उपाध्यापान् दशाचार्यः’ इति यदुक्तं, तत्रोपा-
ध्यायाचार्ययोर्लक्षणमाह मनुः—

‘एकदेशं तु वेदस्य वेदाङ्गान्यथ वा पुनः ।

यो अध्यापयति वृत्त्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते ॥ (१४१)

उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद्विजः ।

सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते ॥ (१४०)

(म. स्मृ. २. १४१-१४०)

इति । आचार्योऽपि पितृ-मात्राद्यपेक्षया गरीयानेव । तदाह

स एव—

१. I. reads पिता गुरुतरस्तद्वन्माता गुरुतरा, तथा, and D. omits the whole line. २. D. omits -समस्त-. ३. B. C. and F. substitute सा for यो. ४. I. reads ततोऽपि for वेदना. ५. The text of Manu substitutes अपि for अथ, and D. reads वेदाङ्गस्यापि for वेदाङ्गान्यथ. ६. B. C. E. F. G. and H. substitute च for तु.

‘उत्प्रादक-ब्रह्मदात्रोर्गरीयान् ब्रह्मकृः पिता ।

ब्रह्मजन्म हि विप्रस्य प्रेत्य चेह च शाश्वतम्’॥

(म. स्मृ. २. १५६; वि. स्मृ. ३०. ४४)

इति । यंस्तु बालो अपि वृद्धमध्यापयति सो अपि तस्य गरी-
यानिति स पूवाह—

‘बालो अपि विप्रो वृद्धस्य पिता भवति मन्त्रदः । (१५०)

अध्यापयामास पितृन् शिशुराङ्गिरसः कविः ।

पुनका इति होवाच ज्ञानेन परिगृह्य तान् ॥ (१५१)

ते तमर्थमपृच्छन्त देवानागतमन्यवः ।

देवाश्चैतान् समेत्योचुर्न्याय्यं वः शिशुरुक्तवान् ॥ (१५२)

अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मन्त्रदः ।

अज्ञं हि बालमित्याहुः पितृत्येव च मन्त्रदम् ॥ (१५३)

न हायनैर्न पलितैर्न वित्तैर्न न बन्धुभिः ।

ऋषयश्चक्रिरे धर्मं यो ऽनूवाणः स नो महान् ॥ (१५४)

(म. स्मृ. २. १५०—१२४)

इति । तथा च विष्णुः—

‘बाले समानवयसि अध्यापके गुरुवद्वर्तेत’ ।

(वि. स्मृ. २८. ३१)

१. D. reads 'विप्रस्यः'. २. D. reads 'अचिराङ्गिरसः', but the text of Manu does not follow this reading. ३. B. C. D. E. F. and G. read 'चैनं' for 'चैतान्'. ४. B. C. D. E. F. G. and H. read 'अज्ञो हि बाल इत्याहुः पितृत्ये-
व च मन्त्रदः'. ५. B. C. D. E. F. and G. read 'वित्तैः'; while I. reads 'वृत्तेन'.
६. From 'धर्मं' to 'गुरुवद्वर्तितव्यमित्यभिहितं पुराणसारे' is omitted by E.
७. The text of Vishnu Smṛiti reads 'बाले समानवयसि अध्यापके गुरुपुत्रे
गुरुवद्वर्तेत'. ८. D. reads 'गुरुवद्वर्तिः'; while I. reads 'गुरुवद्वर्तितव्यम्'.

इति । ज्येष्ठभ्रातैर्यपि गुरुवद्वर्त्तितव्यमित्याभिहितं पुरा-
णसारे-

‘ज्येष्ठो भ्राता पितृसमो मृते पितरि भूमुराः ।
कनिष्ठास्तं नमस्येरन् सर्वे छन्दोनुवर्त्तिनः ॥
तमेव चापजीवेरन् यथैव पितरं तथा’ ।

इति । मनुरपि-

‘पितृवत् पालयेत् पुत्रान् ज्येष्ठो भ्राता यत्रियसः ।
पुत्रवच्चापि वत्सरन् यथैव पितरं तथा’ ॥

इति । परमगुरोर्वापि तथैवेत्याह स एव-

‘गुरोर्गुरो सन्निहिते गुरुवद्वर्त्तिमाचरन्तु’ ।

(म. स्मृ. २. २०५.)

इति । आचार्यानुज्ञामन्तरणं मातुलादीन् असमावृत्तो ना-
भिवादीर्येत्याह स एव-

‘न चानिसृष्टो गुरुणा स्वान् गुरुनभिवादेयेत्’ ।

(म. स्मृ. २. २०५.)

इति । समावृत्तस्य तु नानुज्ञापेक्षा । तदाहापस्तम्भः-

‘समावृत्तेन सर्वे गुरुव उपसंग्राह्याः श्रोष्य च समागमे’ ।

(अग्र. ध. सू. १. ४. १४. ७-८)

१. B. C. and F. read ज्येष्ठत्वात्; while G. reads श्रेष्ठत्वात् for ज्येष्ठ- २. I. reads छन्दानुवर्त्तिनः which seems to be incorrect. ३. G. reads जीव्येरन्, but this form is not correct. ४. एव is omitted by all others except A. ५. G. reads तत्राऽविसृष्टो; while all others except A. I. and the text of Mann read न चाविसृष्टो. ६. All others except A. D. I. and the text of Āpaṅkamba Dharma Śāstra omit च. ७. B. C. E. F. G. and H. read समागते for समागमे.

‘आचार्य-प्राचार्यसन्निपाते’ प्राचार्यमुपसं-
‘गृह्याचार्यमुपजिघृक्षेत्’ ।

(आ. ध. सू. १. २. ८. १९)

इति । अभिवादने प्रशंसति स एव—

‘अभिवादनीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।

चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते ह्ययुः प्रज्ञा यशो बलम्’ ।

इति ।

(स. स्मृ. २. १२१)

॥ इत्यभिवादनप्रकरणम् ॥

अथ द्वितीयभागकृत्यमुच्यते । तत्र दक्षः—

‘द्वितीये च तथा भागे वेदाभ्यासो विधीयते’ ।

(द. स्मृ. २. २६)

इति । कूर्मपुराणे—

‘वेदाभ्यासं ततः कुर्यात् प्रसन्नाच्छक्तितो द्विजः’ (५५)

जपेदध्यापयेच्छिष्यान् धारयेद्वै विचारयेत् ।

‘अवेक्षेत च शास्त्राणि धर्मादीनि द्विजोत्तमाः’ ॥

(क. पु. १. २. १८. ५५-५६)

१. D. and the text of Āpastamba Dharmasūtra read उपसंजिघृक्षेत्-
चार्यम्, and B. C. E. F. H. and I. read आचार्यमुपजिघृक्षेत्; while G. omits
-प्राचार्य- and reads the whole sentence as follows:— आचार्यसन्निपाते
आचार्योपसंगृह्य आचार्यस्तु यं यं जिघृक्षेत्. २. The author appears to
quote this verse from the Āpastamba, but we do not find it in that
work. The sentence ‘अभिवादनं प्रशंसति स एव’ which is the ground for
us to think that the next verse is from the Āpastamba is omitted by
G. ३. A. has before this word वेदाभ्यासकालनिर्णयमुख्येन. ४. I. reads
कूर्मपुराणम्. ५. The text of the Kūrma Purāṇa reads अवेक्षेताथ.
६. All others except A. and the text of the Kūrma Purāṇa read द्विजो-
त्तमः, but the use of the word in the plural is more correct.

इति । वेदाभ्यासं प्रशंसति मनुः—

‘वेदमेव वेदाभ्यस्येत् तपस्तपस्यन्दिजोत्तमः॥’

वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते ॥ (१६६)

ऋषि-देव-मनुष्याणां वेदश्चक्षुः सनातनम् । १०

(म. स्मृ. २. १६६-१६७).

इति । व्यासो अपि—

‘नान्यत्वे ज्ञायते धर्मो वेदादेवैष निर्वभौ ।’

तस्मात् सर्वप्रथत्वेन धर्मार्थं वेदमाश्रयेत् ॥

इति । याज्ञवल्क्यो अपि—

‘यज्ञानां तपसां चैव शुभानां चैव कर्मणाम् ।

वेद एव द्विजातीनां निश्चेयसकरः परः ॥’

(या. स्मृ. १. ४०)

इति । तथा वेदविहीनस्य सर्वक्रियावैफल्यं मनुर्दर्शयति—

‘यथा षण्ढो ऽफलः स्त्रीषु यथा गौर्गवि चाफला ।

यथा चाज्ञे ऽफलं दानं तथा विप्रो ऽमृचो ऽफलः’ ॥

(म. स्मृ. २. १५५)

इति । एतस्मिन्नेव भागे कृत्यान्तरमाह दक्षः—

‘समित्-पुष्प-कुशादीनां स कालः समुदाहृतः ।

इति । (द. स्मृ. २. २८)

॥ इति द्वितीयभागकृत्यम् ॥

१. I. reads समभ्यस्येत्. २. D. E. G. H. and I. read तपस्तप्त्वा. ३. D. omits the portion from ऋषि. to शुभानां चैव (in line 10). ४. I. reads नान्यो ज्ञायते धर्मो वेदादेव स निर्वभौ. ५. B. C. E. F. and H. read राज्ञे for चाज्ञे; while G. reads राज्ञा. ६. I. reads अस्मिन्. ७. I. substitutes गर्गः for दक्षः, but it seems to be a mistake.

अथ तृतीयभागकर्त्तव्यम् । तत्र दक्षः

‘तृतीये च तथा भागे पोष्यवर्गार्थसाधनम्’ ।

(द. स्मृ. २. २९)

इति । कूर्मपुराणे अपे-

‘उपेयदीश्वरं चाथ योगक्षेमप्रसिद्धये ।

साधयेद्विविधानर्थान् कुटुम्बार्थं ततो द्विजः’ ॥

(कू. पु. १. २. १८. ५७; या. स्मृ. १. १०८)

‘इति ऽ. पोष्यवर्गश्च दक्षेण दर्शितः—

‘माता पिता गुरुर्भार्या प्रजा दीनः समाश्रितः ।

अभ्यागतो अतिथिश्चाग्निः पोष्यवर्ग उदाहृतः’ ॥

(द. स्मृ. २. २९)

इति । यत्रार्थं धनसाधनं यथावृत्तिं कार्यम् । तथाऽऽह

मनुः—

‘धात्रामात्रप्रसिद्धार्थं स्वैः कर्मभिरगर्हितैः ।

अङ्गेशेन शरीरस्य कुर्वीत धनसञ्चयम्’ ॥

(म. स्मृ. ४. ३)

इति । अगर्हितानि कर्माणि अध्यापनादीनि । तानि च

१. A. has धनार्जनप्रकरणम् before this word. २. F. omits कूर्म-पुराणेऽपि; while I. reads कूर्मपुराणम्. ३. G. and I. read योगक्षेमार्थ-सिद्धये. ४. The text of the Kūrma Purāṇa reads द्विजोत्तमः for ततो द्विजः. ५. Except A. and I. all others omit च. ६. B. C. E. F. G. and H. read दीनः for दीनः; while the text of Dakṣha reads दीनाः समाश्रिताः. ७. The text of Dakṣha substitutes अन्यः for अग्निः. ८. D. I. and the correction in H. read एतच्च for यात्रार्थः; while E. and G. substitute only पात्र- for the same. ९. Except A. D. and I. all others omit च निरूपितानि, but the words निरूपितानि appear in the marginal correction in H.

निरूपितानि । ननु—ब्राह्मणस्यैवैतानि कर्माणि न, 'क्षत्रिय-
विशोः । तदाह मनुः—

‘त्रयो धर्म्मा निवर्त्तरेनू ब्राह्मणात् क्षत्रियं प्रति ।

अध्यापनं याजनं च तृतीयश्च प्रातेग्रहः ॥ (७७)°

‘वैश्यं प्राति तथैवैते निवर्त्तेरान्नि ति स्थितिः’ ।

(म. स्मृ. १०. ७७-७८)

इति । अतो न तयोर्ध्यापनादिरर्जनोपायः । बाढम् ।
अत एवोपायान्तरं तेनैवोक्तम्—

‘शस्त्रास्त्रभृत्त्वं क्षत्रस्य वणिकं-पशु-कृषिर्विशः’ ॥

(म. स्मृ. १०. ७९.)

इति । वणिकं वाणिज्यम् । पशुः पशुपालनम् । याज्ञव-
ल्क्योऽपि—

‘प्रधानं क्षत्रिये कर्म प्रजानां परिपालनम् ।

कुसीद-कृषि-वाणिज्यं पशुपाल्यं विशः स्मृतम्’ ॥

(या. स्मृ. १. ११९)

इति । उपायान्तराण्याह मनुः—

‘सप्त वित्तागमा धर्म्या द्वायो लाभः क्रयो जयः ।

प्रयोगः कर्मयोगश्च सत्प्रतिग्रह एव च’ ॥

(म. स्मृ. १०. ११९)

१. A. निवर्त्तन्ते. २. B. C. E. F. G. and H. read पशुकृषी. ३. G. and H. read पशुपाल्यं, which is incorrect. ४. B. C. and F. read -योगाश्च.

इति । दायी ऽन्वयागतं धनम् । लाभी, निधिदर्शनम् ।
 दाय-लाभ-क्रयान्वयागमाश्चतुर्णां तैर्णानाम् । जयः क्षत्रिय-
 स्यैव । प्रयोगो वृद्धयर्थं धनप्रदागम् । कर्मयोगः कृषि-वाणि-
 ज्यम् । प्रयोग-कर्मयोगौ वैश्यस्यैव । सत्प्रतिग्रहो विप्रस्यैव ।
 कूर्मपुराणे अपि—

‘द्विविधस्तु गृहो ज्ञेयः साधकश्चाप्यसाधकः ।

अध्यापनं याजनं च पूर्वस्याहुः प्रतिग्रहम् ॥ (२)

शिलोञ्छे वाप्याददीत गृहस्थः साधकः पुनः । (१०)

असाधकस्तुभ्यः प्रोक्तो गृहस्थाश्रमसंस्थितः ।

शिलोञ्छे तस्य कथिते द्वे वृत्ती परमर्षिभिः । (११)

अमृतेनाथ वा जीवेत् मृतेनाप्यथ वापदि ।

अयाचितं स्यादमृतं मृतं भैक्षं तु याचितम् ॥ (१२)

(कू. पु. १. २. २६. २-१२)

इति । मनुरपि—

‘कृता-ऽमृताभ्यां जीवेत् मृतेन प्रमृतेन वा ।

सत्यानृताभ्यामपि वा न श्ववृत्त्या कथञ्चन ॥

१. B. C. F. and H. read न्यायागतं; while D. reads स्वयमागतम्. २. G. omits निधि-. ३. I. omits वर्णानाम्. ४. Except A. and the text of Kûrma Purâṇa others read शिलोञ्छेनाप्यादद्यान् गृहस्थः साधकः स्मृतः, but it seems incorrect. ५. Here we follow A. and the text of Kûrma Purâṇa; while others read अमृतेनापि जीवेत् मृतेन प्रमृतेन वा, but as प्रमृत is not explained in the next line in which मृत and अमृत are explained, it seems that the latter reading is not thought proper by the author. ६. The text of Manu reads जीवेत्.

ऋतमुच्छ्रितं ज्ञेयममृतं स्यादयाचितम् ।
 मृतं तु याचितं भैक्ष्यं प्रमृतं कर्षणं स्मृतम् ॥
 सत्यानृतं तु वाणिज्यं तेन, चैवापि जीव्यते ।
 सेवा श्रवृत्तिराख्याता तस्मात्तां परिबर्जयेत् ॥

(म. स्मृ. ४. ४-६)

इति । पतितपरित्यक्तैककणोपादानमुच्छ्रितः । शाल्यादेर्नि-
 पतितपरित्यक्तबल्वरीग्रहणं शिलम् । याज्ञवल्क्योऽपि—

‘कुगूल-कुम्भीधान्यो वा व्याह्रिकोऽश्वस्तनोऽपि वा ।
 जीवेद्वाऽपि शिलोच्छेन श्रेणानेषां परः परः’ ॥

इति । कुगूलं कोष्ठकं तद्भरितधान्यसञ्चेता कुगूलधान्यः ।
 व्यहपर्याप्तधान्यसञ्चेता व्याह्रिकः । न श्वस्तनचिन्ताऽप्यस्ती-
 त्यश्वस्तनः सद्यःसम्पादक इत्यर्थः । एतेषां अश्वस्तनान्तानां
 वृज्यो मनुनोक्ता वेदितव्याः । तथा अह—

‘षट्कर्मैको भवत्येषां त्रिभिरन्यः प्रवर्तते ।’

द्वाभ्यामेकश्चतुर्थस्तु ब्रह्मसत्रेण जीव्यते ॥

(म. स्मृ. ४. ९)

१. B. C. D. E. F. G. and H. substitute प्रोक्तं, for ज्ञेयं.
 २. E. G. and H. omit अमृतं स्यादयाचितम् । मृतं तु याचितं भैक्ष्यम्, and
 read ऋतमुच्छ्रितं ज्ञेयं प्रमृतं कर्षणं स्मृतम्. The omitted portion appears,
 however, in the marginal correction of H. ३. D. and I. read
 प्रोक्तं for भैक्ष्यं. ४. H. and I. read-विख्याता; while others except A.
 D. and the text of Manu read-व्याख्याता. ५. पतितपरित्यक्तैककणो-
 पादानमुच्छ्रितः । शाल्यादेर्निपतितपरित्यक्तबल्वरीग्रहणं शिलम् is found only
 in A. and I., but it is not found in any other manuscript. ६. B.
 C. and F. read आह्रिको, and D. E. G. H. read व्याह्रिको. ७. The
 portion from कुगूलं to जीव्यते इत्यर्थः (p. ३४२, l. ४) is omitted by all
 others except A. and I.

इति । अयमर्थः—एकः कुशूलधान्यो ऽयाजनादिषट्कर्मा भवेत् । अन्यो द्वितीयः कुम्भीधान्यो याजनाध्यापन-प्रतिग्रहैर्वर्त्तेत । एकस्मिन्तीक्ष्ण्यहिकः प्रतिग्रहेतराभ्याम् । चतुर्थस्त्वश्वस्तनो ब्रह्मसत्रेणाध्यापनेन जीव्यते इत्यर्थः* । शूद्रवृत्तिस्तूशनसा दर्शिता—

‘शूद्रस्य द्विजशुश्रूषा सर्वशिल्पानि वा ऽप्यथ ।

विक्रयः सर्वपेण्यानां शूद्रकर्मैत्युदाहृतम्’ ॥

इति । याज्ञवल्क्यो ऽपि—

‘शूद्रस्य द्विजशुश्रूषा तथा ऽजीवन् वणिग्भवेत् ।

शिल्पैर्वा गिविधैर्जीवेद् द्विजातिहितमाचरन्’ ॥

(या. स्मृ. १. २०)

* अत्र मेधातिथिरेवं व्याचख्यौ—एषां कुशूलधान्यकादीनां मध्येऽह एकः कुशूलधान्यकः प्रकृतैरुच्छ-शिलायाचित-कृषि-वाणिज्यैः षट्कर्मा भवन्ति षड्भिर्जीवति । अन्यो द्वितीयः कुम्भीधान्यकः कृषि-वाणिज्ययो-निन्दितत्वात् । तस्यागे उच्छ-शिल-याचितायाचितानां मध्यादिच्छात-स्त्रिभिर्वर्त्तेत । एकस्मिन्तीक्ष्ण्यहिको ऽयाचितलाभं विहाय उच्छ-शिल्पायाचितानां मध्यादिच्छाया द्वाभ्यां वर्त्तेत । चतुर्थः पुनरश्वस्तनो ब्रह्मसत्रेण जीवति । ब्रह्मसत्रं शिल्पेच्छयोरन्यतरा वृत्तिः । ब्रह्मणो ब्राह्मणस्य सततभक्त्यात्स-त्रमित्याह । कुल्लुकभट्टस्तु—एषां गृहस्थानां मध्ये कश्चिद्गृहस्थो यो बहु-पोष्यवर्गः स प्रकृतैर्ऋतायाचित-भैक्ष-कृषि-वाणिज्यैः पञ्चभिस्तेन चैवेत्यने-नैव चशब्दसमुच्चितेन कुसीदेनेत्येवं षड्भिः कर्मभिः षट्कर्मा भवति षड्भिरेतैर्जीवति—इति व्याचकार ।

१. I. reads वापि च. २. D. reads -वर्णानां; while I. reads -वस्तूनां. ३. B., C. F. G. and H. read -कर्मैत्युदाहृतम्; while D. and E. read -कर्म उदाहृतम्. ४. D. reads द्विजादि-

इति । अजीवमिति छेदः । हारीतो अपि—

‘शूद्रधर्मो द्विजातिशुश्रूषाद्यवर्जनं क-
लत्रादिपोषणं कर्षणं पशुपालनं भारी-
वहन-पण्यापण्यव्यवहार-चित्रकर्म-नृ-
त्य-गीत-वेणु-वीणा-मृदङ्गवादनादि’ ।

इति ।

॥ इति तृतीयभागकृत्यम् ॥

अथ चतुर्थे भागे कर्त्तव्यमुच्यते । तत्र दक्षः—

‘चतुर्थे तु तथा भागे स्नानार्थं मृदमाहरेत्’ ॥

(, द. स्म. २. ३६)

इति । मध्याह्नस्नानविधिस्तु प्रसङ्गात् पूर्वमेव निरूपितः ।

अथ ब्रह्मयज्ञविधिः । तस्य स्वरूपं तैत्तिरीयब्राह्मणे दर्शितम् ।

‘यत् स्वाध्यायमधीयतैकामप्यृचं यजुः

साम वा तत् ब्रह्मयज्ञः सन्तिष्ठते’ ।

इति । लिङ्गपुराणे अपि—

‘स्वशाखाध्ययनं विप्र ब्रह्मयज्ञ इति स्मृतः’ ।

(लि. पु. १. २६. १६)

इति । तस्य कालमाह बृहस्पतिः—

१. I. reads 'सूत्रस्य. २. D. E. and G. read 'शुश्रूषापवर्जनं. ३. B. C. F. and I. read 'पण्यापण्यव्यवहारः' for 'पण्यापण्यव्यवहार-'. ४. D. omits 'वीणा-'. ५. B. C. F. and G. read यः for यत्. ६. I. reads 'मधीयतैका-'. ७. E. omits यजुः. ८. D. omits अपि.

‘स चार्वाक् तर्पणात् कार्यः पश्चाद्वा प्रातराहुतेः ।

यैश्वदेवावसाने वा नान्यदर्ते निमित्ततः’ ॥

इति । अत्र वैश्वदेवशब्देन मनुष्ययज्ञान्तं कर्म विवक्ष्यते । यतः कूर्मपुराणे अभिहितम्—

‘यदि स्यात्तर्पणादर्वाक् ब्रह्मयज्ञः कृतो न हि ।

कृत्वा मनुष्ययज्ञं तु ततः स्वाध्यायमोरभेत’ ॥

(कृ. पु. १. २. १८. १०४)

इति । श्रुतिश्च दिग्देश-कालानाह—

‘ब्रह्मयज्ञेन यक्ष्यमाणः प्राच्यां दिशि

ग्रामाद्वक्षिणदिश उदीच्यां प्रागुदीच्या-

मच्छदिदर्शने चोदित आदित्ये’ ।

इति । अच्छदिदर्शने इत्यनेन शब्देन देशविशेषो लक्षितः । छदिर्गृहाच्छादनं तृण-कटादि यत्र न दृश्यते तत्रेत्यर्थः । उदिते आदित्ये इत्यनेनोदपात् प्राचीनं कालं निषेधति । न तूदयानन्तरं विधीयते । तस्य होमकालत्वात् । मनुरपि देशादीतिकर्तव्यतामाह—

‘अपां समीपे नियतो नैत्यकं विधिमास्थितः ।

सावित्रीमध्यधीयीत गत्वाऽरण्यं समाहितः’ ॥

(म. स्मृ. २. १०४)

१. A. B. C. E. and F. read नान्यदन्ते; while I. reads नान्यस नु.
२. G. I. and the text of Kūrma Purāṇa read -माचरेत्. ३. B. C. E. F. read -कालावाह; while H. omits 'काल-'. ४. H. दच्छदिर्देश उदीच्यां प्रागुदीच्यां चोदित आदित्ये, I. -दच्छदिर्देश, &c. ५. D. and I. read अच्छदिर्देश-; while H. reads अच्छदिर्देश. ६. B. C. F. omit यत्र. ७. I. add 'सूर्ये' before उद्गीत. ८. I. reads निषेधयति. ९. I. reads नैत्यकं through mistake. १०. I. -मध्यधीयीत.

इति । उपवीताङ्गीति कर्त्तव्यतां श्रुतिराह—

‘दक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तावबनिज्य
त्रिराचमेत् द्विः परिमृज्य सकृदुपस्पृश्य शिः
रश्मिषी. नासिके श्रोत्रे हृदयमालम्ब्य’ ।

इति ।

‘दर्भाणां महर्दुपस्तीर्योपस्थं कृत्वा
आगासीनः स्वाध्यायमधीयीत’ ।

इति च ।

दक्षिणोत्तरो पाणी पादैः कृत्वा
सपवित्रावोमिति प्रतिपद्यते ।

इति च ।

‘त्रीनेव प्रायुङ्क्त भृभुवः स्वर्’ ।

इति च ।

‘अथ सावित्रीं गायत्रीं त्रिरन्वाह
पच्छो ऽर्द्धचशो, ऽर्नवानम्’ ।

इति च ।

‘प्रीमे मनसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं च’ ।

इति च ।

‘हस्ताशौच आह्वेय उतारण्येव
उत वाचोदतिष्ठन्नत ब्रज्जनुतासीन
उत शयानो ऽधीयीतैव स्वाध्यायम्’ ।

१. D. G. and I. read आचामेत्. २. G. reads त्रिः for द्विः. ३. D. reads -त्तरेण. ४. B. and C. read सर्वाम्, while F. सर्वानम्. ५. D. and G. substitute वा for च.

इति च १

‘मध्यन्दिने प्रबलमधीयीत’ ।

इति च २

‘नमो ब्रह्मणे इति परिधानीयां त्रिरन्वाह्वा ऽऽप उप-
स्पृश्य गृहानेति । ततो यत्किञ्चिद्दाति सा दक्षिणा’ ।

इति च ३

दक्षिणतः प्रदक्षिणं कृत्वेत्यर्थः । तथा च योगियाज्ञवल्क्यः—

‘प्रदक्षिणं समावृत्य नमस्कृत्योपविश्य च ।

दर्भेषु दर्भपाणिभ्यां संहताभ्यां कृताञ्जलिः ॥

स्वाध्यायं तु यथाशक्ति ब्रह्मयज्ञार्थमाचरेत्’ ।

इति । शौनकस्त्विदिकेर्त्तव्यान्तरमाह—

‘प्राणायामैर्दग्धदोषः शुक्लाम्बरधरः शुचिः ।

यथाविध्यप आचम्य ओरोर्हृद्दर्भसंस्तरम् ॥

पवित्रपाणिः कृत्वा तु उपस्थं दक्षिणोत्तरम्’ ।

इति । उदाहृतश्रुतौ सकृदुपस्पृश्येत्यस्यानन्तरं सव्यं पाणिं
पादौ प्रोक्षेदित्यध्याहर्त्तव्यम् । उत्तरस्मिन् पालवाक्ये तथा
ऽनुक्रमणात् ।

‘यैत् त्रिराचामति तेन ऋचः प्रीणाति यद् द्विः

परिमृजति तेन यजुंषि यत् सकृदुपस्पृशति

तेन सामानि यत् सव्यं दक्षिणं पाणिं पादौ

प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षुषी नासिके श्रोत्रे हृदय-

१. D. and G. reads -कर्त्तव्यतान्तर- . २. D. reads आहरेत् . ३. B. C. F. and G. omit यत् . ४. B. C. E. F. and G. read त्रिराचामयते; while I. त्रिराचामेति . ५. All others except B. C. and F. omit दक्षिणं .

मालुभते वेनाथर्वङ्गिरसो ब्राह्मणानीतिहासान्
पुराणानि कल्पान् गाथा नाराशंसीः प्रीणाति ।
इति । दर्भाणामित्यादिश्रुत्यर्थः शौनकेन दर्शितः—

‘शृग्वोदङ्गवा ग्रामान्निष्क्रम्यापि आपुस्थं शुचौ
देशे यज्ञोपवीत्याचम्याक्लिन्नवासा दर्भाणां
महदुपस्तीर्य प्राक्कुलानां तेषु प्राङ्मुख उपवि-
श्योपस्थं कृत्वा दक्षिणोत्तरौ पाणी पौदौ स-
न्धाय पवित्रवन्तौ द्वावा-पृथिव्योः सन्धिमी-
क्षमाणः संमील्य वा यथायुक्तमात्मानं मन्येत
तथायुक्तो ऽधीयीत स्वाध्यायंमोर्पूर्वा व्याह-
तयः सावित्रीमन्वाह पच्छो ऽर्धर्चगः सर्वा-
मिति तृतीयमिति शौचः ।

इति । शौचः शुचिः पुत्रः आह्वेय एवं नामक ऋषिरित्यम् ।
आत्मेति श्रुतेः संबंधः ।

‘ग्रामे मनसा ऽधीयीत उत प्रबले ऽरण्ये ।
मनसा ऽधीयीत उत वा दिवा नक्तं वा
तिष्ठन् ब्रजन्नासीनः शयानो वा’ ।

सर्वथा स्वाध्यायमधीयीतैव । न त्वद्वाशक्त्या प्रधानं परि-
त्याज्यमित्यर्थः । ब्रह्मण्यज्ञे जप्यं आश्रमेधिके दर्शितम्—
‘वेदमादौ समारभ्य तथोपर्युपरि क्रमात्’ । यद-
धीते ऽन्वहं शक्त्या तत् स्वाध्यायं प्रचक्षते ॥

१. Except A. D. and I. all others omit आदि. २. G. omits पादौ,
and E. adds after पादौ, तत्तप्यते तपो हि स्वाध्यायः. ३. G. adds the
portion विज्ञायते उपां वा एष ओषधीन् रसो यद्दर्भाः सरसमेव दृष्ट्वा करोति,
after पवित्रवन्तौ. ४. From ओर्पूर्वा- to प्रबले ऽरण्ये the intermediate
portion is omitted in I. ५. B. C. E. F. and G. read यथो- for तथो-
६. I. reads अधीतान्वहं. ७. I. reads स्वाध्यायः.

ऋचं वा ऽथ यजुर्वा ऽपि सामर्गाध्यामभापि वा ।

इतिहास-पुराणानि यथाशक्ति न हापयेत् ॥

(वृ. गौ. स्मृ. ८. ६६-६७)

इति । याज्ञवल्क्यो ऽपि-

वेदाथर्व-पुराणानि सेतिहासानि शक्तिनः ।

जपयज्ञप्रसिद्ध्यर्थं विद्यामाध्यात्मिकीं जपेत् ॥

(या. स्मृ. १. १०१)

इति ॥ ग्रहणाध्ययनवत् ब्रह्मयज्ञाध्ययनस्यानध्यायदिनेषु
परित्यागप्राप्तौ मनुराह-

वेदोपकरणे त्वैव स्वाध्यायं चैव नैत्यके ।

नानुरोधो ऽस्त्यनध्याये होममन्त्रेषु चैव हि ॥

नैत्यके* नास्त्यनध्यायो ब्रह्मसंज्ञं हि तत् स्मृतम् ।

ब्रह्माहुतिहुतं पुण्यमनध्यायवषट्कृतम् ॥

(म. स्मृ. २. १०५-१०६)

* अत्र मेधातिथिः- 'पूर्वविधिशेषो ऽयमर्थवादः । एतेन हेतुना नैत्यके
नास्त्यनध्यायः । यतो ब्रह्मसंज्ञं तत्स्मृतं सततप्रवृत्तं सत्त्वम् । यथा स-
हस्रसंवत्सरादिसत्त्वं न कदाचित् विच्छिद्यत इत्यतः सत्त्वमेवमिदमपि
ब्रह्माध्ययननिर्वर्त्य ब्रह्मसत्त्वत्वाच्च न कदाचिद्विच्छेदव्ययम् । निच्छेदे
हि सत्त्वं न स्यात् । सत्त्वत्वमिदानीं रूपकभङ्गा योजयति । ब्रह्माध्यय-
नाहुतिहुतम् । अन्यत्सत्त्वं सोमाहुत्य् हूयते । जुहोतिरनिवृत्तौ वर्तते ।
अनेकार्थत्वाद्वातूनां ब्रह्मशब्देन तद्विषया ऽध्ययनक्रिया लक्ष्यते । ब्रह्मा-
ध्ययनमाहुतिरिव इति 'उपमितं व्याघ्रादिभिः (पा. सू. २. १. ५६) इति
समासः । अनध्याये यदध्ययनं तेन वषट्कृतं यथा याज्यान्तं अविच्छेदो
वषट्कारेण क्रियत एवं चतुर्दश्यादानध्यायाध्ययनं वषट्कारस्थानीयम् ।
तत्त्वशब्देन वषट्शब्दो लक्ष्यते' इति । नन्दनस्तु- 'अधीयत इत्यध्यायो
वाज्यापुरो ऽनुवाक्यप्रदेः वषट्कृतं वषट्कारः ताभ्यां रहितं अनध्यायवष-
ट्कृतं इत्याह' । कदाचिदत्र लेखकप्रमादो ऽपि सम्भवति ।

१. I. reads सामार्ग्यमभापि. २. I. reads नैत्यके through mistake. ३.
I. reads नैत्यके through mistake. ४. G. reads पुत्रं-

इति । ब्रह्मैवाहुतिद्वेष्ट्यं तेन हुतम् । अधीयंते इत्यध्यायो
याज्यादिमन्त्रसमूहः । तेन वषट्कारेण च सहितं हुतम् ।
यतो नास्त्यनध्यायः । अतः एव श्रुतिरनध्यायनिर्देशाननूद्य
तेषु जपं प्रशंसति—

‘य एवं विद्वान्मेधे वर्षति विद्योतमाने’
स्तनयत्यवस्फूर्जति पवमाने वायाव-
भावास्थित्यां स्वाध्यायमधीते तप एव
तत् तप्यते तपो हि स्वाध्यायः ।

इति । तेष्वनध्यायेष्वल्पमेव पठनीयम् । तदाहापस्तम्बः—

‘अथ यदि वातो वायात् स्तनयेद्वा विद्योतेत वा ऽव-
स्फूर्जेद्वैकां वर्चमेकं वा यजुरेकं वा सामाभिर्व्याहरेत् ।’

(आ. ध. सू. १. ४. १२. ५)

इति । आत्म-देशयोरशुचित्वे ब्रह्मयज्ञो वर्जनीयः तथा
च श्रुतिः—

‘तस्य वा एतस्य यज्ञस्य द्वावनध्यायौ यदात्मा ऽशु-
चिर्यदेशः’ । इति । ब्रह्मयज्ञं प्रशंसति श्रुतिः—

१. G. reads -संख्येन हुतम् for -ब्रह्म्यं तेन हुतम्. २. All others except A. and I. read रहितं for सहितं. The commentator Nandana on Manu follows this reading. ३. B. C. and F. add अपि after तेषु. ४. I. reads प्रशंसति. ५. D. reads सू for य. ६. B. C. E. F. and H. omit वाया. ७. B. C. E. F. G. H. and I. read विद्योतते. ८. I. adds तथा before अवस्फूर्जते; while B. C. E. F. G. and H. read स्फूर्जेद्वै-कामृचम् for अवस्फूर्जेद्वैकां वर्चम्, and I. वैकामृचम्. and D. स्फूर्जेद्वैकां वर्चम्. ९. D. reads सामाधि.

‘उत्तमं नाकमधिरोहति उत्तमः समानानां
 भवति यावन्तं ह वा इमां वित्तस्य पूर्णां
 ददत् स्वर्गं लोकं जयति’ ।
 तावन्तं लोकं जयति । भूयांसं चाक्षय्यं चाप-
 मृत्युं जयति । ब्रह्मणः सायुज्यं गच्छति’ ।
 इति । याज्ञवल्क्योऽपि—
 ‘यं यं क्रतुमधीयीत तस्य तस्याभुयात् फलम् ।
 त्रिवित्तपूर्णपृथिवीदानस्थ फलमभुते’ ॥
 (या. स्मृ. १. ४७-४८)

इति ।

॥ इति ब्रह्मयज्ञप्रकरणम् ॥

अथ तर्पणविधिः । तत्र वसिष्ठः—

‘ऋक्-सामाथर्ववेदोक्तान् जप्यमन्त्रान् यजूंषि च ।
 जप्त्वा चैवं ततः कुर्याद्विर्वाषि-पितृतर्पणम्’ ॥

इति । बृहस्पतिरपि—

‘ब्रह्मयज्ञप्रसिद्ध्यर्थं विद्यां चाध्यात्मिकां जपेत् ।
 जप्त्वा ऽथ प्रणवं वाञ्छति ततस्तर्पणमाचरेत्’ ॥

इति । विष्णुपुराणे अपि—

१. D. omits अधि-. २. B, C, E, F, G. and H. add इति after अधिरोहति. ३. D. and I. read स्वर्गलोकं. ४. D. omits the following— जयति । तावन्तं लोकं जयति । भूयांसं चाक्षय्यं चापमृत्युं जयति । ५. B, C, E, F, G. and I. add पुनश्च before मृत्युम्; while E. reads वा पाप्मानं मृत्युं for चापमृत्युं. ६. I. omits त्रि through mistake. ७. A. and D. read अपिस्त्रैव. ८. A, B, C, E, F, G. read अपि for वाऽपि. ९. B, C. and F. omit विष्णुपुराणे अपि.

‘शुचिवस्त्रधरः स्नातो देवर्षि-पितृतर्पणम् ।
 तेषामेव हि तीर्थेन कुर्वीत सुसमाहितः ॥
 त्रिरपः प्रीणनार्थाय देवानामपवर्जयेत् ।
 तद्वर्षाणां यथान्यायं सकृच्चोपि प्रैजापतेः ॥’
 पितॄणां प्रीणनार्थाय त्रिरपः पृथिवीपतेः ।

(वि. पु. ३. ११. २६-२८)

इति । व्यासः—

‘एकैकमञ्जलिं देवा द्वौ द्वौ तु सनकादयः ।
 अर्हन्ति पितरस्त्रींस्त्रीन् स्त्रिभ्यश्चैकैकमञ्जलिम्’ ॥’

इति । आग्नेयपुरा—

‘प्रागग्नेषु सुरांस्तर्पेन्मनुष्यांश्चैव मध्यतः ।

पितॄस्तु दक्षिणाग्नेषु चैक-द्वि-त्रिजलाञ्जलीन्’ ॥

इति । अत्र अञ्जलिसङ्ख्या यथाशाखं व्यवतिष्ठते । यत्र
 शाखायां न सङ्ख्यानियमः श्रुतः तत्र विक्षल्पः । तत्रैव
 ब्रह्मसूत्रविन्यासविशेषो दर्शितः—

‘सव्येन देवकार्याणि वामेन पितृतर्पणम् ।

निर्वीतेन मनुष्याणां तर्पणं संविधीयते’ ॥

इति । सव्येनोपवीतेन वामेन प्राचीनावीतेन इत्यर्थः ।

तथा च शङ्ख-लिखितौ—

१. I. reads अयर्षाणां; while G. and H. तद्वर्षाणां. २. G. and H. read
 प्रजापते. possibly this is a mistake of the writer. ३. A. and D. read
 अमन्ति for अर्हन्ति. ४. D. substitutes च for तु. ५. Except A. D.
 and I. all others read दद्यात् द्विजलाञ्जलीन् for चैक-द्वि-त्रिजलाञ्जलीन्.
 ६. H. omits वामेन प्राचीनावीतेन.

‘उभाभ्यामपि हस्ताभ्यां प्राङ्मुखो यज्ञोपवीती
पागग्रैः कुशैर्देवतातर्पणं देवतीर्थेन कुर्यात् ।
इति । विष्णुरपि—

‘‘ततः कृत्वा निर्वीतं तु यज्ञसूत्रमतन्द्रितः ।
प्राजपत्येन तीर्थेन मनुष्यांस्तर्पयेत् पृथक्’ ॥

इति । बौधायनः—

‘अथ दक्षिणतः प्राचीनावीती पितृन्स्त्रधानमस्तर्पयामि’ ।
(बौ. स्मृ. २. ५. १०. १)

इत्यादि । यत्तु—

‘‘उभाभ्यामपि हस्ताभ्यामुदकं यः प्रयच्छति ।
स मूढो नरकं याति कालसूत्रमवाक्शिरः’ ॥
—इति व्याघ्रपादवचनं तच्छ्राद्धादिविषयम् । अत एव कार्त्तु-
जिनिः—

‘श्राद्धे विवाहकाले च पाणिनैकेन दीयते ।
‘‘तर्पणे तूभयेनैव विधिरेष पुरातनः’ ॥
इति । एतच्च तर्पणं स्थलस्थो न जले कुर्यात् । तथा च
गोभिलः—

‘नोदकेषु न पात्रेषु न कुद्धो नैकपाणिना ।
‘‘नोपतिष्ठति तत्तोयं यत्र भूमौ प्रदीयते’ ॥

१. The text of Baudhāyan omits दक्षिणतः. २. D. reads पितृभ्यः
for पितृन्. ३. All others except A. and I. read व्याघ्रपादवचनं. ४. D.
reads उवाहृतः. ५. B. C. F. and H. read स्थलस्थो नो जले कुर्यात्;
while D. स्थलस्थेनोदके कुर्यात्, and I. स्थलस्थेन नोदके कर्तव्यम् for
स्थलस्थो न जले कुर्यात्.

अथ स्थलस्थो, भूमावेव तर्पणं कुर्वीत न जलादाविति ।
तथा च विष्णुः—

‘स्थले स्थित्वा जले यस्तु प्रथच्छेदुदकं नरुः ।

नोपतिष्ठति तद्वारि पितॄणां तन्निरर्थकम् ॥

इति । अत्र विशेषमाह हारीतः—

‘वसित्वा वसनं शुष्कं स्थले विस्तीर्णबर्हिषि ।

‘विधिज्ञस्तर्पणं कुर्यान्नैकपात्रे कदाचन ॥

पात्राद्वा जलमादाय शुभे पात्रान्तरे क्षिपेत् ।

जलपूर्णे ऽथ वा गर्ते न स्थले तु विबर्हिषि ॥

केश-भस्म-तुषाङ्गार-कण्टकास्थिसमांकुलम् ।

भवेन्महीतलं यस्माद्बर्हिषा ऽस्तरणं ततः ॥

इति । यत्तु कार्णाजिनिनोक्तम्—

‘देवतानां पितॄणां च जले दद्याज्जलाञ्जलिम्’

इति तदशुचिस्थलविषयम् । तदाह विष्णुः—

‘यत्राशुचि स्थलं वा स्योदुदके देवता-पितॄन्’ ।

• तर्पयेत्तु यथाकाममप्सु सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥

इति । पात्रविशेषमाह पितामहः—

१. I. reads अतः. २. E. and G. read ऽऽवसथं. ३. D. reads निस्तीर्ण.
४. B. C. E. F. and G. omit the following three lines :—

विधिज्ञस्तर्पणं कुर्यान्नैकपात्रे कदाचन ॥

पात्राद्वा जलमादाय शुभे पात्रान्तरे क्षिपेत् ।

जलपूर्णे ऽथ वा गर्ते न स्थले तु विबर्हिषि ॥

H. also omits these lines, but we find them in the marginal correction of it. ५. D. and I. न पात्रेषु. ६. D. reads पात्रे ऽथ वा. ७. D. substitutes न for तु; while H. reads भुवि बर्हिषि. ८. D. reads -कण्टका-. ९. D. and G. read देवताः.

‘हेभ-रूप्यमयं पात्रं ताम्र-कांस्यसमुद्भवम् ।
पितृणां तर्पणे पात्रं मृण्मयं तु परित्यजेत्’ ॥

इति १. मरीचिः—

‘सौवर्णेन च पात्रेण ताम्र-रूप्यमयेन च १

और्दुम्बरेण खड्गेन पितृणां दत्तमक्षयम्’ ॥

इति । रिक्तहस्तेन न कुर्यादित्याह स एव—

‘विना रूप्य-सुवर्णेन विना ताम्र-तिलैस्तथा ।

विना मन्त्रैश्च दर्भैश्च पितृणां नोपतिष्ठते’ ॥

इति । स्मृत्यन्तरे च—

‘खड्ग-मौक्तिकहस्तेन कर्तव्यं पितृतर्पणम् ।

माणि-काञ्चन-दर्भैर्वा न शून्येन कदाचन ॥

इति । न चात्र समुच्चयो नापि समाविकल्प इत्याभिप्रेत्य
मरीचिराह—

‘तिलानामप्यभावे तु सुवर्ण-रजतान्वितम् ।

तदभावे निषिञ्चेत्तु दर्भैर्मन्त्रेण वा पुनः’ ॥

इति । तिलग्रहणे तु विशेषमाह योगियाज्ञवल्क्यः—

‘यद्वाद्भृतं निषिञ्चेत्तु तिलान् सम्मिश्रयेज्जले ।

अतो अन्यथा तु सव्येन तिला ग्राह्या विचक्षणैः’ ॥

इति । एतदलोमकप्रदेनाभिप्रायम् । तथा च देवलः—

१. G. and H. omit इति. २. A. and F. reads ताम्र-कांस्यमयेन वा; while B, C, E. and G. substitute वा for च. ३. I. reads बिल्वेन. ४. I. reads ताम्रमयैस्तथा. ५. A. reads शुष्केण; while G. शुद्धेन. ६. B, C, E. and F. read अतो नान्यत्र हस्तेन for अतो अन्यथा तु सव्येन. ७. B. reads हसोमक.

‘रोमेसंस्थानं तिलान् कृत्वा यस्तु तर्पयते पितृन् ।
पितरस्तर्पितास्तेऽरुधिरेण मलेन वा’ ॥

इति । वर्णभेदेन तिलानां विनियोगविशेषे दर्शयन्ति स एव-
‘गृहैस्तु तर्पयेद्देवान् मनुष्यान् शबलैस्तिलैः’ ।

पितृन् सन्तर्पयेत् कृष्णैस्तर्पयन् सर्वतो द्विजः’ ॥

इति । कूर्मपुराणेऽपि देवर्षि-पितृतर्पणे विशेषो दर्शितः-

‘देवान् ब्रह्मर्षीश्चैव तर्पयेदक्षतोदकैः ।

पितृन् भक्त्या तिलैः कृष्णैः स्वसूत्रोक्तविधानतः’ ॥

(.कू. पु. १. २. १८. ८८.)

इति । तिथ्यादिविशेषेण तिलतर्पणं निषेधयति । व्यासः-

‘सप्तम्यां रविवारे च गृहे जन्मदिनं तथा ।

भृत्य-पुत्र-कलत्रार्थी न कुर्यात्तिलतर्पणम्’ ॥

इति । पुराणेऽपि-

‘पक्षयोरुभयो राजन् सप्तम्यां निशि सन्ध्ययोः ।

विज्ञेय-पुत्र-कलत्रार्थी तिलान् पञ्चसु वर्जयेत्’ ॥.

इति । बौधायनोऽपि-

‘न जीवत्पितृकः कृष्णैस्तिलैस्तर्पणमाचरेत् ।

सप्तम्यां रविवारे च जन्मैर्क्षदिवसेषु च ॥.

१. B. reads सोमसंस्थान्. २. Except A. G. and H. others substitute च for वा. ३. H. omits विशेषं, and reads विनियोगं. ४. I. reads तर्पयेत् सर्वथा द्विजः. ५. The text of Kūrma Purāṇa reads this line तिलोदकैः पितृन् भक्त्या स्वसूत्रोक्तविधानतः. ६. B. C. and F. read, सक्त्या. ७. I. reads निषेधयति. ८. This is omitted by all others except A. ९. D. reads च विपिने for जन्मदिने. १०. A. and D. read पुत्र-विज्ञेयः; while B. C. E. and F. read पुत्र-भृत्यः. ११. D. omits पुराणेऽपि. १२. All others except A. and I. read विद्या-पुत्रः. १३. D. reads जन्मैर्क्षे विपिनेषु च.

गृहे निषिद्धं सतिलं तर्पणं तद्वहिर्भवेत् ।
 विवाहे चोपनयने चोले सति यथाक्रमम् ॥
 वर्षमर्द्धं तदर्द्धं च नेत्येके तिलतर्पणम् ।
 तिथि-तीर्थ-विशेषेषु कार्यं प्रेतेषु सर्वदा ॥
 इति । तर्पणीयान् दर्शयति सत्यव्रतः—
 'कृतोपवीती देवेभ्यो निवीती च भवेत्ततः ।
 मनुष्यांस्तर्पयेद्भक्त्या ब्रह्मपुत्रानृषींस्तथा ॥
 'अपसव्यं ततः कृत्वा सव्यं जान्वाच्य भूतले ।
 दर्भपाणिस्तु विभिना प्रेतान् सन्तर्पयेत्ततः' ॥
 इति । योगियाज्ञवल्क्यो अपि—
 'ब्रह्माणं तर्पयेत् पूर्वं विष्णुं रुद्रं प्रजापतिम् ।
 वेदान् छन्दांसि देवांश्च ऋषींश्चैव तपोधनान् ॥
 आचार्यांश्चैव गन्धर्वाचार्यतनयांस्तथा ।
 संवत्सरं सावयवं देवीरप्सरसस्तथा ॥
 तथा देवान् नगात्रागान् सागरान् पर्वतानपि ।
 सरितो ऽथ मनुष्यांश्च यक्षान् रक्षांसि चैव हि ॥
 पिशाचांश्च सुपर्णांश्च भूतान्यथ पशून्स्तथा ।
 वनस्पतीनोषधींश्च भूतग्रांमांश्चतुर्विधान् ॥
 सव्यं जानुं ततोऽन्वाच्य पाणिभ्यां दक्षिणामुखः ।
 तल्लिङ्गैस्तर्पयेन्मन्त्रैः सर्वान् पितृगणांस्तथा ॥

१. I. reads. वर्जयेत्. २. I. reads कृतोपवीती, H. कृतोपवीतो and B. C. E. F. कृतोपनीतो. ३. D. reads पुत्रम् for पुत्रान्. ४. From विधि-
 to अनुम् the "intermediate portion -ना प्रेतान् सन्तर्पयेत्ततः'. इति । योगि-
 याज्ञवल्क्योऽपि—'ब्रह्माणं तर्पयेत् पूर्वं वि- is omitted by F, this is a writer's
 mistake. ५. Except A, all omit this word. ६. I. omits अपि.

मातामहांश्च सततं श्रद्धया तर्पयेत् द्विजः'
इति । शौनको अपि—

‘अग्निर्विष्णुः प्रजापतिः ।’

इत्यादि । यजुः शाखिनां तु कोण्डर्षितर्पणमुक्तम्—

‘अथ काण्डर्षीनेतानुदकाञ्जलिभिः शुचिः ।

अव्यग्रस्तर्पयेन्नित्यं मन्त्रेणैवाष्टनामभिः’ ॥

इति । पितृतर्पणं प्रकृत्य पैठीनसिः—

‘अपसव्यं ततः कृत्वा स्थित्वा च पितृदिक्मुखः ।

पितृन् दिव्यान् दिव्यांश्च पितृतीर्थेन तर्पयेत्’ ॥

इति । दिव्याः वसु-रुद्रादित्याः । अदिव्याः पित्रादयः ।

योगियाज्ञवल्क्यः —

‘वसून् रुद्रांस्तथाऽदित्यान् नमस्कारसमन्वितान्’ ।

इति । तर्पयेदिति शेषः । वस्वादीनां नामानि पैठीनसि-
ना दर्शितानि—

‘ध्रुवो धर्मश्च सोमश्च आपश्चैवाऽनिलो नलः ।

प्रत्यूषश्च प्रभ्रतश्च वसवो ऽष्टौ प्रकीर्तिताः ॥’

‘अजैकपादहिर्बुध्न्यो बिरूपाक्षो ऽथ रैवतः ।’

हरश्च बहुरूपश्च त्र्यम्बकश्च सुरेश्वरः ॥’

१. D. reads गृह्या, but it seems to be a mistake. २. G. reads इत्याह. ३. B. C. E. F. G. and H. omit काण्ड- and read simply कर्षि-
तर्पणमुक्तम्. ४. Except A. all omit this word. ५. A. reads -रुद्रादयः.
६. All others except A. and I. read प्रभासश्च. ७. I. reads -वृद्धिभ्यो
through mistake.

सवित्रश्च जयन्तश्च पिनाकी च अपराजितः ।

एते रुद्राः समाख्याता एकादश सुरोत्तमाः ॥

इन्द्रो भ्राता भगः पूषा मित्रो अथ वरुणो अर्यमा ।

और्विर्विवस्वान् त्वष्टा च सविता विष्णुरेव च ॥

एते वै द्वादशा ऽदित्या देवानां प्रवरा मताः ।

एते च दिव्याः पितरः पूज्याः सर्वैः प्रयत्नतः ॥

इति । ततः स्वपित्रादींस्तर्पयेत् । तत्र प्रकारमाह
पैठीनसिः—

स्वनाम-गोत्रग्रहणं पुरुषम्पुरुषम्प्रति ।

तिलोदकाञ्जलींस्त्रीनुचैरुचैर्विनिक्षिपेत् ॥

इति । योगियाज्ञवल्क्यो अपि—

‘सुवर्णेभ्यो जलं देयं नाऽसुवर्णेभ्य एव च ।

गोत्र-नाम-स्वधाकारैस्तर्पयेदनुपूर्वशः’ ॥

इति । नामग्रहणे अपि विशेषमाह आश्वलायनः—

‘शूर्मान्तं ब्राह्मणस्योक्तं वर्मान्तं क्षत्रियस्य च ।

गुप्तान्तं चैव वैश्यस्य दासान्तं शूद्रजन्मनः ॥

चतुर्णामपि वर्णानां पितृणां पितृगोत्रतः ।

‘पितृगोत्रं कुमारीणां ऊढानां भर्तृगोत्रतः’ ॥

इति । पितृतर्पणक्रममाह सत्यव्रतः—

१. D. reads अर्धिर; while I. अहिर. २. D. reads तथा for मताः.
३. Except A. all others read सर्वे for सर्वैः. ४. Except A. all omit
this word. ५. सुनुचैरुचैर्. ६. This word is omitted in all others except
A. ७. A. reads सुवर्णेभ्यो ऽञ्जलिर्देयः. ८. A. and D. substitute बोधायनः
for आश्वलायनः, but the following verses are not found in Baudhāyana.
९. I. reads तर्पणे क्रमः; while D. omits क्रमः.

‘पितृभ्यः प्रत्यहं दद्यात्ततो मातृभ्य एव ज्ञ ।

ततो मातामहानां च पितृव्यस्य सुतस्य च’ ॥

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘दद्यात् पत्रेण तीर्थेन काम्यान् न्यान् शृणुष्व मे ॥

मात्रे प्रमात्रे तन्मात्रे गुरुपत्यै तथा नृप ।

गुरवे मातुलादीनां स्निग्धमित्राय भूभुजे ॥

(वि. पु. ३. ११. २९-३०)

इति । हारीतो अपि—

‘पित्रादीन् मात्रादीन् मातृमहादीन् पितृव्यां ..

स्तत्पत्नीज्येष्ठभ्रातृस्तत्पत्नीः मातुलांस्तत्पत्नीः

गुर्वार्योपाध्यायान् सुहृत्-सम्बन्धि-बन्धवान्

द्रव्यान्नदातृ-पोषकं-स्निग्धन्स्तत्पत्नीश्च तर्पयेत्’ ।

(हा. स्म. १२. ४)

इति । जीवत्पितृकतर्पणे विशेषमाह योगियाज्ञवल्क्यः—

‘कव्यवाङ्मनलः सोमो यमश्चैवाज्यमां तथा ।

अग्निष्वात्ताः सोमपाश्च तथा बर्हिषदो अपि च ॥

‘यदि स्याज्जीवत्पितृकस्तान् विद्याच्च तथा पितृन् ।

येभ्यो वाऽपि पित्त दद्यात्तेभ्यो वाऽपि प्रदीयते ॥

१. D. reads पितृव्यस्यानुजस्य च. २. The text of Vishnu Purāṇa reads काम्यं चान्यत् for काम्यान् न्यान्; while I. reads through mistake कामान्न्यान्. ३. I. reads भूभुजे. ४. B. C. D. and F. omit मातृमहादीन्. ५. मातामहादीन् is omitted by G. ६. D. reads पत्नी, and omits ज्येष्ठभ्रातृस्तत्पत्नीः. ७. I. reads मातुलादीन्; while D. मातुलं तत्पत्नीः. ८. I. reads -ध्यायादीन्. ९. I. reads -पोषकर्तृणः, but probably this is a mistake. १०. B. C. and F. read कव्यवाङ्मनलः; and D. कौव्यवाङ्मनलः, but it seems to be a mistake.

एतांश्चैव प्रमीतांश्चोऽप्रमीतपितृकौ द्विजः ।

इति । तर्पयेदिति शेषः । अवसन्नाञ्जलिमाह कात्यायनः—

‘पितृवंश्या मातृवंश्या ये चान्ये मत्त उदक-

मर्हन्ति तांस्तर्पयामीत्ययमवसानाञ्जलिः’ ।

(का. स्मृ. २. १२. २)

इति । आदित्यपुराणे अपि—

‘येत्र कचनसंस्थानां क्षुत्क्षोपहतात्मनाम् ।

तेषां हि दत्तमक्षय्यमिदमस्तु तिलोदकम् ॥

ये मे कुले लुप्तपिण्डाः पुत्र-द्वारविर्वजिताः ।

तेषां तु दत्तमक्षय्यमिदमस्तु तिलोदकम् ॥

इति । मत्स्यपुराणे अपि—

‘येऽवान्धवा बान्धवा वा येऽन्यजन्मनि बान्धवाः ।

ते तृप्तिमखिला यान्तु यश्चास्मत्तोऽम्बु वाञ्छति’ ॥

(वि. पु. ३. ११. ३५)

इति । विस्तरेण कर्तुमसमर्थस्य संक्षेपेण तर्पणमुक्तं विष्णुपुराणे—

१. Except A. B. C. and F. all others read प्रमीतांश्च प्रमीत-, but this is a mistake. २. The text of Kātyāyana reads पितृवंश-मातृवंशौ; while I. reads through, mistake as follows—

पितृवंश्या मातृवंश्या ये चान्ये पितरो जनाः ।

मत्तस्तूदकमर्हन्ति ये तांस्तांस्तर्पयाम्यहम् ॥

इत्यवसानाञ्जलिरिति; but this is not found in the text of Kātyāyana.

३. G. reads अत्र for यत्र. ४. All others except A. G. and H. -क्षुत्क्षोप- for -क्षोप-. ५. Except A. D. H. and I. all others एतत्कुले. ६. I. substitutes -पुत्र- for -द्वार-. ७. B. C. and F. read यश्चास्मत्तोऽभिवाञ्छति, D. यश्च मत्तोऽम्बु वाञ्छति, I. reads through mistake ये वा मत्तोऽम्बुवा-
ञ्छिताः, and the text of Vishṇu Purāṇa reads the whole line as—

ते सर्वे तृप्तिमायान्तु ये चास्मत्तोऽयकाक्षिणः ।

‘आब्रह्मस्तम्भपर्यन्तं जगत्तृप्यत्विति ब्रुवंन् ।

क्षिपेत् पयोऽञ्जकीर्त्तीस्तु कुर्यात् संक्षेपतर्पणम्’ ॥

इति । यमतर्पणं तु वृद्धमनुनोक्तम्—

‘दीपोत्सवचतुर्दश्यां कार्यं तु यमतर्पणम् ।

कृष्णाङ्गारचतुर्दश्यामपि कार्यं सदैव वा ॥

यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च ।

वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च ॥

औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने ।

वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय ते नमः’ ॥

इति । नियमस्तु स्कन्दपुराणे निरूपितः—

‘दक्षिणाभिमुखो भूत्वा तिलैः सव्यं समाहितः ।

देवतीर्थेन देवत्वात्, तिलैः प्रेताधिपो यतः ॥

इति । एवं कुर्वतः फलमाह यमः—

‘यत्र कचन नद्यां हि स्नात्वा कृष्णचतुर्दशीम् ।

सन्तर्प्य धर्मराजानं मुच्यते सर्वकिल्बिषैः’ ॥

इति । माघशुक्लाष्टम्यां भीष्मतर्पणं कुर्यात् । तदाह व्यासः—

* दीपोत्सवचतुर्दशी आश्विनकृष्णचतुर्दशी नरकचतुर्दशीति प्रसिद्धा । महाराष्ट्रेषु दीपावलीति च प्रसिद्धा ।

† यमस्य देवेष्वेवान्तर्भावात् देवतीर्थेन तर्पणं कर्तव्यम् । एवं सति देवकार्ये यवानामेव ग्राह्यत्वात् तिलग्रहणं किमर्थमिति चेत्तत्र हेतुमाह । यतः स प्रेताधिपः अतस्तिलैरेव तर्पणं कार्यमित्यर्थः ।

१. I. reads प्रेतोत्सवः, but this is a mistake. २. D. E. and H. read प्रेताधिपो यमः; while I. reads प्रेताधिपाय च.

‘शुक्लाष्टम्यां तु माघस्य दद्याद्भीष्माय यो जलम् ।

संवत्सरकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥

वैश्याघ्रपादगोत्राय सांकृत्यप्रवराय च ।

गङ्गापुत्राय भीष्माय प्रदास्ये ह्यं तिलोदकम् ।

अपुत्राय ददाम्येतत् जलं भीष्माय वर्मणे ’ ॥

इति । तर्पणप्रशंसापुराणसारे दर्शिता—

‘एवं यः सर्वभूतानि तर्पयेदन्वहं द्विजः ।

स गच्छेत् परमं स्थानं तेजोमूर्त्तिमनामयम् ’ ॥

इति । अकरणे प्रत्यवायः पुराणे दर्शितः—

‘देवताश्च स्मितृश्चैव मुनीन् यो वै न तर्पयेत् ।

देवादीनामृणी भूत्वा नरकं स व्रजत्यधः’ ॥

इति । योगिर्याज्ञवल्क्यो अपि—

‘नास्तिक्यभावाद्यस्तांस्तु न तर्पयति वै पितृन् ।

पिबन्ति देहनिःस्त्रावं पितरो ऽस्य जलार्थिनः’ ॥

इति । हारीतो अपि—

‘देवाश्च पितरश्चैव काङ्क्षति सतिलाञ्जालम् ।

अदत्ते तु भिराशास्ते श्रितियान्ति यथागतम्’ ॥

(हा. स्मृ. १४. ७.)

इति । कात्यायनो अपि—

१. I. reads वैश्याघ्रपादगोत्राय सांकृत्यप्रवराय च. २. I. reads सलिलं भीष्मवर्मणे. ३. D. reads मातवान् यो for मुनीन् यो वै. ४. I. reads याज्ञवल्क्योऽपि, but we do not find this verse in the text of Yāgyavalkya. ५. B., C. and D. read सलिलाञ्जलिम्; while E., G. and H. read सरितां जलम्.

‘छायां अथेच्छेच्छरदातपोर्त्तः

पयः पिपासुः क्षुधितोऽलमन्नम् ।

बालो जनित्रीं ज्ञाननी च बालं

योषित् पुमांसं पुरुषश्च योषाम् ॥

तथा सर्वाणि भूतानि स्थावराणि चराणि च ।

विप्रादुदकमिच्छन्ति सर्वेऽप्युदककाङ्क्षिणः ॥

तस्मात् सदैव कर्त्तव्यमकुर्वन्महतैनसा ।

युज्यते ब्राह्मणः कुर्वन् विश्वमेतद्विभर्ति हि ॥

(का. स्मृ. २. १३. ३-५)

इति । अत्र पितृगाथाः—

‘अपि नः स कुले भूयाद्यो नो दद्याज्जलाञ्जलिम् ।

नदीषु बहूतोयासु शीतलासु विशेषतः’ ॥

इति । तर्पणानन्तरं वस्त्रनिष्पीडनं कर्त्तव्यम् । तदाह

योगियाज्ञवल्क्यः—

‘यावदेवानृषींश्चैव पितॄंश्चापि न तर्पयेत् ।

तावन्न पीडयेद्वस्त्रं यो हि स्नातो भवेत् द्विजः ॥

निष्पीडयति यो विप्रः स्नानवस्त्रमतर्प्य च ।

निराशाः पितरो यान्ति शापं दत्त्वा सुदारुणम्’ ॥

इति । निष्पीडनं तु स्थले कार्यम् । तदुक्तं स्मृत्यन्तरे—

१. The text of Kātyāyana reads ‘पान्तः परः for ‘पान्तः पयः, and this is a mistake. २. The text of Kātyāyana reads सर्वाभ्युदककाङ्क्षि च; while all others except A. and I. substitute हि for अपि. ३. G. substitutes अय for अत्र. ४. A. reads पुण्यतीयासु. ५. H. reads पितृभैव प्रतर्पयेत्. ६. B. reads मानवस्तमतर्पिताः, C. and F. read मानवैस्तमतर्पिताः, and D. E. G. H. अतर्पिते for अतर्प्य च. ;

‘वस्त्रनिष्पीडितं* तोयं श्राद्धे चोच्छिष्टभोजनाम् ।

भागधेयं श्रुतिः प्राह तस्मान्निष्पीडयेत् स्थले ’ ॥

इति । विष्णुपुराणे—

‘आचम्य च ततो दद्यात् सूर्याय सलिलाञ्जलिम् ।

नमो विवस्वते ब्रह्मन् भास्वते विष्णुतेजसे ।

जगत्सवित्रे शुचये सवित्रे कर्मदायिने ’ ॥

(वि. पु. ३. ११. ३७-३८)

इति ।

॥ इति तर्पणप्रकरणम् ॥

अथ देवार्चनम् । इत्थं मूलवचनानुक्तानि तर्पणान्तानि कर्माणि निरूपितानि । अथ मूलवचनोक्तं क्रमप्राप्तं देव-
तार्चनं निरूप्यते । तथा च नृसिंहपुराणम्—

‘जले देवान् नमस्कृत्य ततो गच्छेद् गृहं बुधः ।

गौरुषेण तु सूक्तेन ततो विष्णुं समर्चयेत् ’ ॥

(नृ. पु. ५८. ९२-९३)

*श्राद्धे विप्राणामुच्छिष्टं ‘यजमानकुले जाता दासा दास्यो ऽन्वकाङ्क्षि-
ण’ इत्यादिना देयं तस्य ये दासादयो अधिकारिणः त एव हि वस्त्रनिष्पी-
डनोदकस्याधिकारिण इत्यर्थः ।

१. D. reads भोजनम्. २. B. C. E. and F. read ऽमिततेजसे.
The text of Nrisinha Purāṇa reads these two lines as follows:—

जले देवं नमस्कृत्य ततो गृहगतः पुनः ।

विधिना पुरुषसूक्तेन तत्र विष्णुं समर्चयेत् ॥.

३. All others except A. and I. substitute च for तु.

इति । आग्नेयपुराणे अपि—

‘मन्त्रैर्वैष्णव-रौद्रेस्तु सावित्रैः शाक्तिकैस्तथा ।
विष्णुं प्रजापतिं वाऽपि शिवं वा भस्करं तथा ॥
तुल्लिङ्गैरर्चयेन्मन्त्रैः सर्वदेवान् समाहितः’ ॥ •

इति । कूर्मपुराणे अपि—

‘ब्रह्माणं शङ्करं सूर्यं तथैव मधुसूदनम् ।
अन्यांश्चाभिमतान् देवान् भक्त्या चाऽक्रोधनो नरैः ॥
स्वैर्मन्त्रैरर्चयेन्नित्यं पत्रैः पुष्पैस्तथाऽम्बुभिः’ । •

(कू. पु. १. २. १८. १०-११.)

इति । स्मृत्यन्तरे—

‘आदित्यमम्बिकां विष्णुं गणनाथं महेश्वरम्’ ।
इत्यादि । यद्यपि पूर्वं मूलवचनव्याख्याने पूजनीयो देव
एक एव—इति महता प्रबन्धेन प्रपञ्चितं तथापि दर्श-
नभेदमाश्रित्य विष्णु-शङ्करादिभेदोपन्यासो न विरुद्ध्यते
दर्शनभेदश्च पुराणसारे वर्णितः—

‘शिवं च वैष्णवं शाक्तं सौरं वैनायकं तथा ।

इकान्दं च भक्तिमार्गस्य दर्शनानि षडेव हि’ ॥

१. H. and I. omit अवि. २. I. reads उत्तर. ३. The text of Kūrma Purāṇa reads स्याम्बुभिः. ४. All others except A. and I. omit the following portion—

स्मृत्यन्तरे—

‘आदित्यमम्बिकां विष्णुं गणनाथं महेश्वरम्’ इत्यादि । •

५. Except A. and I. all others read पूर्ववचन- for पूर्वं मूलवचन-. ६. B. C. and F. read this verse as follows:—

‘शिवं पाशुपतं शाक्तं सौरं वैनायकं तथा । •

वैष्णवं च तथा षष्ठं दर्शनानि षडेव हि’ ॥

E. follows this reading, ‘but differs in reading वैष्णवं चेति होयानी for वैष्णवं च तथा षष्ठं. D. also follows this reading, but only in the first line,

इति । तत्र वैष्णवदर्शनानुसारी पूजाक्रम आश्वमेधिके
निरूपितः—

‘शृणु पाण्डव तत्सर्वमेर्चतक्रममात्मनः ।

स्थण्डिले पद्मकं कृत्वा चाष्टपत्रं संकर्णकम् ॥

अष्टाक्षरविधानेन अथवा द्वादशाक्षरैः ।

त्रैदिकैरथ वा मन्त्रैर्मम सूक्तेन वा पुनः ॥

स्थापितं मां ततस्तस्मिन्नर्चयितुं विचक्षणः ।

पुरुषं च ततः सत्यमच्युतं च युधिष्ठिर ॥

अनिरुद्धं च मां प्राहुर्वैखानसविदो जनाः ।

अन्ये त्वेयं विजानन्ति मां राजन् पाञ्चरात्रिकाः ॥

वासुदेवं च राजेन्द्र सङ्कर्षणमथापि वा ।

प्रद्युम्नं चानिरुद्धं च चतुर्भूर्ति प्रचक्षते ॥

एताश्चान्याश्च राजेन्द्र संज्ञाभेदेन मूर्चयः ।

विद्वद्यध्यात्मपरां एव मामेवं चार्चयेद्बुधः ॥

(वृ. गौ. स्मृ. ८. ८६-९१)

इति । आग्नेये अपि—

१. B. C. D. E. F. and G. read कारी. २. D. and G. read अर्चना,
and the text of Vaidha Gautama अर्चनाक्रममुत्तमम्. ३. The text of V.
G. reads स्वकं हितम्. ४. D. reads मन्त्रेण for सूक्तेन. ५. The text of
V. G. reads वृद्धरीत. ६. Except A. all other manuscripts are mis-
taken here. B. reads विद्वद्यनर्थतरा एव, C. F. G. H. and I. read विद्वद्य-
नर्थान्तरा एव, E. reads विद्वद्यन्वर्थान्तरा एव, D. विद्वद्यनर्थतरादेव, and
the text of V. G. read विद्वद्यनर्थान्तरावैव.

'अर्चनं सम्प्रवक्ष्यामि विष्णोरमिततैजसः ।
 यत्कृत्वा मुनयः सर्वे परं निर्गुणमाप्नुयुः ॥'
 अप्स्रवप्रौ हृदये सूर्ये स्थण्डिले प्रतिमासु, च ।
 षट्स्वेतेषु हरेः सम्यगर्चनं मुनिभिः स्मृतम् ॥'
 अग्नौ क्रियावतां देवो दिवि देवो मनीषिणाम् ।
 प्रतिमास्वल्पबुद्धीनां योगिनां हृदये हरिः ॥
 तस्य शर्वगतत्वाच्च स्थण्डिले भावितात्मनाम् ।
 ऋग्वेदे पौरुषं सूक्तमर्चितं गुह्यमुत्तमम् ॥''
 आनुष्टुभस्य सूक्तस्य त्रैष्टुभं तस्य देवता ।
 पुरुषो यो जगद्बीजमृषिर्नारायणः स्मृतः ॥'
 प्रथमां विन्यसेद्वामे द्वितीयां दक्षिणे करे ।
 तृतीयां वामपादे तु चतुर्थीं दक्षिणे न्यसेत् ॥-
 पञ्चमीं वामजानौ तु षष्ठीं वै दक्षिणे न्यसेत् ।
 सप्तमीं वामकट्यां तु अष्टमीं दक्षिणे तथा ॥
 नवमीं नाभिमध्ये तु दशमीं हृदये तथा ।
 एकादशीं कण्ठमध्ये द्वादशीं वामबाहुके ॥
 त्रयोदशीं दक्षिणे तु तथाऽऽस्ये तु चतुर्दशीम् ।
 अक्षयोः पञ्चदशीं चैव विन्यसेन्मूर्ध्नि षोडशीम् ॥
 यथा देहे तथा देवे न्यासं कृत्वा विधानतः ।

१. I. reads निर्वाणमाप्नुयुः. २. I. reads शिवि for सर्वे. This is correct, but all other manuscripts do not follow it. ३. This line is omitted in all others except A. and I. ४. Except A. and I. all others read त्रिष्टुभं; while D. त्रिष्टुभं, but probably this is a mistake. ५. D. and G. read कण्ठदेशे.

न्यासेन तु भवेत् सोऽपि स्वयमेव जनार्दनः ॥

एवं न्यासविधिं कृत्वा पश्चाद्यागं समाचरेत् ।

पूर्व्याऽऽवाहयेद्देवमासनं तु द्वितीयया ॥

पाद्यं तृतीयया चैव चतुर्थ्याऽर्घ्यं प्रदापयेत् ।

पञ्चम्याऽऽचमनं दद्यात् षष्ठ्या स्नानं समाचरेत् ॥

सप्तम्या तु ततो वासो ह्यष्टम्या चोपवीतकम् ।

नवम्या गन्धलेपं तु दशम्या पुष्पकं तथा ॥

एकादश्या तथा धूपं द्वादश्या दीपमेव च ।

त्रैवेद्यं तु त्रयोदश्या नमस्कारे चतुर्दशी ॥

प्रदक्षिणे पञ्चदशी नर्मने षोडशी तथा ।

स्नाने वस्त्रे च नैवेद्ये दद्यादाचमनं तथा ॥

हुत्वा षोडशभिर्मन्त्रैः षोडशान्नस्य चाहुतीः ।

पुनः षोडशभिर्मन्त्रैर्दद्यात् पुष्पाणि षोडश ॥

तच्च सर्वं जपेद्भूयः पौरुषं सूक्तमुत्तमम् ।

षण्मासात् सिद्धिमाप्नोति ह्येवमेव समर्चयन् ॥

ध्येयः सदासवितृमण्डलमध्यवर्त्तौ

नारायणः सरसिजाप्तनसन्निविष्टः ।

१. B. C. D. F. and G. read पूर्वमावाहयेत्, but पूर्व्या is more correct.
२. All others except A. and I. read गन्धमेवं for गन्धलेपं; while E. reads गन्धमाल्ये, but this is a mistake. ३. All others except A. and I. substitute ह्रीं for च. ४. B. C. D. E. F. and G. read वज्रने, while H. व्रजने, I. व्यजने and in the marginal correction D. it reads शयने. ५. I. reads अचिरात्. ६. D. and G. read समर्चयेत्, and I. सप्ताचरेत्.

केयूरवान् मकरकुण्डलवान् किरीटी
हारी हिरण्यवपुर्भूतशङ्खचक्रः ॥

इति । बौधायनोऽपि-

‘अथातो महापुरुषस्याहरहः परिचर्याविधिः’
व्याख्यास्यामः । स्नात्वा शुचिः शुचौ देशे गो-
मयेनोपलिप्य प्रतिहतिं कृत्वा अक्षत-पुष्पैर्यथा-
लाभमर्चयेत् । सह पुष्पोदकेन महापुरुषमा-
वाहयेत् । ॐ भूः पुरुषमावाहयामि ॐ भुवः
पुरुषमावाहयामि ॐ सुवः पुरुषमावाहयामि ॐ
भूर्भुवःसुवः पुरुषमावाहयामीत्यावाह्य आयातु
भगवान् महापुरुष इति । अथ स्वागतेनाभिनन्द-
ति, स्वागतमधुना भगवतो महापुरुषस्य भगवति
महापुरुषाय एतदासनमुपकृतमवास्यातां भगवा-
न् महापुरुष इति कूर्चं ददाति । भगवतोऽयं कूर्चो
दर्भमयस्त्रिवृद्धरितमुवर्णस्तं जुषस्वेति । अत्राधः
स्थानानि कल्पयति, अग्रतः शङ्खाय कल्पयामि ।
परितश्चक्राय कल्पयामि । दक्षिणतो गदायै क-
ल्पयामि । वामतो वनमालायै कल्पयामि । पश्चि-
मतः श्रीवत्साय कल्पयामि, गरुत्मते कल्पयामि ।

१. J. reads कनक- २. I. reads फल-पुष्पैः ३. I. alone adds महा- before पुरुष- ४. I. reads इत्येतेन ५. B. C. D. E. and F. read स्वागतमधुना स्वागतं भगवते, and G. and H. स्वागतमनुस्वागतं भगवते ६. B. C. and F. read -मुपकृतमवास्यातां, E. -मुपकृतमवास्यातो, D. -मुपकल्प्यावास्यातां and G. and H. -मुपकृतमन्वास्यातां ७. All others except A. and J. read इत्यत्र.

उत्तरतः श्रियै कल्पयामि, सरस्वत्यै कल्पयामि,
 पुष्ट्यै कल्पयामि, तुष्ट्यै कल्पयामि । अथ सा-
 विंध्या, ह्यत्रमभिमन्त्र्य, प्रक्षाल्य, त्रिरपः परि-
 षिच्य, अप आनीय, सह पवित्रेणादित्यं दर्शयेत्
 ओमिति । ऋतमिति स्नाप्यन्, 'त्रीणि पदा विच-
 क्रम' इति पाद्यं दद्यात् । प्रणवेनार्घ्यम् । अथ व्या-
 हृतिभिर्निर्माल्यं व्यपोह्योत्तरतो विष्वक्सेनाय
 नम इति अथैनं स्नापयति 'आपोहिष्ठामयो भुवः'
 इति तिसृभिः, 'ब्रह्मजज्ञानं' वामदेव्यर्चा यजुः
 पवित्रेणेत्येताभिः पद्भिः स्नापयित्वा अथाद्वि-
 स्तर्पयति । केशवं नारायणं माधवं गोविन्दं
 विष्णुं मधुसूदनं त्रिविक्रमं वामनं श्रीधरं हृषी-
 केशं पद्मनाभं दामोदरं तर्पयित्वा, अथैतानि
 पञ्च-यज्ञोपवीताचमनीयान्युत्केन व्याहृतिभि-
 र्दत्त्वा व्याहृतिभिः प्रदक्षिणमुदकं परिषिच्य 'इदं
 विष्णुर्विचक्रम' इति गन्धं दद्यात् । 'तद्विष्णोः
 परमं पदम्' इति पुष्पम्, 'इरावती' इत्यक्षतान्,
 'सावित्र्या धूपम्, 'उद्दीप्यस्व' इति दीपम्, 'देवस्य
 त्वा सावितुः प्रसवे अश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां
 भगवते महापुरुषाय जुष्टं चरुं निवेदयामीति
 नैवेद्यम् । अथ केशवादिनामभिर्द्वादश पुष्पाणि

१. I. omits त्रिरपः. २. तिसृभिः is omitted in all others except A. D. but D. omits the following portion 'ब्रह्मजज्ञानं वामदेव्यर्चा यजुः पवित्रेणेत्येताभिः'.

दद्यात् । शङ्खाय नमः, चक्राय नमः, वनमालायै
 नमः, श्रीवत्साय नमः, गरुत्मते नमः, श्रियै
 नमः, सरस्वत्यै नमः, पुष्ट्यै नमः, तुष्ट्यै नमः
 इति । अत्रांशिष्टैर्गन्धमाल्यैर्ब्राह्मणानलङ्कृत्यै अथैनं
 ऋग्यजुःसामोथर्वभिः स्तुवन् प्रुवसूक्तं जपित्वा
 पुरुषसूक्तं वाऽन्यांश्च त्रैलोक्यवान्मन्त्रानित्यैके ।
 ॐ भूर्भुवः सुवरोम् भगवते महापुरुषाय चरु-
 मुद्वासयामीति चरुमुद्वास्य । उद्वासनकाले ॐ
 भूः पुरुषमुद्वासयामि, ॐ भुवः पुरुषमुद्वासयामि,
 ॐ सुवः पुरुषमुद्वासयामि, ॐ भूर्भुवः सुवः पुरु-
 षमुद्वासयामीत्युद्वास्य । प्रयातु भगवान् महापु-
 रूषोऽनेन हविषा तृप्तो हरिः पुनरागमनाय पुनः
 सन्दर्शनाय चेति । प्रतिमास्थानेर्ष्वप्स्वग्रावा-
 वाहन-विसर्जनवर्जं सर्वं समानम् । महत्स्वस्त्य-
 यनुमित्याचक्षते महत्स्वस्त्ययनामित्याह भगवान्
 बौधायनः ।

इति । कूर्मपुराणे ऽपि—

‘ न विष्ण्वाराधनात् पुण्यं विद्यते कर्म वैदिकम् ।
 तस्माद्दिनादौ मध्याह्ने नित्यमाराधयेद्भरिम् ॥

१. D. inserts अथ शिष्टैर्माल्यैर्ब्राह्मणमलङ्कृत्यै. २. II. and I. omit
 अथर्वभिः. ३. I. only adds मक्ष- before पुरुष-. ४. D. omits अन्तु while
 G. reads प्रतिमास्थाने च स्नानावाहन- etc.

तद्विष्णोरिति मन्त्रेण सूक्तेन पुष्पेण च ।

वैतोभ्यां सदृशो मन्त्रो वेदेषूक्तश्चैतुर्वर्षिः ॥

(कू. पु. १. २. १८. ९४-९५)

इति । एवं वैष्णवदर्शनानुसारिपूजा ज्ञातव्या ।

अथवा देवमीशानं भगवन्तं सनातनम् ।

आराधयेन्महादेवं भावपूती महेश्वरम् ॥

मन्त्रेण रुद्रगायत्र्या प्रणवेनाथ वा पुनः ।

ईशानेनाथ वा रुद्रैस्त्र्यम्बकेन समाहितः ॥

पुष्पैः पत्रैरथाद्विर्वा चन्दनाद्यैर्महेश्वरम् ।

तथोन्नमः शिवीयेति मन्त्रेणानेन वा यजेत् ॥

नमस्कुर्यान्महादेवमृतं सत्यमितीश्वरम् ।

निवेदयीत चक्षुमानं यो ब्रह्माणमितीश्वरम् ॥

प्रदक्षिणं द्विजः कुर्यात् पञ्च ब्रह्माणि वा जपेत् ।

ध्यायीत देवमीशानं व्योमष्वध्यगतं शिवम् ॥

(कू. पु. १. २. १८. ९७-१०१)

इति । बौधायनोऽपि—

अथातो महादेवस्याहरहः परिचर्याविधिं व्या-

ख्यास्यामः । स्नात्वा शुचौ देशे गोमयेनोप-

लिप्य प्रतिकृतिं कृत्वा ऽक्षतपुष्पैर्यथालाभमर्च-

येत् । सह पुष्पोदकेन महादेवमावाहयेत् ।

१. All others except I. substitute तु for च. २. The text of Kūrmā-purāṇa reads न तुभ्यां. ३. B, C, E, and F. read च त्रिवर्षि for चतुर्वर्षि. ४. This line is omitted in all manuscripts except A. and I. ५. D. and G. read भावपूत. ६. I. reads रुद्रैः. ७. I. reads ब्रह्माणि through mistake. ८. D. omits अपि.

ॐ भूर्महादेवंमावाहयामि, ॐ भुवो महादेवमा-
वाहयामि, ॐ सुवः महादेवमावाहयामि, ॐ
भूर्भुवः सुवः महादेवमावाहयामि-इत्यावाह्य आ-
यातु भगवान्महादेव इति। अथ स्वागतं नाभिन-
न्दति स्वागतमनुस्वागतं भगवते महादेवाय
स्वांसंनमुपकृतमत्रैक्यतां भगवान् महादेव इति।
अत्र कूर्चं ददाति, भगवतो ऽयं कूर्चो दर्भमग्न-
स्त्रिवृद्धिर्त्तुवर्णस्तं जुषस्वेति । अत्र स्थानानि
कल्पयति । अग्रतो विष्णवे कल्पयामि, ब्रह्मणे
कल्पयामि । दक्षिणतः स्कन्दाय कल्पयामि,
विनायकाय कल्पयामि । पश्चिमतः शूलान्यं
कल्पयामि, महाकालाय कल्पयामि । उत्तरतः
उमायै कल्पयामि, नन्दिकेश्वराय कल्पयामि ।
इति कल्पयित्वा, अथ सावित्र्या पात्रमभिमन्त्र्य
प्रक्षाल्य त्रिरपः परिषिच्य पवित्रमपं आनीय
सह पवित्रेणादित्यं दर्शयेदोमिति । ऋतमिति
स्वाप्स्यन् त्वरितरुद्रेण पाद्यं दद्यात् । प्रणवे-

१. I. reads स्वागतमधुना, but repetition shows more respect. २. I. does not prefix सु to आसन. ३. All others except A. and I. read आस्तां भगवान् for अत्रास्यतां भगवान्; while I. reads भगवन्. ४. D. reads कल्पयामि. ५. B. C. and F. read ब्रह्मणे कल्पयामि. Arst. and B. G. H. omit विष्णवे कल्पयामि. and D. omits अग्रतः and ब्रह्मणे कल्पयामि. ६. D. reads उमायै, and omits नन्दिकेश्वराय कल्पयामि. ७. Ex-cept A. B. C. and F. others read त्रिरपः परिषिच्य for त्रिरपः परिषिच्य. ८. Through mistake I. reads here स्नानं पठति रुद्रेण for ऋतमिति स्वा-प्स्यन् त्वरितरुद्रेण.

नाध्यम् । अथ व्याहृतिभिर्निर्भाल्यं व्यपोहो-
त्तरतश्चेण्डेशाय नम इति । अथैनं स्नापयित्वा
'आपोहिष्ठा मयोभुक्' इति तिसृभिः, 'हिरण्यव-
र्णाः शुचयः पावका' इति चतसृभिः, 'पवमानः
सुधर्चन' इत्यनुवाकेन स्नापयित्वा अङ्गिस्तर्प-
यति । भवं देवं तर्पयामि, शर्वं देवं तर्पयामि,
ईशानं देवं तर्पयामि, पशुपतिं देवं तर्पयामि,
रुद्रं देवं तर्पयामि, उग्रं देवं तर्पयामि, भीमं देवं
तर्पयामि, महान्तं देवं तर्पयामि—इति तर्पयित्वा
'ज्यैतानि वस्त्र-यज्ञोपवीताचमणीयान्युदकेन व्या-
हृतिभिर्दत्त्वा, व्याहृतिभिः प्रदक्षिणमुदकं परि-
षिच्य 'नमस्ते रुद्र मन्यव' इति गन्धं दद्यात् ।
'सहस्राणि सहस्रश' इति पुष्पं दद्यात् । 'ईशानं
त्वां भुवनानामधिश्रियं' इत्यक्षतान् दद्यात् ।
सावित्र्याधूपम् । 'उद्दीप्यस्व' इति दीपम् । देवस्य
त्वां सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ता-
भ्यां भगवते महादेवाय जुष्टं चक्रं निवेदया-
मीति नैवेद्यम् । अथाष्टभिर्नामधेयैरष्टौ पुष्पाणि
दद्यात् । भवाय देवाय नमः, शर्वाय देवाय
नमः, ईशानाय देवाय नमः, पशुपतये देवाय
नमः, रुद्राय देवाय नमः, उग्राय देवाय नमः,

१. All others except A. and I. read 'वण्डाय'. २. I. reads महादेवं तर्पयामि. ३. B., C., E., F. and G. omit भीमं देवं तर्पयामि through mistake.

भीमाय देशाय नमः, महते देवाय नमः, वि-
ष्णवे नमः, ब्रह्मणे नमः, स्कन्दाय नमः,
विनायकाय नमः, शूलाय नमः, महाकुलाय
नमः, उमायै नमः, नन्दिकेश्वराय नम इति ।
चरुशेषेणाष्टभिर्नामधेयैरष्टाहुतीर्जुहोति । भवाय
देवाय स्वाहेत्यादिभिर्हुत्वाऽवशिष्टैर्गन्धमाल्यै-
र्ब्राह्मणानलकृत्य अथैनं ऋजुःसामभिः स्तुव-
न्ति । 'सहस्राणि सहस्रश' इत्यनुवाकं जपित्वा
ऽन्यांश्च सौत्रान्मन्त्रान्यथाशक्ति जपित्वा ॐ
भूर्भुवः सुवरोमिति महादेवाय चरुमुद्वासयामी-
त्यादिभिरुद्वास्य । उद्वासनकाले ॐ भूः महादेव-
मुद्वासयामीति प्रतिमन्त्रं रुद्रमुद्वास्य ।

प्रयातु भगवानीशः सर्वलोकनमस्कृतः ।

अनेन हविष्म तृप्तः पुनरागमनाय च ॥

पुनः सन्दर्शनाय वेति । प्रतिमास्थानेष्वप्स्व-
ग्नावावाहन-विसर्जनवर्जं सर्वं समानम् ।
महत्स्वस्त्ययनमित्याचक्षत इत्याह भगवान्
बोधायनः ।

इति । शिवार्चनं प्रशंसन्ति नन्दिकेश्वरः—

१. B. C. F. insert एकैकम् after यथाशक्ति. २. B. C. and F. read स्वर्महरोम्. ३. In the marginal correction of H. appears the following portion—चरुमुद्वासयामीति चरुमुद्वास्य अमृतापिधानमसीति प्र-
तिपदं कृत्वा त्र्यम्बकमित्याचमनीयं दद्यात्. I. omits उद्वासयामीति. ४. B. C.
and F. give detail and read ॐ भूर्महादेवमुद्वासयामि, ॐ भूर्भुवःस्वर्महादेवमुद्वासयामि,
ॐ स्वर्महादेवमुद्वासयामि, ॐ भूर्भुवःस्वर्महादेवमुद्वासयामि.

‘येः प्रदद्यात् गवां लक्षं दोग्ध्रीणां विदपारगे ।
 एकाहमर्चयेद्विह्णं तस्य पुण्यं ततो अधिकम् ॥
 सकृत् पूज्यते यस्तु भगवन्तमुमापतिम् ।
 • तस्याऽश्वमेधादधिकं फलं भवति भूसुराः’ ॥

इति । निर्माल्यगन्धोऽपि धार्यः । ‘देवानभ्यर्च्य गन्धेन’
 इत्यादि स्मृतिविधानात् । देवार्चनाकरणे दोषः कूर्मपुराणे
 अभिहितः—

यो मोहादथवाऽऽलस्यादकृत्वा देवताऽर्चनम् ।
 भुङ्क्ते स याति नरकं सूक्ष्मेऽप्यभिजायते’ ॥
 इति । (कू. पु. १. २. १८. १२१)

॥ इति देवतापूजाप्रकरणम् ॥

अथ गुरुपूजाप्रकरणम् । इत्थं मूलवचनोक्तं देवता-
 पूजनं निरूपितम् । ‘देवतानां च’—इति चकारेण गुरुं समु-
 ज्झिनोति । गुरोरपि देवतावत्पूजनीयत्वात् । अत एव श्रुतिः—

‘यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।
 • तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः’ ॥
 (श्वे. उ. ६. २३)

इति । शैवपुराणे अपि—

१. ‘D. reads संप्रदद्यात्. २. B, C, D, E, F, H. and I. read अस्याश्व-; while G. read अश्वमेधादधिकं.’ ३. Except A. and I. all others omit the following portion—निर्माल्यगन्धोऽपि धार्यः । ‘देवानभ्यर्च्य गन्धेन’ इत्यादि-
 स्मृतिविधानात्. ४. I. reads -द्वयि. ५. I. reads एवम्. ६. I. reads
 -वृत्तं (देवतापूजनम्. ७. G. and H. read देववत्. ८. This latter half
 is omitted in all others except A. and I. ९. अपि is omitted in I.

‘यो. गुरुः’ स शिवः प्रोक्तो यो मन्त्रः स च शङ्करः ।
 शिव-विद्या*-गुरुणां च भेदो नास्ति कथञ्चन ॥
 शिवे मन्त्रे गुरौ यस्य भावना सद्दर्शो भवेत् ।
 भोगो मोक्षश्च सिद्धिश्च शीघ्रं तस्य भवेद्भुवम् ॥
 वस्त्राभरण-माल्यानि शयनान्यासनानि च ।
 प्रियाणि चात्मनो यानि तानि देयानि वै गुरोः ।
 तोषयेत्तं प्रयत्नेन मनसा कर्मणा गिरा ॥

(शि. पु. ५. १. १९१६-२००)

इति । मनुरपि-

‘इमं लोकं मातृभक्त्या पितृभक्त्या तु मध्यमम् ।
 गुरुगुश्रूतया चैवं ब्रह्मलोकं समश्नुते ॥
 सर्वे तस्यादृता धर्मा यस्यैते त्रय आदृताः ।
 अनादृत्यश्च यस्म्येते सर्वास्तस्याफलाः क्रियाः ॥
 यावत् त्रयस्ते जीवेयुस्तावन्नान्यं समाचरेत् ।
 तेष्वेव नित्यं गुश्रूपां कुर्यात् प्रियहितं रतः ॥

इति ।

(म. स्मृ. २. २३३-२३६)

॥ इति गुरुपूजाप्रकरणम् ॥

* विद्याशब्देनात्र मन्त्रो ग्राह्यः । अयेऽपि तथैकैकत्वात् ।

१. Except A. B. C. and F, others read यः शिवः for यो मन्त्रः, but the form reading is a mistake. २. The text of Manu substitutes भु for च. ३. The text of Manu substitutes तु for च.

अथ वैश्वदेवं प्रकरणम् । तत्र पञ्चमभागकृत्यमाह दक्षः—

पञ्चमे च तथा भागे संविभागो ग्रथार्हतः ।

पितृदेवमनुष्याणां कीदानां चोपदिश्यते' ॥

(द. स्मृ. २. ४२)

इति । यद्यपि 'आतिथ्यं वैश्वदेवं च'—इत्यातिथ्यस्य पूर्व-
भावित्वं मूलवचनोक्तं तथापि वैश्वदेवस्य देवपूजाऽनन्तरभा-
वित्वं नृसिंहपुराणे अभिहितम्—

'पैश्वेयेण च सूक्तं न ततो विष्णुं समर्चयेत् ।

वैश्वदेवं ततः कुर्याद्वलिकर्म तथैव च' ॥

(नृ. पृ. ५८. ९३)

इति । तत्र—'ततः'—इति पञ्चमीश्रुत्या क्रमः प्रतीयते ।
मूलवचने तु पाठमात्रेण । पाठोक्तसन्निधिरूपाच्छ्रुतिर्वलीयसी
—इति श्रुतिलिङ्गसूत्रे (पृ. मी. ३. ३. १४) व्यवस्था-
पितम् । तस्माद्वैश्वदेवः प्रथमं कर्तव्यः । एवं च सति
वेदपाठोऽप्यनुग्रहीतो भवति ।

'देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञः' ।

(आ. गृ. सू. ३. १. २)

इति—स्मार्त्ताच्च 'पाठाद्वैदिकः पाठो वलीयानिति विरो-
धाधिकरणं— (पृ. मी. १. ३. २) न्यायेनावगम्यते ।
तस्मादपि वैश्वदेवस्य प्राथम्यम् । तत्र वैश्वदेवं विधत्ते
व्यासः—

१. The text of Nṛsiṃha Purāṇa reads this as follows:—

विधिना पुनः सूक्तं तत्र विष्णुं समर्चयेत् ।

२. The text of Nṛsiṃha Purāṇa reads यथाविधि for तथैव च. ३. तत
is omitted in all others except A. and I. ४. A. reads पाठान्तरनिरूपिका
श्रुतिर्वलीयसी.

‘वैश्वदेवं अकुर्वीत स्वशाखाविहितं तनः ।
 संस्कृतान्नैर्ह विन्निधैर्हविष्ये-व्यञ्जनान्वितैः ॥
 तैरेवाञ्जैर्बलिं दद्याच्छेषमाप्ताव्य वाग्णिना ।
 कृताऽपसव्यः स्वधया केव्यं रक्षिणतो हरेत्’ ॥

इति । ततो देवार्चनानन्तरमित्यर्थः । नारायणो अपि-
 ‘संभार्यस्तु शुचिः स्नातो विधिना चम्य वाग्यतः ।
 प्रविश्य सुसमिद्धेऽग्नौ वैश्वदेवं समाचरेत्’ ॥
 इति । कूर्मपुराणे अपि-

‘शालाग्नौ लौकिके वाग्निं जले भूम्यामथापि वा ।
 वैश्वदेवस्तु कर्त्तव्यो देवयज्ञः स वै स्मृतः ॥
 यदि स्याद्लौकिके पाकस्ततोऽग्ने नत्र हूयते ।
 शालाग्नौ तु पंचेदन्नं विधिरप भनातपः’ ॥
 (कूर्म पृ. १, २, १८, १०६-१०७)

इति । अङ्गिरसि अपि-

‘शालाग्नौ वा पंचेदन्नं लौकिके वा अपि नित्यजः ।
 यस्मिन्नग्नौ पंचेदन्नं तस्मिन् होमो विधीयते’ ॥
 इति । शातातपो अपि-

‘लौकिके वैदिके वा अपि हुतोत्सृष्टे जले क्षितौ ।
 वैश्वदेवस्तु कर्त्तव्यः पञ्चमृना अनुत्तये’ ।

* ‘प्रविश्य’ गृहमग्न्यागारं वेत्यर्थः ।

१. D. हविर्भिव्यञ्जनान्वितैः. २. I. reads कृत्वाऽपसव्यः. ३. All others except A. B. C. and F. read सर्वे रक्षिणतोः while I. सर्वरक्षिणतोः. ४. The text of Kūrma Purāṇa reads पाकं for पाकः. ५. The text of Kūrma Purāṇa reads तत्र देवाजं. B. C. D. F. and I. read तत्पंचेदन्नम्. ६. तत्र चेदन्नम् and D. न त्यजेदन्नं. ७. D. omits the following विधिरप सना-
 तनः’ ॥ इति । अङ्गिरा अपि-‘शालाग्नौ वा पंचेदन्नं लौकिके वा अपि नित्यजः ।
 यस्मिन्नग्नौ पंचेदन्नं. ८. अपि is omitted by A. ९. शातातपोऽपि is
 omitted by D. १०. D. reads हुतोत्सृष्टे.

इति । सूनाः पञ्च दर्शयति यमः—

‘पञ्च सूना गृहस्थस्य वर्त्तन्ते ऽहरहः सदा ॥

कैण्डनीपेषणी चुल्ली जलकुम्भ उपस्करः ॥

एतानि वाहयन् विप्रो वैध्यते वै मुहुर्मुहुः ।

एतासुं पावनार्थाय पञ्चयज्ञाः प्रकल्पिताः’ ॥

इति । सूना हिंसास्थानानि । कैण्डनी मुसलोलूखलादिः ।

पेषणी वृषदुपलादिः । चुल्ली पाकस्थानम् । जलकुम्भः उद-

कस्थानम् । उपस्करः शूर्पादिः । अवस्करः— इति पाटे मार्ज-

भ्यादिर्द्रष्टव्यः । एताः सूनाः स्वस्वकार्यं प्रापयन् पापेन युज्यते

इत्यर्थः । तत्र कालद्वयेऽपि वैश्वदेवः कर्त्तव्य इत्याह कात्यायनः—

‘सायं-प्रातर्वैश्वदेवः कर्त्तव्यो बलिकर्म च ।

अनश्रताऽपि सूततमन्यथा किल्बिषी भवेत्’ ॥

(का. स्मृ. २. १३. १०)

इति । होमप्रकारमाह आश्वलायनः—

‘अथ सायं प्रातः सिद्धस्य हविष्यस्य जुहुयात् ।

(१) अग्निहोत्रदेवताभ्यः सोमाय वनस्पतये अ-

ग्नी-षोमाभ्यामिन्द्राग्निभ्यां द्यावा-पृथिवीभ्यां धन्व-

न्तरय इन्द्राग विश्वेभ्यो देवेभ्यो ब्रह्मणे (२) स्वाहा’ ।

(आ. गृ. सू. १. २. १. ३)

इति । हविष्यस्येति हविर्योग्यस्येत्यर्थः । अग्निहोत्रदे-

वताभ्यः सूर्याग्नि-प्रजापतिभ्य इत्यर्थः । आपस्तम्बोऽपि—

१. A. D. F. and G. read खण्डनी. २. B. C. D. and G. read बध्यते.
३. B. C. and F. read एतेषां, but it seems to be incorrect. ४. I.
reads प्रकीर्तिता. ५. A. B. C. D. E. F. and G. read खण्डनी. ६. D.
reads तस्य while I. reads सद्य.

‘औपोसने पचने वा षड्विंशत्यैः प्रतिमन्त्रं
हस्तेषु जुहुयात् ॥ (१६) उभयतः परिषेचनं
यथा पुरस्तात् ’ ।

(आ. ध. सू. २. २. ३. १६. १७).

इति आद्यैरनुवाकादावुक्तैः ‘अग्र्यं स्वाहा’ इत्यादिभिः ।
स्विष्टकृदन्तैः । उभयतः कर्मादावन्ते चेत्यर्थः । पारस्करो ऽपि—
‘वैश्वदेवादर्जात् पयुक्ष्य स्वाहाकारैर्जुहुयात् ।
ब्रह्मणे प्रजापतये गृह्याभ्यः काश्यपायानुमत्तये’ ।

(पा. गृ. सू. २. ९. २.)

इति । अत्र यथास्वशाखं व्यवस्थ । होतव्यान्नसंस्कार-
माह व्यासः—

‘जुहुयात् सर्पिषाभ्यक्तं तैल-क्षारविवर्जितम् ।

दध्यक्तं पयसाक्तं वा तदभावेऽम्बुनाऽपि वा’ ॥

इति । द्रव्यानुकल्पश्चतुर्विंशतिमते दर्शितः—

‘अलाभे येन केनापि फल-शाकोदकादिभिः ॥

पयो-दधि-घृतैः कुर्याद्वैश्वदेवं सुवेण तु ।

हस्तेनान्नादिभिः कुर्यादद्विरञ्जलिना जले’ ॥

इति । यदद्यते तेनैव होतव्यम् । तदुक्तं गृह्यपरिशिष्टे—

१. Except A. and I. all others read उपासने, but it is incorrect.
२. B. C. E. F. and G. read अग्नौ अनुवाकादावुक्तैरग्र्यं स्वाहेत्यादिभिः;
D. reads अग्नौ अनुवाकादावुक्तैरग्र्यं स्वाहेत्यादिभिः; while H. reads आग्नि-
रनुवाकादावुक्तैरग्र्यं स्वाहेत्यादिभिः, all these for आद्यैरनुवाकादावुक्तैरग्र्यं
स्वाहा इत्यादिभिः स्विष्टकृदन्तैः । उभयतः कर्मादावन्ते चेत्यर्थः । पारस्करो
ऽपि ३. B. C. D. E. F. G. and I. read काश्यायनो. H. also reads the
same, but there is a marginal correction. ४. I. reads वैश्वदेवादर्जात्
through mistake. ५. D. E. and G. read गृह्याभ्यः, and H. I. read
गृह्याभ्यः. ६. I. reads काश्यपाया-

‘शाकं वा यदि वा पत्रं मूलं वाभ्यदि वा फलम् ।

‘सङ्कल्पयेद् यदाहारस्तेनैव जुहुयादपि’ ॥

इति । श्वास्तुलवणा-ऽवरात्रसंसृष्टेनाऽहविष्येण होमोऽग्नौ न कार्यः । किन्तूष्णं भस्माभ्यायतनादुत्तरतोऽप्योह्य तस्मिन् होतव्यम् । तदाहाऽऽपस्तम्बः—

न क्षार-लवणहोमो विद्यति । तथा अवरात्र-

संसृष्टस्य च । अहविष्यस्य होमः । उदीचीन-

गुणं भस्माऽप्योह्य तस्मिन् जुहुयात्तद्भुतम-

हुतं चाग्नौ भवति ।

(आ. ध. सू. २. ६. १५. १५-१७)

इति । परिशिष्टे अपि—

‘उत्तानेन तु हस्तेन ह्यङ्गुष्ठाग्रेण पीडितम् ।

संहताङ्गुलिपाणिस्तु वाग्यतो जुहुयाद्धविः’ ॥

इति । अनुग्निकस्य वैश्वदेवे विशेषमाह वृद्धवसिष्ठः—

‘अनुग्निकस्तु यो विप्रः सोऽन्नं व्याहृतिभिः स्वयम् ।

हुत्वा शाकलमन्त्रैश्च शिष्टं काकवलिं हरेत्’ ॥

इति । ‘देवकृतस्यैनस’ इत्याद्याः शाकलमन्त्राः । विष्णुरपि—

‘अन्नं व्याहृतिभिर्हुत्वा हुत्वा मन्त्रैश्च शाकलैः ।

प्रजापतेर्हविर्हुत्वा पूजयेदतिथिं ततः’ ॥

इति । भूतयज्ञः कूर्मपुराणे दर्शितः—

१. B, C, D, E, F, G, H, and I, read परात्रसंसृष्टस्य. २. I. reads अहविष्यस्य होमः, but this is a mistake. ३. All others except A. read. omit ‘देवकृतस्यैनस’ इत्याद्याः शाकलमन्त्राः. ४. D, substitutes स्वयं for हुत्वा.

‘देवेभ्यस्तु हुतादन्नाच्छेषाद्भूतबलिं हरेत् ।’

भूतयज्ञः सै वै प्रोक्तो भूतिदः सर्वदेहिनाम् ॥

(कू. पु. १. २०-२४. १०८)

इति । हारीशो अपि—

‘वास्तुपाल-भूतंभ्यो बलिहरणं भूतयज्ञः ।’

(हा. स्मृ. १५. ३.)

इति । कात्यायनो अपि—

‘उद्धृत्य हविरासिच्यं हविष्येण घृतादिना ।’

स्वशाखाविधिना हुत्वा तच्छेषेण बलिं हरेत् ॥

(का. स्मृ. २. १३. ७)

इति । गौणकर्तृनाहार्त्विः—

‘पुत्रो भ्राताऽथ वा ऋत्विक् शिष्य-अग्रुर-मातुलाः ।’

पत्नी-श्रोत्रिय-याज्याश्च दृष्टास्तु बलिकर्माणि ॥

इति । गृहे कर्तव्यन्तराभावे प्रवसना स्वयमेव कर्तव्यमित्याह.

बोधायनः—

‘प्रवासं गच्छन्तो यस्य गृहे कर्त्ता न विद्यते ।’

पञ्चानां महतामिषां सै यज्ञैः सह गच्छति ॥

इति । बलिहरणप्रकारमाहोऽऽश्वलायनः—

१. The text of Kūrma Purāṇa substitutes च for तु. २. The text of Kūrma Purāṇa reads स विज्ञेयो. ३. This verse is not found in printed copy of Kātyāyana Smṛiti, but it is found in our Telugu manuscript. ४. D. reads आश्वीयः. ५. B. C. and F. read दक्षः; U. also reads the same, but the marginal correction is शौनकः. ६. D. and I. read शौनकः for आश्वलायनः.

‘अथ ब्रलिहरणम् । (३) एताभ्यश्चैव देवताभ्यो
 ऽद्वा ओषधि-व्रनस्पतिभ्यो गृहाय गृहदेवताभ्यो
 वास्तुदेवताभ्यः । (४) इन्द्रायेन्द्रपुरुषेभ्यो यमा-
 य यमपुरुषेभ्यो वरुणाय वरुणपुरुषेभ्यः सोमाय
 सोमपुरुषेभ्यः-इति प्रतिदिशम् । (५) ब्रह्मणे ब्रह्म-
 पुरुषेभ्यः-इति मध्ये । (६) विश्वेभ्यो देवेभ्यः ।
 “ (७) सर्वेभ्यो भूतेभ्यो दिवाचारिभ्यः-इति दिवा ।
 “ (८) नक्तंचारिभ्यः-इति नक्तम् । (९) रक्षोभ्य
 “-इति उत्तरदः । (१०) स्वधा पितृभ्यः-इति
 प्राचीनावीती शेषं दक्षिणा निनयेत् ।

(आ. गृ. सू. १. २. ३-११)

इति । आपस्तम्बो ऽपि-

‘अपरेणाग्निं सप्तमाष्टमाभ्यामुदगपवर्गम् । (२०)
 उदधानसन्निधौ नवमेन । (२१) मध्येऽन्त-
 रस्य दशमैकादशाभ्यां प्रागपवर्गम् । (२२)
 उत्तरपूर्वदेशे अगारस्यात्तरैश्चतुर्भिः । (२३) श-
 य्यादेशे कामलिङ्गेन । (१) दक्षिणामन्तरिक्ष-
 लिङ्गेन । (२) उत्तरेणापिधान्याम् । (३) उ-
 त्तरेर्ब्रह्मसदने । (४) दक्षिणतः पितृलिङ्गेन
 प्राचीनावीती । अवाचीनपाणिः कुर्यात् । (५)

१. A. reads दक्षिणायां. २. उदगपवर्गम् is omitted by all others except A. I. and the text of Āpastamba! ३. ‘लिङ्गेऽन्युत्तरपिधान्यामुत्तरब्रह्मसदने is the reading of B. C. F. E., and G. उत्तर ब्रह्मसदने. ४. D. omits the portion देहल्यामन्तरिक्षलिङ्गेन । उत्तरेणापिधान्याम् । उत्तरैर्ब्रह्मसदने । दक्षिणतः पितृलिङ्गेन.

रौद्र उत्तरेतो यथा देवताभ्यः । (६) तयोर्नानां
परिचिनं धर्मभेदात् । (७) नक्तमेवोत्तरेण
वैनायसम् । (८)

(आ. ध. सू. २. २. ३-४. २०-८)

इति । मार्कण्डेयपुराणे अपि—

‘एवं गृहवलिं कृत्वा गृहे गृहपतिः शुचिः ॥

आप्यायनाय भूतानां कुर्यादुत्सर्गमादरात्’ ।

(मा. पु. २९. २२-२३)

इति । कूर्मपुराणे च—

‘श्रम्यश्च श्रपचेभ्यश्च पतितेभ्यस्तथैव च ।

दद्याद्भूमौ बहिश्चान्नं पक्षिभ्यो ज्य द्विजोत्तमाः ॥

(कृ. पु. १. २. १८. १०९)

अथ । मनुरपि—

‘शुनां च पतितानां च श्रपचां पापरोगिणाम् ।

वृषसानां कृमीणां च शनकैर्निर्वपेद्भुवि ॥

(म. स्मृ. ३. ९२)

इति । अन्नमार्ति शेषः । अन्नोत्सर्गमन्त्रो विष्णुपुराणे

दर्शितः—

१. The text of Āpastamba reads उत्तरो. २. I. adds तयोर् before धर्म-. ३. The text reads मेवोत्तमेन. ४. B. C. E. and F. read मार्क- ण्डेयऽपि. H. and I. मार्कण्डेयोऽपि. ५. The text of Kūrma Purāṇa reads पतितानि एव च. ६. The text of Kūrma Purāṇa reads पक्षिभ्यो द्विजोत्तमाः; while G. and H. द्विजोत्तमः. ७. D. reads अभिहितः.

'देवा मनुष्याः पशवो वयांसि -
 सिद्धाः सैयक्षोरग-दैत्यसङ्घाः ।
 गेताः पिशाचास्तरवः प्रमस्ता
 ये चाऽन्नमिच्छन्ति मयाऽन्नं दत्तम् ॥
 पिपीलिकाः शीट-पतङ्गकाद्या
 बुभुक्षिताः कर्मनिबन्धबद्धाः ।
 प्रयान्तु ते तृप्तिमिदं मया ऽन्नं
 तेभ्यो विसृष्टं सुखिनो भवन्तु ॥
 येषां न माना न पिता न बन्धुर्
 नैवान्नसिद्धिर्न तथाऽन्नमस्ति ।
 तत्तृप्तये ऽन्नं भुवि दत्तमेतत्
 प्रयान्तु तृप्तिं मुदिता भवन्तु ॥
 भूतानि सर्वाणि तथा ऽन्नमेतत्
 अहं च विष्णुर्न ततोऽन्यदस्ति ।
 तस्मादिदं भूतहिताय भूमौ
 अन्नं प्रयच्छामि भवार्यं तेषाम् ॥
 चतुर्दशो लोकगणो य एष
 तत्र स्थिता ये किल भूतसङ्घाः ।

१. D. substitutes च for स-. २. I. reads प्रदत्तम्, the text of Vishnu Purāṇa follows the same reading. ३. The text of Vishnu Purāṇa reads निघृष्टं. ४. B. C. and F. read ते यान्तु. ५. The text of Vishnu Purāṇa reads यतो. ६. The text of Vishnu Purāṇa reads -निकायभूतं for -हिताय भूमौ, and all others except D. substitute भूतम् for भूमौ. ७. G. reads -स्यभवार्य; while D. हिताय.

तृप्त्यर्थं च हि मया विसृष्टं

तेषामिदं ते मुद्रिता भवन्तु ॥

इत्युच्चार्य नरो दद्यादन्नं श्रद्धासमन्विताः ।

भुवि भूतोपकाराय गृही सर्वश्रियो यतः' ॥

(वि. पु. ३. ११. ४७-५३)

इति । पितृयज्ञः श्रुत्या दर्शितः—

‘यत् पितृभ्यः स्वधाकरोत्यप्यप-

स्तत् पितृयज्ञः सन्तिष्ठते’ ।

इति । कात्यायनो ऽपि—

‘अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।

होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम् ॥

श्राद्धं वा पितृयज्ञः स्यात् पित्र्यो बलिस्थापि वा’ ।

(का. स्मृ. २. १३. ३-४)

इति । अत्र यथास्वशाखं व्यवस्था । श्राद्धं चात्र नित्य-

श्राद्धम् । तथा च कूर्मपुराणम्—

‘एकं तु भोजयेद्विप्रं पितृनुद्दिश्य सत्तम ।

नित्यश्राद्धं तदुद्दिष्टं पितृयज्ञो गतिप्रदः’ ॥

(कू. पु. १. २. १५. १११)

इति । मार्कण्डेयेऽपि—

१. B. C. and F. read 'स्वधा' for 'स्वधा'. १. I. reads 'पित्र्यो'. ३. I. omits 'च. ४. The text of Kūma Purāṇa reads सत्तमम्. ५. Except A. and D. all others read 'मार्कण्डेयोऽपि'.

‘कुर्यादहरहः श्राद्धमन्नाद्येनोदकेन’वा ।

पितृनुद्दिश्य विप्रांस्तु भोजयेद्विप्रमेव वा’ ॥

(मा. पु. २९. ३३)

इति । नित्यश्राद्धप्रकारो मत्स्यपुराणे दर्शितः—

‘नित्यं तावत् प्रवक्ष्यामि अर्घ्यावाहनवर्जितम् ।

अदैवं तद्विजानीयात् पार्वणं पर्वसु स्मृतम्’ ॥

(म. पु. १. ६. ५-६.)

इति । प्रचेताः—

‘नावाहनाग्नौकरणं न पिण्डो न त्रिसर्जनम्’ ।

इति । व्यासो ऽपि—

‘नित्यश्राद्धे ऽर्घ्य-गन्धाद्यैर्विजानभ्यर्च्य शक्तितः ।

सर्वान् पितृगणान् सम्यक् सन्नैवोद्दिश्य भोजयेत् ॥

आवाहन-स्वधाकार-पिण्डाग्नौकरणादिकम् ।

ब्रह्मचर्यादिनियमो विश्वेदेवाक्षतयैव च ॥

‘नित्यश्राद्धे त्यजेदेतान् भोज्यमन्नं प्रकल्पयेत् ।

दत्त्वा तु दक्षिणां शक्त्या नमस्कारैर्विसर्जयेत् ।

‘एकमप्याशयेन्नित्यं षण्णामप्यन्वहं गृही’ ॥

इति । कात्यायनस्तु तत्रानुफलपमाह—

‘एकमप्याशयेद्विप्रं पितृयज्ञार्थसिद्धये ।

अदैवं नास्ति चेदन्यो भोक्ता भोज्यमथापि वा ॥

१. Here all others except A. and the text of Matsya Purāṇa have made a mistake. B. C. E. F. G. II. and I. read पार्वणं तद्वि कीर्तितम्; while D. reads पार्वणे न हि कीर्तितम्. २. I. reads पिण्डं. ३. D. and G. read सर्वोत्सतगुणान्. ४. J. omits तु, and G. II. read अन्न for तन्न. ५. All others except A. read नित्यं for विप्रं.

अभ्युद्धृत्य यथाशक्ति किञ्चिदन्नं यथाविधि ।

पितृभ्यो अथ मनुष्येभ्यो दद्यादहरहर्द्विजे ॥

पितृभ्य इदमित्युक्त्वा स्वधाकारमुदाहरेत् ।

हन्तकारं मनुष्येभ्यस्तदर्द्धं निनयेदपः ॥

(का. स्मृ. २. १३. ६८)

इति । उद्धृतमन्नं ब्राह्मणाय दद्यात् । तदुक्तं कूर्मपुराणे—

‘उद्धृत्य न्ना यथाशक्ति किञ्चिदन्नं समाहितः ।

वेदतत्त्वार्थविदुषे द्विजायैवोपपादयेत्’ ॥

(कू. पु. ५. २. १८. ११२)

इति । त एते देवयज्ञ-भूतयज्ञ-पितृयज्ञास्त्रयोऽपि विश्वदे-
वशब्देनोच्यन्ते । यत्र विश्वदेवा उच्यन्ते तद्वैश्वदेविकं कर्म ।
देवयज्ञे च—

‘विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा’ ।

(आ. गृ. सू. १. २. २-३.)

इति पठितत्वात् तत्रैतन्नाम मुख्यम् । येषां तु शाखायां.
भूतयज्ञे ऽप्ययं मन्त्रो ऽस्ति तेषां तत्राप्येतन्मुख्यम् । पितृयज्ञे

१. B. C. D. E. F. and G. read अभ्युद्धृत्य, also the text of
Kātyāyana reads the same. २. Except A. and the text of
Kātyāyana all others omit this line. ३. The text reads उदीरयेत् for
उदाहरेत्. ४. This line is omitted by all except A. D. and the text of
Kātyāyana. ५. After this line D. adds—

तद्यास्मै ब्राह्मणायेति दत्त्वा भुञ्जीत वाग्यतः ।

६. After this word I. adds—

‘दद्यादहरहर् आर्द्धमन्नभ्येनोदकेन वा ।

पयो-मूल-फलैर्वाऽपि पितृभ्यः प्रीतिमावहन्’ ॥

This is a repetition of a verse of Mārkaṇḍeya Purāṇa.

तु छेत्रिन्यासेन तन्नामप्रवृत्तिः । अथवा मूलवचने 'वैश्वदेवं
'व'-इति चकारेण पितृयज्ञादिकमलुक्तं समुच्चीयते । यद्यपि-
'सायं शतःसिद्धस्य हविष्यस्य जुहुयात्' ।

(आ. गृ. सू. १. २. १)

इति वचनेन वैश्वदेवस्यान्नसंस्कारता प्रतीयति तथापि
पुरुषार्थत्वमेवाभ्युपेयम् ।

'तानेतान्यज्ञानहरहःकुर्वीत' ।

(आ. गृ. सू. ३. १. ४)

इति वाक्यशेषे तदवगमात् । न चोभयार्थत्वं शङ्कनीयम् ।
परस्परविरोधात् । अन्नसंस्कारत्वे ह्यन्नस्य प्राधान्यम् ।
वैश्वदेवस्य गुणताम् । पुरुषार्थत्वे तु तद्विपर्ययः । तथा च
सति एकस्यैव युगपत् प्राधान्यं गुणत्वं च विरुद्धे-
याताम् । तर्ह्यस्त्वन्नसंस्कारतैव । मा भूत् पुरुषार्थत्वं-
इति चेत् । तन्न ।

'महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियेते तनुः' ।

(म. स्मृ. २. २८)

इति मनुना पुरुषार्थत्वस्मरणात् । यत्तु-

'सिद्धस्य हविष्यस्य जुहुयात्' ।

(आ. गृ. सू. १. २. १)

इत्युदाहृतं तदन्यथाप्युपपद्यते । तत्र जुहुयादित्युत्प-
त्तिविधिः । सिद्धस्य हविष्यस्येति विनियोगः । तानेतान-
हरहः कुर्वीतेत्यधिकारः । किञ्च अन्नसंस्कारपक्षे प्रति-
पाकमावृत्तिः प्रसज्येत ।

१. D. reads ऋत्विङ्न्यासेन. २. II. omits च. ३. D. reads कुरुते.
४. I. reads विनियोगविधिः.

‘अतिप्रधानं गुणवृत्तिः’ ।

इति न्यायात् । तस्मात्पुरुषार्थत्वमेव न्याय्यम् ।

अत एव गृह्यपरिशिष्टे अभिहितम् ५

‘प्रोषितो ज्यात्मसंस्कारं कुर्यादेवाविचारयन्’ १

इति । गोभिलो अपि—

‘यद्येकास्मिन् काले ब्रीहि-यवौ पच्येयातां

अन्यतरस्य हुत्वा कृतं मन्येत । यद्येका-

स्मिन् काले पुनः पुनरन्नं पच्येत सकृद्देव

बलिं कुर्वीत । यद्येकास्मिन् काले बहुधाऽन्नं

पच्येत गृहपतिर्महानसादेवैकं बलिं कुर्वीत’ ।

इति । अयमर्थः — नानाद्रव्यकान्नपाके पुनः पुनरन्नपाके
अपि बहूनामविभक्तानां भान्नादीनां पृथक् पृथक् पाके अपि
एकस्मिन् देव द्रव्यात् सकृदेव गृहपतिपाकादेव होतव्यमिति ।

॥ इति वैश्वदेवप्रकरणम् ॥

अथातिथ्यापरनामको मनुष्ययज्ञो निरूप्यते । आतिथ्य-
स्य मनुष्ययज्ञत्वं कात्यायनेनोक्तम्—

‘अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।

होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञो अतिथिपूजनम्’ ।

(का. स्मृ. २. १३. ३)

इति । श्रुतिरपि—

‘यद्वाह्यणेभ्योऽन्नं ददाति तन्मनुष्ययज्ञः सन्तिष्ठते’ ।

इति । बौधायनोऽपि—

१. All others except A. and I. read सकृदेकं. २. D. reads बहुविधाऽन्नं.
३. I. reads -देवैतं. ४. Except A. and I. all others add अपि after -पाके.
५. All others except A. and the text of Kātyāyana read बलिं कुर्वीत.

‘अहरहर्ब्राह्मणेभ्योज्ञं दद्यादा मूल-फलशा-
केभ्यस्तथैतं मनुष्ययज्ञं समाप्नोति ।’

(बौ. स्मृ. २. ५. ११. ५)

इति । ‘काष्ठाजिभिरपि—

‘भिक्षां वा पुष्कलां वाऽपि हन्तकारमथापि वा ।’

असम्भवे तथा दद्यादुदपात्रमथापि वा’ ॥

इति । कूर्मपुराणे अपि—

‘हन्तकारमथाग्रं वा भिक्षां वा शक्तितो द्विजः ।

दद्यादतिथये नित्यं बुद्धयेत परमेश्वरम्’ ॥

(कूः पु. १. २. १८. १४४)

इति । भिक्षादिलक्षणं मनुराह—

‘ग्रासमात्रं भवेद्भिक्षा अग्रं ग्रासचतुष्टयम् ।

अग्रं चतुर्गुणीकृत्य हन्तकारो विधीयते’ ॥

(मा. पु. २९. ५३.)

इति । अतिथिनिरीक्षणाय गृहांगणे कैचिक्कालं तिष्ठे-
दित्युक्तं मार्कण्डेयपुराणे—

१. All others except A. and H. read पुष्कलं, “but it does not give any meaning.” २. A. and D. read सज्ञा for तथा; while B. C. E. F. and G. read असम्भवेन वा for असम्भवे तथा. ३. D. reads उपपात्रं for उदपात्रं. ४. All manuscripts read मनुराह; but the following quotation does not appear in the text of Manu. It is found in Mārkaṇḍeya Purāṇa and also in Kūrma Purāṇa. The latter reads as follows:—

‘भिक्षामाहुर्ग्रासमात्राग्रं तत्स्याच्चतुर्गुणम् ।

पुष्कलं हन्तकारं तु तच्चतुर्गुणमिष्यते’ ॥

५. D. omits the following portion—

‘आचम्य ज्ञातः कुर्यात् प्राज्ञो श्रावलोकेनम् ।

बुधुर्तस्याष्टमं भागमुदीक्ष्यो ह्यतिथिर्भवेत् ॥

इति । विष्णुपुराणे.

‘आचम्य च ततः कुर्यात् प्राज्ञो द्वारावर्त्तकनम् ॥’

मुहूर्त्तस्याष्टमं भागमुदीक्ष्यो ह्यतिथिर्भवेत्’।

(‘मा. पु. २९, २४-२५)

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘ततो गोदोहमात्रं वै कालं तिष्ठेद् गृहाङ्गणे ।

अतिथिग्रहणार्थाय नदर्थं वा यथेच्छया’ ॥

(वि. पु. ३. ११. ५५)

इति ।

॥ इति, मनुष्ययज्ञः ॥

तदेवं ‘सन्ध्या स्नानम्’—इत्यस्मिन् मूलवचने स्नानादी-
न्यातिथ्यान्तानि षट् कर्माणि निरूपितानि ।

न चात्र सप्तत्वप्रतिभानात् षट्त्वं विरुद्धमिति शङ्कनीयम् ।
सम्मार्गन्यायेनोद्देश्यगतायाः संख्याया अविवक्षितत्वात् ।
यानि कर्माणि उद्देश्यगतानि तानि दिनेदिने कर्तव्यानीति तेषां
नित्यत्वविधानात् । सम्मार्गन्यायश्च तृतीयाध्याये प्रतिपादितः ।

— ज्योतिष्टोमि—‘दक्षपवित्रेण ग्रहं सम्मार्ष्टि’—इति श्रूयते ।
तत्र संशयः—किमेकस्य सम्मार्गः किंवा सर्वेषां? इति । तदर्थं
चिन्ता—किमत्रोद्देश्यगता संख्या विवक्षिता उजाविवक्षिता?
इति । यथा—‘पशुना यजेत’—इत्यत्र एकवचनश्रुतिबलादुपादे-

१. I. reads here and in some of the following lines ‘सम्मार्ग’ instead of
‘सम्मार्ग-’, but it is a mistake. २. All others except A. and I. read यानि
कर्माणीत्युद्देश्य तानि दिनेदिने, but it seems to be incorrect. ३. D.
reads निरूपितः. ४. B. C. and J. read दक्षपवित्रेण. ५. All others except
A. and I. read तदर्थं किमुद्देश्यगता संख्या विवक्षिता नेति for तदर्थं चिन्ता
किमत्रोद्देश्यगता संख्या विवक्षिता उजाविवक्षिताति.

यपशुगता संख्या विवक्षिता । तथैव ग्रहमित्येकवचनश्रुति-
नलादुद्देश्यगता अपि संख्या विवक्षिता भवितुमर्हति । तस्मादे-
कस्यैव ग्रहस्य सम्मार्गं प्राप्ते ब्रूमः । पशोरनेनैव वचनेन यागसम्ब-
धावगमात् यागंप्रति पशोर्गुणीभूतत्वात् यावद्गुणं प्रधानावृच्यभा-
वात् कियता पशुनेत्यवच्छेदकाकाङ्क्षायां तदवच्छेदकत्वेनैकत्व-
संख्या सम्बद्ध्यते— इत्युपादेयगतायाः संख्यायाः विवक्षितत्वं
युक्तम् । ग्रहाणां तु वाक्यान्तरेण यागसम्बधावगमात् सम्मार्ग-
वाक्ये द्वितीयाश्रुत्या सम्मार्गंप्रति, ग्रहस्य प्रधान्यावगमात्
प्रतिप्रधानं गुणस्य सम्मार्गस्यावर्त्तनीयत्वात् कियन्तो ग्रहाः
सम्मार्जनीया-इत्याकाङ्क्षायां अनुदयात् उद्देश्यग्रहगता संख्या
न विवक्षिता । तस्मात् सर्वे ग्रहाः सम्मार्जनीयाः । प्रकृतेऽप्युद्दे-
श्यसंख्यादिगता षट्संख्या न विवक्षिता ।

अथोच्येत—अस्यां पराशरस्मृतौ वाक्यान्तरेण सन्ध्यादी-
नां निरुद्धभावादनेनैव वाक्येन नित्यत्वविशिष्टानां तेषा-
मुत्पादनादुपादेयगतत्वेन पञ्चेकत्ववद्विवक्षितत्वमेव संख्याया
युक्तं—इति । एवं तर्हि सन्ध्यासहितं स्नानं सन्ध्यास्नानमिति
समाप्ते सति अङ्गेन स्नानेन सहिताया अङ्गीभूतायाः सन्ध्याया
एकत्वेन परिगणनाव्रात्र षट्संख्या विरुध्यते—इति गमयि-
तव्यम् ।

सन्ध्यादीनां नित्यत्वं चाग्निहोत्रादिवत् यावज्जीवकर्त्तव्य-
तयाऽवगम्यते । जीवनवदधिकारत्वं च 'दिने दिने'—इति वी-

१. D. reads तद्ग्रहस्य. २. All others except A. I. read -गुणभूतत्वात्.

३. II. reads पशुनेति परिच्छेदकाकाङ्क्षायाः तत्परिच्छेदकत्वेनैकत्वसंख्या;
while all others except A. and I. read त्यवच्छेदकाकाङ्क्षायां. ४. B. C. and
E. read निरुद्धभावात्; while D. reads निरूप्याभावात्. ५. I. reads -रित्वं.

प्सया ऽवगम्यते । यथा—‘वसन्तं वसन्ते ज्योतिषा यजेत’—
इत्यत्र वीप्सया तदवगमस्तद्वत् ॥ ३९ ॥

‘आतिथ्यं वैश्वदेवं च’ इत्युक्तं तत्र कीदृशोऽतिथिरित्या-
काङ्क्षायामाह—

• इष्टो वा यदि वा द्वेष्टो मूर्खः पण्डित एव वा ।

सम्प्राप्तो वैश्वदेवान्ते सोऽतिथिः स्वर्गसङ्क्रमः ॥४०॥

इष्टः सख्यादिः । तस्य च भोजनीयत्वं याज्ञवल्क्येनोक्तम्—

‘भोजयेच्चागतान् कालं सखि-सम्बन्धि-बान्धवान्’ ।

(या. स्मृ. १. १०४)

इति । द्वेष्टस्य भोजनीयत्वं मनुना निन्दितम्—

‘काममभ्यर्चयेन्मित्रं नाभिरूपमपि त्वरिम् ।

द्विषता हि हविर्भुक्तं भवति प्रेत्य निष्फलम्’ ॥

(म. स्मृ. ३. १४४)

इति । एवं सत्यरि-मित्रविवेको यथा क्रियते तथैवाति-
थीवपि तत्प्रसक्तौ तन्निराकरणाय ‘इष्टो वा यदि वा द्वेष्टः’—
इत्युक्तम् । मूर्खस्य भोजनीयत्वं स्मृत्यन्तरे निषिद्धम्—

‘नष्टशौचे व्रतभ्रष्टे विप्रे वेदविवर्जिते ।

दीयमानं रुदत्यन्नं किं मया दुष्कृतं कृतम्’ ॥

(व्या. स्मृ. ४. ५२)

इति । पण्डितस्य भोजनीयत्वं मनुना प्रशंसितम्—

* धरणीधरस्तु—‘सर्वसङ्क्रमः’ अमुमेव पाठमाश्रित्य ‘सर्वे सङ्क्रमाः
सत्सङ्गादयो यस्मात्’ इति व्याचख्यौ ।

१. M. reads प्रियो for इष्टो. २. J. K. L. and M. read वैश्वदेवे तु
सम्प्राप्तः. ३. K. and L. read सर्वसङ्क्रमः. ४. The text of Manu reads
कामं आर्त्तयेन्मित्रं; while all others except A. and १. substitute the
word निष्यं for मित्रं. ५. G. reads जीवमानः. ६. H. and I. read
वर्जितम् for वसंसितम्.

‘श्रोत्रियाथैव देयानि हव्य-कंव्याथि दातृभिः ।

अर्हत्तमाय विप्राय तस्मै दत्तं महाफलम् ॥

(म. स्मृ. ३. १२८)

इति । एवं सति श्राद्धादाविव वैश्वदेवान्तेऽपि पण्डित-
मूर्खविवेकप्रसक्तौ तन्निराकरणायोक्तं ‘मूर्खः पण्डित एव वा’-
इति । वैश्वदेवान्तशब्देन देवयज्ञ-भूतयज्ञ-पितृयज्ञानामुपरि
घटिका-पादमात्रपरिमितः कालो विवक्षितः । तथा च मा-
कण्डेयपुराणवचनमुदाहृतम्—

‘मुहूर्तस्याष्टमं भागम् ।

(मा. पु. २९. २९)

इति । अत एव तस्मिन् काले समागमनमेवातिथिलक्षणं
नेतरद्विव्यादि । संक्रम्यतेऽनेनेति संक्रमः स्वर्गस्य संक्रमः
स्वर्गसंक्रमः स्वर्गप्राप्तिहेतुरिति यावत् । तथा चाऽऽश्वमेधिके—

‘क्षुत्पिपासाश्रमार्त्ताय देश-कालागताय च ।

सत्कृत्स्वान्नं प्रदानव्यं यज्ञस्य फलमिच्छता’ ॥

(वृ. गौ. स्मृ. ३. ७६)

इति ॥ ४० ॥

तमेवातिथिं विज्ञिनाष्टि—

‘दूराध्वोपगतं आन्तं वैश्वदेव उपस्थितम् ।

अतिथिं तं विजानीयान्नातिथिः पूर्वमागतः ॥४१॥

१. I. omits -पितृयज्ञ- and reads भूतयज्ञादानामुपरि. २. D. omits च.
३. B. C. and F. read क्षुराणे. ४. B. C. E. F. and G. read अत एव त-
स्मिन् काले. ५. B. C. and F. read विप्रस्त्वादि. ६. The text of Vriddha
Gautama reads -कालागताय. ७. D. G. and H. read दूराध्वोपगतं; while
M. reads दूराध्वान् अथि आन्तं. ८. B. C. and F. read नातिथिं पूर्वमागतम्.

दूराध्वोपगतं प्रभ्रान्तरादागतम् । श्रान्तं क्षुब्ध-तृष्णापरि-
पीडितम् । अत एव व्यासः—

‘अतिदूरागतः श्रान्तः क्षुब्ध-तृष्णा-श्रमक्रीडितः ।

यः पूज्यते अतिथिः सम्यगपूर्वः क्रतुरेव सः’ ॥

इति । ‘नातिथिः पूर्वमागत’ इति तस्मिन्नेव दिने अतिथिर्नोत्तरे
दुरित्यर्थः । तथा च मनुः—

‘एकरात्रं हि निवसन्नतिथिर्ब्राह्मणः स्मृतः’ ।

(म. स्मृ. ३. १०२)

इति । ‘वैश्वदेव उपस्थितम्’— इति दिवसाभिप्रायम् ।
सायं तु वैश्वदेवकाले कालान्तरे वा प्राप्नोति अतिथिरेव । तथा
च मनुः—

‘अप्रणोद्यो अतिथिः सायं सूर्योदो गृहमेधिना’ ।

काले प्राप्तस्त्वकाले वा नास्यः श्रमश्च गृहे वसेत् ॥

(म. स्मृ. ३. १०५)

इति । सूर्योद इति अस्तं गच्छता सूर्येण देशान्तरगमना-
शक्तिमुत्पाद्य गृहं प्रापित इत्यर्थः । याज्ञवल्क्यो अपि—

‘अप्रणोद्यो अतिथिः सायमपि वाग्भू-तृणोदकैः’ ।

(या. स्मृ. १. १०७)

इति । प्रचेता अपि—

१. D. G. and H. here also read दूराध्वोपगतं. २. Except A, all others read आवूराश्रमं प्राप्तः or आवूराश्रमप्राप्तः. ३. A. reads यः पूज्यश्चा-
तिथिः. ४. A. reads अयूपः; while D. reads अपशुः. Both are correct.
५. The text of Manu substitutes तु for हि. ६. D. omits सायं तु.
७. I. reads सूर्योदो, but it is incorrect. सूर्योदो is the correct form.
८. I. reads गृहमेधिनाम्. ९. The text of Manu reads वसन्, but the com-
mentators do not follow the reading.

‘यः साद्यं वैश्वदेवान्ते सायं वा गृहमागतः ।

देववत् पूजनीयो सौ सूर्योदः सोऽतिथिः स्मृतः ॥

इति ॥ ४१ ॥

दुराश्वपदव्यावर्त्यमाह—

नैकग्रामीणमतिथिं संगृहीत कदाचन ।

अनित्यमागतो यस्मात्तस्मादतिथिरुच्यते ॥ ४२ ॥

न विद्यते तिथिर्यस्यासावतिथिः । तथा च यमः—

‘तिथि-पर्वोत्सवाः सर्वे व्यक्ता येन मेहात्मना ।

सोऽतिथिः सर्वभूतानां शेषानभ्यागतान् विदुः’ ॥

इति । मन्वादि-युगादिप्रभृतिषु तिथिविशेषेषु द्रव्यला-
भमुद्दिश्य येऽभ्यागच्छन्ति तेऽभ्यागताः । तादृशं तिथिविशे-
षमनपेक्ष्य यदाकदाचित् क्षुत्तृष्णादिपीडया वा समागतो
ऽतिथिः । एवं च सति एकग्रामीणः प्रतिनियतेषु तिथिविशेषेषु
च समागच्छति, नासावतिथिः । यस्तु ग्रामान्तरादकस्मीदंसङ्के-
तितो बुभुक्षुः सन्नागच्छति सोऽनित्यमागतः । तमेवातिथि-
त्वेन संगृहीत नेतरम् । तथा च विष्णुपुराणम्—

‘अज्ञातकुल-नामानमन्यतः समुपागतम् ।

पूजयेदतिथिं सम्यक् नैकग्रामनिवासिनम् ॥

अकिञ्चनमसम्बन्धमन्यदेशादुपागतम्’ ।

(वि. पु. ३. ११. ५८-५९)

१. I. reads सूर्योदः. २. I. reads न गृह्णीत for संगृहीत. ३. D. reads महात्मनः. ४. B. C., and F. read आपतिरिति for असङ्केतितो. ५. I. स एवातिथित्वेन संगृह्यते नेतरः for तमेवातिथित्वेन संगृह्णीत नेतरम्. ६. A. reads समुपस्थितम्. ७. The text of Vishnu Purāṇa reads -संबन्ध- instead of -संबन्धि-.

इति । मार्कण्डेयो अपि—

‘न मित्रमतिथिं कुर्यान्नैकग्रामनिवासिनम् ।’

अज्ञातकुल-नामानं तत्काले समुपस्थितम् ॥

तुभुक्षुमागतं श्रान्तं याचमानमकिञ्चनम् ।

ब्राह्मणं प्राहुरतिथिं से पूज्यः शक्तितो बुधैः’ ॥

(मा. पु. २९. २६-२७)

इति । मनुरपि—

‘नैकग्रामीणमतिथिं विप्रं साङ्गतिकं तथा ।

उपस्थितं गृहं विद्याद्वार्या यन्नाश्रयो अपि वा’ ॥

(म. स्मृ. ३. १०३)

इति । एकग्रामवासी अतिथिधर्मेणागतो ऽप्यतिथिर्न भव-
ति । तथा साङ्गतिकः सङ्गतेन चरः सङ्गतपूर्वो दृष्टपूर्वः—इति
यावत् नापि यत्र कचन देशे अतिथिधर्मेणागतो अतिथिः ।
किन्तु यस्मिन् स्वकीये परकीये वा देशे भार्या अश्रयो वा भव-
न्ति तत्रैवोपस्थितो अतिथिर्भवति ॥ ४२ ॥

अतिथेः स्वरूपं निरूप्य तस्मिन्नागते सति यत्क-
र्तव्यं नृदाह—

• अतिथिं तत्र सम्प्राप्तं पूजयेत् स्वागतादिना ।

अर्घ्यासनप्रदानेन पादप्रक्षालनेन च ॥ ४३ ॥

१. D. reads संपूज्यं; while B. C. E. and F. read संपूज्यः.
२. D. omits अतिथिधर्मेणागतोऽपि. ३. I. omits वा. ४. M. omits
this verse. ५. All others except A. and I. read तथाऽऽसनप्रदानेन.

श्रेष्ठं यद् चान्नदानेन प्रियप्रश्नोत्तरेण च ।

गच्छन्तं चानुयानेन प्रीतिमुत्पादयेत् गृही ॥ ४४ ॥

क्षिप्रदद्यात्ख्यातमेतच्छ्लोकद्वयम् । तदेतत् ब्राह्मणविषयम् ।

‘यद्ब्राह्मणेभ्योऽन्नं ददाति’ ।

इति ।

‘अहरहर्ब्राह्मणेभ्योऽन्नं दद्यात्

(बौ. स्मृ. २. ५. १०. ५)

इति श्रुति-स्मृतिभ्यामुदाहृतत्वात् । क्षत्रियादयस्तु न ब्राह्मणगृहे इति यिसत्कारमर्हन्ति । किन्तु भोजनमात्रम् । तथा च मनुः—

“न ब्राह्मणस्य त्वतिथिर्गृहे राजन्य उच्यते ।

वैश्य-गूत्रौ सखा चैव जातयो गुरुरेव च ॥

यदि त्वतिथिधर्मेण क्षत्रियो गृहमाव्रजेत् ।

भुक्तवत्सु च विप्रेषु कामं तमपि भोजयेत् ॥

वैश्य-शूद्रावपि प्राप्तौ कुटुम्बेतिथिधर्मिणौ ।

भोजयेत् सह भृत्यैस्तावानृशंस्यं प्रकल्पयेत् ॥

१. J. K. L. and M. omit this verse. २. B. C. D. and F. read गच्छन्तं चानुयानेन; while G. and H. read चानुयानेन. ३. D. E. G. and H. read व्याख्यानं. ४. D. and G. omit इति. ५. I. reads ददाति. ६. B. C. E. F. and H. read स्मृत्योः. ७. All others except A. read ब्राह्मणस्य त्वतिथिः. ८. The text of Manu (Bombay Edition, 1887) read भुक्तवत्सु-क्तविप्रेषु, but the commentators do not follow this. ९. B. C. and F. read ना for वा. १०. I. reads प्रकल्पयेत्; while the text of Manu reads प्रयोदयन्. ६

इतद्गानपि संख्यादीन् सम्प्रीत्या गृहमागन्तान् ।

प्रकृत्यान्नं* यथाशक्ति भोजयेत् सह भार्यया ॥

(म. स्मृ. ३. १. १२-११३)

इति । आसनादिदाने विशेषमाहं सं एव—

‘आसनावसथो शय्यामनुव्रज्यामुपासनम् ।

उत्तमेषूत्तमं कुर्याद्धीने हीनं समे समम्’ ॥

(म. स्मृ. ३. १. ७)

इति ॥ ४३-४४ ॥

अतिथिसत्कारकरणे प्रयत्नवायमाह—

अतिथिर्यस्य भग्नशो गृहात् प्रतिनिवर्त्तते ।

पितरस्तस्य नाश्रान्ति इश वर्षाणि पञ्च च ॥४५॥

* ‘प्रकृत्य प्रकर्षेण अन्नं कृत्वा संस्कृत्य’-इति मेधातिथिः । ‘प्रकृत्य संपाद्य’-इति राघवानन्दः । ‘प्रकृत्य प्राधान्यं प्रकाश्य’ इति यावत्-इति नन्दनः । ‘प्रकृत्यान्नं प्रकर्षेणान्नं कृत्वा’-इति रामचन्द्रः । ‘प्रकृष्टमन्नं कृत्वा’-इति कुल्लूकभट्टः । सर्वज्ञनारायण-गोविन्दराजौ तु ‘संस्कृत्य’ इति पाठमाश्रितवन्तौ ।

१. B. C. F. and I. read **संस्कृत्यान्नं**. २. Except A. and the text of Mann all others read **आसनावसथे**. ३. The text of Mann reads **उपासनाम्**. ४. This verse is found in J. K. and L; the texts of Parāśara. The commentators Nandapaṇḍita and Dharaṇidhara have made commentaries on it; but Maṭṭhavāchārya quotes this verse from Mann, and it appears in the same. ५. These two verses appear in J. K. and L. as the 55th and 58th Śloka; but M. omits the whole of the first of these.

काष्ठभारसहस्रेण घृतकुम्भं शतेन च ।

अतिथिर्यस्य भग्नाशस्तस्य होमो निरर्थकः ॥ ४६ ॥

अहमस्थं गृहे भोक्ष्ये— इत्याशया समागतोऽतिथिर्यदि भोजनमप्राप्य तद्गृहान्निवर्त्तेत तदा गृहिणां क्रियमाणं पैतृकं निष्फलं स्यात् । तथा दैविकेमपि विहितद्रव्याद्यङ्गसम्पन्नमपि निष्फलं भवेत् । तथा च मनुः—

‘शिलतोऽप्युञ्छतो नित्यं पञ्चाग्नीनपि अंहतः ।

सर्वं सुरुतमादत्ते ब्राह्मणोऽर्चितो वसन्’ ॥

(म. स्मृ. ३. १००)

इति । आश्वमेधिके ऽपि—

‘साङ्गोपाङ्गोस्तथा वेदान् पठतीह दिने दिने ।

न चाऽतिथिं पूजयति वृथा स पठति द्विजः ॥

पाकयज्ञैर्महायज्ञैः सोमसंस्थाभिरेव च ।

ये यजन्ति न चार्चन्ति गृहेष्वतिथिमुपागतम् ।

तेषां यशोऽभिक्रामानां दत्तमिष्टं च यद्भवेत् ।

वृथा भवति तत्सर्वमाशया हतया हतम् ॥

(वृ. गौ. स्मृ. ६. ६७-६९)

इति । अत्र सुरुतहान्यभिधानं दुष्कृतप्रतिरेप्युपलक्षणम् । तथा च विष्णुः—

१. I. reads वैदिकोऽपि. २. D. reads शिलानप्युञ्छतो, and G. II. and the text of Manu read शिलानप्युञ्छतः; while I. शिलोञ्छौ चरतः. ३. The text of Vṛiddha Gautama reads स्तु यो देवान्. ४. The text of Vṛiddha Gautama reads नित्यमग्नौ पाकयज्ञैः for पाकयज्ञैर्महायज्ञैः. ५. The text of Vṛiddha Gautama reads चाऽमन्ति. ६. The text of Vṛiddha Gautama reads अयुतया. †

‘अतिथिर्यच्च भग्नो गृहस्थस्य तु’ गच्छति ।

तस्मात् सुकृतमादाय दुष्कृतं तु प्रयच्छति । ॥

इति । आश्वमेधिके अपि—

‘वैश्वदेवान्तिके प्राप्तमतिथिं यो न पूजयेत् ।

स चाण्डालत्वमाप्नोति सद्य एव न संशयः ॥

निवासयति यो किं देश-कालागतं गृहात् ।

पतितस्तत्क्षणादेव जायते नात्र संशयः । ॥

इति ॥ ४९-४६ ॥

अतिथिसत्कारं प्रशंसति—

सुक्षेत्रे वापयेद्बीजं सुपात्रे निक्षिपेद्धनम् ।

सुक्षेत्रे च सुपात्रे च ह्युप्तं दत्तं न नश्यति ॥ ४७ ॥

यथा सुक्षेत्रोप्तबीजं न विनश्यति किन्तु महते फलाय कल्पते । तथा सुपात्रे अतिथौ दत्तमन्नादिकं मक्षय्यफलमित्यर्थः । तदीह मनुः—

‘नैव स्वयं तदश्रीयादतिथिं यत्र भोजयेत् ।

धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वर्ग्यं चातिथिपूजनम् ॥

(म. स्म. ३. १०६)

१. All others except A. and I. read देश-कालातिथिं for देश-कालागतं. २. M. reads the whole verse as follows:—

सुक्षेत्रे वापयेद्बीजं सुपात्रे वापयेद्धनम् ।

सुक्षेत्रे च सुपात्रे च यत्किञ्च नैव नश्यति ॥

This verse appears also in J. K. and L. under number 57. ३. Except A. and H. all others read नश्यति for दत्तं न नश्यति. ४. Except A. and I. others read महाफलप्रदमित्यर्थः; while H. reads महाफलमित्यर्थः. ५. The text of Manu reads नैव, and substitutes वातिथि- for चातिथि-.

इति । आश्रमेधिके अपि—

‘पादाभ्यङ्गाम्बुदानैस्तु यां श्रुतिं पूजयेत्परः ।

पूजितस्तेन राजेन्द्र भवामीह न संशयः’ ॥

(वृ. गौ. स्मृ. ६. ५७)

इति । शातातपो अपि—

‘स्वाध्यायेनाग्निहोत्रेण यज्ञेन तपसा तथा ।

नाऽवाप्नोति गृही लोकान् यथा त्वतिथिपूजनात्’ ॥

इति ॥ ४७ ॥

‘आतिथ्यकर्तुर्नियममाह—

न पृच्छेद्गोत्र-चरणे न स्वाध्यायं श्रुतं तथा ।

हृदये कल्पयेद्देवं सर्वदेवमयो हि सः ॥ ४८ ॥

इति । श्राद्धे ह्यादावेव ब्राह्मणः परीक्षणीय इति मनुना दर्शितम्—

‘दूरादेव परीक्षेत ब्राह्मणं वेदपारगम् ।

तीर्थं तद्ब्रह्म-कल्याणं प्रदानं सोऽतिथिः स्मृतः’ ॥

(म. स्मृ. ३. १३०)

इति । यमेनाऽपि—

‘पूर्वमेव परीक्षेत ब्राह्मणान् वेदपारगान् ।

शरीरप्रभवैर्दोषैर्विशुद्धांश्चरितव्रतान्’ ॥

इति । अतः श्राद्धन्यायेनाऽतिथ्ये अपि कर्मणि गोत्रादिपरी-

१. B. C. and F. read पादाभ्यङ्गाम्बुदानैस्तु, and D. E. G. and H. पादाभ्यङ्गाम्बु-दानैस्तु; while the text of Vṛiddha Gautama पादाभ्यङ्गोऽनपानैस्तु.

२. M. reads त्चरणं. ३. J. K. and L. read स्वाध्यायं च व्रतानि च for न स्वाध्यायं श्रुतं तथा, and for the same M. reads न स्वाध्याय-व्रतानि च.

४. J. K. L. and M. read हृदये कल्पयेत्तस्मिन् for हृदये कल्पयेद्देवं. ५. B. C. D. E. F. and G. read प्रादाने for प्रदाने.

क्षाप्राप्तौ तन्निवार्यते । गोत्रं वंशप्रवर्त्तकमहर्षिसम्बन्धः । चरणमाचारः । शाखाविशेषः स्वाध्यायः । श्रुतं व्याकरण-मीमांसादि । एतद्देश-नामादीनामुपलक्षणम् । अत्र एव न्यमः—

‘न पृच्छेद्गोत्र-चरणे देशं नाम’ कुलं श्रुतम् ।

अध्वनोऽप्यागतं विप्रं भोजनार्थमुपस्थितम् ॥

इति । न केवलं गोत्रप्रभ्रादिवर्जनं किं तर्हि देवताबुद्धिरपि कर्त्तव्या । तदुक्तं शातातपेन—

‘चित्ते विभावयित्तस्मिन् व्योसः स्वयमुपागमः’ ।

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘स्वाध्याय-गोत्र-चरणमपृष्ट्वा चै तथा कुलम् ।

हिरण्यगर्भबुद्ध्या तं मन्येताऽभ्युक्तं गृही’ ॥

(वि. पु. ३. ११. ६०)

इति । देवता-बुद्धिविषयत्वे हेतुः सर्वदेवमयत्वम् । तच्च पुराणरूपे दर्शितम्—

‘धाता प्रजापतिः शक्रो बह्निर्वसुगणो यमः ।

प्रबुद्ध्याऽतिथिर्मेते वै’ भुञ्जते ऽन्नं द्विजोत्तम’ ॥

इति । गोत्रादिप्रश्ने बाधो यमेन दर्शितः—

‘देशं नाम कुलं विद्यां पृष्ट्वा यो ऽन्नं प्रयच्छति ।

न स तत्फलमाप्नोति दत्त्वा स्वर्गं न गच्छति’ ॥

इति । यथाऽऽतिथ्यकर्त्ता गोत्रादीन् न पृच्छेत् तथाऽतिथिरपि

१. D. and G. read व्यासं स्वयमुपागतम्. २. B. C. D. E. F. G. read H. read अपृष्ट्वाऽपि. ३. All others, except A. and I. read शक्रो for शक्रो, but it seems to be a mistake. ४. A. reads -मेवैते. ५. I. reads गोत्रादिप्रश्ने फलाभावो औपायनेन दर्शितः, but the following quotation is not found in the text of Baudhāyana.

न ब्रूयात् । तदाह मनुः—

न भोजनार्थं स्वे विप्रः कुल-गोत्रे निवेदयेत् ।

भोजनार्थं हि ते शंसन्वान्ताशीत्युच्यते बुधैः ।

(म. स्मृ. ३, १०९)

इति ॥ ४८ ॥

अतिथिदृष्टान्तेन भिक्षुकयोर्यति-ब्रह्मचारिणोः पूज्यतामाह—

अपूर्वः सुव्रती विप्रो ह्यपूर्वश्चातिथिर्यथा ।

वेदाभ्यासरतो नित्यं तार्वपूत्रौ दिने दिने ॥ ४९ ॥

सुष्ठु व्रतं सुव्रतं मोक्षहेतुर्यतिधर्मः सोऽस्यास्तीति सुव्रती
यतिः । वेदाभ्यासरतो ब्रह्मचारी । तदर्थत्वात् तस्याऽऽश्रमस्य ।
तावुभौ प्रतिदिनमपूर्वातिथिवत् पूज्यावित्यर्थः । तथा च
याज्ञवल्क्यः—

‘सत्कृत्य भिक्षवे भिक्षा दातव्या सुव्रताय च’ ।

(या. स्मृ. १, १०८)

इति । नृसिंहपुराणे—

१. G. reads यो for स्वे. २. D. reads पूजामाह. ३. M. reads सुव्रतो विप्रो
अपूर्वो वाऽतिथिस्तथा; while D. E. G. H. I. J. K. and L. read अपूर्वश्चा-
तिथिस्तथा. ४. D. reads त्रयोऽपूर्वं दिनेदिने, E. G. and H. read त्रयोऽपूर्वं
दिनेदिने, I. reads त्रयोऽपूर्व्या दिनेदिने and J. K. L. and M. read त्रयो-
ऽपूर्वा दिनेदिने. The commentators follow none of these readings.
५. G. reads अश्रमस्य for आश्रमस्य. ६. B. C. D. E. F. G. H. and I. read
मपूर्वा वातिथिवत्. ७. I. adds ऽति to नृसिंहपुराणे.

‘भिक्षां च भिक्षवे दद्यात् परित्राद्-ब्रह्मचारिणे ।

अकल्पितान्नादुद्धृत्य सर्वव्यञ्जनसंयुताम्’ ॥

(नृ. पु. ५८. ९८-९९; ल. हा. स्मृ. ४. ५९)

इति । मनुष्यपि—

‘भिक्षां च भिक्षवे दद्याद्विधिवद् ब्रह्मचारिणे । (९४)

यत्पुण्यफलमाप्नोति गां दत्त्वा विधिवद् गुरोः । ;

तत्पुण्यफलमाप्नोति भिक्षां दत्त्वा द्विजो गृही’ ॥

(म. स्मृ. ३. ९४-९५)

इति । यमः—

‘सत्कृत्य भिक्षवे भिक्षां यः प्रयच्छति मानवः ।

गोप्रदानसमं पुण्यं तस्याह भगवान् यमः’ ॥

इति । ब्रह्मचारिणं स्वस्तीति वाचयित्वा तदस्ति जलं प्र-
दाय भिक्षाप्रदानं कार्यम् । तदाह गौतमः—

‘स्वस्तिवाच्य भिक्षादानमपूर्वम्’ ।

(गौ. स्मृ. ५. ७)

इति ॥ ४९ ॥

१. I. has made a mistake here. It omits the following:—

‘भिक्षां च भिक्षवे दद्यात् परित्राद्-ब्रह्मचारिणे ।

अकल्पितान्नादुद्धृत्य सर्वव्यञ्जनसंयुताम्’ ॥

इति । मनुष्यपि. २. B. C. and F. read यत्तवद् ब्रह्मचारिणे. ३. D. omits this whole line through mistake. ४. The text of Nṛsiṃha Purāṇa reads आकल्पितान्नादु-; while H. reads कल्पितान्नादु- ५. D. substitutes सत्कृतम् for संयुताम्, and B. C. JI. read सर्वव्यञ्जनसंयुताम्. ६. D. reads पुण्यं. ७. D. reads भिक्षादानपूर्वम्; while all others, except A. and E. read भिक्षादानमपूर्वम्. We have compared here five different manuscripts of the text of Gāṭama. Three of them follow our reading.

यति-ब्रह्मचारिणौ यदा वैश्वदेवान्ते समागच्छतस्तदाऽस्त्वेवं
यदा तु वैश्वदेवात् पूर्वमागच्छतस्त्वदा कथमित्यत आह—

वैश्वदेवे तु सम्प्राप्ते भिक्षुके गृहमागते ।

उद्धृत्य वैश्वदेवार्थं भिक्षुकं तु विसर्जयेत् ॥५०॥

सम्प्राप्ते प्रसक्ते अननुष्ठिते सतीति यावत् । तथा च नृसिंह-
पुराणे—

‘अकृते वैश्वदेवे तु भिक्षुके गृहमागते ।

अवश्यमेव दातव्यं स्वर्गसोपानकारकम् ।

उद्धृत्य वैश्वदेवान्नं भिक्षां दत्वा विसर्जयेत् ॥

(नृ. पु. ५८. १००; ल. हा. स्मृ. ४. ६०)

यावद्वैश्वदेवाद्युपयुक्तमन्नं तावत् पृथक् कृत्वा विशिष्टाद-
न्नाद्भिक्षां दत्वा भिक्षुकं विसर्जयेत् ॥ ५० ॥

अकरणे प्रत्यवायमाह—

यतिश्च ब्रह्मचारी च पक्वान्नस्वामिनावुभौ ।

तयोरन्नमदत्वा तु भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥५१॥

चान्द्रायणस्य लक्षणं वक्ष्यामः प्रायश्चित्तप्रकरणे । प्राय-

१. Except A. and E. all others read यद्दि; while II. omits यद्दि. २. I. reads कथमित्याह. ३. L. reads वैश्वदेवेति for वैश्वदेवे तु. ४. M. reads भिक्षां दत्वा विसर्जयेत्; while J. K. and L. read भिक्षुकं तु विसर्जयेत्. ५. The text of Nṛsiṃha Purāṇa reads भिक्षौ भिक्षार्थमागते. ६. Except A. and the text of N. P. all others omit this line. ७. I. omits उद्धृत्य वैश्वदेवान्नं through mistake, and B. C. D. E. F. G. and H. read वैश्वदेवार्थं. ८. M. substitutes च, for तु. ९. Except A. and E. all others omit प्रायश्चित्तप्रकरणे.

श्चित्तविधानात् प्रत्यरायो ऽवगम्यते । तयोः पंक्तान्नस्वामित्वाद-
न्नादाने प्रत्यवाय उपपन्नः । अत एव पुराणे ऽपि— .

‘अहुत्वाऽग्निमसन्तर्प्य तपस्विनमुपस्थितम् ।’

अशित्वा तु परे लोके स्वानि मांसानि खादयेत् ॥

इति ॥ ५१ ॥

बहुषु भिक्षुकेषु आगतेष्वशक्तेन किं कर्त्तव्यमित्या-
शङ्क्याह—

‘दद्याच्च भिक्षां त्रितयं परिव्राड्-ब्रह्मचारिणाम् ।’

इच्छया च ततो दद्याद्विभवे सत्यवारितम् ॥ ५२ ॥

निगदव्याख्यानमेतत् । यथाविभवं भिक्षादानं कूर्मपु-
राणे दर्शितम्—

‘भिक्षां वै भिक्षवे दद्यात् विधिवद् ब्रह्मचरिणे ।’

दद्यादन्नं यथाशक्ति ह्यर्थिभ्यो लोभवर्जितः ॥

(कृ. पु. १. २. १८. ११७)

इति ॥ ५२ ॥

यतिभिक्षाप्रदाने नियममाह—

यतिहस्ते जलं दद्याद्वैक्ष्यं दद्यात् पुनर्जलम् ।

तद्वैक्ष्यं मेरुणा तुल्यं तज्जलं सागरोपमम् ॥ ५३ ॥

१. I. reads उन्नीत्. २. B. C. D. E. F. and H. read खादति, and G. खावते. ३. M. omits the whole verse. ४. J. K. and L. read चारिणोः. ५. D. substitutes वा for च. ६. A. reads ततो विहाद्विभवे for ततो दद्याद्विभवे. ७. H. and I. read व्याख्यातः, ८. Some manuscripts read भैक्षं. ९. D. omits the following portion:—

तद्वैक्ष्यं मेरुणा तुल्यं तज्जलं सागरोपमम् ॥ ५३ ॥

स्पष्टमेतत् । तच्च भैक्ष्यं सति विभवे बहुलं नीतव्यम् ।

स्पष्टमेतत् । तच्च भैक्ष्यं सति विभवे बहुलं दातव्यम् । त-
दुक्तं ब्रह्मपुराणे—

‘यः पार्श्वपूरणीं भिक्षां यतिभ्यः सम्प्रयच्छति ।
विमुक्तः सर्वपापेभ्यो नासौ दुर्गतिमालुयात् ॥’

इति ॥ ५३ ॥

अथा, भिक्षुकस्य समागतस्यातिथ्यमवश्यं कर्त्तव्यं तद्वदै-
श्वर्योपेतस्यापि स्वगृहे समागतस्यातिथ्यमभ्युदयकामिना
कर्त्तव्यमित्याह—

यस्य छत्रं हयश्चैव कुञ्जरारोहमृद्धिमत् ।

ऐन्द्रं स्थानमुपासीत तस्मात्तं न विचारयेत् ॥ ५४ ॥

यस्य छत्र-हयौ विद्येते तस्यातिथ्यं कुर्वन् ऐन्द्रं पदमवाप्नु-
यात् । एतस्माद्वचनात् पूर्वोत्तरवचनयोरातिथ्यविषयत्वात्
तत्प्रकरणान्तःपातित्वेनास्मिन् वचने ऽनुक्तमपि ‘आतिथ्यं
कुर्वन्’—इति पदद्वयं सन्दर्शन्यायेनात्र लभ्यते । कुञ्जर-
स्यारोहो यस्मिन्नैन्द्रे पदे तत्कुञ्जरारोहम् । ऋद्धिर्मुत्तपानाप्स-
रःसेवादिरास्मिन्नस्तीत्यृद्धिमत् । छत्रादिमान् क्षत्रियादिरतिथि-
जोति-कुलाचारैर्यद्यपि हीनः तथापि तत्पूजायाः स्वर्गप्राप्ति-
हेतुत्वात् तमतिथिं हीनत्वबुद्ध्या—पूज्यो ऽयं न वा?—इति न
विचारयेत् न सन्दिह्यात् । किन्तु विश्वरबुद्ध्या तं पूजयेत् ।

यद्यपि भिक्षुकवन्नायमस्मिन् जन्मनि तपस्वी तथाप्यतीते

१. This verse is omitted by J. K. L. and M. २. H. reads गृही तस्व-
बुद्ध्या.

जन्मन्यनेन तपो ऋषितम् । अन्ययेद्दशस्यैश्वर्यस्य प्राप्त्यस-
म्भवात् । अत एव विभूतिमत ईश्वरांशत्वं भगवतादर्शितम्-

‘यद्यद् विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।

तत्तदेवाश्वगच्छ त्वं मम तेजोऽशसम्भवम् ॥’

(भ. गी. १०. ४१)

इति । तस्मादुक्तमैश्वर्योपेतस्यातिथ्यम् ॥ ५४ ॥

यदुक्तं वैश्वदेवात् पूर्वमपि यति-ब्रह्मचारिभ्यां भिक्षा दात-
व्येति तत्रोपपत्तिमाह-

वैश्वदेवकृतं पापं शक्तो भिक्षुर्व्यपोहितुम् ।

न हि भिक्षुकृतान्दोषान्वैश्वदेवो व्यपोहति ॥५५॥

वैश्वदेवस्य पश्चात्करणेन प्रसक्तो यो दोषः स भिक्षा-
दानेन निवर्तते । भिक्षापरिहारेण तु यो दोषः नासौ पूर्वकृतेना-
पि वैश्वदेवेन निवर्तते । अत्र भिक्षुशब्दो विद्यार्थादीना-
मुपलक्षकः । तथा च तेषां भिक्षुकत्वं व्यासेनोक्तम्-

‘यतिश्च ब्रह्मचारी च विद्यार्थी गुरुपोषकः ।

अध्वगः क्षीणवृत्तिश्च षडेते भिक्षुकाः स्मृताः ॥

इति । पुराणे अपि-

‘व्याधितस्यार्थहीनस्य कुटुम्बात् प्रच्युतस्य च ।

अध्वानं प्रतिपन्नस्य भिक्षाचर्या विधीयते ॥’

इति ॥ ५५ ॥

१. G. and H. read सर्वे. २. B. C. D. E. and H. read भिक्षुत्वं.
३. D. reads कुलास्त्रात् for कुटुम्बात्. ४. B. C. E. F. G. and H. read प्रप-
न्नस्य for प्रतिपन्नस्य.

वैश्वदेवकृतमित्युक्त्वा बुद्धिस्थत्वाद्वैश्वदेवस्याऽकरणे प्रत्य-
वायमाह -

अकृत्वा वैश्वदेवं तु भुञ्जते ये द्विजाधमाः ।

सर्वेभ्यो निष्फला ज्ञेयाः पतन्ति नरके ऽशुचैः ॥५६॥

निष्फला यथोक्तफलरहिताः । न केवलमिष्टप्राप्त्यभावः
किन्त्वनिष्टप्राप्तिरपि दर्शिता 'पतन्ति नरकेऽशुचौ' इति ॥५६॥

वैश्वदेवदृष्टान्तेनातिथ्याकरणे अपि प्रत्यवायमाह -

वैश्वदेवविहीना ये आतिथ्येन बहिष्कृताः ।

सर्वे ते नरकं यान्ति काकयोनिं व्रजन्ति च ॥५७॥

नरको रौरवादिः । तमनुभूय पश्चात्काकयोनिं व्रजन्ति ॥५७॥

अतिथित्वेन स्तुवन्नन्यानपि भोजनीयानाह -

प्रापो वा यदि चण्डालो विप्रघ्नः पितृघातकः ।

वैश्वदेवे तु सम्प्राप्तः सोऽतिथिः स्वर्गसङ्क्रमः ॥५८॥

प्रापो गोवधाद्युपपातकी । एतेषां भोजनीयत्वमर्थं । न तु अ-
तिथ्यातिथ्यसत्कारार्हत्वम् । एतदेवाभिप्रेत्याऽऽश्वमेधिके वर्णितम् -

१. B. reads वैश्वदेवं कृतमित्युक्त्वा; while A. reads वैश्वदेवं कर्तव्य-
मित्युक्त्वा. २. J. K. and L. omit this verse, ३. M. reads द्विजातयः.

४. M. omits this verse. ५. J. K. and L. read विव्रजिताः. ६. J. K.
and L. substitute ते for च. ७. A. reads अतिथित्वेन प्राप्तस्य पापिष्ठस्याऽपि
भोजनीयतामाह. ८. K. and L. read this as follows :-

चौरो वा यदि चण्डालः शत्रुर्वा पितृघातकः ।

९. D. reads सम्प्राप्ते. १०. I. reads तदेवाभिप्रेत्य.

‘चण्डालो वा श्वपाको वा काले यः कश्चिदागतः ।

अन्नेन पूजनीयश्च परत्र हितमिच्छता’ ॥

इति । विष्णुधर्मोत्तरे—

‘चण्डालो वाऽथ वा पापः शत्रुर्वी पितृघातकः’

‘देश-कालाभ्युपगतो भरणीयो मतो मम’ ॥

इति । उक्तान् पञ्च महायज्ञान् प्रशंसति हस्मीतः—

‘देवावृषीन् पितृश्चैव भूतानि ब्राह्मणांस्तथा’ ।

तेर्पयन् विधिना विप्रो ब्रह्मभूयाय कल्पते’ ॥

(हा. स्मृ. ४. २२)

इति । पुराणे अपि—

‘यत्फलं सोमयागेन प्राप्नोति धन्ववान् द्विजः ।

सम्यक् पञ्च महायज्ञैर्दरिद्रस्तदवाप्नुयात्’ ॥

इति । अकरणे प्रत्यवायमाह व्यासः—

‘पञ्चयज्ञांस्तु यो मोहान्न करोति गृहाश्रमी ।

तस्य नायं न च परो लोको भवति धर्मतः’ ॥

इति ॥ ५८ ॥

पञ्चमहायज्ञानन्तरं भोजनविधिमभिप्रेत्य तदनुवादेन

तत्र वर्जनीयानाह—

यो वेष्टितशिरा भुङ्क्ते यो भुङ्क्ते दक्षिणामुखेः ।

वामपादे करं न्यस्य तद्वै रक्षांसि भुञ्जते ॥ ५९ ॥

१. B. C. and E. read भोजनीयश्च. २. B. C. E. F. G. and H. read कालेऽभ्युपगतो. ३. B. C. E. G. and H. read ‘तेर्पयेत्. ४. The text. reads ब्रह्मलोकाय. ५. G. reads यानेन. ६. D. and I. omit महा. ७. I. omits विधि. ८. B. C. E. F. G. and I. read वामपादकरः स्थित्वा. D. reads वामपादकरे स्थित्वा. H. वामपादे करं कृत्वा. J. and L. वामपादे करं न्यस्तं and K. वामपादकरं न्यस्तं.

भोजनविधिश्च मनुना दर्शितः—

‘भुक्तवत्सु तु विप्रेषु स्वेषु भृत्येषु चैव हि ।

भुङ्क्ष्यातां ततः पश्चादवशिष्टं तु दम्पती’ ॥

(म. स्म. ३. ११६)

इति । विष्णुपुराणे—

‘ततः सुवासिनी-दुःखि-गर्भिणी-वृद्ध-बालकान् ।

भोजयेत् संस्कृतान्नेन प्रथमं तु परं गृही ॥

अभुक्तवत्सु चैतेषु भुञ्जन् भुङ्क्षु सुदुष्कृतम् ।

मृतश्च गत्वा नरकं श्लेष्मभुग् जायते नृप’ ॥

(वि. पु. ३. ११. ६८-६९)

इति । मार्कण्डेयपुराणे अपि—

‘पूजयित्वा ऽतिथीनिष्ठान् ज्ञातीन् बन्धून्स्तथार्थिनः ।

विकलान् बाल-वृद्धांश्च भोजयेदातुरांस्ततः ॥

वाञ्छेत् क्षुत्तृदपरीतात्मा येष्वान्योऽन्नमकिञ्चनः’ ।

(मा. पु. २९. ३७-३८)

इति । भोजने इतिकर्तव्यतामाह औधायनः—

‘उपलिप्ते समे स्थाने शुचौ श्लक्ष्णेणाऽऽसनान्वितं ।

चतुरस्रं त्रिफोणं वा वर्तुलं वाऽर्द्धचन्द्रकम् ॥

१. B. C. D. E. F. G. and H. insert इति । before भोजन-. २. The text of Manu reads भुक्तवत्स्वथ, and I. reads भुक्तवत्सु च. ३. The text of Vishnu Purāṇa reads चरमं for तु परं. ४. The text of Vishnu Purāṇa reads ऽति- for सु-. ५. The text of V. P. reads नरः for नृप. ६. I. omits उपलिप्ते. ७. B. C. D. E. F. G. H. and I. read ऽतिथीनि निःस्थान्. ८. The text of Mārkaṇḍeya Purāṇa inserts च after भोजयेत्. ९. The text of M. P. वाञ्छेत् क्षुत्तृदपरीतात्मा. १०. All others except A. and the text of M. P. read यद्यन्नं रससंयुतम्. ११. I. reads through mistake श्लक्ष्ण-समन्विते.

कर्तव्यमानुपूर्व्येण ब्राह्मणादिषु मण्डलम् ॥

इति । शङ्खेऽपि—

‘आदित्या वसवो रुद्रा ब्रह्मा चैव पितामहः ।

मण्डलान्युपजीवन्ति तस्मात् कुर्वीत मण्डलम् ॥

(ल. आ. स्मृ. ९. २)

इति । कूर्मपुराणेऽपि—

‘उपलिप्तेऽशुचौ देशे पादौ प्रक्षाल्य वै करौ ।

आचम्यार्द्राननो ऋधः पञ्चार्द्रो भोजनं चरेत् ॥

(कूर्. पु. १. २. १९. ४)

इति । व्यासोऽपि—

‘पञ्चार्द्रो भोजनं कुर्यात् प्राङ्मुखो मौनमास्थितः ।

हस्तौ पादौ तथैवास्यमेषु पञ्चार्द्रता मता ॥

(ल. व्या. २. ७२)

इति । जातवेधिकेऽपि—

‘आर्द्रपादस्तु भुञ्जीयात् प्राङ्मुखश्चासने शुचौ ।

प्रादाभ्यां धरणीं स्पृष्ट्वा पादेनैकेन वा पुनः ॥

(वृ. मौ. स्मृ. १३. ४)

इति । तच्च भोजनं शुद्धपात्रे कर्तव्यम् । तदुक्तं कूर्म-
पुराणे—

१. D. omits इति. २. This verse appears in the text of Laghu Vyāsa Smṛiti as follows:—

पञ्चार्द्रो भोजनं कुर्यात् भूम्यां पादौ निधाय च ।

उपलिप्ते शुचौ देशे पादौ प्रक्षाल्य वै करौ ॥

३. B. C. D., E. F. G. and H. read तत्र for तच्च. ;

‘प्रेशस्त-गृहपात्रेषु भुञ्जीताः कुपितो द्विजः’ ॥

इति । प्रशस्तानि च पात्राणि तैठीनसिना दर्शितानि—

‘सौवर्णे राजते ताम्रे पद्मपत्र-पलाशयोः ।

भोजने; भोजने चैवातिरात्रफलमश्नुते ॥

एक एव तु यो भुङ्क्ते विमले कांस्यभाजने ।

चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुः प्रज्ञा यशो बलम्’ ॥

इति । तत्र पद्मपत्र-पलाशपत्रभोजनं गृहिव्यतिरिक्त-विषयम् ।

‘पलाश-पद्मपत्रेषु गृही भुक्त्वैन्दवं चरेत् ।

ब्रह्मचारि-यतीनां च चान्द्रायणफलं लभेत्’ ॥

(व्या. स्मृ. ३. ६३)

इति व्यासस्मरणात् । कांस्यपात्रं तु गृहस्थैकनिषय-
म् । रथ्यादीनां तन्निषेधात् । तदाह प्रचेताः—

‘ताम्बूलभ्यञ्जनं चैव कांस्यपात्रे च भोजनम् ।

यतिश्च ब्रह्मचारी च विधर्वा च विवर्जयेत्’ ॥

इति । तच्च पात्रं भूमौ स्थापनीयम् । यदुक्तं कूर्मपुराणे—

१. This line is not found in the text of Kūrma Purāṇa. २. I. reads ऽकुत्सितो. ३. A. reads पात्रे ताम्रे पद्म-पलाशयोः; while I. reads ताम्रे यम-पत्र-पलाशयोः for ताम्रे पद्मपत्र-पलाशयोः. ४. II. reads भोजने भाजने; while D. and I. read through mistake भोजने भोजने. ५. I. reads -यम- instead of -पद्म-. ६. The text reads this verse as follows:—

पलाश-पद्मपत्रेषु गृहस्थो भोक्तुमर्हति ।

ब्रह्मचारी यतिश्चैव त्रयो यद्भोक्तुमर्हति ॥

७. I. reads भवेत्. ८. I. reads यत्यादीनां तु निषेधात्. ९. H. substitutes तत्र for तत्र.

‘पञ्चार्धं भोजनं कुर्याद्भूमौ पात्रं निधाय तु ।
उपवासेन तत्तुल्यं मनुराह मजापतिः’ ॥

(क. पु. १. ३. १८. ३)

इति- तच्च स्थापनं प्राणाहुतिपर्यन्तम् । पञ्चात्तु यन्त्रि-
कामारोप्य भोक्तव्यम् । तदाह व्यासः—

‘न्यस्य पात्रं तु भुञ्जीत पञ्च ग्रासान् मन्त्रामुने ।

शेषमुद्धृत्य भोक्तव्यं श्रूयतामत्र कारणम् ॥

विपुषां पादसंस्पर्शः पाद-चैलरजस्तथा ।

सुखेन भुङ्क्ते विप्रो हि पित्रर्थं तु न लुप्यते’ ॥

इति । पैतृकभोजने भूमिपात्रप्रतिष्ठापनं न लोपनीयमि-
त्यर्थः । उक्तपात्रनिहितमन्नं नमस्कुर्यात् तदुक्तं ब्रह्मपुराणे—

‘अन्नं दृष्ट्वा प्रणम्यादौ प्राञ्जलिः कथयेत्ततः ।

अस्माकं नित्यमृस्त्वेतदिति भक्त्या स्थ वन्दयेत्’ ॥

इति । वन्दनानन्तरकृत्यमाह गोभिलः—

‘अथातः प्राणाहुतिकल्पो व्याहृतिभिर्गार्थ्यञ्चा-

र्धमभिमन्त्र्य ‘ऋतं त्वा सत्येन परिषिञ्चामि’ इति

सायं, ‘सत्यं त्वर्त्तेन परिषिञ्चामि’ इति प्रातः ।

‘अन्तश्चरसि भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः’ ।

त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपोज्योतीरसो ऽमृतम्’ ॥

१. The text of K. P. substitutes च for तु. २. B. C. and J. read न्यस्तपात्रे तु, and D. G. H. न्यस्तपात्रं तु. ३. All others except A. and I. read शेषसंस्पर्शः for पादसंस्पर्शः. ४. G. reads सुखेन भुङ्क्ते विप्रोऽपि; while H. reads सुखे भुङ्क्ते तु विप्रोऽपि. ५. D. and G. read चरति. ६. In the marginal reading of H. there appears विश्वमूर्तिषु for विश्वतोमुखः.

त्वं ब्रह्मा त्वं प्रजापतिः ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोममृतोप-
 स्तरणमसि'—इत्यपः पीत्वा दश होतारं मनसा-
 नुहन्त्य त्वरन् पञ्च ग्रासान् गृह्णीयात् । प्राणा-
 य स्वाहेति गार्हपत्यमेव तेन जुहोति । अपर-
 नाय स्वाहेत्यन्नाहार्यपचनमेव तेन जुहोति ।
 व्यानाय स्वाहेत्याऽऽहवनीयमेव तेन जुहोति ।
 उदानाय स्वाहेति सभ्यमेव तेन जुहोति ।
 सभानाय स्वाहेत्यावसथ्यमेव तेन जुहोति ।
 इति । एते पञ्च मन्त्राः प्रणवाद्याः कर्त्तव्याः । तथा च
 शौनकः—

‘स्वाहाऽन्ताः प्रणवाद्याश्च नाम्ना मन्त्रास्तु वायवाः ।
 जिह्वयेव ग्रसेदन्नं दर्शनेस्तु न संस्पृशेत् ॥
 इति । जिह्वाग्रसने विशेष आश्रमेधिके दर्शितः—
 ‘यथा रसं न जानाति जिह्वा प्राणाहुतौ नूनं
 तथा समाहितः कुर्यात् प्राणाहुतिमतन्वितः’ ॥
 (वृ. गौ. स्मृ. १३. ९-१०)

इति । प्राणाहुतिष्वङ्गुलिनियममाह शौनकः—
 ‘तर्जनी-मध्यमा-ऽङ्गुष्ठलग्ना प्राणाहुतिर्भवेत् ॥
 मध्यमा-ऽनामिका-ऽङ्गुष्ठैरपाने जुहुयात्ततः ॥
 कनिष्ठा-ऽनामिका-ऽङ्गुष्ठैर्व्याने तु जुहुयाद्भविः ।
 तर्जनीं तु बहिः कृत्वा उदाने जुहुयात्ततः ॥
 सभाने सर्वहस्तेन समुदायाहुतिर्भवेत्’ ।

१. *All others except A. and I. omit त्वं ब्रह्मा. २. I. reads नुहन्त्यै-
 सङ्गुणः ३. *D. and I. read सत्यमेव. ४. Except A. all others read
 वायवः. ५. B. C. E. F. G. and H. read व्यानेन for व्याने तु.

इति । परिषेचनानन्तरभाविविशेषो भविष्यपुस्तके दर्शितः—

‘ भोजनात् किञ्चिदन्नाग्रं धर्मराजाय वै बलिम् ।

दत्त्वाऽथ चित्रगुप्ताय प्रेतेभ्यश्चेदमुच्चरेत्—॥

—‘यत्र कचन संस्थानां क्षुत्तृषोपहतात्मनाम् ।

प्रेतानां तृप्तये ऽक्षय्यमिदमस्तु यथासुखम्’ ॥

इति । कूर्मपुराणे अपि—

‘ महाव्याहृतिभिस्त्वन्नं परिधायोदकेन तु ।

अमृतोपस्तरणमसीत्यापोऽंशजक्रियां चरेत्’ ॥

(कू. पु. १. ३. १९. ३)

इति । बौधायनस्तु सर्वमेतत् संगृह्याह—

‘ सर्वाविश्यकावसानेषु प्रक्षालितपाणि-पादौ ऽप

आचम्य । शुचौ संवृते देशे प्राङ्मुख उप-

विश्य उद्धृतमाहिष्माणं भूर्भुवः स्वरोमि-

त्युपस्थाय वाचं यच्छेत् । (२) न्यस्तर्मन्त्रं म-

हाव्याहृतिभिः प्रदक्षिणमुदकं परिषिच्य सव्ये-

न पाणिना ऽत्रिमुञ्चन् अमृतोपस्तरणमस्मि—

१. D. reads दत्त्वा सचित्रगुप्ताय; while G. दत्त्वा च चित्रगुप्ताय. २. B. C. and F. read मृतानां. ३. H. reads यथासुखम्. ४. B. C. E. F. G. H. and I. read आपोऽंशज- . ५. D. reads सर्वमेतत्. ६. The text of Baudhāyana reads सर्वाविश्यकाऽवसानेषु सम्मृष्टाऽलिप्तेऽंशे for सर्वाविश्यकाऽवसानेषु प्रक्षालितपाणिः पादौऽप आचम्य शुचौ संवृते देशे. ७. The text of Baudhāyana reads उद्धृत-माहिष्माणं. ८. I. reads अन्यत् समानं for न्यस्तर्मन्त्रं. B. C. E. F. G. H. and I. drop the word अन्नं here, and insert it before उदकं.

इति पुरस्तोदपः पीत्वा पञ्चान्नेन प्राणाहुती-
जुहोति । श्रद्धायां प्राणे निविष्टो ऽमृतं जुहो-
मि शिक्वेमा विशाप्रदाहाय प्राणाय स्वाहेति ।
(३) अपाने व्याप उदाने समाने निविष्ट
इत्यादिना यथालिङ्गमनुषङ्गः । एवं पञ्चा-
न्नेन प्राणाहुतीर्हुत्वा तूष्णीं भूयो व्रतयेत् ।
प्रजापतिं मनसा ध्यायन् नान्तरा वाचं
विसृजेत् । (४)

अथाप्युदाहरन्ति-

‘आसीनः प्राङ्मुखो ऽश्रीयत वाग्यतोऽन्नमकुन्तयन् ।
अस्कन्दयन् नन्मनाश्च भुक्त्वा ऽग्निं समुपस्पृशेत्’ ॥ (७)
इति । सर्वभक्ष्यापूर-कन्द-मूल-फल-मांसानि द-
न्तैर्नावहेत् । (८) नातिसुहितः । (९) अमृ-
तापिधानमसि-इत्युपरिष्ठादपः पीत्वाऽऽचान्तो
हृदयदेशमभिमृशति । प्राणानां ग्रन्थिरसि
रुद्रो मा विशान्तकस्तेनोन्नेनाऽऽप्यायस्वेति ।

१. हस्तान् is omitted by all except A. and the text of Baudhāyana.

२. From स्वरोमित्यु- (R. 419, L. 13) to पञ्चान्नेन the intermediate portion is omitted by E. ३. G. reads प्राणाहुतिभिः. ४. All others except A. and I. omit श्रद्धायां, also the text omits this word. ५. The text omits अपाने व्याप उदाने समाने निविष्ट इत्यादिना यथालिङ्गमनुषङ्गः. All the manuscripts show that this line belongs to Baudhāyana, but most probably this line belongs to Madhāvācharya. ६. All others except A. and the text of Baudhāyana omit प्राणाहुतीर्हुत्वा. ७. I. reads व्रतयेत्. Probably this is a mistake. ८. D. reads भुक्त्वा सः; while I. भुक्त्वा सः. ९. B. E. and F. read मांसानां दन्तैर्नावहेत्, D. reads मांसानां दन्तैर्नावहेत्, E. and H. मांसानां दन्तैर्नावहेत्, G. मांसानां दन्तैर्नावहेत् and H. मांसानां दन्तैर्नावहेत्. १०. II. omits अन्नं.

(१०) पुनराचम्य दक्षिणपादाङ्गुष्ठे प्राणि-
निःस्त्रावयति—

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं च समाश्रितः १.

ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्राणिनां विश्वभुक् ॥ (११)

इति । हुतान्नानुमन्त्रणमूर्ध्वहस्तः समाचरेत् । अ-

द्वायां प्राणे निविद्यामृतं हुतं प्राणमन्त्रे-

नाप्यायस्वेति पञ्च । (१२) ब्रह्मणि म आ-

त्मा स्मृतत्वायेत्यात्मानमेक्षरेण योजयेत् ।

(१४) सर्वक्रतुयाजिनामस्य याजी विशि-

ष्यते । (१५)

(त्रौ. स्म. २. ७. १२. २-१६)

इति । विष्णुपुराणे—

अश्रीयात् तन्मना भूत्वा पूर्वं तु मधुरं रसम् ।

क्षवणाम्लौ तथा मध्ये कटु-तिक्तादिकांस्ततः ॥

प्राग् द्रवं पुरुषोऽश्रीमान्मध्ये च कठिनाशनः ।

अन्ते पुनर्द्रवाशीं तु बलारोग्ये न मुञ्चति ॥

(वि. पु. ३. ११. ८३-८४)

इति । भोजने क्षवलसंख्यामाहाऽऽस्तम्भः—

अष्टौ ग्रासा मुनेर्भक्ष्याः षोडशाऽऽर्ण्यवासिनः

१ G. reads प्रीणात्. २. B. C. E. F. G. and H. omit इति पञ्च, and read प्राणमन्त्रेनाप्यायस्व । अद्वायामपाने अद्वायां व्याने अद्वायामुदाने अद्वायां समाने निविद्येत्वादिर्थालिङ्गमनुषङ्गः; while D. reads अद्वायामपाने निविद्यामृतं हुतं अपानमन्त्रेनाप्यायस्व । अश्रीयां व्याने निविद्यामृतं हुतं उशनमन्त्रेनाप्यायस्व । अद्वायां समाने निविद्यामृतं हुतं समानमन्त्रेनाप्यायस्वेति यथालिङ्गमनुषङ्गः. ३. I. omits अक्षरेण. ४. D. reads बलारोग्यं.

द्वात्रिंशत्तु गृहस्थस्य हेमितं ब्रह्मचारिणः' ॥

(आ. ध. सू. २.४.९.१३. बौ. स्मृ. २.७.१३.७.)

इति । आश्वमेधिके अपि—

वक्त्रप्रमाणपिण्डांश्च प्रसेदेकंकशैः पुनः । (१२)

वक्त्राधिकं तु येत् पिण्डमात्मोच्छिष्टं तदुच्यते ।

पिण्डावांशिष्टमन्नं च वक्त्रनिःसृतमेव च ॥ (१३)

अभोज्यं तद्विजानीयाद्भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् । (१४)

सदा चात्यशनं नाद्यात् नातिहीनं च कर्हिचित् ।

यथा ज्ञेन व्यथा न स्यात् तथा भुञ्जीत निन्यशः' ॥

(वृ. गौ. स्मृ. १३. १२-१६)

इति । वृद्धमनुः—

पीत्वा ऽपोऽशनमश्नीर्यात् पात्रदत्तमगर्हितम् ।

भार्या-भृतक-दासेभ्य उच्छिष्टे शेषयेत् द्विजः' ॥

इति । उच्छिष्टशेषणं तु घृतादिव्यतिस्किन्नियम् ।

तदाह पुलस्त्यः—

भोजनं तु न निःशेषं कुर्यात् गात्रः कथञ्चन ।

अन्यत्र दक्षि-सक्त्वाज्य-पल्ल-क्षीर-मध्वपः' ॥

इति । एतच्च भोजनं सायं प्रातश्च कर्तव्यम् । तदुक्तं

मनुना—

१. This verse appears both in the text of Āpastamba and Bau-
dhāyana. They read द्वात्रिंशत्तु गृहस्थस्यापरिमितं ब्रह्मचारिणः. २. The
text reads, पिण्डानि दासेभ्यैकेन वा (for पिण्डांश्च प्रसेदेकंकशः). ३. B. C. E.
F. G. and H. substitute यः for यत्. ४. The text reads वृष्टा- for पिण्डा-.
५. B. C. E. F. G. and H. read अन्यच्च for अन्नं च. ६. B. C. and F.
read पीत्वा धा ऽऽसनमश्नीयात्. ७. I. reads फलं क्षीरं च.

‘सायं प्रातर्द्विजातीनामशनं श्रुतिचोदितम् ।

नान्तरा भोजनं कुर्यादग्निहोत्रसमो विधिः’ ॥

(म. स्मृ. २.५३. भृ. पुं. ५८.१०७)

इति । गौतमः—

‘सामं प्रातस्त्वन्नमभिपूजितमग्निन्दन् भुञ्जीत’ ।

(गौ. स्मृ. १.४)

इति । उदाहृतवचनसमूहेन प्रसिद्धं साङ्गभोजनं मूल-
वचने ‘यो भुङ्क्ते’—इत्यनूद्य घेषितशिरस्त्वादिकं प्रत्यशयाभि-
धानेन निषेधयति । एतच्च वज्र्यान्तराणामप्युपलक्षणम् ।
तानि च ब्रह्मपुगणे दर्शितानि—

‘यस्तु पाणितले भुङ्क्ते यस्तु फूत्कारसंयुतम् ।

प्रसृताङ्गुलिभिर्यच्च तस्य गोमोसवच्च तत् ॥

नाजीर्णे भोजनं कुर्यात् कुर्यान्नातिबुभक्षितः ॥

हृत्स्थश्च-स्थ-यीनोऽप्रमास्थितो नैव भक्षयेत् ।

श्मशानाभ्यन्तरस्थो वा देवालयगतो ऽथ वा ॥

शयनस्थो न भुञ्जीत न पाणिस्थं न चासने ।

नार्द्रवासा नार्द्रशिरा न चा ऽयज्ञोपवीतवान् ॥

न प्रसारितपादस्तु पादारोपितपाणिमान् ।

न बाहुसक्थिसंस्थश्च न च पर्यङ्कमास्थितः ॥

१. This verse is inserted between verses 52 and 53 in the commen-
taries by Rāmachandra. The oldest commentafor Medhātithi and
others do not make commentaries on this verse. २. The text
of Nṛsiṅha Purāṇa reads समन्वितः for समं विधिः. ३. A. reads
फूत्कारवायुना; while B. reads फूत्कारसंमितम्. ४. B. C. F. and I. read
यश्च. ५. I. reads कृत्स्नानि for कुर्यान्नाति-. ६. I. reads स्थावरादसं-
स्थश्च through mistake.

न वैष्टितशिराश्चापि नोत्सङ्गरुतभाजनः ।

नैकवस्त्रो दृष्टमध्यो नोपानत्कः सपादुकः ।

न त्वमोपरिसंस्थश्च चर्माभिष्टितपार्श्ववान् ॥

ग्रासशेषं न चाश्रीयात् पीतशेषं पिबेन्न च ।

शाक-मूल-फलक्षूणां दन्तच्छेदेन भक्षयेत् ॥

बहूनां भुञ्जतां मध्ये न चाश्रीयात्स्वराश्रितः ।

वृथा न विसृजेदन्नं नोच्छिष्टेः कुत्रचिद्व्रजेत् ॥

इति । बृहस्पतिः—

‘न स्पृशेद्दामहस्तेन भुञ्जामोऽन्नं कदाचन ।

न पादौ न शिरो वस्ति न पदा भाजनं स्पृशेत्’ ॥

इति । उशनाः—

‘नादत्त्वा मिष्टमश्रीयाद्बहूनां चैव पश्यताम् ।

‘नाश्रीयुर्वहवश्चैव तथा नैकस्य पश्यतः’ ॥

इति । आदित्यपुराणे—

‘नोच्छिष्टो ग्राहयेदाज्यं यं नोच्छिष्टं च सन्न्यजेत् ।

‘शूद्रभुक्तावृशिष्टं तु नाद्याद्वाण्डस्थितं त्वपि’ ॥

इति । कूर्मपुराणे अपि—

१. I. reads वृषन्मध्ये नोपानत्कृतपादकः; while G. and H. read the same, but substitute दृष्टमध्यो for वृषन्मध्ये and D. reads दृष्टमध्यसोपानत्कः सपादुकः. २. B. C. E. F. G. and H. read विकिरित् for विसृजेत्. ३. I. reads नोच्छिष्टं. ४. I. omits this word. ५. B. C. and F. omit उशनाः. ६. H. reads नोदत्त्वा. ७. A. and D. read मृष्टमश्रीयात्. ८. I. reads through mistake. नैकस्य for नैकस्य. ९. I. reads नोच्छिष्टं. १०. B. C. and F. read यच्च शिष्टं सन्न्यजेत्; D. reads यथोच्छिष्टं तु न सन्न्यजेत्, E. and I. जग्ध-शिष्टं च सन्न्यजेत् and H. जग्धशिष्टं न सन्न्यजेत्. ११. I. omits अपि.

‘नार्क्षरात्रे न मध्याह्ने नाजीर्णे नार्द्रवल्क्षुक् ।
 न भिन्नभाजने चैवं न भूम्यां न च पाणिषु ॥
 नोच्छिष्टो घृतमादद्यात्त मूर्द्धानं स्पृशन्नग्निं ।
 न ब्रह्म कीर्त्तयित्वाऽपि न निःशेषं न भार्यया ॥
 नोऽन्धकारे न सन्ध्यायां न ज्ञ देवालयोदिषु’ ॥
 (कू. पु. १. २. १९: २०-२२)

इति ! याज्ञवल्क्यो अपि—

‘न भार्यादर्शनेऽश्रीमान्नैकवासा न संस्थितः’ ॥
 (या. स्म., १. १३१.)

इति । यत्तु—

‘ब्राह्मण्या सह योऽश्रीयादुच्छिष्टं वा कदाचन ।
 न तस्य दोषमिच्छन्ति निव्यमेव मनीषिणः ॥
 उच्छिष्टमितरस्त्रीणां योऽश्रीयाद् ब्राह्मणः क्वचित् ।
 नायश्चित्ती स विज्ञेयः संकीर्णो मूढचेतनः’ ॥

इति । न तत्सर्वथा दोषाभावप्रतिपादनपरम् । कदाचनेति,
 वचनात् । अत एवाऽऽदित्यपुराणम्—

‘ब्राह्मण्या भार्यया सार्द्धं कचिद्भुञ्जीत चाध्वनिः ।
 अंसवर्णस्त्रिया सार्द्धं भुक्त्वा पतति तत्क्षणात्’ ॥

इति । वृद्धमनुरपि—

१. I. reads चाद्यात्. २. B. C. and H. read कीर्त्तयित्वाऽपि. and the text of K. P. reads कीर्त्तयेद्याऽपि. ३. B. C. E. F. and H. read नाङ्गारे च न चाऽऽकाशे, D. and G. नाङ्गारे च न चाऽऽकाशे and I. reads नाऽऽन्वाङ्गारे न चाऽऽकाशे. ४. D. inserts अपि after मनीषिणः. ५. D. omits न. ६. D. reads प्रतिपादनं and omits परम्. ७. B. C. and F. read अपिपुराणम्. ८. All others except A. D. E. and I. read अधोवर्णः. ९. A. reads मनुरपि for वृद्धमनुरपि.

न पिबेन्न च मुञ्जीत द्विजः सव्येन पाणिना ।
 नैकहस्तेन च जलं शूद्रेणाऽवर्जितं पिबेत् ॥
 पिबुल्लोऽस्य पतेत्तोयं भाजने मुग्धनिःसृतम् ।
 अभीज्यं तद्ववेदं भोक्तो मुञ्जीत किल्बिषम् ॥
 पीतावशेषितं तोयं ब्राह्मणो न पुनः पिबेत् ॥
 पिबेद्यदि हि तन्मोहात् द्विजश्चान्द्रायणं धरेत् ॥

इति । अत्रिः—

‘तोयं पाणिनैखस्पृष्टं ब्राह्मणो न पिबेत् कचित् ।
 सुरापानेन तत्तुल्यमित्येवं मनुरब्रवीत्’ ॥

इति । शातातपः—

‘उद्धृत्य वामहस्तेन यत्तोयं पिबति द्विजः ।
 सुरापानेन तत्तुल्यं मनुराह प्रजापतिः’ ॥

इति । आश्वमेधिके अपि—

‘पानीयानि पिबेद्येन तत्पात्रं द्विजसत्तमः ।
 अनुच्छिष्टं भवेत्तावद्यावद्भूमौ न निःक्षिपेत्’ ॥

(वृ. गौ. स्मृ. १३. १९.)

इति । शङ्खः—

‘नानियुक्तो ऽग्न्यासनस्थः प्रथममश्नीयात् ।
 आधिकं दद्यात् । न प्रातेऽगृह्णीयात्’ ।

इति । शातातपो अपि—

‘अग्न्यासनोपविष्टस्तु यो भुङ्के प्रथमं द्विजः ।

बहूनां पश्यतां सोऽज्ञः पङ्क्त्या हरात् किल्बिषम्’ ॥

१. Only I. reads अतश्च. २. E. G. and I. read ब्राह्मणः पुनरापिबेत्.
 ३. B. C. D. E. F. and G. read -नखाग्नेषु; while H. reads -नखाग्निः.
 ४. G. and H. read द्विजसत्तम. From this to, बहूनां पश्यतां the inter-
 mediate portion is omitted by D. ५. D. reads सोऽज्ञः, and I. प्राज्ञः.

इति । गोभिलः—

‘एकपङ्क्त्युपविष्टानां विप्राणां सह भोजने,
यद्येकोऽपि त्यजेत् पात्रं नाश्रीयुक्तिरेष्ट्यने ।
मोहात्तु भुङ्क्ते यस्तत्र तस्मान्तपनं चरेत् ॥ •
भुञ्जानेषु तु विप्रेषु यस्तु पात्रं परित्यजेत् ।
भोजने विघ्नकर्त्ताऽसौ ब्रह्महाऽपि तथोच्यते’ ॥

इति । वासयमनं प्रक्रम्य पुराणे—

‘स्नास्यतो वरुणः शक्तिं जुह्वतोऽग्निः श्रियं कुरेत् ।
भुञ्जतो मृत्युरायुष्यं तस्मात्तमौनं त्रिषु स्मृतम्’ ॥

इति । यच्चत्रिणोक्तम्—

‘मौनव्रतं महाकष्टं हुंकारेणाऽपि नश्यति ।
तथा साति महान् दोषः तस्मात्तत्रियतश्चरेत्’ ॥

इति । तदेतत् काष्ठेनौनाभिप्रायम् । एतच्च पञ्चग्रासाद-
र्कग्विषयम् । तथा च वृद्धमनुः—

‘अनिन्दन् भक्षयेन्नित्यं वाग्यतोऽन्नमकुत्सयन् ।
पञ्च ग्रासान्महामौनं प्राणाद्याप्यायनं महत्’ ॥

इति । आश्वमेधिकेऽपि—

‘मौनी वाऽप्यथवाऽमौनी प्रहृष्टः सयतन्ब्रह्म ।
भुञ्जीत विधिवद्विप्रो न चोच्छिष्टानि चर्चयेत्’ ॥

(वृ. गौ. स्मृ. १३. ११.)

इति । शातातपोऽपि—

१. I. reads -रितरे पुनः. २. I. reads स सान्तपनमाचरेत्. ३. II. reads काष्ठा- for काष्ठ-. ४. I. reads -प्रायेण. ५. B. C. and F. read वापयेत् for चर्चयेत्; while G. reads चापयेत् for the same.

‘हस्तपूतानि चान्नानि प्रत्यक्षलवणं तथा ।

सृक्तिकाभक्षणं चैव गोमांसाशनवत् स्मृतम् ॥

इति । पेट्यनसिरपि—

‘लवणं व्यञ्जनं’ चैव घृतं तैलं तथैव च ।

‘लेह्यं’ पेयं च विविधं हस्तदत्तं न भक्षयेत् ।

देव्या देयं घृतान्नं तु समस्तव्यञ्जनानि च ॥

उदकं यच्च पक्वान्नं यो दद्यात् दातुमिच्छति ।

स भूणहा मुरापश्च स्तेयी च गुरुतल्पगः’ ॥

इति । आश्रमेधिके—

‘उदक्यामपि चण्डालं श्वानं कुक्कुटमेव च ।

भुञ्जानो यदि पश्येत् तदन्नं तु परित्यजेत् ॥

‘केश-कीटावपन्नं च’ मुखमारुतवीजितम् ।

अभोज्यं तद्विजानीयात् भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥

(वृ. गौ. स्मृ. १३. १८-१९.)

इति । कार्यायनः—

‘चण्डाल-पतितोदक्या वाक्यं श्रुत्वा द्विजोत्तमः ।

भुञ्जीत ग्रासमात्रं तु दिनमेकमभोजनम्’ ॥

इति । गौतमोऽपि—

१. B, C. and E. read दद्यात् देयं घृतान्नं तु; while D. reads दद्यात् देयं घृतान्नं तु. २. B, C, D, E, F, G. and H. read स स्तेनो गुरुतल्पगः for स्तेयी च गुरुतल्पगः. ३. G. reads केश-कीटावपिन्नं च. ४. Except A. and the text all others substitute for this line अन्नं तु राक्षसं, विद्यात्तस्मात् परित्यजेत्, but in the text this line is the latter half of the 18th verse. All others except A. and G. substitute सत् for तु. ५. D. reads this quotation with गौतमोऽपि after the next quotation from बृहस्पति.

‘काहल-भ्रमण-प्रावणां चक्रस्योलूखत्युच्चं ।

एतेषां निनदं यत्पत्तावत्कालमभोजनम् ॥’

(श्लो. गौ. स्मृ. ९. ३१)

इति । बृहत्सतिरपि—

‘अप्येकपङ्क्त्यां नाश्रीयाद्वाह्यैः स्वजनैरपि ।

को हि जानाति किं कस्य प्रच्छन्नं पातकं भवेत् ॥

एकपङ्क्त्युपविष्टानां दुष्कृतं यदुरात्मनाम् ।

सर्वेषां तत्समं तावद्यावत् पङ्क्तिर्न विद्यते ॥’

इति । पङ्क्तिभेदप्रकारमपि स एवाह—

‘अग्निना भस्मना चैव स्तम्भेन सलिलेन च ।

द्वारेण चैव मार्गेण पङ्क्तिभेदो बुधैः स्मृतः ॥’

इति । यमोऽपि—

‘उदकं च तृणं भस्म द्वारं पन्थास्तथैव च ।

एभिरन्तरितं कृत्वा पङ्क्तिदोषो न विद्यते ॥’

इति । ब्रह्मेवं मूलवचनोक्तवेष्टितशिरस्वादिवर्जनोपले-

क्षिता नियमविशेषा दर्शिताः । दक्षिणामुखत्वविषेधो नि-

त्यभोजनविषयः । काम्ये तद्विधानात् । तथा च मनुः

‘आयुष्यं प्राङ्मुखो भुङ्क्ते यशस्यं दक्षिणामुखः ।

श्रियं प्रत्यङ्मुखो भुङ्क्ते ऋतं भुङ्क्ते उदङ्मुखः ॥’

(म. स्मृ. २. ५२; वृ. अ. ९. २५; अ. पु. १५३. ४१)

१. B. C. E. F. and H. read पङ्क्त्या नोऽग्नीवाह; while G. and I. read पङ्क्त्या नाऽग्नीवाह. २. D. reads पङ्क्तिभेदप्रकारमाह बृहस्पतिः. ३. G. reads -लक्षितो नियमविशेषो दर्शितः. ४. The text of Vṛiddha, Atri reads श्रियः. ५. H. reads उदृत. ६. The text of Manu adds हि before उदङ्मुखः.

इति । गोशिलस्तु दक्षिणामुखत्वं प्रेतिषेधति-

‘प्राङ्मुखावस्थितो विप्रो प्रतीच्यां वा यथासुखम् ।

उत्तरं पितृकार्यं तु दक्षिणां तु विवर्जयेत्’ ॥

इति । ‘वामपादकरः’ वामवादे करो यस्यसौ वाम-
‘पादकरः । यो वामपादकरो भुङ्क्ते यश्च स्थित्वा भुङ्क्ते तैः
सर्वैर्यद्भुक्तं तद्रक्षांसि भुञ्जते । न स्वयं प्राणाग्निहोत्रादिकलं
प्राप्नोतीत्यर्थः । भुक्तस्य राक्षसगामित्वं, कूर्मपुराणे अपि
दर्शितम्-

‘यो भुङ्क्ते वेष्टितेशिरा यश्च भुङ्क्ते विदिङ्मुखः ।

सौपानर्त्तश्च यो भुङ्क्ते सर्वं विद्यात्तदासुरम्’ ॥

(कू. पुं. १. २. १९. १९; ल. व्या. स्मृ. २. ८१)

इति । ‘अभिप्रेतस्य’ भोजनविधेरुदीच्याङ्गानि उच्छिष्टो-
‘दकदानादीनि कर्त्तव्यानि । तत्र देवलः-

‘भुक्त्वोच्छिष्टं ममादाय सर्वस्मात् किञ्चिदचिमन् ।

उच्छिष्टभागदेयेभ्यः सोदकं निर्वपेदुवि’ ॥

इति । तत्र मन्त्रः-

‘गौरवे पूयनिलये पद्मार्बुदनिवासिनाम् ।

‘शणिनां सर्वभूतानामक्षय्यमुपतिष्ठताम्’ ॥

इति । गन्धव्यासो अपि-

१. B. C. E. F. G. H. and I. read गोभिलोऽपि. २. I. reads निषेधयति. ३. I. reads स्थितो भुङ्क्ते while D. omits यश्च स्थित्वा भुङ्क्ते.
४. The text of K. P. reads यत् आ यो. ५. All others except A. and I. omit उच्छिष्टोदकदानादीनि, but this appears in the marginal reading of H. ६. D. reads -रागमान्. ७. D. omits तत्र मन्त्रः. ८. B. C. D. F. and I. read पुण्ड्रनिलये, but it is a mistake. ९. D. omits गन्ध-

‘ततस्तृप्तः सन्नमृतापिधानमसीत्यपः प्रोक्ष्य
 तस्मद्देशान्मनागवसृत्य विधिवदाचामेत्’ ।
 इति । स चाचमनप्रकारो देवलेन दर्शितः—
 ‘भुक्त्वाऽऽचामेद्यथोक्तेन विधानेन संमाहितः ।
 शोधयेन्मुखं-हस्तौ च मृदद्भिर्घर्षणैरपि’ ॥
 इति । तच्च घर्षणं तर्जन्या न कर्त्तव्यम् । तद्वाह गौतमः—
 ‘गण्डूतस्याथ समये तर्जन्या वक्त्रशोधनम्’ ।
 कुर्वीत यदि मूढात्मा रौरवे नरके पतेत् ॥
 (श्लो. गौ. स्म. ५. २९.)

इति । व्यासः—

‘हस्तं प्रक्षाल्य गण्डूषं यः पिबेदविचक्षणः ।
 स देवांश्च पितृंश्चैव ह्यात्मानं चैव पातयेत्’ ॥
 तस्मिन् नाचमनं कुर्यात् यत्र भाण्डे ज्य भुक्तवान् ।
 गण्डूतिष्ठत्यनाचान्तो भुक्तवानासनात्ततः ॥
 स्नानं सद्यः प्रकुर्वीत सोऽन्यथा अग्रयतो भवेत् ॥
 इति । कूर्मपुराणे अपि—

‘अमृतापिधानमसीत्युपरिष्ठादपः पिबेत् ।
 आचान्तः पुनराचामेदायंगौरिरिति मन्त्रतः ॥
 द्रुपदां वा त्रिरावृत्त्य सर्वपापप्रणाशिनीम् ।
 प्राणानां ग्रन्थिरसीत्यालभेत् हृदयं ततः ॥

१. H. and I. read पीत्वा for प्राश्य. २. B. C. D. E. F. G. and H. read चालनम्. ३. A. reads रौरवे नरके व्रजेत्. ४. All others except A. and I. read पातयेत् for पातयेत्. ५. Except A. and the text of K. P. all others omit उपरिष्ठात् and read अमृतापिधानमसीत्यपः पिबेत्, but it is a mistake. ६. The text of K. P. reads उदरं for हृदयं.

आचम्यैकमुष्टमेव पादाङ्गुष्ठे तु दक्षिणे ।
 निःस्त्रावयेद्दस्तजलमूर्ध्वहस्तैः समाहितः ॥
 हुताङ्गमन्त्रेण कुर्यात् श्रद्धायामिति मन्त्रतः ।
 अथाक्षरेण स्वात्मानं योजयेद्ब्रह्मणेति हि ॥
 सर्वेषामेव योगानामात्मयोगः परः स्मृतः ।
 योजनेन विधिना कुर्यात् स याति ब्रह्मणः पदम् ॥
 (कू. पु. १. ३. १९. ९-१३)

इति । अत्रिः—

‘ओचान्तोऽप्यशुचिस्तावद्यावत् पात्रमनुद्धृतम् ।
 उद्धृतेऽप्यशुचिस्तावद्यावन्नोन्मृज्यते मही ॥
 भूमावपि हि लिप्तायां तावत् स्यादशुचिः पुमान् ।
 आसनादुत्थितस्तस्माद्यावन्न स्पृशते महीम्’ ॥
 (व. अं. स्म. ५. १९-२०)

इति । शातातपो अपि—

‘आचम्य पात्रमुत्सृज्य किञ्चिदार्धेण पाणिना ।
 मुख्यान् प्राणान् समालभ्य नाभिं पाणिद्वलेन च ॥

१. All others except A. read अङ्गुष्ठमानीय for अङ्गुष्ठमात्रेण; while A. reads अङ्गुष्ठपानीय. २. The text of K. P. reads—

अथ मन्त्रेण स्वात्मानं योजयेद् ब्रह्मणेति हि ;

while E. reads—

‘अथाक्षरेण स्वात्मानं योजयेद् ब्रह्मणेति हि ।

३. The text of K. P. reads योगानामात्मयोगः; while I. reads सर्वेषामेव योगानामात्मयोगः. ४. D. reads क्षयम्. ५. This quotation appears in Vriddhātri, but not in Atri. ६. D. reads नो मृज्यते मही, and I. reads नो लिप्यते मही. For the same the text of Vriddhātri reads मण्डलशोधनम्.

७. This verse is found neither in the text of Atri nor Vriddhātri. ८. D. and G. read मही for महीम्.

भुक्त्वा नैवे प्रतिष्ठेत न चाप्यार्द्धेण पोषिना ।

पाणिं मूर्ध्नि समाधाय स्पृष्ट्वा चाग्निं समाहितः ॥

ज्ञातिश्चैष्ट्यं समाप्नोति प्रयोगकुशलो नरः ।

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘स्वस्यः प्रशान्तचित्तस्तु कृतासनपरिग्रहः ।

अभीष्टदेवतानां च कुर्वीत स्मरणं नरः ॥

अग्निराप्यायंयत्त्वं पाथिवं पवनरितः ।

दत्तावकाशो नभसा जरयेदस्तु मे सुखम् ॥

अन्नं बलाय मे भूमरपामग्न्यञ्जिलस्य च ।

भवत्वेतत् परिणतं ममास्त्वव्याहतं सुखम् ॥

प्राणाऽपान-समानानामुदान-व्यानयोस्तथा ।

अन्नं पुष्टिकरं चास्तु ममास्त्वव्याहतं सुखम् ॥

अगस्तिरग्निर्वडवानलश्च

भुक्तं मयाऽन्नं जरयत्वशेषम् ।

सुखं ममैतत् परिणामसम्भवं

यच्छत्वरोगो मम चास्तु देहः ॥

विष्णुः समस्तेन्द्रिय-देह-देहि-

प्रधानभूतो भगवान् यथैकः ।

१. D. and G. read चैव. २. D. reads परिग्रहम्. ३. E. reads ततः.
४. All others except A. and the text of Vishṇu Purāṇa read
आप्याययेद्वातु. ५. The text of Vishṇu Purāṇa reads जरयन्तु. ६. B. C. E.
and F. read अरोगं मम चास्तु देहः, D. and G. read अरोगं मम चास्तु अहम्,
H. and I. read अरोगं मम चास्तु देहे and for the same the text of V.
P. reads अरोगो मम चास्तु देहे. ७. D. G. H. and I. read देही.

‘सत्येन तेनान्नमशेषमेतेत्’ .

आरोग्यदं मे^३ परिणाममेतु ॥

विष्णुरास्मा^१ तथैवात्रं परिणामश्च वै तथा ।

‘सत्येन तेन मे^३ भुक्तं जीर्यत्वन्नमिदं तथा ॥’

इत्युच्चार्य स्वहस्तेन परिमृज्य तथोदरम् ।

अनाथासंप्रदायीनि कुर्यात् कर्माण्यतन्द्रितः ॥

.(वि. पु. ३. ११. ८७-९४)

इति । मार्कण्डेयो अपि—

‘भूयोऽप्याचम्य कर्त्तव्यं ततस्ताम्बूलभक्षणम्’ ।

(मा. पु. २९. ३९)

इति । अत्र वसिष्ठः—

‘सुपूगं च सुपत्रं च चूर्णेन च समन्वितम् ।

अदत्त्वा द्विजदेवेभ्यः ताम्बूलं वर्जयेद्बुधः ॥

एकपूगं सुखारोग्यं द्विपूगं निष्फलं भवेत् ।

अतिश्रेष्ठं त्रिपूगं च ह्यधिकं नैव दुष्यति ॥

‘पर्णमूले भवेद्वाधिः पर्णाग्नेः पापसम्भवः ।

शीर्णपर्णं हरेदायुः शिरा बुद्धिविनाशिर्ना ॥

तस्मादग्रं च मूलं च शिरां चैव विशेषतः ।

‘शीर्णपर्णं वर्जयित्वा ताम्बूलं खादयेद्बुधः’ ॥

१. B. C. E. F. G. H. and I. read -मशेषमन्नम्; while D. reads -मशेषमन्यम्. २. I. reads स्यात् for मे. ३. A. reads विष्णुरास्मा; while I. reads विष्णुर्यथा. ४. B. C. E. F. and G. read परिमृज्यान. ५. I. reads तत्र. ६. D. reads सुपूगं च सुपत्रं च; while I. reads सुपूगं च सुपत्रं च. ७. H. and I. read सुचूर्णेन. ८. A. reads सुसंयुतम्. ९. All others except A. substitute चूर्णे- for शीर्णे-. १०. Here also all others except A. and I. read चूर्णे- for शीर्णे; but I. substitutes जीर्णे- for the same.

इति । यदिदं भोजनं निरूपितं तत् ग्रहणकाले 'प्रति-
पिद्धम् । तदाह मनुः—

‘चन्द्र-सूर्यग्रहे नाद्यादद्यात् स्नात्वा विमुक्तयोः ।

अमुक्तयोरस्तगयोर्दृष्ट्वा स्नात्वा परे ऽहनि’ ॥ .

(म. स्मृ. ४. २२४; वृ. अ. स्मृ. ५२. ६७)

इति । ग्रहे ग्रहणकाले । सार्शमारभ्य मोक्षपर्यन्तो ग्रहकालः ।
तस्मिन् काले न भुञ्जीत । किन्तु राहुणा चन्द्र-सूर्ययोः
मुक्तयोः सतोः पश्चात् स्नात्वा भुञ्जीत । यदा तु 'ग्रस्तास्तम-
यस्तदा परेद्युः विमुक्तौ तौ दृष्ट्वा भुञ्जीत । न केवलं ग्रहण-
काल एव भोजनाभावः किन्तु ग्रहणात् प्रागपि । तदाह व्यासः—

‘नाद्यात् सूर्यग्रहात् पूर्वमाह्नि सायं शशिग्रहात् ।

ग्रहकाले च नाश्रीयान् स्नात्वाऽश्रीयच्च मुक्तयोः ॥

मुक्ते शशिनि भुञ्जीत यदि न स्यान्महानिशा ।

अमुक्तयोरस्तगयोरथ दृष्ट्वा परे ऽहनि’ ॥

(ल. व्या. स्मृ. ३. ७७—७८)

इति । पूर्वकाले भोजननिषेधे विशेषमाह वृद्धवसिष्ठः—

‘ग्रहणं तु भवेदिन्दोः प्रथमादधि यामतः ।

भुञ्जीतावर्तनात् पूर्वं पश्चिमे प्रथमादधः ॥

रवेस्त्वावर्तनादूर्ध्वमर्वांगेव निशीथतः ।

चतुर्थे ग्रहरे चेत् स्यात् चतुर्थग्रहरादधः’ ॥ .

इति । रात्रौ प्रथमात् यामादधि ऊर्ध्वं ग्रहणं चेत् आकर्त्त-
नान्मध्याह्नात् पूर्वं भुञ्जीत । रात्रिपश्चिमयामे चेत् रात्रिः

१. This verse is found in Rāmachandra's commentary on Manu between verses No. 223 and 224. All other commentators except Rāmachandra do not make remarks on this verse. २. E. G. and H. read प्रथमे प्रथमादधः; while I. reads पश्चिमे ग्रहरादधः.

प्रथमयामादर्ताह भुञ्जीत । अह्नश्चतुर्थग्रहे रविग्रहश्चेत् रात्रे-
श्चतुर्थग्रहादधो भुञ्जीतेत्यर्थः । निशीथो मध्यरात्रिः । मध्या-
ह्नादूर्ध्वं रविग्रहणं चेत् मध्यरात्रादर्वागेव भुञ्जीतेत्यर्थः ।
शशिग्रहणे यामत्रयेण व्यवधानमपेक्षितम् । सूर्यग्रहे तु
यामचतुष्टयेनेति तात्पर्यार्थः । तथा च वृद्धगौतमः—

‘सूर्यग्रहे तु नाश्नीयात् पूर्वं यामचतुष्टयम् ।

‘चन्द्रग्रहे तु यामांस्त्रीन् बाल-वृद्धातुरैर्विना’ ॥

इति । बाल-वृद्धातुरविषये तिरोषो मत्स्यपुराणे—

‘अपराह्णे न मध्याह्ने मध्याह्ने चेन्ने सङ्गवे ।

भुञ्जीत सङ्गवे चेत्स्यान्न पूर्वं भोजनं चरेत्’ ॥

इति । समर्थस्य तु भोजने प्रायश्चित्तमुक्तं कात्यायनेन

‘चन्द्र-सूर्यग्रहे भुक्त्वा प्राजापत्येन शुद्ध्यति ।

तस्मिन्नेव दिने भुक्त्वा त्रिरात्रेणैव शुद्ध्यति’ ॥

इति । शशिग्रहणे यामत्रयस्यापवादमाह वृद्धवसिष्ठः—

‘ग्रस्तादयं विधाः पूर्वं नाहर्भोजनमाचरेत्’ ॥

इति । ग्रस्तास्तमये विशेषमाह भृगुः—

‘ग्रस्तावेवास्तमानं तु रवीन्दू प्राप्नुता यदि ।

‘तयोः परेद्युरुदये स्नात्वा अभ्यवहरेन्नरः’ ॥

इति । वृद्धगार्ग्योऽपि—

१. All others except A. and I. omit the following portion मध्याह्नादूर्ध्वं रविग्रहणं चेत् मध्यरात्रादर्वागेव भुञ्जीतेत्यर्थः. २. All others except A. and I. omit पुराणे and read मत्स्यः only. ३. Except A. and I. all others read न तु for चेन्न. ४. I. reads सङ्गवे ग्रहणं for भुञ्जीत सङ्गवे. ५. All others except A. and I. read भुजिमाचरेत्. ६. A. reads याज्ञवल्क्येन; but we find this verse neither in Kātyāyana nor Yājñavalkya. ७. D. and G. read, शशिमहः.

‘सन्ध्याकाले यदा राहुर्प्रसते शशि-भङ्गकरौ ।
तदहनैव भुञ्जीत रात्रावपि कदाचन’ ॥.

इति । विष्णुधर्मोत्तरे ॥—

‘अहोरात्रं न भोक्तव्यं चन्द्र-सूर्यग्रहो यदा ।
मुक्तिं दृष्ट्वा तु भोक्तव्यं स्नानं कृत्वा ततः परम्’ ॥

इति । ननु—मेघाद्यन्तर्धाने चाक्षुषं दर्शनं न सम्भवति—इति चेत् । न । दर्शनशब्देन शास्त्रविज्ञानस्य विवक्षितत्वात् । तदौह वृद्धगौतमः—

‘चन्द्र-सूर्यग्रहे ज्ञाद्यात् तस्मिन्नहनि पूर्वतः ।
राहोर्विमुक्तिं विज्ञाय स्नात्वा कुर्वीत भोजनम्’ ॥

इति । एवं तर्हि—परेद्युरुदयात् प्रागपि शास्त्रविज्ञान-सम्भवाद् ग्रस्तोस्तमयेऽपि तथैव भोजनं प्रसज्येत । तन्न ।

‘तयोः परेद्युरुदये स्नात्वाभ्यवहरेन्नरः’ ।
‘अहोरात्रं न भोक्तव्यं चन्द्र-सूर्यग्रहो यदा’ ।

इति । वचनद्वयेन तदप्रसङ्गेः । यत्तु स्कन्दपुराणे—

‘यदा चन्द्रग्रहस्तात निशीथात् परतो भवेत् ।
भोक्तव्यं तत्र पूर्वाह्णे नापराह्णे कथञ्चन ॥
पूर्वं निशीथात् ग्रहणं यदा चन्द्रस्य वै भवेत् ।
तदा दिवा न कर्तव्यं भोजनं शिखिवाहन’ ॥

इति । तदिदं यामत्रयाभिप्रायम् । चन्द्रग्रहे तु ‘यामांस्त्रीन्’—

१. All others except A. and I. omit ग्रस्तोस्तमयेऽपि? २. B. C. E. F. G. and H. read तदैव; while D. reads तदैव. ३. B. C. E. F. G. H. and I. read तत्र, for तत्र. ४. D. reads शिखिवाहन. ५. I. read प्राज्ञकम्. .

इति विशेषस्तु बृहद्भगौतमेनाभिधानात् । पापक्षयकामो ग्रह-
णदिनमुपवसेत् । तदाह दक्षः—

‘अयंने विषुवे चैव चन्द्र-सूर्यग्रहे तथा ।

‘अहोरात्रोषितः स्नात्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते’ ॥

इति । पुत्री तु नोपवसेत् । तदाह नारदः—

‘संक्रान्त्यामुपवासं च कृष्णैकादशिवासरे ।

चन्द्र-सूर्यग्रहे चैव न कुर्यात् पुत्रवान् गृही’ ॥

इति । ग्रस्तास्तमये तु पुत्रिणोऽप्युपवास एव । ‘अहोरात्रं

न भोक्तव्यम्’—इति भोजनप्रतिषेधात् । क्वचित्तु ग्रहणविशेषे
स्नानादिकं न कर्त्तव्यम् । तदुक्तं षट्त्रिंशन्मते—

‘सूर्यग्रहे यदा रात्रौ दिवा चन्द्रग्रहस्तथा ।

तत्र स्नानं न कुर्वीत दद्याद्दानं न च क्वचित्’ ॥

इति । एतच्च भूभागविशेषव्यवस्थितानां ग्रास-मोक्षदर्शन-
योग्यत्वाभावे द्रष्टव्यम् ।

॥ इति भोजनप्रकरणम् ॥

इत्थं निरूपितेन भोजनान्तेन कर्त्तव्यजातेनाहः पञ्चमभा-
गमतिवाहुर्येत् । एतेन भागपञ्चककृत्याभिधानेनावशिष्टदिवस-
कर्त्तव्यजातमुपलक्षणीयम् । तच्च कर्त्तव्यजातं दक्षेण दर्शितम्—

‘भुक्त्वा तु सुखमास्थाय तदन्नं परिणामयेत् ।

इतिहासं-पुराणायैः षष्ठ-सप्तमकौ नयेत् ॥

अष्टमे लोकायात्रा तु ब्रह्मिः सन्ध्या ततः पुनः’ ।

(द. स्मृ. २. ५२-५३)

इति । अत्रिः^१

‘ दिवांस्वापं न कुर्वीत स्त्रियं चैव परित्यजेत् ।
 आयुःक्षीणा दिवा निद्रा दिवा स्त्री युष्यन्नाशिनी ॥
 इतिहास-पुराणानि धर्मशास्त्राणि चाभ्यसेत् ।
 वृथा विवादवाक्यानि परीवादं च वर्जयेत् ॥

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘ अनयासप्रदायीनि कुर्यात् कर्माण्यतन्द्रितः ।
 संच्छास्त्रादिविनोदेन सैन्मार्गाद्यविरोधिना ॥
 दिनं नयेत्ततः सन्ध्यामुपलिष्टेत् समाहितः’ ।
 (वि. पु. ३. ११. १४-१५)

इति । याज्ञवल्क्यो अपि—

‘ अहःशेषं समासीत शिष्टैरिष्टैश्च बन्धुभिः ॥ (११३)
 उपास्य पश्चिमां सन्ध्यां हुत्वाग्नीस्तानुपास्य च ।
 भृत्यैः परिवृतो भुक्त्वा नातिवृत्तोऽथ संविशेत् ’ ॥
 (या. स्मृ. १. ११३-११४)

इति । ‘उपास्य च’ इति चकारेण वैश्वदेवादिकं समुच्चि-
 नोति । सायंसन्ध्या-होमौ निरूपितौ । वैश्वदेवादौ कश्चिद्विशेषे
 विष्णुपुराणे दर्शितः—

‘ पुनः पाकमुपादाय सायमप्यवनीपते ।

वैश्वदेवनिमित्तं वै पत्न्या सार्धं बलिं हरेत् ॥ (१०१) .

१. All others except A. and I. read आहुःक्षीण for आयुःक्षीणा.
 २. A. reads this line as follows—

नाऽसंच्छास्त्रादिविनोदेन सैन्मार्गार्थविरोधिना ॥ .

३. B. C. F. and I. read सैन्मार्गाद्यविरोधिना. ४. The text of Yājñavalkya reads -तृप्त्याऽथ for -तृप्तोऽथ. ५. The text of Vishṇu Purāṇa reads परन्त्यमन्त्रं बलिं हरेत्.

तत्रापि श्वपक्षादिभ्यस्तथैवोन्नं विसर्जयेत् ।

असिद्धिं चागतं तत्र स्वशक्त्या पूजयेद्बुधः ॥ (१०२)

दिवाऽतिथौ तु विमुखे गते यत्पातके नृप ।

तदेवाष्टगुणं पुंसां सूर्योदये विमुखे गते ॥ (१०४)

तस्मात् स्वशक्त्या राजेन्द्र सूर्योदमतिथिं नरः ।

पूजयेत् पूजिते तस्मिन् पूजिताः सर्वदेवताः ॥ (१०५)

कृष्पादादिशौचश्च भुक्त्वा स्नायं ततो गृही ।

शौचोदस्फुटितां शय्यामपि दारुभ्यां नृप ॥ (१०७)

(वि. पृ. ३. ११. १०१-१०७)

इति ।

॥ इति अहःशेषादिकृत्यम् ॥

अथ शमनप्रकारमाहं हारीतः—

‘सुप्रक्षालितचरणतलो रक्षां कृत्वा उदकपू-

र्णघटादिमुद्गलेपित आत्माभिरुचितामनुग्रहतां

सूत्रमाणमिति पठन् शय्यामधिष्ठाय रात्रि-

सूक्तं जपित्वा विष्णुं नमस्कृत्य सर्पाऽपसर्प भद्रं

१. The text of V. P. reads तथैवान्नपुत्रर्जनम् ; while B. C. D. E. F. G. and H. read तथैवान्नविसर्जनम्. २. After this verse D. and the text of V. P. add one verse more, which is—

‘पादशौचाऽसन-प्रह-स्वागतोक्त्या च पूजनम् ।

ततश्चान्नप्रदानेन शयनेन च पार्यय’ ॥.

३. The text of V. P. reads दिवाऽतिथौ for दिवाऽतिथौ. ४. I. reads सूर्योदये. ५. I. reads सूर्योदम्. ६. All others except A. and the text of V. P. read as follows:—

गच्छेच्छय्यामस्फुटितां ततो दारुभ्यां नृप ।

७. B. C. and F. read आत्मानिरुपां. ८. I. reads through mistake सूत्राणां, पठन्.

ते'—इति लौकं जपित्वा इष्टदेवतास्मरणं कृत्वा
समाधिमास्थाय अन्यांश्च वैदिकान् मन्त्रान्
सावित्रीं च जपित्वा मेङ्गल्यं श्रुतं शङ्खं च
शृण्वन् दक्षिणाशिराः स्वपेत् ।

(हा. स्मृ. ७. ३)

इति । दक्षिणाशिराः—इति प्रदर्शनार्थम् । तथ च
विष्णुपुराणम्—...

‘प्राच्यां दिशि शिरः शस्तं याम्यायामथ वा नृप ।
सदैव स्वपतः पुंसो विपरीतं तु रोगदम् ॥’
(वि. पु. ३. ११. १०९)

इति । गार्ग्यो अपि—

‘स्वगृहे प्राक्शिराः शेते ह्यायुष्यं दक्षिणाशिराः ।
प्रत्यक्शिराः प्रवासे च न कदाचिदुदक्शिराः ॥’
इति । पुराणे अपि—

‘रात्रिसूक्तं जपेत् स्मृत्वा सर्वोश्च सुखशायिनः’ ।
नमस्कृत्वाऽव्ययं विष्णुं समाधिस्थः स्वपेन्निशि ॥
इति । सुखशायिनो अपि गोभिलेन दर्शिताः—

‘अगस्तिर्माधवश्चैव मुचकुन्दो महामुनिः ।
कपिलो मुनिरास्तीकः पञ्चैते सुखशायिनः ॥’
इति । शयने वर्जनीयानाह मार्कण्डेयः—

१. I. reads -श्चैव. २. Except A. and I. all others read मङ्गल्यं श्रुतं.
३. H. and I. read this line as follows :—

स्वगृहे प्राक्शिराः शेते आशुयै दक्षिणाशिराः ।

D. omits the whole verse. ४. A. reads विष्णुपुराणे अपि; but we do not find the following verse in the said Purāṇa; while D. omitting पुराणे-
अपि, and the preceding verse, shows that the verse belongs to Gārgya.

५. H. and I. read गालंवन. ६. I. reads through mistake, मुचकुन्दो

‘गुन्यालये ईमशाने च एकवृक्षे चतुष्पथे ।
 महादेवगृहे वाजपि मातृवेश्मनि न स्वपेत् ॥
 न यक्ष-नागायतने स्कन्दस्यायतने तथा ।
 कुलच्छायासु च तथा शर्करा-लोष्ट-पांसुगु ॥
 न स्वपेच्च तथा शैले विना वीक्षां कथञ्चन ।
 धान्य-गो-विप्र-देवानां गुरुणां च तथोपरि ॥
 न चापि भग्नशयने नाशुचौ नाशुचिः स्तथम् ।
 नार्द्रवासा न नम्रश्च नोत्तरापरेमस्तकः ॥
 नाकाशे सर्वशून्ये च न च चैत्यद्रुमे तथा’ ।
 इति । विष्णुरपि-

‘नार्द्रपादः स्वपेत् । नोत्तरापरा-आकशिराः* ।
 न नम्रः । नार्द्रवंशे । नाकाशे । न पलाश-
 शयने । न पञ्चदारुकृते । न गजभग्नकृते ।

* पादक्षिणयोरभ्यनुज्ञानमनेन वाक्येन । गजेन भग्नस्य तरोः काष्ठेन
 कृते । विद्युता दग्धस्य तरोः काष्ठेन कृते । विद्युद्विद्येनापि अग्निना
 दग्धे । घटैः आ सर्वदा सिक्तस्य तरोः काष्ठेन कृते । चपलो दुर्व्यसनी
 हस्त-फटादिविक्षेप्ता । गवादिशब्देन तच्छाला उच्यन्ते । धान्यवत् सा-
 शात् तदुपरि शयनासम्भवात् । उच्छिष्ट ऊर्ध्वाशरोच्छिष्टवान् । अशुचौ
 मूत्रविष्ठादुपहते देशे । इति व्याचकार नन्दपण्डितः ।

१. A. reads न स्वपेच्च तटाकाऽन्ते. २. D. reads ध्यायन् for धान्य-. ३. D.
 and I. read स्थितः. ४. G. omits विष्णुरपि; while D. reads विष्णुपुराणे.
 ५. B C. D. F. G. H. and I. read नार्द्रवासाः for नार्द्रपादः. the text of
 Vishnu Smṛiti reads सूष्यत् for स्कोत् and elsewhere स्वप्यात्. ६. The
 text omits अवाक and reads नोत्तरापरिशिराः, but this is a mistake.
 B. C. D. E. F. G. H. and I. omit नोत्तरापराऽआकशिराः । न नम्रः ।
 नार्द्रवंशे नाकाशे. ७. The text reads न पलाशे शयने. ८. I. reads न
 भग्नशयने in the place of न गजभग्नकृते.

न विद्युद्वधकृते । न भिन्ने । नोमिष्युष्टे । न
 घटासिक्तद्रुमजे । न इमशान-शून्यालय-
 देवतायतनेषु । न चपलमध्ये । न चारिमध्ये ।
 न धान्य-गो-गुरु-हुताशन-सुशणामुपरि ।
 नोच्छिष्टो न दिवा सुप्यात् सन्ध्ययोर्न च भस्मानि ।
 देशे न चाशुचौ नर्द्रे न च पर्वतमस्तके ॥

(वि. स्मृ. ७०. १-१७)

इति । विष्णुपुराणे अपि-

‘ नाश्विशालां न वै भग्नां नास्समां मलिनानं न च ।
 न च जन्तुमयीं शय्यामधितिष्ठेदनास्तृताम् ’ ॥

(वि. पु. ३. ११. १०८)

इति । उशनाः-

‘ न चैतैलाभ्यक्तशिराः स्वपेन्नादीक्षितः कृष्णजर्मणि ’ ।

इति । दक्षः-

१. All others except A. and the text omit -कृते and read -वधे. २. Except A. and the text all others omit न भिन्ने. ३. In other places the text reads नामिष्युष्टे. ४. All others except A. and the text omit न घटासिक्तद्रुमजे । न इमशान-शून्यालय-देवतायतनेषु. ५. All others except A. and the text read न बालमध्ये; but the commentator does not follow this reading. ६. B. C. D. and F. read चारिमध्ये; while E. G. H. and I. read न चारिमध्ये. ७. B. C. D. and F. omit धान्य-, and read न गोगेहे । न हुताशन-, E. and G. read न धान्ये । न गोगेहे । न हुताशन- and H. reads न धान्ये । न गो-गुरु-हुताशन-. All these readings are for न धान्य-गो-गुरु-हुताशन-. ८. B. C. D. E. F. G. and H. omit the latter portion of this verse and read नोच्छिष्टो न दिवा इति; while I. reads नोच्छिष्टं न दिवि इति, but this is a mistake. ९. D. and G. read न समां. १०. E. and G. read न वज्रं धमरीं for न च जन्तुमयीं. ११. Except A. and D. all others omit च.

‘प्रदोष-पश्चिमौ यामौ वेदाभ्यासरतो नयेत् ।

यामद्वयं शयानस्तु ब्रह्मभूयाय कल्पते’ ॥

(द. स्मृ. २.५४)

इति । ‘सन्ध्या स्नानम्’—इत्यारभ्य ‘यो वेष्टितशिराः’—
‘इत्यन्तेन ग्रन्थसन्दर्भेण, श्रुत्युपलक्षणाभ्यामाह्निकं संक्षिप्यं
निरूपितम् । एतस्य करणे श्रेयः अकरणे तु प्रत्यवायः ।
तदुक्तं कूर्मपुराणे—

‘इत्येतदखिलं प्रोक्तमहन्यहनि वै मया ।

ब्राह्मणानां कृत्यजातमपवर्गफलप्रदम् ॥

नास्तिक्थादथ वाऽऽलस्याद् ब्राह्मणो न करोति यः ।

स याति नरकान् घोरान् काक्योनौ प्रजायते ॥

‘नान्यो विमुक्तसे पन्था मुक्त्वाऽऽश्रमविधिं स्वकम् ।

तस्मात् कर्माणि कुर्वीत तुष्टये परमेष्ठिनः’ ॥

(कृ. पु. १. २. १९. ३०—३२)

इति ॥ ५९ ॥

इत्थं च ‘षट्कर्माभिरतः’—इत्यनेन ब्राह्मणस्याऽसाधारण-
‘धर्माभिरूप्य तत्रत्याध्ययनादिसाधारणधर्मप्रसङ्गागीतमाह्निकं
परिसमाप्येदानीं प्रकृतानेव क्रमप्राप्तानभिधित्तस्य क्षत्रियस्या-
ऽसाधारणधर्मानाह—

१. The text of Dakṣha reads वेदाभ्यासेन सौ. २. The text of Dakṣha reads शयानो हि for शयानस्तु. ३. I. reads इत्थं तदखिलं; while the text of K. P. reads इत्येतदखिलेनोक्तं. ४. E. and G. read कालयोनौ; while B. C. and F. read व्याश्रयेनी. ५. B. C. D. E. F. and G. omit च. ६. H. and I. substitute स्वकर्माभिरतः for षट्कर्माभिरतः. ७. I. reads स्य साधारण-. ८. . reads तत्राध्ययनादि. ९. I. reads क्षत्रियस्य साधारण-.

अव्रता ह्यनधीमाना यत्र भैक्ष्यचरा द्विजाः ।
 तं ग्रामं दण्डयेद्राजा चौर-भक्तप्रदो हि सः ॥ ६० ॥
 क्षत्रियो हि ग्रजा रक्षन् शस्त्रप्राणिः प्रदेण्डवान् ।
 निर्जित्यं परसैन्यानि क्षितिं धर्मेण पालयेत् ॥ ६१ ॥
 पुष्पं पुष्पं विचिनुयान्मूलच्छेदं न कारयेत् ।
 मालाकार इवाशमे न यथाऽङ्गारकारकः ॥ ६२ ॥

इति । द्विविधो हि राजधर्मः दुष्टशिक्षा शिष्टपरिपालनं
 च । तत्राद्येन श्लोकेन दुष्टशिक्षा प्रतिपाद्यते । व्रतशब्देनात्र
 ब्रह्मचारिकर्तृकं मध्वादिवर्जनमभिप्रेतम् । तथा च याज्ञ-
 वल्क्यः 'व्रतमपीडयन्' (या. स्मृ., १. ३) इत्युक्त्वा
 विवक्षितं तद्व्रतं स्पष्टीचकार —

‘मधु-मांसाज्जनोच्छिष्ट-शुक्त-स्त्री-प्राणिर्हिसनम् ।

भास्कंरालोकनाश्लील-परिवादादि वर्जयेत्’ ॥

(या. स्मृ. १. ३३)

इति । यद्वा स्वगृह्यप्रसिद्धानि प्राजापत्यादीनि चत्वार्यत्र
 व्रतशब्दाभिधेयानि । तदुभयविधव्रतरहिताः स्याध्यात्म-
 मप्यनधीयाना ब्रह्मचारिणो यत्र ग्रामे भैक्ष्यमाचरन्ति तं

१. M. reads अव्रता. २. M. reads भचण्डवत्. ३. M. reads विजित्य.
 ४. G. H. I. K. and M. read पालयन्. ५. J. and K. read पुष्पं फलं,
 while I. reads पुष्पमात्रं. ६. M. reads इवोद्याने. ७. B. C. and F. read
 -शुक्त-; while G. reads -शुक्क-. ८. All others except A. and the text
 of Yājñavalkya read 'वासांश्च', but the commentator of the text does
 not follow the reading.

ग्रामं दण्डयेत् । यतः स ग्रामश्चौरसदृशेभ्यो भक्तमत्रं
प्रयच्छति । अनेन वचनेन विहितमननुतिष्ठतां प्रतिषिद्ध-
मनुतिष्ठतां सर्वेषां राज्ञां दण्डनयित्वमुपलक्ष्यते । अत एव
नारदः—

‘यो यो वर्णो ज्ञेहीयेत यो ये उद्वेकमाप्नुयात् ।’

तं तं दृष्ट्वा स्वर्तो मार्गात् प्रच्युतं स्थापयेत्पथि ॥

शैशास्त्रोक्तेषु चान्येषु पापयुक्तेषु कर्मसु ।

प्रसूमीक्षयाऽऽत्मना राजा दण्डं दण्डयेषु पातयेत् ’ ॥

(ना. स्मृ. १७. ६७)

इति । याज्ञवल्क्यः—

‘कुलानि जातीः श्रेणीश्च गणान् जानपदानपि ।

स्वधर्माच्चलितान् राजा विनीय स्थापयेत्पथि ’ ॥

(या. स्मृ. १. ३६१)

इति । मनुरापि—

‘पिताऽऽचार्यः सुहृन्माता भार्या पुत्रः पुरोहितः ।

नान्दण्ड्यो नाम राज्ञोऽस्ति यस्त्वं धर्मेण तिष्ठति ’ ॥

(म. भा. शां. रा. १३१. ६०)

इति । याज्ञवल्क्योऽपि—

१. I. reads ज्ञेहीयेत. २. All others except A. and the text of Nārada read यद्वेकमाप्नुयेत्. ३. I. inserts this verse in the quotation from Yājñavalkya, but it is a mistake. ४. D. reads चरितान्, and I. reads चक्रितान्. ५. B. G. F. and G. read यः स्वधर्मेण while D. omits the following—

.....यस्त्वं धर्मेण तिष्ठति ’ ॥

इति । याज्ञवल्क्योऽपि—

‘अपि भ्राता सुतोऽर्घ्यो वा श्वशुरो मातुलोऽपि वा ।

नान्दण्ड्यो नाम राज्ञोऽस्ति..... ॥

‘अपि भ्राता सुतोऽर्थो वा श्वशुरो मातुलोऽपि वा ।
नादण्डयो नाम राज्ञोऽस्ति धर्माद्विचलितः स्वकात्’ ॥

(या. स्मृ. १. ३५८)

इति । दण्डचदण्डनं प्रशंसति याज्ञवल्क्यः—

‘यो दण्डयान् दण्डयेद्वाजा सम्यग्वध्यांश्च घातयेत् ।

इष्टं स्यात् क्रतुभिस्तेन समाप्तवरदक्षिणैः’ ॥

(या. स्मृ. १. ३५९)

इति । अदण्डचदण्डनं निषेधयति मनुः—

‘अदण्डयान् दण्डयन् राजा दण्ड्यांश्चैवाप्यदण्डयन् ।

अयशो महदाप्नोति नरकं चैव गच्छति’ ॥

(म. स्मृ. ८. १२८)

इति । दण्डश्च द्विविधः शारीरोऽर्थदण्डश्चेति । यथाऽहं नमदः—

‘शारीरार्थदण्डश्च दण्डश्च द्विविधः स्मृतः । (५३)

शारीरस्ताडनादिस्तु मरणान्तः प्रकीर्त्तितः ॥ (५४)

काकिण्यादिस्त्वर्थदण्डः सर्वस्वान्तस्तथैव च । ॥

(ना. स्मृ. २१. ५३-५५)

इति । राज्ञो दण्डयितृत्वं महता प्रबन्धेन सम्भावयति मनुः—

‘अराजके हि लोकेऽस्मिन् सर्वतो विद्रुते भयात् ।

रक्षार्थमस्य सर्वस्य राजानमसृजत्प्रभुः ॥

इन्द्रा-निल-यमा-स्काणामग्रेश्च वरुणस्य च ।

चन्द्र-वित्तेशयोश्चैव मात्रा निर्हत्य ज्ञाश्वतीः ॥

१. I. reads भार्या for अर्थो वा. २. G. reads अण्डयान् दण्डयेन्निषेधयति.
३. I. reads शारीर आर्थिकश्चेति, while all others except B C. and E. omit
इति. ४. The text reads—शारीरः सन्निरोधविजिगीषितान्तस्तथैव च. ५. A.
reads कणादिस्त्वर्थदण्डस्तु. ६. A. reads लोकस्य.

यस्मादेषां भुरेन्द्राणां मात्राभ्यो निर्मितो गुपः ।
 तस्मादभिभवत्येष सर्वभूतानि तेजसा ॥
 तपसादित्यवच्चैव चक्षुषि च मनांसि च ।
 न चैनं भुवि शक्नोति कश्चिदप्यभिवीक्षितुम् ॥
 सो अग्निर्भवति वायुश्च सोऽर्कः सोमः स धर्मराट् ।
 स कुबेरः स वरुणः स महेन्द्रः प्रभावतः ॥
 ब्रालो अपि नावमन्तव्यो मनुष्य इति भूमिपः ।
 महती देवता ह्येषा नररूपेण तिष्ठति ॥
 एकमेव दहत्यग्निर्देवं दुरूपसर्पिणम् ।
 कुलं दहति राजाग्निः सपशु-द्रव्यसञ्चयम् ॥
 कार्यं सोऽवेक्ष्य शक्तिं च देश-कालौ च तत्त्वतः ।
 कुरुते धर्मसिद्ध्यर्थं विश्वरूपं पुनःपुनः ॥
 यस्य प्रसादे पद्माऽऽस्ते विजयश्च पराक्रमे ।
 मृत्युश्च वसति क्रोधे सर्वतेजोमयो हि सः ॥
 यस्तु तं द्वेष्टि सम्मोहात् स विनश्यत्यसंशयम् ।
 तस्य ह्याशु विनाशाय राजा प्रकुरुते मनः ॥
 तस्माद्धर्मं यमिष्टेषु स व्यवस्येन्नराधिपः ।
 अनिष्टं चाप्यनिष्टेषु तं धर्मं न विचालयेत् ॥

१. १. D. reads चैव; while A. reads च तं. २. G. reads नरेन्दुरूपसर्पिणम्.
 ३. All others except A. and I. read दस्य प्रसूदे पद्मा श्री; while G. reads
 तस्य प्रसादे पद्माऽऽस्ते. ४. The text of Manu reads तं यस्तु. ५. B. C.
 E. F. H. and I. read तस्माद्धर्ममभीष्टेषु; while G. reads तस्माद्धर्मपयीष्टेषु.
 ६. I reads 'तस्य पश्येत्' through mistake. ७. I. reads तद्धर्म.

तेस्यार्थे सर्वभूतानां गोप्तारं धर्ममात्मजम् ।

ब्रह्मतेजोमयं दण्डमसृजत् पूर्वमीश्वरः ॥ (११४)

तं राजा प्रणयन्सम्यक् विवर्णेणाभिर्वर्द्धते । (२७)

(म. स्म. ७. ३-२७)

इति । महाभारते—

‘परोक्षा देवताः सर्वा राजा प्रत्यक्षदेवता ।

प्रसादश्च प्रकोपश्च प्रत्यक्षो यस्य दृश्यते ॥

राजा माता पिता चैव राजा कुलवतां कुलम् ।

राजा सत्यं च धर्मश्च राजा हितकरो नृणाम् ॥

कालो वा कारणं राज्ञो राज्ञा वा कालकारणम् ।

इति ते संशयो माभूत् राजा कालस्य कारणम् ॥

राजमूलो महाराज धर्मो लोकस्य लभ्यते ।

प्रजा राजभयादेव न खादन्ति परस्परम् ॥

(म. भा. शां. रा. ६९. ७९.)

इति । ननु—‘दण्डयेद्राजा’—इति भूपालस्यापि दण्डयितृत्व-
मुक्तम् । तत्कथं क्षत्रियस्यासाधारणधर्मः? मैवम् । राजशब्द-
स्य क्षत्रियविषयत्वेनावेष्टयधिकरणे निर्णीतत्वात् । तथा हि—

‘द्वितीयाध्याये अवेष्टयधिकरणे श्रूयते—‘आग्नेयमष्टाकपालं
निर्वपति हिरण्यं दक्षिणा’— इत्यादिना राजकर्तृके राजसूये

१. D. reads तस्यांगे. २. All others except A. D. and the text of Manu read धर्ममात्मनः. ३. All others except A. and the text of Manu substitute दण्डं for सम्यक्. ४. G. reads धर्मतः. ५. A. reads यव. ६. II. reads राजमूलो राजधर्मो. ७. I. reads रक्ष्यते. ८. B. C. D. E. and F. read नन्दन्ति च for न खादन्ति. ९. From इया हि to (P. 451, L. 17) एवमत्रापि राजशब्दः क्षत्रियपरः (both including) the intermediate portion is omitted by all others except A. and I.

अवेष्टिनामकेष्टिं प्रकृत्य—‘यदि ब्राह्मणो यज्ञेत बार्हस्पत्यं मध्ये
त्रिधायाहुतिं हुत्वा तमभिघारयेत् । यदि राजन्य ऐन्द्रम् ।
यदि वैश्यो वैश्वदेवम्’—इति ।

तत्र, संशयः । किं ब्राह्मणादीनामवेष्टौ प्राप्तानां वर्णानां
राजसूये अधिकारः ? उत क्षत्रियस्यैव?—इति । तदर्थं च किं
राजशब्दः त्रयाणामपि वर्णानां वाचकः ? किंवा क्षत्रि-
यस्यैव ?—इति । ततोऽपि पुनर्विचारयितव्यम् । किं राजशब्दो
राज्ययोगानिमित्तः ? क्षत्रियत्वनिमित्तो वा ?—इति । तत्र राज-
शब्दो राज्ययोगानिमित्त एव । आर्यप्रसिद्धेः । सर्वलोकप्रसिद्ध-
त्वादविगानाच्च । न तु क्षत्रियत्वनिमित्तः । अनार्यप्रसिद्धेरार्य-
प्रसिद्धापेक्षया दुर्बलत्वात् । द्रविडेषु विगानात् । तदन्येष्वप्र-
सिद्धश्च । तत्र स्यात् राज्ययोगात् राजानस्त्रयोऽपि भवन्ति ।
राज्यपदं तु रूढ्या जनपदरक्षणे वर्तते । न राजयो-
गमपेक्षते ।

ननु—‘कर्माणि’—इत्यधिकृत्य—

‘पेत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्’ ।

(पा. सू. ५. १. १२८)

इति वचनात् राजशब्दस्य तत्र पाठादाचाराच्च स्मृतेर्बली-
यस्त्वात् राजयोग एव राज्यपदप्रवृत्तिनिमित्त—इति चेत् । लोक-
प्रयोगस्यैव शब्दार्थाविधारणे प्रमाणत्वात् स्मृतेरपि स एवं मूलं
नान्यत् । प्रयोगाच्च राज्यशब्दस्यैव स्वातन्त्र्यं तन्निमित्तत्वं
‘च’ राजशब्दस्यावगम्यते । तत्तत्तद्वस्तुसारेण स्मरणं शब्दापशब्द-

१. Here I. gives the reading अत्र तस्मात्. २. I. reads परब्रह्म—through mistake.

विभागमात्रपरं व्याख्येयम् । अतस्त्रयाणामपि राजपदाभिधेयत्वेन राजसूये प्राप्तानां निमित्तार्थानि श्रवणानि । 'यदि' शब्दोऽपि राजशब्दस्य राज्ययोगनिमित्तत्वे प्रमाणम् । अन्यथा प्राप्त्यभावात् 'यदि' शब्दोऽनुपपन्नः स्यात् । वैदिकश्च निर्देशः स्मृतेरपि बलीयान् । तस्मात् निमित्तार्थानि श्रवणानि—इति प्राप्ते ब्रूमः ।

न तावद्वैदिकनिर्देशादत्र निर्णयः शक्यते । अन्यथाऽपि तत्सद्भावात् । 'राजानमभिषेचयेत्'— इति ह्यभिषेकविधौ प्रागेव राज्ययोगाद्वाजशब्दस्य क्षत्रियमात्र एव प्रयुक्तत्वात् । तेन न रूढमेव राजपदं निर्णीयते । 'यदि' शब्दस्तु निपातत्वाद् 'यथा कथञ्चिदपि नियमे न दुष्यति'—इति स्मरणाच्च स्वतन्त्रमेव राजपदम् । न च तस्य निर्मूलत्वम् । द्रविडप्रयोगस्यैव मूलस्य सम्भवात् । अतो नै यथार्थत्वे स्मरणस्य प्रमाणमस्तीति । तेनैवाभियुक्तप्रणीतेनाचारस्य सम्भवात् । गौण-भ्रान्त्यादिप्रयोगप्रसृतस्य बाधात् राज्ययोगेन राजशब्दः । स्वतन्त्रस्तु राजशब्दः क्षत्रियवचन—इति ब्राह्मणादेरवेष्टौ प्राप्त्यभावात् प्रापकानि वचनानि—इति । एवमत्रापि राजशब्दः क्षत्रियपरः ।

ननु—जनरञ्जनादोजत्वं महाभारते अभिहितम्—

'रञ्जनात् खलु राजत्वं प्रजानां पालनादपि' ।

इति । बाढम् । सम्भवत्येवं क्षत्रियस्यापि रञ्जकत्वम् । 'क्षत्रियो हि' इत्यनेन द्वितीयश्लोकेन शिष्टपरिपालनरूपो धर्मो

१. I. reads प्रयुक्तः. २. I. reads नयने. ३. I. gives the correct reading नायथार्थत्वे. ४. B, C. and F. read ननु च- for नैनु -जनः. ५. I. omits -परि-.

अभिधीयते । राजधर्मेषु प्रजारक्षणस्य प्रार्थान्येन विवक्षित-
त्वात् प्रथमं प्रजारक्षणमित्युक्तम् । अत एव याज्ञवल्क्यः—
'प्रधानं क्षत्रिये कर्म प्रजानां परिपालनम्' ।

(या. स्मृ. १. ११९)

इति । मनुरात्रि तदेवादौ प्रदर्शयति—

'प्रजानां रक्षणं दानमिज्या ऽध्ययनमेव च ।

विषयेष्वप्रसक्तिं च क्षत्रियस्य समादेशात्' ॥

(म. स्मृ. १. ८९)

इति । शान्तिपर्वण्यपि—

नृपाणां परमो धर्मः प्रजानामेव पालनम् ।

निर्दिष्टफलभोक्ता हि राजा धर्मेण युज्यते ॥

वर्णानामाश्रमाणां च राजा भवति पालकः ।

स्वे स्वे धर्मे नियुञ्जानः प्रजाः स्वाः पालयेत् सदा ॥

पालनेषैव भूतानां कृतकृत्यो महीपतिः ।

सम्यक् पालयिता भागं धर्मस्याप्नोति पुष्कलम् ॥

यजते यदधीते च यद्ददाति यदर्चति ।

राजा षड्भागभाक् तस्य प्रजा धर्मेण पालयन् ॥

सर्वाश्चैव प्रजा नित्यं राजा धर्मेण पालयेत् ।

उत्थानेन प्रसादेन पूजयेच्चापि धार्मिकान् ॥

१. A. reads निरूप्यते, and 1. विधीयते. २. A. reads प्रजारक्षनस्य.
३. I. reads प्रधानः क्षत्रिये धर्मः, but all other manuscripts, as well
as the text, do not follow this reading. ४. The text of Manu reads
अप्रसक्तिश्च. ५. I. reads प्रजानां परिपालनम्. ६. B. C. D. E. and F.
read राजधर्मेण for राजा धर्मेण. ७. After this word B. C. D. E. F. G.
and H. add इति. ८. D. reads प्रहनेन.

राज्ञा हि पूजितो धर्मस्ततः सर्वत्र पूज्यते ।
यद् यदा ऽऽचरते राजा तन् प्रजानां स्मृतिचते ॥

इति । मार्कण्डेयपुराणे—

‘वत्स राज्याभिषिक्तेन प्रजारञ्जनमादितः ।
कर्त्तव्यमविरोधेन स्वधर्मस्य महीभृता ॥
पालनेनैव भूतानां कृतकृत्यो महीपतिः ।
सम्यक् पालयिता भागं धर्मेष्वाप्नोति पुष्कलम् ॥
(मा. पु. २७. ४—३१.)

इति । ब्रह्माण्डपुराणे—

‘यदन्हा कुरुते धर्मं प्रजा धर्मेण पालयन् ।
दशवर्षसहस्राणि तस्य भुङ्क्ते महत्फलम् ॥
(म. भा. शां. रा. ७१. २९)

इति । मनुरपि—

‘सर्वतो धर्मषड्भागो राज्ञो भवति रक्षतः ।
अधर्मादापि षड्भागो भवत्येव ह्यरक्षतः ॥
रक्षन् धर्मेण भूतानि राजा वध्यांश्च घातयन् ।
यजते ऽहरहर्यज्ञैः सहस्र-शतदक्षिणैः ॥
यो ऽरक्षन्बलिमादत्ते करं शुल्कं च पार्श्वैः ।
प्रीतिं भोगं च दण्डं च स सद्यो नरकं व्रजेत् ॥

इति । रक्षणीयाश्च प्रजा भयमापन्नाः । ग्रयं च तासां द्वेधा
सम्पद्यते । चोर-व्याघ्रादिभ्यः पुरसैन्येभ्यो वा । अतस्तदुभयै-

* १. I. reads च. २. The text of Mārkaṇḍeya Purāṇa reads राज्ञे
ऽभिषिक्ते च. ३. D. reads महीभृताः. ४. The text reads यत्नतः. ५. B. C.
and F. read भागं च.

निवारणाय 'प्रदण्डवान्'—इति 'परसैन्यानि निर्जित्य'—इति चोक्तम् । एतच्च निवारणं क्षत्रियस्यैव कुतो आधारणमित्याशङ्क्य तेद्वेषुत्वेन शस्त्रपाणित्वं धर्णितम् । तच्च क्षत्रियस्यैव । तथा च मनुः—

‘शस्त्रास्त्रभृत्त्वं क्षत्रस्य वणिक्-पशु-कृषिर्दिशः ।

आजीवनार्थं धर्मस्तु दानमध्ययनं योजिः’ ॥

(म. स्मृ. १०. ७९)

इति । आनुशासनिकेऽपि क्षत्रियं प्रकृत्य पठ्यते—

‘उत्साहः शस्त्रपाणित्वं तस्य धर्मः सनातनः’ ।

इति । शस्त्रपाणित्वेन च युद्धोपकरणानि सर्वाण्युपलक्ष्यन्ते । तानि च शास्तिपर्वणि दर्शितानि—

‘यष्ट्यस्तोमराः खट्वा निशिताश्च परश्वधाः ।

फलकान्यथ वर्माणि परिकल्प्यान्यनेकशः’ ॥

इति । ‘प्रदण्डवान्’ इत्यनेन चौरादिशिक्षा विवक्षिता ।

यद्यप्येषा पूर्ववचन एवोक्ता तथापि तत्र सा प्राधान्येन प्रतिपादिता । अत्र तु प्रजारक्षणसाधनत्वेनेति न पौनरुक्त्यम् । दण्डप्रकारमाह मनुः—

‘अनुबन्धं परीक्ष्यार्थं देश-कालौ च तत्त्वतः ।

सापराधमथालोच्य दण्डं दण्डेषु पातयेत्’ ॥

(म. स्मृ. ८. १२६)

इति । विष्णुः—

१. From तद्वेषुत्वेन to च युद्धोपकरणानि the intermediate portion is omitted by E. We do not think that this omission is a mistake of the writer. २. B. C. D. E. F. G. and H. read 'कृषी'. ३. I. reads जगुः while D. reads यजुः through mistake. ४. I. omits सा. ५. The text of Manu reads पश्चिमाय for परीक्षाय.

‘आगःस्वपि तथाऽन्येषु ज्ञात्वा जातिं धनं वयः ।

दण्डं प्रकल्पयेद्राजा सम्मन्त्र्य ब्राह्मणैः सह’ ॥ -

(वि. स्मृ. ६. १९४)

इति । बृहस्पतिरपि—

‘वाग्धिग्वधः स्वकं चैव चतुर्धा कल्पितो दमः ।

पुरुषे दोषविभवं ज्ञात्वा सम्परिकल्पयेत् ॥

गुरून् पुरोहितान् विप्रान् वाग्दण्डेनैव दण्डयेत् ।

विवादितो गराश्चान्यान् दोषिणोऽर्थेन दण्डयेत् ॥

महापराधयुक्तांश्च वधदण्डेन दण्डयेत्’ ।

इति । तथा च कात्यायनः—

‘मित्रादिषु प्रयुज्जीत वाग्दण्डं धिक् तपस्विनाम् ।

यथोक्तं तस्य तत्कुर्युरनुक्तं साधुकल्पितम् ॥

अधार्मिकं त्रिभिर्न्यायैर्निगृह्णीयात् प्रयत्नतः ।

निरोधनेन बन्धेन विविधेन वधेन च’ ॥

इति । मनुः—

‘दश स्थानानि दण्डस्य मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत् ।

त्रिषु वर्णेषु तानि स्युरक्षतो ब्राह्मणो व्रजेत् ॥

उपस्थमुदरं जिह्वा हस्तौ पादौ च पञ्चमम् ।

चक्षुर्नासे च कर्णौ च धनं देहस्तथैव च ॥

१. B. C. D. and F. read आग्नेस्वपि for आगःस्वपि. The text of Vishnu reads अपराधिषु चाऽन्येषु for आगःस्वपि तथाऽन्येषु. २. I. reads दण्डं तु प्रणयेद्राजा. ३. Except A. and the text of Vishnu all others read सामन्त- for सम्मन्त्र्य. ४. B. C. F. and G. omit इति । बृहस्पतिरपि. H. also omits this, but these words appear in the marginal correction. ५. I. omits च. ६. The text of Manu reads यानि. ७. B. C. and F. read पादं.

मौण्डं प्राणान्तिको दण्डो ब्राह्मणस्य विधीयते ।

पुरुषाणां कुलीनानां नारीणां च विशेषतः ॥

(स. स्मृ. ८. १२४-१२५)

इति । बृहस्पतिरपि—

‘जगत् सर्वमिदं हन्यात् ब्राह्मणस्य न तत्समम् ।

तस्मात्तस्य वधं राजा मनसा अपि न धिन्तयेत् ॥

‘अवध्यान् ब्राह्मणानाहुः सर्वपापेष्ववस्थितान् ।

यद्यद्विप्रेषु कुशलं तत्तत्राजा समाचरेत् ।

राष्ट्रादेनं बहिः कुर्यात् समग्रधनमक्षतम्’ ॥

इति । यमोऽपि—

‘एवं धर्मप्रवृत्तस्य राज्ञो दण्डधरस्य च ।

यशोऽस्मिन् प्रथते लोके स्वर्गे वासस्तथाऽक्षयः’ ॥

इति । परसैन्यनिर्जयस्तु शान्तिपर्वणि दर्शितः—

‘चैत्रे वा मार्गशीर्षे वा सेनायोगः प्रशस्यते । (१०)

पक्षसस्या हि पृथिवी भवत्यम्बुमती तदा ॥

नैवातिशीतो नात्युष्णः कालो भवति भारत । (११)

तस्मात्तदा योजयीत पुरुषां व्यसनेषु वा ॥

एते हि योगाः सेनायाः प्रशस्ताः परबाधने । (१२)

जलवांस्तृणवान्मार्गः समो गम्यः प्रशस्यते ॥

चौरैः सुविदिताभ्यासः कुशलैर्वनगोचरैः । (१३)

१. यद्यद्विप्रेषु कुशलं यस्मात् for यद्यद्विप्रेषु कुशलं. २. All others except I. omit यमोऽपि. ३. The text of Mahābhārata reads चैत्र्या वा मार्गशीर्ष्या वा. ४. I. reads तथा. ५. B. C. D. E. F. G. and H. read गच्छति. ६. The text reads तथा योजयेत्. ७. H. reads जनवान्.

संघर्षान् पृष्ठतः कृत्वा युद्धयेयुरचला इव । (१९)
 यतो वायुर्यतः सूर्यो यतः शुक्रस्ततो ज्ञयः । (२०)
 अकर्दमामनुदकाममर्यादामुलोष्टकाम् ।
 अश्वभूमिं प्रशंसन्ति ये युद्धकुशला जनाः ॥
 समो निरुदका चैव रथभूमिः प्रशस्यते ।
 नीचकुमा महाकक्षा सोदका हस्तियोधिनाम् ॥
 बहुदुर्गा महावृक्षा वेणु-वेत्रतिरस्कृता ।
 पदातीनां क्षमा भूमिः पर्वतोपवनानि च ॥
 पदातिबहुला सेना दृढा भवति भारत ।
 रथाश्वबहुला सेना सुदिनेषु प्रशस्यते ॥
 पदाति-नागबहुला प्रावृट्काले प्रशस्यते ।
 गुणानितान् प्रसङ्ख्याय युद्धे शत्रुषु योजयेत् ॥
 (म. भा. शां. रा. १००. १०-२५)

इति । मनुरपि—

‘यदा तु यानमातिष्ठेदरिराष्ट्रम्पति प्रभुः ।
 तदाग्नेन विधानेन यायादरिपुरं शनैः ॥
 ‘मार्गशीर्षे शुभे मासे यायाद्यात्रां महीपतिः ।’
 फाल्गुनं वास्थ चैत्रं वा मासौ प्रति यथाज्ञं ॥’
 अन्येष्वपि तु कालेषु यदा पश्येद्भुवं जयम् ।
 तदा यायाद्विगृह्यैव व्यसने चोत्थिते रिपोः ॥

१. The text reads सपङ्कगर्तरहिता. २. The text reads—समाकुलो.
 ३. B. C. E. F. and H. read सर्वतोपवनानि च, while I. reads सर्वतो न
 वनानि च. ४. I. reads तथाऽध. ५. The text reads देश-कालौ प्रयोजयेत्.
 ६. The text of Manu reads मासि. ७. B. C. and F. read फाल्गुने वाऽथ
 चैत्रे वा. ८. I. reads अन्येष्वप्युत्तु-

कृत्वा विधानं मूले तु यात्रिकं च यथाविधि ।
 उपसंह्यास्यदं चैव तारान् सम्यग्विधाय च ॥
 संशोभ्य त्रिविधं मार्गं षड्विधं च स्वकं बलम् ।
 साम्प्रदायिककल्पेन यायादरिपुरं शनैः ॥

(ग. स्मृ. ७. १८१-१८५)

इति । तलस्य षड्विधता उशनसा दर्शिता—

‘मूलबलं श्रेणीबलं मित्रबलं

धृतकबलं शत्रुबलमाटविकबलं च’ ।

इति । युद्धार्थं सैन्यसंज्ञाहरचनामाह मनुः—

‘दण्डव्यूहेन क्षन्मार्गं यायात्तु शकटेन वा ।

वराह-मकाराभ्यां वा सूच्या वा गरुडेन वा ॥

यतश्च भयमाशङ्केत्ततो विस्तारयेद्बलम् ।

पद्मेन चैव व्यूहेन निविशेत् तदा स्वयम् ॥

सेनापति-बलाध्यक्षौ सर्वदिक्षु निवेशयेत् ।

यतश्च भयमाशङ्केत्तां प्रचीं कल्पयेद्दिशम् ॥

‘गुल्मांश्च स्थापयेदासान् कृतसंज्ञान् समन्ततः ।

स्थाने युद्धे च कुशलानभिरूनविकारिणः ॥

संहतान् योधयेदल्पान् कामं विस्तारयेद्बहून् ।

सूच्या वृज्जेण चैवैतान् व्यूहेन व्यूह्य योधयेत् ॥

१. B. C. E. F. G. and H. read चाहुः. २. B. C. E. and F. read मशलसादर्शिता for उशनसा दर्शिता. ३. I. reads तथा; while the text reads संश. ४. I. reads सेनापतीन् बलाध्यक्षान्. ५. B. C. D. E. F. G. and H. read सीसान् for आसान्. ६. B. C. D. E. F. and G. read स्थानयुद्धे. ७. A. reads विभज्येद्वान्.

स्यन्दनाश्वैः समे युद्धयेदनूपे नौ-द्विपैस्तथा ।
 वृक्ष-गुल्मावृते. चापैरसि-चर्मायुधैः स्थले ॥
 कौरुक्षेत्रांश्च मात्स्यांश्च पाञ्चालाञ्छूसेनंजान् ।
 दीर्घान् लघून्श्चैव नरानग्रानीकेषु योजयेत् ॥
 प्रहर्षयेद्वलं व्यूह्य तांश्च सम्यक् परीक्षयेत् ।
 चेष्टाश्चैव विजानीयादरीन् योधयतामपि ॥
 उपरुद्धचारिमासीत् राष्ट्रं चास्योपपीडयेत् ।
 दूषयेच्चास्यं सततं यवसान्नोदकेन्धनम् ॥
 भिन्द्याच्चैव तडागानि प्राकार-परिखास्तथा ।
 समवस्कन्दयेच्चैनं रात्रौ वित्रासयेत्तथा ॥
 उपजप्यानुपजपेद्दुद्धयेच्चैव हि तत्कृतम् ।
 युक्ते च दैवे युद्धयेत् जयप्रेप्सुरपेतभीः ॥
 साम्ना दानेन भेदेन समस्तैरथ वा पृथक् ।

१. B. C. E. and F. read—

युद्धयेत् स्यन्दनाश्वैश्च समेऽनूपे च नौ-द्विपैः ।

and D. and G.—

युद्धयेत् स्यन्दनाश्वैश्च समेऽनूपे च नौ द्विपैः ।

२. I. and the text of Manu read कुरुक्षेत्रांश्च मात्स्यांश्च. ३. B. C. D. E. F. and G. omit—

चेष्टाश्चैव विजानीयादरीन् योधयतामपि ।

४. B. C. D. E. F. and G. omit the following three lines —

भिन्द्याच्चैव तडागानि प्राकारपरिखास्तथा ।

समवस्कन्दयेच्चैनं रात्रौ वित्रासयेत्तथा ॥

उपजप्यानुपजपेद्दुद्धयेच्चैव हि तत्कृतम् ।

H. also omits these lines, but they appear in the marginal correction of the manuscript. ५. I. reads तडाकानि. ६. I. reads अपि for तथा.

७. I. reads उपजप्या- ८. The text of Manu reads युद्धयेत्तथा च.

विजेतुं प्रयत्नेतारीन् न युद्धेन कदाचन ॥

अनित्यो विजयो यस्मात् दृश्यते युद्धयमानयोः ।

पराजयश्च संग्रामे सस्माद्युद्धं विवर्जयेत् ॥

त्रयाणामप्युपायानां पूर्वोक्तानामसम्भवे ।

तथा युद्धयेत् सम्पन्नो विजयेत् रिपुं यथा ॥

जित्वा सम्पूजयेद्देवान् ब्रह्मणांश्चैव धार्मिकान् ।

प्रदद्यात् परिहारांश्च ह्यापयेदभयानि च ॥

सर्वेषां तु विदित्वैषां समासेन त्तर्कितम् ।

स्थापयेत् तत्र तद्वश्यं कुर्याच्च समयक्रियाम् ॥

प्रमाणानि च कुर्वीत तेषां धर्मान् यथोदितान् ।

(म. स्मृ. ७. १८७-२०३)

इति । उक्तप्रकारेण परसैन्यान्ति निर्जित्य जितामेतां पूर्वा च स्वकीयां भुवं राजधर्मेण पालयेत् । तदेव धर्मेण पालनं 'पुष्पं पुष्पं' (६२)—इति *तृतीयश्लोकेन विशदीक्रियते । यथा माला-
कार आरामे यदा यदा यत् यत्पुष्पं विकसति तदा तदा त-
त्तद्विचिनोति । न तु पुष्पलतामुन्मूलयति । तथा प्रजाभ्यः
करमाददानो राजा यथोदयं षष्ठं भागं गृह्णीयात् । अंगारका-

*. तृतीयश्लोकेन पूर्वमुदाहृते मूलस्थश्लोकत्रये अन्येन द्विषष्टि-
तमेनेति बोध्यम् ।

१. B. C. D. E. F. G. and H. read युद्धयेत्. २. G. reads संग्रामे.
३. B. C. E. and G. read सम्पन्नो, while I. reads संयत्तो. ४. B. C. D. E.
F. G. and H. read रिपुन्तथा; while H. and the text of Manu read
रिपुन्यथा. ५. B. C. D. E. F. and G. read परिहारार्थं. ६. D. reads
पक्षयेत्. ७. The text of Manu reads धर्मान्. ८. I. reads पुष्पमात्रं.
९. I. reads तद्विचिनोति.

रकस्तु वृक्षमुन्मूल्य सर्वात्मना दहति । न तु तथा प्रजाः
पीडयेत् । एतच्च शान्तिपर्वणि दर्शितम्—

‘मधुदोहं दुहेद्राष्ट्रं भ्रमेरान्न प्रवासयेत् ।’

वृक्षापेक्षी दुहेच्चैव स्तनांश्चैव न कुट्टयेत् ॥

जलैकावत् पिबेद्राष्ट्रं मृदुनैव चराधिपः ।’

व्याघ्रीवदुद्धरेत् पुत्रं न दशेन्न च पीडयेत् ॥

यथा च लेखकः पर्णमाखुः पादत्वचं यथा ।’

अतीक्ष्णेनाभ्युपायेन तथा राष्ट्रं समापिबेत् ॥

अल्पेनाल्पेन देयेन वर्धमानं प्रदापयेत् ।

ततो भूयस्ततो भूयः क्रमाद्वृद्धिं समाचरेत् ॥

(म. भा. शां. रा. ८८. ४-७)

इति । मनुरपि—

‘क्रय-विक्रयमध्वानं भक्तं च सपरिव्ययम् ।

योगं-क्षेमं च सम्प्रेक्ष्य वणिजो दापयेत् करान् ॥

यथा फलेन युञ्जेत राजा कर्त्ता च कर्मणाम् ।

यथाऽपेक्ष्य नृपो राष्ट्रं कल्पयेत् सततं करान् ॥

१. The text of *Malābhārata* reads भ्रमरा इव पादपम्. २. *AlP* except A. and the text read न वृक्षमुत्पीडयेत्. ३. I. reads स्तनांश्चैव विकुट्टयेत् through mistake. ४. A. D. and G. read जलैकावत्. ५. B. C. D. F. and G. read व्याघ्री चापहरेत्, E. and H. read व्याघ्रीवापहरेत्, A. reads व्याघ्रीववाहरेत् and the text व्याघ्रीव च हरेत्. ६. The text reads यथा शल्यकवानाखुः पदं धूनयते सदा । ७. Except A. and the text all read अतीक्ष्णेनाभ्युपायेन वर्धमानं प्रदापयेत् omitting तथा राष्ट्रं समापिबेत् ॥ अल्पेनाल्पेन देयेन. ८. I. reads क्रमाद्वृद्धिं. ९. I. reads योगं. १०. D. reads फले च युञ्जीत, and B. C. E. F. and G. read फलेन युञ्जीते.

येथाऽल्पाल्पमदन्त्यद्यं वार्योको-वत्स-षट्पदाः ।

तथाऽल्पाल्पो ग्रहीतव्यो राष्ट्राव्राज्ञाऽऽर्द्धिकः करः' ॥

(म. स्मृ. ७. १२७-१२९; म. भा. रा. ८७. १३)

इति । मार्कण्डेयौ अपि—

‘मासान्दौ यथा सूर्यस्तोयं हरति रश्मिभिः ।

सूक्ष्मैवाभ्युपायेन तथा शुल्कादिकं नृपः’ ॥

(मा. पु. २७. २३)

इति । एतच्च करादानं मालाकारदृष्टान्तेन प्रतिपादितमि-
तरेषामपि सर्वेषां राजधर्माणामुपलक्षणम् । ते च धर्माः याज्ञ-
वल्क्येन दर्शिताः—

‘महोत्साहः स्थूललक्षः कृतज्ञो वृद्धसेवकः ।

विनीतः सत्त्वसम्पन्नः कुलीनः सत्यवाक् शुचिः ॥

अदीर्घसूत्रः स्मृतिमानक्षुद्रो अरुषस्तथा ।

धार्मिको अयसनश्चैव प्राज्ञः शूरो रहरयवित् ॥

स्वरन्ध्रगोप्ताऽऽन्वीक्षिक्यां दण्डनीत्यां तथैव च ।

विनीतस्त्वथ वार्त्तायां व्रट्यां चैव नराध्विः’ ॥

(या. स्मृ. १. ३०९-३११)

इति । न एतेऽन्तरङ्गा राजधर्माः । एत एव राजगुणा इ-
त्यप्युच्यन्ते । अत एव—

‘षट्त्रिंशद्गुणोपेतो राजा’—

१. This verse appears in the marginal correction of H. २. D. omits मार्कण्डेयोऽपि and the following verse. ३. I. reads अक्षुधो for अक्षुद्रो. ४. I. reads य एते.

इत्यस्य सूत्रस्य व्याख्यानावसरे महोत्साहादयः उशनसः
पठिताः । बहिरङ्गा अपि राजधर्मा व्याज्ञवल्क्येन दर्शिताः—
'सुमान्त्रिणः प्रकुर्वीत प्राज्ञान्मौलान् स्थिरान् शुचीन् ।
तैः सार्द्धं चिन्तयेद्राज्यं विप्रेणाथ ततः स्वयम्' ॥

(या. स्मृ. १. ३१२)

इति । मनुस्मृति—

'मौलाञ्छास्त्रविदः शूत्रान् लब्धलक्ष्यान् कुलोद्भूतान् ।
सचिवान् सप्त चाष्टौ वा प्रकुर्वीत परीक्षितान् ॥ (५४)
तैः सार्द्धं चिन्तयेन्नित्यं सामादीन् सन्धि-विग्रहम् ।
स्थानं समुदयं गुप्तिं लब्ध-प्रशमनानि च ॥ (५६)
तेषां स्वं स्वमभिप्रायमुपलभ्य पृथक् पृथक् ।
समस्तानां च कार्येषु विदध्याद्वितमात्मनः ॥
सर्वेषां तु विशिष्टैर्ब्राह्मणेन विपश्चिता ।
मन्त्रयेत् परमं सन्त्रं राजा षोडशसंयुतम् ॥
नित्यं तस्मिन् समाश्रितः सर्वकार्याणि निःक्षिपेत् ।
तेन सार्द्धं त्रिनिश्चित्य ततः कर्म समारभेत्' ॥

(म. स्मृ. ७. ५४-५९)

इति । आरम्भणीयं च कर्म देशविशेषेषु दुर्गसम्प्रदानम् ।
तच्च याज्ञवल्क्येन दर्शितम्—

१. All others except A. and I. read सन्मान्त्रिणः and the text of Yājñavalkya reads स मन्त्रिणः. २. D. reads शास्त्रविदः. ३. G. reads बह्व-
लक्षान्. ४. D. reads कुलागलान्. ५. D. E. H. and I. read विग्रहम्.
६. I. reads सत्मान्य-

‘रम्यं पशव्यमाजीव्यं जाङ्गलं देशमावसेत् ।

सत्रं दुर्गाणि कुर्वीत जन-कोशात्मगुप्तये’ ॥

(या. स्मृ. १. ३२१)

इति । दुर्गभेदा मनुना दर्शिताः—

‘धेनूदुर्गं महीदुर्गमब्दुर्गं वार्क्षमेव वा ।’

नृदुर्गं गिरिदुर्गं च समावृत्य वसेत् पुरम् ॥

सर्वेण तु प्रयत्नेन गिरिदुर्गं सभाश्रयेत्’ ।

(म. स्मृ. ७. ७०—७१)

इति । दुर्गसंविधानप्रकारः शान्तिपर्वणि दर्शितः—

‘दृढप्राकार-परिखं हस्त्यश्व-रथसङ्कुलम् ।

ऊर्जस्विनर-नाणाश्वं धत्वरापणशोभितम् ॥

प्रसिद्धव्यवहारं च प्रशान्तमकुतोभयम् ।

शूराढ्यं प्राज्ञसम्पूर्णं ब्रह्मघोषानुनादितम् ॥

समाजोत्सवसम्पन्नं सदा पूजितदैवतम् ।

वश्यामात्य-बलो राजा तत्पुरं स्वयमाविशेत्’ ॥

(मृ. भा. शां. रा. ८६. ६—७)

इति । मनुरपि—

१. I. reads त्यशस्यम् for पशव्यम्. २. D. reads दुर्गभेदो मनुना दर्शितः, and omits the following four lines, up to शान्तिपर्वणि दर्शितः. ३. The text धनूदुर्गं. The text समावृत्य. ४. The text reads शूराढ्यजनसम्पन्नं. Here except A. D. and the text of Mahâbhârata all others are mistaken. They omit the following portion—

..... ब्रह्मघोषानुनादितम् ॥

समाजोत्सवसम्पन्नं सदा पूजितदैवतम् ।

वश्यामात्यबलो राजा..... ॥

and read, शूराढ्यं प्राज्ञसम्पूर्णं तत्पुरं स्वयमाविशेत्.

‘तस्यादायुधसम्पन्नं धन-धान्येन वाह्निः ।’

‘ब्राह्मणैः शिल्पिभिर्यन्त्रैर्यवसेनोदकेन्धवैः०॥

तस्य मध्ये तु पर्वासं कारयेद्ब्रह्मात्मनः ।’

गुप्तं सर्वतुल्यं शुभ्रं जल-वृक्षसमन्वितम्’ ॥

(म. स्मृ. ७. ७५-७६)

इति । दुर्गसंविधानमुक्त्वा यागादिधर्मानपि स एवाह—

‘तदध्वस्योदहेद्गार्वां सवर्णां लक्षणान्विताम् ।

कुले महति सम्भूतां हव्यां रूपसमन्विताम् ॥’

पुरोहितं च कुर्वीत वृणुयादेव चर्त्विजः० ।

तस्य गृह्याणि कर्माणि कुर्युर्वैतानिकानि च ॥१॥

यजेत राजा क्रतुभिर्विविधैरासदक्षिणैः ।

यज्ञार्थं चैव विप्रेभ्यो दद्याद्भागान् धनानि च ॥२॥

सांवत्सरिकमात्रैश्च राश्यादाहारयेद्वलिम् ।

स्याच्चाप्रायपरीं लोके वर्त्तेत पितृवन्नृषु’ ॥

(म. स्मृ. ७. ७७-८०)

इति । याज्ञवल्क्योऽपि—

‘पुरोहितं प्रकुर्वीत देवैश्चमुदितोदितम् ।

दण्डनीत्यां च कुशलमथर्वाङ्गिरसे तथा ॥

१. The text of Manu reads तं स्यात्. २. The text reads सु- for तु-
३. All except I. and the text read सार्वतुल्यं. ४. I. reads शुद्ध.
५. The text reads गुणान्विताम्. ६. I. and the text read चर्त्विजम्.
७. All others except A. B. and the text read तुस्य. ८. The text reads
धर्माधि. ९. B, C, E, F. and G. omit this whole line. १०. All
except A. and the text read पुरोहितं च कुर्वीत. ११. I. reads वैश्वदेव
चाधिकम्, and G. omits the following portion:—

श्रौत-स्मार्त्तक्रियाहेतोर्वृणुयादेव चत्विजः ।

यज्ञांश्चैव प्रकुर्वीत विधिवद्भूरिदक्षिणान् ॥

भोगांश्च दद्याद्विप्रेभ्यो वसूनि विविधानि च ।

सदान-माग-सर्कारैर्वासयेत् श्रोत्रियान् सदा । ॥

(या. स्मृ. १. ३१३-३१५)

इति । मनुस्मृति—

त्रियमाणो ऽप्याददीत न राज्ञा श्रोत्रियात् करम् ।

न च क्षुधाऽस्य संसीदेत् श्रोत्रियो विषये वसन् ॥ ।

यस्य राजस्तु विषये श्रोत्रियः सीदति क्षुधा ।

तस्मापि तत् क्षुधा-राष्ट्रमचिरादेव सीदति ॥

श्रुत-वृत्ते विष्टित्वास्य वृत्तिं धर्म्यां प्रकल्पयेत् ।

संरक्षेत् सर्वतश्चैषं पिता पुत्रमिवौरसम् । ॥

(म. स्मृ. ७. १३३-१५५)

इति । आनुशासनिके अपि—

‘शाला-प्रपा-तडागानि देवताऽऽयतनानि च ।

ब्राह्मणावसथाश्चैव कर्त्तव्यं नृपसत्तमैः ॥

..... देवज्ञमुदितोदितम् ।

वृण्वनीत्यां च कुशलमथर्वाङ्गिरसे तथा ॥

श्रौत-स्मार्त्तक्रियाहेतोर्वृणुयादेव चत्विजः ।

यज्ञांश्चैव प्रकुर्वीत..... ॥

and reads पुरोहितं च कुर्वीत विधिवद्भूरिदक्षिणम् ॥. १. B. C. E. F. and G. read प्रदान-मान-; while D. reads सदाञ्ज-मान-, but this whole line is not found in the text, which substitutes—

अश्वयोऽयं निधी राज्ञां यद्विप्रेषूपपादितम् ॥

for it. २. The text reads अचिरैव. ३. B. C. D. E. F. and G. read सर्वतश्चैव. ४. D. reads प्रपात-शाकानि. ५. B. C. D. E. F. H. and I. read अवनसथं.

ब्रह्मणा^१ नावमन्तव्या भस्मच्छन्ना इकाग्रयः ।
 कुलमुत्पाटयेयुस्ते क्रोधाविष्टा द्विजातयः ॥
 दुष्टानां शासनं धर्मः शिष्टानां परिपालनम् ।^२
 कर्त्तव्यं भूमिपालेन नित्यं कार्येषु चार्जवम् ।^३

इति । शान्तिपर्वण्यपि—

‘बालातुरेषु भूतेषु परित्राणं कुरुद्वहं ।
 शरणागतेषु कारुण्यं कुर्यात्तत्र समाहितः ॥
 भरणं सर्वभूतानां रक्षणं चापि सर्वशः ।^४
 यष्टव्यं ऋतुभिर्नित्यं दातव्यं चाप्यपीडया ॥
 प्रजानां रक्षणं कार्यं न कार्यं कर्म गहिष्ठम् ।
 आश्रमेषु यथाकालं चैलं भोजनभाजनम् ॥
 स्वयं तूपहरेद्राजा सत्कृत्य विधिपूर्वकम् ।
 आत्मानं सर्वकार्याणि तापसे राज्यमेव च ॥
 निवेदयेत् प्रयत्नेन तिष्ठेत् प्रहृष्टश्च नित्यशः ।
 विक्रमेण महीं लब्ध्वा प्रजा धर्मेण पालयन् ॥
 आहवे निधने कुर्याद्राजा धर्मपरायणः ।
 आहवे च महीं लब्ध्वा श्रोत्रियायोपपादयेत् ॥^५

(म. भा. शां. रा. ८६. २१-२६)

इति । मनुः—

१. This and the following two lines do not appear in our edition of Mahābhārata Ś. (Canto १६); but they may be found elsewhere in this book. २. The text reads धर्मबाधकैश्च. ३. The text reads सत्कृत्याऽऽयुष्ये मान्यं च. ४. The text reads राष्ट्र. ५. The text reads सर्वशः. ६. D. reads व्युत्क्रमेण. This and the following two lines are not found in the १६th Canto of Mahābhārata Ś. ७. D. omits इति । मनुः—

मौहात्रांजा स्वराष्ट्रं यः कर्षयत्यनवेक्षया ।

सोऽविराद्भयते राज्याज्जीविताश्च सबान्धवः ॥

शरीरैर्कर्षणात् प्राणाः क्षीयन्ते प्राणिनां यथा ।

तथा राज्ञामपि प्राणाः क्षीयन्ते राष्ट्रकर्षणात् ॥

(म. स्मृ. ७. १११-११२)

इति । दिनचर्यां तु मनुना दर्शिता—

‘उत्थाय पश्चिमे यामे कृतशौचः समाहितः ।

‘हुत्वाग्निं ब्राह्मणांश्चाचर्य प्रविशेच्च सभां शुभाम्’ ॥

(म. स्मृ. ७. १४५)

इति । स्मृत्यन्तरे अपि—

‘प्रातरुत्थाय नृपतिः कुर्याद्विन्तस्य धावनम् ।

स्नानशालां समागत्य स्नात्वा पूतेन वारिणा ॥

अर्घ्यं दत्त्वा तु देवाय भास्कराय समाहितः ।

ततोऽलङ्कृतगात्रः सन् वक्त्रमालोक्य मेन्यवत् ॥

घृतपात्रं तु विप्राय दद्यात् सकनकं नृपः’ ।

इति । याज्ञवल्क्यो अपि—

‘ऋत्विक्-पुरोहिताचार्यै राशीभिरभिनन्दितः । (३३२)

दृष्ट्वा ज्योतिर्विदो वैद्यान् दद्याद्वाः काञ्चनं महीम् ।

नैवेद्रीकानि च ततः श्रोत्रियेभ्यो गृहाणि च’ ॥

(या. स्मृ. १. ३३२-३३३)

१. The text of Manu reads हुताग्निं ब्राह्मणांश्चाचर्य प्रविशेच्च शुभां सभाम् ॥

२. B. C. D. E. F. and G. substitute स for तु. I. reads मन्त्रवित्.

४. D. and the text reads दद्याद्वाः. ५. B. C. and F. read तथा श्रोत्रियाय; while D. E. G. H. and I. read तथा श्रोत्रियाणां.

इति । नैवेशिकानि विवाहोपयोगीनि कन्या-वलङ्कारादीनि ।
दानेनन्तरकृत्यं मनुराह—

‘तत्र स्थितः प्रजाः सर्वाः प्रतिनन्द्यं विमर्जयेत् ।

विसृज्य च प्रजाः सर्वा मन्त्रयेत् संह मन्त्रिभिः ॥ (१४६)

गिरिपृष्ठं समारुह्य प्रासादं वा रहोगतः ।

अरण्ये निःशलाके वा मन्त्रयेत्तार्क्ष्यभाषितः ॥ (१४७)

मध्यन्दिनेऽर्द्धरात्रे वा विश्रान्तो विगतक्लमः ।

चिन्तयेत् धर्मकामार्थान् सार्धं तैरेक एव वा ॥ (१४८)

कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम् ॥ (१४९)

दूतसम्प्रेषणं चैव कार्यशेषं तथैव च ।

अन्तःपुरप्रचारं च प्रणिधीनां च चैष्टितम् ॥ (१५०)

कृत्स्नं चाष्टविधं कर्म पञ्चवर्गे च तत्त्वतः ।

अनुरागापरागौ च प्रचारं मण्डलस्य च ॥ (१५१)

अनन्तरमरिं विद्यादरिसेविनमेव च ।

अरेरनन्तरं मित्रमुदासीनं तयोः परम् ॥ (१५२)

तान् सर्वानभिसन्दध्यात् सामादिभिरुपक्रमैः ।

व्यस्तैश्चैव सुमस्तैश्च मौरुषेण नयेन च ॥ (१५३)

सन्धिं च विग्रहं चैव यानमासनमेव च ।

द्वैधीभावं संश्रयं च षड्गुणांश्चिन्तयेत्सदा ॥ (१५४)

१. H. reads स्थिताः. २. The text of Manus reads मन्त्रयेदविभाषितः.
३. All others except A and the text substitute च for वा. ४. B.
C. D. E. F. and G. read प्रसारं च; while I. reads प्रजानां च. ५. B.
C. E. F. G. and I. omit this line. ६. B. C. E. F. and G. omit this
and the following three lines.

आसर्गं चैव यानं च सन्धि विग्रहमेव च ।

कार्यं वीक्ष्य प्रयुज्जीत द्वैधं संश्रयमेव च ॥ (१६१)

उपेतं स्मृपेयं च सर्वोपायांश्च कृत्स्नशः ।

एतच्चयं समाश्रित्य प्रयतेतार्थसिद्धये ॥ (२१५)

(म. स्मृ. ७. १४६-२१५)

इति । अष्टविधत्वं तु कर्मण उदानसा प्रदर्शितम्—

‘आदाने च विसर्गे च तथा प्रैष-निप्रेभयोः।

पञ्चमे चार्थवचने व्यवहारस्य चेक्षणे ॥

दण्ड-शुद्ध्योः समायुक्तस्तेनाष्टगतिको नृपः’ ।

इति । शुद्धिः प्रायश्चित्तम् । पञ्चवर्गस्तु कार्पटिक-दाम्भि-

१. B. C. E. F. G. and H. read सन्धाय च विगृह्य च for सन्धिं विग्रहमेव च; while D. adds the following verses:—

सन्धि तु द्विविधं विद्याप्राजा विग्रहमेव च ।

उभे याना-ऽऽसर्गे चैव द्वैधं संश्रयमेव च ॥

समानयानकर्मा च विपरीतस्तथैव च ।

तदा स्वायतिसंयुक्तः सन्धिज्ञेयो हिलक्षणः ॥

स्वयंकृतश्च कार्यार्थमकाले काल एव वा ।

मित्रस्य चैवापकृते द्विविधो विग्रहः स्मृतः ॥

एकाकिनः स्यादित्येके कार्ये प्राप्ते यदृच्छया ।

संहतस्य च मित्रेण द्विविधं यानमुच्यते ॥

क्षीणस्य चैव क्रमशो वैवात्पूर्वकृतेन वा ।

मित्रस्य वाऽनुरोधेन द्विविधं स्मृतमासनम् ॥

बलस्य स्वामिनश्चैव स्थितिः कार्यार्थसिद्धये ।

द्विविधं कीर्त्यते द्वैधं षाडगुण्यगुणवैरिभिः ॥

अर्थसम्पादनायां पीडयमानस्य शत्रुभिः ।

साधुषु व्यपदेशेषु द्विविधः संश्रयः स्मृतः ॥

(म. स्मृ. ७. १६२-१६८)

All these verses are found in the text of Manu with slight changes in reading. २. B. reads उपायं च. ३. B. C. D. E. F. and G. omit the portion from अष्टविधत्वं तु to कार्यसिद्धिरिति वा पञ्चवर्गः (P. 471, L. 3). ४. I. reads कार्पटिक-

क-गृहपति-वैदेहक-तापसव्यञ्जनोश्चराः । कर्मणामारम्भोपा-
यः, कुरुष-द्रव्यसम्पत्, विनिपातप्रतीकारः, कार्यसिद्धिरिति, वृ
पञ्चवर्गः ।

‘एवं सर्वमिदं राजा सह सम्मन्त्र्य मन्त्रिभिः ।
व्यायुम्याऽऽहुत्य मध्याह्ने भोक्तुमन्तःपुरं प्रैजेत् ॥
तत्रात्मभूतैः कालज्ञैरर्हार्थैः परिचारकैः ।
सुपरीक्षितमन्त्राद्यमन्त्रान्मन्त्रैर्विषापहैः ॥
विषप्रैरगदैश्चाऽस्य सर्वद्रव्याणि योजयेत् ।
विषप्रानि च रत्नानि नियतो धारयेत्सदा ॥
परीक्षिताः स्त्रियश्चैनं व्यजनोदकधूपनैः ।
वेषाभरणसंशुद्धाः स्पृशेयुः सुसमाहिताः ॥
एवं प्रयत्नं कुर्वीत यान-शय्याऽऽसना-ऽशने ।
स्नाने प्रसाधने चैव सर्वालङ्कारकेषु च ॥
भुक्तवान् विहरेच्चैव स्त्रीभिरन्तःपुरे सह ।
विहृत्य तु यथाकालं पुनः कार्याणि विन्तयेत् ॥
अलङ्कृतश्च सम्पश्येदायुधीयं पुनर्जनम् ।
वाहनानि च सर्वाणि शस्त्राण्याभरणानि च ॥
सन्ध्यां चोपास्य गृणुयादन्तर्वेश्मनि शस्त्रभृन् ।
रहस्याख्यायिनां चैव प्रणिधीनां च चेष्टितम् ॥

१. H. reads व्यञ्जकाः. २. From शुद्धिः प्रायश्चित्तम् (P. 471, L. 10)
to this A. omits the intermediate portion. ३. The text of Manus.
reads विशेष. ४. B. C. E. F. G. and H. read रक्षार्थैः. ५. D. reads
उदकैश्चैव, and B. C. E. F. G. read उदकैश्चास्य. ६. B. C. E. F. G. H.
and I. read वेषाभरणसंशुद्धाः संस्पृशेयुः for वेषाभरणसंशुद्धाः स्पृशेयुः सु-
while D. substitutes विषाभरण- for वेषाभरण-. ७. All except A. and the
text read च यथाकामं.

गत्वा^१ कक्षाऽन्तरं^२ सम्यक् समनुज्ञाप्य तं जनम् ।

प्रविशेद्भोजनार्थं^३ तु स्त्रीवृत्तोऽन्तःपुरं पुनः ॥

तत्र भुक्त्वा पुनः किञ्चित्पूर्वघोषैः प्रहर्षितः

संविशेच्च यथाकालमुत्तिष्ठेच्च गतकृमः ॥

एतद्विधानमातिष्ठेदरोगः पृथिवीपतिः ।

अस्वस्थः सर्वमेवैतत् भृत्येषु विनिवेशयेत् ॥

(म. स्मृ. ७. २१६-२२६)

इति । धर्मान्तरमाह मनुः—

‘सङ्ग्रामध्वनिवर्त्तित्वं प्रजानां चैव पालनम् ।

शुश्रूषा ब्राह्मणानां च राज्ञां श्रेयस्करं परम् ॥ (८८)

अलब्धं चैव लिप्सेत लब्धं रक्षेच्च यत्नतः ।

रक्षितं वर्द्धयेच्चैव वृद्धं पात्रेषु निःक्षिपेत् ॥ (९९)

अमाययैव वर्त्तेत न कथञ्चन मायया ।

बुद्धयेतारिप्रयुक्तां तु मायां गित्यं सुसंवृतः ॥ (१०४)

(म. स्मृ. ७. ८८-१०४)

इति । शान्तिपर्वण्यपि—

‘व्यसनानि च सर्वाणि नृपतिः परिवर्जयेत् ।

‘लोकसङ्ग्रहणार्थाय कृतकव्यसनी भवेत् ॥

इति । तानि व्यसनानि मनुना दर्शितानि—

१. The text of Manu reads स्नान्यत्; while D. reads यावत्. २. All others, except A. I. and the text, read स्त्रीभिरन्तःपुरं. ३. The text of Manu reads तु for च. ४. All except A. I. and the text of Manu read द्वितीयकृमः for ५ गतकृमः. ५. All, except A. I. and the text read एतद्विधानमातिष्ठेत्. ६. The text of Manu reads सर्वमेतत् भृत्येषु विनिवेशयेत्. ७. H. and I. read राज्ञः. ८. The text reads च for तु. ९. The text substitutes स्वसंवृतः for सुसंवृतः.

'दश कामसमुत्थानि तथाष्टौ क्रोधजाणि च । (४५)
 मृगयोऽक्षा दिवा स्वप्नः परीत्रादः स्त्रियो भेदः ।
 तौर्यत्रिकं वृथा ऽद्याद्या कामजो दशक्रोभणः ॥ (४६)
 पैशुन्यं साहसं द्रोहं ईर्ष्यां मूढार्थदूषणम् ।
 वाग्दण्डजं च पारुष्यं क्रोधजोऽपि गणोऽष्टकः ॥ (४७)
 कामजेषु प्रसक्तो हि व्यसनेषु महीपनिः ।
 विद्युज्जनेऽर्थ-धर्माभ्यां क्रोधजे स्वात्मनैव तु ॥ (४८)
 द्वयोरप्येतयोर्मूलं यं सर्वे कवयो विदुः ।
 तं यत्नेन जयेद्दोभं तज्जौ ह्येतौ गणावुभौ ॥ (४९)
 पानमक्षाः स्त्रियश्चैव मृगयश्च यथाक्रमम् ।
 एतत्कष्टतमं विद्याच्चतुष्कं कामजे गणे ॥ (५०)
 दण्डस्य पातनं चैव क्लृपाख्या-र्थदूषणे ।
 क्रोधजेऽपि गणे विद्यात् कष्टमेतत्त्रिकं सदा ॥ (५१)
 व्यसनस्य च मृगयोश्च व्यसनं कष्टमुच्यते ।
 व्यसन्येधो हि व्रजति स्वर्गत्यव्यसनी मृतः ॥ (५२)
 (म. स्मृ. ७. ४५-५३)

• इति । मार्कण्डेयोऽपि—

१. J. reads ऽभो. २. All others except A. I. and the text read वमः.
 for मद्.. ३. B. C. E. F. read वृथाऽद्याद्या, G. reads वृथा भाषा, I. वृथा-
 ऽद्याद्या and the text reads वृथा ऽद्या च. ४. All except A. I. I. and the text read द्रोहं. ५. D. reads वाग्दण्डो दण्डपारुष्यं. ६. D.
 and G. read मुणोऽष्टकः. ७. B. C. and F. read विद्युज्जनेऽर्थ-कामाभ्यां; while
 D. E. G. and H. read विद्युज्जनेऽर्थ-कामाभ्यां. ८. I. reads क्रोधजे स्वात्म-
 नैव तु; while D. reads क्रोधजेऽस्वात्मनेन तु. ९. I. reads जयेद्दोभं स्या-
 द्यौ ह्येतौ, and the text reads जयेद्दोभं तज्जवेतौ. १०. B. C. F. read
 पानं मक्षाः, D. reads पानमक्षाः; while G. reads पानमत्ता. All are prob-
 ably incorrect. ११. The text reads अथोऽधो व्रजति.

‘व्यसनानि परित्यज्य सप्त मूलहराणि, चे ।

आत्मा रिपुभ्यः संरक्ष्यो बहिर्मन्त्रविनिर्गमात् ॥ (१)

स्थानं धृद्धि-क्षय-ज्ञान-बाह्यगुण्यविजितात्मना ।

भूवितव्यं नरेन्द्रिणं न कामवशावर्तिना ॥ (२)

प्रागात्मा मन्त्रिणश्चैव ततो भृत्या महीभृता ।

जेयाश्चानन्तरं पौरा विरुद्धचेत ततो ऽग्निभिः ॥ (३)

यस्त्वेतानं विनिर्जित्य वैरिणो विजिगीषते ।

‘सोऽजितात्माऽजितामात्यः, शत्रुवर्गेण बाध्यते’ ॥ (४)

(मा. पु. २७. ५-११)

इति । तदेवमुक्तधर्मकलापेन संयुक्तो राजा प्रजाः पाल-
येत् । तदुक्तं मनुना—

‘एवं सर्वं विधायेदमिदिकर्तव्यमात्मनः ।

युक्तश्चैवाऽप्रमत्तश्च परिरक्षेदिमाः प्रजाः’ ॥

(म. स्मृ. ७. १४१)

इति । प्रजारक्षणे राज्ञः श्रेयोविशेष ऐहिक आमुष्मिकश्च
शान्तिपर्वणि दर्शितः—

‘स्त्रियश्चाऽपुरुषा मार्गं सर्वालङ्कारभूषिताः ।

निर्भयाः प्रतिपद्यन्ते यदा रक्षति भूमिपः ॥

धर्ममेव प्रपद्यते न हिंस्रन्ति परस्परम् ।

अनुगृह्णन्ति चान्योन्यं यदा रक्षति भूमिपः ॥

१. The text, substitutes वै for च. २. D. reads संरक्षन्. ३. The text reads -ज्ञानबाह्यगुण्यविजितात्मना. ४. Our reading follows A. and the text of Markandeya, but all others read होयाः. ५. B. C. and F. read -न्यविजित्य; while the text reads -न विजित्यैव. ६. All except A. and the text read स्त्रियश्च पुरुषा. ७. I. reads अनुगृह्यन्ति through mistake, and corrects अनुगृह्णन्ति.

यजन्ते च महायज्ञैस्त्रयो वर्णाः पृथग्विधैः ।
 युक्ताश्चाधीयते वेदान् यदा रक्षति भूमिपः ॥
 यदा राजा धुरं श्रेष्ठमादाय वहति प्रजाः ॥
 महता बलयोगेन तदा लोकः प्रसीदति ॥

(म. भा. शां. रा. ६८. ३२-३६)

इति । रामायणे ऽपि—

‘यः क्षत्रियः स्वधर्मेण पृथिवीमनुशास्ति वै ।
 स लोके लभते वीरं यशः प्रेत्येह चैव हि’ ॥

इति । अपालने दोषः शान्तिपर्वणि दर्शितः—

‘यानं वस्त्राण्यलङ्कारान् रत्नानि विविधानि च ।
 हरेयुः सहसा पापा यदि राजा न पालयेत् ॥
 पतद्बहुविधं शस्त्रं बहुधा धर्मचारिषु ।
 अधर्मः प्रगृहीतः स्यात् यदि राजा न पालयेत्’ ॥

(म. भा. शां. रा. ६८. १६-१७)

इति ।

॥ इति राजधर्मप्रकरणम् ॥

१. The text reads विद्यां. २. Except A. and the text all others read this verse as follows :—

यदा राजाऽऽयुधं श्रेष्ठमादाय वहति प्रजाः ।
 महता बलयोगेन तदा लोकान् समञ्जते ॥

३. I. reads वीर्यं for वीर. ४. H. and I. read प्रेत्य च सद्गतिम्. ५. Except A. and the text (Calcutta edition of the text reads पतद्बहुविधं शस्त्रं) ६. others read this verse as follows :—

एतद्बहुविधं शस्त्रं न कृषिर्न वणिक्पथः ।
 मज्जेत् धर्मस्त्रयी न स्यात् यदि राजा न पालयेत् ॥

while I. reads पतद्बहुविधं शस्त्रं.

अथ वैश्यधर्मप्रकरणम् । क्रमप्राप्तान् वैश्यस्याऽसाधारण-
धर्मानाम्—

लाभकर्म तथा रत्नं गवां च परिपालनम् ।

कृषिकर्म च वाणिज्यं वैश्यवृत्तिरुदाहृता ॥ ६३ ॥

लाभार्थं कर्म, लाभकर्म कुसीदाद्युपजीवनमित्यर्थः । रत्नं
मणि-शुक्लादि । तेन च तत्परीक्षण-क्रय-विक्रया उपलक्ष्यन्ते ।
गवां पालनं तृणोदकप्रदान-बन्धन-मोचन-दोहनादि । कृषि-
कर्म भूमिकर्षण-बीजवापनादि । वाणिज्यं क्रमुक-धान्यादि-
क्रय-विक्रयौ । कुसीदादीनां वैश्यधर्मत्वमाह याज्ञवल्क्यः—

‘कुसीद-कृषि-वाणिज्यं पाशुपाल्यं विशः स्मृतम्’ ।

(या. स्मृ. १. ११९)

इति । मनुरपि—

‘पशूनां रक्षणं दानमिज्या अध्ययनमेव च ।

वणिकपथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च’ ॥

(म. स्मृ. १. ९०)

इति । समादिशादिति शेषः । वराहपुराणे अपि—

‘स्वाध्यायं यृजनं दानं कुसीद-पशुपालनम्’ ।

‘गोरक्षां कृषि-वाणिज्यं कुर्याद्वैश्यो यथाविधि’ ॥

इति । पशुपालनं अजाश्रादिपालनम् । गोशब्दस्य पृथगुपा-
त्तत्वात् । ‘आनुशासनिके, विक्रेयद्रव्याण्यपि निर्दिशतानि—

१. M. reads लाभकर्म, and L. reads लाभकार- for लाभकर्म. The former seems to be more correct. २. K. and L. read रत्न-गवां. ३. All others, except A. and I. read कुसीदवृत्तुपजीवनम्. ४. I. reads कृषिक- for क्रमुक- through mistake. ५. The text reads वाणिज्य-. ६. All except A. and D. omit अपि, and read निर्दिशतानि for निर्वदिशतानि

‘तिल-क्षम-रसाश्चैव विक्रोयाः पशु-वोजिन्मः ।

वणिक्पथमुपासीन्वैश्यैर्वैश्यपथि स्थितैः’ ॥

(म. भा. आ. १४१. ५६)

इति । शान्तिपर्वणि जाजल्युपाख्यामप्रसङ्गेन वैश्यध-
र्मास्तुलाधारेणोदिताः—

यद्दामि न तज्यूनं यद्दहामि न चाधिकम् ।

विक्रीणामि रसांश्चाहं मद्यवर्ज्यममायया ॥ •

क्रीत्वा चैव प्रविक्रीणे परस्तात्तद्धनं बहु ।

(म. भा. शां. मो. २६१. ७-८)

इति । पशुपालने विशेषमाहंतुः शङ्ख-लिखितौ—

‘गा रक्षेत् । तास्वपीतासु न पिबेत् । न तिष्ठत्सू-

पविशेत् । न स्वयमुत्थापयेत् । शनैरार्द्रशा-

खया सपलाशया पृष्ठतोऽभिहन्यात् । न तीर्थे

न विषमे नाल्पोदके श्वतारयेत् । बाल-वृद्ध-शो-

गार्तानां शक्तितः प्रतीकारं कुर्यात् । अन्यथा

विप्लवः’ ।

१. H. reads पशवस्तथा. २. I. reads जाजल्युपाख्यान, but neither the other manuscripts nor the text follows Jābali. ३. From तुलाधा-
रेणोदिताः to लाभकर्मादिभि (P. १७८, L. 1) the intermediate portion is omitted by I., but this is a mistake. ४. This line is not found in the text. ५. The text reads this verse as follows :—

रसांश्च तांस्तान् विप्रैर्ब मद्यवर्ज्यान् बहून्हम् ।

क्रीत्वा वै प्रविक्रीणे परस्तात्तद्धनं बहु ।

६. D. reads—

क्रीत्वा वै प्रविक्रीणे परस्तात्तद्धनं बहु ।

G. reads—

क्रीत्वा चैव प्रविक्रीणे परस्तात्तद्धनं बहु ।

while H. reads—

क्रीत्वा चैव प्रविक्रीणे परस्तात्तद्धनं बहु ।

इति । यानि लाभकर्मादीनि वाणिज्यान्तानि तानि सर्वा-
णि वैश्यवृत्तिः वैश्यस्य जीवनहेतुरित्यर्थः । तदुक्तं मार्कण्डेये-
दानमध्ययनं यज्ञो वैश्यस्यापि त्रिधैव सः ।

वाणिज्यं पाशुपाल्यं च कृषिश्चैवास्य जीविका ॥

(मा. पु. २८. ६)

इति । अर्धवेज्ञानादयोऽपि वैश्यधर्मत्वेन द्रष्टव्याः । अत-
एव मनुना वैश्यधर्मेषु पठिताः—

‘वैश्यस्तु कृतसंस्कारः कृत्वा दारपरिग्रहम् ।

वार्त्तायां नित्ययुक्तः स्यात् पशूनां चैव रक्षणे ॥ (३२६)

प्रजापतिर्हि वैश्याय सृष्ट्वा परिददे पशून् । (३७२)

न च वैश्यस्य कामः स्यान्न रक्षेयं पशूनि ॥

वैश्ये चेच्छति नान्येन रक्षितव्याः कथञ्चन । (३२८)

मणि-मुक्ता-प्रवालानां लोहानां तान्तवस्य च ॥

गन्धानां च रसानां च विद्यादूर्ध्वबलाबलम् । (३२९)

बीजानामुभिविच्च स्यात् क्षेत्रदोष-गुणस्य च ॥

मानयोगांश्च जानीयात्तुलायोगांश्च सर्वतः । (३३०)

‘सारासारं च भाण्डानां देशानां च गुणागुणान् ।

लभालाभं च पण्यानां पशूनां चैव विवर्धनम् ॥ (३३१)

१. D. reads मार्कण्डेयेन. २. D. reads सा. ३. All others except A. and I, read अर्थ- for अर्थ-. ४. उपि is omitted by all except A. ५. This and the following two lines appear in Mahābhārata Śāntiparva Adharma, Canto 60. ६. I. reads लोहानां. ७. All others except A. and I. read, रथ- . ८. B., C. F., E., D. and G. read क्षेत्र-बीज-गुणस्यः while H. reads क्षेत्रवृद्धि-गुणस्य. ९. The text reads योगं च for -योगांश्च, and सर्वतः for सर्वतः. १०. All others except A. and the text read गुणागुणम्. ११. The text reads पशूनां परिवर्धनम्. .

भृत्यानां च भृतिं विद्याद्दोषाश्च विविधां नृणाम् ।
 द्रव्यानां स्थानयोनांश्च क्रयं विक्रयमेव च ॥ (३३३)
 धर्मेण च द्रव्यवृद्धावातिष्ठेद्यन्नमुत्तमम् ।
 दद्याच्च सर्वभूतानामन्नमेव प्रयत्नतः ॥ (३३३)

(मः स्मृ. ९. ३२६-३३३)

इति । कृषि-वाणिज्य-गोरक्षाः वार्त्ताशब्देनोच्यन्ते । मा-
 नयोगा अञ्जलि-प्रस्थादिसाध्याः । मूलवचने 'लभकर्म'—
 इत्यत्र 'लौहकर्म'—इति केचित् पठन्ति । लौहस्य सुवर्णरज-
 नादेरर्घपरिज्ञानक्रयादिकं तत्कर्मैति, व्याख्येयम् । 'लौहानां'
 चेति मनुपठितत्वात् । यथोक्तधर्मानुष्ठानं फलमाश्रमेधिके
 वर्णितम्—

‘वणिग्धर्मममुच्चन् वै देव-ब्राह्मणपूजकः’ ।

स वणिकु स्वर्गमाप्नोति पूज्यमानो ऽप्सरोगणैः ॥

इति । वैपरीत्ये दोषः श्रान्तिपर्वणि दर्शितः—

‘यः करोति जंनान् साधून् वणिक्कर्मणि वञ्चितान् ।’

‘स याति नरकं घोरं धनं तस्यापि हीयते’ ॥

इति ॥ ६३ ॥

॥ इति वैश्यधर्मप्रकरणम् ॥

क्रमप्राप्तान् शुद्धस्याऽसाधारणधर्मानाह—

* १. B. C. F. G. and H. read भाषां च विविधां. २. B. C. D. E. F. G. and H. read द्रव्यवृद्धौ. ३. B. C. E. F. G. and H. read वणिक् कर्मणि वञ्चनम्; while I. reads वलिकर्मणि वञ्चनम्.

शूद्रस्य द्विजशुश्रूषा परमो धर्म उच्यते ।

अन्यथा कुरुते किञ्चित्तद्वेत्तस्य निष्फलम् ॥६४॥

अत्र द्विजशब्दो ब्राह्मणपरः । तच्छुश्रूषायाः परमत्वम् ।

निःश्रेयसहेतुत्वात् । तदाह मनुः—

‘विप्राणां वेदविदुषां गृहस्थानां यशस्विनाम् ।

‘शुश्रूषैव तु शूद्रस्य धर्मो नैश्रेयसः परः ॥

शुचिरुत्कृष्टशुश्रूषुर्मृदेवागनहंकृतः ।

ब्राह्मणोपाश्रयो नित्यमुत्कृष्टां जातिमश्नुते’ ॥

(म. स्मृ. ९. ३३४—३३५)

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘द्विजशुश्रूषुषैवैष पाकयत्ताधिकारवान् ।

निजान् जयति वै लोकान् शूद्रो धन्यतरः स्मृतः’ ॥

इति । आनुशासनिके अपि—

‘रागो द्वेषश्च मोहश्च पारुष्यं च नृशंसता । (७)

शाठ्यं च दीर्घवैरत्वमतिमानमनार्जवम् ॥

अनृतं चातिवादं च पैशुन्यमतिलोभता । (८)

निरुतिश्चाप्यविज्ञानं जपने शूद्रभाविशत् ॥ (१०)

दृष्ट्वा पितामहः शूद्रमभिभूतं तु तामसैः ।

‘द्विजशुश्रूषणं धर्मं शूद्राणां च प्रयुक्तवान् ॥ (११)

३. K. L. and M. read this line as follows:—

शूद्राणां द्विजशुश्रूषा परधर्मः प्रकीर्तितः ।

२. I. reads मृदेवान्तोऽनहंकृतः. ३. The text reads ब्राह्मणापाश्रयो; while B. C. D. E. F. G. and H. read ब्राह्मणापाश्रयो. ४. विष्णुपुराणेऽपि and the following verse is omitted by D. This verse is not found in the text of Vishnu Purāṇa. ५. I. reads चातिवादः.

नश्यन्ति तामसा भावाः शूद्रस्य द्विजभक्तितः । (१२).

द्विजशुश्रूषया शूद्रः परं श्रेयोऽधिगच्छति' ॥ (६)

(वृ. गौ. स्मृ. १२. ६-१२)

इति । 'परम्'— इति विशेषणोदन्येऽपि केचन धर्माः सन्तीति गम्यते । ते च देवलेन दर्शिताः—

‘शूद्रधर्मास्त्रिवर्णशुश्रूषा कलत्रादिपोषणं कः ,
र्षण-पशुपालन-भारोद्धहन-पण्यव्यवहार-चित्र-
कर्म-नृत्य-गीत-केणु-वीणा-मुरज-मृदङ्गवाद-
नानि ’ ।

इति । विष्णुपुराणे अपि—

‘दानं च दद्याच्छूद्रेऽपि पाकयज्ञैर्यजेत च ।

पित्र्यादिकं च वै सर्वं शूद्रः कुर्वीत तेन वै’ ॥

(वि. पु. ३. ८. ३३)

इति । याज्ञवल्क्योऽपि—

‘भार्यारतः शुचिर्भृत्यभर्ता श्राद्धक्रियापरः ।

नमस्कारेण मन्त्रेण पञ्चयज्ञान्न हापयेत्’ ॥

(या. स्मृ. १. १२१)

इति । शान्तिपर्वण्यपि—

‘स्वाहाकार-नमस्कारमन्त्रः शूद्रे विधीयते । (३५) .

ताभ्यां शूद्रः पाकयज्ञैर्यजेताव्रतवान् स्वयम् ॥ (३७)

१. The text reads वा वि वृ. २. The text reads इति. ३. The text reads स्वाहाकार-वषट्कारौ मन्त्रः शूद्रेन विधीयते; while I. substitutes मन्त्रं for मन्त्रः. ४. B. C. D. E. F. G. and H. read न्न ब्रह्मवान्स्वयम्; while I. reads न्न ब्राह्मणान् स्वयम्.

सञ्चयांश्च न कुर्वीत जातु शूद्रः कथञ्चन । (२८)

सेवया हि धनं लब्ध्वा वशे कुर्याद्ररीयसः ॥

राज्ञा वा समनुज्ञातः कामं कुर्वीत धार्मिकः । (२९)

(म. भा. शां. रा. ६०, २८-३७)

इति । आनुशासनिकेष्वपि—

‘अहिंसकः शुभाचारो दैवता-द्विजपूजकः ।

शूद्रो धर्मफलैरिष्टैः स्वधर्मेणैव युज्यते’ ॥

(म. भा. आ. १४१. ५९)

इति । न केवलं विषयशुश्रूषा निःश्रेयसार्था अपि तु वृत्त्यर्थेष्वपि । अत एव तस्य प्रकल्प्यमाना वृत्तिर्मनुना दर्शिता—

‘प्रकल्प्या तस्य तैर्वृत्तिः स्वकुटुम्बाद्यथार्हतः ।

शक्तिं चावेक्ष्य दाक्ष्यं च भृत्यानां च परिग्रहम् ॥

उच्छिष्टमन्नं दातव्यं जीर्णानि वसनानि च ।

पुलकाश्चैव धान्यानां जीर्णाश्चैव परिच्छदाः’ ॥

(म. स्मृ. १०. १२४-१२५)

इति । शान्तिपर्वण्यपि—

‘यश्च कश्चिद्विजातीनां शूद्रः शुश्रूषुराव्रजेत् ।

प्रकल्प्या तस्य तैर्वृत्तिमाहुर्धर्मविदो जनाः ॥ (३३)

छत्रं वेश्मनमौशीरमुपानद्वयजनानि च ।

यातयामानि देयानि शूद्राय परिचारिणे’ ॥ (३५)

(म. भा. शां. रा. ६०. ३१-३३)

१. I. reads राज्ञा समनुज्ञातः for राज्ञा वा समनुज्ञातः. २. I. omits तस्य. ३. B. C. D. E. F. and J. read वै वृत्तिः. ४. B. C. D. E. F. and G. read भक्तिं for दाक्ष्यं. ५. Except A. all other manuscripts as well as the text are mistaken here. ६. I. reads छत्र-वेश्मनपुञ्जानि; while B. C. and F. substitute क्षेत्रं for छत्रम्.

इति । अन्यथा द्विजगुश्रूषामन्तरेण . यदि किञ्चित्
पाक्यज्ञादिकं कुर्यात् तत्सर्वं निष्फलं भवेत् । तदुक्तं
मनुना—

‘विप्रसैवैव शूद्रस्य विशिष्टं कर्म केच्यते ।

यदतो अन्यद्वि कुरुते तद्वेत्तस्य निष्फलम् ॥

(म. स्मृ. १०. १२३)

इति । तस्मात् द्विजगुश्रूषैव तस्य परमो धर्मः । क्षत्रिय-
वैश्यगुश्रूषा तु केवलवृत्त्यर्थत्वादपरमो धर्मः । अत एव
मनुना विप्रगुश्रूषाया उभयार्थत्वमितरगुश्रूषायाः केवल-
वृत्त्यर्थत्वं चे दर्शितम्—

‘शूद्रस्तु वृत्तिमाकाङ्क्षन् क्षत्रमाराधयेद्यदि ।

धनिनं वाऽप्युपाराध्य वैश्यं शूद्रो जिजीविषेत् ॥

स्वर्गार्थमुभयार्थं वा विप्रानाराधयेत्तु सः ।

जातब्राह्मणशब्दस्य सा ह्यस्य कृतकृत्यता’ ॥

(म. स्मृ. १०. १२१-१२२)

इति ॥ ६४ ॥

१. The text reads कौर्त्यते. २. The text reads तद्वत्तस्यस्य. ३. Except A. and I. all others omit च. ४. I. reads वै for वा, and B. C. D. E. F. read ब्राह्मणानेव धारयेत् for विप्रानाराधयेत्तु सः, for the same G. and H. read ब्राह्मणानेव राधयेत्. ५. A. reads this whole line as follows:—

जातब्राह्मणशब्दस्य न ह्यस्य कृतकृत्यता ।

For the same G. reads जातब्राह्मणकृत्यस्य etc., H. जातिब्राह्मणशब्दः स्यात् etc. and in the marginal correction appears -कृत्य for -शब्दः, B. C. E. and F. read—

जातब्राह्मणकृत्यस्य सार्थस्य कृतकृत्यता.

E. corrects the marginal reading and स्यात्तस्य appears for सा ह्यस्य. D reads—

जातब्राह्मणवृत्तस्य सार्थस्य कृतकृत्यता.

यदा द्विजशुश्रूषया जीवितुं न शक्नोति तदा किं कु-
योदित्यत आह—

लवणं मधु तैलं च दधि तक्रं घृतं पयः ।

न दुष्येच्छूद्रजातीनां कुर्यात्सर्वेषु विक्रयम् ॥ ६५ ॥

शुश्रूषया जीवितुमशक्तो जीवेनाथ लवणादिषु सर्वेषु विक्रयं
कुर्यात् । ननु—लवणादीनि विक्रीयमाणानि विक्रेतुर्दोषमाव-
हन्ति । तदाह याज्ञवल्क्यः—

‘फलोपल-क्षौम-सोम-मनुष्यापूप-वीरुधः ।

तिलौदन-रस-क्षारान् दधि क्षीरं घृतं जलम् ॥

शस्त्रासव-मधूच्छिष्ट-मधु-लाक्षाः सर्वाहिषः ।

मृच्चर्म-पुष्प-कुंतुप-केश-तक्र-विष-क्षितीः ॥

कौशेय-नीलि-लवण-मांसैकशफ-सीसकान् ।

शाकाद्वैषधि-पिण्याक-पशु-गन्धान्स्तथैव च ॥

वैद्यवृत्त्यापि जीवन्नो विक्रीणीत कदाचन ।

लाक्षा-लवण-मांसानि पतनीयानि विक्रये ॥

‘पयोदधि च मद्यं च हीनवर्णकराणि च’ ।

(या. स्मृ. ३. ३६-४०)

१. M. reads सर्वस्य. २. All others except A, cI. and the text read तिलौदन-. ३. B. C. E. F. G. and H. read रसासव-; while I. reads वसारस- for शस्त्रासव-. ४. I. reads लाक्षा. ५. The text substitutes च for स-. ६. All others except A. and the text read कुंतुप-. ७. I. reads नीलि- for नीलि-. ८. B. C. E. and F. read अभु-गन्धान् for पशु-गन्धान्. ९. I. reads वर्जनीयानि. १०. 'This line does not appear anywhere except in A. I. and the text. ११. The text substitutes न् for च.

इति । हीनवर्णः शूद्रः । मैवम् । अस्य ब्राह्मणविषयत्वात् ।
अतएव मनुः—

‘सद्यः पतति मांसेन लाक्षया लवणिन’ च ।

‘अह्नेण शूद्रीभवति ब्राह्मणः क्षौरविक्रयोत्’ ॥

“ (म. स्मृ. १०. १२)

इति । शूद्रस्तु लवणादीनि विक्रीणन्नपि न दुष्येत् ।
‘विक्रीणन्’—इति पदं वक्ष्यमाणल्लोकादनुषज्य योजनी-
यम् । याज्ञवल्क्योऽपि शुश्रूषया जीवितुमशक्तस्य शूद्रस्य
वाणिज्यादिकमाह—

‘शूद्रस्य द्विजशुश्रूषा तथा ऽजीवन् वणिग्भवेत् ।

शिल्पैर्वा विविधैर्जीवेत् द्विजातिहितमाचरन्’ ॥

(या. स्मृ. १. १२०)

इति । यैः कर्मभिर्द्विजातयः शुश्रूष्यन्ते तैरिव्यर्थः ।

मनुरपि—

‘अशकुर्वन्स्तु शुश्रूषां शूद्रः कर्तुं द्विजन्मनाम् ।

पुत्रदारात्ययं प्राप्तो जीवेत् कारुककर्मभिः ॥

यैः कर्मभिः सुचरितैः शुश्रूष्यन्ते द्विजातयः ।

तानि कारुककर्माणि शिल्पानि विविधानि च’ ॥

(म. स्मृ. १७. ९९-१००)

इति ॥ ६५ ॥

१. हीनवर्णः शूद्रः appears only in A. and L. The other manuscripts omit these words. २. All others except A. and the text read शूद्रो भवति, but this is a grammatical mistake. ३. A. reads क्षौरविक्रयी. ४. The text reads प्रचरितैः.

शूद्रस्यापि वज्यानाह—

विक्रीणन् मद्य-मांसानि ह्यभक्षस्य च भक्षणम् ।
कुर्वन्नगम्यांगमनं शूद्रः पतति तत्क्षणात् ॥६६॥

कपिलाक्षीरपानेन ब्राह्मणीगमनेन च ।

त्रेदाक्षरविचारेण शूद्रश्चाण्डालतां व्रजेत् ॥६७॥

इति श्रीपराशरसंहितायां चातुर्वर्ण्या-
चारो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

मद्यं च बहुविधं ताल-पानस-द्राक्ष-माधूक-खार्जुरादिकम् ।
अभक्ष्यं गोमांसादि । अगम्या भगिन्यादयः । स्पष्टमन्यत्
॥ ६६-६७ ॥

॥ इति शूद्रधर्मप्रकरणम् ॥

प्रख्याता हि पराशरस्मृतिरिह स्मृत्यागमख्यादनं
धर्मो वर्णचतुष्टयीबहुमतौ साधारणाऽन्याभिधौ ।

१. M. reads अधिक्यं मद्य-मांसं. २. M. reads—

अगम्यागमनं चैव शूद्रोऽपि नरकं व्रजेत्.

३. I. reads शूद्रः पतति तत्क्षणात्, K. L. and M. read शूद्रस्य नरकं
धुवम्. ४. All other Manuscripts except A. omit this portion up to
ऽध्यायः ॥ १ ॥ ५. D. G. and H. read प्रख्याताऽऽदि-. ६. B. C. E. and
F. read स्मृतिरिति. ७. I. reads धर्मो वर्णचतुष्टयी बहुमता साधारणा ख्या-
भिधौ, this is a mistake.

औद्यस्त्राह्निकशिष्टनामविहितः षट्कर्मपूर्तोऽपरः
पूर्वाध्यायनिरूपितं तदखिलं व्याख्यते सुधीर्माधवः ॥ १॥

इति श्रीमहाराजाधिराजपरमेश्वरवैदिकमार्गप्रवर्त्त-
कश्रीवीरबुक्कभूपालसाम्राज्यधुरन्धरस्य माधवामात्यस्य
कृतौ पराशरस्मृतिव्याख्यायां माधवीयायां अथमो-
ऽध्यायः ॥ १ ॥

• १. D. G. and H. read 'औद्यस्याह्निक-'. २. Except A. and I. all others read -पूर्वापरः. ३. B. C. D. E. and F. read व्याख्यात्. ४. I. omits महा-. ५. I. omits माधवीयायां.

The names occurring in the Parāśara Saṁhitā.

ADHYAYA I.

- | | |
|-----------------------------|--|
| १. अङ्गिराः 78, 10. | १९. ब्रह्मा 93, 14. |
| २. अत्रिः 78, 10. | २०. मनुः 112, 12. . . . |
| ३. आपस्तम्बः 78, 12. | २१. महेश्वरः 93, 14. . . . |
| ४. औशनसाः (धर्माः) 78, 9. | २२. मृगयाः 78, 8. 122, 2. |
| ५. कात्यायनः 78, 13. | २३. याज्ञवल्क्यः 78, 11. . . . |
| ६. काश्यपाः (धर्माः) 78, 8. | २४. लिखितः 78, 12. |
| ७. गार्गीयाः 78, 9. | २५. कसिष्ठाः (धर्माः) 78, 8. |
| ८. गौतमाः 122, 2. | २६. विश्वः 78, 10. 93, 14. . . . |
| ९. गौतमीयाः (धर्माः) 78, 9. | २७. व्यासः 37, 2. 65, 17. 68, 7. 73, 8. 77, 3. 92, 14. |
| १०. चतुर्मुखः 112, 11. | २८. शक्तिपुत्रः 73, 6. |
| ११. दक्षः 78, 10. | २९. शङ्खः 78, 12. |
| १२. देवदारुवनम् 37, 1. | ३०. शाङ्खलिखिताः 122, 3. |
| १३. पराशरः 92, 14. | ३१. शान्तपः 78, 11. . . . |
| १४. पराशरमतम् 141, 5. | ३२. सत्यवतीसुतः 37, 4. . . . |
| १५. पराशरमहामुनिः 75, 17. | ३३. संवर्तः 78, 10. . . . |
| १६. पराशराः 122, 3. | ३४. हारीतः 78, 11. . . . |
| १७. प्राचेतसः 78, 13. | ३५. हिमशैलः 37, 1. |
| १८. बदरिकाश्रमः 68, 7. | |

**The names of authors and works, etc., occurring in the
introduction of Mādhavāchārya's Commentary.**

- | | |
|-----------------------------|-----------------------------------|
| १ अत्रिः 11, 2, 11, 5. | २४. नलः 3, 1. |
| २. भरुन्धतीसहचरः 3, 3. | २५. निमिः 3, 2. |
| ३. अर्हन् 10, 7. | २६. पराशरः 9, 6, 9, 7, 9, 9, |
| ४. औद्भिः 3, 1. | 10, 9, 10, 13, 10, 15, |
| ५. आथर्वणः 18, 1. | 11, 1, 31, 5, 31, 8. |
| ६. आनुशासनिकम् (Mahābhā- | २७. पराशरपुत्रः 10, 11, 10, 12. |
| ratti, Bk. XIII.) 13, 4. | २८. पराशरवाक्यम् 23, 8. |
| ७. इन्द्रः 3, 1, 11, 3. | २९. पराशरस्मृतिः 5, 2, 5, 3, 8, |
| ८. उत्तरमीमांसा 9, 11. | 14, 13, 7, 14, 1, 36, 8. |
| ९. ऋग्वेदः 17, 8. | ३०. पाराशर्यः 10, 10, 10, 17 |
| १०. औष्यः 11, 5. | ३१. पाराशर्यायणः 10, 16. |
| ११. कणादः 34, 5. | ३२. बादरायणः 5, 7. |
| १२. कपिलः 31, 5. | ३३. बौधायनसूत्रम् 4, 7. |
| १३. कल्पसूत्रकृतः 14, 13. | ३४. बौद्धः 10, 7. |
| १४. स्नाननः 1, 8. | ३५. भट्टाचार्यः 12, 2. |
| १५. गुणधर्मापवेदः 17, 7. | ३६. भारद्वाजः 4, 8. |
| १६. गौतमिः 3, 2. | ३७. भोगनाथः 4, 6. |
| १७. घृतकौशिकः 10, 16. | ३८. मनुः 7, 5, 8, 14, 9, 5, 41, |
| १८. चतुर्विंशतिस्तम् 10, 5. | 1, 12, 5. |
| १९. चार्वाकः 10, 7. | ३९. मनुस्मृतिः 8, 13. |
| २०. जानकुर्यः 10, 17. | ४०. मन्वादिः 7, 4. |
| २१. जैमिनिः 5, 6. | ४१. मन्वादिस्मृतिः 11, 7, 11, 8. |
| २२. धर्मसुतः 3, 2. | ४२. मन्वादिस्मृतयः 7, 3, 8, 9. |
| २३. धौम्यः 3, 2. | ४३. माधवः 3, 4, 4, 4, 4, 8, 4, 9. |

- | | |
|--------------------------------|---------------------------------|
| ४४. माधवार्यः 5, 4. | ५८. शाक्यः 7, 2, 10, 4. |
| ४५. मानविः 8, 3. | ५९. शाक्यादिवाक्यानि 10, 5. |
| ४६. गायणः 4, 5. | ६०. शाक्यादिस्मृतयः 7, 3. |
| ४७. मेधातिथिः 3, 1, 11, 8. | ६१. शाक्यादिस्मृतिः 7, 6, 8, 9. |
| ४८. यजुर्वेदः 18, 1. | ६२. शैव्यः 3, 1. |
| ४९. याज्ञवल्क्यः 11, 2, 11, 6. | ६३. श्रीकण्ठः 1, 12. |
| ५०. रामः 3, 3. | ६४. श्रीबुक्कण्ठमापतिः 2, 4. |
| ५१. वंशत्राह्मणम् 10, 14. | ६५. श्रीभारतीतीर्थः 1, 11. |
| ५२. वागीशः 1, 7. | ६६. श्रीमती 4, 5. |
| ५३. वाजसनेयिशाखा 10, 14. | ६७. सामानि 17, 8. |
| ५४. वासिष्ठः 11, 2, 11, 4. | ६८. सायणः 4, 6. |
| ५५. वेदव्यासः 10, 12. | ६९. सुमतिः 3, 1. |
| ५६. वैन्यनृपतिः 3, 2. | ७०. स्त्रीजाः 3, 2. |
| ५७. व्यासः 10, 10, 10, 11. | |

**A list of the names of authors, works, etc., occurring
in Mādhayāchārya's Commentary on the
'Parāsar Sāmhita, Adhyāya I.**

- | | |
|--|---|
| १ अगस्त्यगीताः (धर्माः) 109, 9. | १४ आनुशासनिकपर्व (Ma hā- bhāratam, Bk. XII I.) 143, 8. |
| २ आङ्गिरः 108, 3. 191, 16. 197, 14. 221, 15. 222, 19. 232, 5. 251, 18. 277, 5. 316, 21. 318, 12. 379, 15. | १५ आनुशासनिकम् (Ma hā- bhāratam, Bk. XII I.) 167, 19. 230, 12. 454, 8. 466, 14. 476, 20. 480, 13. 482, 5. |
| ३ अत्रिः 73, 12. 79, 2. 108, 3. 116, 10. 251, 1. 257, 9 289, 8. 298, 9. 301, 15. 383, 11. 426, 7. 427, 10. 432, 8. 439, 1. | १६ आपस्तम्बः 79, 4. 108, 1 108, 5. 138, 1. 157, 1. 224, 16. 226, 1. 233, 16. 245, 12. 247, 9. 308, 10. 313, 1. 323, 3. 325, 14. 329, 6. 329, 13. 335, 16. 349, 9. 380, 21. 382, 5. 384, 12. 421, 18. |
| ४ अथर्वः 100, 10. | १७ आरण्यपर्व (Ma hābhāratam, Bk. III.) 128, 9. 131, 17. 144, 12. |
| ५ अर्जुनः 61, 5. | १८ आरुणिः 173, 3. |
| ६ अश्वपतिः 200, 16. | १९ आश्वमेधिकपर्व (Ma hābhā- ratam, Bk. XIV.) 108, 14. 180, 5. |
| ७ आग्नेयपुराणम् 268, 8. 351, 10. 365, 1. | २० आश्वमेधिकम् (Ma hābhāra- tam, Bk. XIV.) 116, 14. 160, 6. 162, 8. 347, 19. 366, 1. 396, 13. 402, 10. |
| ८ आग्नेयम् 366, 16. | |
| ९ आङ्गिरसः 109, 12. | |
| १० आचार्याः 300, 3. | |
| ११ आत्रेयः 108, 13. | |
| १२ आथर्वणम् 105, 9. 166, 13. | |
| १३ आदित्यपुराणम् 83, 11. 157, 9. 177, 1. 224, 16. 280, 19. 360, 6. 424, 14. 425, 16. | |

- 403, 3. 404, 1. 412, 15.
415, 14. 418, 13. 422, 3.
426, 13. 427, 17. 428, 9.
479, 10.
- २१ आश्वलायनः 108, 1. 314,
5. 358, 14. 380, 14. 383,
18.
- २२ उत्तरतापिनीयम् 99, 2. 107, 1.
- २३ उशनाः 108, 3. 252, 13.
342, 4. 424, 11. 443, 12.
458, 6. 463, 1. 470, 6.
- २४ ऋष्यशृङ्गः 108, 12.
- २५ औमामहेश्वराः (धर्माः) *
109, 1.
- २६ कठः (सूत्रकारः) 107, 16.
- २७ कण्वः 67, 15.
- २८ कश्यपः 108, 7.
- २९ काठक-(-शाखा) 67, 14.
- ३० काण्व-(-शाखा) 67, 14.
- ३१ काण्वाः (धर्माः) 67, 14.
109, 3.
- ३२ कात्यायनः 108, 5. 163, 12.
221, 9. 252, 9. 255, 4.
256, 15. 259, 11. 296,
8. 296, 6. 312, 5. 315, 8.
360, 2. 362, 19. 380, 10.
383, 7. 387, 9. 388, 18.
391, 16. 428, 15. 436,
11. 455, 10.
- ३३ काष्ठाजिनिः 108, 8. 267, 6.
352, 12. 353, 12. 392, 4.
- ३४ कालिदासः 114, 2.
- ३५ कुणिबहोः (धर्माः) 109, 6.
- ३६ कुणोः (धर्माः) 109, 6.
- ३७ कर्मपुराणम् 58, 1. 70, 2.
94, 3. 94, 15. 127, 15.
146, 3. 151, 5. 156, 13.
158, 10. 159, 1. 161, 12.
215, 2. 216, 5. 220, 1.
238, 17. 242, 1. 238, 4.
269, 13. 278, 6. 291, 8.
296, 16. 297, 5. 301, 8.
307, 16. 311, 5. 311, 17.
320, 3. 336, 12. 338, 4.
340, 5. 344, 4. 355, 6.
365, 5. 371, 17. 376, 6.
379, 9. 382, 20. 385, 9.
387, 15. 389, 6. 392, 7.
409, 10. 415, 6. 415, 18.
416, 16. 419, 6. 424, 17.
430, 7. 431, 16. 444, 7.
- ३८ कृष्णः 50, 16.
- ३९ केतुः 221, 3.
- ४० कैवल्योपनिषद् 40, 10.
- ४१ कौथुम-(-शाखा सूत्रकारिश्च)
67, 14. 107, 16.
- ४२ कौमाराः (धर्माः) 109, 2.
- ४३ कौर्मम् 96, 1. 152, 19.
- ४४ कौशिकः 218, 7. 254, 17.
- ४५ कौशिकाः 109, 4.
- ४६ कौषातिकिनः 172, 13.
- ४७ कौषातिकब्राह्मणम् 173, 1.

* Possibly a conversation between Umā and Mahāśvara, Adhyāya, 140-146. Bk. XIII. Mahābhārata.

- ४८ क्रतुः 108, 12. 133, 11.
 ४९ क्षुरिका 41, 1.
 ५० गद्यव्यासः 430, 19.
 ५१ गर्गः 282, 13. 283, 3. 317, 17.
 ५२ गारुडपुराणम् 198, 20.
 ५३ गार्ग्ययणिः 173, 3.
 ५४ गार्ग्यः 108, 8. 279, 13. 441, 17.
 ५५ गीता 61, 5. 63, 1. 85, 10.
 ५६ गुरुमतम् (possibly Prābhā-karamatam) 149, 14.
 ५७ गुरुः 221, 3.
 ५८ गृह्यपरिशिष्टम् 316, 12. 381, 18. 391, 3.
 ५९ गोमिलः 248, 15. 234, 14. 263, 10. 265, 13. 301, 1. 314, 9. 352, 17. 391, 5. 417, 14. 427, 1. 430, 1. 441, 17.
 ६० गौतमः 108, 3. 156, 19. 163, 11. 186, 8. 208, 10. 234, 18. 244, 15. 247, 18. 277, 8. 306, 18. 309, 3. 309, 16. 310, 18. 326, 9. 327, 11. 407, 13. 423, 4. 428, 18. 431, 6.
 ६१ चतुर्मुखः 112, 16. 114, 11. 116, 1. 116, 9. 116, 12.
 ६२ चतुर्विंशतिमतम् 197, 10. 259, 8. 260, 7. 261, 13. 279, 3. 317, 3. 381, 14.
 ६३ चित्रः 153, 1. 173, 3.
 ६४ छन्दोगब्राह्मणम् 173, 12.
 ६५ छन्दोगशाखा 200, 15.
 ६६ छन्दोगाः 56, 3. 77, 10. 100, 4. 127, 2. 174, 19.
 ६७ छागलेयः 108, 13.
 ६८ जमदग्निः 108, 9.
 ६९ जाबालिः 108, 9. 260, 4. 263, 17.
 ७० जैमिनिकृताः (धर्माः) 109, 7.
 ७१ जैमिनिः 49, 15. 56, 9. 65, 18. 108, 1.
 ७२ जैमिनिसूत्रम् 50, 5. 60, 8.
 ७३ जैमिनीयम् 214, 12.
 ७४ ज्योतिःशास्त्रम् 193, 13. 282, 7.
 ७५ तार्किकाः 87, 5. 90, 2.
 ७६ तुलाधारः 477, 5.
 ७७ तैत्तिरीयकम् 173, 8.
 ७८ तैत्तिरीयब्राह्मणम् 172, 16. 290, 6. 383, 12.
 ७९ तैत्तिरीयम् 100, 1.
 ८० तैत्तिरीयशाखा 150, 9.
 ८१ तैत्तिरीय-(-शाखा) 67, 14.
 ८२ त्रिपुरान्तकारी 221, 1.
 ८३ दक्षः 108, 4. 153, 14. 227, 1. 230, 16. 232, 5. 232, 13. 233, 11. 237, 12. 249, 1. 258, 12. 259, 5. 270, 9. 288, 14. 291, 1. 297, 19. 300, 19. 311, 9. 319, 6. 320, 9. 336, 9.

- 337, 17. 338, 1. 338,
8. 343, 8. 378, 1. 438,
2. 438, 18. 443, 14.
- ८४ देवभागः 172, 15. 172, 17.
- ८५ देवलः 108, 12. 164, 4.
176, 3. 179, 12. 194, 11.
213, 11. 215, 13. 224,
3. 226, 17. 228, 5. 228,
10. 231, 11. 243, 2. 247,
6. 264, 9. 354, 19. 430,
13. 431, 3. 481, 5.
- ८६ द्रुपदः 90, 13. 92, 1.
- ८७ धर्मव्याधोपाख्यानम् (Ma-
hābhārataṁ, Bk. III.)
92, 5.
- ८८ धर्मज्ञसमयप्रमाणकाः 134, 4.
- ८९ धूम्रायनकृताः (धर्माः) 109, 3.
- ९० धृष्टद्युम्नः 88, 3.
- ९१ नन्दिकेश्वरः 375, 19.
- ९२ नन्दिधर्माः 109, 1.
- ९३ नारदः 108, 6. 154, 2. 154,
10. 155, 12. 201, 3. 321,
3. 438, 5. 446, 4. 447, 12.
- ९४ नारायणः 297, 9. 298, 15.
379, 5.
- ९५ नृसिंहपुराणम् 261, 8. 303,
15. 364, 12. 378, 7. 406,
15. 408, 5.
- ९६ पतञ्जलिः 42, 5. 44, 3. 71,
12.
- ९७ पद्मपुराणम् 239, 8.
- ९८ पराशरः 47, 1. 67, 5. 67,
17. 68, 1. 70, 10. 73, 14,
74, 2. 74, 5. 74, 7. 74, 9.
74, 11. 76, 11. 80, 1.
93, 1. 93, 4. 108, 4. 138,
11. 139, 1. 139, 3. 140,
2. 147, 7. 141, 7. 141,
16.
- ९९ पराशरसुतः 67, 17.
- १०० पराशरस्मृतिः 62, 2. 65,
12. 394, 13.
- १०१ परिशिष्टम् 382, 11.
- १०२ पाणिनिः 148, 3.
- १०३ पारस्करः 108, 12. 381, 6.
- १०४ पावकीयाः (धर्माः) 109, 8.
- १०५ पितामहः 108, 6. 116,
3. 231, 15. 353, 17.
- १०६ पितृगाथाः 363, 10.
- १०७ पुराणम् 237, 11. 254, 11,
283, 18. 304, 3. 333, 5.
355, 13. 362, 9. 409, 2.
411, 17. 413, 10. 427,
7. 441, 14.
- १०८ पुराणसारः 76, 2. 81, 9.
124, 10. 183, 15. 250,
14. 335, 1. 362, 6. 385,
15. 403, 14.
- १०९ पुलहः 108, 12.
- ११० पुलस्त्योद्गीता (धर्माः) 109;
8.
- १११ पुलस्त्यः 108, 12. 112, 1.
148, 12. 263, 13. 280, 2.
302, 7. 422, 15.
- ११२ पुलहोद्गीताः (धर्माः) 109, 8.

११३ पैठीनः 108, 7.

११४ पैठीनसिः 108, 2. 157, 2.
357, 7. 357, 12. 358, 8.
416, 2. 423, 3.

११५ पैलः 65, 18. . . .

११६ प्रचेतः 79, 6. 108, 6. 236,
14. 278, 18. 283, 7. 388,
8. 397, 19. 416, 13.

११७ प्रजापतिः 111, 8. 111, 13.
157, 12. 161, 9. 168, 2.
264, 6. 293, 8. 295, 13.
309, 10.

११८ प्रश्नोत्तरः 39, 7.

११९ प्राचीनशालः 200, 15.

१२० प्राभाकरः 88, 1. 90, 3.
148, 2.

१२१ बभ्रुः 108, 7.

१२२ बह्वचोपनिषद् 97, 12. 99,
12.

१२३ बदरायणः 52, 11. 96, 16.
98, 12.

१२४ बुधः 221, 2.

१२५ बृहन्मनुः 291, 5.

१२६ बृहस्पतिकृताः (धर्माः) 109,
5.

१२७ बृहस्पतिः 47, 13. 48, 4.
48, 6. 48, 7. 82, 6. 84,
5. 85, 1. 121, 13. 124, 3.
125, 4. 153, 6. 185, 5.
199, 1. 239, 14. 291, 13.
316, 6. 318, 15. 343, 18.
350, 15. 424, 8. 429, 4.
455, 4. 456, 4.

१२८ बौधायनः 107, 16. 108,
6. 118, 18. 144, 8. 168,
18. 175, 11. 229, 7.
230, 4. 241, 6. 241, 16.
242, 12. 246, 5. 264, 16.
282, 16. 294, 11. 303,
13. 306, 5. 314, 14. 316,
9. 326, 13. 328, 2. 352,
6. 355, 16. 369, 3. 371,
16. 372, 16. 375, 18.
383, 15. 391, 22. 414,
16. 419, 10.

१२९ ब्रह्मणा कथिताः (धर्माः) 109,
2.

१३० ब्रह्मपुराणम् 130, 3. 133,
7. 178, 10. 321, 1. 410,
2. 417, 11. 423, 10.

१३१ ब्रह्ममीमांसा 103, 1.

१३२ ब्रह्मा 113, 7. 221, 1.
293, 13.

१३३ ब्रह्माण्डपुराणम् 201, 13.
228, 13. 247, 15. 260,
17. 266, 3. 453, 9.

१३४ ब्रह्मद्वयः 111, 6.

१३५ भगवान् 85, 10. 159, 9.
183, 15. 201, 17. 216,
19. 411, 2.

१३६ भट्टनटाः 90, 5.

१३७ भट्टपादाः 114, 6.

१३८ भरद्वाजः 108, 8. 109, 5.
226, 8. 237, 4. 262, 3.
317, 11. 322, 6.

१३९ भाविष्यपुराणम् 324, 15.

१४० भाविष्यपुराणम् 419, 1.

- १४१ भविष्योत्तरम् 186, 14.
189, 12. 191, 5.
- १४२ भाषा: 87, 9. 90, 4.
- १४३ भानुः 221, 2.
- १४४ भारतम् 93, 6.
- १४५ भोरहाजः 193, 3. 202, 2.
295, 5.
- १४६ भार्गवाः (धर्माः) 109, 4.
- १४७ भाष्यकारः 55, 3.
- १४८ भूमिसुतः 221, 2.
- १४९ भृगुः 108, 5. 109, 12.
245, 16. 264, 3. 265, 4.
436, 16.
- १५० मत्स्यपुराणम् 113, 2. 155,
15. 170, 1. 194, 17. 262,
11. 281, 5. 327, 12. 360,
11. 388, 4. 436, 8.
- १५१ मरालस्य (In Mārkaṇḍeya-
purāṇam.) 164, 12.
- १५२ मनुः 49, 14. 52, 3. 57, 7.
67, 12. 78, 5. 88, 13. 89,
5. 108, 3. 111, 5. 111, 13.
112, 13. 114, 11. 116, 5.
116, 9. 116, 10. 129,
16. 138, 17. 139, 3. 144,
4. 145, 14. 147, 9. 148,
3. 149, 16. 150, 1. 154,
6. 158, 6. 158, 14. 169,
6. 169, 16. 177, 14. 187,
7. 189, 8. 190, 10. 192,
18. 195, 10. 196, 11. 198,
2. 198, 13. 202, 12. 216,
9. 217, 7. 219, 15. 223,
15. 224, 7. 224, 20. 227,
11. 229, 1. 231, 7. 236, 9.
238, 13. 239, 10. 243,
8. 245, 4. 277, 1. 282,
10. 286, 7. 291, 16. 303,
1. 305, 10. 310, 14.
315, 13. 321, 9. 322,
10. 323, 12. 325, 7. 325,
17. 327, 17. 328, 6. 330,
16. 331, 8. 332, 11.
333, 13. 335, 6. 337, 1.
337, 13. 338, 13. 339,
2. 339, 15. 340, 14. 341,
13. 344, 16. 348, 9. 377,
9. 385, 13. 390, 17. 392,
11. 395, 10. 395, 20. 397,
6. 397, 11. 399, 7. 400,
10. 402, 6. 403, 14. 404,
12. 406, 1. 407, 4. 414,
1. 422, 19. 429, 17. 435,
2. 446, 14. 447, 8. 447,
17. 452, 5. 453, 13. 454,
4. 454, 7. 455, 15. 457,
14. 458, 9. 461, 12. 463,
6. 464, 4. 464, 17. 466,
6. 467, 19. 468, 6. 469,
2. 472, 8. 472, 19. 474,
11. 476, 12. 478, 7. 479,
10. 480, 4. 482, 10. 483,
3. 483, 9. 485, 2. 485,
14.
- १५३ मन्त्रोपनिषद् 41, 5.
- १५४ मन्वादयः 111, 2. 116, 12.
- १५५ मरीचिः 227, 8. 231, 3.
277, 13. 285, 11. 302, 5.
314, 17. 315, 4. 319, 14.
354, 3. 354, 13.
- १५६ महजिखदातम् 74, 3.

- १५७ महाभारतम्: 80, 16, 88, 3.
89, 7, 90, 13, 187, 4.
189, 5, 217, 4, 217, 14.
223, 20, 449, 5, 451, 18.
- १५८ मायन्दिन-(-शाखा) 67, 14.
- १५९ मार्कण्डेयपुराणम् 171, 6.
240, 12, 385, 5, 392, 16.
396, 7, 414, 11, 453, 3.
478, 2.
- १६० मार्कण्डेयम् 387, 19.
- १६१ मीर्कण्डेयः 109, 4, 215, 9.
248, 12, 256, 9, 257, 4.
263, 6, 281, 9, 285, 5.
399, 1, 434, 8, 441, 20.
462, 4, 473, 17.
- १६२ मीमांसकः 87, 8, 113, 16.
211, 1.
- १६३ मुरारिः 221, 1.
- १६४ मेधातिथिः 276, 4.
- १६५ मैत्रेयशाखा 124, 4.
- १६६ यजुर्वेदः 273, 7.
- १६७ यमः 108, 3, 131, 8, 147,
6, 184, 16, 185, 16, 223,
2, 223, 8, 226, 10, 223,
19, 225, 10, 226, 4, 227,
6, 228, 2, 237, 1, 240,
4, 245, 9, 247, 12, 253,
8, 255, 11, 261, 3, 280,
9, 283, 10, 287, 9, 287,
13, 300, 10, 308, 6, 310,
11, 324, 18, 331, 13, 380,
1, 398, 7, 404, 16, 405,
3, 405, 17, 407, 9, 429,
12, 456, 10.
- १६८ याज्ञवल्क्यः, 72, 14, 73,
13, 109, 4, 129, 12, 138,
17, 151, 13, 155, 1, 157,
15, 169, 9, 177, 7, 184,
12, 189, 17, 192, 21,
196, 2, 198, 10, 199, 6,
201, 1, 202, 6, 203, 4,
205, 7, 205, 8, 205,
11, 205, 14, 205, 16,
205, 17, 205, 18, 205,
20, 207, 10, 219, 11,
222, 24, 223, 7, 226,
13, 234, 14, 235, 8,
236, 4, 241, 13, 244,
10, 278, 12, 286, 13,
291, 11, 292, 4, 301,
12, 307, 8, 317, 6, 326,
7, 331, 4, 337, 9, 339,
11, 341, 7, 342, 8, 348,
4, 350, 6, 395, 7, 397,
16, 406, 12, 425, 7, 439,
11, 445, 9, 446, 10, 446,
18, 447, 4, 452, 2, 462,
9, 463, 2, 463, 19, 465,
16, 468, 16, 476, 9, 481,
14, 484, 7, 485, 8.
- १६९ याज्ञवल्क्यादयः 116, 11.
- १७० युधिष्ठिरः 92, 1.
योगसूत्राणि 42, 6.
- १७१ योगियाज्ञवल्क्यः 260, 12,
262, 15, 265, 15, 270,
16, 271, 14, 276, 12,
279, 10, 289, 6, 292, 8,
292, 14, 303, 10, 306, 12,
307, 20, 346, 7, 354, 16.

- 356, 10. 357, 11. 358, 11. 359, 14. 362, 12. 363, 14.
- १७२ राजधर्माः (Possibly Part I., Bk. XII, of Mahābhārata.) 129, 5.
- १७३ रामायणम् 475, 6.
- १७४ राहुः 221, 3.
- १७५ लिखितः 79, 4. 108, 12.
- १७६ लिङ्गपुराणम् 83, 11. 94, 9. 343, 15.
- १७७ लौगाक्षिः 108, 9.
- १७८ वत्सः 108, 11.
- १७९ बह्मपुराणम् 178, 1.
- १८० वराहपुराणम् 296, 11. 476, 16.
- १८१ वसिष्ठः 108, 4. 142, 1. 142, 11. 146, 16. 152, 14. 163, 5. 172, 14. 175, 9. 185, 1. 193, 10. 229, 10. 240, 9. 271, 8. 274, 9. 275, 7. 276, 7. 297, 5. 350, 12. 431, 11.
- १८२ वाजसनेयः 100, 11.
- १८३ वाजसनेयिब्राह्मणम् 11, 4. 174, 16. 203, 9. 205, 6. 210, 8.
- १८४ वाजसनेयिशाखा 164, 17.
- १८५ वामनपुराणम् 220, 19. 282, 1. 321, 12.
- १८६ वायुपुराणम् 134, 1. 305, 14.
- १८७ वायुसंहिता, (Śivamahāpurāṇam, Bk. V.) 59, 3.
- १८८ वार्तिककारः (of Bṛihadāranyakopaniṣad.) 55, 3. 62, 3.
- १८९ वालखिल्यकृताः (धर्माः) 109, 10.
- १९० वासिष्ठः 172, 17.
- १९१ विदुरवाक्यानि 109, 12.
- १९२ विभाण्डककृताः (धर्माः) 109, 11.
- १९३ विवरणकारः 38, 7.
- १९४ विवर्तवादिनः 101, 12.
- १९५ विवस्वान् 227, 3.
- १९६ विश्वरूपार्थः 57, 3.
- १९७ विश्वामित्रकृताः (धर्माः) 109, 6.
- १९८ विश्वामित्रः 88, 8. 89, 5. 304, 9.
- १९९ विष्णुधर्मोत्तरम् 178, 7. 184, 6. 185, 3. 188, 2. 191, 19. 192, 14. 199, 22. 216, 2. 413, 3. 437, 3.
- २०० विष्णुपुराणम् 83, 7. 96, 15. 125, 9. 142, 2. 151, 18. 156, 7. 220, 5. 224, 12. 227, 15. 265, 9. 284, 15. 301, 4. 301, 18. 320, 15. 350, 18. 359, 3. 360, 15. 364, 3. 385, 17. 398, 4. 398, 16. 405, 9. 414, 5. 421, 12. 433, 4. 439, 6. 439, 18. 441, 7. 443, 8. 480, 10. 481, 10.

२०१ विष्णुः ६४, १०८, ५. ११८,
७. ११६, ११. १४६, १३. १९३,
५. २१६, १३. २२०, १३. २४८,
४. २५१, १०. २५३, ५. २७१,
३. २७५, १२. २७९, ७. २८०,
१४. २८१, १४. २९६, ७. ३१६,
१४. ३२३, ८. ३२७, ८. ३३४,
१६. ३५२, ३. ३५३, २. ३५३,
१४. ३८२, १७. ४०२, १९. ४४२,
१०. ४५४, २१.

२०२ वृद्धगार्ग्यः ४३६, १९.

२०३ वृद्धगौतमः ४३६, ५. ४३७, ८.

२०४ वृद्धपद्माक्षरः १३८, ५. २३०,
८. २३४, १०.

२०५ वृद्धमनुः १८८, १०. २८७, १६.
३६१, ३. ४२२, ११. ४२५, १९.
४२७, १४.

२०६ वृद्धयाज्ञवल्क्यः २५३, १८.

२०७ वृद्धवसिष्ठः १९२, ७. ३८२,
१४. ४३५, १६. ४३६, १४.

२०८ वृद्धशङ्खः २३८, ६. २५०, १.

२०९ वेदव्यासः ४६, १.

२१० वैयासः (धर्माः) १०९, ११.

२११ वैयासिकभाष्यम् ४२, ६.

२१२ वैयासिकम् २१४, १२.

२१३ वैशम्पायनगीताः (धर्माः) ११०, १.

२१४ वैशम्पायनः ६५, १८.

२१५ वैशेषिकः ९९, ४.

२१६ वैशेषिकादयः ११३, १६.

२१७ वैश्वानराः (धर्माः) १०९, ३.

२१८ वैष्णवीयम् २१०, ४.

२१९ व्याघ्रपादः २३३, ५. २४९,
१४. २६९, ११.

२२० व्यासगीताः (धर्माः) १०९, ११.

२२१ व्यासः ४६, १. ६५, १२. ६६,
२०. ६६, २०. ६७, २. ६८, १.
६८, २. ६९, १४. ७७, १३.
८०, १. ९२, १७. ९३, ६. १०७,
१५. १०८, ३. १०८, ७. ११२,
१५. ११३, ७. ११३, १२.
१२७, ६. १५४, १४. १८६,
८. १९०, ७. १९४, २०. १९७,
७. १९७, १७. १९९, १. २५१,
५. २५३, १३. २५८, ८. २५८,
२०. २६३, ३. २६३, १४.
२७०, ६. २७०, १३. २८५, १४.
२८८, ९. २८९, ३. २८९, १०.
२९०, १५. २९३, २. २९५, १६.
२९७, २१. ३०३, ८. ३०५, १६.
३०६, ८. ३१०, ४. ३१३, १७.
३१८, ९. ३३२, ६. ३३३, ७.
३३७, ६. ३५१, ७. ३५५, १०.
३६१, १६. ३७८, २१. ३८१,
११. ३८८, १०. ३९७, २. ४११,
१४. ४१३, १३. ४१५, १०.
४१६, १२. ४१७, ५. ४३१, १०.
४३५, १०.

२२२ व्याससूत्रम् ४४, ७.

२२३ व्याससूत्राणि ५६, १०.

२२४ शक्तिपुत्रः ७४, १.

२२५ शङ्ख-लिखितौ १९४, ३. २८५,
१२. ३५१, १९. ४७७, १०.

२२६ शङ्खः ७९, ४. १०८, ५. २३६, १.
२४३, ११. २५५, ८. २५६, ६.

- 268, 5. 268, 13. 274, 12.
 284, 5. 286, 10. 297, 15.
 303, 8. 307, 11. 329, 11.
 415, 2. 426, 17. 477, 10.
- २२७ शनिः 221, 3.
 २२८ शंशी 221, 2. [205, 10.
 २२९ शाकल्यः 205, 7. 205, 8.
 २३० शाकुनेयः (धर्माः) 109, 7.
 २३१ शाण्डिल्याः (धर्माः) 109, 9.
 २३२ शातातपः 108, 4. 179, 8.
 186, 18. 188, 4. 192, 2.
 228, 16. 232, 2. 243, 13.
 256, 12. 271, 7. 286, 4.
 298, 5. 317, 14. 327, 1.
 330, 12. 379, 18. 404, 5.
 405, 7. 426, 10. 426, 20.
 427, 21. 432, 14.
- २३३ शान्तिपर्व (Mahābhāratam,
 Bk. XII.) 452, 9. 454,
 11. 456, 13. 461, 2. 464,
 9. 467, 5. 472, 16. 474,
 16. 475, 9. 477, 4. 479,
 14. 481, 18. 482, 16.
- २३४ शिवधर्मः 190, 3.
 २३५ शिवः 59, 7. 59, 10.
 २३६ शुक्रः 221, 3.
 २३७ शैवपुराणम् 376, 18.
 २३८ शैवागमः 139, 13.
 २३९ शौचः 347, 12.
 २४० शौनकः 153, 18. 260, 15.
 272, 5. 272, 13. 305, 5.
 315, 13. 346, 11. 347, 3.
 357, 2. 413, 10. 418, 17.
- २४१ भुतिः 296, 14. 311, 21.
 344, 8. 345, 1. 349, 3.
 349, 14. 376, 14. 349, 16.
 387, 6. 397, 20.
- २४२ श्वेतकेतुः 173, 1. 173, 4.
 २४३ श्वेताश्वतरशास्त्रम् 74, 16.
 २४४ श्वेताश्वतराः 41, 5. 208, 14.
 २४५ श्वेताश्वतरसेपनिषद् 98, 1.
 २४६ षट्त्रिंशन्मतम् 241, 10.
 244, 3. 287, 6. 438, 10.
 २४७ सत्यवती 64, 14.
 २४८ सत्यवतीसुतः 64, 13.
 २४९ सत्यव्रतः 108, 8. 267, 16.
 356, 5. 358, 20.
- २५० सङ्ग्रहकारः 278, 3.
 २५१ संवर्तः 108, 4. 185, 20.
 199, 11. 277, 15. 306, 15.
 २५२ साङ्ख्यायनः 222, 16.
 २५३ सात्यहव्यः 172, 14. 172, 17.
 २५४ सुमन्तुः 65, 18. 108, 7.
 175, 3.
- २५५ सुमन्तुकृताः (धर्माः) 109, 7.
 २५६ सूनः 65, 19.
- २५७ सुतसंहिता (A Volume of
 Skanda-purānam.) 95, 8.
 २५८ सूत्रायाः 172, 15. 172, 17.
 २५९ सौधन्याः (धर्माः) 109, 9.
 २६० सौलभायनाः (धर्माः) 109, 9.
 २६१ स्कन्दपुराणम् 25, 8. 107, 7.
 131, 3. 185, 10. 194, 6.
 198, 6. 361, 10. 437, 15.

14 *The names of authors and works, etc.*

| | |
|---|--|
| २६२ स्कान्दम् 120, 10. 179, 1. 188, 7. 191, 11. 196, 20. 199, 14. | २६५ स्वायम्भुवः 119, 9. |
| २६३ स्मृतिशास्त्रम् 52, 13. स्मृतिः 52, 19. | २६६ हारीतः 108, 5. 144, 1. 153, 17. 154, 19. 160, 14. 163, 8. 225, 16. 240, 7. 249, 4. 254, 6. 255, 14. 256, 3. 293, 11. 296, 5. 308, 16. 320, 1. 331, 12. 343, 1. 353, 5. 359, 8. 362, 15. 383, 4. 413, 6. 440, 12. |
| २६४ स्मृत्यन्तरम् 249, 7. 290, 1. 308, 3. 318, 18. 364, 9. 363, 19. 365, 10. 395, 16. 468, 10. | |

Index of Quotations,,

Vol. .I. Part I.

१. अङ्गिराः—

- अन्तर्धाय तृणैर्भूमिम् 221, 17.
 अयज्ञीयैरनार्द्रैश्च 222, 3.
 अरिमेदं प्रियङ्गुं च 252, 5.
 आघ-पुन्नाग-बिल्वानाम् 252, 1.
 उत्थाय पश्चिमे रात्रे 221, 16.
 उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा 252, 7.
 कुर्यान्मूत्र-पुरीषे तु 221, 19.
 कृत्वा यज्ञोपवीतं तु 222, 13.
 क्रीडाकर्मैव बालानाम् 317, 2.
 जात्यं च बिल्व-खदिरम् 252, 4.
 तत् सायं-प्रातर्होमस्य 318, 14.
 देवतानां गुरुणां च 191, 17.
 पुण्यं देयं प्रयत्नेन 191, 18.
 प्रक्षाल्य भक्षयेत्पूर्वम् 252, 6.
 प्रातर्भूत्वा च यतवाक् 252, 8.
 भक्षयेत्प्रातरुत्थाय 252, 2.
 यत्तु राशीकृतं धान्यम् 197, 15.
 यस्मिन्नग्नौ पचेदन्नम् 379, 16.
 यो दद्यात्काञ्चनं मेरुम् 318, 13.
 वटा-ऽथत्था-ज्ज-खदिर- 252, 3.
 वाचं नियम्य यत्नेन 221, 18.
 विष्णुमूत्रं तु गृही कुर्यात् 222, 14.
 शवस्पृशमथोदकम् 277, 6.

- शालाग्नौ वा पचेदन्नम् 379, 15.
 शिरः प्रावृत्तं कुर्वीत 222, 2.
 भू-ब्राह्मिपि गृहीतव्यम् 197, 16.
 स्पृष्ट्वा ज्ञानेन शुद्धः स्यात् 277, 7.
 स्वाभिप्रायकृतं कर्म 317, 1.

२. अत्रिः—

- आचीन्तोऽप्यशुचिस्तावत् 432, 9.
 आयुःक्षीणा दिवा निद्रा 439, 3.
 आसनादुत्थितस्तस्मिन् 432, 12.
 इतिहास-पुराणानि 439, 4.
 उद्धृते ऽप्यशुचिस्तावत् 432, 10.
 उभे सन्ध्ये तु कर्तव्ये 298, 11.
 तथा सति महान्दोषः 427, 12.
 तदार्द्रकाष्ठं शुष्कं वा 251, 3.
 तोयं पाणिनखस्पृष्टम् 426, 8.
 दिवा स्वापं न कुर्वीत 439, 2.
 नोपतिष्ठन्ति ये सन्ध्याम् 301, 16.
 पत्नी-भ्रात्रिय-याज्याश्च 383, 13.
 पुत्रो भ्राता ऽथवा कृत्विक् 383, 12.
 ब्रह्मयज्ञे जपे नैव 257, 10.
 भूमावपि न हि लिप्तायाम् 432, 11.
 भोजने क्लृप्तः प्रोक्तः 257, 11.
 मुखे पर्युषिते नित्यम् 251, 2.
 मौनव्रतं महाकष्टम् 427, 11.

वृथाविवादवाक्यानि 439, 15.
 -तन्धात्रयं तु कर्तव्यम् 289, 9.
 298, 10.
 सुरापानेन तत्तुल्यम् 426, 9.
 हिंसन्ति वै सदा पापाः 301, 17.
 ३. *आग्नेयपुराणम्—
 अङ्गोः पञ्चदशीं चैव 367, 18.
 अग्नौ क्रियावतां देवो 367, 5.
 अप्सवग्नौ हृदये सूर्ये 367, 3.
 अर्चनं सम्प्रयस्यामि 367, 1.
 आनुष्टुभस्य सूक्तस्य 367, 9.
 ऋग्वेदे पौरुषं सूक्तम् 367, 8.
 एकादशीं कण्ठमध्ये 367, 16.
 एकादश्या तथा धूपम् 368, 8.
 एवं न्यासविधिं कृत्वा 368, 2.
 कयूरवान् मकरकुण्डलवान्
 किरिटी 369, 1.
 क्रियास्नानं तथा षष्ठे 268, 11.
 तच्च सर्वं जपेद्भूयः 368, 14.
 तल्लिङ्गैरर्चयेन्मन्त्रैः 365, 4.
 तस्य सर्गगतत्वाच्च 367, 7.
 तृतीयां वामपादे तु 367, 12.
 त्रयोदशीं दक्षिणे तु 367, 17.
 ध्येयः सदा सत्तितृमण्डलम-
 ध्यवर्ती 368, 16.
 नवमीं नाभिमध्ये तु 367, 15.

नवम्या गन्धलेपं तु 368, 7.
 नित्यं नैमित्तिकं काभ्यम् 268, 10.
 निवीतेन मनुष्याणाम् 351, 17.
 नैवेद्यं तु त्रयोदश्या 368, 9.
 न्यासेन तु भवेत्सोऽपि 368, 4.
 पञ्चमीं वामजानौ तु 367, 13.
 पञ्चम्याऽऽत्रमनं दद्यात् 368, 5.
 पाद्यं तृतीयया चैव 368, 4.
 पितृस्तु दक्षिणाग्नेस्तु 351, 12.
 पुनः षोडशभिर्मन्त्रैः 368, 13.
 पुरुषो यो जगद्धीजम् 367, 10.
 पूर्व्याऽऽवाहयेद्देवम् 368, 3.
 प्रतिमास्वल्पबुद्धीनाम् 367, 6.
 प्रथमां विन्यसेद्दामे 367, 11.
 प्रदक्षिणे पञ्चदशी 368, 10.
 प्रागग्नेषु सुरास्तर्पेत् 351, 11.
 मन्त्रैर्वैष्णव-रौद्रेस्तु 365, 2.
 यत्कृत्वा मुनयः सर्वे 367, 2.
 यथा देहे तथा देवे 367, 19.
 विष्णुं प्रजापतिं वा ऽपि 365, 3.
 षट्स्वेतेषु हरेः सम्यक् 367, 4.
 षण्मासात्सिद्धिमाप्नोति 368, 15.
 सप्तमीं वामकट्यां तु 367, 14.
 सप्तम्या तु ततो वासो 368, 6.
 सव्येन देवकार्याणि 351, 16.
 स्नाने वस्त्रे च नैवेद्ये 368, 11.
 हृत्वा षोडशभिर्मन्त्रैः 368, 12.

४. आचार्याः—

तेन शीघ्रप्रवृत्तित्वात् 300, 3.

* The titles Āgneyāpurāṇam and Vanhipurāṇam are given to one and the same work.

निराकाङ्क्षीकृते भन्त्रे 300, 7.

मन्त्राकाङ्क्षाबलेनैन्द्र- 300, 5.

मन्त्रार्थं मन्त्रतो बुद्ध्वा 300, 4.

श्रुत्या प्रत्यक्षया पूर्वम् 300, 6.

५. आर्द्रित्यपुराणम्—

असवर्णस्त्रियः सार्धम् 425, 18.

आर्तः कुर्याद्यथाशक्ति 230, 3.

कार्तिकं सकलं मासं 281, 1.

चतुर्थ्यां च प्रदोषेषु 157, 11.

जपन् हविष्यभुक् दान्तः 281, 2.

तुला-मकर-मेषेषु 281, 3.

तेषां तु दत्तमक्षय्यम् 360, 10.

तेषां हि दत्तमक्षय्यम् 360, 8.

दानेन प्राप्यते स्वर्गः 177, 3.

दानेन लभ्यते विद्या 177, 5.

दानेन शत्रून् जयति 177, 4.

क्षिवाशौचस्य निदयर्धम् 230, 2.

धर्मार्थ-काम-मोक्षाणाम् 177, 6.

न दानादधिकं किञ्चित् 177, 2.

नोच्छिष्टो माहृथेदाज्यम् 424, 15.

पापप्रेसकतास्तु यतः 84, 2.

ब्राह्मण्या भार्यया सार्धम् 425, 17.

मेधाकामस्त्रयोदश्याम् 157, 10.

यत्रैकचन संस्थानाम् 360, 7.

यस्तु कार्तियुगो धर्मो 84, 1.

ये मे कुले लुप्तपिण्डाः 360, 9.

शूद्रभुक्तावशिष्टं तु 424, 16.

स्त्री-शूद्रयोरर्धमानम् 230, 1.

हविष्यं ब्रह्मचर्यं च 281, 4.

६. आपस्तम्बः—

अथ यदि वातो 349, 10.

अपरेणाग्निम् 384, 13.

अप्रयतश्च 329, 15.

अभिवादनं शीलस्य 336, 5.

अभ्यक्तशिरसं चैव 330, 9.

अवाचीनपाणिः 384, 20.

अष्टौ मासा मुनेर्भक्ष्याः 421, 19.

अहविष्यस्य 382, 7.

आचार्य-प्राचार्य- 336, 1.

उत्तर-पूर्वदेशे 384, 16.

उत्तरेणापिधान्याम् 384, 18.

उत्तरेर्ब्रह्मसदने 384, 18.

उदधानसन्निधौ 384, 14.

उभयतः परिषेचनम् 381, 2.

उरःसमं राजन्यः 323, 5.

उषस्युषोदयं 313, 12.

एवं धर्मं चर्यमाणम् 57, 2.

एवं शौचविधिं कृत्वा 333, 17.

औपासने पचने वा 381, 1.

कुर्वीत यदि मूढात्मा 234, 7.

गण्डूषसमये विप्रः 234, 6.

चतुरष्ट-द्वि-षड्-द्व्यष्ट- 234, 2.

चत्वारि तस्य वर्धन्ते 336, 6.

जपं होमं च कुर्वाणो 330, 3.

तथा अप्रयताय 329, 15.

तथा ज्वरात् 382, 6.

तथा विषमंभेताय 329, 14.

तद्यथा आन्ने फलार्थे 56, 10.

तयोर्नाना 385, 1.

त्रिवर्षपूर्वः 326, 15.
 दक्षिणतः पितृलिङ्गेन 384, 19.
 दक्षिणं बाहुम् 323, 4.
 दर्भेष्वामीनः 308, 11.
 दुरादावसुधान्मूत्र-पुंरीषे 224, 17.
 देहल्यामन्तरिक्ष- 384, 17.
 द्वात्रिंशत्तु गृहस्थस्य 422, 1.
 धर्मज्ञरामयः 138, 1.
 धावन्तं च प्रमत्तं च 330, 6.
 नक्तमेवोत्तरेण 385, 2.
 रक्षत्रं दृष्ट्वा 313, 5.
 न क्षार-लवण- 382, 6.
 न च सोपानत्को 226, 2.
 न त्र्यधाराभिः 247, 10.
 न इमभुभिरुच्छिष्टः 245, 12.
 न सोपानद्वेष्टितशिराः 329, 7.
 नास्तिकं च कृतघ्नं च 330, 5.
 पश्चिमे मुनि-गन्धर्गाः 234, 5.
 पाण्डुं पक्षितं ब्राह्म्यम् 330, 4.
 पुरस्ताद्देवताः सर्वाः 234, 4.
 प्रतिक्रयसः स्त्रियः 329, 16.
 भक्ष्याणां भक्षणे चैव 234, 1.
 भुञ्जानमातुरं नार्हम् 330, 7.
 मध्ये श्मशानस्य 384, 14.
 मुखशुद्धिं प्रकुर्वीत 234, 3.
 मूत्रे रेतसि विट्सर्गे 233, 16.
 योगिनं च तपःसक्तम् 330, 11.
 रौद्र उत्तरतो 385, 1.
 वमन्तं जृम्भमाणं च 330, 8.

शय्यादेशे 384, 16.
 श्रावण्यां पौर्णमास्याम् 157, 5.
 स कर्मणाम् 172, 13.
 सदस्यं सप्तदशम् 172, 13.
 समावृत्तेन सर्वे 335, 17.
 समित्पुष्प-कुशाज्याम्बु 330, 2.
 समुद्रो वा एष 313, 2.
 सुक्पाणिकमविज्ञातम् 330, 10.

७. आश्वलायनः—

अग्निहोत्रदेवताभ्यः 380, 16.
 अथ बलिहरणम् 384, 1.
 अथ सायं-प्रातः 380, 15.
 आसङ्गवान्तः प्रातः 314, 6.
 इन्द्रायेन्द्रपुरुषेभ्यः 384, 3.
 एताभ्यश्चैव 384, 1.
 गुप्तान्तं चैव वैद्यस्य 358, 16.
 चतुर्धामपि वर्णानाम् 358, 17.
 तानेतान्यज्ञान् 390, 7.
 देवयज्ञः पितृयज्ञः 378, 16.
 नक्तंचारिभ्यः 384, 3.
 पितृगोत्रं कुमारीणाम् 358, 18.
 ब्रह्मणे ब्रह्मपुरुषेभ्यः 384, 5.
 रक्षोभ्यः 384, 8.
 विश्वेभ्यो देवेभ्यः 384, 6.
 विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा 389, 18.
 शर्मान्तं ब्राह्मणस्योक्तम् 358, 15.
 सर्वेभ्यो भूतेभ्यः 384, 7.
 सिद्धस्य हविष्यस्य 390, 18.
 स्वधा पितृभ्यः 384, 9.

८. ईशावास्योपनिषद्—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि 164, 19.

९. उशनाः—

आदाने च विसर्गे च 470, 7.

एतानि भक्षयेद्यस्तु 253, 4.

क्षार्पांसं दन्तैकाष्टं च 253, 2.

तिन्दुकेद्भुद-बन्धूक- 253, 1.

दक्षिणाभिमुखो नाद्यात् 252, 16.

दण्ड-शुद्धयोः समाशुक्तः 470, 9.

न च तैलाभ्यक्तशिराः 443, 13.

न भक्षयेत पालाशम् 253, 3.

नाङ्गुलीभिः स्वकान्दन्तान् 252, 15.

नाऽदत्त्वा मिष्टमभ्रियात् 424, 12.

नाऽभ्रियुर्बहवश्चैव 424, 13.

पञ्चमे चार्थवचने 470, 8.

मूलबलं श्रेणीबलम् 458, 7.

विक्रयः सर्वपण्यानाम् 342, 7.

शूद्रस्य द्विजशुभ्रूषा 342, 6.

षट्त्रिंशद्गुणोपेतः 462, 20.

१०. ऐतरेयोपनिषत्—

आत्मा वा इदम् 97, 13. 99, 11.

स इमांलोकान् 97, 14.

* The author does not mention this name, but the quotation is found in this work.

† The author does not mention the name ऐतरेयोपनिषत्; but the quotations that have come under this heading, appear in this Upanishat.

स ईक्षत लोकान् 97, 14.

११. कात्यायनः—

अदैवं नास्ति चेदहो 388, 20.

अधार्मिकं त्रिभिर्न्यायैः 455, 13.

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः 387, 10.

391, 17.

अनन्तर्गर्भिणं सामम् 257, 1.

अनश्रतापि सततम् 389, 12.

अनिष्टा नवयज्ञेन 168, 14.

अदैवतकचश्चैव 295, 11.

अभ्युद्धृत्य यथाशक्ति 389, 1.

अन्तमत्वीक्षोमकालस्य 260, 1.

असमक्षं तु दम्पत्योः 312, 6.

आयुर्बलं यशो वर्चः 252, 11.

उत्थायार्कमपति प्रोहेत् 296, 4.

उद्धृत्य हविरासिच्य 383, 8.

एकमप्याऽऽशयेद्विप्रम् 388, 19.

चण्डाल-पतितोदैक्याः 428, 16.

चन्द्र-सूर्यग्रहे भुक्त्वा 436, 12.

छायां यथेच्छेच्छरदातपार्तः 363, 1.

तथा सर्वाणि भूतानि 363, 3.

तस्मात्सदैवं कर्तव्यम् 303, 7.

तस्मिन्नेव दिने भुक्त्वा 436, 13.

दन्तान्पक्षाल्य नद्यादौ 259, 13.

द्वयोरप्यसमक्षं नृ 312, 7.

निक्षिप्यामि इवदारेषु 312, 11.

निरोधनेन बन्धेन 456, 14.

पापिष्ठं दुर्भगं चान्धम् 221, 12.

पितृभ्य इवमित्युक्त्वा 489, 3.

पितृभ्योऽथ मनुष्येभ्यो 389, 2.

पितृयज्ञात्यये चैव 168, 13.

पितृवंश्या मृतृवंश्याः 360, 3.

प्रणवो भूर्भुवःस्वर्गो 295, 10.

प्रवसेत्कार्यवान्विप्रो 312, 12.

प्रातरुत्थाय यः पश्येत् 221, 11.

प्रातरुत्थाय यः पश्येत्तत् 221, 13.

प्रातः सुक्षेपतः स्नानम् 260, 2.

प्रादेशमार्त्रं विज्ञेयम् 257, 2.

बालो जडित्रीं जननी च

बालम् 363, 3.

ब्रह्म प्रज्ञां च मेधां च 252, 12.

भुञ्जीत आसमात्रं तु 428, 17.

भोजने पतितान्नस्य 168, 15.

मित्रादिषु प्रयुञ्जीत 455, 11.

यथा ज्वालि तथा प्रातः 259, 12.

यथोक्तं तस्य तत्कुर्युः 455, 12.

यावत्सम्यङ् न भाष्यन्ते 312, 15.

भुञ्जते ब्राह्मणः कुर्वन् 363, 8.

लोहितत्वं च नापैति 312, 16.

विप्रादुष्कमिच्छन्ति 363, 6.

विद्यायाग्निं सभार्यश्चेत् 315, 9.

शिरसो मार्जनं कुर्यात् 295, 9.

आहुं वाः पितृयज्ञः स्यात् 387, 12.

ओन्नियं सुभगं गां त्व 221, 10.

समूलाः पितृदेवत्याः 255, 6.

सायं-प्रातर्वैश्वदेवः 380, 11.

स्वशाखाविधिना हुत्वा 383, 9.

हन्तकृद् मनुष्येभ्यः 389, 4.

हरितां यज्ञिहा दर्भाः 255, 5.

होमकालात्यये तस्य 315, 10.

१२. कार्णाजिनिः—

असम्भवे तथा दद्यात् 392, 6.

तर्पणेतूभयेनैव 352, 15.

देवतानां पितृणां च 353, 13.

नाभिमात्रे जले स्थित्वा 261, 7.

भिक्षां वा पुष्कलां वार्जये 392, 5.

आद्धे विवाहकाले च 352, 14.

१३. कूर्मपुराणे—

अकृत्वा देवपूजां च 215, 6.

अक्षय्यं तत्र दत्तं स्यात् 70, 5.

अग्नेर्गवामथालम्भे 239, 4.

अथवा देवमीशानम् 372, 5.

अथाक्षरेण स्वात्मानम् 432, 4.

अथागम्य गृहं विप्रः 311, 6.

अथोपनिषेदादित्यम् 297, 1.

अध्यापनं याजनं च 340, 7.

अनध्यायस्तु नाङ्गेषु 159, 2.

अन्यांश्चाभिमतान्देवान् 365, 7.

अमृतापिधानमसि 431, 17.

अमृतेनाथवा जीवेत् 340, 11.

अमृतोपस्तरणमसि 419, 8.

अयाचितं स्थादमृतम् 340, 12.

अवेक्षेत च शाखाणि 336, 15.

अष्टकासु त्वहोरात्रम् 156, 15.

असाधकस्तु यः प्रोक्तः 340, 9.

आहिता सत्यवचनम् 128, 1.

आकाशे सगुणो वायुः 96, 7.

आचमेत विशुद्धचर्मम् 278, 10.
 आचम्य प्रयत्ने नित्यम् 258, 6.
 आचम्याऽऽर्चननोऽक्रोधः 415, 8.
 आचम्याङ्गुष्ठमात्रेण 432, 1.
 आचान्तः पुत्राचामेत् 431, 18.
 आचामेर्दधुपाते च 239, 3.
 आचार्यपुत्रः शुश्रूषुः 146, 8.
 आधायग्नीन् विशुद्धात्मा 161,
 16.
 आप्नः प्रियोऽथ विधिवत् 146, 11.
 आप्नः शक्तोऽर्थदः साधुः 146, 9.
 आराधयेन्महादेवम् 372, 8.
 आहूतोऽध्ययनं कुर्यात् 152, 10.
 इत्येतदखिलं प्रोक्तम् 444, 8.
 इंद्रियाणि तु सर्वाणि 96, 9.
 ईशानेनाऽथवा रुद्रैः 372, 8.
 उच्छिष्टं पुरुषं स्पृष्ट्वा 239, 2.
 उद्धृत्य वा यथाशक्ति 389, 7.
 उपलिप्ते शुची देशे 415, 7.
 उपवासेन तत्तुल्यम् 417, 2.
 उपाकर्माणि चोत्सर्गे 156, 14.
 उपेयादीश्वरं चाथ 338, 5.
 ऋषिक् पुत्रोऽथवा पत्नी 311, 18.
 एकं तु भोजयेद्विप्रम् 387, 16.
 एकान्ते तु शुभे देशे 307, 18.
 एतत्तपो विदुर्धराः 128, 2.
 एवमाचारसम्पन्नम् 146, 4.
 ओष्ठौ विलोमकौ स्पृष्टा 242, 5.
 कदाचिदपि नाध्येयम् 158, 12.

कायक्लेशं तदुद्धृतम् 220, 3.
 कृतज्ञश्च तथा उद्गोही 146, 10.
 कृत्वा मनुष्ययज्ञं तु 344, 6.
 गुणैरशेषैः पृथिवी 96, 4.
 गुह्यकौ राक्षसाः सिद्धाः 307, 17.
 गृहस्थो मुच्यते बन्धात् 58, 4.
 चण्डाल-म्लेच्छसम्भाषे 239, 1.
 चतुर्धाऽयं पुराणेषु 94, 17.
 चतुर्युगसहस्रं तत् 94, 5.
 चत्वरं वा श्मशानं वा 242, 8.
 चाण्डाल-सूतिक-शवैः 278, 7.
 जपेदध्यापयेच्छिष्यान् 336, 14.
 जृम्भित्वाऽध्ययनारम्भे 242, 7.
 ज्ञानादात्यन्तिकः प्रोक्तः 95, 6.
 तत्ते मध्याह्नसमये 269, 14.
 तत्र नारायणो देवो 70, 4.
 तत्स्पृष्टस्पृष्टिर्न स्पृष्ट्वा 278, 9.
 तथोन्नमः शिष्यायेति 372, 10.
 तद्वारि तत्त्वं सगुणम् 96, 5.
 तद्विष्णोरिति मन्त्रेण 372, 1.
 तस्मात्कर्माणि कुर्वीत 424, 13.
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन 161, 15.
 तस्माद्दिनादौ मध्याह्ने 371, 19.
 तारयेच्च पितृन्स्वर्गान् 70, 7.
 तिस्रोऽष्टकाः समाख्याताः 156, 17.
 तेजस्तु गुणसंयुक्तम् 96, 6.
 त्रिविधोऽयमहङ्कारो 96, 12.
 दद्यादतिथये नित्यम् 392, 9.
 दद्यादन्नं यथाशक्ति 409, 13.

- दद्याद्भूमौ बहिर्धातुम् 385, 11.
 देवत्वं ब्रह्मरूपीधैव 355, 7.
 देवेभ्यस्तु हुतारत्वात् 383, 1.
 द्रुपदां वा विराट् 431, 19.
 द्विविधस्तु गृही ज्ञेयः 340, 6.
 ध्यायेत् देवर्माशात्मम् 372, 14.
 नदीषु देवखातेषु 270, 1.
 न धर्मशास्त्रेष्वन्येषु 159, 3.
 न ब्रह्म कीर्तयित्वाऽपि 425, 4.
 न भिन्नं भार्जने चैव 425, 2.
 नमस्कुर्यान्महादेवम् 372, 11.
 न विष्ण्वाराधनात्पुण्यम् 371, 18.
 न वेदपाठमात्रेण 151, 8.
 नान्धकारे न सन्ध्यायाम् 425, 5.
 नान्यो विमुक्तये पन्थाः 444, 12.
 नार्धरात्रे न मध्याह्ने 425, 1.
 नाशयन्त्याशु पापानि 216, 7.
 नास्तिक्यादथवा ऽऽलस्यात् 161, 13.
 नास्तिक्यादथवा ऽऽलस्याद्वा-
 ह्मणो 444, 10.
 नित्यसुदृतीपाणिः स्यात् 152, 11.
 नित्यं भ्रातृं तदुद्दिष्टम् 387, 17.
 नित्यः संकीर्त्यते नाप्ना 95, 2.
 नित्यो नैमित्तिकधैव 94, 16.
 निवेदयेत् चात्मानम् 372, 12.
 निष्पीड्य ज्ञानवत्त्वं वै 320, 4.
 निःस्त्रावयेद्दत्ताजलम् 432, 2.
 नैताभ्यां सदृशो मन्त्रो 372, 2.
 नोच्छिष्टे घृतमीदद्यात् 425, 3.
 पञ्चापिण्डान् समुद्धृत्य 270, 4.
 पञ्चाद्वौ भोजनं कुर्यात् 417, 1.
 परकीयनिपानेषु 270, 8.
 पाठमात्रवसायी तु 151, 9.
 पितृन् भक्त्या तिलैः कृष्णैः 355, 8.
 पुष्पाक्षतान्कुश-तिलान् 269, 15.
 पुष्पैः पत्रैरथाङ्गिर्वा 372, 9.
 प्रक्षाल्य दन्तकाष्ठं वै 258, 5.
 प्रक्षाल्य पाणी पादौ च 242, 2.
 प्रज्वाल्य वह्निं विधिवत् 311, 7.
 प्रदक्षिणं द्विजः कुर्यात् 372, 13.
 प्रमादात्तत आचम्य 278, 8.
 प्रशस्त-शुद्धपात्रेषु 416, 1.
 प्राकृतः प्रतिसर्गोऽयम् 95, 5.
 प्रागग्रेषु ततः स्थित्वा 291, 9.
 प्राणानां ग्रन्थिरसि 431, 20.
 प्राणायामत्रयं कृत्वा 291, 10.
 प्राप्यानुज्ञां विशेषेण 311, 19.
 वर्दर्याभ्रमुमासाद्य 70, 3.
 ब्रह्माणं शङ्करं सूर्यम् 365, 6.
 ब्राह्मणानां कृत्यजातम् 444, 9.
 ब्राह्ममेकमहःकल्पः 94, 4.
 ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय 220, 2.
 ब्राह्मो नैमित्तिको नाम 95, 3.
 भिक्षां वै भिक्षवे दद्यात् 409, 12.
 भुङ्क्ते स याति नरकम् 215, 4.
 376, 2.
 भुञ्जीत चेत्स मूढात्मा 215, 7.
 भूतयज्ञः स वै प्रोक्तः 383, 2.

भूतादौ च तथाऽऽकाशो 93, 8.
 मन्त्रेण रुद्रगत्यत्र्या 372, 7.
 मन्त्रैस्तु विविधैः सौरैः 297, 2.
 महादेवप्रियं तीर्थम् 70, 6.
 महान्तमेभिः सहितम् 96, 13.
 महाव्याहृतिभिस्त्वन्नम् 419, 7.
 महादादिविशेषान्तम् 95, 4.
 मार्गशीर्षे तथा पौषे 156, 16.
 यजेत वा न यज्ञेन 161, 14.
 यथाशक्ति चरेत्कर्म 58, 2.
 यदि स्यात्तर्पणादर्वाक् 344, 5.
 यदि स्याल्लौकिके पाकः 379, 11.
 यो ऽधीत्य विधिवद्वेदम् 151, 10.
 यो ऽनेन विधिना कुर्यात् 432, 6.
 यो ऽन्यत्र कुरुते यत्नं धर्म- 301, 9.
 यो ऽन्यत्र कुरुते यत्नम् 151, 6.
 यो भुङ्क्ते वेष्टितशिराः 430, 9.
 यो मोहादय वा ऽऽलस्यात् 215, 3.
 376, 8.
 यो ऽयं संवृदयते नित्यम् 95, 1.
 रेतो-मूत्र-पुरीषाणाम् 242, 6.
 विधुय मोहकलिलम् 58, 3.
 विहाय सन्ध्याप्रणतिम् 301, 10.
 वेदतत्त्वार्थविदुषे 389, 8.
 वेदमध्यापयेद्धर्मम् 146, 5.
 वेदाभ्यासं ततः कुर्यात् 336, 13.
 वेदाभ्यासो ऽन्वहं शक्या 210, 6.
 वैकारिकस्तैजसश्च 96, 11.
 वैकारिके देवगणाः 96, 10.

वैश्वदेवस्तु कर्तव्यः 379, 10.
 शालामौ तु पंचेदन्नम् 379, 12.
 शालामौ लौकिके वाऽथ 379, 9.
 शिलोऽच्छं वाऽयं ऽऽदीत 340, 8.
 शिलीऽच्छे तस्य कथिते 340, 10.
 शुचौ देशे समासीनो 242, 3.
 श्रेष्ठातकस्य छायायाम् 158, 11.
 श्रम्यश्च श्रपचेभ्यश्च 385, 10.
 सन्ध्ययोरुभयोस्तद्वत् 242, 9.
 स याति नरकान् घोरान् 444, 12.
 सर्त्रेषामेव यागानाम् 432, 5.
 स वै मूढो न सम्भाष्यो 151, 7.
 स सान्वयः शूद्रसमः 151, 11.
 संवत्सरोषिते शिष्ये 146, 6.
 संस्थितेष्वथ देवेषु 96, 3.
 साधयेद्विविधानर्थान् 338, 6.
 सोपानत्कश्च यो भुङ्क्ते 430, 10.
 स्त्रीणामथान्नमनः स्पर्शो 239, 5.
 ज्ञानं समाचरेन्नित्यम् 270, 2.
 स्वैर्भन्तैरर्चयेद्देवान् 320, 5.
 स्वैर्भन्तैरर्चयेन्नित्यम् 385, 8.
 हन्तकारमथामं वा 392, 8.
 हरते दुष्कृतं तस्य 146, 7.
 हुतानुमन्त्रणं कुर्यात् 432, 3.
 १४. कैवल्योपनिषद्—
 'विविक्तदेशे' 40, 11.
 १५. कौशिकः—
 अकृतं तस्य तत्सर्वम् 248, 9.
 अपक्विकर्; कश्चित् 248, 8.

ओंकारेणैव मन्त्रेण 254, 19.

मुद पद्मानि सर्वाणि 255, 3.

रुक्मं तु तद्भवेत्तौयम् 248, 11.

वामहस्ते स्थिते कर्मे 248, 10.

विरिचिना सहोत्पन्न 255, 2.

शुत्रौ देशे शुचिर्भूत्वा 254, 18.

१६. कौषीतकिब्राह्मणम्—

चित्रोद्भवो, 173, 3.

स ह पुत्रम् 173, 3.

१७. कथुः—

देवराज्यं सुतोत्पत्तिः 133, 12.

न यज्ञे गोवधः कार्यः 133, 12.

१८. क्षुरिकोपनिषद्—

निःशब्दं देशम् 41, 2.

१९. गद्यव्यासः—

ततस्तृप्तः सन् 431, 1.

२०. गरुडपुराणम्—

तावदेव हि गृह्णीयात् 198, 22.

यावता पञ्चयज्ञानाम् 198, 21.

२१. गर्गः—

कृतर्दाग्रे नैव तिष्ठेत् 317, 18.

गुणनिष्ठः प्रभामं तु 318, 8.

तथैवोपासनं दृष्टम् 318, 2.

तिष्ठेत् चेद्भिन्नो घ्रात्यः 317, 19.

द्वादश्यां क्षममीर्षष्ठ्योः 282, 15.

म च कुर्यात् तृतीयायाम् 283, 4.

पञ्चदश्यां चतुर्दश्याम् 282, 14.

प्रधानं वैदिकं कर्म 318, 7.

मोहात्समाचरेद्भिन्नो 318, 6.

यथा ज्ञानं यथा भायो 318, 1.

यो वैदिकमनादृत्य 318, 5.

शार्धर्तौ मृतिमन्विच्छन् 283, 5.

२२. गार्ग्यः—

कुर्यान्नैमित्तिकं ज्ञानम् 279, 14.

नित्यं यादृच्छिकं नैव 279, 15.

प्रत्यक् शिराः प्रवासे च 441, 13.

स्वगृहे प्राक्शिराः शेते 441, 12.

२३. गृह्यपरिशिष्टम्—

प्रेषितो ज्यात्मसंस्कारम् 391, 4.

शाकं वा यदि वा पत्रम् 382, 1.

सङ्कल्पयेद् यदाहारः 382, 2.

२४. गोभिलः—

अगस्तिर्माधवश्चैव 441, 18.

अथ यदि गृह्येऽग्नौ 314, 10.

अथानः प्राणाहुति-417, 15.

अन्तश्चरन्ति भूतेषु 417, 14.

अपानाय स्वाहेति 418, 4.

आसायमाहुतेः 314, 11.

उत्तरे पितृकार्ये तु 430, 3.

उदानाय स्वाहेति 418, 7.

उभयत्र स्थितैर्धर्मैः 248, 16.

एकष्वन्त्युपविष्टानाम् 427, 2.

एकवस्त्रो न भुञ्जीत 265, 14.

कपिलो मुनिरास्तीकः 441, 19.

कुशमूले स्थितो ब्रह्मा 254, 15.

कुशमे शङ्करं विद्यात् 254, 16.

जीवमानो भवेच्छूद्रो 301, 3.

तस्मात्सनातो न प्रमृज्यात् 263, 13.

त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कारः 417, 19.

नोदकेषु न पात्रेषु 352, 18.

नोपतिष्ठति तत्तोयम् 352, 19.

पिबन्ति शिरसो देवाः 263, 11.

प्राङ्मुखस्त्वस्थितो, विप्रो 430, 2.

प्राणाय स्वाहेति 418, 3.

मुञ्जानेषु तु विप्रेषु 427, 5.

भोजने विघ्नकर्ताऽसौ 427, 6.

मध्यतः सर्वगन्धर्वाः 263, 12.

मोहान्तु मुङ्गे यस्तत्र 427, 4.

यद्येकस्मिन्काले 391, 6.

यद्येकस्मिन्काले पुनःपुनः 391, 7.

यद्येकस्मिन्काले बहुधा 391, 9.

यद्येकोऽपि त्यजेत्पात्रम् 427, 3.

व्यानाय स्वाहेति 418, 6.

सन्ध्या येन न विज्ञाता 301, 2.

समानाय स्वाहेति 418, 8.

सौमपाकलं तस्य 248, 17.

२५. गौतमः—

अग्निष्टोमोऽस्त्यग्निष्टोमः 164, 2.

अग्न्याधेयमग्निहोत्रम् 163, 13.

अङ्गुल्या जपसङ्ख्यानाम् 309, 4.

अङ्गुष्ठं मोक्षदं विद्यात् 309, 17.

अङ्गुष्ठेन जपेज्जप्यम् 310, 2.

अङ्गुष्ठेन त्रिनाजप्यम् 310, 3.

अनेन विधिना नित्यम् 311, 1.

अशुचेर्वा त्रिना सङ्ख्याम् 307, 2.

अष्टका-पार्वणश्राद्धम् 163, 12.

आचामेत्सम्भवे चैषाम् 307, 5.

कृत्विक्-श्वशुर- 326, 10.

एतेषां निनदं यावत् 429, 2.

कनिष्ठा रक्षणी प्रोक्ता 310, 10.

कार्तिकी फाल्गुनी 136, 18.

काहल-ध्रुमण-ध्रुवाम् 429, 1.

कुर्वीत यदि मृदात्म्या 431, 8.

कुशयन्त्र्या च रुद्राक्षैः 309, 9.

कृताक्षमितरेभ्यः 86, 7.

क्रोधं लोभं तथा निद्राम् 307, 3.

खानि चोपस्पृशेत् 235, 3.

गच्छतस्तिष्ठतो वाऽपि 307, 1.

गण्डवस्यांश्च समये 431, 7.

गुरोः पादोपसंयहणम् 327, 12.

330, 15.

ज्योतींश्चि च प्रशंसेद्वा 307, 6.

ज्वलनं गाश्च विप्राश्च 307, 7.

दर्शनं च श्व-नीचानाम् 307, 4.

द्विः प्रमृज्यात् 235, 4.

न मुख्या विभुः 245, 1.

नाञ्जलिना पिबेत् 248, 1.

पतिन-वण्डाल- 277, 9.

पद्माक्षैर्दशरक्षं तु 309, 8.

पादौ चाभ्युक्षेत् 235, 4.

प्रसन्नो विपुलान् भोगान् 311, 2.

मध्यमा धनकामाय 309, 19.

मार्तृ-पितृ-तद्गृध्नाम् 327, 15.

रेखयाऽद्गुणं पुत्र- 309, 5.

शतं स्यात् शङ्खमणिभिः 309, 6.

शुचौ देशे आसीनः 235, 1.

सायं प्रातस्त्वन्नम् 423, 5.

स्पृष्टिकैर्दशसाहस्रम् 309, 7.

स्वस्तिवाचम् 407, 14.

२६. चतुर्दिशतिमत्—

अपश्यन्नद्धको दग्धः 317, 5.

अर्हच्चार्याकवार्यानि 10, 7.

अलाभे येन केभापि 381, 15.

उत्तीर्य फेडयेद्वस्त्रम् 262, 2.

उषस्युषसि यत्स्नानम् 260, 8.

काफालिकास्तु संस्पृश्य 279, 6.

कुर्याद् व्याहृतिभिर्वा 259, 10.

ततस्तु त्रैदय-शूद्रेभ्यः 107, 17.

पयो-दधि-घृतैः कुर्यात् 381, 16.

प्राजापत्ये न तत्तुल्यम् 260, 9.

बौद्धान् पाशुपतान् जैनान् 279, 4.

विकर्मस्थान् द्विजान् स्पृष्ट्वा 279, 5.

विप्रलम्भकवाक्यानि 10, 8.

सीदंश्चेत्प्रतिगृहीयात् 197, 12.

स्नानमब्देवतैर्मन्त्रैः 259, 9.

स्नानादनन्तरं तावत् 262, 1.

हृतं ज्ञानं क्रियाहीनम् 317, 4.

हस्तेनात्रादिभिः कुर्यात् 381, 17.

२७. छन्दोगब्राह्मणम्—

अथ यो मन्त्रे 173, 17.

अयातयामान्यस्य 173, 18.

तदा अयाज्ययुजने 175, 1.

तस्मादेतन्मन्त्रे 173, 18.

यातयामान्यस्य 173, 16.

यो ह वाजविदितर्षिय- 173, 14.

अयान् भवति 173, 17.

२८. * छान्दोग्योपनिषद्—

अन्नमयं हि 103, 20.

इदं वावतत्तज्ज्येष्ठाय 77, 10.

कथमसतः सज्जायेत 102, 4.

तदैक्षत बहु स्याम् 100, 2. 103, 15.

त्रयो धर्मस्कन्धाः 56, 5.

न मे स्तेनो जनपदे 200, 17.

न वै वाचो न चक्षुषि 127, 3.

नाऽऽहिताग्निर्ना जविद्वान् 200, 18.

नान्यस्मै कस्मैचन 77, 12.

प्रथमस्तप एव 56, 6.

सदेव सोम्येदम् 100, 1.

सर्व एते पुण्यलोकाः 56, 7.

२९. जाबालिः—

आचरेदुषसि स्नानम् 260, 6.

प्राणायामत्रयं कृत्वा 264, 2.

सनतं प्रातरुत्थाय 260, 5.

स्नानं कृत्वा ऽऽर्द्रवासीस्तु 264, 1.

३०. तैमिनिसूत्रम्—

अवकीर्णपशुः 50, 4.

एकस्य तूभयत्वे 60, 7.

चोदनालक्षणोऽर्थो 87, 6.

तत्प्रमाणम् 5, 6.

* The author does not mention the name छान्दोग्योपनिषद्. He makes the quotations under the names छन्दोगशास्त्रा and छन्दोगाः.

३१. ज्योतिःशास्त्रम्—

- अनारोग्यं सर्वकामाः 282, 9.
 ऋक्षादिषडङ्गमोपेतम् 193, 18.
 छेदादिकालः कथितः 193, 17.
 छेदादिसमयः प्रोक्तः 194, 2.
 तिथ्य-धर्तिथ्ययोगक्ष- 193, 14.
 पलैः षोडशभिर्युक्तम् 194, 1.
 सदृशौ दिवसच्छिद्र- 193, 15.
 सन्तापः कान्तिरन्तर्पूयुः 282, 8.

३२. तार्किकाः—

- प्रतिषिद्धक्रियासाध्यः 87, 7.
 विहितक्रियया साध्यो 87, 6.

३३. * तैत्तिरीयारण्यकम्—

- तस्माद् यज्ञोपवीती 173, 10.
 तस्याग्निशनं दीक्षा 174, 10.
 त्रिरात्रं वा सावित्रीम् 174, 5.
 दुहे ह वा एष 174, 8.
 यच्च वा एते महायज्ञाः 11, 11.
 यत्सामानि सोमः 149, 7.
 यदृचो ऽधीते 149, 5.
 यद् यजूंषि धृतस्य 149, 6.
 यांजयित्वा प्रतिगृह्य 174, 4.
 रिच्युत इव वा 174, 3.
 सो ऽरण्यं परेत्य 174, 9.
 स्वाध्यायोऽध्येतव्यः 148, 12, 150, 9.

३४. तैत्तिरीयब्राह्मणम्—

- अग्निनाऽऽदित्यम् 118, 3.

* The author has made the quotations under the name तैत्तिरीयकम्.

- अग्निमेव तदादित्येन 118, 2.

- अग्निर्वा 47, 6.

- अग्निर्वा ऋतम् 118, 2.

- अन्नादो 47, 2.

- असावादित्यः 118, 2.

- उद्यन्तमस्तंयन्तम् 290, 7.

- ऋतं त्वा सत्येन 117, 10.

- ऋभूणाम् 48, 19.

- खादिरो यूषो भवति 60, 4.

- ग्रीष्मे 48, 15.

- ब्रह्मैव सन् ब्रह्म 290, 9.

- यत्स्वाध्यायमधीयीत 343, 13.

- वसन्ते 48, 14.

- वासिष्ठो ह सत्यहव्यः 172, 17.

- शरदि 48, 15.

- स एतम् 47, 7.

- सत्यं त्वर्तेन 117, 11.

३५. † तैत्तिरीयसंहिता—

- अपशवो वा 66, 16.

- एकस्य बह्व्यो जायाः 91, 3.

- ऐन्द्राग्रमेकादशकपालम् 166, 9.

- 70, 8.

- ओषधीभ्यः स्वाहा 212, 12.

- गावो वा एतत् 51, 7.

- गां दंष्ट्राभ्याम् 212, 8.

† The author has not given the name of the work from which the quotations given here have been made, but they are found in तैत्तिरीयसंहिता.

गोसत्रं वै 51, 16.

ततो वै 47, 15.

तमाहरत् 47, 14.

तं त्वष्टाऽऽधत् 48, 17.

तं धाता 49, 18.

तं पूषाऽऽधत् 49, 17.

तं मनुः 49, 17.

ता उदतिष्ठन्नरात्स्मेति 51, 9.

तृप्त एवैनर्मिन्द्रः 211, 7. 214, 6.

बृहस्पतिरकामयत् 47, 13.

धृष्टस्फुटिर्वै 48, 6.

मानवी ऋचौ 48, 3.

य एषं त्रिधाऽसः 51, 13.

यद्वै किं च 7, 5. 52, 2.

वायव्यं श्वेदम् 166, 6.

स एतं चतुर्विंशतिरात्रम् 47, 14.

हृदयस्याग्ने 38, 1.

३६. * तैत्तिरीयोपनिषद्—

अग्नेरुपः 105, 6.

अथ यदि ते 140, 15.

अद्भ्यः पृथिवी 105, 7.

अर्न्नात्पुरुषः 105, 7.

असद्वा इदमग्ने 102, 1.

आकाशाद्वायुः 105, 6.

आनन्दो ब्रह्मेति 102, 16.

एतत्खलु वा व नृपः 120, 3.

* The author makes these quotations under the names तैत्तिरीयम् and तैत्तिरीयशाखाः but they are found in this Upanishad.

ओषधीभ्योऽञ्जम् 105, 7.

तस्माद्वा एतस्मात् 99, 14. 101, 2.

105, 5.

धर्मं चर 38, 11. 129, 1.

पृथिव्या ओषधयः 105, 7.

बहु स्याम् 103, 14.

वाग्नोरग्निः 105, 6.

सत्यं ज्ञानमनन्तम् 99, 13.

सोऽकामयत् 103, 14.

३७. दक्षः—

अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तु 238, 2.

अङ्गुष्ठेन प्रदेशिन्या 238, 1.

अज्ञानाद् यदि वा मोहान् 259, 6.

अत्यन्तमलिनः कायो 258, 15.

अध्यर्धयामादा सायम् 297, 20.

अभ्यागतोऽतिथिश्चाग्निः 338, 10.

अयने त्रिपुवे चैव 438, 3.

अर्धप्रसूतिमात्रा तु 232, 6.

अष्टमे लोकयात्रा तु 438, 21.

अस्नात्वा नाचरेत्कर्म 238, 13.

अहोरात्रस्य यः सन्धिः 288, 15.

अहोरात्रोषितः स्नात्वा 438, 4.

इतिहास-पुखणाद्यैः 438, 20.

उभयोरप्यसौ शुद्धः 249, 3.

ऋत्विक् पुत्रो गुरुर्भ्राता 311, 14.

एतैरपि कुतं यत्स्यात् 311, 15.

कनिष्ठाङ्गुष्ठयोर्नीभिम् 238, 3.

चतुर्थे तु तथा भागे 343, 9.

तद्दानं चैव शिष्येभ्यः 153, 16.
 तीर्थे शौचं न कुर्वीत 227, 2.
 तृतीया मृत्तिका ज्ञेया 232, 9.
 तृतीये च तथा भागे 338, 2.
 दर्शनाद् रविरेखायाः 261, 3.
 दिवस्याऽऽद्यभागे तु 319, 7.
 देवकार्यं ततः कृत्वा 320, 10.
 द्वितीया च तृतीया च 232, 7.
 द्वितीये च तथा भागे 336, 10.
 द्वितीये च तृतीये च 319, 8.
 न शौचं वर्षधाराभिः 231, 2.
 न्यूनाधिकं न कर्तव्यम् 233, 1.
 पञ्चमे च तथा भागे 378, 2.
 पितृ-देव-मनुष्याणाम् 378, 3.
 प्रथमा प्रसृतिज्ञेया 232, 8.
 प्रदेष-पश्चिमौ यामौ 414, 1.
 प्रातर्मध्याह्नयोः स्नानम् 270, 10.
 प्रातःस्नानं प्रशंसन्ति 258, 17.
 प्रातःस्नानेन तत्सर्वम् 259, 7.
 प्रायश्चित्तेन पूयेत 233, 2.
 भुक्त्वा तु सुखमास्थाय 438, 19.
 माता पिता गुरुभार्या 338, 9.
 यत्नेस्त्रिषवणं प्रोक्तम् 270, 11.
 यदन्यत्कुरुते कर्म 300, 21.
 यामद्वयं शयानस्तु 442, 2.
 रात्र्यन्त्ययामनाडी द्वे 291, 2.
 लाला-स्वेदसमाकीर्णः 358, 14.
 विभागेष्वेषु यत्कर्म 319, 10.
 वेदस्वीकरणं पूर्वम् 153, 15.

शौचाचारविहीनस्य 233, 13.
 शौचे यत्नः सदा कार्यः 233, 12.
 स्रवत्येव दिवा-रात्रौ 258, 16.
 षडन्या नखशुद्धौ तु 231, 1.
 षष्ठे च सप्तमे चैव 319, 9.
 सन्ध्याकर्मावसाने तु 311, 10.
 सन्ध्याहीनेऽशुचिर्नित्यम् 300, 20.
 समित्पुष्प-कुशादीनाम् 337, 18.
 सर्वमहेति शुद्धात्मा 258, 18.
 सर्वाभिश्च शिरः पञ्चान्त 238, 4.
 संवृत्याङ्गुष्ठमूलेन 237, 13.
 संहर्त्त्राभिस्त्रिभिः पूर्वम् 237, 14.
 सा तु सन्ध्या समाख्याता 288, 16.
 स्नात्वाऽऽत्रामेत्तदा विप्रः 249, 2.
 स्वयं होमे फलं यत्स्यात् 311, 11.
 हृयमाने तदन्येन 311, 13.
 होमे यत्फलमुद्दिष्टम् 311, 12.

३८. देवकः—

अङ्गार-तुष-कीटास्थि- 228, 6.
 अतिथिर्गृहमभ्येत्य 215, 14.
 अधमानि तु शेषाणि 189, 2.
 अधमान्यवशिष्टानि 189, 10.
 अधिष्ठानानि दानानाम् 180, 2.
 अनर्हेषु च रागेण 180, 8.
 अनिन्द्यजीवकर्मा च 181, 2.
 अनुकोशवृशादित्तम् 182, 8.
 अन्न-विद्या-मधु-स्त्रीणाम् 183, 3.
 अपत्याविजयैश्च 182, 13.
 अपराधाधमकृशम् 181, 8.

- अपापरोगी 'धर्मात्मा' 181, 1.
 अर्थानामुदिते पात्रे 179, 13.
 अवस्था-देश-कालानाम् 181, 12.
 अश्वमेध-राजसूय-164, 6.
 असत्कृतो हिराशब्ध 235, 15.
 आक्रोशानर्थभ्रंसानाम् 180, 13.
 आ शौचान्तं मृजेच्छिभ्रम् 226, 18.
 आहतामन्यशौचाथम् 228, 9.
 इच्छासंज्ञं तु यद्दानम् 182, 14.
 इष्टं दत्तमपीतं वा 183, 11.
 उच्छिष्टभागदेयेभ्यः 430, 15.
 उपानत्-प्रेथ्य-यानानि 183, 7.
 उष्णीषी वाऽपि नाऽऽचामेत् 247, 8.
 कालापेक्षं क्रियापेक्षम् 182, 15.
 केवलं त्यागबुद्ध्या यत् 180, 14.
 गुदं हस्तं च निर्मुञ्ज्यात् 226, 19.
 ग्रामबाह्यान्तरालस्थाम् 228, 8.
 चतुःप्रकारं त्रिविधम् 179, 16.
 तच्च सूक्ष्मलक्षणेण 182, 6.
 तज्जोत्तमानि चत्वारि 183, 1.
 तथ च ग्रामहस्तेन 228, 12.
 तदर्थदानमित्याहुः 180, 6.
 तदाऽऽज्ञात्मिकमित्याहुः 182, 12.
 तस्मादात्मकतं पुण्यम् 183, 13.
 त्रिधा नैमित्तिकं प्रोक्तम् 182, 16.
 त्रिशुक्लः कृशवृत्तिश्च 181, 3.
 दन्तलम्बमसंहार्यम् 243, 4.
 दाता प्रतिग्रहीता च 180, 15.
 दानमित्यभिनिर्दिष्टम् 179, 14.
 दानं नैमित्तिकं ज्ञेयम् 194, 13.
 दानानि मध्यमानीति 183, 6.
 दानान्युत्तमदानानि 183, 4.
 दानाहीं देश-कालौ तौ 181, 11.
 दीप-काष्ठ-फलादीनि 193, 8.
 दीयते वाऽपकर्तृभ्यो 180, 14.
 दुष्फलं निष्फलं हीनम् 181, 14.
 दृष्टा प्रियाणि भुत्वा वा 180, 11.
 देश-कालौ च दान्यनाम् 180, 16.
 द्विहेतु षडधिष्ठानम् 179, 15.
 धर्ममर्थं च कामं च 180, 1.
 धर्मविद्वत्तिष्ठं हस्तम् 228, 11.
 ध्रुवमाजस्रिकं काम्यम् 182, 9.
 न तत्र बहुशः कुर्यात् 243, 5.
 ननु नेजकधौतेन 264, 11.
 नाल्पत्वं वा बहुत्वं वा 179, 17.
 नास्तिक-स्तेन-हिंसेभ्यः 181, 15.
 परबाधाकरं दानम् 182, 4.
 पात्रेभ्यो दीयते नित्यम् 180, 3.
 पितरस्तर्पितास्तेन 355, 2.
 पितृन् सन्तर्पयेत् कृष्णैः 355, 5.
 पिशुन-भ्रूणहन्तृभ्याम् 182, 2.
 प्रदीयते च यद्दानम् 180, 10.
 प्रपा-ऽऽराम-तडागादि 182, 11.
 प्रमाणं शौचसङ्ख्यायाम् 231, 13.
 प्रयोजनमुपेत्यैव 180, 5.
 बहुत्वादर्थजातानाम् 183, 9.
 भवेच्चाऽऽशौचमत्यर्थम् 243, 6.
 भुक्त्वाऽऽचामेद्योक्तेन 431, 4.

भुक्त्वोच्छिष्टं समादाय 430, 14.
 भोजने दन्तलभानि 243, 3.
 महदप्यफलं दानम् 182, 3.
 यथोक्तमपि चेदत्तम् 182, 5.
 यच्च हर्लभं द्रव्यम् 181, 10.
 यः शूद्रान् पतितांश्चापि 176, 4.
 याजितो वा पुनस्ताभ्याम् 176, 5.
 यावत्तु शुद्धिं मन्येत 231, 12.
 युक्ताङ्गैः सकलैः षड्भिर्युक्तैः 182, 7.
 राहुदर्शन-संक्रान्ति- 194, 12.
 रोमसंस्थान् तिलान् कृत्वा 355, 1.
 बल्मीकोपरि तोयान्त- 228, 7.
 विष्णुत्रयमाचरोन्नित्यम् 224, 4.
 विन्धादाच्छादनं वासः 183, 5.
 विमुक्तो योनिदोषेभ्यः 181, 4.
 वैदिको दानमार्गोऽयम् 182, 10.
 शुक्लेस्तु तर्पयेद्देवान् 355, 4.
 शूद्रधर्मस्त्रिवर्णशुभ्रूषा 481, 1.
 शोधयेन्मुख-हस्तौ च 431, 5.
 शौचशुद्धिर्महाप्रीतिः 181, 6.
 श्रद्धाभक्ती च दानानाम् 179, 18.
 श्लाघा-ऽनुशोचनाभ्यां वा 183, 12.
 षड्विपाकयुगुद्दिष्टम् 182, 1.
 स्मृतिश्चानसूया च 181, 7.
 सदैवोदङ्मुखः प्रातः 223, 13.
 संसदि व्रीडया तुल्ये- 180, 9.
 सोपानको जलस्थो वा 247, 7.
 स्त्री-पान-मृगया-ऽक्षाणाम् 180, 7.
 स्वयंप्रीतेन कर्तव्याः 264, 10.

स्वल्पं वा विमलं वाऽपि 181, 9.
 हर्षदानमिति प्राहुः 180, 12.
 हीमं वाऽपि भवेच्छ्रेष्ठम् 181, 13.
 ३९. *धर्मसंप्रमाणकाः—
 अभिर्हात्रहवण्याश्च 135, 5.
 अयोनौ संप्रहे कृत्ते 136, 3.
 अस्थिसञ्चयनाद्भुवम् 136, 4.
 आततायिद्विजाभ्याणाम् 134, 8.
 आपद्धृत्तिर्द्विजाभ्याणाम् 136, 10.
 एतानि लोकगुण्यर्थम् 137, 9.
 कन्यानामसवर्णानाम् 134, 7.
 गोतृप्रमात्रे पयसि 137, 6.
 दत्तौरसेतरेषां तु 136, 1.
 द्विजस्याब्धौ तु नौयातुः 135, 1.
 नर्बोदके दशाहं च 137, 3.
 निवर्तितानि कर्माणि 137, 10.
 पिता-पुत्रविरोधेषु 137, 7.
 प्रजार्थं तु द्विजाभ्याणाम् 136, 11.
 प्रायश्चित्तविधानं च 135, 2.
 बलात्कारादिदुष्टस्त्री- 137, 1.
 बालिका-ऽक्षतयोन्योश्च 134, 6.
 ब्राह्मणादिषु शूद्रस्य 137, 4.
 ब्राह्मणानां प्रवृत्तित्वम् 136, 12.
 भृग्वभिपतनैश्चैव 137, 5.
 भोज्याचता गृहस्थस्य 136, 8.
 महाप्रस्थानगमनम् 135, 3.

*This is not a title of a particular work. The quotations are generally taken from different Purāṇas.

यतेस्तु सर्ववर्णेषु 137, 2.
 यत्र सीयंगृहत्वं च 137, 8.
 वरातिथिपितृभ्यश्च 135, 10.
 वानप्रस्थाश्रमस्यापि 135, 6.
 विधवार्या प्रजोत्पत्तौ 134, 5.
 वृत्त-स्वाध्यायसौप्तिकम् 135, 7.
 शामित्रं चैव विप्रणाम् 136, 5.
 शिष्यस्य गुरुदारेषु 136, 9.
 शूद्रेषु दास-गोपाल- 136, 7.
 षड्भर्तानां शिषेणात्र- 136, 6.
 सत्तदीक्षा च सर्वेषाम् 135, 2.
 क्षमयश्चार्पि साधूनाम् 137, 11.
 सवर्णान्याङ्गनादुष्टौ 136, 2.
 संसर्गदोषस्तेनाद्यैः 135, 9.
 सौत्रामण्यामपि सुरा- 135, 1.

४०. नन्दिकेश्वरः—

एकाहमर्चयेद्विष्णुम् 376, 2.
 तस्याश्रमेषां दधिकम् 376, 4.
 यः प्रदद्याद् गवां लक्षम् 396, 1.
 सकृत्पूजयते यस्तु 376, 3.

४१. नारदः—

अश्रद्धां यस्तु कर्तव्यो 155, 14.
 अयने विषुत्ते चैव 155, 13.
 अंशाख्ये क्लेषु चान्येषु 446, 7.
 ऋग्यजुः-सामभिर्दग्धो 154, 12.
 एतानि सततं पश्येत् 321, 6.
 एवं धनाश्रमाः सर्वे 201, 10.
 काकिण्यादिस्त्वर्थदण्डः 447, 15.

चन्द्र-सूर्यग्रहे चैव 438, 7.
 तं तं दृष्ट्वा स्वतो मार्गात् 446, 6.
 नैतयोरन्तरं किञ्चित् 201, 6.
 पुस्तकप्रत्ययाधीतम् 154, 3.
 प्रदक्षिणं च कुर्वीत 321, 7.
 प्रसमीक्ष्याऽऽत्मना राजा 446, 8.
 ब्राह्मणश्चैव राजा च 201, 5.
 भ्राजते न सभामध्ये 154, 4.
 यथाग्नौ संस्थितं त्रैव 201, 9.
 यो यो वर्णोऽपहीयेत 446, 5.
 लोकेऽस्मिन् मङ्गलान्यदौ 321, 4.
 शारीरार्थदण्डश्च 447, 13.
 शारीरस्ताडनादिस्तु 447, 14.
 शुचीनामशुचीनां च 201, 7.
 श्रेयान् परिग्रहो राज्ञां 201, 4.
 सङ्क्रान्त्यामुपवासं च 438, 6.
 समुद्रे समतां याति 201, 8.
 हस्तहीनस्तु योऽधीते 154, 11.
 हिरण्यं सर्पिरादित्यः 321, 5.

४२. नारायणः—

आपः पुनन्तु मन्त्रेण 297, 10.
 एतज्जपेद्दुर्ध्वबाहुः 297, 13.
 कुर्वन् दिशो नमस्कुर्वान् 298, 17.
 गायत्र्या तु यथाशक्ति 297, 14.
 तच्चक्षुर्देव इति च 297, 12.
 प्रक्षिप्य चाञ्जलिं सम्यक् 297, 11.
 प्रक्षिप्य स्रुमिदं श्रौ 379, 7.
 वारुणीभिस्तथाऽऽदित्यम् 298, 16.
 सभार्यस्तु शुचिः स्नातो 379, 6.

४३. नृसिंहपुराणम्—

- अकल्पितानादुद्धृत्य 407, 2.
 अकृतं वैश्वदेवे तु 408, 7.
 अवश्यमेव दातव्यम् 408, 8.
 उद्धृत्य वैश्वदेवाक्षम् 408, 9.
 जलदेवानामस्कृत्य 364, 13.
 त्रयाणां जपयज्ञानाम् 304, 1.
 त्रिविधो जपयज्ञः स्यात् 303, 16.
 देवान् देवगणांश्चापि 261, 10.
 पितृन् पितृगणांश्चापि 261, 11.
 पौरुषेण तु सुक्तेन 364, 14. 378, 8.
 भिक्षां च भिक्षवे दद्याद् 407, 1.
 वाचिकश्च उपांशुश्च 303, 17.
 वैश्वदेवं ततः कुर्यात् 388, 9.
 स्येन तीर्थेन देवादीन् 261, 9.

४४. नृसिंहोत्तरतापिनी-

योपनिषद्—

- तस्मादात्मन एव 107, 5.
 सैषा चित्रा 107, 2.

४५. पद्मपुराणम्—

- चण्डालादीन् जपे होमे 239, 9.

४६. पराशरः—

- तेषां निन्दा 21, 10.

४७. परिशिष्टम्—

- उत्तानेन तु हस्तेन 382, 12.
 संहताञ्जलिपाणिस्तु 382, 13.

* These lines, coming under the head, Purāṇam, appear in Nṛsiṃh-purāṇam and Laghubhārta Smṛiti.

४८. पाणिनिः—

- पत्यन्तपुरोहिदिताभ्यः 450, 16.
 स्वतन्त्रः कर्ता 114, 8.

४९. पातञ्जलयोगसूत्राणि—

- क्षिप्तं मूढम् 42, 7.
 तत्सन्निधौ वैरत्यागः 72, 1.

५०. पारस्कः—

- ब्रह्मणे प्रजापतये 381, 8.
 वैश्वदेवादक्षात् 381, 7.

५१. पितामहः—

- गन्धलेपक्षयकरम् 231, 17.
 न. यादुपनीयन्ते 231, 16.
 पितृणां तर्पणे पात्रम् 354, 2.
 हेम-रूप्यमयं पात्रम् 354, 1.

५२.† पितृगाथाः—

- अपि नः स कुले भूयात् 363, 11.
 नदीषु बहुतोयासु 363, 12.

५३. पुराणम्—

- अध्वानं प्रतिपन्नस्य 411, 19.
 अपरैरश्रुतः किञ्चित् 304, 7.
 अभावे बीजिनो माता 333, 4.
 अशित्वा तु परे लोके 409, 4.
 अद्भुत्वाग्निमतन्मर्त्यं 409, 3.

The quotations given under this heading are anonymous in the text, but they appear in a work of this name.

† Under this name there appear several verses in various Purāṇas and Smṛitis.

‡ The quotations given under this common name may be found in various Purāṇas.

कुशपूतं भवेत्स्नातम् 254, 12.
 कुशेन चोद्धृतं तोयम् 254, 13.
 क्रियाङ्गं तत्समुद्दिष्टम् 284, 2.
 तयोरपि पिता श्रेयान् 333, 3.
 त्रिः पिबेद्दक्षिणेनापः 237, 10.
 देधतांश्च पितृभ्येव 362, 10.
 देवादीनामृणीभूत्वा 362, 11.
 द्वौ गुरुः पुरुषस्येह 333, 1.
 धरा गुरुतरा तावत् 333, 2.
 धर्मक्रियां कर्तुमनाः 284, 1.
 नमस्कृत्वा ऽऽयं विष्णुम् 441, 16.
 पक्ष्णोरुभयो राजन् 355, 14.
 भुञ्जतो मृत्युरायुष्यम् 427, 9.
 मन्त्रमुच्चारयेद्वाचा 304, 5.
 यत्कलं सोमयागेन 413, 11.
 यदुच्चनीचोच्चरितैः 304, 4.
 रात्रिस्तूर्तजपेत् स्मृत्वा 441, 15.
 वित्त-पुत्र-कलत्रार्थी 355, 15.
 ध्याधितस्यार्थहीमस्य 411, 18.
 शूनैरुच्चारयेन्मन्त्रम् 304, 6.
 सम्पक् पञ्चमहायज्ञैः 413, 12.
 क्षात्र्यतो वरुणः शक्तिम् 427, 8.
 ५३. पुराणसारः—
 अभिगम्य तु यज्ञानम् 124, 14.
 एवं यः सर्वभूतघ्ने 362, 7.
 कनिष्ठास्तं नमस्येरन् 335, 4.
 कृते क्षुत्पात्सकलः 82, 1.
 गत्वा यद्दीयते दानम् 124, 12.
 ज्येष्ठो भ्राता पितृममः 335, 3.

तमेव चोपजीवेरन् 335, 5.
 त्रिपादहीनस्तिष्ये तु 82, 5.
 त्रेतायां द्वापरेऽर्धेन 82, 4.
 धर्मः पादविहीनस्तु 82, 3.
 धाता प्रजापतिः शक्रः 405, 15.
 प्रविश्यातिथिमेते वै 405, 16.
 भवन्ति हि वृथा तस्य 250, 16.
 यः क्रियाः कुरुते मोहात् 250, 15.
 विद्यति सागरस्यन्तः 124, 15.
 वृषः प्रतिष्ठितो धर्मः 82, 2.
 शैवं च वैष्णवं शाक्तम् 365, 16.
 स गच्छेत् परमं स्थानम् 362, 8.
 सहस्रगुणमाह्वय 124, 13.
 स्कान्दं च शक्तिमार्गस्य 365, 17.

५५. पुलस्त्यः—

अन्यत्र दधि-सक्त्वा-ऽऽज्य- 422,
 17.
 अमावास्यां नदीस्नानम् 280, 4.
 अहतं तद्विजानीयात् 264, 15.
 ईषद्भौतं नयं श्वेतम् 264, 14.
 एतद्विदित्वा यः सन्ध्याम् 302, 13.
 चैत्रकृष्णवर्तुर्दद्यात् 250, 5.
 दौर्धमायुः स विन्देत् 302, 14.
 न त्यजेत् सूतके वा ऽपि 302, 9.
 न प्रेतत्वमवाप्नोति 280, 6.
 पृथ्वे च जन्मनक्षत्रे 280, 3.
 भोजनं तु न निःशेषम् 422, 16.
 मनसोच्चारयेन् मन्त्रान् 302, 12.
 शिर्वगङ्गेति पित्रेयम् 280, 8.

शिवलिङ्गसमीपे तु 280, 7.
सन्ध्यामिष्टिं च होमं च 302, 8.
सूतके मृतके चैव 302, 11.

५६. पैठीनसिः—

अजैकपादुर्ध्वध्वजः 357, 17.
अपसव्यं ततः कृत्वा 357, 8.
अर्चिर्विवस्वान्त्वष्टा च 358, 4.
इति धर्मप्रणेतारः 108, 10.
इन्द्रो धाता भगः पूषा 358, 3.
उदकं यच्च पक्वान्नम् 428, 7.
एक एव तु यो भुङ्क्ते 416, 5.
एते च दिव्याः पितरः 358, 6.
एते रुद्राः समाख्याताः 358, 2.
एते वै द्वादशाऽऽदित्याः 358, 5.
कृष्णे भवाः 157, 3.
चत्वारि तस्य वर्धन्ते 416, 6.
जाबालिर्जमदग्निश्च 108, 9.
तिलोदकाञ्जलीस्त्रीस्त्रीन् 358, 10.
तेषां मन्वद्भिरो-व्यास- 108, 3.
दर्व्या देयं घृतान्नं तु 428, 6.
ध्रुवो धर्मश्च सोमश्च 357, 15.
पितॄन् दिव्यानदिव्याश्च 357, 9.
प्रचेता नारदो योगी 108, 6.
प्रत्युषश्च प्रभातश्च 357, 16.
भाजने भोजने चैव 416, 4.
मार्गशीर्षप्रभृतयः 157, 3.
लवणं व्यञ्जनं चैव 428, 4.
लेहं पेयं च विविधम् 428, 5.
वसिष्ठ-दक्ष-संवर्त- 108, 4.

विष्णुपस्तम्बःहातीताः 108, 5.
सत्यव्रतो भरद्वाजो 108, 8.
स, धृणहा सुरापथ, 428, 8.
सावित्रश्च जयन्तश्च 358, 1.
सुमन्तुः कश्यपो बभ्रुः 108, 7.
सौवर्णे राजते ताम्रे 416, 3.
स्वनाम-गोत्रग्रहणम् 358, 9.
हरश्च बहुरूपश्च

५७. प्रचेताः—

अनुष्णाभिरफेनाभिः 236, 15.
अन्यद्रव्ययुतं तैलम् 283, 9.
तम्बूलाभ्यञ्जनं चैव 416, 14.
देववत् पूजनीयोऽसौ 398, 2.
नाऽऽवाहनामौकरणम् 388, 9.
यतिश्च ब्रह्मचारी च 416, 15.
यः सायं वैश्वदेवान्ते 398, 1.
वस्त्रान्तरितसंस्पर्शः 279, 1.
साक्षात्स्पर्शो तु यत्प्रोक्तम् 279, 2.
सार्धं गन्धतैलं च 283, 8.
हवताभिरशब्दाभिः 236, 16.

५८. प्रज्ञापतिः—

अकृत्वा ज्ययतमं यज्ञम् 168, 10.
अधमा प्रोच्यते नित्यम् 309, 15.
अर्धर्चान्ते ज्य वा कुर्यात् 293, 10.
अष्टोत्तरशता माला 309, 13.
अष्टोत्तरशतं कुर्यात् 309, 11.
आदध्याह्निर्धनो ज्यमिमे 161, 11.
उपवासेन शुद्धयेत् 168, 11.
ऋगन्ते मार्जन् कुर्यात् 293, 9.

कृतं चेति पठित्वा तु 295, 15.
 एकस्मिन् कृच्छ्रपादेन 168, 4.
 क्षापायं धातुरेकं वा 264, 8.
 क्षौमं वासः प्रशंसन्ति 264, 7.
 चतुःपञ्चाशिका या तु 309, 14.
 जलपूर्णं तथा हस्तम् 295, 14.
 दर्शं च पूर्णमासं च 168, 3.
 प्रदोषे न त्वङ्गीयते 157, 14.
 प्राजापत्येन शुद्धयेत् 168, 6.
 धृष्टी च द्वादशी चैव 157, 13.
 सन्ध्योपासनहानौ तु 168, 7.
 सप्तविंशतिका कार्या 309, 12.
 समान्ते सीमयज्ञानाम् 168, 9.
 सर्वसंस्थाधिकारः स्यात् 161, 10.
 हविर्यज्ञेष्वशक्तस्य 168, 5.
 क्षौमं च नैत्यकं शुद्धयेत् 168, 8.

५९. प्रपञ्चसारः—

अस्य तु वेदादित्वात् 39, 8.

६०. प्रश्नोपनिषद्—

स ईक्षां चक्रे 103, 16.

६१. बृहदारण्यकोपनिषद्—

अथ हैनं विदग्धः 205, 10.

कतम आदित्या इति 206, 14.

कतम इन्द्रः 206, 18.

कतमे ते त्रयो देवा इति 206, 24.

कतमे ते रुद्रा इति 206, 11.

कतमे ते वसव इति 206, 7.

कतमे षडिति 208, 31.

तच्छ्रेयोरूपम् 111, 9.

तदाद्वयदयमेकः 207, 4.

तदेतत् क्षत्रस्य 111, 10.

तदेदं तर्हि 100, 10.

तन्नाम-रूपाभ्याम् 100, 10.

तस्माद्धर्मात् 111, 41.

नैव केनच नाप्यम् 203, 21.

प्राणस्य वै सम्राट्कोमाय 174, 17.

यथाकारी 140, 12.

यदि ह वा अप्येवम् 203, 11.

वायुर्वै गौतम 208, 10.

विज्ञानमानन्दम् 102, 7.

स नैव व्यभवत् 111, 8.

स होवाच महिमान एवैषाम् 206, 2.

६२. बृहन्मनुः—

न प्रातर्ग प्रदोषश्च 291, 6.

मुख्यकल्पो ऽनुकल्पश्च 291, 7.

६३. बृहस्पतिः—

अकार्पण्याऽस्पृहत्वं च 34, 8.

अग्निना भस्मना चैव 429, 10.

अधीत्य चतुरो वेदान् 153, 11.

अधोवायुसमुत्सर्गे 240, 1.

अनाहिताग्नेर्ब्रह्माख्यम् 318, 17.

अप्येकपङ्क्त्या नाभूयात् 429, 5.

अवध्यान् ब्राह्मणानाहुः 456, 7.

आगभिष्यति यत्पात्रम् 185, 6.

इज्या-ऽध्यायन-दाने च 85, 4.

एकपङ्क्त्युपविष्टानाम् 429, 7.

* The author does not mention these names.

एवं दण्डादिकैर्युक्तैश्च 153, 7.
 कुटुम्बभक्तवसनात् 190, 2.
 कुसीदे-कृषि-वाणिज्य- 85, 7.
 कृते प्रदीयते गत्वा 124, 4.
 कृते-भूत्सकसो धर्मः 82, 7.
 को हि जानाति किं कस्य 429, 6.
 गुरुन् पुरोहितान् विप्रान् 455, 7.
 जगत्सर्वमिदं हन्यात् 456, 5.
 जप्त्वा ऽथ प्रणवा वा ऽपि 350, 17.
 नपो धर्मः कृतयुगे 121, 14.
 तस्मात् तस्य वधं राजा 456, 6.
 तिलानां तु तदर्धं स्यात् 316, 8.
 तिष्ठे ऽधर्मस्त्रिभिः पादैः 82, 10.
 125, 5.

दया क्षमाऽनसूया च 84, 7.
 दानं प्रतिग्रहश्चापि 85, 3.
 • द्वापरे च प्रार्थयतः 124, 5.
 द्वापरे चाध्वरः प्रोक्तः 121, 15.
 द्वारेण चैव मार्गेण 429, 11.
 धर्मा-ऽधर्मौ समौ भूत्वा 82, 9.
 नं पादौ न शिरो वास्तिम् 424, 10.
 नर्य, भस्माऽग्निहोत्रान्ते 318, 16.
 न स्पृशेद्द्वामहस्तेन 424, 9.
 निमित्तेष्वेषु सर्वेषु 240, 3.
 पादः प्रविष्टो ऽधर्मस्य 82, 8.
 पुरुषे दोषविभवम् 455, 6.
 प्रस्थधान्वं चतुःपाष्टिः 316, 7.
 बध्वाऽऽसनं नियम्यासून् 291, 14.
 ब्रह्मयज्ञप्रतिद्वयर्थम् 850, 16.

ब्राह्मणो, वेदमूलः स्यात् 153, 9.
 महापराधयुक्तांश्च 455, 9.
 बार्जार-मूषकस्पर्शौ 240, 2.
 युयुक्षिषेण कुशरम् 456, 8.
 राष्ट्रदिनं बहिः कुर्यात् 456, 9.
 वाग्निध्वजः स्वकं चैव 455, 5.
 विवादिनो नराधान्यान् 455, 8.
 वेदमध्यापयेत् पश्चात् 153, 8.
 वैश्वदेवाऽवसाने वा 314, 2.
 शस्त्रास्त्रधारणं सेवां 85, 5.
 शूद्रकर्म तथा मन्त्रः 85, 9.
 शौचं ब्राह्मणशुश्रूषा 85, 8.
 स चाऽर्वाक् तर्पणात् कार्यः 344, 1.
 सदाचारस्य च तथा 153, 10.
 सन्निमीलितदृष्ट् मौनी 291, 15.
 सर्वेषां तत्समं तावत् 429, 8.
 स्मृतिहीना न शोभन्ते 153, 12.
 स्वाध्यायोऽध्यापनं चापि 85, 2.
 स्वाध्यायो यजनं दानम् 85, 6.

६४. बौधायनः—

अग्रतो विष्णवे कल्पयामि 373, 9.
 अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषः 421, 3.
 अत्र कूर्चं ददाति 373, 7.
 अत्र स्थानानि कल्पयति 373, 8.
 अत्राधःस्थानानि 369, 15.
 अथ कुशवादिनामभिः 370, 21.
 अथ दक्षिणतः 352, 7.
 अथ व्याहृतिभिर्निर्मूल्यं व्यपोष्यो-
 त्तरतश्चरीत्याय 374, 1.

अथ व्याहृतिभिर्निर्तात्यं व्यपोहो-
त्तरतो विष्वक्सेनाय 370, 6.

अथ सावित्र्या 370, 2.

अथ स्वागतेनाभिनन्दति स्वागत-
मधुना 369, 11.

अथ स्वागतेनाभिनन्दति स्वागत-
मनुस्वागतम् 373, 4.

अथातः सन्ध्योपासनविधिम् 294,
12.

अथातो महादेवस्याहरहः 372, 17.

अथातो महापुरुषस्य 369, 4.

अथाष्टभिर्नामधेयैः 374, 18.

अथैनं स्नापयति 370, 8.

अथैनं स्नापयित्वा 374, 2.

अनेन हविषा तृप्तः 375, 14.

अपाने व्याने 420, 4.

अमृतापिधानमसि 420, 13.

अष्टम्यां च चतुर्दश्याम् 283, 1.

अस्कन्दयस्तन्मनाथ 420, 11.

अहरहर्ब्राह्मणेभ्योऽन्नम् 392, 1.
400, 6.

अग्रे तृणं गोमयम् 241, 8.

आसायं कर्मणः प्रातः 314, 15.

आसीनः प्राङ्मुखोऽश्रियात् 420,
10.

आहुतिर्नातिपथेत 314, 16.

इति कल्पयित्वा अथ सावित्र्या
373, 14.

ईशः सर्वस्य जगत् 421, 4.

ईशानं त्वां भुवनानाम् 374, 13.

उत्तरत उमायै कल्पयामि 373,
12.

उत्तरतः श्रियै 370, 1.

उद्दीप्यस्व इति 374, 15.

उद्भासनकाले ॐभूः पुरुषम् 371,
8.

उद्भासनकाले ॐभूः महादेवम् 375,
11.

उपपत्तिमवस्थां च 230, 6.

उपलिप्ते समे स्थाने 414, 17.

उभयतः प्रणवाम् 303, 14.

ऋतमिति स्नाप्स्यन् त्रीणि 370, 5.

ऋतमिति स्नाप्स्यन् त्वरित-373, 16.

ऋत्विक् श्वशुर-326, 14.

एवं पञ्चान्नेन 420, 5.

ॐभूः पुरुषम् 369, 8.

ॐभूर्भुवः सुवरोम् 371, 7.

कर्तव्यमनुपूर्येण 415, 1.

कर्तव्यमुत्तरं वासः 265, 1.

केशवं नारायणम् 370, 11.

गृहं निषिद्धं सतिलम् 356, 1.

ग्रस्तेषु तेषु नाऽऽचामेत् 242, 14.

चतुरस्रं त्रिकोणं वा 414, 18.

चरुदोषेणाष्टभिर्नामधेयैः 375, 5.

तद्विष्णोः परमम् 370, 16.

तस्मात्कुन्दैः फलैर्मूलैः 169, 3.

तस्य चाक्षमशित्वा 176, 1.

त्रिचितीर्थत्रिदोषेषु 356, 4.

निस्रस्तिन्नः क्रमाद्योज्याः 229, 9.

तीर्थं गत्वा प्रैयतः 294, 13.

दक्षिणतः स्कन्दाय कल्पयामि 373,
10.

दक्षिणतो ग्दायै 369, 16.

दन्तवहन्तुलमेषु 242, 13.

देवस्य त्वा स्तविनुः 374, 15.

देशं कालं तथा ऽऽत्मानम् 230, 5.

न जीवत्पितृकः कृष्णैः 355, 17.

न हसन 246, 9.

नाङ्गुलिभिः 246, 7.

नानिस्तुहितः 420, 13.

नाभेरधः संस्पर्शम् 306, 6.

नित्यं नित्यानि कुर्वीत 169, 4.

नीर्विं विसृज्य 241, 7.

न्यस्तमन्नम् 419, 14.

पञ्चानां महतामेषाम्

पञ्चापाने मृदो योज्याः 229, 8.

परतश्चक्राय 369, 16.

पश्चिमतः झूलाय 373, 11.

पश्चिमतः श्रीवत्साय 269, 17.

पादप्रक्षालनोच्छेपेण 246, 6.

पुनराचम्य 421, 1.

पुनः सन्दर्शनाय 375, 15.

प्रजापतिं मनसा 420, 7.

प्रणवेनार्घ्यम् 370, 6. 373, 17.

प्रतिमास्थानेषु 371, 13. 375, 15.

प्रयातु भगवानीशः 375, 13.

प्रयातु भगवान् महपुरुषः 371, 11.

प्रवासं गृह्यतो यस्य 888, 16.

प्राणानां मन्थिरासि 420, 15.

ब्रह्मप्रतिपादस्य वा 175, 12.

ब्रह्मणि म आत्मा 421, 7.

भगवते महापुरुषाय 369, 12.

भगवतो ज्यम् 369, 14.

भवं देवं तर्भयामि 374, 6.

भवाय देवाय नमः 374, 19.

भवाय देवाय स्वाहेत्यादिभिः 375,
5.

भोजने हवने दाने 241, 17.

महत्स्वस्त्ययनम् 371, 14. 375,
17.

यथाकथंचिन्नित्यानि 119, 1.

यद्याचामेत् 246, 6.

यस्य नित्यानि लुप्तानि 169, 1.

येन केनापि कार्याणि 119, 2.

यो ब्रह्मचारी 50, 5.

वर्षमर्थं तदर्थं च 356, 3.

वामतो वनमालायै 369, 17.

विषद्यापि न स स्वर्गम् 169, 2.

विवाहे, चोपनयने 356, 2.

विष्णवे नमः 375, 1.

व्रीहीणां वा यवानां वा 316, 10.

शङ्खाय नमः 371, 1.

शिरोऽभ्यङ्गं मर्जयेत् 283, 2.

शिष्टाः खलु 144, 9.

शुचौ संद्वीते 419, 12.

श्रद्धायां प्राणे 421, 5.

श्रोत्रे संस्पृष्ट 328, 3.

सु. गर्दभम् 50, 6.
 सपञ्चित्रेण पाणिना 295, 1.
 सप्तम्यां रविवारे च 355, 18.
 सर्वकृतयाजिनाम् 421, 9.
 सर्वभक्ष्यापूप- 420, 12.
 सर्ववश्यकविसानेषु 419, 11.
 सह पुष्पोदकेन महादेवम् 372, 20.
 सह पुष्पोदकेन महापुरुषम् 369, 7.
 सहस्राणि सहस्रशः 374, 13.
 सहस्राणि सहस्रश इत्यनुवाकं 375, 8.
 सवित्र्या धूपम् 374, 15.
 ज्ञात्वा शुचिः 369, 5.
 ज्ञात्वा शुचौ देशे 372, 18.
 स्वाध्यायोत्सर्ग-दानेषु 265, 2.
 हविर्भक्षणकाले च 241, 18.
 हुताक्षानुमन्त्रणम् 421, 5.

६५. ब्रह्मपुराणम्—

अदत्तशाना जायन्ते 178, 14.
 अन्नं दृष्ट्वा प्रणम्याऽऽदौ 417, 12.
 अस्माकं नित्यमस्त्वेतत् 417, 13.
 कसेति सा परित्याज्या 130, 2.
 गोत्रान्मातुः सपिण्डात् 133, 9.
 ग्रासशेषं न चाभीयात् 424, 4.
 तत्र दोषो न चास्तीति 129, 18.
 दीर्घकालं ब्रह्मचर्यम् 183, 8.
 दृढयन्ते दुःखिभाः सर्वे 178, 13.
 न चर्मोपरि संस्थश्च 424, 3.
 न प्रसारितपादैस्तु 423, 18.

न बाहु-सक्थिसंस्थश्च 423, 19.
 नराश्वमेधौ मयं च 133, 10.
 न वेष्टितशिराश्चापि 424, 1.
 नार्जीर्णे भोजनं कुर्यात् 423, 13.
 नाऽऽर्द्रवासा नाऽऽर्द्रशिखाः 423, 17.
 नैकवस्त्रो दृष्टमध्यो 424, 2.
 परित्याज्या त्वया भूर्या 129, 17.
 प्रसक्ताङ्गुलिभिर्यच्च 423, 12.
 बहुश्रुताश्च धर्मज्ञाः 178, 12.
 बहूनां भुञ्जतां मध्ये 424, 6.
 यस्तु पाणितले भुङ्क्ते 423, 11.
 यः पात्रपूरणीं भिक्षाम् 410, 3.
 विमुक्तः सर्वपापेभ्यो 410, 4.
 वृथा न विसृजेदन्नम् 424, 7.
 शयनस्थो न भुञ्जीत 423, 16.
 शाक-मूल-फलेक्ष्णाम् 424, 5.
 श्मशानाभ्यन्तरस्थो वा 423, 15.
 सदाचाराः कुलीनाश्च 178, 11.
 सर्वलक्षणयुक्तापि 130, 1.
 स्वात्मानं तु घृते पत्रयेत् 321, 2.
 हस्त्यश्च-रथ-यानोष्टम् 423, 14.

६६. ब्रह्मा—

अहोम्बरे ऽथ सौवर्णे 294, 3.
 कृत्वा तु वामहस्ते वा 294, 4.
 धाराच्युतेन तोयेन 293, 14.
 नद्यां तीर्थे हरे वाऽपि 294, 2.
 पितरौ न भद्रांसन्ति 293, 15.

६७. ब्रह्माण्डपुराणम्—

अकृत्वा पादयोः शौचम् 247, 17.

अङ्गुष्ठः पुष्टिदः प्रोक्तः 266, 8.
 अनापद्यपि धर्मेण 201, 15.
 अनामिका ज्वदा नित्यम् 266, 9.
 उदङ्मुखो दिवा कुर्यात् 228, 15.
 उदरे दक्षिणे पार्श्वे 267, 8.
 उद्धृत्योदकमादाय 228, 14.
 एतैरङ्गुलिभेदैस्तु 266, 10.
 कण्ठं शिरो वा प्रावृत्य 247, 16.
 गृह्णन् प्रतिग्रहं विप्रे 201, 16.
 गृह्णीयाद्वाह्यणादेव 201, 17.
 चतुस्त्रि-व्यङ्ग्यैः पुण्ड्रम् 267, 5.
 तत्पार्श्वे बाहुमध्ये तु 297, 9.
 तर्पणं तु भवेत्तस्य 261, 2.
 त्रिविक्रमं कण्ठदेशे 267, 10.
 दशवर्षसहस्राणि 453, 11.
 दशाङ्गुलप्रमाणं तु 267, 2.
 द्वादशैतानि नामानि 267, 13.
 नवाङ्गुलं मध्यमं स्यात् 267, 3.
 नामान्युच्चार्य विधिना 267, 15.
 नित्यं नैमित्तिकं काम्यम् 261, 1.
 पद्मस्य मुकुलाकारम् 266, 12.
 पर्वताग्रे नदीतीरे 266, 4.
 पूजाकाले च होमे च 267, 14.
 प्रष्टुं च पद्मनाभं तु 267, 12.
 मत्स्य-कूर्माकृतिं वाऽपि 267, 1.
 माधवं हृदि विन्यस्य 267, 7.
 मृद एतास्तु सम्पाद्याः 266, 6.
 यदह्ना कुरुते धर्मम् 453, 10.
 वार्तिदीपाकृतिं वाऽपि 266, 11.

ललाटे केशवः विद्यात् 267, 6.
 श्यामं शान्तिकरं प्रोक्तम् 266, 7.
 श्रद्धया विमलं दत्तम् 201, 18.
 श्रीकरं पीतमित्याहुः 266, 7.
 श्रीधरं बाहुके वामे 267, 11.
 सप्त-षट्-पञ्चभिः पुण्ड्रम् 267, 4.

६८. * भगवद्गीता—

अदेशकाले यद्दानम् 184, 3.
 अनेन प्रसविष्यध्वम् 159, 11.
 अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञः 159, 19.
 अभिसन्धाय तु फलम् 160, 1.
 अभ्यख्या हुतं दत्तम् 205, 1.
 असत्कृतमवज्ञातम् 184, 4.
 असदित्युच्यते पार्थ 205, 2.
 इज्यते भरतश्रेष्ठ 160, 2.
 इष्टान् भोगान् हि वो देवाः 159, 14.
 कर्मण्येवाधिकारस्ते 61, 9.
 कर्माणि प्रविभक्तानि 86, 2.
 कृषि-गोरक्ष-वाणिज्यम् 86, 5.
 ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यम् 86, 4.

* The author has made the quotations given here under the name भगवान्. But all of them are found in भगवद्गीता, which is a portion of the sixth Book of the Mahābhārata. They therefore properly speaking ought to have a place under the name of the latter work. But the Bhagvat-gītā being wellknown and popular they are given here under that name.

तत्तद्वावगच्छ त्वम् 411, 4.
 तद्विद्धि प्रणिप्तातेन 44, 14.
 तैर्देवान्प्रदायैश्वरो 159, 15.
 दातव्यमिति यज्ञानम् 183, 16.
 दानमीश्वरभावश्च 86, 7.
 दीयते च परिक्रिष्टम् 184, 2.
 देवान् भावयतानेत 159, 12.
 देशे कलिं च पात्रे च 183, 17.
 परस्परं भावयन्तः 159, 13.
 परिचर्यात्मकं कर्म 86, 8.
 ब्राह्मण-क्षत्रिय-विशाम् 86, 1.
 भुञ्जते ते त्वघं पापाः 217, 2.
 मा कर्मफलहेतुर्भुः 61, 10.
 यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो 217, 1.
 यत्करोषि यद्भासि 62, 13.
 यत्तपस्यसि कौन्तेय 62, 14.
 यत्तु प्रत्युपकारार्थम् 184, 1.
 यद्यदाचरति श्रेष्ठः 43, 11.
 क्षयश्चिभूतिमस्तत्त्वम् 411, 3.
 यष्टव्यमेवेति मनः 159, 20.
 याँगस्य * कुरु कर्माणि 61, 7.
 विधिहीनमसृष्टानम् 160, 3.
 शमो दमस्तपः शौचम् 86, 3.
 शौर्यं तेजो धृतिर्दक्ष्यम् 86, 6.
 श्रद्धाविरहितं यज्ञम् 160, 4.
 सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा 159, 10.
 सिद्धयसिद्ध्योः समो भूत्वा 61, 8.

६९. भट्टाचार्यः—

वैदिकैः स्मर्यमाणत्वात् 12, 3.

सम्भाव्यवेदमूलत्वात् 12, 4.

७०. भरतौकितः—

जग्राह पाठ्यमृगवेदात् 17, 3.

यजुर्वेदादभिनयान् 18, 1.

७१. * भरद्वाजः—

अथापकृष्य विण्मूत्रम् 226, 9.

अमृतं तद्विदुर्देवाः 202, 4.

अयाचितोपपन्नेषु 202, 3.

आपः पुनन्तु मध्याह्ने 295, 7.

आपतं पर्वतः कृत्वा 237, 5.

उदस्तवासा उत्तिष्ठेत् 226, 10.

उपगम्य गुरुन् सर्वान् 322, 8.

कण्डूय पृष्ठतो गां तु 322, 7.

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन 265, 5.

तो गृह्णन्तु मया दत्तम् 262, 8.

माषमज्जनमात्रास्तु 237, 8.

मुक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठेन 237, 7.

यो के चास्मत् कुले जाताः 262, 7.

वस्त्रोदकमपेक्षन्ते 262, 4.

व्यतीपाते वैधृता च 193, 4.

संहताङ्गुलिना तोयम् 237, 6.

सायमभिश्च * मेत्युक्त्वा 295, 6.

सूतीनां वेदमूलत्वात् 317, 13.

होमं वैतानिर्हं कृत्वा 317, 12.

* The author quotes the fourth and the seventeenth line under the name भारद्वाजः.

† Though the author does not say from what work these lines are taken, it is possible they may be found in the text of Bharadvāja.

७२. *भविष्यपुराणम्—

अभिवादे कृते यस्तु 324, 16.
 आशीर्षं वा कुरुश्रेष्ठ 324, 17.
 दत्त्वाऽथ चित्रगुप्ताय 419, 3.
 प्रेतीनां नृपश्रेष्ठस्य 419, 5.
 भोजनात् किञ्चिदन्नायम् 419, 2.
 यत्र कचन संस्थानाम् 419, 4.

७३. भविष्योत्तरम्—

आर्तानामन्नदानं च 191, 7.
 कन्यां चैवानपत्यानाम् 191, 10.
 तत्तद्गुणवते देयम् 189, 14.
 तथा द्रव्यविशेषांश्च 191, 8.
 तथा प्रतिष्ठाहीनानाम् 191, 8.
 दरिद्राणां च बन्धूनाम् 186, 17.
 न केवलं ब्राह्मणानाम् 186, 15.
 भगिनी भगिनेयानाम् 186, 16.
 यद्यदिष्टं विशिष्टं च 189, 13.
 सुवर्णं याजकानां च 191, 9.

७४. भाट्टाः—

ताद्रूप्येण च धर्मत्वम् 87, 13.
 तेषामैन्द्रियकत्वेऽपि 87, 11.
 द्रव्य-क्रिया-गुणादीनाम् 87, 10.
 यत्नतः प्रतिषेध्या नः 114, 7.
 श्रेष्ठः साधनता ह्येषाम् 87, 12.

७५. भृगुः—

प्रस्तावेवास्तमानं तु 436, 17.
 तयोः परेष्वरुदये 436, 18. 437, 13.
 दुर्देशः प्रगतश्चैव 246, 4.
 नमस्तु दग्धवस्त्रः स्यात् 265, 8.
 नमो मलिनवस्त्रः स्यात् 265, 7.
 पीतं वैदस्यस्य शूद्रस्य 264, 5.
 ब्राह्मणस्य सितं बखम् 264, 4.
 मुक्त्वा शिखां वाऽप्याचामेत् 246, 2.
 विकच्छोऽनुत्तरीयश्च 265, 5.
 विभा, यज्ञोपवीतेन 246, 1.
 औले स्मार्तं तथा कर्म 265, 6.
 सोष्णीषो बद्धपर्यङ्कः 246, 3.

७६. मत्स्यपुराणम्—

अद्वैतं तद्विजानीयात् 388, 6.
 अन्नहीनो दहे ब्राह्मणम् 170, 2.
 अपराह्णे न मध्याह्णे 436, 9.
 अस्य वेदस्य सर्वज्ञः 113, 3.
 आत्मानं दक्षिणाहीनी 170, 3.
 आश्वयुक्शुक्लनवमी 155, 16.
 आषाढस्याथ दशमी 156, 2.
 आषाढादिचतुर्मासम् 281, 6.
 उत्थाय वाससी शुक्ले 262, 19.
 एवं ज्ञात्वा ततः पश्चात् 262, 12.
 कार्तिकी फाल्गुनी चैत्री 156, 4.
 गुरुमिं न सूर्यं च 320, 14.
 तृतीया चैत्रमासस्य 155, 17.
 ते तृप्तिमखिलान् यान्तु 360, 12.
 दत्तवानखिलान् वेशान् 113, 6.

* The author does not use the name भविष्यपुराणम् throughout. The first two lines are found under the name भविष्यपुराणम्. However both the titles are given to one and the same work.

दत्त्वा चाक्षय्यमाप्नोति 194, 19.
 नित्यं तावत्प्रवक्ष्यामि 388, 5.
 यथागादिषु तीर्थेषु 194, 18.
 फाल्गुनस्य त्वमांतास्या 156, 1.
 ब्रह्मणा चोदितो विष्णुः 113, 7.
 ब्रह्माणं मुनयः पूर्वम् 113, 5.
 भुञ्जीत सङ्गवे चेत्स्यात् 436, 10.
 मन्वन्तरादयश्चैते 156, 5.
 ये बान्धवाऽबान्धवा वा 360, 12.
 सेचनां चन्दनं हेम 320, 13.
 विप्रेभ्यो भोजनं दत्त्वा 281, 7.
 त्र्यञ्जकः केवलं विप्राः 113, 4.
 श्रावणस्याष्टमी कृष्णा 156, 3.
 स वैष्णवपदं याति 281, 8.
 हिताय सर्वभूतानाम् 113, 8.

. ७७. मनुः—

अकारश्चास्यं नाम्नोऽन्ते 324, 2.
 *अकुर्वन् विहितं कर्म 54, 4.
 अर्द्धशेनं शरीरस्य 338, 15.
 अश्विचित् कपिला सञ्जी 321, 10.
 अयं चतुर्गुणीकृत्य 392, 13.
 अधं स केवलं भुङ्क्ते 217, 10.
 अर्जं हि बालमित्याहुः 334, 12.
 अज्ञो भवति वै बालः 334, 11.
 अत ऊर्ध्वं त्रयो ज्येष्ठे 53, 8.
 अतिथिं पूजयेद्यस्तु 216, 10.
 अदण्ड्यान् दण्डयन् राजा 16, 3.
 129, 6. 447, 9.
 अधर्मादपि षड्भागो 453, 15.

अधिकं वाऽपि त्रिद्यौत 169, 8.
 अधीष्व भो इति ब्रूयात् 147, 11.
 अधोदृष्टिनैष्कृतिकः 188, 1.
 अध्यापनं चाध्ययनम् 145, 15.
 अध्यापनं याजनं च 339, 4.
 अध्यापयामास पितृन् 334, 7.
 अध्येष्यमाणं तु गुरुः 147, 10.
 अनडुहः श्रियं जुष्टाम् 190, 16.
 अनन्तरमरिं विद्यात् 469, 14.
 अनर्हते यद्दाति 189, 9.
 अनादृताश्च यस्यैते 377, 13.
 *अनिर्घाहाद्येन्द्रियाणाम् 54, 5.
 अनित्यो विजयो यस्मात् 460, 2.
 अनिटं चाप्यनिष्टेषु 448, 18.
 अनुबन्धं परीक्ष्याथ 454, 18.
 अनुरागापरागौ च 469, 13.
 अन्तःपुरप्रचारं च 469, 11.
 अन्येष्वपि तु कालेषु 457, 19.
 अपां समीपे नियतो 344, 17.
 अप्यकार्यशतं कृत्वा 198, 15.
 अप्रणोद्यो जतिथिः सायम् 397, 12.
 अब्रुवन् विब्रुवन् वाऽपि 16, 6.
 अभिवादात् परं विप्रो 302, 16.
 अन्धञ्जनं स्नापनं च 328, 15.
 अमाययैव वर्तेत 472, 13.
 अमुक्तयोरस्तगयोः 485, 4.
 अयशो महदाप्नोति 16, 4. 129, 7. 447, 10.

* The lines 2nd and 25th under the heading of Manu do not appear in any of the procured copies of this Smṛiti.

अरण्ये निःशलाकेष्वा 467, 6.
 अराजके हि लोके अस्मिन् 447, 18.
 अरेरन्तरं मित्रम् 469, 15.
 अर्हत्तमाय विप्राय 396, 2.
 अर्हन्तर्ह्याप्सि ज्ञानात् 189, 10.
 अलङ्कृतश्च सम्पद्येत् 471, 16.
 अलब्धं चैवं लिप्स्येत् 472, 11.
 अलाभे देवखातानाम् 286, 8.
 अल्पं वा बहु वा यस्य 331, 9.
 अविद्वान् प्रतिगृह्णानो 203, 3.
 अशक्तुर्वन्तु शुभ्रभूषाम् 485, 15.
 असवर्णास्तु सम्पूज्याः 328, 8.
 असौ नामाहमस्मीति 322, 17.
 अस्वस्थः सर्वमेवैतत् 472, 6.
 आकालिकमनध्यायम् 158, 8.
 आक्राशमिव पङ्केन 198, 18.
 आचम्य प्रयतो नित्यम् 303, 2.
 'आजीवनार्थं धर्मस्तु 454, 6.
 आददीत यतो ज्ञानम् 322, 13.
 आयुष्मान् भव सौम्येति 324, 1.
 आयुष्यं प्रङ्मुखो मुङ्क्ते 429, 18.
 आसनं चैव यानं च 470, 1.
 आसनावसथौ शय्याम् 401, 5.
 इतरानपि सख्यादीन् 401, 1.
 इदं शास्त्रं तु कृत्वाऽसौ 116, 6.
 इन्द्रा-जनिल-यमा-स्कार्णाम् 447,
 20.
 इन्द्रियाणि यशः स्वर्गम् 169, 19.
 इमं लोकं मातृभक्त्या 377, 10.

इयं विशुद्धिस्तदिता 34, 9.
 उच्छिष्टमन्नं दातव्यम् 482, 13.
 उच्छिष्टान्ननिषेकं च 224, 22.
 उत्तमेष्टुत्तमं कुर्यात् 401, 6.
 उत्थाय पश्चिमे यामे 468, 7.
 उत्पादक-ब्रह्मदाज्ञोः 334, 1.
 उदिते ऽनुदिने चैव 313, 14.
 उद्धृत्य चतुरःपिण्डान् 286, 9.
 उपगृह्यास्पदं चैव 458, 2.
 उपजप्यानुपजपेत् 459, 11.
 उपनीय तु यः शिष्यम् 148, 6. 333,
 16.
 उपरुन्ध्यारिमासीत् 459, 7.
 उपस्थमुदरं जिह्वा 455, 18.
 उपस्थितं गृहे विद्यात् 399, 9.
 उपाध्यायान् दंशाचार्यः 332, 14.
 उपेतारमुपेयं च 470, 3.
 उभयोः सप्त इतव्याः 220, 3.
 ऊर्ध्वं प्राणा ह्युत्क्रामन्ति 323, 13.
 कृतमुच्छशिलं ज्ञेयम् 341, 1.
 कृता-ऽमृताभ्यां जीवेत् 340, 15.
 ऋषयश्चाक्रिरे धर्मम् 334, 14.
 ऋषि-देव-मनुष्याणाम् 337, 4.
 एकदेशं तु वेदस्य 333, 14.
 एकमेव दहत्यग्निः 448, 9.
 एकरात्रं हि निवसन् 397, 7.
 एका लिङ्गे गुदे तिष्ठः 229, 2.
 एतच्छौचं गृहस्थस्य 229, 4.
 एतत्कष्टतमं विद्यात् 473, 11.

- एतन्नयं समाश्रित्य 470, 4.
 एतद्विधानमातिष्ठेत् 472, 5.
 एतमर्थमपृच्छन्त 334, 9.
 एधोदकं मूल-फलम् 202, 16.
 एवं प्रयत्नं कुर्वीत 471, 12.
 एवं सर्वमिदं राज्ञ 71, 4.
 एवं सर्वं विधयेदम् 474, 12.
 कन्यानां सम्प्रदानं च 469, 11.
 कर्म श्राद्धादिकं चैव 192, 20.
 कामजेषु प्रसक्तो हि 473, 6.
 काममभ्यर्चयेन्मित्रम् 395, 14.
 कामं तु गुरुपत्नीनाम् 329, 1.
 कायहेलांश्च तन्मूलान् 209, 17.
 कार्यं वीक्ष्य प्रयुज्यते 470, 2.
 कार्यं सोऽवेक्ष्य शक्तिं च 448, 11.
 काले प्राप्स्त्वकाले वा 397, 13.
 कुरुते धर्मसिद्धयर्थम् 448, 12.
 कुलं दहति राजानिः 448, 10.
 कुले महति धम्भुताम् 465, 8.
 कृत्वा मूत्रं पुरीषं वा 238, 14.
 कृत्वा विधानं मूले तु 458, 1.
 कृत्वा चाष्टविधं कर्म 458, 1.
 कौरुक्षेत्रांश्च मात्स्यांश्च 469, 12.
 क्लयविक्रमध्वानम् 459, 3.
 क्रोधजेषु गणे विद्यात् 461, 13.
 गर्वा कक्षान्तरं सम्यक् 473, 13.
 गन्धानां च धसानां च 472, 1.
 गिरिपृष्ठं समारुह्य 478, 14.
 गुप्तं सर्वतुल्यं शुभ्रम् 469, 5.
 गुरुदारेषु कुर्वीत 465, 4.
 गुरुपत्नीं तु युवतिः 329, 4.
 गुरुपत्न्या न कार्याणि 328, 13.
 328, 16.
 गुरुवत् प्रतिपूज्याः स्युः 328, 7.
 गुरुशुश्रूषया चैव 377, 11.
 गुरोर्गुरौ सन्निहिते 335, 10.
 गुल्मांश्च स्थापयेदाप्तान् 458, 16.
 गृहदोऽग्न्याणि द्वेदभानि 190, 14.
 मासमात्रं भवेद्भिक्षा 392, 12.
 चक्षुर्नासे च कर्णौ च 455, 19.
 चन्द्र-चित्ते शयोश्चैव 447, 21.
 चन्द्र-सूर्यं ग्रहे नाद्यात् 435, 3.
 चिन्तयेद्धर्म-कामार्थान् 469, 8.
 चेष्टाश्चैव विजानीयात् 459, 6.
 चौरैरुपप्लुते ग्रामे 158, 7.
 छायायामन्धकारे वा 224, 8.
 जप-होमैरपैत्येनो 196, 12.
 जातब्राह्मणशब्दस्य 483, 14.
 जित्वा सम्पूजयेद्देवान् 460, 6.
 जीवितात्ययमापन्नो 196, 17.
 तदपुण्यफलमाप्नोति 407, 7.
 तत्र भुक्त्वा पुनः किञ्चित् 472, 3.
 तत्र स्थितः प्रजाः सर्वाः 469, 3.
 तत्रात्मभूतैः कालज्ञैः 471, 6.
 तत्स्यादायुधसम्पन्नम् 465, 1.
 तस्याऽल्पाहो यहीतव्यः 462, 2.
 तथा युध्येत सम्पन्नः 460, 5.
 तथा राज्ञामपि प्राणाः 468, 4.

तदध्यास्योद्देश्यार्थम् 465, 7.
 तदाग्नेन विधीनेन 457, 16.
 तदा धायाद्विगृह्यैव 457, 20.
 तद्धि कुर्वन् यथाशक्ति 57, 9.
 तपस्याद्विगृह्यैव 448, 3.
 तपोविशेषैर्विविधैः 151, 1.
 तमपीह गुरुं विद्यात् 331, 10.
 तस्मात्प्रमाणमुभयम् 12, 7.
 तस्मादभिभवत्येषः 448, 2.
 तस्माद्धर्मं यमिष्टेषु 448, 17.
 तस्य मध्ये तु पर्याप्तम् 465, 3.
 तस्य ह्याशु विनाशाय 448, 16.
 तस्यापि तत् क्षुधा राष्ट्रम् 466, 10.
 तस्यार्थे सर्वभूतानाम् 449, 1.
 तं यत्नेन जयेद्विभम् 473, 9.
 तं राजा प्रणयन् सम्यक् 449, 3.
 तानि कारुककर्माणि 485, 18.
 तान् सर्वानभिसन्दध्यात् 469, 16.
 तावन्मृद्धारि देयं स्यात् 231, 9.
 तां ब्रूयात् भवतीत्येवम् 325, 11.
 तां श्रमिः स्वादयेद्राजा 129, 14.
 तिलप्रदः प्रजामिष्टाम् 190, 12.
 तीर्थं तद्व्य-कव्यानाम् 404, 14.
 नेन, सार्धं विनिश्चित्य 463, 16.
 तेषां स्वस्वमभिप्रायम् 463, 11.
 तेष्वेव नित्यं शुभ्रूषाम् 377, 15.
 तेऽस्य गृह्याणि कर्माणि 465, 18.
 तैलेनाभ्यज्यमानस्तु 282, 12.
 तैः सार्धं चिन्तयेन्नित्यम् 468, 9.

तौर्यतिकं वृथा इडाट्या 473, 8.
 त्रयाणामप्युपायानाम् 460, 4.
 त्रयो धर्मा निवर्तेरन् 339, 3.
 त्रिषु वर्णेषु तानि स्युः 455, 17.
 त्रिष्वप्येतेषु दत्तं हि 187, 10.
 त्रिः पदेदायतप्राणः 292, 2.
 त्र्यम्बपूर्वं त्रिष्वप्याणाम् 325, 19.
 त्र्यहेण शूद्रीभवति 485, 4.
 दक्षिणाभिमुखो रात्रौ 223, 17.
 दण्डव्यूहेन तन्मार्गम् 458, 10.
 दण्डस्य पातनं चैव 473, 12.
 दद्याच्च सर्वभूतानाम् 479, 4.
 दन्तवहन्तलभेषु 243, 9.
 दश कामसमुत्थानि 473, 1.
 दश स्थानानि दण्डस्य 435, 16.
 दशाब्दाख्यं पौरसख्यम् 325, 18.
 दानुर्भवत्यनर्थाय 187, 11.
 दानधर्मं निषेधित 177, 16.
 दानं प्रतिग्रहश्चापि 146, 1.
 दिवाकीर्तमुदक्यां च 277, 2.
 दीर्घान् लघूंश्चैव नरान् 459, 4.
 दूतसम्प्रेषणं चैव 469, 10.
 दूरादावसथान् मूत्रम् 224, 21.
 दूरादेव परीक्षेत 404, 13.
 दूषयेच्चास्य सक्तम् 459, 8.
 दृष्टमात्राः पुनन्त्येते 321, 11.
 देवाश्चैवान् समेत्योषुः 334, 10.
 देवानृषीन् मनुष्यांश्च 217, 8.
 दोषो भवति त्रिप्राणाम् 195, 20.

- द्रव्याणां स्थानयोगांश्च 479, 2.
 द्वयोरप्येतयोर्मूलम् 478, 8.
 द्वाभ्यामेकश्चतुर्थस्तु 341, 15.
 द्विषता हि हविर्भुङ्क्तम् 395, 12.
 द्वैधीभावं सभूयं च 469, 19.
 धमिन् वाऽप्युपाराध्य 483, 12.
 धन्यं यशस्यमायुष्यम् 403, 16.
 धन्वदुर्गं मह्यदुर्गम् 464, 5.
 धर्मेण च द्रव्यवृद्धौ 479, 3.
 धान्यदः शार्दूलं सौख्यम् 191, 2.
 न कदाचन कुर्वीत 225, 7.
 नै च क्षुधाऽस्य संसीदेत् 466, 8.
 न च वैदर्यस्य कामः स्यात् 478, 11.
 न चाग्निमृष्टो गुरुणा 335, 14.
 न चैनं भुवि शक्नोति 448, 4.
 न जीर्णदेवायतने 225, 3.
 न त्वल्पदक्षिणैर्यज्ञैः 169, 18.
 न नदीतीरमासाद्य 225, 5.
 न निशान्ते प्रतिश्रान्तो 154, 8.
 न फालकृष्टे न जले 225, 2.
 न बक्रव्रतिके पापे 187, 9.
 न ब्रह्मणस्य त्वतिथिः 400, 11.
 न भोजनार्थं स्वे विप्रः 406, 2.
 न मूत्रं पाधि कुर्वीत 225, 1.
 न यज्ञार्थं धनं शूद्राह् 198, 3.
 न वार्यपि प्रयच्छेत् 187, 8.
 न ससत्त्वेषु गतेषु 225, 4.
 न हायनैर्न पलितैः 334, 13.
 नाऽदण्ड्यो नाभिराज्ञोऽस्ति 446, 16.
 नाध्यापनाद् याजनाद्वा 195, 19.
 नानुरोधोऽस्त्यनध्याये 158, 16, 348, 11.
 नान्तरा भोजनं कुर्यात् 423, 2.
 नाऽभिवाद्यः स विदुषा 324, 12.
 नाऽविस्पष्टमधीयीत 154, 7.
 नित्यं तस्मिन् समाश्रस्तः 463, 15.
 निषेकादीनि कर्माणि 331, 1.
 नृदुर्गं गिरिदुर्गं च 461, 6.
 नैकधामीणमतिथिम् 399, 8.
 नैत्यके नास्त्यनध्यायो 348, 12.
 नैव स्वयं तदधीयात् 403, 15.
 पक्षादौ च रवौ षष्ठ्याम् 282, 11.
 पद्मेन चैव व्यूहेन 458, 13.
 परपत्नी तु या स्त्री स्यात् 325, 10.
 पराजयश्च सङ्ग्रामे 460, 3.
 परिच्युतेषु च स्थानात् 243, 10.
 परितुष्टेन भावेन 177, 17.
 परीक्षितः स्त्रियश्चैनम् 471, 10.
 पशूनां रक्षणं दानम् 176, 13.
 पश्चिमां तु समासीनः 305, 12.
 पानमक्षाः स्त्रियश्चैव 473, 10.
 पात्रं व्रतेन सञ्जाय 187, 13.
 पिता ऽऽचार्यः सुहृन्माता 446, 15.
 पितुर्भगिन्यां मातुश्च 332, 12.
 पितृवत् पालयेत् पुत्रान् 335, 7.
 पुण्यान्धन्धानि कुर्वीत 169, 17.
 पुत्रका इति होवांच 334, 8.
 पुत्र-दायात्ययं प्राप्तो 485, 16.

पुत्रवच्चापि वर्तेरन् ३३५, ८.
 पुरुषाणां कुलीनानाम् ४५६, २.
 पुरोहितं च कुर्वति ४०५, ९.
 पुलकाश्चैव धान्यानाम् ४८२, १४.
 पूजयित्वा ततः पश्चात् २१७, ९.
 पूर्णविंशतिवर्षेण ३२८, १४.
 पूर्वा सन्ध्यां ज्ञापंस्तिष्ठेत् ३०५, ११.
 पैशून्यं साहसं ब्रौहः ४७३, ४.
 प्रकल्प्या तस्य त्वेति ४८२, ११.
 प्रकृत्यान्नं यथाशक्ति ४०१, २.
 प्रजानां रक्षणं दानम् ४५२, ६.
 प्रजापतिर्हि वैद्याय ४७८, १०.
 प्रतिग्रहनिमित्तं तु १९६, १३.
 प्रतिग्रहस्तु क्रियते १९५, १५.
 प्रतिग्रहः प्रत्यवरः १९५, ११.
 प्रत्युत्थानाभिवादाभ्याम् ३२३, १४.
 प्रदद्यात् परिहारांश्च ४६०, ७.
 प्रमाणानि च कुर्वति ४६०, १०.
 प्रयोगः कर्मयोगश्च ३३९, १८.
 प्रविशेद्भोजनार्थं तु ४७२, २.
 प्रहर्षयेद्वर्णं व्युह्य ४५९, ५.
 प्रीतिं भोगं च दण्डं च ४५३, १९.
 फासुगुनं वाऽथ चैत्रं वा ४५७, १८.
 बालोऽपि नावमन्तव्यो ४४८, ७.
 बालोऽपि विप्रो वृद्धस्य ३३४, ६.
 बीजानामुपनिविष्टं स्यात् ४७८, १५.
 बुद्धयेतादरिप्रयुक्तां तु ४७३, १४.
 ब्रह्मजन्मं हि विप्रस्य ३३४, ८.
 ब्रह्माहुतिहुतं पुण्यम् ४४८, १३.

ब्राह्मणं कुशलं पूच्छेत् ३२५, ८.
 ब्राह्मणैः शिल्पिभिर्यन्त्रैः ४६५, २.
 ब्राह्मणोपाश्रयो नित्यम् ४८०, ८.
 ब्राह्मे मुहूर्ते बुद्धयेत २१९, १६.
 भर्तारं लङ्घयेद् या तु १२९, १२.
 भिक्षां च भिक्षवे दद्यात् ४०७, ५.
 भिन्द्याच्चैव तडागानि ४५९, ९.
 भुक्तवत्सु च विप्रेषु ४००, १४.
 भुक्तवत्सु तु विप्रेषु ४१४, २.
 भुक्तवान् बिहरेच्चैव ४७१, १४.
 भुञ्जीयातां ततः पश्चात् ४१४, ३.
 भूमिदो भूमिमाप्नोति १९०, १३.
 भृत्यानां ज्ञं भृतिं विद्यात् ४७९, १.
 भोजनार्थं हि ते शंसन् ४०६, ३.
 भोजयेत् सह भृत्यैस्तौ ४००, १६.
 भोः शब्दं कीर्तयेदन्ते ३२२, १८.
 भौमिकैस्ते समा ज्ञेयाः २४५, ६.
 भ्रातृभार्योपसङ्गाद्या ३२८, ९.
 मणिमुक्ताप्रवालानाम् ४७८, १३.
 मत्स्यान् धानाः पयो मांसम् २०२, १४.
 मध्यन्दिने ऽर्धरात्रे वा ४६९, ७.
 मन्त्रयेत् परमं मन्त्रम् ४६०, १३.
 महती देवता स्त्रेषा ४४८, ८.
 महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ३९०, १५.
 मातृवद्वृत्तिमाप्तिष्ठेत् ३३२, १३.
 मानयोगांश्च जानीयात् ४७८, १६.
 मार्गशीर्षे शुभे मासे ४५७, १७.
 मन्त्रोच्चारणमुत्सर्गम् २२३, १६.
 मृगयाऽऽता दिवा स्वयम् ४७३, २.

- मृतं तु याचितं मैत्र्यम् 341, 2.
 मृत्युश्च वसति क्रोधे 448, 14.
 मोहाद्वाजा स्वराष्ट्रं यः 468, 1.
 मौण्ड्यं प्राणान्तिर्को दण्डः 456, 1.
 मौलान् शास्त्रविदः शूरान् 463, 7.
 म्रियमाणोऽप्यादीन 466, 7.
 यजते शहरह्यज्ञैः 453, 17.
 यजमाणोऽपि भिक्षित्वा 198, 4.
 यजेत राजा क्रतुभिः 465, 11.
 यज्ञशिष्टांशं ह्वेत् 217, 11.
 यज्ञार्थं चैव विप्रेभ्यो 465, 12.
 यज्ञेन भयमाशङ्केत् 458, 12.
 यतश्च भयमाशङ्केत्तम् 453, 15.
 यत् पुण्यफलमाप्नोति 407, 6.
 यथा चाज्ञेफलं दानम् 337, 15.
 यथा फलेन युज्येत 461, 15.
 यथाऽल्पाल्पमदन्त्यदम् 462, 1.
 यथाऽवेक्ष्य नृपो राष्ट्रे 461, 16.
 यथा षण्ढोऽफलः स्त्रीषु 337, 14.
 यथा सुखमुखः कुर्यात् 224, 9.
 यदन्तेऽन्यादि कुरुते 483, 5.
 यदा तु यान्मातिष्ठेत् 457, 15.
 यद्वा त्वतिथिधर्मेण 400, 13.
 यस्तु तं द्वेष्टि सम्मोहात् 448, 15.
 यस्मादेष्मां सुरेन्द्राणाम् 448, 1.
 यस्मिन् देशे तु यत्तोर्यम् 227, 12.
 यस्मिन् देशे यः आचारः 144, 5.
 यस्य त्रैकार्षिकं विचम 169, 7.
 यस्य प्रसादे पद्माऽऽस्ते 448, 13.
 यस्य राजस्तु विषये 466, 9.
 यः कारणं पुरस्कृत्य 187, 12.
 याजनाऽध्यापने चैव 149, 18.
 यात्रामात्रप्रसिद्धचर्यम् 338, 14.
 यान-शय्याप्रदो भार्याम् 191, 4.
 यावत् त्रयस्ते जीवेयुः 377, 14.
 यावत्तपैत्यमेध्याक्तत् 231, 8.
 युक्तश्चैवाऽप्रमत्तश्च 474, 13.
 युक्ते च देवे युद्धयेत् 459, 12.
 यैः कर्मभिः सुचरितैः 485, 1.
 योग-क्षेमं च सम्प्रेक्ष्य 461, 14.
 योऽधीतेऽहन्यहन्यताम् 310, 15.
 योऽध्यापयति वृत्त्यर्थम् 333, 15.
 योऽनधीत्य द्विजो वेदान् 54, 150.
 यो न वेत्त्यभिवादस्य 324, 11.
 योऽरक्षन् बलिमादत्ते 453, 18.
 योऽवमन्येत ते तूभे 13, 1.
 रक्षन् धर्मेण भूतानि 453, 16.
 रक्षार्थमस्य सर्वस्य 447, 19.
 रक्षितं वर्धयेच्चैव 472, 12.
 रथ्यां इमशानं चाक्रम्य 239, 12.
 रहस्याख्यायिनां चैव 471, 19.
 लाभालाभं च पण्यानाम् 478, 18.
 लौकिकं वैदिकं वाऽपि 322, 12.
 वणिक्पथं कुसीदं च 476, 14.
 वराह-मकराभ्यां वा 458, 11.
 वर्मानां सान्तरालानाम् 144, 6.
 वाग्दण्डजं च पारुष्यम् 473, 5.
 वानप्रस्थस्य त्रिगुणम् 229, 5.

वायसानां कृमीणां च 385, 6.
 वाय्वग्नि-विप्रानादित्यम् 225, 6.
 वारिदैस्तृप्तिमाप्नोति 190, 11.
 वार्तायां नित्ययुक्तः स्यात् 478, 9.
 वासीदध्वन्द्वालोक्त्यम् 190, 15.
 वाहनानि च सर्वाणि 471, 17.
 विजेतुं प्रयतेतरीन् 460, 1.
 विद्वाद्भः सेवितः सद्भिः 89, 1.
 विधिवद् ग्राह्यामास , 116, 7.
 विधिवद्वन्द्वनं कुर्यात् 329, 2.
 विप्रसेवैव शूद्रस्य 483, 4.
 विप्राणां वेदविदुषाम् 480, 5.
 विप्रोष्य तूपसङ्ग्राह्याः 328, 10.
 विप्रोष्य पादग्रहणम् 329, 3.
 वियुज्यते ऽर्थ-धर्माभ्याम् 473, 7.
 विधशः शतमाजातीः 16, 8.
 विषघ्नानि च रत्नानि 471, 9.
 विषघ्नैरगदैश्चास्य 471, 8.
 विषयेष्वप्रसक्तिं च 452, 7.
 विमृज्य च प्रजाः सर्वाः 469, 4.
 विहृत्य तु यथाकालम् 471, 15.
 वृक्षगुल्मावृते चापैः 459, 2.
 वृद्धौ च माता-पितरौ 198, 12.
 वेदमध्येष्यमाणश्च 238, 15.
 वेदमेव सदाभ्यस्येत् 337, 2.
 वेदः कृत्स्नोऽधिगन्तव्यः 151, 2.
 वेदाभ्यासो हि विप्रस्य 337, 3.
 वेदोदितं स्वकं कर्म 57, 8.
 वेदोपकरणे चैव 158, 15. 348, 10.

वेषा-भरणसंशुद्धाः 471, 11.
 वैद्य-शूद्रावपि प्राप्नो 400, 15.
 वैद्य-शूद्रौ सखा चैव 400, 12.
 वैद्यस्तु कृतसंस्कारः 478, 8.
 वैद्यं क्षमं समागम्य 325, 9.
 वैद्यम्प्रति तथैवेति 339, 5.
 वैद्ये चेच्छेति चान्येन 478, 12.
 वैद्योऽद्भिः प्राशिताभिस्तु 236, 12.
 व्यत्यस्तपाणिना कार्यम् 327, 19.
 व्यसनस्य च मृत्योश्च 478, 14.
 व्यसन्यधो हि व्रजति 473, 15.
 वमस्तेश्चैव समस्तेश्च 469, 17.
 व्यायम्य ऽऽप्नुत्य मध्याह्ने 471, 5.
 शक्तिं चावेक्ष्य दाक्ष्यं च 482, 12.
 शठो मिथ्याविनीतश्च 188, 2.
 शय्यां कुशान् गृहान् गन्धान्
 202, 13.
 शरीरकर्षणात् प्राणाः 468, 3.
 शवं तत्स्पृष्टिनं चैव 277, 3.
 शस्त्रास्त्रभृत्त्वं क्षत्रस्य 339, 9.
 454, 5.
 शिलतोऽप्युज्जतो नित्यम् 402, 7.
 शचिरुत्कृष्टशुश्रूषुः 480, 7.
 शुचो देशे जपन् जप्यम् 303, 3.
 शुनां च पतिव्रतां च 385, 15.
 शुश्रूषा ब्राह्मणानां च 472, 10.
 शुश्रूषैव तु शूद्रस्य 480, 6.
 शूद्रस्तु वृत्तिमक्काङ्क्षन् 483, 11.
 भियं प्रत्यङ्मुखो भुङ्क्ते 429, 19.

श्रुत-वृत्ते विदित्स्थस्य 466, 11.
 श्रुतिं पश्यन्ति मुनयः 12, 6.
 श्रोत्रियाश्चैव देयानि 396, 1.
 षट्कर्मेको भवत्येषाम् 341, 14.
 षण्णां तु कर्मणामस्य 149, 17.
 सर्कल्पं सरहस्यं च 148, 7. 333,
 17.
 स कुबेरः स वरुणः 448, 6.
 सचिवान् सप्त चाष्टौ वा 463, 8.
 स जीवन्नेव शूद्रत्वम् 54, 2.
 150, 4.
 सत्यानृतं तु वाणिज्यम् 341, 5.
 सत्यानृताभ्यामपि वा 340, 16.
 सद्यः पतति मांसेन 485, 13.
 सन्धिं च विग्रहं चैव 469, 18.
 सन्ध्यां चोपास्य शृगुयात् 471, 18.
 सप्त वित्तागमा धर्म्याः 339, 1.
 स ब्रह्म परमप्येति 310, 16.
 सभा वा न प्रवेष्टव्या 16, 5.
 सप्तवस्कन्दयेच्चैनम् 459, 10.
 समस्तानां च कार्येषु 463, 12.
 सर्वेनः प्रतिगृह्णीयात् 202, 17.
 सर्वतो धर्मषड्भागो 453, 14.
 सर्वथा वर्तते यज्ञः 313, 15.
 सर्वं संकृतमादत्ते 402, 8.
 सर्वेण तु प्रयत्नेन 464, 7.
 सर्वे तस्याऽऽदृता धर्माः 377, 12.
 सर्वेषामेव दानानाम् 191, 3.
 सर्वेषां तु विदित्वेषाम् 460, 8.

सर्वेषां तु विशिष्टेन 463, 13.
 सवृषं गोशतं तेन 216, 11.
 सव्याद्वति स प्रणवाम् 202, 1.
 सव्येन सव्यः स्पष्टव्यः 327, 20.
 स साधुभिर्वहिष्कार्यः 18, 2.
 सहस्रगुणितं दानम् 192, 19.
 सहस्रं तु पितृन् माता 332, 15.
 सङ्ग्रामेष्वनिवर्तित्वम् 472, 9.
 सम्भावयति चान्येन 331, 2.
 संरक्षत सर्वतश्चैनम् 466, 12.
 संविशेच्च यथाकालम् 472, 4.
 संशोध्य त्रिविधं मार्गम् 458, 3.
 संहतान् योधयेदल्पान् 458, 18.
 सापराधमथालोक्य 454, 19.
 साक्षा दानेन भेदेन 459, 13.
 सायं-प्रातर्द्विजातीनाम् 423, 1.
 सावित्रीभतिता ब्राह्म्या 53, 9.
 सात्परायिककल्पेन 458, 4.
 सांवत्सरिकमात्रैश्च 465, 13.
 सुपरीक्षितमन्त्राद्यम् 471, 7.
 सुप्ता क्षुत्त्रा च भुक्त्वा च 239, 11.
 सूच्या वच्चेण चैवैतान् 458, 19.
 सेव्यति-बलाध्यक्षौ 458, 14.
 सेवा श्रवृत्तिराख्याता 341, 4.
 सैव तत्र प्रशस्ता स्यात् 227, 13.
 सोऽभिर्भवति वायुश्च 448, 5.
 सोऽचिरार्द्धं भ्रष्टयते राज्यात् 468, 2.
 स्थानं समुदयं गुप्तिम् 463, 10.
 स्थाने युद्धे च कुशलान् 458, 17.

स्थापयेत् तत्र तद्वदयेत् 460, 9.
 स्नाने प्रसाधने चैव 471, 13.
 स्पृशन्ति बिन्दवः पादौ 245, 5.
 स्थन्दनाश्वैः समे युध्येत् 459, 1.
 स्याच्चाऽऽज्ञापरो लोके 465, 14.
 स्वर्गार्थमुभयार्थं वा 483, 13.
 हन्त्यल्पदक्षिणं यज्ञः 169, 20.
 हुत्वा अग्निं ब्राह्मणांश्चाच्य 468, 8.
 हृदयेनाऽभ्यनुज्ञातः 89, 2.
 ह्यज्ञाभिः पूयते विप्रः 236, 11.*

७८. मारीचिः—

उपस्पृशेच्चतुर्थस्तु 277, 14.
 औदुम्बरेण खड्गेन 354, 5.
 गाङ्गं पयः पुनात्याशु 285, 13.
 तथान्यास्वपि चापस्तु 315, 2.
 तदभावे निषिञ्चेत् तु 354, 15.
 तिलानामप्यभावे तु 354, 14.
 तिसृभिश्चातलात्पादौ 231, 4.
 पक्षहोमानथो कृत्वा 315, 5.
 भूमिष्ठमुद्धूतं वाऽपि 285, 12.
 विधाय देवतापूजाम् 319, 15.
 विना मन्त्रैश्च दर्भैश्च 354, 8.
 विना रूय्य-सुवर्णेन 354, 7.
 विषे शुक्ला तु मृच्छौ चै 227, 9.
 शरीरापद् भवेद्यत्र 315, 1.
 सूतके कर्मणां त्यागः 302, 6.
 सौवर्णेन च पात्रेण 354, 4.
 हस्तौ त्वा मणिबन्धाच्च 231, 5.
 हारिद्वर्णां देहये तु 227, 10. *

होमं पुनः प्रकुर्यात् तु 315, 6.

७९. *महद्भिरुत्सहतम्—

अतः पराशरो नाम् 74, 3.
 ऋचमुच्चार्य निर्भिष 74, 11,
 न विद्यन्ते यतस्तेन 74, 7.
 परस्म्य कामदेवस्ये 74, 6.
 परं मातुर्निजाया यत् 74, 10.
 पराकृताः शरा यस्मात् 74, 4.
 परेषु पापचित्तेषु 74, 8.
 शरं यस्मात् ततः प्रोक्तः 74, 9.
 † ७९. †महानारायणोऽनिषद्.

अग्निश्च 55, 8.
 आपः पुनस्तु 55, 8.
 एतद्वै जगामर्यम् 165, 1.
 तपो नाऽनशनात् परम् 120, 2.
 तस्माद्दानम् 176, 16.
 दानमिति सर्वाणि 176, 10.
 दानं यज्ञानाम् 176, 14.
 दानाच्चातिदुश्चरम् 176, 11.
 दानेन द्विषन्तः 176, 15.
 दानेनारातीन् 176, 15.
 दाने सर्वम् 176, 16.
 धर्मेण पापम् 38, 10.
 धर्मो विश्वस्य 68, 12. *

* * This does not appear to be a name of any particular work. The quotations may perhaps be found in Parāśara-purāṇam.

† The author does not mention this name. *

- न कर्मणा न प्रज्ञया 58, 8.
 सूर्यश्च 55, 7.
 * ८१. * महाभारतम्—
 अकर्दमामनुदकोम् 457, 3.
 अक्रुध्यन्तो ऽनुसूयन्तः 144, 13.
 अगस्त्यगीताः सौधन्याः 109, 9.
 अभ्याधाने तु येन्यथ 162, 14.
 अणीषाध् क्षुरधारायाः 89, 9.
 अतीक्ष्णेनाभ्युपायेन 461, 8.
 सधर्मः प्रगृहीतः स्यात् 475, 13.
 अधर्मो धर्म इति च 88, 4.
 अध्यात्मनि रतिर्ज्ञानम् 218, 4.
 अनिरुद्धं च मां प्राहुः 366, 9.
 अनुगृह्णन्ति चान्योन्यम् 474, 20.
 अनुच्छिष्टं भवेत् तावत् 426, 15.
 श्रुतं चातिवादं च 480, 16.
 अन्नेन पूजनीयश्च 413, 2.
 अन्ये त्वेवं विजानन्ति 366, 10.
 अपि आपशसीरस्य 143, 15.
 अभोज्यं तद्विजानीयात् 422, 7.
 428, 13.
 अर्थार्थमभिगच्छन्ति 187, 13.

* The author in some places mentions the name महाभारतम्, and in others the names of its Parvas (Books) only. The quotations taken from the thirteenth Book (Āśvamedhik Parva) do not appear in the copies procured (Bombay and Calcutta Editions). They are found elsewhere (Vṛiddha Gautama Saṃhitā.)

- अल्पेनाल्पेन देवैर्न 461, 9.
 अभ्रभूमिं प्रशंसन्ति 457, 4.
 अष्टाक्षरविधानेन 366, 5.
 अहिंसकः शुभाचारः 482, 6.
 आचारलक्षणो धर्मः 443, 16.
 आचारात् कीर्तिमाप्नोति 143, 11.
 आचाराहभते ह्यायुः 143, 10.
 आजन्मसन्नमेतत् स्यात् 130, 7.
 आत्मानं सर्वकार्याणि 467, 13.
 अत्रिपादस्तु भुञ्जीयात् 415, 15.
 अभ्रमेवु यथाकालम् 467, 11.
 आहवे च महीं लब्ध्वा 467, 17.
 आहवे निधनं कुर्यात् 467, 16.
 इति ते संशयो माभूत् 449, 11.
 इतिहास-पुराणानि 318, 2.
 इधमर्थमथ यूपार्थम् 160, 11.
 ईतयो व्याधयस्तन्त्री 132, 17.
 उत्थानेन प्रसादेन 452, 19.
 उत्साहः शस्त्रपाणित्वम् 454, 9.
 उदक्यामपि चण्डालम् 428, 10.
 उभयोर्लोकयोर्दोषे 167, 16.
 ऊर्जस्विनर-भागाश्रम् 464, 11.
 कृत्स्नं वाऽथ यजुर्वा ऽपि 348, 1.
 कृजवः शमसम्पन्नाः 144, 14.
 एतत्कृतयुगं नाम 132, 4.
 एतद्धर्मस्य नानात्वम् 81, 5.
 एसाध्यात्पार्थाश्च राजेन्द्र 366, 13.
 एते हि योगाः सेनायाः 456, 18.
 एवं द्वापरमसाद्य 132, 14.

औमामहेश्वराश्चैव 309, 1.
 कृतं नाम युगं श्रेष्ठम् 131, 18.
 कर्तव्यं भूमिपालेन 467, 4.
 कर्तुमस्मद्विधैर्ब्रह्मन् 88, 5.
 कायकामा ह्यर्थकामाः 132, 13.
 काम-क्रोधौ वशे यस्य 217, 18.
 कामाश्चोपद्रवाश्चैव 132, 12.
 कालं कालं समासाद्य 128, 12.
 कालं तमनुवर्त्तते 128, 11.
 कालो वा कारणं राज्ञः 449, 10.
 कुणेश्व कुणिवाहोश्च 109, 6.
 कुलमुत्पादयेयुस्ते 467, 2.
 कृतमेव न कर्तव्यम् 131, 19.
 कृते युगे चतुष्पादः 132, 3.
 केश-कीटावपन्नं च 428, 12.
 क्रीत्वा चैव प्रविक्रीणे 477, 8.
 क्षत्रियस्यामिराधेयो 164, 13.
 क्षमा दया च विज्ञानम् 418, 3.
 क्षुत्-पिपासा-श्रमार्ताय 396, 14.
 गावो यज्ञार्थमुत्पन्नाः 160, 9.
 गुणानेतान् प्रसङ्ख्याय 457, 15.
 गुरुशुश्रूषवो दान्ताः 144, 16.
 ग्राम्याऽऽरण्याश्च पशवः 160, 12.
 चण्डालो वा श्वपाको वा 413, 1.
 चारैः सुविदिताभ्यासः 456, 20.
 चैत्रे वा मार्गशीर्षे वा 456, 14.
 छत्रं वेष्टनमौशीरम् 482, 19.
 जलवांस्तृणवान् मार्गः 456, 19.
 जलौकावद् पिबेद्राष्ट्रम् 461, 5.

जातिधर्मा वयोधर्माः 81, 3.
 जितेन्द्रियो धर्मपरः 217, 17.
 ततः कृतयुगं नाम 132, 2.
 ततो भूयस्तनो भूयः 461, 10.
 ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते 182, 7.
 तत्सर्वमग्निहोत्रस्य 130, 10.
 तथा कृतेषु यज्ञेषु 167, 13.
 तथा विदुरवाक्यानि 110, 2.
 तथा समाहितः कुर्यात् 418, 15.
 तस्मात्कुर्यादिहाऽऽचारम् 143, 14.
 तस्मात् तदा योजयित 456, 17.
 तस्माद् यज्ञादिवं याति 167, 17.
 तस्य वै श्रीः प्रजाऽऽयुश्च 163, 3.
 तस्य श्रीर्ब्रह्मवृद्धिश्च 162, 12.
 ताभ्यां शूद्रः पाकयज्ञैः 481, 20.
 तिल-चर्म-रसाश्चैव 477, 1.
 तुष्टेषु देवसङ्केषु 167, 14.
 ते यान्ति नरकं घोरम् 130, 12.
 तेषां यशोभिकामानाम् 402, 15.
 त्रसन्ति चास्य भूतानि 143, 13.
 त्रैविद्यवृद्धाः शुचयः 144, 15.
 दद्याद्वाजपे यथाशक्ति 218, 2.
 दुराचारो हि पुरुषो 143, 12.
 दुष्टानां शासनं धर्मः 467, 3.
 दृढप्राकार-परिक्षम् 464, 10.
 दृष्ट्वा पितामहः शूद्रम् 480, 18.
 दृश्यन्ते यत्र विप्रेन्द्र 217, 16.
 देशधर्माश्च दृश्यन्ते 81, 2.
 देवाः सन्तोषिता यज्ञैः 163, 15.

- द्विजशुश्रूषणं धर्मम् 480, 19.
 द्विजशुश्रूषया शूद्रः 481, 2.
 द्वितीयं धर्मशब्दं तु 13, 6.
 धर्ममेव प्रपद्यन्ते 474, 19.
 धर्मं जिज्ञासमानानाम् 13, 5.
 धर्मा बहुविधां लोके 81, 1.
 धर्मेष्ववर्तमानेषु 116, 16.
 धूम्रायनकुता धर्माः 109, 3.
 न कल्मषो न कपिलो 89, 8.
 न चाऽतिथिं गृजयति 402, 12.
 न तत्र धर्माः सीदन्ति 132, 1.
 न त्याज्यं क्षणमप्येतत् 130, 8.
 नश्यन्ति-नामसा भावाः 481, 1.
 नावबुद्धयन्ति ये चैवम् 130, 11.
 नास्ति यज्ञसमं दानम् 167, 18.
 नास्ति सत्यात्परो धर्मो 129, 3.
 निङ्कतिश्चाप्यविज्ञानम् 480, 17.
 निर्दिष्टफलभोक्ता हि 452, 11.
 निर्भयाः प्रहिपद्यन्ते 474, 18.
 निर्वासयति यो विप्रम् 403, 6.
 निवेदयेत् प्रयत्नेन 467, 14.
 नीलद्रुमा महाकक्षा 457, 6.
 भृषाणां परमो धर्मः 452, 10.
 नैवातिशीतो नास्तुष्णः 456, 16.
 पक्षसस्या हि पृथिवी 456, 15.
 पद्मवन्ध-बधिरा मूकाः 189, 6.
 पतितस्तत्क्षणादेव 403, 7.
 पतेद् बहुविधं राजम् 475, 11.
 पदाति-नागबधुला 457, 12.
 पदातिबहुला सेना 457, 9.
 पदातीनां क्षमा भूमिः 457, 8.
 परोक्षा देवताः सर्वाः 449, 6.
 पाकयज्ञैर्महायज्ञैः 402, 13.
 पादाभ्यङ्गाम्बुदानैस्तु 404, 2.
 पादाभ्यां धरणीं स्पृष्ट्वा 415, 16.
 पादेन हसते धर्मः 132, 5.
 पादेनैकेन कौन्तेय 132, 15.
 पानीयानि पिबेद् येन 426, 14.
 पातनेनैव भूतानाम् 452, 14.
 पिण्डावशिष्टमन्नं च 422, 6.
 पुरुषं च ततः सत्यम् 366, 8.
 पुलस्त्य-पुलहोद्गीताः 109, 8.
 पूजितस्तेन राजेन्द्र 404, 3.
 प्रकल्प्या तस्य तैर्दृष्टिः 482, 18.
 प्रजानां रक्षणं कार्यम् 467, 10.
 प्रजा राजभयादेव 449, 13.
 प्रत्यादित्यं प्रत्यनलम् 224, 1.
 प्रशुभं चानिरुद्धं च 366, 12.
 प्रसादश्च प्रकोपश्च 449, 7.
 प्रसिद्धव्यवहारं च 464, 12.
 पालकान्यथ वर्माणि 454, 13.
 बल-वर्ष-प्रभावादि 128, 13.
 बहुदुर्गा महद्वृक्षा 457, 7.
 बहुधा वृक्ष्यते धर्मः 92, 8.
 बालातुरेषु भूतेषु 467, 6.
 बुद्धिपूर्वं प्रयत्नेन 280, 15.
 ब्रह्मणा कथिताश्चैव 109, 2.
 ब्राह्मणा नावमन्तव्याः 467, 1.

ब्राह्मणावसथश्चैव 466, 16.
 ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैद्याः 133, 2.
 भरणं सर्वभूतानाम् 467, 8.
 भरद्वाजकृता ये च 109, 5.
 भर्तव्यास्ते महाराज 189, 7.
 भवितारो नराः सर्वे 133, 5.
 भार्गवा याज्ञवल्क्याश्च 109, 4.
 भुञ्जानो यदि पश्येत् 428, 11.
 भुञ्जीत विधिवद् द्विषो 427, 18.
 भूमिर्नद्यो नगाः शैलाः 128, 10.
 मधुदोहं दुहेद्वाष्टम् 461, 3.
 महता बलयोगेन 475, 4.
 मेहन्ति ये च पथिषु 224, 2.
 मौनी वाऽप्यथ वाऽमौनी 271, 7.
 यच्चैतन्यं पृथिव्यां हि 30, 9.
 यजते यदधीते च 452, 16.
 यजनार्थं द्विजाः सृष्टाः 160, 8.
 यजन्ते च महायज्ञैः 475, 1.
 यतो वायुर्यतः सूर्यः 457, 2.
 यथा ऽग्नेन ह्यथा न स्यात् 422, 9.
 यथा च लेखकः पर्णम् 461, 7.
 यथा रसं न जानाति 418, 14.
 यदधीति ऽन्वहं शक्त्या 347, 20.
 यद् यदा ऽऽचरते राजा 453, 2.
 यदा राजा धुरं श्रेष्ठाम् 475, 3.
 यहदामि न तज्जुनम् 477, 6.
 यश्च कश्चिद् द्विजातीनाम् 482, 17.
 यष्टयस्तोमराः खड्गाः 454, 12.
 यष्टव्यं ऋतुभिर्नित्यम् 467, 9.

यस्य चात्मसमो लोकः 217, 19.
 यः करोति जनान् स्रधून् 479, 13.
 यातयामानि देयानि 482, 20.
 यानं वत्खान्धलङ्कुरान् 475, 10.
 युक्ताश्चाधीयन्ते वेदान् 475, 2.
 युगेष्वावर्तमानेषु 116, 15.
 येनाऽऽधानं तु वैमीष्मे 162, 14.
 ये यजन्ति न चार्चन्ति 162, 14.
 यो ऽध्यापयेदधीते वा 218, 1.
 रञ्जनात् खलु राजत्वं 451, 12.
 रथश्चिबहुला सेना 457, 10.
 रामो द्वेषश्च मोहश्च 480, 14.
 राजमूलो महाराज 449, 12.
 राजा माता पिता चैव 449, 3.
 राजा षड्भागभाक्तस्य 452, 17.
 राजा सत्यं च धर्मश्च 449, 9.
 राजा वा समनुज्ञातः 483, 3.
 राजा हि पूजितो धर्मः 453, 1.
 लोक-वेदविरुद्धोऽयम् 91, 9.
 लोकसङ्ग्रहणार्थाय 472, 18.
 वक्त्रप्रमाणपिण्डांश्च 422, 4.
 वक्त्राधिकं तु यत्पिण्डम् 422, 5.
 कणिक्यथमुपासीतैः 477, 2.
 वाणिधर्मममुञ्चन् वै 479, 12.
 वत्सापेक्षी दुहेच्चैव 461, 4.
 वर्णानामाश्रमाणां च 452, 12.
 वदयाऽमौत्य-बलो राजा 464, 15.
 वसन्ते ब्राह्मणस्य स्यात् 162, 9.
 वसन्तो ब्राह्मणः प्रोक्तः 162, 10.

- बालखिल्यकृता ये च 109, 10.
 वसुदेवं च राजेन्द्र 366, 11.
 विक्रमेण महीं लब्ध्वा 467, 15.
 विक्रीणामि रसांश्चाहम् 477, 7.
 विध्यध्यात्मपरा एव 366, 14.
 विप्रुषश्च तथा नस्युः 230, 14.
 विष्णुः पीतत्वमायानि 132, 9.
 वृथा भवति तत्सर्वम् 402, 16.
 वेदमादौ समारभ्य 347, 20.
 वेदाचार्याः प्रशाम्यन्ति 132, 16.
 वैदिकैरथ वा मन्त्रैः 366, 6.
 वैयाघ्रा व्यासगीताश्च 110, 1.
 वैशंपायनगीताश्च 110, 3.
 वैश्वदेवादयो होमाः 217, 5.
 वैश्वदेवान्तिके प्राप्नुम् 103, 4.
 व्यसनानि च सर्वाणि 472, 17.
 व्याघ्रीवदुर्दरेत्पुत्रम् 461, 6.
 शरणागतेषु कारुण्यम् 467, 7.
 शरत्काले तु वैश्यस्य 162, 16.
 शूरव्याधानमेवं वै 163, 2.
 शूरद्रात्रीः स्वयं वैश्यो 163, 1.
 शरीरकलिधर्माश्च 81, 4.
 शाठ्यं च दीर्घवैरत्वम् 480, 15.
 शाला-प्रपातडागीनि 4 6, 15.
 शुद्धैर्द्रव्योपकरणैः 167 12.
 शुद्धितुल्या भाविष्यन्ति 133, 3.
 शुद्धो धर्मकैरिष्टैः 481, 7.
 शूराढ्यं प्राज्ञसम्पूर्णम् 464, 13.
 शुशुपाण्डवतत् सर्वम् 366, 3.
 शौचं कुर्याच्छनैर्धारी 230, 13.
 श्रीः प्रजाः पशवश्चैव 162, 15.
 भुता मे मानवा धर्माः 108, 15.
 स चाण्डालत्वमाप्नोति 403, 5.
 सञ्चयांश्च न कुर्वीत 482, 1.
 सत्कृत्यान् प्रदातव्यम् 396, 15.
 सत्यं दानं तपः शौचम् 217, 15.
 सत्यप्रवृत्ताश्च नराः 132, 6.
 सत्यस्य इह विभ्रंशः 132, 10.
 सत्यात्प्रच्यवमानानाम् 132, 11.
 सदा चात्यशनं नाद्यात् 422, 8.
 समर्षान् पृष्ठतः कृत्वा 457, 1.
 समाजोत्सवसम्पन्नम् 464, 14.
 समा निरुदका चैव 457, 5.
 सम्यक् पालयिता भागम् 454, 15.
 स याति नरकं घोरम् 479, 16.
 सर्वधर्मसमुद्देशो 167, 19.
 सर्वाश्चैव प्रजा नित्यम् 452, 18.
 स वणिक्स्वर्गमाप्नोति 479, 13.
 साङ्गोपाङ्गांस्तथा वेदात् 402, 11.
 साधूनां च यथावृत्तम् 143, 17.
 सुमन्तु-जैभिर्निकृताः 109, 7.
 सुवर्णं रजतं वै 160, 10.
 सुशुद्धैर्यजमानैश्च 167, 11.
 सूक्ष्मो धर्मो महाराज 92, 2.
 सेवया हि धनं लब्ध्वा 482, 2.
 स्त्रियश्चाप्युरुषा मार्गम् 474, 17.
 स्यण्डिले पद्मकं कृत्वा 366, 4.
 स्थापितं मां ततस्तस्मिन् 366, 7.

स्थितिर्हि सद्ये धर्मस्य 129, 4.
 स्वधर्मस्थाः क्रियावन्तो 132, 8.
 स्वभावात् क्रूरकर्माणः 133, 4.
 स्वयं तूपहरेद्राजा 467, 12.
 स्वयं धर्मेण चरति 217, 20.
 स्वाहाकार-नमस्कार-481, 19.
 स्वे स्वे धर्मे बियुञ्जानः 452, 13.
 हरेयुः सहसा पापाः 475, 11.
 हतस्वा हतदारोश्च 187, 5.
 होतव्यं विधिवद्वाजन् 130, 6.

८२. मार्कण्डेयपुराणम्—

अतिथिर्यस्य भग्नाशो 115, 10.
 अवमृज्ज्यास च स्नातो 263, 7.
 आचम्य च ततः कुर्यात् 393, 1.
 आप्यायनाय भूतानाम् 385, 7.
 एवं गृहबलिं कृत्वा 385, 6.
 एषा सम्यक् समाख्याता 171, 8.
 कर्तव्यमविरोधेन 453, 5.
 कुर्यादहरहः श्राद्धम् 388, 1.
 कुर्यादाचमनं स्पर्शम् 240, 16.
 कुर्वीतालग्भनं चापि 241, 1.
 दानमध्ययनं यज्ञः 478, 3.
 देवतानामृषीणां च 240, 15.
 न च निर्धुन्यात् केशान् 263, 8.
 न विद्यमाने पूर्वोक्ते 241, 3.
 नित्यं नैमित्तिकं काम्यम् 164, 10.
 पालनेनैव, भूतानाम् 453, 6.
 पितृनुद्दिश्य विप्रास्तु 388, 2.
 पूजयित्वा, इतिथीनिष्ठात् 414, 12.

मुहूर्तस्याष्टमः भंगम् 393, 2.

396, 9.

यथाविभवतो ह्येतत् 241, 2.

याजना-ज्यापने, शुद्धे 171, 7.

वत्स राज्याभिषिक्तेन 453, 4.

बाहुभेत् क्षुत्-तृप्परीतात्मा 414, 14.

वाणिज्यं पाशुपाल्यं च 478, 4.

विकलान् बालवृद्धांश्च 414, 13.

स तस्य दुष्कृतं दत्त्वा 115, 11.

सम्यक् पालयिता भागम् 453, 7.

सम्यगाचम्य तोयेन 240, 14.

८३. मार्कण्डेयः—

अज्ञातकुलनामानम् 399, 3.

आत्मा रिपुभ्यः संरक्ष्यः 474, 2.

एकैकन्यूनमुद्दिष्टम् 257, 6.

कुशपाणिः सदा तिष्ठेत् 256, 10.

कूलच्छायास्तु च तथा 442, 4.

चतुर्भिर्दर्मपिञ्जलैः 257, 5.

चतुर्भिश्चाभिचारांश्च 257, 8.

जेयाश्चानन्तरं पौराः 474, 6.

ततोऽपि सारसं पुण्यम् 285, 9.

तीर्थतोयं ततः पुण्यम् 285, 10.

तुष्यन्त्यामलकैर्विष्णुः 281, 11.

त्रिभिर्दर्मैः शान्तिकर्म 257, 7.

धान्य-गो-विप्र-देवानाम् 442, 8.

न चापि भग्नशयने 442, 7.

न मित्रमतिथिं कुर्यात् 399, 2.

न यक्ष-नागाद्यतने 442, 3.

न स्वपेच्च तथा गर्ते 442, 5.
 नाऽऽकाशे सर्वशून्ये च 442, 9.
 नाऽऽर्द्धवासा न नमश्च 442, 8.
 नोच्छिष्टं तत्पवित्रं तु 248, 14.
 पुराणानां नरेन्द्राणाम् 285, 6.
 प्राग्भूता मन्त्रिणश्चैव 474, 5.
 बुभुक्षुमागतं भ्रान्तम् 399, 4.
 ब्राह्मणं प्रहिरुतिथिम् 399, 5.
 भवितव्यं नरेन्द्रेण 474, 4.
 भूमिष्ठमुद्धृतात्पुण्यम् 285, 8.
 भूयोऽप्याचम्य कर्तव्यम् 434, 9.
 महादेवगृहे वाऽपि 442, 2.
 मासानष्टौ यथा सूर्यः 462, 5.
 यस्त्वेतानविनिर्जित्य 474, 7.
 व्यसनानि परित्यज्य 474, 1.
 शून्यालये श्मशाने च 442, 1.
 श्रीकामः सर्वदा स्नानम् 281, 12.
 स नित्यं हन्ति पापानि 256, 11.
 सप्तवित्रेण हर्तन 248, 13.
 सप्तमीं नवमीं चैव 281, 13.
 सर्वकालं तिलैः स्नानम् 281, 10.
 सूक्ष्मेण हाष्पुपायेन 462, 6.
 सोऽजितात्मा अजितामात्यः 474, 8.
 स्थान-वृद्धिक्षय-ज्ञान-474, 3.
 स्नानं कूप-तडागेषु 285, 7.
 ८४. मुण्डकोपनिषद्—
 एतेषु यश्चरते 167, 1.
 एवेहीति तमाहुतदः 167, 5.
 काली कराली च 166, 14.

तथाऽक्षराद्विविधाः सोम्य भावाः
 100, 7.
 तं नयन्त्येताः 167, 3.
 तान्धाचरथ 164, 16.
 प्रियां वाचम् 167, 7.
 ब्रह्मा देवानाम् 105, 16.
 मन्त्रेषु कर्माणि 164, 15.
 यथा सुदीप्तात्पावकाद्विस्फुलिङ्गाः
 100, 5.
 यस्यानग्निहोत्रम् 165, 11.
 विश्वस्य कर्त्ता 105, 17.
 स्फुलिङ्गिनी विश्वरूची 166, 16.
 ८५. मेधातिथिः—
 ततोऽम्भसि निमग्नस्तु 276, 5.
 प्रदद्यान् मूर्धनि तथा 276, 6.
 ८६. मैत्रेयोपनिषद्—
 अथ योयमतिर्यगूर्ध्वम् 126, 11.
 अथ योऽथमवाञ्चम् 126, 12.
 अथ यो ह खलु वा 106, 10.
 अथ ह खलु वा 106, 11.
 तस्य प्रोक्ता अग्न्याः 106, 9.
 ता अदमेवाऽप्रबुद्धाः 126, 7.
 प्रजापतिर्वा एकः 126, 6.
 यः प्राणोऽपानः 126, 11.
 स नाऽरमत 126, 8.
 स वा एष 106, 13.
 स वायुमिवात्मानम् 126, 9.
 ८७. रथः—
 अध्वनोऽप्यागतं विप्रम् 405, 5.
 अपः करनखस्पृशाः 247, 13.

अभिवादे तु यः पूर्वम् 325, 1.
 आदित्यकिरणैः पूतम् 287, 10.
 आम्नातमातुरस्नाने 287, 11.
 आसीनः पश्चिमां सन्ध्याम् 300, 14.
 आहरेऽङ्गमध्यात् 228, 4.
 आहरेऽनूत्तिकां विप्रः 227, 7.
 उच्छिष्टदोषो न सत्यत्र 245, 11.
 उत्तीर्योदकमाचामेत् 240, 5.
 उदकं च तृणं भस्म 429, 13.
 उदकं चोदकान्तं च 225, 14.
 उदकेनाऽऽतुराणां च 237, 3.
 उदङ्मुखस्तु मध्याह्ने 223, 4.
 उपरुद्धो न सेवेत 225, 13.
 ऋषयो दीर्घसन्ध्यत्वात् 300, 17.
 एतानि वाहयन् विप्रो 380, 4.
 एतासां पावनार्थाय 380, 5.
 एभिरन्तरितं कृत्वा 429, 14.
 एवं धर्मप्रवृत्तस्य 456, 11.
 एवं स्यात्तेजसा युक्तः 240, 6.
 एषु स्त्री-तैल-मांसानि 253, 10.
 कण्डनी पेषणी चुल्ली 380, 3.
 कार्तिक्यां पुष्करे ज्ञातः 280, 10.
 कुशाः काशा यवा दूर्वाः 255, 12.
 गायत्रीं तु जपेन्नित्यम् 308, 8.
 गायत्र्या न परं जप्यम् 310, 12.
 गायत्र्या न परं ध्यानम् 310, 13.
 गोप्रदानसमं पुण्यम् 407, 11.
 गोशृङ्गमात्रमुद्धृत्य 261, 5.
 घृतं च सार्षपं तैलम् 283, 11.

चतुर्दश्यष्टमी दर्शः 253, 9.
 ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे 280, 12.
 तस्मात् पूर्वाभिभाषी स्यात् 325, 3.
 तिथि-पूर्वोत्सवः सर्वे 398, 8.
 तीर्थोभावे तु कर्तव्यम् 287, 15.
 तुषाङ्गार-कपालानि 225, 11.
 दशजन्माषहा गङ्गा 280, 13.
 दृष्ट्वा सूर्यं निरीक्षेत 226, 6.
 देशं नाम कुलं विद्याम् 40 18.
 द्वौ हस्तौ युग्मतः कृत्वा 261, 4.
 न दोषः पक्वतैलेषु 283, 12.
 न पृच्छेद्द्वेत्र-चरणे 405, 4.
 न स तत्फलमाप्नोति 405, 19.
 नित्यं नैमित्तिकं चैव 287, 14.
 पञ्चैस्तेना गृहस्थस्य 280, 2.
 पतन्त्याचामतो याश्च 245, 10.
 पूर्वमेव परीक्षेत 404, 17.
 पूर्वा सन्ध्यामुपासीनः 300, 16.
 प्रज्ञां यशश्च कीर्तिं च 300, 18.
 प्रतिग्रहाच्छुद्धयति जप्यहोमैः 196, 9.
 प्रतिग्रहा-ऽध्यापन-याजनानाम् 196, 7.
 प्रत्यङ्मुखस्तु पूर्वाह्ने 223, 3.
 प्रत्यादित्यं न महेत 226, 5.
 प्राधीते शतसाहस्रम् 185, 18.
 प्राप्ते तु द्वादशे वर्षे 181, 5.
 बलवज्रः पुण्डरीकाक्षे 255, 13.
 माध्यां ज्ञातः प्रयागे तु 280, 11.
 मासि मासि रजस्तस्याः 31, 6.

यत्र कचन नद्यां हि 361, 14.
 यद्धा कुरुते पापम् 300, 13.
 यहुकृतं भवेदस्य 325, 2.
 यद्वाच्या कुरुते पापम् 300, 15.
 यशोऽस्मिन् प्रथते लोके 456, 12.
 यात्रदयामीक्षितैनापि 237, 2.
 राजमार्ग-दमशानानि 225, 12.
 वर्जयेद् वृक्षमूलानि 225, 15.
 वर्धतामिति वैश्यस्तु 325, 6.
 वापी-कूप-तडागेषु 228, 3.
 विद्यायुक्तो धर्मशीलः प्रशान्तः
 184, 17.
 विधूतपापास्ते यान्ति 300, 12.
 व्रते चैवोपवासे च 253, 12.
 शरीरप्रभवैर्दोषैः 404, 18.
 भ्राद्धे जन्मदिने चैव 257, 11.
 सततं प्रातरुत्थाय 147, 7.
 सत्कृत्य भिक्षवे भिक्षाम् 407, 10.
 सन्ध्यामुपासते ये तु 300, 11.
 सममब्राह्मणे दानम् 185, 17.
 सहस्रपरमां देवीम् 308, 7.
 सन्तर्प्य धर्मराजानम् 361, 15.
 सुरां पिबति स व्यक्तम् 325, 4.
 सुरां पिबेति वक्तव्यम् 325, 4.
 सोऽतिथिः सर्वभूतानाम् 398, 9.
 स्नात्वा हुत्वा च शिष्येभ्यः 147, 8.
 स्वस्तोति ब्राह्मणो ब्रूयात् 325, 5.
 स्वाध्यायवान् धृतिमान् गोशरण्यः
 184, 19.

८८. याज्ञवल्क्यः—

अग्न्यगारे जलान्ते वा 307, 9.
 अदीर्घसूत्रः स्मृतिमान् 462, 13.
 अद्भिस्तु प्रकृतिस्थाभिः 236, 6.
 अनार्तश्चोत्सृजेद्यस्तु 301, 12.
 अन्तर्जानुः शुचौ देशे 234, 15.
 अन्यत्र कुलटा-षण्ड- 202, 10.
 अपि भ्राता सुतो वाऽर्थः 447, 2.
 अप्रणोदोऽतिथिः सायम् 397, 1.
 अब्लिङ्गानि जपेच्चैव 278, 14.
 अमेध्य-शव-शूद्रान्त्य-155, 3.
 अयाचिताहतं ग्राह्यम् 202, 9.
 आचान्तः पुनराचामेत् 241, 15.
 आहृतश्चाप्यधीयीत 151, 15.
 इष्टं स्यात् ऋतुभिस्तेन 447, 6.
 उदक्या सूतिभिः स्नायात् 278, 15.
 उपाकर्मणि चोत्सर्गे 157, 17.
 ऋतुसन्धिषु भुक्त्वा वा 158, 2.
 ऋत्विक्पुरेहिताचार्यैः 468, 17.
 कनिष्ठा-देशिन्यङ्गुष्ठ- 235, 9.
 कर्म स्मार्तं विवाहाद्यौ 317, 7.
 कुर्यान्मूत्र-पुरीषे तु 222, 6.
 कुलान्ति जातीः श्रेणीश्च 446, 11.
 कुशाः शाकं पथो मत्स्याः 202, 7.
 कुशूल-कुम्भीधान्यो वा 341, 8.
 कुसीद-कृषि-वाणिज्यम् 339, 14.
 476, 10.
 कृतेऽन्तरे त्वहोरात्रम् 158, 4.
 कौबोय-नीलि-लवण- 484, 12.

खरोष्ट्र-यान-हस्त्यश्च- 155, 8.
 गन्धलेपक्षयंकरम् 226, 15.
 गायत्रीं शिरसा सार्धम् 292, 5.
 गुरुं चैवाप्युपासीत 151, 14.
 गृह्णन्भक्षेतारमधो 203, 7.
 गृहीतशिरश्चोत्थाय 226, 14.
 गो-भू-तिल-हिरण्यादि 177, 11.
 जपयज्ञप्रसिद्धचर्यम् 346, 6.
 जीवेद्वाऽपि शिलोज्जेन 341, 9.
 तत्र दुर्गाणि कुर्वीत 461, 2.
 तालज्ञश्चाऽप्रयासेन 73, 2.
 तिलौदन-रस-क्षारान् 184, 9.
 तैः सार्धं चिन्तयेद्राज्यम् 463, 4.
 त्रिर्विन्तपूर्णपृथिवी- 350, 8.
 त्रैवार्षिकाधिकाक्षो यः 169, 10.
 त्र्यहं प्रेतेश्वनध्यायः 157, 16.
 दण्डनीत्यां च कुशलम् 465, 18.
 दातव्यं प्रत्यहं पात्रे 177, 9.
 दायकालाहते वाऽपि 317, 8.
 दिवा मुन्यास्तु कर्णस्थ- 22, 5.
 दुष्टा दशगुणं पूर्वात् 199, 9.
 दुष्टा ज्योतिर्विदो वैद्यान् 468, 18.
 देशे ऽशुचावात्मनि च 155, 4.
 धर्मार्थ-काभान् स्वं काले 219, 13.
 धार्मिको ऽव्यसनश्चैव 462, 14.
 धावतः पृतिगन्धे च 155, 7.
 न भार्यादर्शने ऽभीयात् 425, 8.
 नमस्कारेण मन्त्रेण 481, 16.
 न राज्ञः प्रतिगृहीयात् 199, 2.

न विद्यया केवलया 184, 13.
 नाऽदण्ड्यो नाम ग्राहोऽस्ति 472, 2.
 नाऽन्वये सति सर्वस्वम् 189, 19.
 नापत्रे विदुषां किञ्चित् 177, 12.
 नैवांशिकानि च ततः 458, 19.
 पञ्चदश्यां चतुर्दश्याम् 158, 1.
 पयो दधि च मद्यं च 484, 16.
 पशु मण्डूक-नकुल- 158, 3.
 पांसुवर्षं दिशां दाहे 155, 6.
 पुण्यतीर्थे गवां गोष्ठे 307, 10.
 पुरोहितं प्रकुर्वीत, 464, 17.
 प्र नौपति-पितृ-ब्रह्म- 235, 10.
 प्रतिग्रहसमर्थो, अपि 196, 3.
 प्रतिग्रहे मूनि-चक्रि- 199, 8.
 प्रोतप्रणवसंयुक्ताम् 292, 6.
 प्रधानं क्षत्रिये कर्म 339, 13. 452,
 3.
 प्राक्सौमिकीः क्रियाः कुर्यात्
 169, 14.
 प्राग्वा ब्राह्मेण तीर्थेन 234, 16.
 प्राणानायम्य सम्प्रोक्ष्य 291, 19.
 प्रायश्चित्ती भवेच्चैव 301, 14.
 फलोपल-क्षौभ-सोम- 481, 8.
 ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय 219, 12.
 भार्यारतः शूचिर्भृत्य- 481, 15.
 भास्करलोकनाम्निल- 448, 13.
 भुक्त्वा ऽऽर्द्रपाणीरभ्योऽन्तः 155, 5.
 भोगांश्च दद्याद्विप्रेभ्यो 466, 3.
 भोजयेच्च ऽऽगताम् काले 395, 8.

मधु-मांसाञ्जनोच्छिष्टः 445, 12.
 महोत्साहः स्थूललक्षः 462, 11.
 मांसं शय्यासनं धानाः 202, 8.
 मूलजा विप्रुषो मेध्याः 444, 11.
 मृच्चर्म-पुष्प-कुतुप- 484, 11.
 यज्ञात्तां तपसां चैव 337, 10.
 यज्ञांश्चैव प्रकुर्वीत 466, 2.
 यत्र वृत्तस्मिन्ने चोभे 484, 14.
 यं यं क्रतुमधीयीत 350, 7.
 याचितेनाऽपि दातव्यम् 177, 10.
 ये लोका ज्ञानशीलानाम् 196, 4.
 यो दण्ड्यान् दण्डयेद्राजा 447, 5.
 रम्यं पशव्यमार्जाव्यम् 464, 1.
 लाक्षा-लवण-मांसानि 488, 15.
 विद्या-तपोभ्यां हीनेन 203, 6.
 विनीतस्त्वथ वार्तायाम् 462, 16.
 विनीतः सत्त्वसम्पन्नः 462, 12.
 विषुवे शतसाहस्रम् 193, 2.
 वीणुवादनतत्त्वज्ञः 73, 1.
 वृथः तूष्णीदकस्नानम् 287, 1.
 वृथा त्वभ्रोत्रिये दानम् 287, 2.
 वेद एव द्विजातीनाम् 337, 11.
 वेदायर्द-पुराणानि 348, 5.
 वैद्यवृत्त्याऽपि जीवसो 484, 14.
 व्रतऽपीडयन् 445, 10.
 शतमिन्दुक्षये दानम् 193, 1.
 शस्त्रासव-मधूच्छिष्ट- 484, 10.
 शाकांश्चोषधि-पिण्याक- 484, 13.
 शिल्पैर्वा विविधैर्जीयेत 342, 10.
 485, 11.

शुधेरन् स्त्री च द्रव्यम् 246, 8.
 शूद्रस्य द्विजशुभ्रूषा 342, 9.
 485, 10.
 श्मश्रु चाऽऽस्यगतं दन्त- 244, 12.
 श्रौत-स्मार्तक्रियाहेतोः 466, 1.
 श्व-क्रोष्टु-गर्दभोलूक- 155, 2.
 रु गुरुर्यः क्रियाः कृत्वा 331, 5.
 सत्कृत्य भिक्षवे भिक्षा 406, 13.
 सदान-मान-सत्कारैः 466, 4.
 सन्ध्या-गर्जित-निर्घात- 157, 18.
 सप्तत्रिंशदनध्यायान् 155, 9.
 समाप्य वेदं द्युनिशम् 157, 19.
 सुमन्त्रिणः प्रकुर्वीत 163, 3.
 स्त्रीभिर्भर्तृवचः कार्यम् 129, 10.
 स्नात्वा पीत्वा क्षुते सुप्ते 211, 14.
 स्वकुटुम्बाविरोधेन 189, 18.
 स्वधर्माच्चलितान् राजा 446, 12.
 स्वरन्ध्रगोष्ठाऽऽन्वीक्षिक्याम् 462, 15.
 हितं चास्याऽऽचरोन्नित्यम् 151, 16.
 हृत्-कण्ठ-तालुगाभिस्तु 236, 7.
 ८९* योगियाज्ञवल्क्यः—
 अग्निष्वात्ताः सोमपाश्च 353, 11.
 अघमर्षणमूक्तेन 276 17.
 अतोऽप्यथा तु सव्ये 354, 18.
 अधमोत्तममध्यानाम् 272, 3.

* The quotations under this heading the author quotes as belonging to Yogyājñavalkya; but after search they are found in the work named Brihat-Yogyājñavalkya of which he does not make any mention.

अलाभे धौतवस्त्वस्य 265, 16.
 असामर्थ्यान्न कुर्याच्चैत् 276, 14.
 आचम्ये प्रयतः पश्चात् 279, 12.
 आचार्याश्चैव गन्धर्वान् 56, 313.
 एतांश्चैव प्रमीतांश्च 360, 1.
 ओमापो ज्योतिरित्येतत् 292, 11.
 ओङ्कारं पूर्वमुच्चार्य 303, 11.
 कव्यवाडनलः सोमो 359, 15.
 कुतुपं योगपट्टं च 265, 17.
 कुम्भके निश्चलः श्वासो 223, 1.
 गत्वोदकान्तं विधिवत् 272, 1.
 गायत्रीं प्रणवं चान्ते 303, 12.
 गोत्र-नाम-स्वधाकारैः 358, 13.
 जलाभिमन्त्रणं चैव 276, 26.
 तथा देवाच्चागान् 356, 15.
 ताल्लिङ्गैस्तर्पयेन्मन्त्रैः 356, 20.
 तृवन्न पीडयेद्वस्त्रम् 303, 16.
 तृष्णीमेवाश्वगाहेत 279, 11.
 त्रिधा कृत्वा मृदं तां तु 272, 2.
 त्रिरावर्तनयोगात् 292, 12.
 दर्भेषु दर्भपाणिभ्याम् 346, 9.
 नासिकाकृष्ट उच्छ्वासो 292, 16.
 नास्तिक्यभावाद्यस्तां तु 362, 13.
 निराशाः पितरो यान्ति 363, 8.
 निष्पीडयति यो विप्रः 363, 17.
 पिबन्ति देहनिःस्नावम् 362, 14.
 पिशाचांश्च सुपर्णीश्च 356, 17.
 पूरकः कुम्भको रेच्यः 292, 15.
 प्रक्षाल्योरू मृदाञ्जलिश्च 263, 2.

प्रत्योङ्कारसमायुक्तः 292, 10.
 प्रदक्षिणं समावृत्त्य 346, 8.
 प्रयचार्यादितानिश्च 368, 1.
 ब्रह्मणं तर्पयेत् पूर्वम् 356, 11.
 भागैः पृथक् पृथक् कुर्यात् 272, 4.
 भूर्भुवस्वर्भर्जनः 292, 9.
 मत्स्य-कच्छपं-मण्डूकाः 271, 1.
 मातामहांश्च सततम् 357, 1.
 य एष विस्तृतप्रोक्तः 276, 13.
 यदि वाग्यमलोपः स्यात् 306, 13.
 यदि स्पाज्जीवत्पितृकः 359, 17.
 यद्युद्धृतं निषिञ्चेत् 354, 17.
 यावदेवानृषींश्चैव 363, 15.
 येभ्यो ब्राह्मणपिता दद्यान् 359, 18.
 वनस्पतीनोपधींश्च 356, 18.
 वसन्ति चैव ते स्नानात् 271, 2.
 वसून् रुद्रांस्तथाऽऽदित्यान् 357, 12.
 वानप्रस्थो यतिश्चैव 308, 2.
 वेदान् छन्दांसि देवांश्च 356, 12.
 व्याहरेद्वैष्णवं मन्त्रम् 306, 14.
 सन्धौ सन्ध्यामुपासीत 260, 13.
 289, 7.
 सधर्णेभ्यो जलं देयम् 358, 12.
 सरितोऽथ मनुष्यांश्च 356, 16.
 सव्यं जानुं ततोऽञ्चय्य 356, 19.
 संवत्सरं सार्वयवम् 356, 11.
 स्नात्वैवं वासुसी धौते 263, 1.
 स्नानमन्तर्जले चैव 276, 15.
 स्नानाचरणमित्येतत् 276, 18.

स्वाध्यायं तु यथःशक्ति 346, 10.

९०. लिङ्गपुराणम्—

आद्ये कृते तु योऽधर्मः 83, 1.
एवं कल्पास्त्वसङ्ख्याताः 93, 10.
कोटिकोटिर्ह साणि 94, 11.
निष्ठे मायामसूयां च 83, 4.
क्षपरे व्याकुलीभूतः 83, 2.
साधयन्ति नरास्तत्र 83, 5.
स्वशाखाव्ययनं विप्र 343, 16.

९१. वहिपुराणम्—

तस्माद्वित्तं समासाद्य 178, 5.
दद्यात् सम्यग् द्विजातिभ्यः 178, 6.
नापि कीर्त्यै न धर्माय 178, 4.
यस्य धित्तं न दानाय 178, 3.

९२. ब्राह्मपुराणम्—

गोरक्षां कृषि-वाणिज्यम् 476, 18.
दत्त्वा प्रदक्षिणं कृत्वा 296, 13.
सायं मन्त्रवदाचम्य 296, 12.
स्वाध्यायं यजनं दानम् 476, 17.

९३. वसिष्ठः—

अतिश्रेष्ठं त्रिपुणं च 434, 15.
अदत्त्वा द्विज-देवेभ्यः 434, 13.
अधश्च तिसृभिः कर्तव्यम् 272, 10.
अधीत्य शाखामात्मन्याम् 153, 5.
अपवित्रीकृतैः तौ तु 276, 9.

अवश्यं ब्राह्मणैः 163, 6.

अमृतकायाऽनृजवे 147, 3.

आपोहिष्ठेदमापश्च 275, 8.

उपस्थानं स्वकैर्मन्त्रैः 297, 4.

उभयोः पादयोः सप्त 229, 12.

ऋक्सामाथर्ववेदोक्तान् 350, 13.

एकपूगं सुखारोग्यम् 434, 14.

एकस्मिन् विंशतिर्हस्ते 229, 13.

एकस्मिन् सावभेत्वाहि 193, 11.

किंभेदेदमयं पात्रम् 185, 2.

कुरुक्षेत्रं गयां गङ्गाम् 274, 11.

क्षुते निष्ठीवने सुप्ते 240, 10.

जप्त्वा चैवं ततः कुर्यात् 350, 14.

तच्छाखं कर्म कुर्वति 152, 11.

ततो ऽर्कमीक्ष्य चोङ्कारम् 275, 10.

तथा हिरण्यवर्णाभिः 275, 9.

तदा दिनक्षयः प्रोक्तः 193, 12.

तस्मादयं च मूलं च 434, 18.

दक्षिणात्यागाच्च 175, 10.

दर्श-पूर्णमासाः 163, 6.

पञ्चस्वेतेषु चाऽऽचामेत् 240, 11.

पञ्चाऽपाने दशैकस्मिन् 229, 11.

पैर्णमूले भवेद् व्याधिः 434, 16.

पात्राणामपि तत्पात्रम् 185, 3.

पारम्पर्यागतो येषाम् 152, 15.

प्रक्षाल्य सर्वकायं तु 272, 11.

प्राणाध्यामांश्च कुर्वति 275, 11.

ब्रह्महैव स विज्ञेयः 153, 2.

मदैकया शिरः क्षाल्यम् 272, 9.

* Possibly, this Purāṇa and the Agnipurāṇam are the same.

यः स्वशाखां परित्यज्य 152, 19.
 ये ते शतमिति द्वाभ्याम् 274, 10.
 यो ज्ञेन विधिना स्नाति 276, 10.
 विद्याह वै ब्राह्मणमाजगाम 147, 1.
 शीर्ष्पणी वर्जयित्वा 434, 19.
 शीर्ष्पणी हरेदायुः 434, 17.
 स तार्थफलमाप्नोति 276, 11.
 स शूद्रवद् बहिः कार्यः 152, 20.
 सुपुंगं च सुपत्रं च 434, 12.
 स्नात्वा सङ्गृह्य वासोऽन्यत् 276, 8.
 स्वीया शाखोज्झिता येन 153, 1.

९४. वंशब्राह्मणम्—

घृतकौशिकः 10, 16.

९५. वाजसनेयिसंहिता—

याते ज्ञे ज्याशया 114, 15.

९६. वामनपुराणम्—

अश्वत्थवृक्षं च समालभेत 322, 3.
 गुरुश्च शक्रः शनि-राहु-केतवः
 2-1, 3.
 दूर्वा च सर्पिर्दधि सोदकुम्भम्
 321, 15.
 नाभ्यङ्गमर्के न च भूमिपुत्रे 282, 2.
 सुधे च योषित्परिवर्जनीया 282, 4.
 ब्रह्मा मुरारिखिपुरान्तकारी 221,
 1.
 मृद्धोमयं स्वस्तिकमक्षतङ्गं 321,
 17.
 श्वेतानि पुष्पाणि तथा शमीं च 322,
 1.

होमं च कृत्वा इष्टभनं शुभानाम्
 321, 13.

९७. वायवीयसंहिता—

(Siva malāpurāṇam Bk. V.)—

एवं प्रक्षीणपापस्य 59, 5.
 कर्मातिशयमासन्न 59, 4.
 ज्ञान-ध्यानाभियुक्तस्य 59, 8.
 प्रसादान् मुच्यते जन्तुः 59, 10.
 भवेद्विषयवैराग्यम् 59, 6.
 भावशुद्ध्युपपन्नस्य 59, 7.
 योगेन तु पराभक्तिः 59, 9.

९८. वायुपुराणम्—

ऊढायाः पुनरुद्धाहम् 134, 2.
 कलौ पञ्च न कुर्वीत 131, 9.
 तथा मध्याह्नसन्ध्यायाम् 305,
 15.

९९. वार्तिकम्—

नित्येषु शुद्धेः प्राधान्यात् 62, 5.
 भोगं भङ्गुरमीक्षन्ते 62, 6.

१००. विवस्वान्—

पश्चात्तच्छोधयेत्तीर्थम् 227, 5.
 रत्निमात्राज्जलं, त्यक्त्वा 227, 4.

१०१. विश्वरूपाचार्यः—

आग्ने फलार्थं इत्यादि 57, 4.
 फलवत्त्वं जमाचष्टे 57, 5.

* This work belongs to
 Brihadāraṇyakaopaniṣadbhā-
 shyam.

१०२. विश्वामित्रः—

- अभर्म वाचिकं जप्यम् 305, 2.
 ईदृशस्य हि धर्मस्य 88, 11.
 उत्तमं मानसं जप्यम् 305, 1.
 जानातीत्यस्ति तत्रापि 88, 12.
 धिया यदक्षरं श्रवणा 304, 10.
 यमार्याः क्रियमाणं तु 88, 9.
 वाचिकस्तैः कमेकं स्यात् 305, 3.
 शब्दार्थचिन्तनं भूयः 304, 11.
 स धर्मा ये विगर्हन्ते 88, 10.
 मह्यं मानसः प्रोक्तः 305, 4.

१०३. विष्णुधर्मोत्तरम्—

- अतो जन्या तु गानुष्ये 184, 10.
 अहो-रात्रं न भोक्तव्यम् 137, 4, 437, 14, 438, 8.
 आरूढपतिनं चैव 188, 17.
 एते सूनासहस्राणाम् 200, 11.
 गुरोश्चाप्रीतिजनके 188, 19.
 चण्डालो वाऽथ वा पापः 413, 4.
 तामसानां फलं भुङ्क्ते 184, 7.
 ते तु पाषसमाचाराः 200, 13.
 तेन तुल्यः स्मृतो राजा 200, 4.
 दत्तानामिह दानाभाम् 192, 17.
 दशध्वजिसमा वेश्या 200, 2.
 दशसूनासहस्राणि 200, 3.
 दशसुनिसशश्री 200, 4.
 देश-कालाभ्युपगतो 415, 5.
 पतन्तु त्रायि यस्मात् 185, 9.

- पञ्चादवृथादानम् 188, 16.
 पतिपरेषु यद्वत् 139, 4.
 पौर्णमासीषु सर्वासु 192, 16.
 बाल्ये वा दासभावेन 184, 9.
 ब्रह्मबन्धौ च यद्वत् 189, 3.
 मुक्तिं दद्यात् तु भोक्तव्यम् 137, 5.
 यजन्ते भूभुजां तेषाम् 200, 9.
 यस्योपयोगि यद्व्ययम् 192, 1.
 ये न गन्ति सदा विष्णुम् 216, 3.
 येषां न यज्ञरुषः 200, 12.
 येषां न विषये विप्राः 200, 8.
 येषां पाषण्डसङ्कीर्णम् 200, 10.
 वर्णसङ्करभावेन 184, 8.
 वेदविक्रयकं चैव 189, 1.
 प्रेशाखी कार्तिकी माघी 192, 15.

- व्यर्थमब्राह्मणे दानम् 188, 18.
 सर्वपापविनिर्मुक्तो 216, 4.
 सत्त्विकानां फलं भुङ्क्ते 184, 11.

- साजर्थ्ये सति दुर्बुद्धिर् 178, 9.
 सीदते द्विजमुख्याय 178, 8.
 स्त्रीभिर्जितेषु यद्वत् 189, 2.

१०४. विष्णुपुराणम्—

- अकिञ्चनमसम्बन्धम् 398, 19.
 अगस्तिरभिर्वडवानलश्च 433, 13.
 अभिरुग्णाय यत्त्वन्नम् 433, 7.
 अज्ञातकुल-नामानम् 398, 17.
 अतिथियहणार्थाय 393, 6.

- अतिथिं चाऽऽगच्छं तत्र 440, 2.
 अनायासप्रदायीनि 434, 6. 439, 7.
 अनुज्ञातश्च भिक्षान्नम् 152, 6.
 अन्तःप्राण्यवपन्नां च 227, 18.
 अन्ते पुनर्द्विवाशी तु 421, 16.
 अन्नं मुष्टिकरं चास्तु 433, 12.
 अन्नं बलाय मे भूमेः 433, 9.
 अन्यत्र सूतका-ऽऽशौच- 302, 2.
 अपोडया तयोः कामम् 220, 8.
 अभीष्टदेवतानां च 433, 6.
 अभुक्तवस्तु चैतेषु 414, 8.
 अभीयात्तन्मना भूत्वा 421, 13.
 आचम्य च ततो दद्यात् 364, 4.
 आदर्शाञ्जन-माङ्गल्य- 320, 17.
 आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तम् 361, 1.
 इत्युच्चार्य नरो दद्यात् 387, 3.
 इत्युच्चार्य स्वहस्तेन 434, 5.
 उपतिष्ठन्ति वै सन्ध्याम् 301, 5.
 उपतिष्ठेत् तथा कुर्यात् 152, 2.
 उभे सन्ध्ये रविं भूप 152, 1.
 कूपेषु द्यूततोयं 285, 3.
 कृतपादादिशौचश्च 440, 7.
 क्षिपेत् पयोऽञ्जुलींस्त्रीस्तु 361, 2.
 गच्छेदस्फुटितां शय्याम् 440, 8.
 गुरवे मातुलादीनाम् 359, 6.
 चतुर्दशो लोकगणो य एषः 386, 17.
 जगत्सवित्रे शुचये 364, 6.
 ततश्च प्राह भगवान् 142, 11.
 ततः सुवासिनी-दुःखि- 414, 6.
 तनो गोदोहमात्रं वै 393, 5.
 तत्तृमये ऽन्नं भुवि दत्तमेतत् 386, 11.
 तत्रापि श्वपन्नादिभ्यः 440, 1.
 तथर्षाणां यथान्यायम् 351, 4.
 तदा तदा कलेर्वृद्धिरनुमेया द्विजो-
 त्तमैः 125, 13.
 वदा तदा कलेर्वृद्धिरनुमेया विच-
 क्षणैः 125, 11.
 तदेवाष्टगुणं पुंसाम् 440, 4.
 तस्मात्स्वशक्त्या राजैन्द्र 440, 5.
 तस्मादिदं भूतहिताय भूमौ 386, 15.
 तृथ्यर्थमन्नं हि मया विमृष्टम् 387, 1.
 तेनैवोक्तः पदेद्वेदम् 152, 5.
 तेषामेव हि तीर्थेन 351, 3.
 विरपः प्रीणनार्थाय 351, 3.
 त्वया तस्मात्समस्तानि 142, 4.
 त्वया तस्मान्महाभाग 142, 6.
 दत्तावकाशो नभसा 483, 8.
 दद्यात्पैत्रेण तीर्थेन 359, 4.
 दानं च दद्याच्छूद्रोऽपि 481, 11.
 दिनं नयेत्ततः सन्ध्याम् 439, 9.
 दिवातिथौ तु विमुखे 440, 3.
 दूरादावस्थान्मृत्रम् 224, 14.
 देवतापारमार्थ्यं च 142, 8.
 देवा मनुष्याः पशवो वयांसि 386, 1.
 द्विजशुश्रूषयैर्वैषः 480, 11.
 धर्ममयसुखोदर्कम् 220, 10.
 न च जन्तुमयीं शय्याम् 443, 10.
 नदी-नन्द-तडागेषु 385, 1.

न प्रीतिर्वेदवादिषु 125, 12.
 नभस्समासस्य चकृष्णपक्षे 156, 10.
 नमो विवस्वते ब्रह्मन् 364, 5.
 न साम-यजु-ऋग्वर्ग-83, 9.
 नाऽविशालां न वै भग्नम् 443, 9.
 निजाज्जयति वै लोकान् 480, 12.
 नित्यं क्रियार्थं स्नायीत 285, 2.
 नैकवैद्यः प्रवर्तेत 265, 11.
 नैर्ऋत्यामिषुविक्षेपम् 224, 13.
 परित्यजेदर्थ-कौमौ 220, 9.
 पितृणां प्रीणनार्थाय 351, 5.
 पि-यादिकं च वै सर्वम् 481, 12.
 पिपीलिकाः कीट-पतङ्ग-कायाः
 386, 5.
 पुनः पाकमुपादाय 439, 19.
 पुराणसंहिताकर्ता 142, 7.
 पुलस्त्येन यदुक्तं ते 142, 12.
 पूजयेत् पूजिते तस्मिन् 440, 6.
 पूजयेदतिथिं सम्यक् 393, 18.
 प्रयान्तु ते तृप्तिमिदं मया च 386, 7.
 प्रवृत्ते च भिवृत्ते च 142, 9.
 प्राग्ब्रह्मै पुरुषोऽश्रीयात् 421, 15.
 प्राच्यां दिशि शिरः शस्तम् 441, 8.
 प्राणपान-समानानाम् 433, 11.
 प्रेताः पिशाचास्तरवः समस्ताः
 285, 3.
 ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थय 220, 6.
 भवत्वेतैत्परिणतम् 283, 10.
 भुवि भूतेष्वकाराय 387, 4.

भूतानि सर्वाणि तथाऽश्नुमेतत्
 386, 13.
 भोजयेत्संस्कृताग्नेन 414, 7.
 मत्प्रसादादसन्दिग्धा 142, 10.
 मात्रे प्रमात्रे तन्मात्रे 359, 5.
 मृतश्च गत्वा नरकम् 414, 9.
 यदा यदा सतां हानिः 125, 10.
 येषां न माता न पिता न बन्धुः
 386, 9.
 लवणांस्तौ तथा मध्ये 421, 14.
 वर्गाश्रमाचारवती 83, 8.
 वल्मीक-मूषकोत्खाताम् 227, 16.
 विबुध्य चिन्तयेद्धर्मम् 220, 7.
 विष्णुरत्ता तथैवान्नम् 434, 3.
 विष्णुः समस्तेन्द्रिय-देह-देहि- 433,
 17.
 वैरे महति मद्वाक्यात् 142, 3.
 वैशाखमासस्य च या तृतीया
 156, 8.
 वैश्वदेवानिपित्तं वै 439, 20.
 व्रजन्ति ते दुरात्मानः 301, 6.
 व्रतानि चरता माद्यो 152, 7.
 शिष्यो गुरोर्न श्रेष्ठ 152, 4.
 शुचिस्त्वधरः स्नानो 351, 1.
 शौचावशिष्टां गेहाच्च 227, 17.
 सच्छास्त्रादिविनेदेन 439, 8.
 सत्येन तेन मे भुक्तम् 434, 4.
 सत्येन तेनाभिमशेषमेतत् 434, 1.
 सदेव स्वपतः पुंसो 441, 9.
 सन्नतेर्नमोऽष्टेदः 142, 5.

सर्वकालमुपस्थानम् 302, 1.
 सुखं ममैतत्परिणामसम्भवम् 433,
 15.
 स्थिते तिष्ठेद्ब्रजेद् याते 852, 3.
 स्वस्थः अशान्तचित्तस्तु 433, 5.
 स्वाचीन्तश्च ततः कुर्यात् 320, 46.
 स्वाध्याय-श्रोत्र-चरणम् 405, 10.
 हिरण्यगर्भबुद्ध्या तम् 405, 11.

१०५. विष्णुः—

अतिथिर्यस्य भग्नशो 403, 1.
 अधस्ताच्छतकृत्वोऽपि 248, 6.
 अनभ्यसूया च तथा 81, 13.
 अन्नं व्याहृतिभिर्हुत्वा 382, 18.
 अरुणोदयवेलायाम् 280, 16.
 अहिंसा गुरुशुभ्रषा 81, 11.
 आगःस्त्रपि तथाऽन्येषु 455, 1.
 आचम्य प्रयतः पश्चात् 879, 9.
 आत्मवत्त्वमलोभत्वम् 81, 12.
 आदित्यादिग्रहाणां च 493, 7.
 उत्थायोत्थाय बोद्धव्यं
 किमद्य 220, 14.
 उत्थायोत्थाय बोद्धव्यं
 महद्भयम् 220, 16.
 उदुत्यमिति मन्त्रेण 296, 9.
 कण्टकि-क्षीरवृक्षोत्थम् 251, 11.
 कनिष्ठाङ्गुलिवत् स्थूलम् 251, 12.
 कराभ्यामञ्जलिं कृत्वा 296, 8.
 क्षत्र-विंद-शूद्रजातीनाम् 251, 16.
 क्षमा सत्यं दमः शौचम् 84, 10.

जन्मप्रभृति यत्किञ्चित् 313, 9.
 जान्वोरूर्ध्वं जले तिष्ठन् 241, 5.
 ततः कृत्वा निव्रीतं तु 352, 4.
 ततो ऽष्टे निमग्नः 275, 13.
 तत्र दानैदिकं कुर्यात् 193, 9.
 तद्विष्णोः परमं पदम् 275, 11.
 तर्पयेत्तु यथाकामम् 353, 16.
 तस्मात् सुकृतमादाय 403, 2.
 तृष्णीमेव हि शूद्रस्य 271, 5.
 दण्डं प्रकल्पयेद्भ्रातृ 455, 2.
 इत्तं वा दापितं वा ऽपि 220, 15.
 दन्तधावनमुद्दिष्टम् 251, 13.
 दिनक्षयो दिनच्छिद्रम् 193, 6.
 देशे न चाऽशुचौ नाऽर्धे 443, 6.
 इन्द्रशङ्खलोकं विप्रे 251, 15.
 न गजभग्नकृते 442, 13.
 न घटासिक्त-443, 1.
 न चपल-443, 3.
 न धान्य-443, 4.
 न नम-442, 12.
 न नारीमध्ये 443, 3.
 न पञ्चदशकृते 442, 13.
 न पलाशशत्रवे 442, 12.
 न भिक्षे 443, 1.
 नमस्कारं प्रकुर्वीत 327, 10.
 नवम्यां भानुवारे च 253, 7.
 न त्रिशुद्धकृते 443, 1.
 न दमशान-443, 2.
 नाऽऽकाशे 442, 12.

नाभिषुष्टे 443, 1.
 नापस्मिन्नितम् 146, 14.
 नार्द्रप्रादः स्वपेत् 442, 11.
 नार्द्रवंशे 442, 12.
 नात्रामोति गृही लोकान् 216, 15.
 नोच्छिष्टो न दिवा 443, 5.
 मोक्षरापरा-442, 11.
 नोपतिष्ठसि भद्रारि 353, 4.
 पितुर्गृहे तु या कन्या 131, 9.
 पुनर्कृतु-बुधोपेता 280, 17.
 पुरुषसूक्तं वा 276, 1.
 प्रजापतेर्हविर्हुत्वा 382, 19.
 प्रतिपदार्श-पञ्चषु 253, 6.
 राजापत्येन तीर्थेन 352, 5.
 बहुशुक्लेन्धने चामौ 316, 15.
 बालाश्च तरुणा वृद्धाः 281, 15.
 बाले समानवयसि 334, 17.
 ब्रह्म-क्षत्र-विशां चैव 271, 4.
 भृणहत्यापितुस्तस्याः 131, 10.
 139, 10.
 मन्दामिरामथावी च 316, 18.
 मरण-व्याधि-श्लोकानाम् 220, 17.
 माघे क्षास्युषसि स्नात्वा 281, 17.
 यत्राभूचि स्थलं वा स्यात् 353, 15.
 युज्जते नमः 276, 1.
 यो ऽनृक्षि जुहोत्यग्नौ 316, 17.
 विज्ञेयः पुण्यकाशेऽयम् 192, 3.
 विधूमे लेलिहाने च 316, 16.
 सभासु चैव सर्वसु 327, 6.

सर्वं तन्निष्कलं याति 323, 10.
 सुसूक्ष्मं सूक्ष्मदन्तस्य
 सूर्यग्रहणतुल्या तु 280, 15.
 स्थले स्थित्वा जले यस्तु 353, 3.
 स्थूलं विषमदन्तस्य 251, 14.
 स्नातधार्द्रवासाः 276, 1.
 स्नात्वा माघे शुभे तीर्थे 281, 16.
 स्नानार्हो यो निमित्तेन 279, 8.
 स्नातःसु विधिवत्स्नात्वा 280, 18.
 स्वाध्यागेनाग्निहोत्रेण 216, 14.

१०६. वृद्धगार्ग्यः—

तदहर्नैव भुञ्जीत 437, 2.
 सन्ध्याकाले यदा राहुः 437, 1.

१०७. वृद्धगौतमः—

चन्द्रग्रहे तु यामांस्त्रीन् 436, 7.
 चन्द्र-सूर्यग्रहे नाद्यान् 437, 9.
 राहोर्भिमुक्तिं विज्ञाय 437, 10.
 सूर्यग्रहे तु नाग्नीयात् 436, 6.

१०८. वृद्धपराशरः—

अनस्थि शतमेरुं तु 138, 9.
 अनेन विधिना वाऽपि 138, 13.
 अवध्याः सर्व एविते 138, 7.
 अस्थिभ्रूधे तु द्विगुणम् 132, 12.
 उपविष्टस्तु त्रिगुणम् 230, 9.
 उपोष्यैकाहमादध्यात् 138, 10.
 क्रायेन पदभ्यां हस्ताभ्याम् 138,
 14.
 कृत्वा तु मानसं पापम् 138, 16.
 कृत्वाथ शौचं प्रक्षाल्य 234, 11.

कृत्वोपवीतं सव्यासि 284, 13.
 चतुर्गुणं कर्मकृते 188, 15.
 जरयुजा-जण्डजाश्चैव 138, 6.
 त्रिःशानमुदक्ते कृत्वा 138, 11.
 निबद्धशिखर-कच्छस्तु 234, 12.
 निश्चयार्थं विबुधानाम् 138, 8.
 स कुर्यादर्धस्त्रीचं तु 230, 10.

१०९. वृद्धमनुः—

अनिन्दन् भक्षयोजित्यम् 427, 15.
 अभोज्यं तद्वेदभक्षम् 426, 4.
 असत्सु विनियुज्जीत 188, 12.
 अस्पृश्यस्पर्शने चैव 288, 2.
 आरोग्य-पुत्र-मित्रार्थी 288, 4.
 औदुम्बराय दध्नाय 361, 8.
 कुष्णाङ्गारचतुर्दश्याम् 361, 5.
 दीपोत्सवचतुर्दश्याम् 361, 4.
 धर्मार्थं नोपयुक्ते च 188, 14.
 न पिबेन्न च भुज्जीत 426, 1.
 नैकहस्तेन च जलम् 426, 2.
 पञ्च मासान् महामौनम् 427, 16.
 पात्रभूतोऽपि यो विप्रः 188, 11.
 पिबतो यस्पतेत्तोयम् 426, 3.
 पिबेद्यदि हि तन्मोहात् 426, 6.
 पीतावशेषितं तोयम् 426, 5.
 पीत्वाऽऽपोशनमभीयात् 422, 12.
 पौर्णमास्यां तथा दर्शे 288, 5.
 भार्या-भृतक-दासेभ्यः 422, 13.
 मृते जन्मनि सङ्क्रान्ती 288, 1.
 यमाय धर्मराजाय 361, 6.

वृकोदयाय चित्राय 361, 9.
 वैवस्वताय कालम् 361, 7.
 सं गोहत्याकृतं पापम् 288, 1.
 सङ्क्रान्त्यां भानुवारे च 288, 3.
 सञ्चयं कुरुते यश्च 188, 13.

११०. वृद्धपातवल्गवः—

इष्टका-लौष्ट-पाषाणैः 254, 1.
 मुक्त्वा चानामिकाङ्गुली 254, 2.

१११. वृद्धवसिष्ठः—

अनुम्रिकस्तु यो विप्रः 388, 15.
 एतद्विष्णुपदं नाम 192, 11.
 कन्यायां मिथुने मीने 192, 12.
 प्रस्तोदये विधोः पूर्वम् 436, 15.
 ग्रहणं तु भवेदिन्द्रोः 435, 17.
 चतुर्थे ग्रहरे त्वेत्स्यात् 435, 20.
 शष-कर्कटसङ्क्रान्ती 192, 8.
 भुज्जीतावर्तनात् पूर्वम् 435, 18.
 रवेस्त्वावर्तनादूर्ध्वम् 435, 19.
 विषुवे च तुला-मेषौ 152, 9.
 वृष-वृश्चिक-कुम्भेषु 192, 10.
 षडशीतिमुखाः प्रोक्ताः 192, 13.
 हुत्वा शाकलमन्त्रैश्च 382, 16.

११२. वृद्धशङ्खः—

कर्णयुग्मे तथा सृष्टे 250, 8.
 गङ्गा च यमुना चैव 250, 4.
 तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन 238, 7.
 त्रिःप्रांभीयाद् यदम्भस्तु 250, 2.
 नाभिसंस्पर्शनांभ्राणाः 250, 10.
 नाभिं च हृदयं तद्वत् 238, 9.

नासत्य-दसौ प्रीयेते 250, 6.
 पाक्षभ्यां प्रीयते विष्णुः 250, 5.
 ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च 250, 3.
 मध्यमाङ्गुष्ठयोगेन 238, 8.
 मूर्धसंस्पर्शनादेस्य 250, 12.
 संस्पृशेच्च ततः शीर्षम् 238, 10.
 संस्पृष्टे हृदये चास्य 250, 11.
 स्कन्धयोः स्पर्शनादेव 250, 9.
 स्पृष्टे लोचनयुग्मे तु 250, 7.

११३. वैयासिकं योग-

भाष्यम्—

अवृत्तिकम् 43, 1.
 कादाचित्क-42, 10.
 तत्र क्षिप्त-43, 2.
 तत्र प्रतिक्षेपम् 42, 8.
 निद्रा तन्द्रा 42, 10.
 यम-नियमाद्यष्टाङ्ग-42, 11.
 यस्त्वेकामे 43, 5.
 विक्षिप्तेऽपि 43, 2.
 विपक्ष-43, 4.
 ११४. व्याघ्रपादः—
 आ. मृत्योश्चाचरन् शौचम् 233, 9.
 उशभ्यामपि हस्ताभ्याम् 352, 10.
 एवं यो ब्राह्मणो नित्यम् 249, 15.
 गङ्गातोयेन कृत्स्नेन 233, 8.
 प्रातःस्नानी भवेन्नित्यम् 269, 12.
 ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तम् 249, 16.
 मञ्जलाभ्यां स्मृतं बाह्यम् 333, 7.
 शौचं तु द्विविधं प्रोक्तम् 233, 6.

समूढो नरकं याति 352, 11.

११५. व्यासः—

अक्षरद्वयमभ्यस्तम् 178, 16.
 अतिदूरागतः भ्रान्तः 397, 3.
 अध्यगः क्षीणवृत्तिश्च 411, 16.
 अनध्यायेन्वधीतं यत् 154, 15.
 अनन्तं दुहितुर्दानम् 186, 12.
 अनुत्स्पृष्टेषु न स्नायात् 285, 15.
 अपां द्वादशगण्डूषैः 253, 17.
 अपि वा जातिमात्रेभ्यः 197, 9.
 अपुत्राय ददाम्येतत् 362, 5.
 अभियाद्य ततो विप्रम् 306, 11.
 अमुक्तयोरस्तगयोः 435, 14.
 अर्हन्ति पितरस्त्वींस्त्रीन् 351, 9.
 अलक्ष्मीः कालकर्णी च 259, 2.
 अलाभे दन्तकाष्ठानाम् 253, 16.
 आत्मीयेऽपि न स्नायात् 286, 1.
 आदित्याभिमुखस्तिष्ठन् 296, 2.
 आपोहिष्ठेत्यृचैः कुर्यात् 293, 3.
 आवाहन-स्वभाकार-383, 13.
 उदितं तं विजानीयात् 314, 14.
 उपास्ते सन्धिबेलायाम् 289, 4.
 उपःकाले तु सम्प्राप्ते 258, 9.
 ऋषीणामृषिता नित्यम् 259, 1.
 एकमप्याशयेन्नित्यम् 188, 17.
 एकैकमञ्जलिं देवाः 351, 8.
 एतैर्वेवाधिसक्तस्तु 306, 10.
 एवमादिषु तीर्थेषु 195, 4.
 कराभ्यां तोयमादाय 296, 1.

कस्तस्या निष्कृतिं कर्तुम् 333, 11.
 काले त्वनुदितं प्राहुः 313, 19.
 कुटुम्बं पीडयित्वाऽपि 190, 8.
 कुटुम्बार्थे तु सच्छूद्रात् 197, 18.
 कुरुक्षेत्रे श्रयातीर्थे 195, 3.
 कृतापसव्यः स्वधया 379, 4.
 कोटिजाप्येन राजेन्द्र 310/10.
 क्रत्वर्थमात्मने चैव 198, 1.
 क्षीरिणो वृक्ष-गुल्मादीन् 251, 9.
 ख्याता तीर्थे शतगुणा 298, 4.
 गङ्गाक्षरे प्रयागे च 195, 1.
 गङ्गापुत्राय भीष्माय 362, 4.
 गतप्रत्यागतं यच्च 286, 3.
 गायत्री नाम पूर्वाह्ने 289, 11.
 गायत्री प्रोच्यते तस्मात् 289, 14.
 गृहे त्वेकगुणा सन्ध्या 293, 1.
 गेहे ऽपि शस्यते स्नानम् 288, 11.
 ग्रहकाले च नाश्रीयत् 435, 12.
 जगतः प्रसवित्री वा 289, 16.
 जपकाले न भाषेत 306, 9.
 जायात्मजेषु यत्तम् 186, 10.
 जुहुयात् सर्पिषाभ्यक्तम् 381, 12.
 तत्पापं प्रणुदत्यशु 310, 6.
 तत्राप्यशक्तः करणे 318, 11.
 तथा प्रभातसमये 314, 1.
 तदिदं देहि देहीति 178, 17.
 तपः स्वधर्मवर्तित्वम् 120, 7.
 तस्मात् सर्वप्रयत्नेन 337, 8.
 तस्मिन्नाचमनं कुर्यात् 431, 13.

तस्य नायं भव परो 413, 15.
 तामेव सैन्ध्यां तस्मात् 289, 5.
 तिक्तं कषायं कटुकम् 251, 8.
 तिस्रः कौटशोऽर्धकोटी च 263, 18.
 तैरेवात्रैवालं दद्यात् 379, 3.
 दक्षिणं बाहुमुद्धृत्य 251, 7.
 क्त्वा तु दक्षिणां शक्त्या 388, 16.
 दध्यक्तं पयसाक्तं वा 431, 13.
 दशकृत्वः प्रजप्ता सा 310, 5.
 दातव्यं भिक्षवे चार्द्रम् 190, 9.
 दीयमानं रुदत्यन्नम् 395, 18.
 द्विजातिभ्यो धनं विलिप्सेत् 107, 8.
 धनलाभे प्रवृत्तस्तु 199, 5.
 न चासमाहितमनाः 306, 4.
 नद्या यच्च परिभ्रष्टम् 286, 2.
 न पदा पादमाक्रम्य 306, 7.
 न भिक्षां प्रतिपद्येत 290, 16.
 न भुक्त्वा ऽलङ्कृतो योगी 270, 3.
 न वृथानारिमन्थानाम् 270, 15.
 नष्टशौचे व्रतभ्रष्टे 395, 17.
 न सङ्गमन्नं च हसन् 306, 8.
 नाद्यात्सूर्यग्रहात् पूर्वम् 435, 11.
 नान्तर्वासो विना जातु 263, 5.
 नान्यतो ज्ञायते धर्मः 337, 7.
 नृपाभितो न जल्पन् 306, 2.
 नित्यं भ्रष्टे त्यजेदेतान् 388, 15.
 नित्यं भ्रष्टे ऽर्घ्य-गन्धार्यम् 388, 11.
 नोत्तरीयमधः कुर्यात् 263, 4.
 न्यस्य पात्रं तु भुञ्जीत 417, 6.

पञ्चयज्ञास्तु यो मोहात् 413, 14.
 पञ्चाश्रौ भोजनं-कुर्यात् 415, 11.
 पलाश-पद्मत्रेषु 416, 9.
 पितामही पितृव्यस्त्री 332, 10.
 पितुः शतगुणं हातम् 186, 11.
 पूर्वजैः स्नातकार्थत्विक् 332, 8.
 प्रक्षाल्य हस्तौ पादौ च 251, 6.
 प्रणव-व्याहतिस्नाम् 303, 9.
 प्रणवेन तु संयुक्तम् 293, 4.
 प्रतिग्रहनिमित्तं च 154, 16.
 प्रतिग्रहरुचिर्न स्यात् 199, 2.
 प्रतिग्रहादन्नदोषात् 239, 13.
 प्राणैरपि प्रियान् पुत्रान् 333, 10.
 प्रातःस्नानेन पापानि 259, 3.
 बहिःसन्ध्या दशगुणा 298, 3.
 ब्रह्मचर्यादिनियमो 388, 14.
 ब्रह्मचारि-यतीनां च 416, 10.
 भृत्य-पुत्र-कलत्रार्थी 355, 12.
 मकरे चाट्टहासे च 195, 2.
 मन्त्रपूतं जले स्नानम् 270, 14.
 मातामहो मातुलश्च 332, 7.
 माता-पित्रोश्च यद्वत्तम् 186, 9.
 मातृष्वसा मातुलानी 332, 9.
 मारान् दशोदरस्थं या 333, 8.
 मुक्ते शशिनि भुञ्जीत 435, 13.
 यतिश्च ब्रह्मचारी च 411, 15.
 यशुस्तिष्ठत्यनाचरन्तो 431, 14.
 यः पूज्यते जतिभिः सम्यक् 397, 4.
 रजस्तमो-मोहजातान् 293, 6.

रविर्यावन्न दृश्येत 314, 2.
 राध्यास्तु षोडशे भागे 313, 18.
 रेखामात्रस्तु दृश्येत 314, 3.
 लक्षजाप्येन च तथा 310, 9.
 वसन्ति सर्वतीर्थानि 263, 16.
 वाङ्-मनः-कायजान् दोषान् 293, 7.
 विप्रुषां प्रादसंस्पर्शः 417, 8.
 विप्रुषो ज्यैष्ठ्ये शिपेदूर्ध्वम् 293, 5.
 वृत्तिसङ्कोचमन्विच्छेत् 199, 4.
 वेदनाधिविधेर्दुःखैः 333, 9.
 धैर्यान्नपादगोत्राय 362, 3.
 वैश्वदेवं प्रकुर्वीत 379, 1.
 शतजप्ता तु सा देवी 310, 7.
 शतसाहस्रिका नद्याम् 298, 2.
 शीतास्वप्नु निषिच्योष्णाः
 288, 10.
 शुक्लाष्टम्यं तु माघस्य 362, 1.
 शेषमुद्धृत्य भोक्तव्यम् 417, 7.
 भ्रात्रे कर्तुर्निषेधोऽयम् 253, 15.
 भ्रात्रे यज्ञे च नियमात् 253, 14.
 भ्रौत कर्तुं न चेच्छक्तः 318, 10.
 स देवांश्च पितृभ्यश्च 431, 12.
 सप्तम्यं रविवारे च 355, 11.
 सर्वान् पितृगणान् सम्यक् 388, 1.
 सरस्वती च सायाह्ने 289, 12.
 सवितृश्रोतनात् सैव 289, 15.
 सहस्रजप्ता सा देवी 310, 8.
 सेवत्सरकृतं पापम् 362, 2.
 संस्कृतासौ हि विविधैः 372, 2.

सुखेन मुडङ्गे विभो हि 417, 9.
 सोऽहमस्मीत्युपासीत 290, 17.
 स्थित्यर्थादधिकं गृह्णन् 199, 3.
 ज्ञानं मध्यन्दिने कुर्यात् 270, 7.
 ज्ञानं सद्यः प्रकुर्वीत 431, 15.
 ज्ञायाम्नेदीषु शुद्धासु 258, 10.
 हस्तं प्रक्षाल्य गण्डूषम् 431, 11.
 हस्तौ पादौ तथैवास्यम् 415, 12.

११६. व्याससूत्राणि—

अत एव च नित्यत्वम् 113, 13.
 अत एव चाग्नी— 58, 17.
 अथातो 38, 7.
 अभिमानिव्यपदेशस्तु 52, 10.
 आसीनः 44, 7.
 परामर्शं जैमिनिः 56, 9.
 यत्रैकाग्रता 41, 12.
 विपर्ययेण तु 96, 16.
 विहितत्वाच्च 60, 10.
 सर्वापेक्षा च 59, 1.

११७. शङ्ख-लिखितौ—

अङ्गुष्ठमूलस्य 235, 14.
 अन्यथा विप्रवः 477, 15.
 आहारं मैथुनं निद्राम् 194, 4.
 उभाभ्यामपि हस्ताभ्याम् 352, 1.
 कनिष्ठा-तलयोः 285, 16.
 कर्मचाध्यापनं चैव 194, 5.
 गा रक्षेत् 477, 11.
 तास्वपीतासु 477, 11.
 न तिष्ठत्सु 477, 11.

न तीर्थे 477, 13.
 न स्वयम् 477, 12.
 पूर्वणाङ्गुलिपत्रेणि 285, 17.
 प्रदेशिन्यङ्गुष्ठयोः 235, 15.
 बाल-वृद्ध-रोगार्तानाम् 477, 14.
 शूनैरार्द्रशाखया 477, 12.

• ११८. शङ्खः—

अङ्गिः समुद्धृताभिस्तु 236, 2.
 अयातयामान्येतानि, 256, 8.
 अस्नातश्च पुमाज्जाहो 268, 14.
 ओदित्या वसवो रुद्रा 315, 3.
 आपः पुण्याः पवित्राश्च 278, 4.
 कुशवृक्ष्यां समासीनः 303, 5.
 कुशाभावे द्विजश्रेष्ठः 255, 9.
 क्रियास्नानं प्रवक्ष्यामि 284, 8.
 क्रियास्नानं समुद्दिष्टम् 269, 6.
 गवां गोष्ठे दशगुणम् 307, 13.
 गृहे त्वेकगुणं जप्यम् 307, 12.
 चण्डाल-शव-यूपांश्च 268, 16.
 जप्तुकामः पवित्राणि 269, 3.
 जले त्रिमग्नस्तुन्मज्ज्य 284, 8.
 तद्धि काम्यं समुद्दिष्टम् 269, 3.
 तयोस्तु वारुणं मुख्यम् 268, 7.
 तर्पणादीनि कर्मभिः 255, 10.
 तीर्थमावाहयिष्यामि 275, 1.
 284, 12.
 तीर्थस्योऽऽवाहनं कुर्यात् 284, 9.
 दन्तवक्षेतलमेतु 243, 18.
 दर्भाः कृष्णतज्जिनं मन्त्राः 226, 7.

न-प्रतिगृह्णीयात् 426, 19.
 नाधिकं दद्यात् 426, 19.
 नास्त्युक्तो ऽध्यासिनस्यः 426, 18.
 नोदिकुम्भहस्तो 329, 10.
 पुष्यज्ञानादिकं यत्तु 269, 1.
 प्रपद्ये वरुणं देवम् 284, 13.
 284, 10.
 प्रातःस्नानं तदर्थं तु 268, 15.
 प्रातःसन्ध्यां सनक्षत्राम् 297, 16.
 मण्डलान्युपजीवेन्ति 415, 4.
 मलापकर्षणं नाम 269, 5.
 मलापकर्षणार्थाय 269, 6.
 मृद्गिरिश्च कर्तव्यम् 284, 7.
 याचितं देहि मे तीर्थम् 274, 14.
 284, 11.
 रुद्रान् प्रपद्ये वरदान् 275, 3.
 वह्निना न च तप्ताभिः 236, 3.
 शमयन्त्याशु मे पापम् 275, 5.
 शरीरशुद्धिर्विशेषा 286, 12.
 सरःसु देवखातेषु 269, 7.
 सहस्र-शत-कोटीनाम् 307, 15.
 सादित्यां पश्चिमां सन्ध्याम् 297, 17.
 सान्निध्यमस्मिस्तोये च 275, 2.
 284, 13.
 सिद्धक्षेत्रेषु तीर्थेषु 307, 14.
 स्नार्तस्य वह्नितप्तेन 286, 11.
 स्नानं तु द्विविधं प्रोक्तम् 268, 6.
 स्नानं समाचरेद्यस्तु 269, 14.
 स्नानार्हस्तु यदा स्नानं 268, 17.

११९ शातातपः—

अध्यासनोपविष्टस्तु 426, 21.
 अनृतं मद्यगन्धं च 298, 6.
 अन्यैरपि कृते कृपे 286, 5.
 अभिवाद्य द्विजो मोहात् 330, 14.
 अभिवाद्य द्विजः शूद्रम् 327, 6.
 अभिवाद्यो नमस्कार्यः 327, 2.
 अयनादौ सदा देयम् 192, 3.
 अशक्तौ श्रौतमप्यन्यः 317, 16.
 अशून्यं तु करं कुर्यात् 256, 14.
 आचम्य पात्रमुद्धृत्य 431, 15.
 आर्द्रमलकमात्रास्तु 232, 3.
 उदक्यां सूतिकां नारीम् 330, 13.
 उद्धृत्य वामहस्तेन 426, 11.
 एका लिङ्गे करे सव्ये 223, 17.
 कर्दमाखूत्करालेपात् 271, 10.
 कृतशौचाद्वशेषाच्च 271, 11.
 नित्ते विभावयेत्तस्मिन् 405, 8.
 जपे होमे च दाने च 256, 13.
 ज्ञातिभ्रैष्ठ्यं समाप्नोति 433, 3.
 ज्ञान-कर्म-गुणोपेताः 327, 5.
 तत्र स्नात्वा च पीत्वा च 286, 6.
 तथैवाहुतयः सर्वाः 232, 4.
 तानि नित्यं ददात्यर्कः 192, 6.
 ताम्बूले चक्षुदण्डे च 244, 2.
 तिर्यग्योनिशतं गत्वा 179, 10.
 दन्तलभे फले मूले 244, 7.
 न गोमूत्र-पुरीषे तु 271, 13.
 नष्टं देवलं को दत्तम् 188, 5.

नाभिवाद्यस्तु, विप्रैः 327, 4.
 नावाप्नोति गृही लोकान् 404, 7.
 पाणि मूर्ध्नि समाधाय 433, 2.
 पुनति वृषलस्यान्नम् 298, 7.
 बहूनां पद्मतां सोऽज्ञः 426, 22.
 ब्राह्मणः क्षत्रियाद्यैस्तु 327, 7.
 ब्राह्मणानां शतं सम्यक् 327, 3.
 भुक्त्वा चैव प्रतिष्ठेत 433, 1.
 भोजने चैव दाने च 187, 2.
 मा ददस्वेति यो ब्रूयात् 179, 9.
 मुख्यान् प्राणान् समालभ्य
 432, 16.

मृत्रशौचं समाख्यातम् 223, 18.
 मृत्तिकाभक्षणं चैव 428, 2.
 मृत्तिकां गोमयं वापि 271, 12.
 यच्च वाणिजके दत्तम् 188, 6.
 रक्ता गौरा तथा श्वेता 271, 9.
 लौकिके वैदिके वापि 379, 18.
 वैश्वदेवस्तु कर्तव्यः 379, 19.
 शुचिदेशात् सङ्ख्याः 271, 8.
 श्रौतं यत्तत्स्वयं कुर्यात् 317, 15.
 षडशीतिमुखे चैव 192, 4.
 सक्रान्तौ यानि दत्तानि 192, 6.
 सन्निकृष्टमधीयानम् 187, 1.
 सुरापानेन तत्तुल्यम् 426, 12.
 स्वाध्यायेनाभिदोत्रेण 404, 6.
 हस्तदत्तानि चाङ्गानि 423, 7.

१२०. शिवधर्माः—

तस्माच्छिभागं दत्तस्थ 190, 4.

भागद्वयं तु धर्मार्थम् 190, 5.

१२१. शैवपुक्षणम्—

तोषयेत्तं प्रयत्नेन 377, 7.
 प्रियाणि चात्मज्ञो यानि 377, 6.
 भोगो मोक्षश्च सिद्धिश्च 377, 4.
 यो गुरुः स शिवः प्रोक्तः 377, 1.
 वेत्ताभरणभ्यास्यानि 377, 5.
 शिव-विद्या-गुरुणां 377, 2.
 शिवे मन्त्रे गुरौ यस्य 377, 3.

१२२. शैवागमः—

अल्पान्तरोगयुक्ताङ्ग- 139, 14.
 गुह्यमि-देवकृत्येषु 139, 15.

१२३. शौनकः—

अग्निर्विष्णुः प्रजापतिः 354, 3.
 अग्रमग्रं चरन्तीनाम् 273, 9.
 अपापमपकिल्विषम् 273, 16.
 अपामार्गं त्वमस्माकम् 274, 1.
 अभावे त्रीहि-यवद्वयोः 315, 20.
 अव्ययत्वमनिर्वेदो 305, 9.
 आज्यं हव्यमनादेशो 316, 4.
 इन्द्रः शुद्ध इत्यृचापः 274, 6.
 एकदेशो पृथक्कुर्यात् 272, 7.
 कनिष्ठाङ्गनामिक्ताङ्गुष्ठैः 418, 20.
 काण्डात् काण्डादिति 273, 14.
 कृतमोदनसम्भवादि 315, 17.
 कृत्वोक्तानौ करौ प्रज्ञः 305, 8.
 गायत्र्या आदित्यो 272, 14.
 ग्रामे मन्त्रसाधयीत 347, 15.
 जिहयेत्तं पसेदन्नम् 418, 12.

तनः सम्मार्जनं कुर्यात् 273, 5.
 ततो यत इन्द्रः 273, 1.
 तन्न गयेत सामानि 274, 7.
 तद्भावे यवाग्वा वः 316, 1.
 तर्जनी-मध्यमाङ्गुष्ठ- 418, 18.
 तर्जनी तु बहिः कृत्वा 418, 21.
 तासामृषभपत्नीनाम् 273, 10.
 त्वं मे रोगांश्च श्लोकांश्च 273, 11.
 नानध्याशो ऽस्ति वेदानाम् 158, 20.
 निर्त्ते जपे च कार्म्ये च 158, 19.
 प्रन्नित्रपाणिः, कृत्वा तु 346, 14.
 पुनश्च गोमयेनैव 273, 8.
 प्रयतो मृदमादाय 272, 6.
 प्राग्वोदग्वा 347, 4.
 प्राणाश्चामैर्दग्धदोषाः 316, 12.
 प्रोक्षिते तु यदा पत्नी 315, 14.
 मध्यमा-ज्जामिकाङ्गुष्ठैः 418, 19.
 मध्ये स्कन्ध-कराभ्यां तु 305, 7.
 मनसाऽधीयीत 347, 16.
 मनःसन्तोषणं शौचम् 305, 8.
 मन्त्रस्य देवतायास्तु 316, 5.
 यथाविध्यप अचम्य 346, 13.
 यथोक्तवस्त्वसम्प्राप्तौ 316, 2.
 यर्वानामिष गोधूमाः 316, 3.
 ग्रीष्मादि चाकृतं प्रोस्तम् 315, 18.
 शिवेन मे जगिष्ठेदम् 274, 8.
 सम्माने सर्वहस्तेन 418, 22.
 स्नात्वाऽऽचान्तो वारिसर्ध 260, 16.

स्वाहान्ताः प्रणवाश्च 418, 11.
 स्वाहेत्यथाऽपामार्गेण 274, 2.
 हवित्येषु यवा मुख्याः 315, 19.
 होमकाले यदि प्राप्ता 315, 15.

१२४. श्रुतिः—

अग्निः शुचिब्रततमः 66, 12.
 अत्रिरददादौर्वाय 11, 5.
 अथ सवित्रीम् 345, 14.
 अथ ह-याज्ञवल्क्यस्य 11, 6.
 अथेतेषां पशूनाम् 52, 6.
 अध्यापित्वा ये 75, 3.
 अध्वर्युर्गृहपतिम् 219, 4.
 अन्तः प्रविष्टः 214, 10.
 अत्यैः शतहुताद्दोमात् 312, 1.
 अष्टवर्षं ब्राह्मणम् 148, 1.
 आमेयमष्टाकपालम् 449, 18.
 इन्द्रं मित्रं वरुणमभिमाहुः 209,
 इमं मे वरुण- 298, 18.
 उत्तमं नार्कमधिरोहति 350, 1.
 ऋषयो वा इन्द्रम् 11, 3A
 एकं सहिषाः 209, 8.
 एतया निषादस्थपतिम् 49, 5.
 एते सर्वे 14, 5.
 कदाचनस्तरिरसि 299, 5.
 कामस्तदमे 103, 13.
 स्वादिरं वीर्यकामस्य 60, 5.
 यामै मनसाऽधीयीत 345, 17.
 ग्रीष्मे राजन्यः 182, 4.
 ग्रीष्मो वै राजन्यस्य 182, 4.

चिद्दीदं सर्वम् 09, 4. .
 तथैव तान् 75, 6.
 तद्यदिदमाहुरमुम् 210, 11.
 तमध्यापयित 148, 1.
 तस्य वा तस्य 349, 15.
 तं यथायथोपासते 210, 14.
 तं वसिष्ठः 17, 4.
 तावन्तं लोकम् 350, 4.
 त्रीनेव प्रायुङ्क्त 345, 12.
 दक्षिणत उपवीय 345, 2.
 दक्षिणोत्तरौ पाणी 345, 9.
 दर्भाणां महदुपस्तीर्य 345, 6.
 दशाववित्रेण 393, 16.
 द्रव्यमर्जयन् ब्राह्मणः 171, 2. 195, 7.
 नमो ब्रह्मणे इति 346, 4.
 न विज्ञातम् 52, 75.
 न विदुःश्वस्तनम् 52, 7.
 पशुना यजेत 393, 19.
 पुत्रैः शतहुताद्धोमात् 312, 3.
 प्रजापतिश्चैज्ञानसृजन 161, 6.
 ब्रह्मणः सायुज्यम् 350, 5.
 ब्रह्मयज्ञेन यक्ष्यमाणः 344, 9.
 ब्राह्मणो 46, 7.
 भूर्यास्तं चाक्षय्यम् 350, 4.
 मध्यन्दिने 346, 2.
 मयि वर्चो बलम् 56, 3.
 य एवं खिद्धान् शेषे 349, 5.
 यत् पितृभ्यः 337, 7.
 यच्चिराच्चासति 346, 18.

यथैव वै 75, 5.
 यदि ब्राह्मणो यजेत 450, 1.
 यदि राज्ञ्यः 450, 2.
 यदि वैश्यः 450, 3.
 यदेकस्मिन्यूपे 91, 5.
 यद्वाह्मणेभ्यो ज्ञेयम् 391, 21. 40, 4.
 यज्ञिकां रंशनाम् 91, 6.
 यवागुं च 218, 18.
 यवाग्वाग्निहोत्रम् 218, 18.
 यस्य गृहान् 160, 3.
 यस्य पिता पितामहो वा 165, 16.
 यत् प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति 296, 15.
 यावज्जीवमग्निहोत्रम् 118, 10.
 165, 6.
 यवैज्जीवं दर्श-पौर्णमासभ्याम् 165, 7.
 राजानमभिषेचयेत् 461, 8.
 राजा राजसूयेन 46, 7.
 वसन्ते ब्राह्मणः 163, 2.
 वसन्ते वसन्ते ज्योतिषा 165, 8.
 395, 1.
 वसन्ते वै 162, 2.
 विप्रा वाचा 75, 4.
 विश्वजिता यजेत 148, 16.
 वैश्यो 46, 8.
 अरदि वैश्यः 162, 6.
 अरदि वैश्यस्य 162, 6.
 शिष्यैः शतहुताद्धोमात् 312, 2.
 श्येनेनाचरन् 68, 17.
 सच्चिदानन्दरूपम् 99, 3.

- त होवाच 10, 10.
 सावित्रीं प्रणवम् 39, 12.
 सुषणं विप्राः 209, 3.
 स्कन्ने जुहोति 60, 35.
 स्व एवैनमृतावाधाय पशु- 162, 7.
 स्व एवैनमृतावाधाय ब्रह्म- 162, 3.
 हस्ताशौच आह्वेय- 345, 19.
 हिरण्यगर्भः उद्धवर्ततामे 105, 12.
 १२५. श्वेताश्वतरोपनिषद्—
 अपाणि-पादो 104, 14.
 एको देवः 208, 16.
 कर्माध्यक्षः 208, 18.
 कामः सङ्कल्पो 103, 17.
 तस्यैते कथिता धर्माः 74, 19.
 376, 13.
 ते ध्यानयोगानुगताः 78, 9.
 न तस्य कार्यं करणं च 102, 11.
 104, 8.
 परास्य शक्तिः 104, 10.
 मनेनुकूले 41, 8.
 मायं तु प्रकृतिम् 98, 3.
 यस्य देवे परा भक्तिः 74, 19. 376,
 10.
 समे शुचौ 41, 6.
 १२६. षट्त्रिंशन्मतम्—
 आचान्तः पुनराचामेत 241, 12.
 आपः स्वभावतो मेध्याः 287, 7.
 ताम्बूले चैव सोमे च 244, 4.
 तेन सन्तः प्रशंसन्ति 247, 8.
 त्वग्निः धैर्मूल-पुष्पैः 244, 6.
 दन्तलम्पस्य संस्पर्शं 244, 5.
 सुगन्धिभिस्तथा द्रव्यैः 244, 7.
 होमे भोजनकाले च 241, 11.
 १२७. सत्यव्रतः—
 अपसव्यं ततः कृत्वा 356, 8.
 ऊर्ध्वपुण्ड्रो मृदा शुभ्रो 268, 1.
 कृतोपधीती देवेभ्यो 356, 6.
 ततो मातामहानां च 359, 2.
 दर्भपाणिस्तु निधिना 356, 9.
 पितृभ्यः प्रत्यहं दद्यात् 359, 1.
 मनुष्यांस्तर्पयेद्भक्षया 356, 7.
 स चण्डालोऽपि पूतात्मा 268, 2.
 १२८. सङ्ग्रहकारः—
 अबुद्धिपूर्वकस्पर्शो 278, 4.
 त्रयाणां बुद्धिपूर्वं तु 278, 5.
 १२९. संवर्तः—
 उत्पत्ति-प्रलयौ चैव 186, 1.
 ऊर्ध्वमाचमनं प्रोक्तम् 278, 2.
 क्षत्रिये त्रिगुणं प्राहुः 186, 5.
 तत्स्पृष्टिर्न स्पृशेद्यस्तु 278, 1.
 पुत्रमांसं वरं भोक्तुम् 199, 13.
 राजप्रतिग्रहो घोरो 199, 12.
 लोकगार्तादिकं भुत्वा 306, 16.
 वेत्ति विद्यामविद्यां च 186, 2.
 शूद्रे समगुणं दानम् 186, 4.
 सङ्ख्यां विना च यज्जपम् 306,
 17.
 १३०. साङ्ख्यायनः—
 यथेकवृत्तो 222, 17.

१३१. सुमन्तुः—

अभिशास्त-पतित-175, 4.

श्रुद्रयाजक-सर्व-175, 4.

१३२. स्कन्दपुराणम्—

अतो ध्रुवर्चयेत् प्राज्ञो 194, 10.

आचार्यनिन्दाश्रवणम् 131, 1.

इत्यालोचनमर्थज्ञाः 120, 15.

एक एव शिवः साक्षात् 107, 8.

एकेन तिष्ठताऽधस्तात् 178, 4.

कोऽहं मोक्षः कथं केन 120, 14.

गुरोरनिष्टाचरणम् 130, 16.

गुरोरभावे तत्पुत्रम् 185, 13.

गुरोश्च सेवाऽकरणम् 130, 17.

ततोऽन्येषां च विप्राणाम् 185, 12.

*तथा विष्णुश्च रुद्रश्च 95, 13.

तदा दिवा न कर्तव्यम् 437, 19.

तद्दानातिक्रमे दानम् 185, 15.

*त्रिशतैः षष्टिभिः कल्पैः 95, 10.

दक्षिणाभिमुखो भूत्वा 361, 11.

दद्याद्दिमानेन सुराङ्गनाभिः 191,

14.

दातृ-याचकयोर्भेदः 179, 5.

दीयमानं तु यो मोहात् 179, 6.

देवतीर्थेन देवत्वात् 361, 12.

देवार्चनरतो विप्रः 188, 8.

देहीत्येवं ब्रुवन्नर्थी 179, 2.

* The quotations under स्कन्दपुराणम् marked with stars appear in the Sūta Samhitā, Part I., Chap. VIII.

न स ऋपेन लिख्येत 197, 2.

निवारयति पापात्मन् 179, 7.

पूर्वं निशीथाद् ग्रहणम् 437, 18.

पौत्रं प्रपौत्रं दौहित्रम् 185, 14.

प्रथमं तु गुरोर्दानम् 185, 11.

*ब्रह्मणश्च तथा विष्णोः 95, 14.

ब्रह्मणो ऽन्ते मुनिभेदाः 95, 12.

ब्रह्म-विष्णु-शिवाख्यभिः 107, 9.

ब्राह्मण्यं यः परित्यज्य 199, 17.

भोक्तव्यं तत्र पूर्वोक्तं 437, 17.

मन्देशे निरुदके 199, 15.

*माया च प्रलये काले 95, 16.

*मूर्तयो विविधास्तेषु 95, 15.

यदा चन्द्रग्रहस्तात् 437, 16.

यदिदं कष्टमर्थित्वम् 179, 3.

राजप्रतिग्रहात् पुष्टः 199, 16.

राजप्रतिग्रहादङ्घ्रिः 199, 21.

रात्रौ दानं न कर्तव्यम् 194, 7.

सैरवे नरके घोरे 199, 19.

*वर्षाणां यच्छतं तस्य 95, 11.

विवादश्च तथा तेन 131, 2.

विशेषतो निशीथे तु 194, 9.

विषयामिषलुब्धस्तु 199, 18.

वृक्षा दवाभिना दग्धाः 199, 20.

वेदोक्तेन प्रकारेण 120, 11.

शरीरशोषणं यत्तत् 120, 12.

*आन्तस्त्रयानां वृक्षितस्य पातम्

191, 12.

षडङ्गवेदवित् विप्रो 197, 1.

*सत्यबोधस्तुवानन्त- 95, 17.

र वै देवलको नाम 188, 9.
हरन्ति राक्षसा यस्मात् 194, 8.

१३३. स्मृतिः—

आदिकर्ता स भूतानाम् 106, 3.
ज्ञानादेव तु कैवल्यम् 58, 11.
देवानभ्यर्च्य गन्धेन 376, 5.
धर्मात्सुखं च ज्ञानं च 53, 1.
न वेगं धारयेत् 224, 6.
न हिंस्यात्सर्तृभूतानि 69, 2.
नोपरुद्धः 224, 6.
*यस्यैते ष्ठाचत्वारिंशत् 62, 10.
नामहस्ते जलं कृत्वा 294, 7.
स त्रै शरीरी प्रथमः 106, 9.
सा सन्ध्या वृषली ज्ञेया 294, 8.

१३४. स्मृत्यन्तरम्—

अर्घ्यं दत्त्वा तु देवाय 468, 13.
अलाभे ताम्रपात्रस्य 249, 8.
अष्टाविंशत्यनध्याये 308, 5.
अदित्यमम्बिकां विष्णुम् 365, 11.
करकालाबुकाद्यैश्च 249, 10.
करपात्रे च यत्तोयम् 249, 12.
खट्वै नौक्तिकहस्तेन 354, 10.
गायत्री तु भवेद्रक्ता 290, 2.
गायत्री ब्रह्मरूपम् तु 290, 4.
गृहीत्वा स्वयमाचामरे 249, 9.
घृक्षपात्रे तु विष्णवे 498, 15.
ततोऽलङ्कृतपात्रे सन् 468, 14.

* This line appears in the
Gautama Smṛiti.

दर्शे आदे प्रदोषे च 303, 4.
पवित्रं दक्षिणे कर्णे 222, 9.
प्रातरुत्थाय नृपतिः 463, 11.
भागधेयं श्रुतिः प्राह 364, 2.
मणि-काञ्चन-दर्भैर्वा 354, 11.
वस्त्रनिष्पीडितं तोयम् 364, 1.
सरस्वती तथा कृष्णा 290, 3.
सरस्वती विष्णुरूपा 290, 5.
सौवर्णे राजते चैव 249, 13.
स्नानशालां समागत्य 468, 12.
स्वहस्ताचमनं कार्यम् 249, 11.
हुत्वा चैव तु भस्मना 318, 18.

१३५. हारीतः—

भुच्छिन्नान् सपत्रांश्च 254, 7.
अदत्ते तु निराशास्ते 362, 17.
अनिष्टयज्ञोऽपूतात्मा 161, 4.
अनुवर्त्तनेमेतेषाम् 332, 5.
अपूजा गर्हिता दर्भाः 256, 1.
अयातयामास्ते दर्भाः 256, 5.
आर्द्रवासा जले कुर्यात् 349, 5.
आहारं तु रहः कुर्यात् 225, 17.
उपाध्यायः पिता ज्येष्ठो 331, 13.
कुर्वीत देवतापूजाम् 320, 2.
कुशहस्तस्तु यो भुङ्क्ते 254, 10.
कुशहस्तेन यज्जपम् 254, 9.
केश-भस्म-तुषाङ्गार- 353, 10.
क्रोथिताभिमिदग्धांश्च 256, 2.
गुप्ताभ्यां लक्ष्युपेतः स्यात् 225, 18.
चित्तौ दर्भाः पथि दर्भाः 255, 15.

जलपूर्णं ज्यवा गूर्णे 353, 9.
 तर्पयन्विधिना विप्रो 413, 8.
 तेषामाचरणं यत्तु 144, 3.
 देवानुषीन् पितृश्चैव 413, 7.
 देवाश्च पित्रश्चैव 362, 16.
 नास्त्ययज्ञस्य लोको वै 161, 3.
 नोत्तरेदनुपलब्धय 240, 8.
 पद्माक्षकैश्च रुद्राक्षैः 308, 18.
 पाकयज्ञान्यजन्नित्यम् 163, 9.
 पात्राद्वा जलमादाय 353, 8.
 पितृ-देव-जपार्थं तु 254, 8.
 पित्रादीन् मात्रादीन् 359, 9.
 पुत्रजीवमयी माला 309, 2.
 प्रतिपत्सु चतुर्दश्याम् 151, 20.
 ब्रह्मयज्ञेषु ये दर्माः 255, 17.
 भवेन्महीतलं यस्मात् 353, 11.
 मन्त्रार्थज्ञो जपन् जुहन् 353, 13.
 माता मातामही गुर्वी 332, 1.
 मातुलः श्वशुरस्त्राता 381, 14.
 मार्जनार्जनबलिकर्म 293, 12.
 मासे नभस्यमात्रास्या 256, 4.
 यज्ञेन पापैर्बहुभिर्विमुक्तः 161, 1.
 यज्ञेन लोका विमला विभान्ति
 160, 16.
 राजतेन्द्राक्षकैर्माला 309, 1.
 वर्णज्येष्ठः पितृव्यश्च 331, 15.
 वसित्वा वसने शुष्कम् 353, 9.
 वास्तुपाल-भूतेभ्यः 383, 5.
 विधिज्ञस्तर्पणं कुर्यात् 353, 7.

शङ्खरूप्यमयीमाला 308, 17.
 शुष्कवासा स्थले कुर्यात् 249, 6.
 शूद्रधर्मो द्विजातिभूषा 343, 2.
 श्वश्रुः पितामही ज्येष्ठा 332, 2.
 श्रोत्रेऽभ्ययिष्य शूर्वार्थम् 154, 21.
 साधवः क्षीणक्षेपाः स्युः 144, 2.
 सावित्र्यमभिमान्वितम् 296, 6.
 सुप्रक्षालितचरणतलो 150, 13.
 सौम्यास्तु विधिपूर्वेण 163, 10.
 स्तरणासनपिण्डेषु 255, 16.
 स्पर्शलोकमवाप्नोति 153, 19.
 हती मूत्रपुरीषाभ्याम् 255, 18.
 १३६. Anonymous quotations:
 अथ काण्डकषीनेतान् 357, 5.
 अव्ययस्तर्पयेन्नित्यम् 357, 6.
 आप एव सदा पुताः 287, 1.
 उच्छिष्टमितरस्त्रीणाम् 425, 13.
 क्षोड्गारश्चाज्यशब्दश्च 339, 4.
 कण्ठं भित्वा विनिर्यातौ 39, 5.
 कपिलो यदि सर्वज्ञः 31, 5.
 चोदन् अनुपलब्धेश्च 8, 12.
 ततः सर्वेषु कालेषु 287, 5.
 न तस्य दोषमिच्छन्ति 425, 12.
 प्राणिनां सर्वभूतान्यम् 430, 18.
 प्रातः शुक्लविलिः स्नात्वा 283, 16.
 प्रायोश्चिती स विज्ञेयः 425, 14.
 प्रायेणाऽनृतवादेत्वेत् 8, 11.
 ब्राह्मण्यं सह श्रोऽभूयात् 425, 11.
 रौरवे पूयानिलये 430, 17.

BOMBAY SANSKRIT SERIES.

Edited under the Superintendence of Dr. P. Peterson and Dr. R. G. Bhāṇḍārkar.

| | Rs. | a. | p. |
|--|-----|----|----|
| No. I.—Pañchatantra, Books IV. and V. Edited, with Notes, by Dr. Bühler | 0 | 4 | 0 |
| No. II.—Nāgajibhatta's Paribhāṣenduśekhara. Edited and explained by Dr. Kielhorn. The Sanskrit Text and various Readings, Part I. | 0 | 8 | 0 |
| No. III.—Pañchatantra, Books II. and III. Edited, with Notes, by Dr. Bühler. | 0 | 4 | 0 |
| No. IV.—Pañchatantra, Book I. Edited, with Notes, by Dr. F. Kielhorn | 0 | 7 | 0 |
| No. V.—The Raghuvamśa of Kālidāsa, with the Commentary of Mallinātha. Edited, with Notes, by S. P. Pandit, M.A. Part I., Cantos I.—VI. | 1 | 0 | 0 |
| No. VI.—Mālavikāgnimitra: a Sanskrit Play by Kālidāsa. Edited, with Notes, by Shankar P. Pandit, M.A. | 2 | 0 | 0 |
| No. VII.—Nāgajibhatta's Paribhāṣenduśekhara. Edited and explained by Dr. Kielhorn. Part II. (Translation and Notes), Paribhāṣās I.—XXXVII. | 0 | 8 | 0 |
| No. VIII.—The Raghuvamśa of Kālidāsa, with the Commentary of Mallinātha. Edited, with Notes, by S. P. Pandit, M.A. Part II., Cantos VII.—XIII. | 0 | 12 | 0 |
| No. IX.—Nāgajibhatta's Paribhāṣenduśekhara. Edited and explained by Dr. Kielhorn. Part II. (Translation and Notes), Paribhāṣās XXXVIII.—LXIX. | 0 | 8 | 0 |
| No. X.—The Daśakumārcharita of Daṇḍin. Part I. Edited, with Critical and Explanatory Notes, by Dr. Bühler | 0 | 8 | 0 |
| No. XI.—The Nīṭisataka and Vairāgyasataka of Bhartrihari, with extracts from two Sanskrit Commentaries. Edited, with Notes, by Mallinātha Prasad Telang, M.A. (Copies not available.) | | | |
| No. XII.—Nāgajibhatta's Paribhāṣenduśekhara. Edited and explained by Dr. Kielhorn. Part II. (Translation and Notes), Paribhāṣās LXX.—CXXII. | 0 | 8 | 0 |

| | | | |
|---|-----|----|----|
| No. XIII.—The <i>Raghuvamśa</i> of Kālidāsa, with the Commentary of Mallinātha. Edited, with Notes, by S. P. Pandit, M.A. Part III., Cantos XIV.—XIX. | Rs. | a. | p. |
| No. XIV.— <i>Vikramāditya-Charita</i> . Life of King Vikramāditya Tribhuvanamalla of Kalyāṇa, composed by his Vidgāpati Billvaṇa. Edited, with an Introduction, by Dr. G. Bühler. (Copies not available.) | 0 | 8 | 0 |
| No. XV.— <i>Mālatī-Madhava</i> : a Drama by Bhavabhūti. Edited, with Critical and Explanatory Notes, by Dr. R. G. Bhandarkar, M.A. (Second Edition in the Press.) | | | |
| No. XVI.— <i>Vikramorvaśī</i> : a Drama by Kālidāsa. Edited, with Notes, by Shankar P. Pandit, M.A. | 1 | 4 | 0 |
| No. XVII.— <i>Hemachandra's Deśināmamālā</i> . Edited, with Critical Notes, a Glossary and a Historical Introduction, by Professor R. Pischel, and Dr. G. Bühler. Part I. Text and Critical Notes by Professor Pischel. | 1 | 0 | 0 |
| No. XVIII.— <i>Vyākaraṇa-Mahābhāṣya</i> of Patañjali. Edited by Dr. F. Kielhorn. Vol. I. complete. Parts I, II. and III. | 9 | 0 | 0 |
| No. XIX.—Ditto ditto by ditto. Vol. I. Part II. | 1 | 0 | 0 |
| No. XX.—Ditto ditto by ditto. Vol. I. Part III. | 1 | 0 | 0 |
| No. XXI.—Ditto ditto by ditto. Vol. II. Part I. | 1 | 0 | 0 |
| No. XXII.—Ditto ditto by ditto. Vol. II. Part II. | 1 | 0 | 0 |
| No. XXIII.— <i>Vṛ̥ṣishṭhadharmaśāstram</i> . Edited, with Notes, by Dr. A. A. Führer | 0 | 8 | 0 |
| No. XXIV.— <i>Kādambarī</i> , by Bāṇa and his son. Vol. I. Sanskrit Text, complete. Edited by Dr. P. Peterson | 2 | 0 | 0 |
| Ditto Vol. II. Introduction and Notes, by do. | 2 | 0 | 0 |
| No. XXV.— <i>Kīrti-Kaumudī</i> . Edited, with Notes, by Prof. A. V. Kathavatt (Copies not available) | | | |
| No. XXVI.— <i>Vyākaraṇa-Mahābhāṣya</i> of Patañjali. Edited by Dr. F. Kielhorn. Vol. II. Part III. | 1 | 0 | 0 |
| No. XXVII.— <i>Mudrārākṣhasa</i> , by Viśākhadatta, with the Commentary of Chundhirāja. Edited, with Notes, by F. T. Telarg. (Copyright restored to the author.) | | | |
| No. XXVIII.— <i>Vyākaraṇa-Mahābhāṣya</i> of Patañjali. Edited by Dr. F. Kielhorn. Vol. III. Part I. | 1 | 0 | 0 |

| | |
|---|-----------|
| No. XXIX.—Uyākarāṇa-Mahābhāṣya of Patañjali. Edited by Dr. F. Kielhorn, Vol. III, Part II. ... | Rs. a. p. |
| No. XXX.—Ditto do. of do. by do. Vol. III. Part III. | 1 0 0 |
| No. XXXI.—Subhāṣitāvali of Vallabhadeva. Edited by Dr. P. Peterson and Pandit Durgaprasad ... | 2 8 0 |
| No. XXXII.—Tarka-Kaumudī of Langākṣhi Bhāṣkara. Edited by Professor M. N. Dvivedi ... | 0 12 0 |
| No. XXXIII.—Hitopadeśa of Nārāyaṇa. Edited by Dr. P. Peterson ... | 0 14 0 |
| No. XXXIV.—The Gauḍavaho, by Vakpat. Edited by S. P. Pandit ... | 3 0 0 |
| No. XXXV.—Mahānārāyaṇa Upanishad. Edited by Colonel G. A. Jacob. ... | 0 7 0 |
| No. XXXVI.—University Selections of Hymns from the Rigveda. Edited by Dr. P. Peterson ... | 4 0 0 |
| No. XXXVII.—Sārṅgadhara-paddhati. Edited by Dr. P. Peterson, Vol. I. ... | 3 0 0 |
| No. XXXVIII.—Naishakarmyasiddhi. Edited by Col. G. A. Jacob ... | 2 0 0 |
| No. XXXIX.—A Concordance to the principal Upanishads and Bhagavadgītā, by the same author ... | 8 0 0 |
| No. XL.—Eleven Atharvāṇa Upanishads, with dīpikās, by the same author ... | 2 8 0 |
| No. XLI.—Handbook to the Study of the Rigveda, by Dr. P. Peterson. Part I. ... | 3 0 0 |
| No. XLII.—The Daśakumāracharita of Daṇḍin, Part II. (completing Dr. Bühler's Edition). Edited with Critical and Explanatory Notes, by Dr. P. Peterson ... | 0 8 0 |
| No. XLIII.—Handbook to the Study of the Rigveda, by Dr. P. Peterson. Part II. comprising the Seventh Maṇḍala with the Commentary of Sāyana ... | 5 0 0 |
| No. XLIV.—Aphorisms of the Sacred Law of the Hindus, an Index of the Sūtras and the various Readings of the Hiraṇyakeśi-Dharmasūtra, by Dr. G. Bühler ... | 2 12 0 |
| No. XLV.—Rajatarangini. Edited by Pandit Durgaprasad, Part I. containing the first 7 (seven) Tarangas ... | 3 0 0 |
| No. XLVI.—Patañjali's Yogasūtras. Edited with the Scholium of Vyāsa and the Commentary of Vachaspati, by Rajaram Shastri Boda ... | 3 4 0 |



